अद्वैतामृत

उपनिषद्

10.2

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
३६

॥ श्रीः ॥

कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्

(अधिकरण १०, ११, १२, १३, १४, १५)
(आलोचनात्मक भूमिका, ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक अध्ययन तथा हिन्दी अनुवाद)

लेखक
डॉ० रघुनाथ सिंह
एम. ए., एल. एल. बी., पी-एच. डी., डी. लिट्.,
एफ. आर. ए. एस. (लन्दन)

खण्ड ३

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
१९८८

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : वर्द्धमान मुद्रणालय, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०४५
मूल्य : रू० १५०-०० (तृतीय खण्ड)

© कृष्णदास अकादमी

पो० बा० नं० १११८
चौक, (चित्रा सिनेमा बिल्डिंग), वाराणसी-२२१००१ (भारत)

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन : ६३१४५

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES
36

⁂

KAUTILĪYAM ARTHAŚĀSTRAM

(Adhikarana-10, 11, 12, 13, 14, 15)
(Original text translation in Hindi with historical, geographical and cultural notes)

By
Dr. Raghunath Singh
M. A., LL. B., Ph. D., D. Litt.,
F. R. A. S. (London)

Part III

KRISHNADAS ACADEMY
VARANASI-221001
1988

© KRISHNADAS ACADEMY

Oriental Publishers & Distributors
Post Box No. 1118
Chowk, (Chitra Cinema Building)
VARANASI-221001 (India)

First Edition
1988
Price : Rs. 150-00 (Part III)

Also can be had from
Chowkhamba Sanskrit Series Office
Oriental Publishers & Distributors
K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Post Box 1008, VARANASI-221001 (India)
Phone : 63145

भारतस्वातन्त्र्यान्दोलनरसभावितानां
गयासिंहमहाभागानाम्
तथा
सत्यनारायणसिंहमहानुभावानाम्
स्मृत्यर्थं
पुस्तकप्रसूनाञ्जलिः

पुरोवाक्

कौटिलीय अर्थशास्त्र के तृतीय खण्ड में ६ अधिकरण, ३२ प्रकरणं, २१ अध्याय हैं। साङ्ग्रामिक अधिकरण में २२१, संघवृत्तम् अधिकरण में ५६, आवलोयसम् अधिकरण में १६६, दुर्गलम्भोपाय अधिकरण में २१६, औपनिषदिक अधिकरण में १८७ तथा तन्त्रयुक्ति अधिकरण में ७३ कुल ९१९ सूत्र हैं।

कतिपय विद्वानों ने सुरङ्ग शब्द पर विवाद आरम्भ किया है। उनका मत है कि सुरङ्ग शब्द यूनानी है। किन्तु मेरा मत है, सुरङ्ग शब्द भारतीय एवं प्राचीन है। भारत में प्रायः सभी दुर्गों में सुरङ्ग बनाना प्रचलित रहा है। कारण यह है कि प्रत्येक बड़े दुर्गों में सुरङ्गें बनायी गयी हैं। सुरङ्ग शब्द के साथ अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। यूनान और भारत का सम्पर्क चौथी शताब्दी वि० सी० के पूर्व सक्रिय रूप से नहीं पाया जाता है। अतएव यह कहना सम्भव प्रतीत नहीं होता है कि सुरङ्ग शब्द यूनान से लिया गया है। प्राचीन ग्रन्थों दश कुमार चरित ओर मुद्राराक्षस में सुरङ्ग शब्द का उल्लेख किया गया है।

कौटिल्य के सन्दर्भ में मैं अपने पूर्व मत पर दृढ़ हूँ कि कौटिल्य गान्धार देश तथा तक्षशिला के आसपास का निवासी था। उन दिनों पारसियों की आबादी सीमान्त पश्चिमोत्तर प्रदेश में थी। पारसी लोग अहुर अर्थात् असुर पूजक थे। कौटिल्य का इनसे सम्पर्क होना स्वाभाविक था। अर्थशास्त्र पारसियों के देवता असुर अर्थात् अहुर का उल्लेख कौटिल्य ने किया है। कालान्तर में जैसे पाणिनि पेशावर में पैदा हुआ था किन्तु बिहार में आकर अध्ययन किया था। उसकी पढ़ाई लिखायी वहीं हुई थी। उन दिनों बिहार मुख्यतः पाटलीपुत्र शिक्षा और भारतीय राजनीति का केन्द्र था। कारण यह है कि—जैसे-जैसे भारत का व्यापार बढ़ता गया, वैसे-वैसे नदियों तथा नदी तटवर्त्ती नगरों का महत्व बढ़ता गया। राजगृह पूर्व काल में बिहार का मुख्य स्थान था। व्यवसाय वृद्धि के कारण पाटलीपुत्र ने राजगृह का स्थान ले लिया। कौटिल्य ने भी पाटलीपुत्र को सक्रिय कार्य क्षेत्र बनाया। कौटिल्य और चन्द्रगुप्त मौर्य का सम्बन्ध राजा और महामात्य के अतिरिक्त मित्र का भी था। गान्धार से लेकर समस्त भारतवर्ष में जहाँ चन्द्रगुप्त मौर्य गये, कौटिल्य भी उनके साथ था। चन्द्रगुप्त मौर्य राज्य त्यागकर दक्षिण गया। कौटिल्य भी उनके साथ गया। वहीं पर उसने अर्थशास्त्र की रचना भी की होगी। दक्षिण के समुद्री प्रदेश तथा समुद्र का वर्णन इस बात को स्पष्ट करता है कि कौटिल्य को उत्तर भारत से लेकर ध्रुव दक्षिण का ज्ञान था। जिसकी चर्चा अर्थशास्त्र में की है। यही कारण है कि अर्थशास्त्र की पाण्डुलिपियाँ दक्षिण भारत में मिली हैं। इन्हीं पाण्डुलियों के आधार पर अर्थशास्त्र के रचनाकार का दाक्षिणात्य का होना प्रतीत नहीं होता।

कौटिल्य ने पाणिनीय व्याकरण का अक्षरशः अनुकरण नहीं किया है। यद्यपि पाणिनीय व्याकरण का रचनाकाल ५०० से ७०० ई० पू० माना जाता है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र की रचना ३२१ ई० पू० की लगभग की है। कौटिल्य ही एक ऐसा लेखक है, जिसका रचना काल निश्चित है। मैं समझता हूँ कि कौटिल्य ने सूत्र ग्रन्थों की शैली में अर्थशास्त्र की रचना की है। सम्भव है कि अर्थशास्त्र में श्लोकादि की रचना कौटिल्य के पश्चात् ही विद्वानों ने कर उसमें जोड़ दिया है।

तृतीय खण्ड कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। तत्कालीन समय में भारत सैनिक स्थिति में अपना विशेष स्थान रखता है। कौटिल्य के सामने सबसे बड़ी समस्या भारतवर्ष की एकता तथा विदेशियों से किस प्रकार

रक्षा की जा सकती थी। सिकन्दर का आक्रमण भारत पर हो चुका था, पारसियों का प्रभाव सीमान्त पश्चिमोत्तर प्रदेश के कुछ भागों पर था। कौटिल्य भारतवर्ष को एक सूत्र में बाँधकर रक्षा की दृष्टि से उसे सुरक्षित रखना चाहता था।

कौटिल्य ने दशम अधिकरण में सैनिक संगठन, स्कन्वावार निवेश, स्कन्धावार प्रयाण, बलव्यसन, अवस्कन्द काल रक्षण, कूट युद्ध विकल्प, स्व सैन्योत्साहन, स्व बल, अन्य बल व्यायोग, युद्धभूमि, पत्ति, अश्व, रथ हस्ति कर्म, व्यूह वर्णन, व्यूहों का निर्माण, सारफल्गु बल विभाग, पत्तिअश्व, रथ—हस्ति-युद्ध, दण्ड भोग मण्डल, असंहत व्यूह-व्यूहन, प्रति व्यूह स्थापना का विशद वर्णन किया है। तत्कालीन युद्ध में हाथियों का विशेष महत्त्व था। हाथियों के प्रकार जाति उनके युद्ध सम्बन्धी शिक्षापर विशेष ध्यान दिया जाता था। हस्तियुद्ध की यह परम्परा मुसलिम कालतक ही प्रचलित थी। भारतवर्ष के पराजय का एक मुख्य कारण था। विदेशी अश्वारोही सेनापर विशेष जोर देते थे। यही कारण है कि हाथी पर निर्भर भारतीय सेना मुसलमानों के अश्वारोही सेना से हारती रही। हाथी लड़ने पर या घायल होने पर पीछे की ओर भागते थे। और अपनी ही सेना को रौंदते हुए चले जाते थे।

एकादश अधिकरण में भेदोपादानानि, उपांशु, दण्ड, गुप्तचर विभाग का संगठन, उनके कार्य तथा किस प्रकार गुप्तचरों को शत्रु सेना का नाश करना चाहिए कौटिल्य ने किया है।

द्वादश अधिकरण में दूत कर्म पर विचार किया गया है। मन्त्र युद्ध, सेनापतियों के वध, तीक्ष्ण, रसद प्रयोग, गणिकाओं का प्रयोग, मण्डल प्रोत्साहन तथा युद्ध में शस्त्र, अग्नि, रस का गुप्त प्रयोग, वीवधसार प्रसार, मुख्य पुरुषों का बध, के उपायों का वर्णन किया गया है। योगानुसन्धान, एक विजय, क्रमांक विजय का वर्णन कर कौटिल्य नीति पर विचार किया है।

त्रयोदश अधिकरण में दुर्ग को कैसे प्राप्त करना चाहिए उसके अनेक प्रकार दिये गये हैं। उन दिनों दुर्ग का विशेष महत्त्व था। योग वामन में कपट पूर्वक शत्रु को दुर्ग से बाहर निकलने के लिए दबाव डालने तथा दुर्ग खाली कराने के युक्तियों का वर्णन किया है। कौटिल्य के समय गणिकाओं को हेय दृष्टि से नहीं देखा जाता था। बल्कि उनका प्रयोग युद्ध तथा राजनीति में खुलकर किया जाता था। गुप्तचर का भी वे काम करती थीं।

कौटिल्य ने योग अर्थात् कपटोपाय का वर्णन तेरहवें अधिकरण में किया है। शत्रुओं में भेद उत्पन्न कर उन्हें निर्बल किया जा सकता है। किस प्रकार घेरा डालना तथा गूढ़ पुरुषों को किस प्रकार कार्य करना चाहिए। कौटिल्य ने अनेक प्रकार के रस तथा उनके प्रयोगों के विषय में विस्तृत वर्णन किया है। वन आदि तथा विजित शत्रु के देश को कैसे अनुकूल किया जाय उसका वर्णन किया है।

इस खण्ड का सबसे महत्त्वपूर्ण वर्णन औपनिषदक प्रकरण में है। किस प्रकार औषधियों वनस्पतियों एवं जन्तुओं का प्रयोग शत्रु विनाश के लिए किया जाय इसका वर्णन किया गया है।

दुर्ग का महत्त्व प्राचीन काल से रहा है। ऋग्वेद में दुर्ग का उल्लेख है। दस्युओं के ९७ दुर्गों को इन्द्र ने ध्वस्त किया था। मनु ने ६ प्रकार के दुर्गों का वर्णन किया है। महाभारत में युधिष्ठिर ने जब भीष्म से पूछा कि राजा को कैसे नगर में रहना चाहिए, तो भीष्म ने मनु वर्णित ६ प्रकार के दुर्गों का वर्णन किया। मनुस्मृति और महाभारत दोनों में कोष, सेना, अस्त्र, शिल्प, ब्राह्मण, वाहन, तृण, जलाशय, अन्न, इत्यादि का दुर्ग के अन्दर रहना आवश्यक कहा गया है। अग्नि, कालिका तथा वायु पुराणादि में भी दुर्गों का ६ भेद

बताया गया है। दुर्ग ६ में धनु (धन्व) दुर्ग इसके चारों ओर निर्जल प्रदेश, दूसरा मही दुर्ग, तीसरा जल दुर्ग, जिसके चारो ओर जल हो, वृक्ष दुर्ग इसके चारों तरफ घने वृक्ष हों, नर दुर्ग जिसके चारों ओर सेना हो, गिरि दुर्ग जिसके चारों ओर पहाड़ हो, अथवा जो पहाड़ पर बना हो।

भारतवर्ष में सीमान्त उत्तर प्रदेशों से सर्वदा विदेशी आक्रमण होता रहा है। इन आक्रमणों से रक्षा होना उत्तर भारत में काबुल से रोहतास गढ़ तक दुर्गों की परम्परा स्पष्ट दिखाई पड़ती है। मुख्यतः दुर्ग नदी के किनारे अथवा पर्वत पर बनाये जाते थे। कुछ दुर्ग नदी और पर्वत दोनों पर होते थे—जैसे-–चरणाद्रिगढ़ (चुनारगढ़)। एक प्रकार का छोटा दुर्ग ओर भी होता था जिसको काश्मीर में द्रंग कहते थे। इस प्रकार के द्रंग समस्त भारतवर्ष के बड़े दुर्गों या संकट मार्ग के समीप बने मिलते हैं। उनका काम आती हुई आक्रमणकारी सेना की खबर बड़े दुर्ग या राजा के पास पहुँचाना होता था। इस प्रकार के द्रंग पहले विदेशी आक्रमणों का सामना करते थे। तब तक मुख्य सेना युद्धार्थ तैयार हो जाती थी। राजस्थान में मुख्यतः उदयपुर में इस प्रकार के द्रंग या ढ़क बने मिलते हैं। उन्हें एक प्रकार से छोटा किला कहा जायेगा। दुर्गों का सबसे बड़ा दोष यह होता था कि घिर जाने पर वे आत्मसमर्पण करते थे, या जौहर कर प्राण विसर्जन करते थे।

इस प्रकार के उदाहरण राजस्थान में बहुत मिलते हैं। मुसलमानों के आक्रमण के पश्चात् दुर्गों की महत्ता कम हो गयी। खुलकर युद्ध होता था। नाना फड़नवीश ने तृतीय पानीपत के युद्ध में मराठों की पराजय के विषय में एक पुस्तक भी लिखी है। उसका निष्कर्ष यही है कि मराठे अपने पारम्परिक खुले युद्ध के स्थान पर व्यूह बनाकर लड़ने लगे थे। वे इस फिक्र में थे कि अहमद शाह अब्दाली आक्रमण करे तो वे मोर्चेबन्दी से निकल कर युद्ध करें। करीब-करीब यही अवस्था चीन ने जब भारतवर्ष पर आक्रम किया तो तत्कालीन सुरक्षामन्त्री यही चाहते थे कि जब चीनी आक्रमक मैदान में आ जाय तो युद्ध किया जाय। यह नीति बिलकुल गलत थी।

चन्द्रगुप्त मौर्य तथा चाणक्य की नीति थी कि शत्रु का सामना देश के बाहर किया जाय। एतदर्थ स्कन्धावार की कल्पना की गयी। कन्दहार का वास्तविक नाम स्कन्धावार था। वह चन्द्रगुप्त मौर्य की छावनी थी। यही कारण है कि भारतवर्ष सुरक्षित रहा है। क्योंकि एक बार विदेशी सेना का प्रवेश हो जाने पर उसे हटाना मुश्किल हो जाता है।

कौटिल्य ने तेरहवें अधिकरणमें पर्युपासन कर्म अर्थात् घेरा डालना, गुप्तचरों द्वारा धोखा देना भ्रान्त करना, प्रलोभन देना, छलना, मोहित करना, आदि के विषय में अनेक प्रकार की नीतियों का वर्णन किया है। प्रलम्भन द्वारा भैषज्य योग का वर्णन कौटिल्य ने किया है। कुछ स्थानों पर मन्त्रों के प्रयोग की बातें भी लिखी हैं। स्वबलोपधात प्रतीकार का वर्णन किया गया है। इससे प्रकट होता है कि कौटिल्य को औषधियों तथा जन्तुओं और उनके गुणों का विशेष ज्ञान था। यह स्वाभाविक है क्योंकि तक्षशिला जहाँ का कौटिल्य निवासी था, उन दिनों भैषज्य का मुख्य केन्द्र था। शल्य चिकित्सा का केन्द्र काशी थी। शल्य चिकित्सा का विशेष वर्णन न करना कौटिल्य का इस विषय में न कहना इस बात को प्रमाणित करता है कि कौटिल्य को काशी तथा शल्य चिकित्सा के सम्बन्ध में कम ज्ञान था। यह इस बात का यथेष्ट प्रमाण है कि कौटिल्य तक्षशिला तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र का रहने वाला था।

काश्मीर गान्धार की सीमापर था। तक्षशिला उसके समीप था, इसलिए एक दूसरे को प्रभावित करते रहे हैं। एक दूसरे का यथेष्ट ज्ञान था। काश्मीर में दुर्गों तथा द्रंगों को बहुत बड़ी श्रृङ्खला थी। काश्मीर के राजा परस्पर लड़ते थे। इसलिए कौटिल्य ने दुर्गों तथा युद्धों का विशेष वर्णन किया है। काश्मीर के द्रंग तथा

दुर्गों की शृङ्खला इतनी मजबूत थी कि कौटिल्य के लगभग चौदहवीं शती तक के पश्चात् लोहकोट में तत्कालीन मुस्लिम विजेता महमूद गजनवी को दो बार हार खानी पड़ी। वह लोहकोट के पश्चात् पुनः भारतवर्ष की ओर आक्रमण नहीं कर सका।

कौटिल्य ने शत्रुओं में भेद उत्पन्न कर उन्हें किस प्रकार निर्बल किया जा सकता है तथा किस प्रकार घेरा डालना चाहिए इसका वर्णन किया है। गूढ़ पुरुषों का किस प्रकार इस स्थिति में कैसे उपयोग करना चाहिए इसका भी वर्णन किया है। कौटिल्य ने अनेक प्रकार के रस तथा उनके प्रयोग के विषय में विस्तृत वर्णन किया है। वन आदि के तथा शत्रु विजित देशको कैसे अनुकूल किया जाय, उसने वर्णन किया है। यद्यपि कौटिल्य ने किसी विशेष देवी देवताओं को अपना इष्ट नहीं माना है। परन्तु तत्कालीन देवों एवं असुरों का किस प्रकार राजनीति में उपयोग किया जा सकता है। वर्णन किया है। इस खण्ड का सबसे महत्त्वपूर्ण वर्णन चौदहवें अधिकरण औपनिषदिक में है। शत्रु पर विजय हेतु रहस्यमय युक्तियों का वर्णन किया गया है। शत्रु सेना के नाश हेतु किस प्रकार कार्य करना चाहिए, इसके लिए विषप्रयोग की चर्चा करता है। कुब्जा (बौना) किरात—मूक—(बधिर) जड़ म्लेच्छ का कैसे उपयोग करना चाहिए इसका भी वर्णन किया है। अनेक प्रकार की औषधियों तथा द्रव्यों का वर्णन योग सम्पत्: प्रकरण में किया है।

प्रलम्भन तथा अद्भुतोत्पादन प्रकरण में अनेक प्रकार की वनस्पतियों औषधियों तथा जन्तुओं का वर्णन किया है।

प्रलम्भन और भैषज्ययोग का वर्णन कर कौटिल्य ने अपनी विचक्षण बुद्धि का परिचय दिया है। इस प्रकरण में प्रयोग के कुछ मन्त्र दिये गये हैं। मेरा मत है कि वे कौटिल्य के नहीं हैं।

कौटिल्य ने शत्रु द्वारा स्वपक्ष पर देशी विष एवं गरों के प्रतिकार का वर्णन किया है।

पन्द्रहवें अधिकरण में तन्त्र युक्ति का वर्णन किया गया है। इनमें शब्दों की परिभाषा तथा उनका अर्थ दिया गया है।

कौटिल्य ने अध्यायों में इति पाठ दिया है। इससे अध्यायों के प्रारम्भ व अन्त का निश्चित पता चल जाता है। किन्तु प्रकरणों में इति पाठ न देने के कारण प्रकरणों के आदि एवं अन्त का निश्चय करना कठिन है। अनेक अर्थ शास्त्र के व्याख्याकारों में एकरूपता नहीं है। मैंने प्रकरणों के आदि एवं अन्त को निश्चित करने का प्रयास किया है। कौटिल्य ने प्रकरण १६४ को दो भागों में विभाजित किया है। परन्तु प्रथम तथा द्वितीय भागों का कहाँ से आदि अन्त होता है, प्रकट नहीं होता। अनेक प्रकरणों को निश्चित रूप से विभाजित करने का प्रयास किया है। कौटिल्य ने १५ वें अधिकरण में तन्त्रयुक्तियाँ दी हैं। उनके कारण शब्दों को निश्चित रूप से समझने में सरलता होती है।

अनेक अनुवादकों ने सूत्रों को तोड़कर अपनी इच्छानुसार संख्या दी है। मैंने बम्बई विश्वविद्यालय कौटिल्य संस्करण को आधार माना है। उसके सूत्रविभाजन को ठीक मानता हूँ। प्रस्तुत पुस्तक में उसी के अनुसार अनुवाद तथा व्याख्या की गयी है। बम्बई संस्करण में भी प्रकरणों का निश्चित रूप नहीं दिया गया है। अध्यायों की संख्या समान रूप से सभी संस्करणों में एक तरह है। यद्यपि सूत्र की संख्या में अन्तर है।

इस खण्ड में अनुक्रमणिकायें दी गयी हैं। सर्व प्रथम मैंने प्रयास किया है कि सूत्र श्लोकानुक्रमणिका दूँ। इसे प्रस्तुत करने में बहुत समय लगा है। किन्तु मेरी दृष्टि में ठीक उतरा है। अनेक विद्वानों ने सूत्र श्लोकानुक्रमणिका को देने का प्रयास किया है। किन्तु वे ठीक नहीं उतरे हैं।

डाक्टर श्री नागेन्द्र प्रसाद शर्मा चेतगंज ७/२८६ तथा काशी विद्यापीठ के प्राध्यापक डाक्टर श्री योगेश्वर जी श्री वेरीजी के यहाँ होने वाली प्रतिदिन सायंकालीन गोष्ठी में प्रेरणाप्रद सुझाव मिलते रहे हैं। उक्त महानुभावों के प्रति सादर आभार प्रकट करता हूँ।

इस वर्ष मेरा सेवक हीरालाल जो मेरे साथ निरन्तर ५२ वर्ष से कार्यरत था कैन्सर के कारण दिवंगत हो गया। उसके दिवंगत होने के कारण मुझपर घर का बोझा पड़ गया। भगवान् उसकी आत्मा को शान्ति दें।

श्री माधो प्रसाद शर्मा तथा कृष्ण मुरारी सिंह बाल्य काल से ही मेरे साथ रहते थे। सतीश कुमार उर्फ छेदी के कारण मेरे दैनिक जीवन में सहायता मिलती रही। मैं निस्सन्तान हूँ किन्तु उनके कारण मुझे कभी निःसन्तान होने का दुःख नहीं हुआ।

कौटिल्य द्वारा प्रयुक्त विशिष्ट शब्दावली मैंने पुस्तक में तैयार कर लगा दिया है। कौटिल्य के समय शब्दों का क्या अर्थ था। निर्धारण करने में कठिनता हुई है, तथापि और विद्वानों द्वारा शब्दों के चयन तथा अधिक शब्दों को जोड़ कर यह अनुक्रमणिका तैयार की है।

तीसरी अनुक्रमणिका—शब्दार्थ है। कुछ विद्वानों ने कुछ थोड़े ही शब्दों की अनुक्रमणिका बनाकर पुस्तक के अन्त में दिये हैं। उनमें गणपति शास्त्री, उदयवीर शास्त्री तथा काङ्गले मुख्य हैं। किन्तु उनकी शब्दावली छोटी है। मैंने यथा सम्भव शब्दावली को पूर्ण करने का प्रयास किया है। यह अनुक्रमणिका पुस्तक के अन्त में दी गयी है। कौटिल्य ने जिन शब्दों का जिस अर्थ में प्रयोग किया है। उसे निश्चित करने में काफी समय तथा परिश्रम करना पड़ा है।

अनुक्रमणिकाओं को तैयार करने में काफी समय तथा परिश्रम लगा है। एक पुस्तक लिखने में जितना समय लगा है उससे कहीं अधिक उन्हें क्रमबद्ध रखने में परिश्रम किया गया है। यह इस खण्ड की मौलिक देन है। इसमें किसी से सहायता नहीं ली गयी है। जिन लेखकों ने पूर्वकाल में कौटिल्य सम्बन्धी शब्दावली या पारिभाषिक शब्दावली को लिखा है। उससे भी सहायता ली गयी है। अनुक्रमणिका तैयार करने में किसी ओर से किसी प्रकार की आर्थिक सहायता नहीं ली गयी है। यदि उसमें कोई दोष है तो उसका मैं स्वयं उत्तरदायी हूँ।

मेरी आयु अस्सी (८०) वर्ष की हो गयी है। कम्पन अर्थात् पार्किन्सेन्स रोग से पीड़ित हो गया हूँ। इसी समय सन् १९८६ के दिसम्बर मास में हृदय रोग का दौरा हुआ। रामकृष्ण मिशन अस्पताल काशी में भर्ती किया गया। वहाँ पर डॉ० प्रेमनारायण सोमानी, डाक्टर श्री प्रकाश शंकर तथा श्री स्वामी ब्रह्मेशानन्द ने उपचार किया। ब्रह्मेशानन्द, मेडिकल कालेज, रायपुर, म० प्र० में प्रवक्ता थे। इनके पिता डाक्टर नन्दलाल बोरदिया भारत सरकार, (दिल्ली) में टी० बी० स्पेशलिस्ट और टी० बी० के सलाहकार थे। दोनों ही महानुभाव रामकृष्ण मिशन में आने के पूर्व हिन्दू विश्वविद्यालय तथा मध्यप्रदेश में प्रवक्ता थे। दोनों ने ही अपने-अपने पदों से इस्तीफा देकर रामकृष्ण मिशन अस्पताल में सफलतापूर्वक काय चिकित्सा विभाग में काम करने लगे। वे धन्यवाद के पात्र हैं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हृदय रोग विशेषज्ञ श्री डॉ० प्रेमनारायण सोमानी ने भी देखकर बड़े सौजन्य से चिकित्सा सम्बन्धी सलाह दी।

मैं इस खण्ड के लेखन काल में प्रायः अस्वस्थ रहा हूँ। इन्द्रियाँ पूर्ण अपना कार्य नहीं करतीं। ऊनपर खीझ बरती हैं। किन्तु खीझ मेरा कोई उपकार कर सकी। दिन-प्रति दिन कमजोरी बढ़ती ही गयी। डाक्टरों ने कह दिया कि यह वृद्धावस्था की बीमारी है, पूर्णतया अच्छी नहीं होगी।

मृत्यु का अर्थ आत्मा का शरीर से विदाई है। आत्मा का अस्तित्व शरीर के नष्ट हो जाने के बाद भी नहीं मिटता। सुखद हो या दुःखद, मृत्यु अवश्यम्भावी है।

असुर शरीर को आत्मा मानते हैं। सुर आत्मा और शरीर को भिन्न मानते हैं। यह सभी मानते हैं कि मृत्यु एक दिन आयेगी ही, परन्तु उसके नाम से या उसके रूप को देखकर घबड़ा जाते हैं। जीवित प्राणी से लोग भयभीत नहीं होते किन्तु मृत होने पर उससे भयभीत होते हैं। उसे प्रेत समझ कर उससे दूर भागने का प्रयास करते हैं। मृतक को देखकर लोगों को यह चिन्ता व्यग्र कर देती है कि उनकी भी यही दशा होने वाली है। अपने इस रूप की कल्पना कर उनका मन विचलित हो जाता है। उनका चलता फिरता यह शरीर जड़ हो जायेगा, यह विचार जब उनमें बैठ जाता है तो उससे बचने के लिये नाना प्रकार का उपाय करता है। उपाय असफल हो जाता है तो वह सबकुछ भाग्य के मत्थे मढ़ देता है। मृत्यु के संदर्भ में अनेक ग्रन्थों में कल्पनाएँ की गई है। किन्तु कल्पना केवल कल्पना मात्र रह जाती है।

कलतक का पाला पोसा शरीर मिट्टी में गाड़ दिया जायेगा, जहाँ दीमक उसे चाट जायेंगे या प्रज्वलित चिता में जलकर दुर्गंध उत्पन्न करेगा इसका कोई उपयोग नहीं रह जायेगा। सारी दुनियाँ उसे अनुपयोगी समझकर मुख मोड़ लेगी, इस सच्चाई को लोग समझकर भी नहीं समझते—यह जगत् की सबसे बड़ी बिडम्बना है। जीवन का मोह जीवित रहने की आकांक्षा भविष्य की सुन्दर कल्पना के पीछे मनुष्य भागता है। मैंने मिस्र की यात्रा में पाँच हजार वर्ष पूर्व मरे फराहों के संग्रहालय में सुरक्षित शवों को भी देखा। उन्होंने पिरामिड बनाये, ताकि मनुष्य उन्हें बरबाद न कर सके। उनमें नाना प्रकार की सम्पत्तियाँ रखीं। इस कल्पना के साथ कि वे उनके काम आयेंगी। वे एक दिन जीवित हो उठेंगे, किन्तु सब जहाँ का तहाँ पड़ा रह गया है। फरोहों का शव केवल एक कहानी कहता है कि मृत्यु के पश्चात आदमी नहीं उठता।

मैंने लन्दन की यात्रा में वेस्ट मिनिस्टिर अबे तथा सेण्ट पाल केथैड्रल देखा। उनमें उन लोगों को गड़े देखा जो घोर साम्राज्यवादी राजा या सैनिक थे। उन्होंने अपनी स्मृति के लिये चिर स्थायी कब्र बनाने की कल्पना की। उनकी आशा थी कि लोग उन्हें स्मरण करेंगे किन्तु उनकी आशा पर उस समय पानी फिर गया जब लोग काल की द्रुत गति के साथ भूलने लगे। वे केवल एक ही बात का सन्देश देते हैं कि कुछ दिनों में लोग सब कुछ भूल जाते हैं।

अतएव हिन्दुओं का दर्शन उचित प्रतीत होता है। जहाँ शरीर को पंचभूतों में मिलाकर उसकी लीला समाप्त कर यह कहते हैं कि संसार में कोई न तो मृत्यु को जीत सका है न जीतेगा। यह दर्शन हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचाता है कि मृत्यु आयेगी। उसका जाने अनजाने हमें स्वागत करना ही होगा।

इस काल में आचार्य श्री पशुपति प्रसाद द्विवेदी प्राध्यापक पूर्वोत्तर रेलवे इण्टर कालेज का सहयोग पूर्ववत् प्राप्त होता रहा है। आचार्य श्री वाचस्पति मिश्र ग्राम कुरूथुआ पोस्ट सोनहरा जिला आजमगढ़ को बोलकर लिखाया है। हाथ से स्वयं लिखने तथा बोलकर लिखाने में जो अन्तर होता है वह इस पुस्तक में परिलक्षित होगा। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

श्री मोरार जी देसाई का पूर्ववत् आशीर्वाद प्राप्त होता रहा है उनके प्रति मैं हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ।

संस्कृत विश्वविद्यालय के पुस्तकालयाध्यक्ष डाक्टर लक्ष्मी नारायण तिवारी के कारण कौटिल्य सम्बन्धी

पुस्तकों की जानकारी होती रही हैं। डाक्टर श्री लल्लन जी गोपाल के कौटिल्य सम्बन्धी लेखन में समय-समय पर अच्छी जानकारियाँ प्राप्त हुई हैं। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

सर्व श्री कृष्णचन्द्र बेरी स्वामी हिन्दी प्रचारक संस्थान तथा हनुमान प्रसाद शर्मा का उदार हृदय मेरी प्रेरणा का स्रोत रहा है।

मैं निरन्तर बीमार रहता हूँ, इस काल में अपने मृत्यु के विषय में सर्वदा सोचता रहा हूँ। मृत्यु के पश्चात् क्या होता है। मर कर आदमी कहाँ जाता है, उसकी आत्मा क्या करती है, इत्यादि बातें मुझे घेरे रहती है। मैं अपनी इस जिज्ञासा को पूर्ण करने के लिए सभी धर्मों की पुस्तकों को पढ़ने लगा। यहूदी, इसाई धर्म की पुस्तक पुरातन एवं नवीन बाइबिल, मुसलमानों की पुस्तक कुरान शरीफ, बौद्धों के ग्रन्थ त्रिपिटक पढ़ गया किन्तु मुझे कुछ मालूम नहीं हुआ कि मृत्यु के पश्चात् क्या होता है। मुझे अथर्व वेद से इतना जरूर मालूम हुआ कि मर कर कोई लौटकर आया नहीं, जो बताता कि क्या होता है। सब कल्पना मात्र है। कोई ईश्वर के नाम पर, कोई ऋषि के नाम पर अपने विचारों का प्रतिपादन करता है। मुझे भगवान् बुद्ध का वह शब्द स्मरण आता है। जिसमें उन्होंने कहा है कि यह सब अव्याकृत है। उसपर विचार नहीं करना चाहिए। जैसा जीवन है उसको उसी प्रकार आचरण युक्त होकर व्यतीत करना चाहिए। जो कुछ होने वाला है वह होगा। मैं प्रतिदिन रात्रि में सोता था यही विचार करता था कि पता नहीं सुबह सोकर उठूंगा या नहीं। इस विचार ने मुझमें कार्य करने की क्षमता उत्पन्न कर दी। मैं जल्दी-जल्दी अपना अवशिष्ट कार्य समाप्त करने में लग गया।

मैं ४० वर्षों से जब काशी में रहता हूँ तो एक बार रामकृष्ण मिशन जाता हूँ। वहाँ लोगों को मरते जीते देखता हूँ। मैं इस निष्कर्ष तक पहुँचा हूँ कि मृत्यु अपने निश्चित समय व स्थान पर आती है।

इस खण्ड को मैंने अपने दो बहनोइयों स्वर्गीय श्री सत्यनारायण सिंह तथा श्री गया प्रसाद सिंह को समर्पित किया है। श्री सत्य नारायण सिंह हमारी छोटी बहन स्वर्गीय रामदेयी के पति थे। उनका देहान्त मेरे ही निवास स्थान औरङ्गाबाद में हुआ था। उनके पति के पिता श्री शम्भू नारायण सिंह यूशुफपुर, गाजीपुर तथा सारनाथ में स्टेशन मास्टर थे। श्री गया प्रसाद सिंह हमारी बड़ी बहन सरजू देवी के पति थे। वे बड़े ही कर्मठ सच्चरित्र देशसेवी थे। उनको नमक कानून में ६ मास की सजा हुई थी। बनारस जेल से फैजाबाद जेल में द्वितीय श्रेणी में ट्रान्सफर हुआ था। उनके छोटे भाई केशव प्रसाद सिंह भी कई बार जेल गये थे। वे बड़े कर्मठ तथा साहसी व्यक्ति थे। इस प्रकार हमारे कुटुम्ब तथा अन्य रिश्तेदारों में जितने लोग थे सभी लोग जेल गये थे। स्वर्गीय श्री वैजनाथ सिंह १८८५ में बम्बई कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन में भाग लिए थे। तत्पश्चात् १८८६ में उन्होंने बनारस तथा उत्तर प्रदेश में कांग्रेस कमेटियों की स्थापना की। वे आजन्म कांग्रेस आन्दोलन में भाग लेते तथा जेल जाते रहे। बनारस कांग्रेस सन् १९०५ में वे एक एक मन्त्री थे। स्वर्गीय पण्डित जवाहर लाल जी प्रथमबार स्वयं सेवक रूप से कांग्रेस में सम्मिलित हुए थे। वे वैद्यनाथ सिंह को दादा कहा करते थे। इस नाम से वे काशी तथा काशी के बाहर प्रसिद्ध हो गये थे। उनके मझले भाई जगन्नाथ सिंह भी जेल गए थे, उनके सबसे छोटे भाई बाबू विश्वनाथ सिंह १९२० के पूर्व दो बार जेल जा चुके थे। सन् १९२१ में उन्हें दो गोलियाँ लगीं। किन्तु वे वीरता पूर्वक आक्रमकों से लड़ते हुए अपनी जीवन रक्षा की थी। सन् १९३० ई० नमक सत्याग्रह के लिए सोनिया पर अपनी जमीन दी। यहाँ से हजारों व्यक्ति नमक सत्याग्रह में जेल गए। वे स्वयं एवं बड़े भाई श्री वैजनाथ सिंह के साथ ढ़ाई वर्ष की सजा नमक सत्याग्रह में पाकर जेल गए। उनका स्वास्थ्य गिरता गया। कम्पन की बीमारी हो गयी। और सन् १९४४ में उनका

देहान्त हो गया। मुझे इस बात का गर्व है कि मैंने तथा मेरे कुटुम्ब ने सरकार से किसी प्रकार की आर्थिक सहायता नहीं ली है। मैं सांसद सदस्य के रूप में जो कुछ पाता था उसे काँग्रेस दल को दे देता था। तीन सार्वजनिक संस्थानों के अध्यक्ष होने के बावजूद मैंने एक पैसा भी वेतन के रूप में नहीं लिया।

कृष्ण दास अकादमी के निदेशक श्री विट्ठल दास जी तथा श्री बाबूलाल जैन फागुल्ल के प्रति आभार प्रकट करता हूँ। जिनके कारण पुस्तक प्रकाशित हो सकी है। पुस्तक में अनेक त्रुटियाँ रह गयी हैं। उनके लिये पाठकों से क्षमा प्रार्थी हूँ। दूसरे संस्करण में त्रुटियाँ ठीक कर दी जावेंगी।

डाक्टर श्री लल्लनजी गोपाल तथा ज्ञात अज्ञात रूप से जिन महानुभावों ने सहानुभूति प्रकट की है तथा लेखन में सहायता पहुँचायी है, उनका मैं आभारी हूँ। मैं उस अव्यक्त शक्ति को नमस्कार करता हूँ। जिसके कारण यह कार्य पूर्ण हो सका है।

—रघुनाथ सिंह

दीपावली
डी० ५५/१९७
औरंगाबाद, वाराणसी (उ० प्र०)
२३-१०-८७

विषयानुक्रमणिका

साङ्ग्रामिकम्—दशममधिकरणम्

संख्या	प्रकरणम्	पृष्ठाङ्कम्	अध्याय :	विषय :	पृष्ठाङ्कम्
१४७	सप्तचत्वारिंशच्छततमं	१-५	१	स्कन्धावारनिवेशः	१-५
१४८	अष्टचत्वारिंशच्छततमं	६-१०	२	स्कन्धावारप्रयाणम्	६-१२
१४९	एकोनपञ्चाशच्छततमं	१०-१२	,,	बलव्यसनावस्कन्दकालरक्षणम्	
१५०	पञ्चाशच्छततमं	१३-१८	३	कूटयुद्धविकल्पाः	१३-२५
१५१	एकपञ्चाशच्छततमं	१८-२३	,,	स्वसैन्योत्साहनम्	
१५२	द्विपञ्चाशच्छततमं	२३-२५	,,	स्वबलान्यबलव्यायोगः	
१५३	त्रिपञ्चाशच्छततमं	२६-२९	४	युद्धभूमयः	२६-३२
१५४	चतुष्पञ्चाशच्छततमं	२९-३२	,,	पत्त्यश्वरथकर्माणि	
१५५	पञ्चपञ्चाशच्छततमं	३३-३४	५	पक्षकक्षोरस्याकंवलाग्रतोव्यहविभागः	
१५६	षट्पञ्चाशच्छततमं	३४-४२	,,	सारफल्गुबलविभागः	३३-४४
१५७	सप्तपञ्चाशच्छततमं	४२-४४	,,	पत्त्यश्वरथहस्तियुद्धानि	
१५८	अष्टपञ्चाशच्छततमं	४५-५१	६	दण्डभोगमण्डलासंहतव्यूहव्यूहनम्	
१५९	एकोनषष्टिशततमं	५२-५५	,,	तस्य प्रतिव्यूहस्थापनम्	

संघवृत्तम्—एकादशमधिकरणम्

१६०	षष्टिशततमं	५७-६२	१	भेदोपादानानि	४६-६८
१६१	एकषष्टिशततमं	६२-६८	,,	उपांशुदण्डाः	

आवलीयसम्—द्वादशमधिकरणम्

१६२	द्विषष्टिशततमं	६९-७४	१	दूतकर्म	६९-७४
१६३	त्रिषष्टिशततमं	७५-७६	२	मन्त्रयुद्धम्	७५-८३
१६४	चतुष्षष्टिशवतमं	८४-८६	,,	सेनामुख्यवधः प्रथमो भागः	
१६४	चतुष्षष्टि शततमं	८४-८८	,,	सेनामुख्यवधः द्वितीयो भागः	
१६५	पञ्चषष्टिशततमं	८८-८९	३	मण्डलप्रोत्साहनम्	८४-८९
१६६	षट्षष्टिशततमं	९०-९४	४	शस्त्राग्निरसप्रणिधयः	९०-९६
१६७	सप्तषष्टिशवतमं	९४-९६	,,	वीवधासार प्रसारवधः	
१६८	अष्टषष्टिशतवमं	९७-१००	५	योगातिसन्धानम्	९७-१०७
१६९	एकोनसप्ततिशततमं	१००-१०५	,,	दण्डातिसन्धानम्	
१७०	सप्ततिशततमं	१०५-१०९	,,	एकविजयः	

दुर्गलम्भोपायः—त्रयोदशमधिकरणम्

संख्या	प्रकरणम्	पृष्ठाङ्कम्	अध्याय :	विषय :	पृष्ठाङ्कम्
१७१	एकसप्तविशततमं	१०८-११४	१	उपजापः	१०८-१२४
१७२	द्विसप्ततिशततमं	११५-१२५	२	योगवामनम्	११५-१२५
१७३	त्रिसप्ततिशवतमं	१२६-१३८	३	अपसर्पप्रणिधिः	१२६-१३८
१७४	चतुस्सप्तविशततमं	१३९-१४५	४	पर्युपासनकर्म	१३९-१५३
१७५	पञ्चसप्ततिशततमं	१४५-१५३	,,	अवमर्दः	
१७६	षट्सप्तविशततमं	१५४-१६०	५	लब्धप्रशमनम्	१५४-१६१

औपनिषदिकम्—चतुर्दशमधिकरणम्ः

संख्या	प्रकरणम्	पृष्ठाङ्कम्	अध्याय :	विषय :	पृष्ठाङ्कम्
१७७	सप्तसप्ततिशततमं	१६१-१७७	१	परबलाधात प्रयोगः	१६१-१७७
१७८	अष्टसप्ततिशततमं	१७८-१८९	२	तत्र अद्भुतोत्पादनम्	१७८-१८९
१७८	अष्टसप्ततिशततमं	१९०-२११	३	प्रलम्भनम् तत्र भैषज्यमन्त्र-योगः	१९०-२११
१७९	एकोनाशीतिशततमं	२१२-२१६	४	स्वबलोपधात प्रतीकारः	२१२-२१६

तन्त्रयुत्तिः—पञ्चदशमधिकरणम्

संख्या	प्रकरणम्	पृष्ठाङ्कम्	अध्याय :	विषय :	पृष्ठाङ्कम्
१८०	अशीतिशततमं	२१७-	१	तन्त्रयुक्तयः	२१७-

●

संकेत-सूची

अ०—अध्याय
अथर्व०—अथर्ववेद
अर्थशास्त्र०—कांगले संस्करण १९६९
अव्य०—अव्यय
आ०—आत्मने पदम्
उभय०—उभयपद
ऋ०—ऋग्वेद
कर्म०—कर्मवाच्य
कामन्दक०—कामन्दक नीतिसार
क्रि० वि०—क्रिया विशेषण
गण०—गणपति शास्त्री अर्थशास्त्र संस्करण १९२५
द्र०—द्रष्टव्य
न०—नपुंसक लिङ्ग
नार० पु०—नारद पुराण
नाम०—नामधातु
न्याय०—न्याय चन्द्रिका
पर०—परस्मैपद
पु०—पुल्लिङ्ग
भाग०—भागवत
म०—महाभारत
मनु०—मनुस्मृति
मुद्रा०—मुद्राराक्षस
याज्ञवल्क्य०—याज्ञवल्क्यस्मृति
योग० वा०—योगवाशिष्ठ रामायण
रघु०—रघुवंश
राजतरंगिणी०—रघुनाथ सिंह
वि०—विशेषण
सु०—सुश्रुत संहिता
स्कन्द०—स्कन्द पुराण
स्त्री०—स्त्रीलिङ्ग
संस्कृतकोशः०—आप्टे संस्करण १९६९
हे०—हेतुक

●

कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम्

सांग्रामिकम्—दशममधिकरणम्

सांग्रामिक—दसवाँ अधिकरण

अध्याय १

[सप्तचत्वारिंशच्छततमं प्रकरणम्—स्कंधावारनिवेशः]

एक सौ सैतालीसवां प्रकरण—स्कन्धावारनिवेश

वास्तुक[१]प्रशस्ते वास्तुनि नायक[२]वर्धकि[३]मौहूर्तिकाः स्कन्धावारं[४], [५]वृत्तं दीर्घं चतुरश्रं[६] वा भूमि वशेन वा, चतुर्द्वारंषट्पथं नवसंस्थानं[७]मापयेयुः खात[८]वप्र[९]सालद्वारा[१०]ट्टालकसंपन्नं भये स्थाने च ।

१. वास्तुक द्वारा प्रशंसित प्रदेश में नायक, वर्धकि एवं मौहूर्तिक वृत्त, चतुरात्र अथवा भूमि के अनुसार चार द्वार, षट्पथ एवं नौसंस्थान युक्त स्कन्धावार का निर्माण करायें और चिरकालिक भय की स्थिति में खात, वप्र, साल, द्वार एवं अट्टालक युक्त स्कन्धावार निर्मित करायें।

मध्यम[१]स्योत्तरे नवभागे राज[२]वास्तुकं धनुः शतायाम[३]मर्धविस्तारं, पश्चिमार्धे तस्यान्तः[४]पुरम् ।

२. स्कन्धावार के मध्य नवम भाग में सौ धनुष बड़ा और पचास धनुष विस्तार वाला राजा का निवास और पश्चिम ओर अन्तःपुर निर्मित करायें ।

पाठभेद :

'प्रशस्त वास्तुनि' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रशस्ववास्तुनि' तथा 'स्कन्धावारं वृत्त' का त्रिवेन्द्रम में 'स्कन्धावारमवृत्तं' तथा 'संपन्नं भये' का देवनागरी अनुलिपि में 'संपन्ना भये' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) **वास्तुक :** मकान बनाने का विशेषज्ञ, राजगीर या मिस्त्री । मनु० ३:८९, १:२०:१ ।

(२) **नायक :** चमूपति, समदेष्टा, आज्ञापक। द्र० १०:२:४, १०:६:४५ ।

(३) **मौहूर्तिक :** ज्योतिषी या मुहूर्त बतानेवाला ।

(४) **स्कन्धावार :** सैनिक छावनी । द्र० ९;६;४४

(५) **वृत्त :** गोल या गोलाकार ।

(६) **चतुरस्र :** चौकोर।

(७) **नवसंस्थान :** नवविभाग।

(८) **खात :** खाई, उपकुल्या, परिखा । द्र० २:३:४, ३:२:३; ३:५:६; २:१२:२, गण० ३:१०३ ।

(९) **प्रासाद :** प्राकार, परकोटा, दिवाल । द्र० १३:४:९ ।

(१०) **अट्टालक :** एक प्रकार का बुर्ज या प्रहरी का बुर्ज या किले की ऊँची भूमि ।

पादटिप्पणी :

२. (१) **मध्यमस्योत्तरे नवभागे :** द्र० २:४:७, कामन्दक १७:५ ।

(२) **राजवास्तुकं :** राजा का विलास ।

(३) **अन्तःपुरम् :** राजप्रासाद राजा के निवास का स्थान । द्र० १:२०:१, ४; १:२१:३, २:४:७ ।

अन्तर्वंशिकसैन्यं[१] चान्ते निविशेत ।

३. उसके समीप अन्तःपुर रक्षक सैन्य स्थान निर्मित किया जाय ।

पुरस्तादुपस्थानम्[१], दक्षिणतः कोशशासन[२]कार्यकरणानि[३], वामतो राजौपवाह्यानां हस्त्यश्वरथानां स्थानम् ।

४. राजा के निवास के सामने उपस्थान, दक्षिण ओर कोश-शासन कार्यकरण स्थान और बायें-राजवाहन हाथी, अश्व एवं रथ के स्थान निर्मित कराये जाँय ।

अतो धनुःशतान्तराश्चत्वारः शकट[१]मेथीप्रतति[२]स्तम्भ[३]साल[४]परिक्षेपाः[५] ।

५. राजभवन की दूरी पर सौ-सौ धनुष के अन्तर पर शकटों, काटों वाले वृक्षों की शाखाओं खम्भों और सालों के चार वाड़ (घेरा) लगाये जाँय ।

प्रथमे पुरस्तान्[१]मन्त्रिपुरोहितौ, दक्षिणतः[२] कोष्ठागारं[३] महानसं[४] च वामतः[५] कुप्या[६]युधागारम्[७] ।

६. प्रथम वाड़ में सामने मन्त्री-पुरोहित का निवास, दक्षिण ओर कोष्ठागार और पाकशाला तथा बायीं ओर कुप्यागार और आयुधागार बनायें जाँय ।

पादटिप्पणी :

३. (१) **अन्तर्वंशिकसैन्य** : अन्तःपुर के रक्षक या राज्य प्रासाद के रक्षक, सैनिक रक्षक । द्र० १:१२:६, १:२०:१३, १:२१:३, १२; ५:३:५, ५:६:५, गण० १:३७ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) **उपस्थान** : मिलने का स्थान, दरबार-हाल, भेंट करने तथा सुनने का स्थान । द्र० २:७:१, गण० १।९५; २३२; ३२३ ।

(२) **शासन** : सरकारी शासन का कार्यालय ।

(३) **कार्यकरण** : आदेश जारी या देखभाल करने का स्थान ।

पाठभेद :

'मेथी' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मेधी' तथा 'प्रतति' का 'प्रतती' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) **सकट परिक्षेप** : सकट द्वारा विनियोजित या वाड़ा । द्र० १०:१:६, गण० ३:१०४ ।

(२) **मेथीप्रतति** : दीवार या घेरा या पंक्ति कटीले शाखाओं की अवली । परिभाषा, द्र० १०:१:७ गण० ३:१०४ ।

आज भी गाँव में खेतों के किनारे रक्षा के लिए सेहुड़ या नागफनी लगाई जाती है ।

(३) **स्तम्भ परिक्षेप** : दारुमय स्तम्भ द्वारा कृतवाड़ा ।

(४) **शालपरिक्षेर** : शाखू के लट्ठे से बना घेरा या बाड़ा । गण० ३:१०५ ।

(५) **परिक्षेप** : चहार दीवारी या बाड़ा या घेरा । गण० ३:१०४ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) **पुरस्तात्** : आगे, अग्रभाग ।

(२) **दक्षिणतः** : दाहिने तरफ ।

(३) **कोष्ठागार** : भण्डार; मनु० ९:२८०, गण० १:७ ।

(४) **महानस** : भोजनालय; राजभवन का भोजनशाला; रसोई घर । द्र० २:४:८ ।

(५) **वामतः** : बायीं तरफ ।

(६) **कुप्य** : वन सम्पदा । द्र० १:१६:२९, ७:१६:१०; गण० १:७ ।

(७) **आयुधागार** : शस्त्रागार, मनु० ९:२८० ।

द्वितीये मौलं भृतानां[2] स्थानमश्वरथानां सेनापतेश्च ।

७. द्वितीय में मौलभृत सैन्यों का तथा अश्व-रथ और सेनापति का स्थान बनवाया जाय।

तृतीये हस्तिनः श्रेण्यः[1] प्रशास्ता[2] च ।

८. तृतोय में हस्ती, श्रेणी, बल और प्रशास्ता के स्थान बनाये जाँय ।

चतुर्थे विष्टि[1]र्नायको मित्रामित्राटवीबलं स्वपुरुषाधिष्ठितम् ।

९. चतुर्थ में विष्टि, नायक तथा स्व पुरुष नियन्त्रित मित्र-अमित्र-वत्स के स्थान बनाये जाँय ।

वणिजो[1]रूपा[2]जीवाश्चानुमहापथम्[3] ।

१०. वणिक् एवं रूपाजीवाओं (वेश्याओं) के स्थान राजपथ के समीप हों ।

बाह्यतो[1] लुब्धक[2]श्वगणि[3]नः सतूर्या[4]ग्नयः गूढा[5]श्चारक्षाः ।

११. सबसे बाहर लुब्धक, श्वगणजीवी, वाद्य एवं अग्नि से शत्रु की सूचना देने वाले पुरुष, एवं गूढ़वेशी रक्षा पुरुष रखे जाँय ।

ठापभेद :

'मौलभृतानां' का तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'मूलभृतानां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) **मौल** : आनुवंशिक या वंश परम्परागत सैनिक द्र० ९:२:२; १४; गण० ३:५१ ।

(२) **भृत** : वेतन भोगी या किराये के सैनिक सेना । गण० ३:५२ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) **श्रेण्य** : श्रेणीबल, द्र० ९:२:४ । गण० ३:५२ ।

(२) **प्रशास्ता** : छावनी का पर्यवेक्षक इसका अर्थ शासन कर्ता परामर्शदाता भी होता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) **विष्टि** : कर्मचारी, कर्मकर । द्र० १:४:१, २:१:३५, २:१५:६३, ७:२:७; गण० १:३२, १४३, ३:१०५ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) **वणिजो** : वणिक्, बनियाँ व्यापारी । गण० १:३२ ।

(२) **रूपाजीवा** : वेश्या । द्र० १:२०:२०, २:४:१६, गण० २:३५५ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) **बाह्यतो** : वहिभाग ।

(२) **लुब्धक** : बहेलिया । गण० ३:१८ ।

(३) **श्वगणिन** : शिकारी, कुत्ता पालने वाला कुक्कुर जीवी । २:१४:९, १:२१:२३, २:३४:९ ।

(४) **तूर्य** : भेरी या तुरही ।

(५) **गूढ़** : गुप्तचर । द्र० १:१६:२४, ३३, १:११:१ ।

शत्रूणामापाते[1] कूपकूटा[2]वपात[3]कण्टकिनी[4]श्च स्थापयेत् ।

१२. शत्रुओं के आगमन मार्ग पर कूपकूट, अवपात एवं काँटों से युक्त फलक स्थापित किये जांय।

अष्टादश[1]वर्गाणामारक्षविपर्यासं[2] कारयेत् ।

१३. मौलभृतादि अट्ठारह वर्गों से रक्षक पुरुष विपर्यय पूर्वक रखे जांय।

दिवायामं[1] च कारयेदपसर्प[2]ज्ञानार्थम् ।

१४. अपसर्प ज्ञानार्थ दिन में संचार व्यवस्था करे।

विवाद[1]सौरिक[2]समाज[3]द्यूत[4]करणं च कारयेत्, मुद्रा[5]रक्षणं च ।

१५. विवाद, सौरिक, समाज एवं द्यूत का निवारण और प्रवेश निर्माण हेतु मुद्रा दर्शन की व्यवस्था करे।

पादटिप्पणी :

१२. (१) **आपाते** : मार्च या बढ़ने या यान के मार्ग में नीचे गिराने वाला गड्ढा। द्र० १:२ :२, गण० १:१२३, ३:१०४।

(२) **कूपकूट** : तृणाच्छादित कूप या छिपा या ढंका हुआ कूआँ, जिसमें धोखे से प्राणी गिर जाता है। द्र० २:३:१५।

(३) **अवपात** : गर्त या गड्ढा।

(४) **कण्टकिनी** : कण्टक युक्त फलकादि या काँटा जड़ा तख्ता। एक कटीले पौधे का नाम भी है। द्र० १२:५:१५।

पाठभेद :

'आरक्ष' की तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आदमरक्ष' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) **अष्टादशवर्गाणाम** : अठारह दल या समूह छः प्रकार की सेनाओं के तीन-तीन अधिकारी अर्थात् पदिक, सेनापति तथा नायक। द्र० १०:६:४५, गण० ३:१०५।

(२) **विपर्यास** : परिवर्तन। यहाँ रक्षकों के बदलने से तात्पर्य है। अंग्रेजी में चेंजिग आफ गांड कहते हैं।

पादटिप्पणी :

१४. (१) **दिवायाम** : दिनरात। दिन के प्रहर से तात्पर्य है। गण० १०५।

(२) **अपसर्प** : गुप्तचर। द्र० १:१३:२६, २५ गणा० १:२३; ३:१०५।

पाठभेद :

'मुद्रारक्षणं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में (मुद्राक्षरणं' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) **विवाद** : मुकदमा या झगड़ा। गण० ३:२:५।

(२) **सौरिक** : मदिरा या मद्यपान सम्बन्धी।

(२) **समाज** : उत्सव या औत्सविक मिलन।

(४) **द्यूत** : जुआ।

(५) **मुद्रारक्षण** : राजकीय शील मुहर की रक्षा, गण० ३:१०५।

सेना[1]निवृत्तिमायुधीयमशासनं शून्यपालो[2] बध्नीयात् ।

१६. बिना अनुमति के सेना से आये आयुधजीवी को शून्यपाल पकड़ ले ।

पुरस्तादध्वनः सम्यक्प्रशास्ता[1]रक्षणा[2]नि च ।

याया[3]द्वर्धकिविष्टि[4]भ्यामुदकानि च कारयेत् ॥

१७. प्रशास्ता राजा के गमन के पूर्व वर्धकि और विशिष्ट जन के साथ प्रस्थान करे और मार्ग के रक्षा कर्म और जल की व्यवस्था सम्पन्न करें ।

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे स्कन्धावारनिवेशः प्रथमोऽध्यायः ।
आदित एकोनत्रिंशच्छततमः ।

दशम अधिकरण सांग्रामिक के अन्तर्गत स्कन्धावारनिवेश सम्बद्ध प्रथम अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ उन्तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठ भेद :

'सेनानिवृत्तम' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'सेनानिवृत्तम्' तथा 'शून्यपालो वध्नीयात्' का 'अन्तपालोऽनुबध्नीयात्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) सेनानिवृत्त : सेना का त्यागकर भागा सैनिक या भगोड़ा ।

(२) शून्यपाल : राजप्रतिनिधि या राज्याधिकारी या शत्ता, प्रतिशासक ।

पाठभेद :

'रक्षणानि च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ग्रहणानिच' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) प्रशास्ता : छावनी का निरीक्षक या पर्यवेक्षक । द्र० १०:१:८ ।

(२) रक्षणानि : सुरक्षा का प्रबन्ध ।

(३) यायात् : अभियान या मार्च । द्र० ७:१:१६ ।

(४) विष्टि : श्रमिक या सफर मैना या सैपर्स मानर्स ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करणमें—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः स्कन्धावारनिवेशः आदितः एकोनत्रिंशच्छततमः ॥

मैसूर संस्करणमें—

इति साङ्ग्रामिके दशमेऽधिकरणे स्कन्धावार निवेशः प्रथमोऽध्यायः आदितः एकोनत्रिंशच्छततमः ।

वसाक संस्करणमें—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः स्कन्धावारनिवेशः, आदितः एकोनत्रिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे स्कन्धावार निवेशः प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ आदित एकोनत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२९ ॥

अध्याय २

[अष्टचत्वारिंशाच्छततमं प्रकरणम्—स्कन्धावारप्रयाणम्; एकोनपञ्चाशच्छततमंप्रकरणम्—बलव्यसनावस्कन्दकालरक्षणम्]

एक सौ अड़तालीसवां प्रकरण—स्कन्धावार प्रयाण

एक सौ उन्चासवां प्रकरण—बलव्यसन-अवस्कन्द काल रक्षण

ग्रामारण्यानामध्वनि निवेशान्[1]यवसेन्धनोदकवशेन परिसंख्याय [2]स्थाना[3]सन[4]गमनकालं च यात्रां यायात् ।

१. ग्रामों एवं अरण्यों के मार्ग में निवेश योग्य स्थानों का यवस्, इन्धन एवं जल के अनुसार स्थान, आसन तथा गमन काल का निर्धारण कर यात्रा करे ।

तत्प्रतीकारद्विगुणं [1]भक्तोप[2]करणं वाहयेत् ।

२. उसमें आवश्यकता का दूना भक्तोपकरण वाहन द्वारा ले जाय ।

अशक्तो वा सैन्येष्वा[1]योजयेत्, [2]अन्तरेषु वा निचिनुयात् ।

३. वाहन द्वारा ले जाने में असमर्थता की स्थिति में सैनिकों द्वारा ले जाय अथवा निवेश स्थानों पर उनका संग्रह करे ।

पाठभेद :

'ध्वनिनिवेशान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अध्वनिवेशान्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

प्रकरण १४८, सूत्र १–१६ ।

प्रकरण १४९, सूत्र १७–२० ।

१. (१) यवस : चारा । द्र० २:३१:१ ।

(२) स्थान : रुकना, निवेश, विश्रान्ति दो या तीन मास का अस्थायी कैम्प ।

(३) आसन : शान्ति से ठहरना या रहना ।

(४) गमन : एक रात्रि का रुकना, जाना या मार्च करना ।

पाठभेद :

'तत्प्रतीकारद्विगुणं' का देवनागरी अनुलिपि तथा त्रिवेन्द्रम में 'तत्प्रतीकारं द्विगुणं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) भक्त : अन्नादि भोजनीय समान ।

(२) उपकरण : साधन, औंजार, सामग्री ।

पादटिप्पणी :

३. (१) आयोजयेत् : प्रबन्ध करना, एकत्रित करना ।

(२) अन्तरेषु : अन्तराल ।

सेना विन्यास का वर्णन सूत्र ४–१२ में किया गया है ।

पुरस्तान्[1]नायकः[2] मध्ये कलत्रं स्वामी च, पार्श्वयो[3]रश्वा बाहूत्सारः[4], चक्रान्तेषु[5] हस्तिनः प्रसारवृद्धिर्वा[6], पश्चात्[7]सेनापतिर्यायात्[8]निविशेत ।

४. सेना के आगे नायक मध्यभाग में कलत्र (स्त्रीजन) और स्वामी, दोनों पार्श्वों में बाहुओं से आघात रोकने वाले अश्वारोही, सेना के पीछे हाथी, अथवा प्रसार वृद्धि (तृणान्नादि) तथा सबसे वीछे सेनापति चले ।

सर्वतो वनाजीवः[1] प्रसारः[2] ।

५. वनोत्पन्न तुणान्नादि प्रसार है, वह सब ओर से जाय ।

स्वदेशादन्वायति[1]र्वीवधः[2] ।

६. स्वदेश से अबाध रूप से आने वाला जीविकाद्रव्य, वीवध कहा जाता है ।

मित्रबलमासारः[1] ।

७. मित्रबल आसार है ।

कलत्रस्थानमपसारः[1] ।

८. कलत्र निवास स्थान अपसार होता है ।

पाददिप्पणी :

४. (१) **पुरस्ताद् :** अग्रभाग ।

(२) **नायक :** चमूपति या रणक्षेत्र का कमाण्डर

(३) **पार्श्व :** बाहु । द्र० २:६:२०; २:१५:३, १२:५:१७, गण० १:१४० ।

(४) **बाहूत्सार :** शत्रु को पीछे हटाने वाले या प्रतिवारक । द्र० १०:४:१३,१४, गण० ३:१०७, १२३, १२४ ।

(५) **चक्रान्तेषु :** चक्र अर्थात् सेना के पीछे का अन्तिम छोर । द्र० ६:४:२५, गण० ३:१०७ ।

(६) **प्रसारवृद्धि :** बड़े पैमाने पर अन्न अथवा चारा लेने के लिए अवस्कन्द या आक्रमण करना ।

(७) **पश्चात् :** पृष्ठ भाग । द्र० ७:१:१६, ७:५:११ ।

(८) **यायात् :** मार्च, प्रयाण, कूच, अभियान ।

पाददटिप्पणी :

५. (१) **वनाजीव :** वन की उत्पत्ति पर यथा व्रीहितृणादि पर निर्वाह करने वाले ।

(२) **प्रसार :** अन्न तथा तृण के लिए आक्रमण करना ।

पाददटिप्पणी :

६. (१) **अन्वायत:** आदमियों तथा सामानों की पूर्ति ।

(२) **वीवध :** अपने देश में अबाध रूप से आने वाली या अविच्छिन्न आजीव द्रव्य के आगम को कहते हैं । गण० ३:१०७ ।

पाददटिप्पणी :

७. (१) **आसार :** मित्र की सेना या बल । द्र० ६:२:१८, ८:१:५४, ९:६:४४, गण० ३:१०७, १०८ ।

पाददटिप्पणी :

८. (१) **अपसार :** प्रत्यावर्तन स्थान । द्र० २:३:२, ७:७:२, ७:१३:२५, ७:१५:१०, १२, ८:४:१३, १०:२:२०, गण० ३:१०७,१११ ।

पुरस्तादभ्याघाते[1] मकरेण[2] यायात्, पश्चाच्छकटेन[3], पार्श्वयोर्वज्रेण[4], समन्ततः सर्वतोभद्रेण[5], एकायने[6] सूच्या[7] ।

९. सामने से आघात की स्थिति में मकराकार व्यूह में, पीछे से प्रहार की सम्भावना होने पर शकटाकृति व्यूह में, पार्श्व से आघात की सम्भावना में वज्रव्यूह में, सब ओर से आघात की स्थिति भी सर्वतोभद्रव्यूह में, एक व्यक्ति द्वारा चलने योग्य मार्ग पर सूची व्यूह में गमन करे ।

पथि द्वैधीभावे स्वभूमितो यायात् ।

१०. मार्ग में अनुकूलता एवं प्रतिकूलता का द्वैधीभाव होने पर स्वानुकूल भूमि से गमन करे।

अभूमिष्ठानां हि स्वभूमिष्ठायुद्धे प्रतिलोमा[1] भवन्ति ।

११. स्वानुकूल भूमिष्ठ नृप युद्ध में प्रतिकूल भूमिष्ठ नृपों द्वारा आक्रमण करने योग्य नहीं होते।

योजन[1]मधमा[2] अध्यर्धं मध्यमा[3], द्वियोजनमुत्तमा[4], संभाव्या वा गतिः[5] ।

१२. (प्रतिदिन) एक योजन की गति अधम, डेढ़ योजन की मध्यम दो योजन की उत्तम होती है, यथा सम्भव उक्त से अधिक गति भी हो सकती है।

पादटिप्पणी :

९. (१) अभ्याघातो : आक्रमण या धावा। गण० २:१०८।

(२) मकरे : मकरव्यूह मकर के आकार में की हुई सैन्य रचना। गण० ३:१०८।

(३) शकट : शकट व्यूह—शकट के आकार में की हुई सैन्य रचना। गण० ३:१०८।

(४) वज्रे : वज्रव्यूह, दुधारी तलवार के आकार में की हुई सैन्य रचना। गण० ३.१०८।

(५) सर्वतोभद्र : एक प्रकार का व्यूह होता है।

(६) एकायने : जहाँ अभियान में केवल एकही व्यक्ति का आना जाना सम्भव होता है।

(७) सूच्या : शूची व्यूह :

पादटिप्पणी :

११. (१) प्रतिलोमा : प्रतिकूल, विरोधी। द्र० ७:२६:२८, ८:१:३, ९:४:५२, गण० ३:१७५।

पादटिप्पणी :

१२. (१) योजन : चारकोस।

(२) अधम : एक योजन।

(३) मध्यम : डेढ़ योजन।

(४) उत्तम : दो योजन।

(५) गति : चाल।

आश्रयकारी[1] संपन्नघाती पार्ष्णिरासारो मध्यम उदासीनो वा प्रतिकर्तव्यः, संकटो मार्गः शोधयितव्यः कोशो दण्डो मित्रामित्राटवीबलं विष्टि[2]ॠतुर्वाप्रतीक्ष्याः, कृतदुर्गकर्मनिचयरक्षाक्षयः क्रीतवलनिर्वेदो मित्रबलनिर्वेदश्चागमिष्यति, उपजा[3]पितारो वा नातित्वरयन्ति, शत्रुरभिप्रायं वा पूरयिष्यति, इति शनैर्यायात्[4]; विपर्यये शीघ्रम् ।

१३. आत्मोदय हेतु आश्रय ग्रहण कर्त्ता, सम्पन्नशत्रु पर घात करने वाला, पार्ष्णिग्राह, आसार, मध्यम अथवा उदासीन का प्रतीकार करने की इच्छा रखने वाला होने पर, संकट मार्ग के शोधन करने की स्थिति में कोश, दण्ड, मित्रबल, अमित्रबल, अटवी बज, विष्टि अथवा सेनानुकूल ऋतु की परीक्षा होने पर, सम्पन्न दुर्ग कर्म, धान्य संग्रह एवं रक्षा प्रबन्ध नष्ट होने की स्थिति होने पर, कृतिबल और मित्रबल के विरक्त होने की सम्भावना होने पर, उपजपिताओं के शीघ्रता न करने पर, अथवा शत्रु द्वारा मनोरथ पूर्ण कर देने की आशा होने, धीरे धीरे गमन करे अन्यथा शीघ्र गमन न करे ।

हस्तिस्तम्भ[1]संक्रमसेतुबन्धनौकाष्ठवेणुसंघातैरलावु[2]चर्म[3]करण्डदृति[4]प्लव[5]गण्डिकावेणिकाभिश्चोदकानि तारयेत् ।

१४. हाथी, स्तम्भसंक्रम, सेतुबन्ध, नौका, काष्ठ संघात, वेणुसंघात, अलाबु, चर्मकरण्ड दृति, प्लव, गण्डिका एवं वेणिकाओं से जलतरण कराये ।

तीर्थाभिग्रहे[1] हस्त्यश्वैरन्यतो[2] रात्रावुत्तार्य सत्त्रं[3] गृह्णीयात् ।

१५. तीर्थ (घाट) का अवरोध होने पर हाथी-घोड़ों से रात्रि में अन्यत्र जल पार कर सत्त्र ग्रहण करे ।

पाठ भेद :

'दण्डोमित्रामित्रा' का तंजौर तथा देवनागरी अनुलिपि में 'दण्डामित्रामित्रा' पाठभेद मिलता है। तथा 'विष्टिऋ' का तेलार अनुप्रति लिपि में 'वृष्टिर्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) आश्रयकारी : गण० २:१०८।

(२) विष्टि : मजदूर वर्ग। द्र० १:४:२, २:१:३५, २:१५:६३, गण० ३:१०५, २००।

(३) उपजाप : गुप्त प्रोत्साहन या फुसलाना। १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२।

(४) शनैः यायात् : मन्द या धीरे-धीरे या प्रयाण।

पादटिप्पणी :

१४. (१) स्तम्भसंक्रम : लठ्ठे या खम्भे पर बना पुल। द्र० ७:१०:३२, गण० ३:१०९।

(२) अलावु : लौकी, मनु० ६:५४ गण० ३:१०९

(३) चर्मकरण : दौरी जिसपर चमड़ा मढ़ा रहता है।

(४) दृति : मशक।

(५) प्लव : ड़ोंगी। द्र० २:१:२४, गण० ३:१०९

(६) गण्डिका : पेड़ के तने की बनी नौका। द्र० ४:३:८; २:१३९, २:१४:१३, गण: ३:१०९, २२४।

पादटिप्पणी :

१५. (१) तीर्थाभिग्रह : शत्रु द्वारा घाट के अवरुद्ध या प्रतिरोध होने पर। गण० २:१०९

(२) अन्यतो : घाट विहीन स्थान या अतीर्थ प्रदेश। गण० ३:१०९।

(३) सत्त्र : शिविर, निभृत स्थान, घात का एक समय अथवा स्थान, अथवा छिपने का स्थान। द्र० १०:३:२३; गण० ३:१०९।

अनुदके[1] चक्रि[2]चतुष्पदं[3] चाध्व[4]प्रमाणेन शक्त्योदकं वाहयेत् ।

१६. जलरहित प्रदेश में गाड़ी-एवं चतुष्पदों द्वारा उस मार्ग के अनुसार यथाशक्ति जल ले जाय ।

दीर्घकान्तार[1]मनुदकं[2] यवसेन्धन[3]ोदकहीनं वा कृच्छ्राध्वानमभियोगप्रस्कन्नं[4] क्षुत्पिपासाध्वक्लान्तं पङ्कतोयगम्भीराणां[5] वा नदीदरी[6]शैलविषमे संकटे वा बहुलीभूतं निवेशे प्रस्थिते विसंनाहं भोजनव्यासक्तमायतगतपरिश्रान्तमवसुप्तं व्याधिमरकदुर्भिक्षपीडितं व्याधितपत्त्यश्वद्विपमभूमिष्ठं वा बलव्यसनेषु वा स्वसैन्यं रक्षेत्, परसैन्यं चाभिहन्यात् ।

१७. दीर्घ एवं कान्तार मार्गगामी, जलविहीन मार्गगामी, यवस-इन्धन अथवा जलरहित कठिनमार्गवर्ती, अभियोग से खिन्न, भूख-प्यास एवं मार्ग श्रम से पीड़ित, अगाध पङ्क एवं जल वाली नदियों एवं गुफाओं, पर्वतों के आरोहण तथा अवरोहण में संलग्न, एकायनमार्ग, पर्वत विषम अथवा संकट में एकत्रित अवस्थान (शिविर) और यात्रा में कवचादिरहित, भोजनरत, दीर्घमार्ग गमनखिन्न, सुप्त, व्याधि-मारक-दुर्भिक्षपीड़ित, रुग्ण पदाति, अश्व एवं गजों से युक्त, अभूमिष्ठ (प्रतिकूल स्थानस्थित) तथा बलव्यसनों से युक्त अपने सैन्यकी रक्षा करे तथा उस प्रकार के शत्रु सैन्य को नष्ट करे ।

पाठभेद :

'प्रमाणेनशक्त्यो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रमाणेशक्तयो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) अनुदक : जलविहीनस्थान ।

(२) चक्रि : गाड़ी आदि ।

(३) चतुष्पद : बलीवर्दादि, चौपाया ।

(४) अध्वप्रमाण : मार्ग की यात्रा आवश्यकतानुसार या दूरी अनुसार ।

पाठभेद :

'अभियोग प्रस्कन्न' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभियोग प्रस्कदनं' तथा 'प्रस्थितेविसंनाहं' का 'प्रस्थितेऽपिसंनाहं' तथा 'द्विपमभूमिष्ठं' का द्विपभूयिष्ठं पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) कान्तार : वियावान या गहन या दुर्गम पथ ।

(२) अनुदक : जल त्रिहीन, जल हीनता सबसे बड़ी आपदा है । द्र० १०:२:२६ ।

(३) यवस : चारा ।

(४) अध्वान : आक्रमण, यात्रा मार्ग ।

(५) प्रस्कन्न : कूदा हुआ, छलांग लगाकर पार किया हुआ, पराजित ।

(६) गम्भीर : गहरी ।

(७) दरी : कन्दरा, गुफा, खोह । गण० २:१०३ ।

एकायन[1]मार्गप्रयातस्य सेना[2]निश्चार[3]ग्रासाहारशय्या[4]प्रस्ताराग्निनिधान ध्वजायुधसंख्यानेन परबलज्ञानम् ।

१८. एकायन मार्ग से प्रयात शत्रु के एक-एक कर निकलते सैनिकों की, गजादि के भोज्य योधाओं के आहार, शय्या प्रस्तर, अग्निनिधान (चूल्हा), ध्वजा एवं आयुधों की संख्या करके शत्रुसैन्य का परिमाण जाने ।

तदात्मनो गू[1]ह्येत् ।

१९. अपने युक्त चिन्हों को छिपाये ।

पार्वतं वनदुर्गं[1] वा सापसार[2]प्रतिग्रहम्[3] ।
स्वभूमौ पृष्ठतःकृत्वा युध्येत निविशेत च ॥

२०. अपसार एवं प्रतिग्रहयुक्त पर्वत दुर्ग और वन दुर्ग तैयार कर स्वानुकूल भूमि में युद्ध और निवास करे ।

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे स्कन्धावारप्रयाणम् बलव्यसनावस्कन्द

दशम अधिकरण सांग्रामिक में स्कन्धावार प्रयाण एवं बलव्यसन-अवस्कन्द कालरक्षण

पाठभेद :

'सेनानीश्चा' का तंजोर में 'निश्चसेनानि' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'विश्वसेनानि' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सेनानी' तथा 'श्चारग्रासाहार' का 'श्चाहारग्रास' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) एकायन : एक ही व्यक्ति के गमन योग्य अर्थात् पगडण्डी या तंग रास्ता ।

(२) सेनानिश्चार : सेना के बाहर निकलना ।

(३) ग्रासाहार : चारा और घास ।

(४) प्रस्तार : विस्तरा, बिछावन,

पादटिप्पणी :

१९. (१) गूहयेत : छिपाना ।

पाठभेद :

'वन दुर्गं वा' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'वा नदी दुर्गं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) वनदुर्ग : द्र० २:३:२; गण० ३:१११,

(२) अपसार : बाहर जाना, लौटना, निर्गम स्थान, निकास । द्र० २:३:२, ७:७:२, गण० ३:१०७, १११ ।

(३) प्रतिग्रह : सेना का पिछला भाग जहाँ राजा कोतल सेना के पास रहता है । द्र० १०:५:५८ गण० २:३४९, ३५० ३:१११, १३६, १३७ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्रीसंस्करणमें—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः स्कन्धावारप्रयाणं, बलव्यसनावस्कन्दकालरक्षणं च आदितस्त्रिशच्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इतिसांग्रामिके स्कन्धावारप्रयाणं, बालव्यसनावस्कन्दकालरक्षणं च द्वितीयोऽध्यायः आदितस्त्रिशच्छततमः ।

कालरक्षणम् द्वितीयोऽध्यायः । आदितस्त्रिशच्छततमः ।

सम्बद्ध द्वितीय अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

बसाक संस्करण में—

इति कौटिल्यार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः· स्कन्धावारप्रयाणं, बलव्यसनावस्कन्दकालरक्षणं च आदितस्त्रिशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे स्कन्धावारप्रयाणं बलव्यसनावस्कन्दकालरक्षणं च द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ आदितस्त्रिशदधिकशततयोऽध्यायः ॥१२०॥

अध्याय ३

[पञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—कूटयुद्धविकल्पाः;
एकपञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—स्वसैन्योत्साहनम्;
द्विपञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—स्वबलान्यबलव्यायोगः]

एक सौ पचासवां प्रकरण—कूटयुद्धविकल्प
एक सौ एक्यावनवां प्रकरण—स्वसैन्योत्साहन
एक सौ बावनवां प्रकरण—स्वबल-अन्यबलव्यायोग

बलविशिष्टः कृतोपजापः[1] प्रति[2]विहितर्तुः स्वभूम्यां प्रकाश[3]युद्धमुपेयात् ।

१. बलविशिष्ट, शत्रुपक्षके उपजाप में समर्थ, युद्धानुकूल समय की व्यवस्था करने वाला विजिगीषु स्वभूमि में प्रकाश युद्ध स्वीकार करे ।

विपर्यये कूट[1]युद्धम् ।

२. विपरीत स्थिति में कूटयुद्ध करे ।

प्रकरण १५० : सूत्र १—२५
प्रकरण १५१ : सूत्र २६—४७
प्रकरण १५२ : सूत्र ४८—५७

पाठभेद :

'विहितर्तुः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विहितकर्तुः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) उपजाप : गुप्त रूप से फुसलाना, प्रोत्साहित करना, गुप्त रूप में प्रस्ताव रखना । द्र० १:१३:२६, १:१६:२६, २:८:३२ ।

(२) प्रतिविहितर्तुः : युद्ध योग्य समय से तात्पर्य है । या सम्पादित युद्ध योग काल ।

(३) प्रकाश युद्ध : खुला युद्ध । द्र० ७:६:१७, गण० २:२७२ ।

पाठभेद :

'कूटयुद्धम्' का 'शकटयुद्धम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) कूटयुद्ध : चातुर्यंयुद्ध, गुप्तयुद्ध, अनिश्चित काल में -छल या कपट युद्ध । द्र० ७:६:१७, १०:३:२, १२:१:७, गण० २:२३ ।

बलव्यसना[1]वस्कन्द[2]कालेषु परमभिहन्यात्, अभूमिष्ठं वास्वभूमिष्ठः, [3]प्रकृतिप्रग्रहो वा स्वभूमिष्ठम् ।

३. बलव्यसनों से युक्त तथा अवस्कन्दकाल होने पर शत्रु का नाश करे अथवा स्वयं स्वानुकूल भूमिपर होने तथा शत्रु के प्रतिकूल स्थान पर होने पर शत्रु का अभिहनन करे अथवा शत्रु के प्रकृति को उपजापादि द्वारा स्वायत्त करके अनुकूल भूमिष्ठ शत्रु का नाश करे।

दूष्यामित्राटवीबलैर्वा भङ्गं[1] दत्वा विभूमिप्राप्तं हन्यात् ।

४. दूष्यबल, अमित्रबल एवं अटवीबलों द्वारा पराजय देकर (अर्थात् इन्हें शत्रु द्वारा पराजय देकर) प्रतिकूल भूमिष्ठ शत्रु का नाश करे ।

संहतानीकं हस्तिभिर्भेदयेत् ।

५. शत्रु के एक साथ संहत बल को हाथियों द्वारा भिन्न करे।

पूर्वं[1] भङ्गप्रदानेनानुप्रलीनं भिन्नम[2]भिन्नः प्रतिनिवृत्य हन्यात् ।

६. पहले पराजित करने के कारण छिन्न-भिन्न शत्रु सेना को संहत विजिगीषु सेना लौटकर विनष्ट करे।

पुरस्तादभिहत्य प्रचलं[1] वि[2]मुखं वा पृष्ठतो हस्त्यश्वेनाभिहन्यात् ।

७. सामने आक्रमण करके पलायित अथवा विमुख शत्रु सेना को पीछे से हाथी एवं अश्व सैन्यों से नष्ट करे ।

पादटिप्पणी :

३. (१) बलव्यसन : सेना की आपदा या संकट । द्र० ८:५:१, गण० ३:३५,११० ।

(२) अवस्कन्दकाल : आकस्मिक आक्रमण । द्र० ७:६:४०, ७:१०:२९, १०:२:१७, गण० ३: ११२, १६८ ।

(३) प्रकृतिप्रग्रह : घटकों को अनुकूल या समर्थन करना । द्र० ७:५:३७, ८:३:६५, गण० १: ११२ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) भङ्ग : विद्राव या पराजय या छद्म या कपट रूप या स्वांग दिखाना ।

पाठभेद :

'अभिन्नःप्रति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिन्नं प्रति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) भङ्ग : सेना को इस प्रकार भंग कर दिखाना कि मालूम हो कि सेना बिखर गयी या छिन्न-भिन्न हो गयी है । द्र० १०:३:४ ।

(२) अभिन्न : एकत्रित हुई सेना । द्र० १०: ३:२२ ।

पादटिप्पणी :

७. (१) प्रचलं : पलायित ।

(२) विमुख : पीछे हटना ।

पृष्ठतोऽभिहत्य प्रचलं विमुखं वा पुरस्तात्सारबलेनाभिहन्यात् ।

८. पीछे से आक्रमण कर प्रचल अथवा विमुख शत्रुबल को सामने से सारबल द्वारा नष्ट करे।

ताभ्यां पार्श्वाभिघातौ व्याख्यातौ ।

९. उक्त दो प्रकारों से पार्श्वाभिघातों की व्याख्या हो गयी ।

यतो वा दूष्य[1]फल्गुबलं[2] ततोऽभिहन्यात् ।

१०. अथवा जिस ओर शत्रु का दूष्यबल एवं फल्गुबल हो उस ओर अभिहनन करे ।

पुरस्ताद्विषमायां[1] पृष्ठतोऽभिहन्यात्[2] ।

११. सामने से विषम भूमि होने पर पीछे से आक्रमण करे ।

पृष्ठतो विषमायां पुरस्तादभिहन्यात् ।

१२. पीछे से विषम होने पर, सामने से आक्रमण करे ।

पार्श्वतो विषमायामितरतोऽभिहन्यात् ।

१३. पार्श्व भाग से विषम होने पर, अन्य ओर से आक्रमण करे ।

दूष्या[1]मित्रा[2]टवी[3]बलैर्वा पूर्वं योधयित्वा श्रान्तमश्रान्तः परमभिहन्यात् ।

१४. अथवा पहले दूष्यबल, अमित्रबल और अटवीबल से युद्ध कराकर श्रान्त शत्रु पर अश्रान्त स्वयं आक्रमण करे ।

पाठभेद :

'दूष्यफलगु' का देवनागरी अनुलिपि में 'दूष्यवल्गु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) दूष्य : द्र० १:११:१७, ३:१४:२७, गण० ३:१५०, १७० ।

(२) फल्गुबल : दुर्बल सेना का सैनिक । द्र० ५:१:२१, ३९, ५४, १०:५:४३, ४५, ४६ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) विषम : असम, असमतल ।

(२) अभिहन्यात् : आघात या धावा करना ।

पाठभेद

'अभिन्यात्' का मैसूर संस्करण में 'अभिहन्यात्' मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) दूष्य बल : विश्वासघाती सेना ।

(२) अमित्र बल : शत्रु की सेना । द्र० ९:२:७ गण० ३:५४ ।

(३) अटवीबल : जंगली या बहेलियों या वनवासियों की सेना । द्र० ९:२:७, गण० ३:५४ ।

दूष्यबलेन वा स्वयं भङ्गं[१] दत्त्वा 'जितम्' इति विश्वस्तमाविश्वस्तः सत्त्रा[२]पाश्रयोऽभिहन्यात् ।

१५. अथवा दूष्यबल से युद्ध कराकर उसे (दूष्यबल को) स्वयं पराजय देकर 'मेरी विजय हो गयी' इस प्रकार विश्वस्त शत्रुपर स्वयं अविश्वस्त रहकर, सत्त्र का आश्रय प्राप्त कर, आक्रमण करे।

सार्थ[१]व्रज[२]स्कन्धावारसंवाह[३]विलोपप्रमत्तमप्रमत्तोऽभिहन्यात् ।

१६. सार्थ, व्रज एवं स्कन्धावार की रक्षा और लूट-पाट में प्रमादी शत्रुपर अप्रमत्त रहकर, स्वयं आक्रमण करे।

फल्गु[१]बलावच्छन्नसार[२]बलो वा परवीराननुप्रविश्य हन्यात् ।

१७. अथवा दुर्बल सेना से आच्छन्न सारबलयुक्त विजिगीषु अन्दर प्रवेश करके, शत्रुवीरों का विनाश करे।

गोग्रह[१]णेन श्वा[२]पदवधेन वा परवीरानाकृष्य सत्त्रच्छन्नोऽभिहन्यात् ।

१८. शत्रु देश में गोग्रहण (पशु-अपहरण) अथवा व्याघ्रवराह आदि द्वारा शत्रुवीरों को आकृष्ट कर छिपकर उनका नाश करे।

पादटिप्पणी :

१५. (१) भङ्ग : द्र० १०:३:४।

(२) सत्त्र : द्र० सूत्र २४। द्र० ७:१७:५६, ८:४:४१।

पाठभेद :

'सार्थव्रज' का त्रिवेन्द्रम् में 'स्वार्थव्रज' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) सार्थ : व्यापारियों का जत्था, कारवां, वणिक्संघ। द्र० ४:५:१५, गण० ३:११३, १९८।

(२) व्रज : गौओं का झुण्ड। द्र० ७:१४:२५, ७:१६:२।

(३) संवाह : परिवहन। गण० ३:१३।

पाठभेद :

'च्छन्नसारबलो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'च्छन्नसारबलो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) फल्गुबल : दुर्बल सेना। द्र० १०: ३:१०।

(२) सारबल : मजबूत या शक्तिशाली सेना। कामन्दक०:१९:६३।

पाठभेद

'गोग्रहणेन' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गोत्रग्रहणेन' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) गोग्रहण : पशुओं को पकड़ लेना।

(२) श्वापदवधेन : जंगली जानवरों का शिकार करना, जैसे राजा उदयन शिकार से प्रलोभित किया गया था।

(३) सत्त्रच्छन्न : आश्रय स्थान में छिपाया। द्र० १०:३:१५, २४।

रात्राववस्कन्देन जागरयित्वा निद्राक्लान्तानवसुप्तान् वा दिवा हन्यात् ।

१९. अथवा रात्रि में आक्रमण द्वारा जगाकर दिन में निद्राक्लान्त और प्रसुप्त शत्रुवीरों का नाश करे ।

सपादचर्मकोशैर्वा हस्तिभिः सौप्तिकं दद्यात् ।

२०. अथवा पैरों में रक्षाचर्म को प्रयुक्त हाथियों द्वारा सुप्त शत्रुवीरों का वध करे ।

अहः संनाहपरिश्रान्तानपराह्णेऽभिहन्यात् ।

२१. पूर्वाह्ण में संनाहपरिश्रान्त शत्रुवीरों का अपराह्ण में आक्रमण कर नाश करे ।

शुष्कचर्मवृत्तशर्कराकोशकैर्गोमहिषोष्ट्रयूथैर्वा त्रस्नुभिरकृतहस्त्यश्वं भिन्नमभिन्नः प्रतिनिवृत्तं हन्यात् ।

२२. शुष्क चर्म, वृत्त, शर्करा कोशों अथवा भयाकुल होने वाले गो, महिष एवं ऊँट के समूहों द्वारा हाथी-घोड़ा से रहित, छिन्न-भिन्न एवं प्रतिनिवृत्त शत्रुबल को संहतविजिगीषु विनष्ट करे ।

प्रतिसूर्यवातं वा सर्वमभिहन्यात् ।

२३. प्रचण्ड सूर्य एवं वायु शत्रु बल के सामने होने पर सर्वविध शत्रु बल नष्ट करे ।

पाठभेद :

'रात्राववस्कन्देन' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रात्रावस्कन्देन' तथा 'अवसुप्तान्' का तंजौर में 'अवस्तप्तान्' देवनागरी अनुलिपि में 'अपसृतान्', तेलगू अनु अतिलिपि में-'अतप्तस्तप्तान्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) अवस्कन्द : आक्रमण करना ।

पाठभेद :

'सपाद' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सपाट' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) सपादचर्मकोश : चमड़े का कोश, या जूता हाथी के पैर में कांटा धंसने से बचाने के लिए लगाया जाता था । प्राचीन काल में हाथी को उपयोग करने का यह भी एक प्रकार था ।

(२) सौप्तिकं : सोए हुए या सुप्त वध से तात्पर्य है । द्र० १०:५:५४, गण० ३:११४, १३५ ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) संनाह : शस्त्र सज्जा, कवच, युद्ध के लिए अस्त्रशस्त्र ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) शर्करा : पत्थर का ढोंका, या कंकड़ । गण० ३:२३४ ।

(२) त्रस्नु : भयभीत, डरपोक । द्र० २:२९:२२ ।

पाठभेद :

'सूर्यवातं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि, में 'सूर्यपातं' पाठभेद मिलता है ।

धान्वन[1]वन[2]संकट[3]पंङ्क[4]शैल[5]निम्न[6]विषम[7]नावो गाव[9]ः [10]शकटव्यूहो [11]नीहारो रात्रिरिति सत्राणि ।

२४. धान्वन, वन, संकट, पङ्क, शैल, निम्नस्थान, नाव, गौ, शकट व्यूह, नीहार एवं रात्रि सत्त्र हैं।

पूर्वे च ग्रहण[1]कालाः कूटयुद्धहेतवः ।

२५. पूर्वोक्तकाल और सत्त्र कूट युद्ध के हेतु हैं।

संग्रामस्तु निर्दिष्टदेशकालो धर्मिष्ठः[1] ।

२६. देश-काल निर्देश पूर्वक, धर्मानुकूल युद्ध संग्राम है।

संहत्य[1] दण्डं[2] ब्रूयात् 'तुल्यवेतनोऽस्मि, भवद्भिः सह भोग्यमिदं राज्यम्, मया[3]ऽभिहितैः परोऽभिहन्तव्यः' इति ।

२७. एकत्रित बल से (राजा उस प्रकार) कहे 'तुम्हारे समान वेतन भोगी हूँ, आप लोगों के साथ यह राज्य भोग्य है, मेरे द्वारा निर्दिष्ट लोग शत्रुका नाश करे'।

पाठभेद :

'धान्वनवनसंकट' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धान्वनसंकर' पाठभेद मिलता है।

पादटिंप्पणी :

२४. (१) धान्वन : मरुस्थल । गण० ३:११४, २०।

(२) वन : जंगल ।

(३) संकर : संकरी जगह, दर्रा या सीधा मार्ग गण ३:११४ ।

(४) पंक : कीचड़ ।

(५) शैल : पर्वत ।

(६) निम्न : दलदल ।

(७) विषम : असमानता ।

(८) नाव : नौका ।

(९) गाव : गाय ।

(१०) शकटव्यूह : गाड़ियों का बनाया गया व्यूह । गण० ३:११४ ।

(११) नीहार : बर्फ, कुहरा, धुन्ध ।

(१२) सत्त्र : निभृत स्थान । गण० ३:१०९ ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) प्रहरणकाल : आक्रमण या प्रहार या आघातकाल । द्र० १२:५:५, गण० ३:११५ ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) धर्मिष्ठ : अत्यन्त धार्मिक । द्र० ९:६:२१ ।

पाठभेद :

'मयाऽभिहितैः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मयाऽभिहितः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२७. (१) संहत्य : संयुक्त, एकत्रित हुई सेना ।

(२) दण्ड : सेना । द्र० १:५:१ ।

(३) मयाऽभिहृतै : मेरे द्वारा निश्चित या स्वयं किया गया ।

वेदेष्वप्यनुश्रूयते समाप्तदक्षिणानां यज्ञानामवभृथेषु 'सा ते गतिर्या शूराणाम्' इति ।

२८. वेदों में भी दक्षिणा, दानपूर्वक यज्ञों की समाप्ति पर, फल कहा गया हैं 'शूरों को जो गति प्राप्त होती है वह तुम्हें प्राप्त हो ।

अपीह श्लोकौ भवतः ।

२९. उसके समर्थक दो श्लोक भी हैं ।

'यान् यज्ञसंघैस्तपसा च विप्राः स्वर्गैषिणः पात्रचयैश्च यान्ति ।
क्षणेन तानप्यतियान्ति शूराः प्राणान् सुयुद्धेषु परित्यजन्तः ।।'

३०. स्वर्गेच्छुक विप्र यज्ञ संघों, तपस्या एवं सत्पात्र में दानों से जिन उत्तम लोकों को प्राप्त करते हैं, धर्म युद्धों में क्षण भर में प्राण-त्याग करने वाले शूर जन, उससे भी उत्तम लोकों को प्राप्त करते हैं ।

नवं शरावं सलिलस्य पूर्णं सुसंस्कृतं दर्भकृतोत्तरीयम् ।
तत्तस्य मा भून्नरकं च गच्छेद्यो भर्तृपिण्डस्य कृते न युध्येत् । इति ।

३१. सुसंस्कृत, कुशाच्छन्न जल पूर्ण नवीन शराव, उस व्यक्ति को न मिले और वह नरक में जाय, जो स्वामी के हित में युद्ध न करे ।

मन्त्रिपुरोहिताभ्यामुत्साहयेद्योधान् व्यूहसंपदा ।

३२. इस प्रकार मन्त्रि पुरोहितों द्वारा तथा व्यूह सम्पदा से योधाओं को प्रोत्साहित करे ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) अवभृथ : मुख्य यज्ञ की समाप्ति पर किया जाने वाला स्नान ।

पादटिप्पणी :

२९. अपीह : अपरंच ।

पाठभेद :

'पात्रचयैश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पात्रचयश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) नवशरावं : नवीन मृत्पात्र ।

(२) दर्भ : कुशा ।

पादटिप्पणी :

३२. व्यूह संपदा : व्यूह का गुण या ऐश्वर्य । द्र० २:४:४ । गण० ३:११६ ।

का[1]र्तान्तिकादिश्चास्य वर्गः सर्वज्ञ[2]दैवत[3]संयोगख्यापना[4]भ्यां स्वपक्षमुद्धर्षयेत्, परपक्षं चोद्वेजयेत् ।

३३. राजा का ज्योतिषी आदि वर्ग सर्वज्ञता और दैवत-साक्षात्कार की प्रसिद्धि करके स्वपक्ष को प्रसन्न तथा शत्रु पक्ष को उद्विग्न करे।

'श्वोयुद्धम्' इति कृतोपवासः शस्त्रवाहनं चानुशयीत ।

३४. 'कल युद्ध होगा' ऐसी स्थिति में उपवास पूर्वक शस्त्र वाहन के समीप शयन करे।

अथर्व[1]भिश्च जुहुयात् ।

३५. अथर्व वेदोक्त मन्त्रों से (शत्रु नाशार्थ) हवन करे।

विजययुक्ताः स्वर्गीयाश्चाशिषो वाचयेत् ।

३६. विजयानुकूल एवं स्वर्ग सम्बन्धी आशीर्वादों का (ब्राह्मणों द्वारा) वाचन कराये।

ब्राह्मणेभ्यश्चात्मानमतिसृजेत् ।

३७. स्वयं को (रक्षार्थ) ब्राह्मणों को अर्पित करे।

[1]शौर्य[2]शिल्पा[3]भिजनानुरागयुक्तमर्थमानाभ्यामविसंवादितमनीकगर्भं कुर्वीत ।

३८. शौर्य, शिल्प, अभिजन एवं अनुराग युक्त तथा धनमान द्वारा सम्मानित सैन्य को महान् सेना के मध्य नियुक्त करे।

पाठभेद :

'दैवतसंयोग' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दैवसंयोग' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३३. (१) कार्तान्तिक : ज्योतिषी।

(२) सर्वज्ञ : सर्वज्ञानत्व, सब कुछ जानने वाला।

(३) दैवत संयोग : द्र० १३:१:३, गण० ३:१४२।

(४) ख्यापन : ज्ञापन या प्रकाशित करना।

पाठभेद :

'चानुशयीत' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चाधिशयीत' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३५. (१) अथर्व : अथर्व वेद।

पादटिप्पणी :

३८. : (१) शौर्य : पराक्रम, वीरता, शूरता। द्र० ७:१२:१२।

(२) शिल्प : द्र० ३:३:३८, गण० १:१६४, २:१३२, १४५।

(३) अभिजन : कुलीन। द्र० ८:२:२०। गण० १:४३।

पितृपुत्रभ्रातृकाणामायुधीयानामध्वजं मुण्डानीकं[1] राजस्थानम् ।

३९. राजा के पिता, पुत्र एवं भ्रातृ सम्बन्धी आयुधियों (रक्षा पुरुषों) की राजसम्बन्ध-सूचक, वेशरहित एवं प्रधान सेना राजाके निवास स्थान के समीप रहे ।

हस्ती रथो वा राजवाहनमश्वानुबन्धः ।

४०. हाथी अथवा रथ राजा की सवारी हो और अश्वारोही दल साथ हो ।

यत्प्रायसैन्यो यत्र वा विनीतः स्यात्तदधिरोहयेत् ।

४१. राजा सेना में जिसका बाहुल्य हो अथवा जिसमें प्रशिक्षित हो उसकी सवारी करे ।

राजव्यञ्जनो[1] व्यूहाधिष्ठानं[2]मायोज्यः ।

४२. राजा के वेश वाले पुरुष को व्यूह प्रधान के रूप में नियुक्त किया जाय ।

सूत[1]मागधाः[2] शूराणां स्वर्गमस्वर्गं भीरूणां जातिसंघकुलकर्म[3]वृत्त[4]स्तवं चयोधानां वर्णयेयुः ।

४३. सूत-मागध शूरों के स्वर्ग, भीरुओं के नरक और योद्धाओं के जाति, संघ, कुल, कर्म एवं वृत्त की स्तुति करें ।

पाठभेद :

'अध्वजंमुण्डा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अध्वमुण्डा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) मुण्डानीक : बिना किसी शिविर की सेना । द्र० १०:३:३९, गण० ३:११७ :

पाठभेद :

'अश्वानुबन्धः का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अश्वानुबन्धे' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'यत्प्रायसैन्यो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यत्प्रायः सैन्यो' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'व्यूहाधिष्ठानम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्यूहानुष्ठानम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) राज व्यंजन : राजा के समान वेष भूषा ।

(२) व्यूहाधिष्ठान : व्यूह की अग्रिमसेना । गण० ३:११७ ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) सूत : पुराण, इतिहासविज्ञ । गण० ३:११७ ।

(२) मागध : स्तुतिपाठक । द्र० ३:६:१५, गण० ३:११७ ।

(३) कर्म : कार्य या कृति ।

(४) वृत्त : आचरण, वृत्तान्त, सुकर्म । द्र० ८:२:२७, ८:४:३६, गण० ३:११७ ।

पुरोहितपुरुषाः कृत्या[1]भिचारं[2] ब्रूयुः यान्त्रिक[3]वर्धकि[4]मौहूर्तिकाः[5] स्वकर्मसिद्धिम सिद्धिं परेषाम् ।

४४. पुरोहितपुरुष कृत्याभिचार कहें, यान्त्रिक, वर्धकि, मौहूर्तिक स्वकर्म सिद्धि और शत्रु कर्म की असिद्धि कहें ।

सेनापतिरर्थमानाभ्यामभिसंस्कृतमनीकं[1]माभाषेत—'शतसाहस्रो[2] राजवधः पञ्चाशत्साहस्रः सेनापतिकुमारवधः, दशसाहस्रः प्रवीरमुख्यवधः, पञ्चसाहस्रो हस्तिरथवधः, साहस्रोऽश्ववधः, शत्यः पत्तिमुख्यवधः, शिरोविंशतिकं, भोगद्वैगुण्यं स्वयंग्राहश्च ।' इति ।

४५. सेनापति धन-मान से पूजित सैन्य से इस प्रकार कहे—'राज बद्ध करने पर सौ हजार (स्वर्ण मुद्रा) सेनापति और कुमार के बध पर पचास हजार, प्रमुख प्रवीर के बध पर दस हजार हाथी एवं रथ का नाश करने पर पांच हजार, अश्व बध पर एक हजार, पदाति प्रमुख के बध पर सौ स्वर्ण मुद्रा तथा प्रति शिर पर बीस स्वर्ण मुद्रा पुरस्कार प्राप्त हो; सामान्य रूप वीरता पूर्वक युद्ध करने के फल स्वरूप, दूना भोग और स्वयं द्वारा लूटा धन प्राप्त होगा ।

तदेषां दशवर्गाधिपतयो[1] विद्युः ।

४६. इस बात को दसवर्गाधिपति ही जानें ।

पाठभेद :

'यन्त्रिकवर्धकि' का तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'सत्त्रिकवर्धकि' पाठभेद मिलता है । तथा 'असिद्धि' वा परेषाम्' का देवनागरी अनुलिपि एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'असिद्धि वा परेषाम' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) कृत्या : एक शक्ति या देवी जो अभिचार क्रिया द्वारा किसी को मारने के लिए अनुष्ठान विशेष द्वारा उत्पन्न की जाती है ।

(२) अभिचार : तन्त्रोक्त मारण आदि अनुष्ठान

(३) यान्त्रिक : कर्मकार, शिल्पकार, जो युद्ध यन्त्र बनाता है ।

(४) वर्धकि : बढ़ई । द्र० ५:३:१३ । गण० ३:१०३, १०५, २१ ।

(५) मौहूर्तिक : ज्योतिषी । द्र० २:१९:२३, गण० ३:११७, १९० ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) शतसाहस्रो : पण से तात्पर्य है । स्वर्ण मुद्रा से । द्र० १:१४:५, २:२७:१७, ३:१०:१५, ७:९:१३, ७:१४:१०, गण० ३:१३६, १३१ ।

(२) अनीकम् : सेना, सैन्य पंक्ति, दल ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) दशवर्गाधिपतयो : दशवर्गों के नायक अथवा अधिपति या प्रधान । द्र० १०:६:४५ गण० ३:१२८ ।

चिकित्सकाः शस्त्र[1]यन्त्रागद[2]स्नेह[3]वस्त्र[4]हस्ताः स्त्रियश्चान्नपानरक्षिण्यः पुरुषाणामुद्धर्षणीया[5]ः पृष्ठतस्तिष्ठेयुः ।

४७. चिकित्सक, शस्त्र, यन्त्र, अगद, स्नेह एवं वस्त्र रखने वाले पुरुष, अन्नपानरक्षिका स्त्रियां, पुरुषों को प्रसन्न कारिणी स्त्रियां पीछे स्थित रहें ।

अदक्षिणामुखं पृष्ठतः सूर्यमनुलोमवातमनीकं[1] स्वभूमौ व्यूहेत ।

४८. सेना को अनुकूल भूमि पर अदक्षिणमुख, सूर्य पीछे हों, अनुकूल वायु हो—इस प्रकार व्यूहबद्ध करे ।

परभूमिव्यूहे चाश्वांश्चारयेयुः[1] ।

४९. शत्रु के अनुकूल भूमि पर अपने अश्वों को घुमायें ।

मंत्रस्थानं प्रजवश्चाभूमि[1]र्व्यूहस्य तत्र स्थितः प्रजवित[2]श्चोभयथा जीयेत ।

५०. जिस भूमि पर सेना का चिरकाल स्थित रहना और शीघ्र कार्यशीलता संभव न हो वहां ठहरना और शीघ्र कार्य करना, दोनों ही पराजय के हेतुहोते है अर्थात् ऐसी स्थिति में पराजय होती है ।

विपर्यये जयति, उभयथास्थानेप्रजवे च ।

५१. उसके विपरीत स्थिति में स्थान और शीघ्र कर्मशीलता दोनों प्रकार से विजय होती है।

समा[1] विषमा[2] व्यामिश्रा[3] वा भूमिरिति पुरस्तत्पाश्र्वाभ्यां पश्चाच्च ज्ञेया ।

५२. सम, विषम अथवा व्यामिश्र भूमि सामने, पार्श्व और पश्चात् (पीछे) भेद से प्रत्येक तीन प्रकार की होती है ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) शस्त्रयन्त्र : शल्यचिकित्सीय उपकरण ।

(२) अगद : औषधि । गण० १:११८ ।

(३) स्नेह : घृतादि । गण० ३:११८ ।

(४) वस्त्र : घाव पर बाँधने का कपड़ा ।

(५) उद्धर्षपीय : प्रसन्न करने वाली स्त्रियाँ ।

पाठभेद :

'अनुलोमवातम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनुलोपपातम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) अनीक : सेना । द्र० ७:२०:१७ ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) चारयेयुः : गतिशील ।

पाठभेद :

'चाभूमिर्व्यूहस्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में में 'चाभूमिव्यूहस्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणो :

५०. (१) अभूमि : प्रतिकूल प्रदेश ।

(२) प्रजन : वेगवान या तीव्र गति वाला ।

पादटिप्पणी :

५२. (१) समा : समथर भूमि ।

(२) विषम : उबड़खाबर या असम भूमि ।

(३) व्यामिश्र : न सम और न असम ।

समायां[१] दण्ड[२]मण्डल[३]व्यूहाः, विषमायां[४] भोग[५]संहत[६]व्यूहाः, व्यामिश्रायां[७]-विषम[८]व्यूहाः ।

५३. त्रिप्रकारात्मक सम भूमि में दण्डव्यूह और मण्डलव्यूह, त्रिप्रकारात्मक विषम भूमि में भोगव्यूह एवं संहतव्यूह में सेना स्थित की जाय ।

विशिष्टबलं[१] भङ्क्त्वा संधिं याचेत् ।

५४. विशिष्टबली शत्रु को भङ्ग कर (उससे) सन्धि की याचना करे ।

समबलेन[१] याचितः संदधीत ।

५५. समानबली शत्रु के याचना करने पर सन्धि करे ।

हीनम[१]नुहन्यात्, न त्वेव स्वभूमिप्राप्तं त्यक्तात्मानं वा ।

५६. हीनबलशत्रु का नाश करे, किन्तु स्वानुकूल भूमि प्राप्त अथवा जीवन से निराश हीन बल शत्रु का नाश न करे ।

पुनरावर्तमानस्य निराशस्य च जीविते ।
अधार्यो जायते वेगस्तस्माद्भग्नं न पीडयेत्[१] ॥

५७. जीवन के प्रति निराशा के कारण पुनः लौटे हीनबलशत्रु का युद्धवेग धारण योग्य नहीं होता अतएव भग्न उस शत्रु को पीडित न करे ।

पाठभेद :

'भोगसंहत' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भोग-संहत' प्राठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) सम : समतल भूति ।

(२) दण्ड : दण्डाकार सेना या व्यूह की स्थापना । गण० ३:१३९ ।

(३) मण्ड : मण्डलाकार व्यूह की स्थापना । गण० ३:१३९ ।

(४) विषम : एक प्रकार की सैन्य व्यूह रचना । द्र० ४:३:१९; गण० ३:११४ ।

(५) भोग व्यूह : गण० ३:१३९ ।

(६) संहत व्यूह : द्र० २:१४:३१ ।

(७) व्यामिश्र : द्र० ९:६:३४, गण० ३:१३१ ।

(८) विषम व्यूह : गण० ३:१२९ ।

पादटिप्पणी :

५४. (१) विशिष्ट बल : अपने से बलवान होने पर ।

पादटिप्पणी :

५५. (१) समबलेन : समान बलशाली ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) हीन : कमजोर ।

पादटिप्पणी :

५७. (१) पीडयेत : महाभारत १२:१००,१३ ।

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे कूटयुद्धविकल्पाः, स्वसैन्योत्साहनम्, स्वबलान्यबलव्यायोगः तृतीयोऽध्यायः । आदित एकत्रिंशच्छततमः ।

दशम अधिकरण सांग्रामिक के अन्तर्गत कूटयुद्धविकल्प, स्वसैन्योत्साहन, स्वबल अन्य बल व्यायोग सम्बद्ध तृतीय अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ एकतीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः कूटयुद्धविकल्पाः स्वसैन्योत्साहनं स्वबलान्यबलव्यायोगश्च । आदित एकत्रिंशच्छततमः ॥

मैसूर संस्करण में—

इति सांग्रामिके कूटयुद्धविकल्पाः स्वसैन्योत्साहनं स्वबलान्यबलव्यायोगश्च तृतीयोऽध्यायः आदित एकत्रिंशच्छततमः ।

वसाक संस्करणमें—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः कूटयुद्धविकल्पास्स्वसैन्योत्साहनं स्वबलान्यबलव्यायोगश्च । आदित एकत्रिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करणमें—

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे कूटयुद्धविकल्पाः स्वसैन्योत्साहनं स्वबलान्यबलव्यायोगश्च तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

आदित एकत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३१ ॥

अध्याय ४

[त्रिपञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—युद्धभूमयः; चतुष्पञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—पत्त्यश्वरथहस्तिकर्माणि]

एक सौ तिरपनवां प्रकरण—युद्धभूमियां

एक सौ चौवनवां प्रकरण--पत्ति-अश्व-रथ-हस्ति कर्म

स्वभूमिः पत्त्य[1]श्व[2]रथ[3]द्विपा[4]नामिष्टा युद्धे निवेशे च ।

१. पत्ति, अश्व, रथ एवं द्विपों के युद्ध तथा अवस्थान के स्वानुकूल भूमि वांछित होती है।

धान्वन[1]वन[2]निम्न[3]स्थल[4]योधिनां खनका[5]काश[6]दिवा[7]रात्रि[8]योधिनां च पुरुषाणां नादेय[9]पार्वता[10]नूप[11]सारसानां[12] च हस्तिनामश्वानां च यथास्वमिष्टा युद्धभूमयः कालाश्च ।

२. धान्वन, वन, निम्नस्थान एवं स्थल में युद्ध कर्ता और खनक, आकाश में एवं दिन रात युद्ध कर्त्ता पदाति पुरुषों तथा नदी, पर्वत, अनूप एवं सरोवर सम्बन्धी हाथियों और अश्वों के लिए स्वानुकूल युद्धभूमि तथा समय अपेक्षित होते हैं।

प्रकरण १५३, सूत्र १-१२।

प्रकरण १५४, सूत्र १३-१८।

पादटिप्पणी :

१. (१) पत्य : पैदल सैनिक :

(२) अश्व : अश्व, घोड़ा।

(३) रथ : रथ।

(४) द्विपा : हाथी ।

पाठभेद :

'पार्वतानूप' का देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पर्वतानूप' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२. (१) धान्वन : मरुस्थल या मरु भूमि या रेतीली भूमि। द्र० १०:३:१२, गण० ३:११४, ११७।

(२) वन : जगल। गण० ३:१११।

(३) निम्नभूमि : जलीयभूमि। द्र० २:३:१, २:३३:८, गण० ३:११४।

(४) स्थलभूमि : जमीन। द्र० ३०:२५:३२।

(५) खनका : दवाई या टेन्च। द्र० ७:१०:२६, गण० ३:१२१।

(६) आकाश : शून्य या खुला स्थान। गण० ३:१२९।

(७) दिवा : दिन। गण० ३:१२१।

(८) रात्रि : रात। गण० ३:११४, १२१।

(९) नादेय : नदी। गण० ३:१२१।

(१०) पर्वत : पहाड़

(११) अनूप : कच्छ भूमि या दलदल या जलप्राय स्थान। द्र० २:२४:५।

(१२) सारसानां : झीला या सरावर।

समो[1]स्थिरा[2]ऽभिकाशा[3]निरुत्खातिन्यचक्रखुराऽनक्षग्राहिण्यवृक्षगुल्मव्रतती-स्तम्भकेदार[5]श्वभ्रवल्मीकसिकतापङ्कभङ्गुरादरण[6]हीना च रथभूमिः, हस्त्यश्वयोर्मनुष्याणां च समे विषमे हिता युद्धे निवेशे च ।

३. सम, स्थिर, अभिकाश, उन्नतावनतरहित, जिसमें चक्र, खुर एवं अक्ष (चक्राधार) न धंसते हों, वृक्ष, गुल्म, लता, स्तम्भ, केदार, गर्त, वल्मीक, सिकता, (बालू), पंक, वक्र (टेढ़ापन) और दरार रहित भूमि, रथानुकूल भूमि होतो है और वही भूमि हाथी, घोड़ा और मनुष्यों के लिए सम एवं विषम प्रदेश में युद्ध और निवास के अनुकूल होती है ।

[1]अण्व[2]श्मवृक्षा ह्रस्व[3]लङ्घनीयश्व[4]भ्रामन्ददर[5]णदोषा चाश्वभूमिः ।

४. छोटे पत्थरों एक्ष वृक्षों वालो, लांघने योग्य छोटे गर्त्तों वालो, अल्प दरारों वाली, भूमि अश्वों के लिए अनुकूल होती है ।

स्थूलस्था[1]ण्वश्मवृक्षव्रत[2]तीव[3]ल्मीकगुल्मा[4] पदातिभूमिः ।

५. मोटे (बड़े) स्थाणु (वृक्ष स्तम्भ) पत्थर, वृक्ष, लता, वल्मोक एवं गुल्मों वाली भूमि पदाति मनुष्यों के लिये अनुकूल होती है ।

पाठभेद :

'व्रतता' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतती' तथा 'पङ्क भंगुरा' का तंजौर में ''भङ्गभंगु भंगुरा', देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भङ्गभंगुरा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) सम : बराबर या ऊँचाई निचाई रहित स्थान ।

(२) स्थिर : दृढ़, जो भूमि पोली नहो । गण० ३:१२१

(३) अभिकाश : स्पष्ट या साफ दिखाई पड़ने वाला घास आदि रहित । गण० २:१२१ ।

(४) चक्रखुराऽनक्षग्राहिण्य : पहिये या खुर को न पकड़ने वाला ।

(५) केदार : घान का खेत, कियारी, थाला । गण० १:१२७, ३:१२१ ।

(६) दरणहीन : जिस भूमि में दरार न हो या जो भूमि विदीर्ण न हो । गण० ३:१२१ ।

पाठभेद :

'ह्रस्वलङ्घनीय' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वलङ्घनीय' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) अणु : छोटा या तुच्छ ।

(२) अश्म : पत्थर ।

(२) ह्रस्व : छोटा, लघु ।

(४) श्वभ्र : छिद्र, विवर । गण० ३:१२१ ।

(५) दरण : दरार ।

पाठभेद :

'व्रतली' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतती' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) स्थाण्व : वृक्ष के तने से बना या उत्पन्न ।

(२) व्रतती : लता १५:१०, ४:३ ।

(३) वल्मीक : दीमक या चीटी से चाली हुई मिट्टी का ढेर या ढूहा या विमौटा ।

(४) गुल्म : क्षुप-छोटि तने वाला पेड़ या झाड़ो । द्र० ३:१:२१, २:१६:१८, २:३५:१२, ३:२०:१४।

गम्यशैल[1]निम्नबिषमा[2] मर्द[3]नीयवृक्षा छेद[4]नीयव्रततीपङ्कभङ्गुरा दरणहीना च हस्तिभूमिः ।

६. गमनयोग्य शैल, निम्नस्थान एवं विषम स्थान वाली मर्दन (रगड़ने) योग्य वृक्षों से युक्त, काटने योग्य लताओं वाली तथा पंक, भंगुर और दरार रहित भूमि हाथियों के अनुकूल होतो है।

अकण्टकिन्यबहुविषमाप्रत्या[1]सारवतीतिपदातीनामतिशयः ।

७. कांटों से रहित, अतिवैषम्य रहित, परावर्तन सौविध्य युक्त, पदतियों के अत्यनुकूल होतो है ।

द्विगुण[1]प्रत्यासारा कर्दमोदकख[2]ञ्जनहीना निःश[3]र्करेति वाजि[4]नामतिशयः ।

८. लौटनें की जिसमें दूनी सुविधा हो ऐसी कर्दम (कीचड़), जल एवं खज्जन रहित कंकड़ रहित भूमि अश्त्रों के लिए अधिक उत्तम होती है।

पांसुकर्दमोदकनल[1]शरा[2]धानवती श्वदं[3]ष्ट्रहीना महावृक्षशाखाघातवियुक्तेति हस्तिनामतिशयः ।

९. धूलि, कर्दमोदक (कीचड़-जल) नरकुल एवं मूँज वाली गोखरू रहित, बड़े वृक्षों की शाखाओं के आघत से रहित भूमि हाथियों के लिए अधिक अनुकूल होती है ।

पाठभेद :

'शैलनिम्नविषमा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शैल विषमानिम्न' पाठभेद मिलता है । तथा 'व्रतलो' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रततो' तथा 'भंगुरादरणहीना' का न्याय चन्द्रिका में 'भंगुरदरणहीना' पाठभेद मिलता हैं ।

पादटिप्पणो :

६. (१) गम्यशैलनिम्नविषमा : असमपर भूमि जो पहाड़ियों और नालों से भरी हो ।

(२) विषम : असमथर भूमि । द्र० ३:८:२, कामन्दक० २०:१४ ।

(३) मर्दन : रगड़ना उखाड़ना ।

(४) छेदनीयव्रततीपङ्कभङ्गुरा : काटने योग्य लताओं वाली कीचड़ तथा गढे से रहित ।

पादटिप्पणी :

७. (१) प्रत्यासार : सेना के पीछे लौटने का स्थान, रिट्रीट, ऐसी मोर्चेबन्दी जिसमें एक व्यूह के पश्चात् दूसरा व्यूह बनाया गया हो ।

पादटिप्पणी :

८. (१) द्विगुण : दूना ।

(२) खञ्जनहीन : पंकिल या दलदल हीन भूमि । द्र० १३:४:३२, गण० ३:१२३ ।

(३) शर्करा : कंकड़ ।

(४) वाजि : घोड़ा, अश्व ।

पाठभेद :

'शराधानवती' का तंजौर में 'शराधावती' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शराश्रयवती' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) नल : नरकुल, नरकट । ८:३:४३ ।

(२) शराधान : घास या मूंज की बाड़ या झाड़ी या सेवार आदि । गण० ३:१२२ ।

(३) श्वदंष्ट्रहीना : गोखरू या गोकण्टक विहीन । द्र० २:३:१५, गण० ३:१२३ ।

तोयाशया[1]पाश्रय[2]वती निरुत्खातिनी[3] केदारहीना व्यावर्तन[4]समर्थेति रथानामतिशयः ।

१०. जलाशय और विश्रमस्थान युक्त, उत्पादनरहित, केदारविहीन, लौटने की सुविधा वाली भूमि रथों के लिये अधिक उपयुक्त होती है ।

उक्ता सर्वेषां भूमिः ।

११. सबकी भूमियां कह दी गयी ।

एतया सर्वबलनिवेशा युद्धानि च व्याख्यातानि भवन्ति ।

१२. इस प्रकार सव प्रकार के बलों के निवेश एवं युद्ध की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

भूमि[1]वास[2]वन[3]विचयो[4]ऽविषम[5]तोय[6]तीर्थवातरश्मिग्रहणं वीवध[7]ासारयोर्घातो[8] रक्षा

१३. भूमि विचय, वासविचय, वनविचय, अविसम, तोय, तीर्थ, वात एवं रश्मियुक्त स्थान का ग्रहण, शत्रु के विवध आसार का घात अपने वीवधादि की रक्षा, सेना की विशुद्धि और वध

पाठभेद :

'तोयाशयापाश्रय' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तोयाशयाश्रय' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) तोयाशया : स्नानयोग्य जलाशय ।

(२) आश्रयवती : विश्राम स्थान ।

(३) निरुत्खातिनी : ऊँचाई निचाई या हिलने अथवा कम्पन रहित ।

(४) व्यावर्तन : घूमना । गण० ३:१४२ ।

पाठभेद :

'निवेशा' का देवनागरी अनुलिपि में 'निवेशानि' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'वनविचयोऽविषम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वननिचयो विषम्' तथा 'विशुद्धिः स्थापना' का 'विशुद्धिस्थापना' तथा 'प्रसारवृद्धिर्वाह' का 'प्रसार वृद्धिबाहु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) भूमि विचय : भूमि की परीक्षा अन्वेषण या भूमि का संशोधन । द्र० ३:८०६ ।

(२) वास विचय : निवास स्थान या ठहरने के स्थान का अन्वेषण या परीक्षण या निवास स्थानों का उपद्रव दूर करना ।

(३) वन विचय : वन का अन्वेषण या परीक्षण या संशोघम या वन का निराकरण करना ।

(४) विचय : खोज, अन्वेषण, संशोधन या परीक्षा । द्र० २:२५:३८ २:३६:१४, ४:२१:१२, ५२:१:२४ ।

(५) अविषम : असमथल भूमि ।

(६) तीर्थ : घाट तरण स्थली । द्र० २:२८:१४, १६, २:२९:३३ ।

(७) वीवध : पूर्ति । द्र० ७:६:८, ७:७:३, ८:५:४, ९:६:४८, १२७ १०२६ ।

(८) घात : नाश या हत्या । द्र० ३:१९:२१ ९:५:१६ ।

वा विशुद्धिः[१०] [११]स्थापना च बलस्य प्र[१२]सारवृद्धिर्वाहूत्सारः पूर्वप्रहारो [१३]व्यावेशनं व्यावे[१४]धनमाश्वासौ [१५]ग्रहणमोक्षणं[१६] [१७]मार्गानुसारविनिमयः [१८]कोशकु[१९]माराभिहरणं जघनकोट्यभिघातो [२०]हीनानुसारणमनुयानं[२१] [२२]समाजकर्मेत्यश्वकर्माणि ।

स्थापना, प्रसार वृद्धि, बाहूत्सार, शत्रु पर पूर्व प्रहार, व्यावेशन, व्यावेधन. अश्वाशन, शत्रुभटग्रहण, शत्रु द्वारा गृहीत स्वभट का मोक्षण, मार्गानुसार विनिमय, शत्रु के कोष एवं कुमार का अभिहरण, पीछे और सामने अभिघात, हीनानुशरण, अनुयान तथा समाज कर्म, अश्व कर्म (अश्वों द्वारा सम्पन्न करने योग्य होते) हैं ।

पुरोयानमकृतमार्गवासतीर्थकर्मवाहूत्सारस्तोयतरणा[१]वतरणे स्थानगमना[२]वतरणं वि[३]षमसं[४]बाधप्रवेशोऽग्निदानशमनमे[५]काङ्गविजयो भिन्नसं[६]धानमभिन्नभेदनं व्यसने

१४. सेना के आगे गमन, अनिर्मित मार्ग, वास स्थान, एवं तीर्थ स्थान (नदी, घाट) का निर्माण, बाहुत्सार, जल का परिमाण ज्ञान और अवतरण में स्थान, गमन, अवतरण, विषम, एवं सम्वाध स्थान में प्रवेश शत्रुपक्ष में अग्नि प्रक्षेप और स्वपक्ष का अग्नि शमन सेना के एक

---

(९) रक्षा : सुरक्षा हिफाजत । १:३६:४२ ।

(१०) विशुद्धि : शुद्धता परिशोध, ।

(११) स्थापना : दृढ़ करना ।

(१२) प्रसारबृद्धिर्बाहू : आक्रमण का बढ़ाना । द्र० १०:२:५, गण० ३:१०७, १२३, ।

(१३) व्यावशेनम् : शत्रु सेना के प्रदेश । गण० ३:१२४ ।

(१४) व्यावर्धन : शत्रु सेना को तोड़ना । गण० ३:१२४, १२५ ।

(१५) ग्रहणम् : पकड़ना या बन्दी बनाना ।

(१६) मोक्षणम् : मुक्त करना । गण० ३:१२४ १२५ ।

(१७) मार्गानुसार विनिमय : शत्रुको पीछा करने से मार्ग विरत करना या बदलना, पीछे पहुँचकर उसका पीछा करना । गण० ३:१२४ ।

(१८) कोश : खजाना ।

(१९) कुमार : राजकुमार गण ३:१२४ ।

(२०) हीनानुसार : कमजोर का पीछा करना गण० ३:१२४ ।

(२१) अनुयान : पीछे चलना । गण० ३:१२४

(२२) समाज कर्म : व्यूहन या पुनः एकत्रित करना । गण० १:२१:२६, १३:३:५६, १३:४:८, ३:२४ ।

पाठभेद :

'विषमसंबाधप्रवेशो' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'विषमं संवाधः प्रवेशो' तथा 'कोशवाहनापवाहनम्' का 'कोशवाहनम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) तरण : पार करना ।

(२) अवतरण : उतरना । गण० ३:१२४ ।

(३) विषम : कठिन, असमतल । गण० ३:१२३ ।

(४) संवाध : भरा हुआ, संकुल, भीड़ ।

(५) एकाङ्गविजय : सेना के एक बाहु से विजय प्राप्त करना । गण० ३:१२६ ।

(६) सन्धान : मिलना, जोड़ना, योग करना ।

त्राण[७]मभि[८]घातो विभीषि[९]का [१०]त्रासनमौदार्यं ग्रहणं मोक्षणं [११]सालद्वाराट्टालकभञ्जनं [१२]कोश[१३]वाहना[१४]पवाहनमिति हस्तिकर्माणि ।

आग द्वारा विजय, भिन्न संधान, अभिन्न भेदन, व्यसन में त्राणा, अभिघात, विभीषिका उत्पादन, त्रासन, औदार्य, शत्रु भटग्रहण, स्वभटमोक्षण, साल द्वार एवं अट्टालक भंजन, कोष का वाहन और अपवाहन, हस्ति कर्म (हाथियों द्वारा ये सम्पाद्य होते) हैं ।

स्वबलरक्षा चतुरङ्गबलप्रतिषेधः[१] संग्रामे[२] ग्रहणं मोक्षणं भिन्नसंधानमभिन्नत्रासनमौदार्यं भीमघोषश्चेति रथ[३]कर्माणि ।

१५. स्वबल रक्षाङ्ग संग्राम में शत्रु के चतुरंगबल का निषेध, शत्रुभटग्रहण, स्वभटमोक्षण, भिन्न संधान, अभिन्न शत्रुबल का भेदन, त्रासन, औदार्य एवं भयंकर ध्वनि उत्पादन रथकर्म हैं ।

सर्वदेशकालशस्त्रवहनं व्यायाम[१]श्चेति पादाति[२]कर्माणि ।

१६. सब प्रकार के दो देश-काल में शस्त्र धारण और व्यायाम पदाति कर्म हैं ।

शिवि[१]रमार्गसेतुकूपतीर्थशोधनकर्मयन्त्रायुधावरणोपकरणग्रासवहनमायोधनाच्च प्रहरणावरणप्रतिविद्धापनयनमितिविष्टिकर्माणि ।

१७. शिविर, मार्ग, सेतु, कूप, एवं तीर्थों का शोधन कर्म यन्त्र, आयुध, आवरण, उपकरण एवं ग्रास वहन करना, युद्ध भूमि से प्रहरण, आवरण एवं प्रतिविद्ध (घायल) का अपनयन विष्टि कर्म है ।

---

(७) त्राण : भय के हेतु का निराकरण, रक्षा बचाना ।

(८) अभिघात : प्रहार, आघात, विनाश । गण० ३:१२४ १४६ ।

(९) विभीषिका : भय प्रदर्शन, डरावना, आतंकित करना । गण० ३:१२४ ।

(१०) त्रासन : भय का कारण, त्रस्त करना । गण० ३:१२५ ।

(११) साल : दुर्ग प्राचीर, प्राकार ।

(१२) कोश : खजाना ।

(१३) वाहन : भीतर लाना १:२१, १८ ।

(१४) अपवाहन : बाहर ले जाना । गण० २:१२१, ८८४:११५ ३:१२५ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) प्रतिषेध : १:१२:१३:१६ ।

(२) संग्राम : गण ३:११५ ।

(३) रथकर्म : रथ कार्य । गण० ३:१३५ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) व्यायाम : शस्त्र क्रिया या उत्साह । द्र० १:१६:२९ ३:२७:३० गण० ३:१२५ ।

(२) पदातिकर्म : पैदल सेना का कार्य गण० ३:१२५ ।

पादटिप्पगी :

१७. (१) शिविर : सेना निवेश का पड़ाव ।

(२) विष्टिकर्म : श्रमिकों का कार्य । गण० ३:१२५ ।

कुर्याद्[1]गवाश्वव्यायोगं रथेष्वल्पहयो नृपः ।
खरोष्ट्र[2]शकटानां वा गर्भमल्पगजस्तथा ॥

१८. अल्प अश्वों वाला नृपति अश्वों के साथ बैलों का प्रयोग करे और अल्प गजों वाला (नृप) खर उष्ट्र एवं शकटोंके मध्य अपनी सेना सुरक्षित करे ।

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे युद्धभूमयः पत्त्यश्वरथहस्तिकर्माणि चतुर्थोऽध्यायः । आदितः द्वात्रिंशच्छततमः ।

दशम अधिकरण सांयामिक में युद्धभूमि, पत्ति-अश्व-रथ-हस्ति कर्म सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) गवाश्व : गाय और घोड़ों और बैलों को रथ में जोतना ।

(२) खरोष्ट्र : गदहा और ऊँट । सिन्ध तथा राजस्थान मरु प्रदेश मैंने गाड़ी में जोता देखा है ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः युद्धभूमयः पत्यश्वरथहस्तिकर्माणि, आदितो द्वाभिशक्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति सांग्रामिके युद्धभूमयः पत्तश्वरथहस्ति कर्माणि चतुर्थोऽध्यायः आदितो द्वात्रिशतितमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः युद्धभूमयः पत्त्यश्वरथहस्ति कर्माणि आदितो द्वात्रिशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे युद्धभूमयः पत्त्यश्वरथहस्ति कर्माणि चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४॥ आदितो द्वात्रिशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३२ ॥

अध्याय ५

[पञ्चपञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—पक्षकक्षोरस्यबलाग्रतो व्यूहविभागः; षट्पञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—सारफल्गुबलविभागः; सप्तपञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—पत्त्यश्वरथहस्तियुद्धानि]

एक सौ पचपनवां प्रकरण—पक्ष-कक्ष-उरस्यबलविभाग ।
एक सौ छप्पनवाँ प्रकरण—सार फल्गुवलविभाग ।
एक सौ सत्तावनवां प्रकरण—पत्ति-अश्व-रथ-हस्तियुद्ध ।

पञ्चधनुःशतापकृष्टं दुर्गमवस्थाप्य युद्धमुपेयात् भूमिवशेन वा ।

१. पांच सौ धनुष परिमाण की दूरी पर, दुर्ग (स्कन्धावार) स्थापित कर अथवा भूमि के अनुरूप दूरी पर, युद्ध स्थान निश्चित करे ।

विभक्तमुख्यामचक्षुर्विषये मोक्षयित्वा सेनां सेनापतिनायकौ व्यूहेयाताम् ।

२. सेनामुख्यों को विभक्त कर, सेना को शत्रु से अदृश्य स्थान पर, सुरक्षित कर, सेनापति और नायक सेना का व्यूहन करें ।

प्रकरण १५५, सूत्र १:४ ।
" १५६, सूत्र ४१:५२ ।
" १५७, सूत्र ५३:५६ ।

पाठभेद :

'शताप कृष्टंदुर्गं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शतापकृष्टदुर्गं' तथा मैसूर संस्करण में 'शतापकृष्टदुर्गं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) **धनु :** चार हाथ लम्बा । याज्ञ० २:१६७, ६:२३७, गण० ३:१३७, १३७ ।

(२) **अपकृष्ट :** हटकर या दूर या फासलापर ।

(३) **दुर्ग :** केवल किला ही नहीं किन्तु कोई भी किला वन्दी हो सकती है, जहाँ शत्रु का पहुँचना कठिन होता है । दुर्ग ५०० धनुष सेना से दूर होता है । गण० १:१२७ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) **मोक्षयियत्वा :** पीछे की रथ सेना को मुख्य सेना से पृथक् करना । द्र० ३:३:३:१२ ।

(२) **सेनापति :** कमाण्डर इन चीफ या कमाण्डर । आजकल कारपोरल कहते हैं । द्र० १०:१:७, ९, १०:२:४३, १०:६:४५, गण० ३:११८, १२७, १४७ ।

(३) **नायक :** दश सेनापतियों का अधिपति या अध्यक्ष ।

शमान्तरं पत्तिं स्थापयेत्, त्रिशमान्तरमश्वम्, पञ्चशमान्तरं रथं हस्तिनं वा ।

३. एकशम के अन्तर पर, पदाति सैनिक को, तीन शम के अन्तर पर, अश्व को और पांच शम के अन्तर पर, रथ अथवा हाथी को स्थित करे ।

द्विगुणान्तरं त्रिगुणान्तरं वा व्यूहेत ।

४. अथवा उक्त से दूने अथवा तिगुने अन्तर पर, पदाति आदि का व्यूहन करे ।

एवं यथासुखमसंबाधं युध्येत ।

५. इस प्रकार सुख पूर्वक (बिना भीड़-भाड़ के) युद्ध करे ।

पञ्चारत्नि धनुः ।

६. पांच अरत्निका एक धनुष होता है ।

तस्मिन् धन्विनं स्थापयेत् त्रिधनुष्यश्वम्, पञ्चधनुषि रथं हस्तिनं वा ।

७. एक धनुष के अन्तराल पर, धनुर्धारीयोधा को तीन धनुष के अन्तर पर अश्व को । पांच धनुष पर रथ अथवा हाथी का व्यूहन करे ।

पञ्चधनुरनीकसंधिः पक्षकक्षोरस्यानाम् ।

८. पांच धनुष के अन्तराल पर पक्ष, कक्ष एवं उरस्य बल का व्यूहन करे ।

पादटिप्पणी :

३. (१) शम : चौदह अंगुल, दो सैनिकों के बीच का अन्तर या फासला होता है । द्र० २:२०:११ ६:२:१,३, ७:१७२:१३, गण० ३:१२७ ।

पदात्यादि व्यूहन प्रकार ।

(२) पत्ति : पैदल सैनिक ।

पादटिप्पणी :

धन्वादि विषय तथा अन्तराल विधि ।

६. (१) अरत्नि : दो वित्ता या एक हाथ का एक अरत्नि होता है । द्र० २:२०:१२, ३:८:९ ।

(२) धनु : चार अरत्नि का एक धनु होता है । द्र० ३:२०:१८, ३:८:९, गण० ३:१२७, १२८, कामन्दक: २०:२२ ।

पादटिप्पणो :

७. (१) धन्विन : धनुषधारी सैनिक । गण० १:२१:१ ।

पादटिप्पणी :

८. (१) अनीक सन्धि : सेना समूह पंक्ति, सैन्य पंक्ति । दो पंक्ति के मध्य खुले भाग को सन्धि कहते है । गण० ३:१२८ ।

(२) पक्ष : सेना का दांया बाँया भाग या विंग । द्र० १०:४:६७, १०:६:१, ।

(३) कक्ष : पार्श्व, सेना की टुकड़ी का दाँया या बाँया पक्ष या फ्लैंक । द्र० १०:५:१७, १०:६:२; ।

(४) उरस्य : सेना का मध्य भाग या सेण्टर ।

अश्वस्य त्रयः पुरुषाः प्रतियोद्धारः ।

९. अश्व के आगे तीन प्रतियोद्धा पुरुष रहें ।

पञ्चदश रथस्य[1] हस्तिनो वा, पञ्च चाश्वाः ।

१०. रथ अथवा हाथी के आगे पन्द्रह प्रतियोद्धा पुरुष और पांच अश्वारोही सैनिक रहें ।

तावन्तः पादगोपा[1] वाजि[2]रथद्विपानां[3] विधेयाः ।

११. अश्व, रथ, और गजों के उतने (पांच पुरुष) पादगोप हों ।

त्रीणि त्रिकाण्यनीकं[1] स्थानामुरस्यं स्थापयेत्, तावत्कक्षं पक्षं चोभयतः ।

१२. उरस्य भाग (मध्य) में तीन त्रिक अर्थात् तीन-तीन रथ सेना की तीन पंक्तियां बनाई जायँ और उतनी-उतनी ही रथ सेना दोनों कक्षों और दोनो पक्षों में रखी जायँ ।

पञ्चचत्वारिंशद् एवं रथा रथव्यूहे भवन्ति, द्वे शते पञ्चविंशतिश्चाश्वाः, षट्छतानि पञ्चसप्ततिश्च पुरुषाः प्रतियोद्धारः, तावन्तः पादगोपाः ।

१३. इस प्रकार रथ व्यूह में पैतालीस रथ होते हैं, दो सौ पचीस घोड़े, छः सौ पचहत्तर पुरुष प्रतियोद्धा और उतने ही पादगोप होते हैं ।

एष समव्यूहः[1] ।

१४. यह समव्यूह है ।

पादटिप्पणी :

अश्वारोही के आगे लड़ने वाले सैनिकों की संख्या ।

९. (१) त्रय : अश्व के आगे ३ पाद सैनिक लड़ने के लिए रखे जाँय ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) रथस्य हस्तिनो वा : रथ तथा हाथी का प्रयोग प्रायः एक साथ नहीं मिलता, केवल यहीं किया गया है । द्र० ९:२:२७ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) पादगोपा : पैदल रक्षक । गण० ३:१२८ ।

(२) वाजि : अश्व ।

(३) द्विप : हाथी ।

पादटिप्पणी :

उदर में सेना की संख्या ।

१२. (१) त्रीणि त्रिकाण्यनी : तीन पंक्ति, तीन रक्षित इकाइयों की ।

पाठभेद :

'रथा रथव्यूहे' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रथा व्यूहे' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'रथाद्व्यूहे' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) समव्यूह : गण० ३:१२९ ।

तस्य द्विरथोत्तरा वृद्धिराएकविंशतिरथादिति ।

१५. इसमें दो रथों के क्रम से एक्कीस रथों तक वृद्धि की जाती है।

एवमोजा दश समव्यूहप्रकृतयो भवन्ति ।

१६. अयुग्म में दश समव्यूह प्रकृतियां बनती है।

पक्षकक्षोरस्यानां मिथो विषमसंख्याने विषमव्यूहः ।

१७. पक्ष, कक्ष और उर में परस्पर विषम रथ संख्या होने पर विषम व्यूह बनता है।

तस्यापि द्विरथोत्तरा वृद्धिराएकविंशतिरथादिति ।

१८. उसमें भी दो रथों की क्रमिक वृद्धि एक्कीस रथों तक की जाती है।

एवमोजा दश विषमव्यूहप्रकृतयो भवन्ति ।

१९. इस प्रकार अयुग्म में दशविषम व्यूह प्रकृतियाँ बनतो है।

अतः सैन्यानां व्यूहशेषमावापः कार्यः ।

२०. इस व्यूहन से शेष सेना को व्यूहों में पुनः प्रक्षिप्त करे।

रथानां द्वौ त्रिभागावङ्गेष्वावापयेत्, शेषमुरस्यं स्थापयेत् ।

२१. शेष दो तिहाई रथ पक्ष-कक्षादि अंगों में तथा एक तिहाई मध्य भाग में प्रक्षिप्त करे।

एवं त्रिभागोनो रथानामावापः कार्यः ।

२२. इस प्रकार एक प्रकार एक तिहाई से न्यून रथों का प्रक्षेप किया जाय।

तेन हस्तिनामश्वानामावापो व्याख्यातः ।

२३. इसी प्रकार से हाथियों और अश्वों का प्रक्षेप व्याख्यायित हो गया।

पाठभेद :

'द्विरथोत्तरावृद्धिरा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'द्विरथो वृद्धिर' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) ओजा : विषम—ताख संख्या जैसे ३, ५, ७। द्र० २:३:६:, १०:५:१९,५०, गण० ३:१२९ १३६।

पाठभेद

'रस्यानांमिथोविषम' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रस्यानामतोविषम' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

विषम व्यूह।

१७. (१) मिथ : परस्पर, अन्योन्य, सहकारी द्र० ५:४:१२।

पादटिप्पणी :

१८ (१) द्विरथोत्तरा : उत्तरोत्तर दो रथों की वृद्धि।

पादटिप्पणी :

२०. (१) आवाप : निवेशन, फिर करना। द्र० १०:५:२५।

यावदश्वरथद्विपानां युद्ध[1]संबाधनं न कुर्यात्तावदावापः कार्यः ।

२४. जब तक अश्वों, रथों और गजों का प्रक्षेप युद्ध संमर्द न उत्पन्न करे तब तक प्रक्षेप किया जाय ।

दण्डबाहुल्यमावा[1]पः ।

२५. अतिरिक्त बल प्रक्षेप द्वारा व्यूह बल वृद्धि करना आवाप है ।

पत्तिबाहु[1]ल्यं प्रत्या[2]वापः ।

२६. इस प्रकार के प्रक्षेप से पदाति बल वर्धन प्रत्यावाप है ।

एकाङ्ग[1]बाहुल्यमन्वा[2]वापः ।

२७. अश्व, रथ एवं हाथी में किसी एक द्वारा वृद्धि अन्वावाप है ।

दूष्यबाहुल्यमत्या[1]वापः ।

२८. दूष्यों द्वारा सेना वृद्धि अत्यावाप है ।

परावापा[1]त् प्रत्या[2]वापाच्चा चतुर्गुणादाऽष्टगुणादिति वा विभ[3]वतः सैन्यानामावापः कार्यः ।

२९. शत्रु के आवाप और प्रत्यावाप की अपेक्षा चौगुने से लेकर अठगुना तक अथवा विभवानुसार सेना का आवाप करे ।

पाठभेद

'युद्धसंबाधनं' का तंजौर तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'युद्ध संबाधं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) संवाधन : भीड़ करना, अवरुद्ध करना, बाधा डालना ।

पादटिप्पणी :

२५ (१) आवाप : निवेश । द्र० १०:५:२० ।

पाठभेद :

'पत्तिबाहुल्यं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रति- में 'पत्तबाहुल्यं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) बाहुल्य : ज्यादती, इफरात ।

(२) प्रत्यावाप : गण० ३:१३० ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) एकाङ्ग : एक ही प्रकार का हथियार या किसी एक अंग की सेना ।

(२) अन्वावाप : अन्तर्निवेश । गण० ३:१३० ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) अत्यावाप : विश्वासघातियों का निवेश, बहुलता । द्र० ९:२:२, ५, गण० ३:५१,५३ १३० ।

पाठभेद

'परावापात्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'परवापात्' तथा 'आच्चाचतु' का 'आ च चतु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९ (१) परावाप : शत्रु का निवेश । गण०

(२) प्रत्यावाप : केवल पैदल सेना का निवेश या मिलाना ।

(३) विभव : शक्ति ।

रथव्यूहेन[1] हस्तिव्यूहो[2] व्याख्यातः ।

३०. रथ व्यूह द्वारा हस्ति व्यूह की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

व्यामिश्रो[1] वा हस्तिरथाश्वानाम् चक्रान्तेषु[2] हस्तिनः पार्श्वयोरश्वा रथा उरस्ये ।

३१. अथवा हाथी, रथ और अश्व का व्यामिश्र (संयुक्त) व्यूहन किया जाय चक्रान्त में हाथियों को पार्श्वों में अश्वों को और मध्य में रथों को स्थापित करे ।

हस्तिनामुरस्यं रथानां कक्षावश्वानां पक्षाविति मध्यभेदी[1] ।

३२. हाथियों को मध्य में, रथों को कक्षो में और अश्वों को पक्षों में स्थापित करना मध्यभेदी कहा जाता है ।

विपरीतोऽन्तभेदी ।

३३. इसके विपरीत व्यूहरचना अन्तभेदी होती है ।

हस्तिनामेव तु शुद्धः[1]—सांनाह्यानाम्[2]उरस्यम्[3] औपवाह्यानां[4] जघनं[5] व्यालानां कोट्याविति[6] ।

३४. हाथियों की ही व्यूहरचना शुद्धव्यूह कहा जाता है—युद्धोपयोगी हाथो मध्य भाग में सवारी योग्य हाथी पिछले भाग में और व्याल (दुष्ट) हाथी अगले भाग के किनारों पर रखे जाँय ।

पादटिप्पणी :

हस्ति व्यूह रचना ।

३०. (१) रथव्यूह : द्र० १०:५:१३ ।

(२) हस्तिव्यूह : गण० ३:१३१ ।

पाठभेद

'चक्रान्तेषु' का न्याय चन्द्रिका तथा श्रीमूल में चक्रान्तयोर्' तथा 'अश्वा रथा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अश्वामुख्या रथा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) व्यामिश्र : द्र० ९:७:१७, गण० ३:१३७, ।

(२) चक्रान्तेषु : सेनाके अन्त में ।

पाठभेद

'हस्तिनामुरस्यं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उरस्यहस्तिनाम्' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) मध्यभेद : केन्द्र या मध्य से अलग सेना । द्र० ३:१३१ ।

पाठभेद :

'ऽन्तभेदी' का न्याय चन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'न्तर्भेदी' पाठ भेद मिलता है ।

पाठभेद :

'औपवाह्यानां' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अपवाह्यानां' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'अपावाह्यानां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) शुद्ध : शुद्ध व्यूह । गण० ३:१३१ ।

(२) सांनाह्य : द्र० २:५:४२, २:२३:२९, २:३०:३०,३१ ।

(३) उर : केन्द्र या मध्य ।

(४) औपवाह्य : गण० ३:१३१ ।

(५) जघन : सेना का पिछला भाग ।

(६) कोट्या : शिरा या अगले दोनों भाग ।

अश्व[1]व्यूहो—वर्मिणामुर[2]स्यं शुद्धानां कक्ष[3]पक्षा[4]विति ।

३५. अश्वव्यूह रचना में कवच युक्त अश्व मध्य भाग में कवच रहित अश्व कक्ष और पक्ष में रखे जाँय ।

पत्तिव्यूह[1]ः—पुरस्तादावरणिनः पृष्ठतो धन्विन[2]ः ।

३६. पत्ति व्यूह रचना सामने दोनों किनारों पर कवच युक्त सैनिक और पीछे दोनों ओर धनुर्धारी सैनिक रखे जांय ।

इति शुद्धाः ।

३७. शुद्ध व्यूह रचना समाप्त ।

पत्तयः पक्षयोरश्वाः पार्श्वयोः हस्तिनः पृष्ठतो रथाः पुरस्ता[1]त्परव्यूहवशेन वा विप[2]र्यासः ।

३८. पदाति सैनिक दोनों पक्षों में अश्व दोनों पार्श्वों में हाथी पीछे और रथ सामने की ओर रखे जाँय अथवा शत्रु के व्यूह रचना को ध्यान में रखकर, इसमें व्यतिक्रम किया जाय ।

इति ह्यङ्गबल[1]विभागः ।

३९. अंग वल विभाग (सेना के दो अंगो द्वारा व्यूह रचना) समाप्त ।

तेन त्र्यंगबलविभागो व्याख्यातः ।

४०. इस प्रकार से सेना के तीन अंगों द्वारा बल व्यूह रचना की व्याख्या हो गयी ।

दण्ड[1]संपत् सार[2]बलं पुंसाम् ।

४१. परम्परागत पदाति सेना सारबल है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) अश्व व्यूह : गण० ३:२३२ ।

(२) उर : केन्द्र या मध्य ।

(३) कक्ष : पार्श्व या दायाँ या बायाँ पक्ष ।

(४) पक्ष : सेना का विंग ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) पत्ति व्यूह : गण० ३:१३२ ।

(२) धन्विनः : धनुषधारी ।

पादटिप्पणो :

३८. (१) पुरस्तात् : आगे या अग्रभाग ।

(२) विपर्यास : परिवर्तन, व्यतिक्रम, वैपरीत्य ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) अंगबल विभाग : सेना के दोनों बाहुओं की व्यवस्था । गण० ३:१४२ ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) त्र्यंग : सेना के तीनों भाग । गण० ३:१३२ ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) दण्ड सम्पत : गण० ३:१३२ ।

(२) सारबल : श्रेष्ठ सेना । द्र० ५:६:५६, गण० २:२१, ३:१३२ ।

हस्त्यश्वयोर्विशेषः कुलं जातिः सत्त्वं[1] वयः[2]स्थता प्राणो[3] वर्ष्म[4] जव[5]स्तेज[6] शिल्पं[7] स्थैर्य[8]मुदग्रता विधेयत्वं सुव्यञ्जनाचारतेति ।

४२. हाथी और अश्वों में कुल, जाति, सत्त्व, वयःस्थता, प्राण, वर्ष्म, जव, तेज, शिल्प, स्थैर्य, उदग्रता, विधेयत्व और सुव्यंजनाचारता विशेष गुण माने जाते हैं अर्थात् इन गुणों से युक्त हाथी घोड़े सारबल हैं ।

पत्त्यश्वरथद्विपानां सारत्रिभागंमुरस्यं स्थापयेत् द्वौ त्रिभागौ कक्षं पक्षं चोभयतः, अनुलोमे[1]मनुसारम्, प्रति[2]लोमं तृतीयसारम्, फल्गुप्रतिलोमम् ।

४३. पदाति, अश्व, रथ एवं हाथियों के सारबल का एक तिहाई मध्य भाग में, दो तिहाई कक्ष और पक्ष में अनुसारबल सारबल के पीछे तृतीय सारबल, सारबल के आगे और फल्गु बल के आगे स्थापित करे ।

एवं सर्वमुपयोगं गमयेत् ।

४४. इस प्रकार सब प्रकार के बल का समुचित उपयोग करे ।

फल्गुबलमन्तेष्वंवधाय वेगाभिहू[2]लिको भवति ।

४५. अन्त में (पक्षादि के अग्रभाग में) स्थापित फल्गुबल शत्रु बल वेग का आहूति बनता है अथवा शत्रु बलवेग शान्त करता है ।

पाठभेद :

'वर्ष्मजवस्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वर्षजवस्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) सत्वम् : प्रकृति, स्वभाव ।

(२) वयस्थता : जवानी ।

(३) प्राण : वीर्य ।

(४) वर्ष्म : ऊँचाई ।

(५) जव : वेग ।

(६) तेज : उत्साह ।

(७) शिल्प : शिक्षा ।

(८) स्थैर्य : स्थिरता ।

(९) उदग्र : उभड़ा, उन्नत, विशाल । गण० ३:१३५ ।

(१०) विधेयत्वम् : आज्ञानुसार । गण० ३:१३२ ।

(११) सुव्यंजना : शुभ लक्षण ।

पाठभेद :

'तृतीयासारम् फल्गु' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तृतीयासारफल्गु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) अनुलोम : ऊपर से नीचे की ओर आने वाला । द्र० ७:१८:४, गण० १३९ ।

(२) प्रतिलोम : विपरीत, उल्टा या जिसकी उत्पत्ति उच्च वर्ण की स्त्री और हीन वर्ण के पुरुष से हुई हो । द्र० ८:१:१३, ९:७:५२ ।

पाठभेद :

'वेगाभिहूलिको' का तंजौर में 'वेगाभिहूलितो' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वेगाभिहूतो' न्यायचन्द्रिका में 'वेगोभिहुतो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) फल्गु : दुर्बल सेना । द्र० ५:१:२१, ३९,५४ ।

(२) अभिहूलित : पराजित करना ।

सारबलमग्रतः कृत्वा कोटीष्वनुसारं कुर्यात्, जघने तृतीयसारं, मध्ये-फल्गुबलम् ।

४६. सार बल आगे करके किनारों पर अनुसार बल, कक्षों में तृतीय सारबल और मध्य में फल्गु बल स्थापित करे ।

एवमेतत्सहिष्णु भवति ।

४७. इस प्रकार यह व्यूह शत्रु बल वेग सहने में समर्थ होता है।

व्यूहं तु स्थापयित्वा पक्षकक्षोरस्यानामेकेन द्वाभ्यां वा प्रहरेत्, शेषैः प्रतिगृह्णीयात् ।

४८. व्यूह रचना करके पक्ष, कक्ष और उर बल में किसी एक या दो के द्वारा शत्रु प्रहार रोके।

यत्परस्य दुर्बलं वीतहस्त्यश्वं दूष्यामात्यं कृतोपजापं वा तत्प्रभूतसारेणा-भिहन्यात् ।

४९. शत्रु का जो बल दुर्बल, हो अश्व-गजरहित दूष्य-अमात्य युक्त तथा भेदवाली (उपजाप-युक्त) हो उसे प्रचुर सारबल द्वारा नष्ट करे।

यद्वा परस्यसारिष्ठं तद्द्विगुणसारेणाभिहन्यात् ।

५०. शत्रु का जो उत्तम सारबल हो उसे दूने सारबल द्वारा विनष्ट करे।

यदङ्गमल्पसारमात्मनस्तद्बहुनोपचिनुयात् ।

५१. अपना जो अंग (पदाति आदि) अल्पसार हो उसे प्रचुर अंग से वर्धित करें।

पादटिप्पणी :

४६. (१) कोटि : सिरा, किनारा।

पादटिप्पणी :

४७. (१) सहिष्णु : सहन करने योग्य, प्रतिरोध करने योग्य।

पाठभेद :

'प्रहरेतशेषैः' देवनागरी अनुप्रतिलिपि में छूट गया है।

पाददिप्पणी :

४८. (१) प्रतिगृह्णीयात् : सहायता, आक्रमण रोकना भी अर्थ किया गया है। द्र० ३:१४:३६, ७:१७:३, १२:४:२९, १३:३:४६।

पाठ भेद :

'यत्परस्य' का तंजौर में 'यात्परस्य' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यस्य परस्य' तथा 'वीतहस्त्यश्वं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वीतं हस्त्यश्वं' तथा 'दूष्यामात्यंकृतो' का 'दूष्यामात्यकृतो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५०. (१) सारिष्ठ : अति बली या बलशाली।

यतः परस्यापचयस्ततोऽस्याशे व्यूहेत, यतो वा भयं स्यात् ।

५२. जिस ओर शत्रु बल का अपचय (दौर्बल्य) हो, उसके निकट अथवा जहाँ से भय हो, बलव्यूहन करे।

अभिसृतं[1] परिसृतं[2]मतिसृतं[3]मपसृत[4]मुन्मथ्या[5]वधानं बलयो[6] गोमूत्रिका[7]मण्डलं[8]-प्रकीर्णिका[9] व्यावृ[10]त्तपृष्ठमनुवंशमग्रतः पार्श्वाभ्यां पृष्ठतो भग्नं[11]रक्षा भग्नानुपात इत्यश्वयुद्धानि ।

५३. अभिसृत, परिसृत, अतिसृत, अपसृत, उन्मथ्य-अवधान, वलय, गोमूत्रिका, मण्डल, प्रकीर्णिका; व्यावृत्तपृष्ठ, अनुवंश, आगे, पार्श्वों एवं पीछे से भग्न रक्षा तथा भग्नानुपात ये अश्व युद्ध हैं।

प्रकीर्णिका[1]वर्जान्येतान्येव चतुर्णा[2]मङ्गानां व्यस्तसमस्तानां वा घातः, पक्षकक्षोरस्यानां च प्रभ[3]ञ्जनमवस्कन्दः सौप्तिकं[4] चेति हस्तियुद्धानि ।

५४. प्रकीर्णिका के अतिरिक्त अन्य अश्व युद्ध, व्यस्त अथवा समस्त रूप से सेना के चारों अंगों का नाश करना, पक्ष, कक्ष एवं उर बल का प्रभंजन, अवस्कन्दन तथा सौप्तिक हस्तियुद्ध हैं।

पाठभेद :

'अनुवंशमग्रतः' का देवनागरी अनुलिपिमें 'अनुवंशगतः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५३. (१) अभिसृत : सहायता करने के लिये आगे आना। द्र० ९:३:६१, गण० ३:८७:१९५।

(२) परिसृतः : चारों ओर घेरना। गण० ३:१३५।

(३) अतिसृतः : सेना को बाहर से घेरना या सेना में घुसना। गण० ३:१३५।

(४) अपसृत : पीछे से जाना या उस मार्ग से पुनः दुबारा निकलना।

(५) उन्मथ्या : सेना को पुनः एकत्रित करना।

(६) बल : गण० ३:१३५, १३९।

(७) गोमूत्रिका : वक्र गति या टेढ़ी मेढ़ी चाल। गण० ३:१३१, १३९, २१५।

(८) मण्डल : चारों ओर से घेरना। गण० ३:१३५, १३६, १३९, द्र० २:१९:१३।

(९) प्रकीर्णिका : गण० ३:१३५।

(१०) व्यावृत्त : गण० ३:१३५।

(११) अनुवंश : अनुवर्तन कर।

(१२) भग्नरक्षा : भग्नानुपात। गण० ३:१३५

पादटिप्पणी :

५४. (१) प्रकीर्णिका : बिखरा हुआ या फैलाया हुआ।

(२) चतुर्णामङ्गना : सेना का चारों ओर से आकस्मिक आक्रमण।

(३) अवस्कन्द : गण० ३:१३५।

(४) सौप्तिकम् : शत्रु सेना पर रात में आक्रमण करना जब वह सोयी हो। द्र० १०:३:२०, गण० ३:१३५।

उन्मथ्या[1]वधान[2]वर्जान्येतान्येव स्वभूमावभियानापयानस्थित[3]युद्धानीति रथयुद्धानि ।

५५. उन्मथ्य अवधान के अतिरिक्त सब हस्तियुद्ध, स्वभूमिस्थ होकर शत्रु पर अभियान शत्रुबल अभिभूत कर अपयान (वापस आना) तथा स्थित युद्ध रथ युद्ध, हैं ।

सर्वदेशकालप्रहरणमुपांशुदण्डश्चेति पत्तियुद्धानि ।

५६. सब प्रकार के देश-काल में प्रहार करना (या अस्त्र-शस्त्र धारण करना) ओर उपांशु-दण्ड (गुप्त रूप से शत्रु नाश करना) पदातियुद्ध हैं ।

एतेन विधिना व्यूहानोजान्[1] युग्मांश्च[2] कारयेत् । विभवो यावदङ्गानां चतुर्णांसदृशो[3] भवेत् ।

५७. सेना के चारो अंगों का जितना वैभव (संख्याबल) हो, तदनुसार उक्त विधि से ओज और युग्म व्यूहों की रचना (विजिगीषु) करे ।

द्वे शते धनुषां गत्वा राजा तिष्ठेत्प्रतिग्रहे ।
भिन्नं संघातनं तस्मान्न युध्येताप्रतिग्रहः ॥

५८. राजा व्यूह स्थान से दो सौ धनुष सेना से पीछे जाकर, स्थित हो, इस प्रकार भिन्न सेना का एकीकरण हो सकता हैं, बिना सेना के पीछे स्थान ग्रहण किये युद्ध न करे ।

पादटिप्पणी :

५५. (१) उन्मथ्या : द्र० १०:५:४३, गण० ३:१३५ ।

(२) अवधान : एक साथ रखना द्र० १०:५:२३ ।

(३) स्थितयुद्ध : स्थिर या निश्चल युद्ध । गण० ३:१३५ ।

पादटिप्पणी :

५६. पत्तियुद्ध : पैदल सेना का युद्ध । गण० ३:१३६ ।

पादटिप्पणी :

५७. (१) ओज : द्र० १०:५:१६ ।

(२) युग्म : सम या जूस ।

(३) सदृश : युक्त योग्य ।

पाठभेद :

'तिष्ठेत्प्रतिग्रहे' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तिष्ठेत्प्रतिग्रहः' पाठभेद मिलता है ।

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे पक्षकक्षोरस्यानां बलाग्रतो व्यूहविभागः सारफल्गुबलविभागः पत्त्यश्वरथहस्तियुद्धानि पञ्चमोऽध्यायः ।

आदितः त्रयस्त्रिंशच्छततमः ।

दशम अधिकरण सांग्रामिक में पक्ष, कक्ष एवं उर बल का सेना के आगे व्यूह विभाग, सार-फल्गु बल विभाग, पत्ति, अश्व, रथ, हस्तियुद्ध सम्बद्ध पंचम अध्याय समाप्त ।

आदि से एक सौ तैंतीसवा अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करणमें—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे पंचमोऽध्यायः पक्षकक्षोरस्यानां बलाग्रतो व्यूहविभागः सारबल्गुवलविभागः पत्त्यश्वरथहस्ति युद्धानि च । आदितस्त्रयस्त्रिंशच्छततमः ।

मैसूर संस्करणमें—

इति सांग्रामिके पक्षकक्षोरस्यानां बलाग्रतो व्यूहविभागः सारफल्गुविभागः पत्त्यश्वरथहस्ति युद्धानि च पंचमोऽध्यायः आदित स्मयस्त्रिंशच्छतमः ।

बसाक संस्करणभें—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे पंचमोऽध्यायः पक्षकक्षोरस्यानां बलाग्रतो व्यूहविभागः सारफलल्गुबलविभागापत्त्यश्वरथहस्तियुद्धानि च आदितस्त्रयस्त्रिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करणमें—

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे पक्षकक्षोरस्यानां बलाग्रतो व्यूहविभागः सारफल्गुबलविभागः, पत्त्यश्वरथ हस्ति युद्धानि च पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

आदितस्त्रयस्त्रिंशदधिक शततमोऽध्यायः ॥१३३॥

अध्याय ६

[अष्टपञ्चाशच्छततमं प्रकरणम्—दण्डभोगमण्डलासंहतव्यूहव्यूहनम्; एकोनषष्टितमं प्रकरणम्—तस्य प्रतिव्यूहस्थापनम्]

एक सौ अट्ठावनवाँ प्रकरण—दण्ड-भोग-मण्डल-असंहतव्यूहव्यूहन

एक सौ उन्सठवां प्रकरण—प्रतिव्यूहस्थापना

पक्षौवुरस्यं[2] प्रतिग्रह[3] इत्यौशनसो व्यूहविभागः ।

१. दो पक्ष उरस्य एवं प्रतिग्रह ये व्यूह विभाग उशना (शुक्र) के हैं।

पक्षौ[1] कक्षौ[2]वुरस्यं[3] प्रतिग्रह[4] इति बार्हस्पत्यः ।

२. दो पक्ष, दो कक्ष, उरस्य एवं प्रतिग्रह—ये बृहस्पति के व्यूह विभाग हैं।

प्रपक्षकक्षोरस्याः उभयो:दण्ड[1]भोग[2]मण्डला[3]संहता[4], प्रकृतिव्यूहाः ।

३. दोनों आचार्यों के मत पक्ष, कक्ष एवं उरस्य व्यूह के दण्ड, भोग, मण्डल एवं असंहत भेद से चार प्रकार के प्रकृतिव्यूह होते हैं।

प्रकरण १५८, सूत्र १-४१६।

प्रकरण १५९, सूत्र ४२-४४।

शेष प्रकरण, सूत्र ४४-४८।

सूत्र ४१, ४२ के अधिकरण १५ सूत्र ४२-४४ में अनुभाग का उदाहरण उद्धृत किया गया है।

पाठभेद :

'प्रतिग्रह इत्यौनसो व्यूहविभागः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिबृत्तिर्भोगः पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१. (१) पक्ष : सेना के अगले दोनों विंग। १०:५:८,।

(२) उर : सेना का मध्य भाग या केन्द्र। १०:५:८।

(३) प्रतिग्रह : सुरक्षित सेना या सेना का पृष्ठ भाग या आरक्षित या रक्षित या रिजर्व सेना।

पादटिप्पणी :

२. (१) पक्ष : सेना दोनों विंग या पार्श्व। द्र० १०:५:८, १०:६:१।

(२) कक्ष : सेना का दाहिना या बायाँ पक्ष। द्र० १०:५:८, १७।

(३) उर : मध्यमभाग या केन्द्र। १०:५:८।

(४) प्रतिग्रह : सुरक्षित रिजर्व सेना। १०:६:१।

पादटिप्पणी :

३. (१) दण्ड व्यूह : द्र० १०:३:५३।

(२) भोग व्यूह : द्र० १०:६:५, २४।

(३) मण्डलव्यूह : द्र० १०:३:५३।

(४) असंहत : असंयुक्त बिखरा हुआ, एक प्रकार की व्यूह रचना। द्र० १:६:७, १०:३:५३, ३:१३७, १४० :

(५) प्रकृति व्यूह : गण ३:१३७।

तत्र तिर्यग्वृत्ति[1]र्दण्डः[2] ।

४. तिर्यक् वृत्ति दण्डव्यूह होता है।

समस्तानामन्वावृत्ति[1]र्भोगः[2] ।

५. समस्त व्यूहों की अन्वावृत्ति भोगव्यूह है।

सरतां[1] सर्वतोवृत्ति[2]र्मण्डलः[3] ।

६. शत्रु के अभिमुख सब ओर से चलना (सर्वतोवृत्ति) मण्डलव्यूह है।

स्थितानां पृथगनीक[1]वृत्तिरसंहतः ।

७. स्थित सेना का पृथक् सैन्य वृत्ति, असंहत-व्यूह है।

पक्षकक्षोरस्यैः समं वर्तमानो दण्डः[1] ।

८. पक्ष, कक्ष, एवं उरस्य सेनाओं के समभाग के साथ स्थान गमनादि करना दण्ड व्यूह है।

संकक्षातिक्रान्तः प्रदरः[1] ।

९. कक्षों की ओर से शत्रु के अभिमुख आक्रमण प्रदर नामक दण्ड व्यूह होता है।

पादटिप्पणी :

४. दण्डव्यूह : द्र० १०:३:५३, गण० ३:१३०

(२) तिर्यग्वृत्ति : तिरछा या स्वस्तिक के समान। द्र० १०:६:८, गण ३:१३७।

पाठभेद :

'मन्वावृत्तिर' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मन्वाद्रित्तिर' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) अन्वावृत्ति : एक के पीछे दूसरी का चलना। गण० ३:१३७।

(२) भोग : द्र० १०:६:३, २४ गण० ३:१३७ १३९, २१०।

पाठभेद :

'सरतां' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सुकरां' पाठ भेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

मण्डलव्यूह—

६. (१) सरतां : चलना, शत्रु सैन्याभिमुख जाना।

(२) सर्वतोवृत्ति : सब ओर परिचालन। गण० ३:१३७।

(३) मण्डल : द्र० १०:६:३०, १०:३:५३, गण० ३:१३७, १३९, २:१९:१३।

पादटिप्पणी :

७. (१) अनीक : सेना, सैन्यपंक्ति।

पादटिप्पणी :

दण्ड व्यूह १८ प्रकार के होते हैं।

८. (१) दण्डव्यूह : द्र० १०:३:५३, १०:६:३४ गण० ३:१३९।

पाठभेद :

'सकक्षातिक्रान्तः' का श्रीमूलमें 'कक्षाभिक्रान्तः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

प्रदर व्यूह—

९. (१) प्रदर : सेना का तितर बितर होना। गण० ३:१३८, १४१।

स एव पक्षकक्षाभ्याप्रतिक्रान्तो दृढकः ।

१०. पक्ष-कक्ष की ओर से शत्रु पर आक्रमण दृढक नामक दण्डव्यूह भेद होता है ।

स एवातिक्रान्तः पक्षाभ्यामसह्यः ।

११. पक्षों से शत्रु पक्ष में अतिक्रान्त दृढक व्यूह, असह्यव्यूह नामक भेद बनता है ।

पक्षाववस्थाप्योरस्यातिक्रान्तः श्येनः ।

१२. पक्षों को स्थापित कर उरस्य द्वारा शत्रु बल पर आक्रमण श्येनव्यूह होता है ।

विपर्यये चापं चापकुक्षिः प्रतिष्ठः सुप्रतिष्ठश्च ।

१३. पूर्वोक्त चारों व्यूहों के विपरीत आक्रमण क्रमशः चाप, चापपकुक्षि, प्रतिष्ठ एवं सुप्रतिष्ठ व्यूह कहे जाते हैं ।

चापपक्षः संजयः ।

१४. चाप तुल्य पक्ष वाला व्यूह संजयव्यूह होता है ।

स एवोरस्यातिक्रान्तो विजयः ।

१५. उरस्य द्वारा शत्रु बल से प्रवेश कर आक्रमण विजयव्यूह होता है ।

पाठभेद :

'पक्षकक्षाभ्यां' का न्यायचन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'पक्षाभ्यां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) दृढक : गण० ३:१३८, १४२, कामन्द० २०:४५ ।

पाठभेद :

'एवातिकान्तः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'एव निष्क्रान्तः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

असह्य व्यूह—

११. (१) असह्य : गण० २:१३८, १४१ ।

पाठभेद :

'रस्यातिक्रान्तः' का न्याय चन्द्रिका तथा श्रीमूल में 'रस्याभिक्रान्तः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

श्येन व्यूह—

१२. (१) श्येन : गण० ३:१३८, १४१ ।

पादटिप्पणी :

चाप, चापकुक्षि, प्रतिष्ठ, अप्रतिष्ठ व्यूह—

१३. (१) चाप : गण० ३:१३८, १४१,

(२) चापकुक्षि : गण० ३:१३८,

(३) प्रतिष्ठ : गण० ३:१३८, १४१,

(४) सुप्रतिष्ठ : गण० ३:१३८, १४१,

पादटिप्पणी :

संजय व्यूह—

१४. संजय : गण० ३:१३८, १४१, कामन्दक० २०:४६ ।

पादटिप्पणी :

विजयव्यूह—

१५. विजय : गण० ३:१३८, १४१ ।

स्थूलकर्णपक्षः स्थूणाकर्णः ।

१६. स्थूल कर्ण तुल्य पक्षवाला व्यूह स्थूलकर्ण व्यूह होता हैं ।

द्विगुणपक्षस्थूणो विशालविजयः ।

१७. विजयापेक्षा पक्ष में दूना स्थूल विशाल विजय व्यूह होता है ।

त्र्यभिक्रान्तपक्षश्चमूमुखः ।

१८. कक्षादि तीनों के समान पक्ष वाला चमूमुख व्यूह होता है ।

विपर्यये झषास्यः ।

१९. उसके विपरीत झषास्य व्यूह होता है ।

ऊर्ध्वराजिर्दण्डः सूची ।

२०. जिसमें ऊपर की ओर शत्रु बल के अभिमुख होकर सेना श्रेणी आक्रमण शील हो वह दण्डव्यूह सूची व्यूह होता है ।

पाठभेद :

'स्थूलाकर्णः' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'स्थूलः कर्ण' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

स्थूलकर्णव्यूह—

१६. (१) स्थूलकर्ण : गण० ३:१३८, १४१ ।

पाठभेद :

'पक्षस्थूणो' का श्रीमूल में 'पक्षस्थूलो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

विशाल विजय व्यूह—

१७. (१) विशालविजय : गण० ३:१३८, १४१ ।

पाठभेद :

'त्र्यभिक्रान्त' का तंजौर में 'व्यभिक्रान्त' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'त्वभिक्रान्त' पाठभेद मिलता है

पादटिप्पणी :

चमूमुख व्यूह—

१८. (१) चमूमुख : गणः ३:१३९ ।

पादटिप्पणी :

झषास्य व्यूह—

१९. (१) झषास्य : गण० ३:१३९ ।

पाठभेद :

'ऊर्ध्वराजिर' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'ऊर्ध्वा राजिर' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

सूचीव्यूह—

२०. (१) सूची : गण० ३:१३९ ।

द्वौ दण्डौ वलयः[1] ।

२१. पक्षादि स्थानों पर तिरछे दो दण्डों का व्यूहन वलय व्यूह होता है।

चत्वारो दुर्जयः[1] ।

२२. चार दण्डों का तिर्यक् व्यूहन दुर्जय व्यूह होता है।

इति दण्डव्यूहाः ।

२३. दण्ड व्यूह समाप्त।

पक्षकक्षोरस्यैर्विषयं वर्तमानो भोगः[1] ।

२४. पक्ष, कक्ष एवं उरस्य द्वारा विषम संख्या में व्यूहन, भोग व्यूह होता है।

सा सर्पसारी गोमूत्रिका वा ।

२५. वह सर्प सारी अथवा गोमूत्रिकानुसार दो भेद वाला होता है।

स युग्मोरस्यो[1] दण्डपक्षः शकटः[2] ।

२६. दो प्रकार से विभक्त दण्डबृति पक्षों वाला भोग, शकट व्यूह होता है।

विपर्यये मकरः[1] ।

२७. उसके विपरीत मकरव्यूह होता है।

हस्त्यश्वरथैर्व्यतिकीर्णः शकटः परिपतन्तकः[1] ।

२८. हाथी, अश्व एवं रथों से युक्त शकट व्यूह, परिपतन्तक व्यूह होता है।

पादटिप्पणी :

वलय व्यूह—

२१. (१) वलय : गण० ३:१३५, १३९, १०:५:५३।

पादटिप्पणी :

दुर्जय व्यूह—

२२. (१) दुर्जय : गण० ३:१३९, २४१।

पादटिप्पणी :

भोग व्यूह पाँच प्रकार के होते हैं।

२४. (१) भोगव्यूह : गण० ३:१४१।

पादटिप्पणी :

सपंसारी व्यूह, गोमूत्रिका व्यूह—

२५. (१) सर्पसारी : गण० ३:१३९, कामन्दक २०:४८।

(२) गोमूत्रिका : गण० ३:१३५, १३९, २१५ द्र० १०:५:५३।

पादटिप्पणी :

शकट व्यूह—

२६. (१) युग्मोरस्य : द्र० १०५:५७, गण० ३:१३९, कामन्दक २०:४९।

(२) शकट : गण० ३:१३४, द्र० १०:३:२७।

पादटिप्पणी :

मकर व्यूह—

२७. मकर : गण० ४:१३८, १३९।

पादटिप्पणी :

परितन्तक व्यूह—

२८. (१) परिपतन्तक : गण० ३:१३९, १४१।

इति भोगव्यूहाः ।

२९. भोगव्यूह समाप्त ।

पक्षकक्षोरस्यानामेकीभावे मण्डलः ।

३०. पक्ष, कक्ष एवं उरस्य का एकीभाव मण्डल व्यूह होता है ।

स सर्वतोमुखः सर्वतोभद्रः ।

३१. वह सबओर से शत्रु बलाभिमुख हो तो सर्वतोभद्र व्यूह होता है ।

अष्टानीको दुर्जयः ।

३२. (दो उरस्य, चार पक्ष एवं दो कक्ष) आठ विभाग वाला व्यूह दुर्जय व्यूह होता है ।

इति मण्डलव्यूहाः ।

३३. मण्डल व्यूह समाप्त ।

पक्षकक्षोरस्यानामसंहतादसंहतः ।

३४. पक्ष, कक्ष एवं उरस्य सेना के शत्रु के ऊपर अभियान में असंहत रहने के कारण असंहत व्यूह होता है ।

स पञ्चानीकानामाकृतिस्थापनाद्वज्रो गोधा वा ।

३५. कक्षादि पांचों अनीकों की आकृति के अनुसार स्थापना के कारण वज्र अथवा गोधा व्यूह बनता है ।

भेदपाठ :

'मण्डलः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मण्डलं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

मंण्डल व्यूह दो प्रकार का होता है ।

३०. (१) मण्डलव्यूह : द्र० २:१९:१३, गण० ३:१३९ ।

पादटिप्पणो :

३१. (१) सर्वतोमुख : एक प्रकार का मण्डल व्यूह होता है । गण० ३:१३९ ।

(२) सर्वतीभद्त : गण० ३:१०८, १३९, १४१

पादटिप्पणी :

दुर्जय व्यूह—

३२. (१) दुर्जय : अष्टनीक का दूसरा नाम दुर्जय है । द्र० १०:६:२२, गण० ३:१३९, १४१, कामन्दक २०:५० ।

पादटिप्पणी :

असंहत व्यूह ६ प्रकार का होता है ।

३४ (१) असंहत : न जुड़ा हुआ, असंयुक्त, बिखरा हुआ । गण० ३;१३७, १४० ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) वज्रव्यूह : गण० ३:१:८, १४०, २२५, द्र० ७:१२:१४ ।

(२) गोधा व्यूह : गण० ३:१४० ।

चतुर्णामुद्धानकः काकपदी वा ।

३६. (दो पक्ष, उरस्य एवं प्रतिग्रह) चारों अंगों की आकृति स्थापना उद्धानक अथवा काकपदी कहा जाता है।

त्रयाणामर्धचन्द्रकः कर्कटकशृङ्गी वा ।

३७. दो पक्ष उरस्य या प्रतिग्रह तीनों की आकृति स्थापना अर्ध चन्द्रक अथवा कर्कटक ऋंगी होता है।

इत्यसंहतव्यूहाः ।

३८. असंहत व्यूह समाप्त ।

रथोरस्यो हस्तिकक्षोऽश्वपृष्ठोऽरिष्टः ।

३९. जहाँ उरस्य में रथ दोनों कक्षों में हाथी एवं पीछे अश्व हों वह अरिष्ट व्यूह है।

पत्तयोऽश्वा रथा हस्तिनश्चानुपृष्ठमचलः ।

४०. जहाँ पक्षों में पदाति, उरस्य में अश्व, कक्षों में रथ, पीछे हाथी, हों वह अचल व्यूह होता है।

हस्तिनोऽश्वा रथाः पत्तयश्चानुपृष्ठमप्रतिहतः ।

४१. जहां हाथी पक्षों में, अश्व उरस्य में, रथ पक्षों में, पदाति पीछे हो, वह अप्रतिहत व्यूह होता है।

पाठभेद :

'उद्धानकः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उद्यानक' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

उद्धानक या काकपदी व्यूह—

३६ (१) उद्धानक : गण० ३:१४०।

(१) काकपदी : गण० ३:१४०।

पाठभेद :

'कर्कटक' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कर्काटक' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

अर्धचन्द्रक कर्कटक व्यूह—

३७. (१) अर्धचन्द्रक : गण० ३:१४०।

(२) कर्कटकव्युह : गण० ३:१४०।

अन्य तीन व्यूह (१) अरिष्ट व्यूह (२) अचल व्यूह अप्रतिहतव्यूह।

पादटिप्पणी :

३९. (१) अरिष्ट : गण० ३:१४०, २२३, द्र० २:२५:२१, २५, ३०।

पादटिप्पणी :

अचलव्यूह—

४०. (१) अचल : गण० ३:१४०।

पादटिप्पणी :

अप्रतिहत व्यूह—

४१. (१) अप्रतिहत : गण० ३:१०७। द्र० ७:१३:९।

तेषां प्रदरं[1] दृढकेन[2] घातयेत्, दृढकमसह्येन[3], श्येनं[4] चापेन, प्रतिष्ठं[5] सुप्रतिष्ठेन, संजयं[6] विजयेन, स्थूणाकर्णं विशाल[7]विजयेन, परिपतन्तकं सर्वतोभद्रेण ।

४२. पूर्वोक्त व्यूहों में प्रदर व्यूह दृढकव्यूह से दृढक व्यूह, असह्यव्यूह से, श्येनव्यूह चापव्यूह से प्रतिष्ठ व्यूह, सुप्रतिष्ठ व्यूह से संजय व्यूह, विजय व्यूह से स्थूल कर्ण व्यूह, विशाल विजय व्यूह से परिपतन्तक व्यूह सर्वतो भद्रव्यूह से विनष्ट करे ।

दुर्जयेन[1] सर्वान् प्रतिव्यूहेत ।

४३. दुर्जय व्यूह से समस्त व्यूहों को नष्ट करें ।

पत्त्यश्वरथद्विपानां पूर्वं पूर्वमुत्तरेण घातयेत्, हीनाङ्ग[1]मधिकाङ्गेन[2] चेति ।

४४. पदाति, अश्व, रथ, एवं हाथियों की सेना में क्रमशः पूर्व पूर्ववर्ती को परवर्ती द्वारा तथा हीनांगा को अधिकांग द्वारा विनष्ट करे ।

अङ्ग[1]दशकस्यैकः[2] पतिः[3] पतिकः[4], पातिकदशकस्यैकः सेनापतिः[5], तद्दशकस्यैको नायक[6] इति ।

४५. दस सेनांगों का पति पतिक, दस पतिक का अधिकारी सेनापति तथा दस सेनापति का अधिकारी नायक होता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) प्रदर : गण० ३:१३८, १४० ।

(२) दृढ़क : प्रदर का दृढ़क से प्रतिकार ।

(३) असह्य : दृढ़क व्यूह का असह्य व्यूह ।

(४) श्येन : चाप व्यूह ।

(५) प्रतिष्ठ : सुप्रतिष्ठ ।

(६) संजय : विजय ।

(७) विशाल व्यूह :

पादटिप्पणी :

सभी व्यूहों का प्रतीकार ।

४३. (१) दुर्जय व्यूह : द्र० १०:६:१३ ।

४४. (१) हीनअङ्ग : शक्तिहीन ।

(२) अधिकण्ङ्ग : शक्ति सम्पन्न ।

पाठभेद :

'पतिः पतिकः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पदिकः पदिक' पाठभेद मिलता है :

पादटिप्पणी :

४५. (१) अंग : सेना की एक इकाई ३० १०:५:९,११ यहाँ अंग का रथ और हाथी से भी अभिप्राय है ।

(२) एकस्य : पाँच अश्वारोही तथा ३० पैदल सैनिक ।

(३) पति : स्वामी, अधिकारी ।

(४) पतिक : अधीनस्थ सैनिक अधिकारी या लेफ़्टिनेन्ट । गण० ३:१४४ ।

(५) सेनापति : दस पतिक का अधिकारी या जनरल । गण० ३:१०८, १२७, १४० ।

(६) नायक : युद्ध सेना का कमाण्डेण्ट एक सहस्र युनिट का अधिकारी । द्र० १०:१:१९, १०:५:२, १०:२:४३, गण० ३:१२ ।

स तूर्य[1]घोष[2]ध्वज[3]पताका[4]भिर्व्यूहाङ्गानां संज्ञाः स्थापयेदङ्गविभागे संघाते स्थाने गमने व्यावर्तने प्रहरणे च ।

४६. वह नायक तूर्य घोष एवं ध्वाजपताकादि द्वारा व्यूहांगों के अंग विभाजन एकत्रीकरण, स्थान, गमन, परावर्तन और प्रहरण के लिए संज्ञा संकेत निश्चित करे।

समे [1]व्यूहे देश[2]काल[3]सार[4]योगा[5]त्सिद्धिः[6] ।

४७. स्वबल व्यूह और परबल व्यूह समान होने पर, देश, काल एवं सारयोग से सिद्धि मिलती है।

यन्त्रै[1]रुपनिषद्योगै[2]स्तीक्ष्णै[3]र्व्यासक्तघातिभिः ।
मायाभि[4]र्देवसंयोगैः[5] शकटै[6]र्हस्तिभीषणैः[7] ॥

४८. यन्त्रों, उपनिषद्योगों या सक्तघाती तीक्ष्ण (पुरुषों अन्य में आसक्त को हत्या करने वाले) मायाकर्मों, देवसंयोगों, शकटों, हस्ति भीषणों—

पादटिप्पणी

४६. (१) तूर्य : तुरही।

(२) घोष : ध्वनि, घोषण।

(३) ध्वज : बड़ा झण्डा। गण० १:८५, द्र० १:१७:१८ :

(४) पताका : छोटा झण्डा।

पाठभेद :

'देशकालसारयोगात्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'देशकालयोगात्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी

४७. (१) समव्यूह : बराबर का व्यूह।

(२) देश : स्थान। गण० ३:४२, ३:१:१५,१९

(३) काल : समय। द्र० ६:६:६।

(४) सार : बल, शक्ति, द्र० ६:५:४६, २०:५:४३, ४६, ४९, २:५:८, २:७:२, २:११:१।

(५) योग : सम या समाधि के चार उपाय। द्र० १:२२:२९, १:१६:३६।

(६) सिद्धि : सफलता। गण० ३:६:९२।

पाठभेद :

'यन्त्रैरुपनिष' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दण्डैरुपनिष' तथा 'हस्तिभीषणैः' का 'हस्तिभूषणैः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४८. (१) यन्त्र : मशीन, जमदाग्नि आदि यन्त्र। द्र० २:१५:६२, १:१२:१, २:२०:२, गण० १:२५० ३:११८, १४२, १७३।

(२) उपनिषद्योग : गण० ३:१४२, द्र० ४:३:२३।

(३) तीक्ष्ण : हत्यारे। अन्य में आसक्त चित्त-वाले की हत्या करने वाले अथवा छिपकर हत्या करने वाले। द्र० १:४:५, १:५:२५, गण० १:५६, ३:१४२।

(४) माया : इन्द्रजाल। गण० ३:१४२।

(५) दैवसंयोग : देवता से सम्बन्ध। गण० ३:१४२।

(६) शकट : गाड़ी। द्र० १०:३:१७। गण०

(७) भीषण : डरावना। द्र० १०:४:१४।

दूष्यप्रकोपैर्गोयूथैः स्कन्धा[3]वारप्रदीपनैः ।
[4]कोटी ज[5]घनघातैर्वा दूतव्य[6]ञ्जनभेदनैः ॥

४९. दूष्य प्रकोपों, गोयूथों, स्कन्धावार प्रदीपन कर्मों कोटी-जघनघातों अथवा दूतवेशी गुप्तचरों से भेद-उत्पादन द्वारा—

दुर्गं दग्धं [1]हृतं वा ते कोपः[2] कुल्यः समुत्थितः ।
शत्रुराटविको वे'ति परस्योद्वेगं[3]माचरेत् ॥

५०. तथा 'तुम्हारा दुर्ग दग्ध कर दिया गया अथवा तुम्हारा दुर्ग अपहृत कर लिया गया, तुम्हारे कुल का कोप उत्पन्न हो गया है अथवा तुम्हारा शत्रु या आटविक युद्धार्थ उद्यत हो गया है, इस प्रकार से शत्रु को उद्विग्न करे।

एकं हन्यान्न वा हन्यादिषुः क्षिप्तो धनुष्मता ।
प्राज्ञेन तु मतिः क्षिप्ता हन्याद्गर्भगतानापि ॥

५१. धनुर्धारी द्वारा प्रक्षिप्त वाण एक व्यक्ति को मारे अथवा न मारे किन्तु बुद्धिमान् द्वारा प्रक्षिप्त बुद्धि गर्भस्थ प्राणियों को भी मारने में समर्थ होती है।

इतिसांग्रामिके दशमेऽधिकरणे दण्डभोगमण्डलो-संहत व्यूहव्यूहनम्,

दसवें अधिकरण सांग्रामिक के अन्तर्गत दंण्ड, भोग, मण्डल एवं असंहत व्यूह स्थापना

पादटिप्पणी :

४९. (१) दूष्य : विश्वासघाती। द्र० १:११:-१७, ३:१४:२७, ५:१:४, गण० ३:१४२।

(२) गोयूथ : पशुओं का समूह। द्र० ३:२४२।

(३) स्कन्धावार : सैनिक छावनी। द्र० १०:१:१, ९:६:४५।

(६) कोटि : अग्रभाग। गण० ३:१४२।

(५) जघन : पीछे या सेना का पिछला भाग।

(६) दूतव्यञ्जन : दूत बना व्यक्ति, कैदी। गण० ३:१४२।

पादटिप्पणी :

५०. (१) हृतं : अधिकार कर लिया गया।

(२) कोप : विद्रोह।

(३) उद्वेग : क्षोभ, बेचैन, खिन्न।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करणमें—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिके दशमाधिकरणे षष्ठोऽध्यायः दण्डभोगमण्डलासंहृतव्यूहनं तस्य प्रतिव्यूहस्थापनं च। आदितश्चतुस्त्रिशच्छततमः।

एतावता कौटलीयार्थशास्त्रस्य सांग्रामिकं दशममधिकरणं समाप्तम् ॥

मैसूर संस्करणमें—

इति सांग्रामिके दण्डभोगमण्डला संहृतव्यूहनं तस्य प्रतिव्यूहस्थापनं च षष्ठोऽध्यायः आदितश्चतुस्त्रिशच्छततमः।

एतावता कौटलीयस्थार्थशास्त्रस्य सांग्रामिकं दशममधिकरणं समाप्तम् ॥

तस्य प्रतिव्यूहस्थापनम् षष्ठोऽध्यायः । आदितश्चतुस्त्रिंशच्छततमः । एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य सांग्रामिकं दशममधिकरणं समाप्तम् ।

और प्रतिव्यूह स्थापना सम्बद्ध छठा अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ चौतीसवाँ अध्याय समाप्त । सांग्रामिक यहाँ कौटिलीय अर्थशास्त्र का दसवां अधिकरण समाप्त ।

वसाक संस्करण में--

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे सांग्रामिकेयदशमाधिकरणे षष्ठोऽध्याय: दण्डभोगमण्ल संहतव्यूह् व्यूहनं तस्यप्रतिव्यूहस्थापनं च आदितश्चतुस्त्रिंशच्छततम: एतावता कौटिलीयार्थशास्त्रस्य सांग्रामिकं दशममधिकरणं समाप्तम् ।

उदयवीर शास्त्री संस्करणमें—

इति सांग्रामिके दशमेऽधिकरणे दण्डभोगमण्डलासंहतव्यूहव्यूहनं, तस्य प्रतिव्यूहस्थापनं च षष्ठोऽध्याय: ॥ ६ ॥

आदितश्चतुर्त्रिशदधिकशततमोऽध्याय: ॥१३४॥

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य सांग्रामिकं दशममधिकरणं समाप्तम् ॥१०॥

११

संघ[1]वृत्त[2]म्—एकादशमधिकरणम्

संघवृत्त—ग्यारहवाँ अधिकरण

अध्याय 1

[षष्टिशततमं प्रकरणम्—भेदो[3]पादानानि; एकषष्टिशततमं प्रकरणम्—उपांशुद[4]ण्डा]

एक सौ साठ वाँ प्रकरण—भेदोपादान

एक सौ एकसठ वाँ प्रकरण—उपांशुदण्ड ।

संघ[5]लाभो दण्डमित्रलाभानामुत्तमः ।

१. दण्ड लाभ एवं मित्र लाभ में संघ लाभ उत्तम होता है।

संघाहि संहत[1]त्वादधृष्या[2]:परेषा[3]म् ।

२. संहत होने के कारण, संघ शत्रुओं द्वारा अधृष्य (अजेय) होता है।

ताननुगु[1]णाँन् भुञ्जीत[2]सामदानाभ्याम् विगुणा[3]न् भेददण्डाभ्याम् ।

३. (विजिगीषुनृपति) अनुकूल संघों का साम-दान द्वारा उपभोग करे तथा प्रतिकूल संघों को भेद-दण्ड द्वारा अनुकूल करे ।

प्रकरण १६०, सूत्र १—३० ।

प्रकरण १६१, सूत्र १—५४ ।

पादटिप्पणी :

१. (१) संघ : गण० १:२२, ३१७७ ।

(२) वृत्त : नीति, वृत्तान्त, इतिहास, जीवन-चरित्र द्र० १:७:१, ३:१५:६ ।

(३) भेदोपादापन : भेद नीति ग्रहण करना ।

(४) उपांशुदण्ड : चुपचाप दण्ड देना ।

(५) संघलाभ : संघ की उपलब्धि । गण० ३:१४४ ।

पाठभेद :

'संघाहि संहत' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में संघाभिसंहत' तथा 'अंधृष्या' का 'अधृष्यान् तथा तंजोर में 'अधृष्यां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) संहत एकत्र, साथ, एकत्री भाव ।

(२) अधृष्य : दुरासत् ।

(३) पर : शत्रु ।

पाठभेद :

'विगुणान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'द्विगुणान्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) अनुगुण : समान गुण वाला, अनुकूल। द्र० ७:१६:३३ ।

(२) भुण्जीत : उपयोग, स्वायत्ती करण ।

(३) विगुण : गुणहीन, प्रतिकूल विरुद्ध । द्र० ७:८:२२, ११:३:४६, ५३, गण० ३:२११ ।

काम्बोज[1] सुराष्ट्र[2]क्षत्रिय[3]श्रेण्यादयो वार्त्ता[4]शस्त्रोप[5]जीविनः ।

४. काम्बोज एवं सुराष्ट्र के क्षत्रियादि जन, वार्ता (कृषि) और शस्त्र कर्मोपजीवी होते हैं ।

लिच्छविक[1]वृजिक[2]मल्लक[3]मद्रक[4]कुकुर[5]कुरु[6]पांश्चाल[7]ादयो राज[8]शब्दोपजीविनः ।

५. लिच्छविक, वृजिक, मल्लक, मद्रक, कुकुर, कुरु एवं पञ्चाल आदि राजशब्दोपजीवी हैं ।

पाठ भेद :

'काम्बोज का न्यायचन्द्रिका तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'काम्भोज' तथा 'वार्ताशास्त्रोप' का देवनागरी अनुलिपि में 'वार्त्ताशास्त्रोप' पाठभेद मिलता है

पादटिप्पणी :

४. (१) **काम्बोज :** काश्मीर के राजौरी क्षेत्र, से हिन्दूकुश तक का क्षेत्र है । कम्बोज तथा गान्धार दो विभिन्न जनपद हैं ।

(२) **सुराष्ट्र :** सौराष्ट्र या दक्षिणी काठियावाड़ ।

(३) **श्रेणी :** वर्ग, दल, समूह ।

(४) **वार्ता :** वृत्त, कृषि, वाणिज्य । द्र० १:४:१

(५) **शस्त्रोपजीवी :** अस्त्रशस्त्र से जीविका चलाने वाले ।

पादटिप्पणी :

५. (१) **लिच्छिविक :** पटना के उत्तर दिशा में उनकी राजधानी वैशाली थी । मैं यहाँ आ चुका हूँ । ध्वन्सावशेष अभी तक वर्तमान है ।

(२) **वृजिक :** वृजि या वज्जी प्राचीन गणतंत्र है । वज्जि लिच्छवो गणतन्त्र की राजधानी वैशाली थी । वज्जि संघ का ही एक अंग था । बुद्ध वर्तमान तिरहुत का एक भाग था । भगवान के समय में वज्जि लोग अनेक गोत्रों में विभक्त थे । मुख्यत. आठ भागों में उनको विभाजित किया जा सकता है । ह्वेनसांग के अनुसार वैशाली से ८३ मील उत्तर-पूर्व वज़्ज़ियों का देश था । पूर्व से पश्चिम लम्बा तथा उत्तर से दक्षिण चौड़ा था । गण्डक और महानदी के मध्य उनकी स्थिति माना जाती है । पाणिनी ने अपने अष्टाध्यायी में भी उनकी उल्लेख किया है । अंगुत्तर निकाय के सोलह जनपदों में वज्जि भी सम्मिलित किया गया है अन्य जनपद मय काशी कोशल मल्ल, चेरी, कुरु आदि हैं । वज्जियों की भाषा वज्जिका थी । लिखित रूप में भाषा नहीं मिलती सम्भव है कि इसका लिखित साहित्य नष्ट हो गया है ।

(३) **मल्लक :** मल्लों का राज्य दो भागों में विभाजित था; कुसीनारा, तथा पावा । इस राज्य की राजधानी पटना के उत्तर पावा में थी ।

(४) **मद्रक :** पुराने पंजाब के मध्य में रहते थे । प्राचीन मद्रजाति सियालकोट तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र रावी तथा चनाव नदी के बीच रहती थी ।

(५) **कुकुर :** अन्धक वृष्णीसंघ के एक सदस्य थे । महाभारत २:१९:२८, ३:१६३:३२, ५:१९:१ द्र० ५:२८:११, ६:९:६०, १२:२१:२९ ।

(६) **कुरु :** अम्बाला तथा करनाल जिला है ।

(७) **पांचाल :** कन्नौज का समीपवर्ती क्षेत्र अर्थात् बरेली, बदायूं आदि का क्षेत्र ।

(८) **राजशब्दोपजीव :** संघ के राजकीय परिषद् के सदस्यों की उपाधि थी । कश्मीर में वे राजन्यक कहे जाते हैं । राजन्यक का अपभ्रंश राज़ दान है ।

सर्वेषामासन्नाः सत्त्रिणः संघानां परस्परन्यङ्ग[1]द्वेष[2]वैर[3]कलह[4]स्थानान्युपलभ्यक्रमाभिनीतं[5] भेदमुपचारयेयुः ‘असौ त्वाविजल्पति[6] इति ।

. समस्त संघों के समीपवर्ती सत्त्री उनके पारस्परिक दोष कथन, द्वेष, वैर एवं कलह कारणों को जान कर, उन्हें प्रकट कर, उनमें इस प्रकार भेद उत्पन्न करें--‘वह संघ तुम्हारी निन्दा करता ’।

एवमुभयतो बद्धरोषाणां विद्याशिल्पद्यूतवैहारिके[1]ष्वाचार्यव्यञ्जना[2] बाल[3]कलहानुत्पादयेयुः ।

७. इस प्रकार दोनों से क्रोध भाव रखने वाले संघों के बालकों का विद्या, शिल्प, द्यूत एवं वैहारिक (प्रश्नोत्तरादि) के विषय में आचार्य वेशधारी गुप्तचर कलह उत्पन्न करायें ।

वेश[1]शौण्डिकेषु[2] वा प्रतिलोमप्रशंसाभिः संघमुख्यमनुष्याणां तीक्ष्णाः कलहानुत्पादयेयुः कृत्य[3]पक्षोपग्रहेण वा ।

८. अथवा वेश्याओं एवं शौण्डिकों में आसक्त संघप्रमुख जनों की तीक्ष्ण जनविपरीत प्रशंसा कराके, परस्पर कलह उत्पन्न करा दें अथवा कृत्यजनों को अनुकूल कर, कलह उत्पन्न करायें ।

कुमारकान् विशिष्टच्छन्दिकया[1] हीनच्छन्दिकानुत्साहयेयुः ।

९. विशिष्ट भोगप्राप्त करने वालों की अपेक्षा न्यून भोग प्राप्त कुमारों को कलहार्थं उत्साहित करें ।

पाठभेद :

‘कलहस्थाना’ का तेलगू अनुप्रतिलिपि में ‘कलहास्थाना’ तथा ‘भेदमुप’ का ‘भेदमप’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) न्यंग : विकलांग, अंगहीन या पंगु । द्र० २:३३:२, ११, २:१९:६, २:३०:२, ३:१:१२, :३:३:७ ।

(२) द्वेष : घृणा । द्र० ३:१३:१६, ९:६:२६ । गण० १३:१४५ ।

(३) वैर : शत्रुता, अपकार के कारण विरोध करना । गण० ३:१४५ ।

(४) कलह : झगड़ा । द्र० ७:१:३४, ४.१:२१ गण० ३:१४५ ।

(५) क्रमाभिनीत : जो क्रमशः विश्वास करने के लिये उद्यत कर लिया जाता है ।

(६) विजल्पति : अनापसनाप बकना ।

पादटिप्पणी :

७. (१) वैहारिक : खेल, विनोद, विहार । द्र० ८:४:२०, २१ ।

(२) आचार्य व्यंजना : आचार्य वेशधारी व्यक्ति ।

(३) बाल : बालक, विद्यार्थी, शिष्य ।

पादटिप्पणी :

८. (१) वेश : वेश्या, चकलाखाना, वेश्यालय । गण० ३:१४५ ।

(२) शौण्डिक : मदशाला, मदिरालय ।

(३) कृत्यपक्षोपग्रह : बहकाने योग्य पक्ष । द्र० १:१२:२५, १:१४:६, ९:३:३८ । गण० ३:१४५, १९४ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) छन्दिका : सुख, इच्छा, अभिलाषा, कामना, भोग । गण० ३:१४५ ।

विशिष्टानां चैकपात्रं विवाहं वा हीनेभ्यो वारयेयुः ।

१०. विशिष्ट जनों का हीन जनों के साथ एक पंक्ति में भोजन अथवा विवाह निवारित करें ।

हीनान् वा विशिष्टैरेकपात्रे विवाहे वा योजयेयुः ।

११. अथवा निकृष्टों को विशिष्ट जनों के साथ एक पंक्ति में भोजन अथवा विवाह हेतु प्रोत्साहित करें ।

अवहीनान् वा तुल्यभावोपगमने कुलतः पौरुषतः स्थानविपर्यासतो वा ।

१२. अथवा हीन जनों को कुल, पौरुष एवं स्थान परिवर्तन से विशिष्ट जनों के समान सम्मान भाव प्राप्त करने के लिये प्रेरित करें ।

व्यवहारमवस्थितं वाप्रतिलोमस्थापनेन निशामयेयुः ।

१३. अथवा (संघ द्वारा) निर्णीत व्यवहार को तत्सम्बद्ध व्यक्ति को विपरीत करके सुनायें ।

विवादपदेषु वा द्रव्यपशुमनुष्याभिघातेन रात्रौ तीक्ष्णाः कलहानुत्पादयेयुः

१४. तीक्ष्ण जन रात्रि में द्रव्य, पशु एवं मनुष्य का अभिघात करके विवाद स्थानों में परस्पर कलह उत्पन्न करायें !

सर्वेषु च कलहस्थानेषु हीनपक्षं राजा कोशदण्डाभ्यामुपगृह्य प्रतिपक्षवधे योजयेत् ।

१५. समस्त कलह स्थानों में राजा हीन पक्ष को कोश एवं दण्ड से अनुगृहीत करके, प्रतिपक्ष का वध करने के लिये नियुक्त करे ।

भिन्नानपवाहयेद्वा ।

१६. अथवा भिन्न जनों को संघ से अन्यत्र करे ।

पाठभेद :

'विशिष्टानां चैक' का तंजौर में 'विशिष्टा चैक' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विशिष्टाश्चैक' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) एकपात्र : एक साथ भोजन करना, अन्तर्जातीय भोजन गण० । ३:१४६ ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) अवहीन : अति निम्न व्यक्ति । द्र० ४:१:११, २:१:१२, ३:७:३५, ४:१२:४, ८, गण० ३:१४६ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) व्यवहार : कारबार या व्यापार या अनुष्ठान । द्र० ३:१:२, ३:१:३७, ३:२:१ । गण० १:१५३ ।

(२) स्थापना : खड़ा करना, स्थित या स्थिर करना ।

(३) निशामय : अकार्यक्षम, अकिञ्चितकर ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) कलह : झगड़ा । द्र० ७:१:३४, ९:२:६ । मनु० ३:१२१, गण० ३:१४५ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) भिन्न : अलग किये गये । द्र० ७:२४:३ ।

(२) अपवाह्येत : ले जाना, स्थानान्तरण करना । द्र० ७:१६:१६, गण० ३:२१० ।

भूमौ चैषां पञ्चकुली[१] दशकुली[२] वा कृष्यायां निवेशयेत् ।

१७. इनकी भूमि पर पंचकुली अथवा दशकुली को कृषि कर्म हेतु बसाये ।

एकस्था[१] हि शस्त्रग्रहणसमर्थाः स्युः ।

१८.'एक स्थान पर स्थित वे शस्त्र ग्रहण करने में समर्थ होंगे ।

समवाये[१] चैषामत्ययं स्थापयेत् ।

१९. इनके समूह में दण्ड (सेना) स्थापित करे ।

राजशब्दिभिरवरुद्धमवक्षिप्तं वा कुल्यमभिजातं राजपुत्रत्वे स्थापयेत् ।

२०. राजशब्दधारी (लिच्छवि आदि) द्वारा अवरुद्ध अथवा अवक्षिप्त कुलीन एवं अभिजात (गुणी) जनको राजपुत्र के रूप स्थापित करे ।

कार्तान्तिकादिकश्चास्य वर्गो राजलक्षण्यतां संघेषु प्रकाशयेत् ।

२१. ज्योतिषी एवं सामुद्रिक शास्त्रज्ञ उसके राजलक्षण युक्तता को संघों में प्रकाशित करे ।

संघमुख्यांश्च धर्मिष्ठानुपजयेत् स्वधर्ममयुष्य राज्ञः पुत्रे भ्रातरि वा प्रतिपद्यध्वम्' इति ।

२२. संघ के प्रमुख धार्मिकों का उस प्रकार उपजाप करे 'आप इस राजा के पुत्र अथवा भ्राता के प्रति स्वधर्म का पालन करें 'अर्थात् उसके अवरोधादि कष्ट को दूर करने का उपाय करें।

पादटिप्पणी :

१७. (१) पञ्चकुली : पांच कुल का कुटुम्ब । गण० ३:१४६ ।

(२) दशकुली : दश कुल का कुटुम्ब । गण० ३:१४६, द्र० ४:१:३ ।

पाठभेद :

'कृस्यायां' का श्रीमूल में 'कृप्यां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) एकस्था : एक स्थान पर ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) समवाय : संयोग, मेल, समूह । द्र० ७:४:२०, ७:५:३८ ।

पाठभेद :

'कुल्यमभिजात' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तुल्यमभिजतं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. राजशब्द : राजापदवीधारी । गण० ३:१४७ :

पादटिप्पणी :

२१. कार्तान्तिक : ज्योतिषी या सामुद्रिक' । गण० १:६५, ३:११६, १४७ ।

पाठभेद :

'भ्रातरि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'श्रोतरि' पाठभेद मिलता है ।

प्रतिपन्नेषु कृत्यपक्षोपग्रहार्थमर्थं दण्डं च प्रेषयेत् ।

२३. उनके स्वीकार करने पर, कृत्य पक्ष को अनुकूल करने के लिये अर्थ और दण्ड (सेना) प्रेषित करे।

विक्रमकाले शौण्डिक[1]व्यञ्जना, पुत्रदारप्रेत[2]ापदेश[3]ेन 'नैषेचनिकम्' इति मदन[4]रसयुक्तान्मद्यकुम्भाञ्छतशः प्रयच्छेयुः ।

२४. युद्ध का अवसर आने पर, सुराविक्रयी वेशधारी गुप्तचर अपने स्त्री-पुत्र के मरने के ब्याज से यह "नैषेचनिक" है इस प्रकार कह कर, मदका विषयुक्त सैकड़ों मद्यकुम्भ प्रदान करें।

चैत्य[1]दैवत[2]द्वाररक्षास्थानेषु च सत्त्रिणः 'समयं[3] कर्मनिक्षेपं सहिरण्याभिज्ञानमुद्राणि हिरण्यभाजनानि च प्ररूप[4]येयुः ।

२५. चैत्य-दैवत द्वारों और रक्षा स्थानों पर सत्त्री समय कर्म हेतु निक्षेपध और हिरण्य एवं अभिज्ञान मुद्रा सहित हिरण्यपात्रों को प्रकाशित करें।

दृश्यमानेषु च संघेषु 'राजकीयाः' इत्यावेदयेयुः ।

२६. संघ के लोगों के देखने पर, (और उसके विषय में पूछने पर) ये सब "राजकीय" हैं इस प्रकार उन्हें बतायें।

पादटिप्पणी :

२४. (१) शौण्डिक : शराब बिक्रेता। गण० ३:१६९।

(२) प्रेत : मृत।

(३) अपदेश : बहाना या ब्याज।

(४) मदन रस : जड़ीकृत करना। द्र० १:१८ १९, ४:३:२८, ४:५:१६, १३:३:५४, ५६। गण० २:१३२।

पादटिप्पणी :

२५. (१) चैत्य : देवता का स्थान, पूजा का स्थान, पवित्र स्थान। द्र० १:२०:२, २:४:२०, २:३४:३, १३:२:२५, २९। गण० ३:१८, १८८, १९०।

(२) दैवत : देवता, देव प्रतिमा, देवताओं का समूह।

(३) समय कर्मनिक्षेप : जमा करना। द्र० २:३:३।

(४) प्ररूप : दिखाना, संकेत या लक्ष्य करना। द्र० ४:५:१८, ५:२:४१, ६६, ९:६:३, १३:२:२१।

पाठभेद :

'राजकीया' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विक्रीता' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२६. (१) राजकीया : राजा का।

अथावस्कन्दं[1] दद्यात् ।

२७. इसके अनन्तर आक्रमण करे ’

संघानां वा वाहनहिरण्ये कालिके गृहीत्वा संघमुख्याय प्रख्यातं[1] द्रव्यं प्रयच्छेत् ।

२८. अथवा संघों के वाहन और हिरण्य समय पर, अर्पित करने के व्याज से लेकर, संघ प्रमुख को प्रकट रूप से वह द्रव्यादि प्रदान करे ।

तदेषां याचिते ‘दत्तममुष्यै[1] मुख्याय’ इति ब्रूयात् ।

२९. उनके उसकी याचना करने पर ‘इस प्रमुख को दिया है’ इस प्रकार कहे ।

एतेन स्कन्धावाराटवीभेदो[1] व्याख्यातः ।

३०. इस प्रकार से स्कन्धावारस्थ-आटविक भेद की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

संघमुख्यपुत्रमात्मसंभावितं[1] वा सत्त्री ग्राहयेत्[2] ‘अमुष्य[3] राज्ञः पुत्रस्त्वम्, शत्रुभयादिह न्यस्तो[4]ऽसि’ इति ।

३१. अहम्मन्य संघ प्रमुख पुत्र को सत्त्री इस प्रकार प्रबोधित करे ‘तुम इस राजा के पुत्र हो, शत्रु भय से यहाँ रखे गये हो’ ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) अवस्कन्द : आकस्मिक आक्रमण । द्र० ७:६:४०, ७:१:७२९, गण: २:१७७, ३:११४, १३५, १७०, १७७, १९४ ।

पाठभेद :

‘हिरण्येकालिके’ का तेलगू अनुप्रतिलिपि में हिरण्यकालिके’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) प्रख्यातम् : द्र० ९:३:३१ ।

पाठभेद :

‘याचिते’ का तंजोर में ‘यायिते’ तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में ‘यापिते’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) मुष्य : चोर ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) स्कंधावार : सैनिक छावनी ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) आत्मसंभावित : अपने विषय में बहुत बड़ा या अहंकार या अभिमानी । द्र० ५:१:१५, १:१४:१, १८ ।

(२) ग्राहयेत : समझना, वध करना । द्र० १:२१:२१ ।

(३) अमुष्य : ऐसे का, अमुक का ।

(४) न्यस्त : रखा हुआ, धरा हुआ, त्यक्त छोड़ा हुआ । मध्य युग में राजपूत्रों को बन्धक रख देते थे ।

प्रतिपन्नं[1] राजा कोशदण्डाभ्यामुपगृह्य[2] संघेषु विक्रमयेत्[3] ।

३२. उसके स्वीकार करने पर, राजा कोश एवं सेना से उसे अनुकूल कर, संघों पर आक्रमण कराये ।

अवाप्तार्थस्तमपि प्रवासयेत्[1] ।

३३. अर्थ सिद्धि हो जाने पर, उसे भी प्रवासित करे ।

बन्धकीपोषकाः[1] प्लवक[2]नटनर्तकसौभिका[3] वा प्रणिहिता[4]: स्त्रीभिः परमरूपयौवनाभिः संघमुख्यानुन्मादयेयुः ।

३४. बन्धकी पोषक, प्लवक, नट, नर्तक अथवा सौभिक वेशधारी गुप्तचर रूप यौवन सम्पन्न स्त्रियों द्वारा संघ प्रमुखों को मोहित करें ।

जातकामानाम्[1]न्यतमस्य प्रत्ययं[2] कृत्वाऽन्यत्र गमनेन प्रसभहरणेन[3] वा कलहानुत्पादयेयुः ।

३५. उसके प्रति आसक्त संघ प्रमुखों में एक को विश्वास देकर, अन्य के समीप जाने अथवा बलात् हरण की मिथ्या कल्पना द्वारा कलह उत्पन्न कराये ।

कलहे तीक्ष्णा[1]: कर्म कुर्युः 'हतोऽयमित्थं कामुकः' इति ।

३६. कलह उप्पन्न हो जाने पर, तीक्ष्ण वध कर्म कर दें 'तदनन्तर यह कामुक इस प्रकार (अन्य द्वारा) मार डाला गया, यह प्रचारित करे ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) प्रतिपन्न : उपलब्ध, प्राप्त, क्रिया गया, अनुष्ठित, कार्यान्वित, निष्पन्न, हाथ में लिया हुआ, आरब्ध ।

(२) उपगृह्य : सहायता, अनुग्रह, प्रोत्साहन ।

(३) विक्रम : आक्रमण, बल, युद्ध । द्र० १:१७ २८, ५:६:२५, ७:३:११, १२:३:१५ ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) प्रवासयेत : वध या मार डालना । द्र० १:१४:२, ४:१३:८९ ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) बन्धकीपोषक : वेश्यालय या चकलाघर, ब्राथेल का रखने वाला मालिक । द्र० ५;२;२१, २८, १२:३:११ । गण० ३:१४८ ।

(२) प्लवक : रज्जुनर्तक, डोरी पर नाचने वाला । द्र० ३:२७:२५, ७:१७:३४, गण० ३:१४८,

(३) सौभिक : बाजीगर, जादूगर, कठपुतली का खेल दिखाने वाला या तमाशा दिखाने वाला ।

(४) प्रणिहिता : गुप-चुप रखा हुआ ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) जातकामा : जब कामोद्वेग का उद्दीपन हो जाय ।

(२) प्रत्यय : विश्वास ।

(३) प्रसभहरण : बलपूर्वक हरण ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) तीक्ष्ण : घातक, बधिक । द्र० १:१४:५, ९:५:२५, ९:६:३५, ९:७:४९, १२:५:७; १:११:१, २:३०:३२, १:१२:२, ३:१२: १५, २४, २:१३:१७, ५८ ।

विसंवादितं[1] वा मर्षयमाणमभिसृज्य स्त्री ब्रूयात् 'असौ मां मुख्यस्त्वयि जातकामां बाधते, तस्मिञ्जीवति नेह स्थास्यामि' इति घातमस्य प्रयोजयेत् ।

३७, कलह स्थिति को सहन करने वाले के पास स्त्री जाकर कहे 'तुममें आसक्त मुझे वह संघ प्रमुख निवारित करता है, उसके जीवित रहते हुए, तुम्हारे साथ नहीं रह सकूँगी' इस प्रकार उसके वध के लिये प्रेरित करे ।

प्रसह्या[1]पहृता वा वनान्ते क्रीडागृहे वाऽपहर्तारं रात्रौ तीक्ष्णेन घातयेत्, स्वयं वा रसेन ।

३८. अथवा वलात् अपहृत स्त्री वन के समीप, अथवा क्रीडा गृह में रात्रिकाल में अपहर्त्ता का तीक्ष्ण द्वारा वध करा दे अथवा विष द्वारा स्वयं हत्या कर दे ।

ततः प्रकाशयेत् 'अमुना[1] मे प्रियो हतः' इति ।

३९. तदनन्तर यह प्रकट करे 'इस प्रतिकामुक ने मेरे प्रिय को मार डाला' ।

जातकामं वा सिद्धव्यञ्जनः सां[2]वदनिकीभिरौषधीभिः सं[3]वास्य [4]रसेनातिसं[5]धायापगच्छेत् ।

४०. अथवा स्त्री में आसक्त कामुक को सिद्ध वेशधारी गुप्तचर वशीकरण औषधि युक्त विष द्वारा हत्या कर, दूर चला जाय ।

तस्मिन्नपक्रान्ते सत्त्रिणः परप्रयोगमभिशंसेयुः ।

४१. उसके चले जाने पर, सत्त्री अन्य द्वारा किया कार्य प्रचारित करें ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) विसंवादित : निष्कली कृत, अस्वीकृत, निराश ।

पाठभेद :

'प्रसह्यापहृता' का देवनागरी अनुलिपिमें 'प्रसह्यापसृता' तथा 'वा वनान्ते' का तंजोर में 'वा वनवनान्ते' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वोपवनान्ते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) प्रसह्य : बलात् ।

(२) रस : विष ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) अमुना : अमुक ।

पाठभेद :

'सांवदनिकीभिर' का तंजोर में 'सांवदनीकीभिर' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) सिद्धि व्यंजन : सिद्ध बना । गण० १:२१ ।

(२) सांवदनिकी : वशीकरण करने वाला, किसी के प्रेम का इच्छुक । द्र० ४:४:१४, ५:१:१९, ११:१:४०, १२:२:१४, १६ ।

(३) संवास्य : साथ बसना, मिलना ।

(४) रस : विष ।

(५) अतिसंधाय : हत्या करना, धोखा, छल ।

आढ्यविधवा[१] गूढाजीवा[२] योग[३]स्त्रियो वा दायनिक्षेपार्थं विवदमानाः संघमुख्यानुन्मदयेयुः, अदिति[४]कौशिक[५]स्त्रियो नर्तकी गायना वा ।

४२. आढ्य विधवा, गूढाजीवा अथवा योग स्त्रियाँ (स्त्री वेशधारी पुरुष) दाय भाग और निक्षेप के लिये विवाद करती हुई, संघ प्रमुख के समीप जाकर, उन्हें प्रमादी बनाये अथवा अदिति स्त्रियाँ, कौशिक स्त्रियाँ एवं नर्तन-गायन करने वाली स्त्रियाँ, संघ प्रमुखों को उन्मादित करें ।

प्रतिपन्नान्[१] गूढवेश्मसु[२] रात्रिसमागम[३]प्रविष्टांस्तीक्ष्णां हन्युर्वद्ध्वा हरेयुर्वा ।

४३. समागम संकेत स्वीकार करने वाले, गूढवेश में रात्रि समागम के लिये प्रविष्ट संघ-प्रमुखों का तीक्ष्ण वध अथवा अपहरण करे ।

सत्त्री वा स्त्रीलोलुपं संघमुख्यं प्ररूपयेत्[१], 'अमुष्मिन् ग्रामे दरिद्रकुलमपसृतम्, तस्य स्त्री राजार्हा, गृहाणैनाम्' इति ।

४४. अथवा सत्त्री स्त्री लोलुप संघ प्रमुख से कहे 'अमुक ग्राम में दरिद्रकुल पुरुष जीविकार्थं अन्यत्र गया है, उसकी स्त्री राजा के योग्य है, उसे ग्रहण करो'

पाठभेद :

'आढ्यविधवा' का तेलगू अनुप्रति लिपिमें 'अस्यविधवा' पाठभेद मिलता है । तथा 'येयुः अदितिकौशिका' का तंजौरमें 'येयुः रितिकौशिक' तथा देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में येयुरिति कौशिक' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) आढ्यविधवा : धनी विधवा स्त्री । गण० ३:१८९ ।

(२) गूढ़ाजीवा : गुप्त पेशा करने वाली स्त्री ।

(३) योगस्त्री : गुप्त सेवा में रत स्त्री । गण० ३:१५० ।

(४) अदिति : भिखारियों का एक धार्मिक सम्प्रदाय, जो किसी देवता के नाम पर, भिक्षा माँगते हैं तथा जिसको पताका लिये रहते हैं ।

(५) कौशिकीय : सर्प प्रदर्शन द्वारा भिक्षा माँगने वाली स्त्रियाँ । द्र० १:१७:१९ ।

पाठभेद :

'प्रविष्टांस्तीक्ष्णः' का 'प्रबिष्टास्तीक्ष्णाः' तेलगू-अनुप्रतिलिपि में पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) प्रतिपन्न : स्वीकार या वादा किया हुआ ।

(२) गूढ़वेश्म : गुप्त मकान ।

(३) प्रविष्ट : गण० १:१३९ ।

४४. (१) प्ररूपयेत : पर स्त्री कामी, पर स्त्री के सौन्दर्य का लोलुप । द्र० ४:५:१८, ५:२:४१, ६६, ९ ६:२७, ११:१:२५, १३:२:२९ ।

(२) अपसृतम् : दूसरे जगह से बाहर आना या प्रवजन । गण० ३।१३५ । द्र० ७:६:२२, ७:८:-२३, ७:१६:५, ८:५:८ ।

गृहीतायामर्धमासान्तरं सिद्धव्यञ्जनो दूष्यसंघ[1]मुख्यमध्ये प्रक्रोशेत् 'असौ मे मुख्यो भार्यां[2] स्नुषां भगिनीं दुहितरं वाऽधिचरति' इति ।

४५. उसके उस स्त्री के ग्रहण करने पर अर्धमास, (१५) बाद सिद्धवेशधारी (गुप्तचर) दूष्य संघ प्रमुखों के बीच आक्रन्दन करे 'यह संघ प्रमुख मेरी भार्या, पुत्रभार्या, बहिन अथवा पुत्री का वलात् उपभोग करता है' ।

तं चेत्संघो निगृह्णीयात्, राजैनमुपगृह्य[1] विगुणेषु[2] विक्रमयेत्[3] ।

४६. यदि उसे संघ दण्डित करे, तो राजा उसे स्वानुकूल कर अपने प्रतिकूल जनों से युद्धरत करा दे ।

अनिगृहीते[1] सिद्धव्यंञ्जनं[2] रात्रौ तीक्ष्णः प्रवासयेयुः[3] ।

४७. उसके निगृहीत न किये जाने पर, उस सिद्धवेशधारी को तीक्ष्ण रात्रि में प्रवासित करें ।

ततस्तद्व्यञ्जनाः प्रक्रोशेयुः 'असौ ब्रह्महा[1] ब्राह्मणीजारश्च[2]' इति ।

४८. तदनन्तर अन्य सिद्धवेशी आक्रन्दन करे 'वह अनिगृहीत संघ प्रमुख ब्रह्महन्ता और ब्राह्मणी जार है' ।

पाठभेद :

'दूष्यसंघमुख्यमध्ये' का त्रिवेन्द्रम् में 'दूष्यः संघमुख्यमध्ये', तथा तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'दूष्यसंघमुख्यं मध्ये', न्यायचन्द्रिका में 'दूष्यः संघमुख्यमध्ये' तथा 'मुख्यो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मुख्यां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) दूष्यसंघ : राजद्रोही संघ ।

(२) असौ : द्र० ५:१:४१ ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) उपगृह्य : समर्थन करना ।

(२) विगुण : प्रतिकूल, विपक्षी, विरोधी ।

(३) विक्रम : युद्ध करना । द्र० १:१७:२८, १२:३:१४ ।

पाठभेद

'अनिगृहीते' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अनिशं हि ते' तथा 'सिद्धव्यञ्जनं' का 'व्यञ्जनं हि' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'सिद्धव्यञ्जना' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) अनिगृहीत : अदण्डित । द्र० ४:५:८ ।

(२) सिद्ध व्यंजन : सिद्ध वेषधारी या सिद्ध बना ।

(३) प्रवासयेयु : मार डालना ।

पाठभेद :

'ततस्तद्व्यञ्जना' का तेलगू अनु प्रतिलिपिमें 'तत्तद्व्यञ्जनाः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) ब्रह्महा : ब्राह्मण की हत्या करने वाला ।

(२) जार : उपपत्ति, आशना, पर स्त्री कामी ।

कार्तान्तिक[1]व्यंजनो वा कन्यामन्येन वृतामन्यस्य प्ररूपयेत् 'अमुष्य कन्या-राजपत्नी राजप्रसविनी च भविष्यति, सर्वस्वेन प्रसह्य[2] वैनां लभस्व' इति ।

४९. अथवा कार्तान्तिक वेशधारी गुप्तचर अन्य संघ प्रमुख द्वारा वरण की गयी कहे 'अमुक की कन्या राजपत्नी एवं राजपुत्र प्रसविनी होगी, सर्वस्व देकर अथवा बल पूर्वक उसे प्राप्त करो'' ।

अलभ्यमानायां पर[1]पक्षमुद्धर्ष[2]येत् ।

५०. उसे प्राप्त न करने पर, दूसरे पक्ष को उसके विरुद्ध प्रोत्साहित करे ।

लब्धायां सिद्धः कलहः ।

५१. प्राप्त कर लेने पर, कलह स्वयं सिद्ध हो जायेगा ।

भिक्षुकी[1] वा प्रियभार्यं मुख्यं ब्रूयात् 'असौ ते मुख्यो यौवनोत्सिक्तो भार्यायां मां प्राहिणोत्, तस्याहं भयाल्लेख्य[2]माभरणं गृहीत्वाऽऽगतास्मि, निर्दोषा ते भार्या, गूढमस्मि प्रतिकर्तव्यम् अहमपि तावत् प्रतिप[3]त्स्यामि' इति ।

५२. अथवा भिक्षु की भार्या प्रेमी संघ प्रमुख से कहे 'अमुक यौवनोन्मत्त संघ प्रमुख तुम्हारी स्त्री को स्वसमागमानुकूल करने के लिये मुझे भेजा है । मैं भय वश उसका लेख आभूषण लेकर आयी हूँ, तुम्हारी स्त्री निर्दोष है। गुप्तरूप से उसका प्रतीकार करो अर्थात् मार डालो, मैं भी तब तक पास रहूँगी'

एवमादिषु कलहस्थानेषु स्वयमुत्पन्ने वा कलहे तीक्ष्णैरुत्पादिते वा हीन-पक्षं राजा कोशदण्डाभ्यामुपगृह्य विक्रमयेदपवाहयेद्वा ।

५३. उस प्रकार के कलह स्थानों में स्वयं कलह उत्पन्न होने अथवा तीक्ष्णों द्वारा कलह उत्पन्न किये जाने पर, राजा हीन पक्ष को कोश-दण्ड द्वारा स्वानुकूल कर युद्ध संलग्न करे अथवा निर्वासित करे ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) कार्तान्तिक । ज्योतिषी या दैवज्ञ । गण० ३:११६, १४७ । द्र० ११:१:२१ ।

(२) प्रसह्य : बलपूर्वक, बलात् ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) उद्धर्ष : उत्तेजित, उत्साहित करना ।

(२) पर : दूसरों की ।

पाठभेद :

'प्रियभार्यमुख्यं' का देवनागरी अनुलिपिमें 'प्रिय-भार्यमुखं' तथा त्रिवेन्द्रम् 'प्रियभार्यमुख्यं' तथा यौवनोत्सिक्तो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि 'यौवनोद्रिक्तो' तथा 'आभरणं' का त्रिवेन्द्रम् तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में । 'आदरणं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५२. (१) भिक्षुकी : द्र० ५:१:५०, गण० १:५२ ।

(२) लेख्य : पत्र या लेख ।

(३) प्रतिपत् : स्वीकार या ग्रहण करना ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) अपवाह : दूर ले जाना या स्थाना-न्तरित करना ।

संघेष्वेवमेकराजो वर्तेत ।

५४. इस प्रकार राजा संघों के प्रति व्यवहार (चेष्टा) करे ।

संघाश्चाप्येवमेकराजादेतेभ्योऽतिसंधानेभ्यो रक्षयेयुः ।

५५. उसी प्रकार संघ जन भी राजा से और उसके इन कपट प्रयोगों से अपनी रक्षा करे।

संघमुख्यश्च संघेषु न्याय[1]वृत्तिर्हितः प्रियः ।
[2]दान्तो युक्तं[3]जनस्तिष्ठेत्सर्वचित्तानुवर्तकः ॥

५६. संघमुख्य संघ के प्रति न्यायवृत्ति अधिकारी एवं प्रियकारी हो, सदैव अनुद्धत एवं जनयुक्त रहे तथा समस्त संघजनों के चित्तवृत्ति के अनुकूल कार्य करे।

इति संघवृत्ते एकादशेऽधिकरणे भेदोपादानानि उपांशुदण्डाश्च प्रथमोऽध्यायः । आदितः पञ्चत्रिंशच्छततमः ।

एतवता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य संघवृत्तम् एकादशमधिकरणं समाप्तम् ।

एकादश अधिकरण संघवृत्त में भेदोपादान और उपांशुदण्ड सम्बद्ध प्रथम अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ पैंतीसवाँ अध्याय समाप्त। यहाँ कौटिल्य अर्थशास्त्र का संघवृत सम्बद्ध एकादश अधिकरण समाप्त।

पाठभेद :

'राजादेतेभ्यो' का तंजौर में 'राजातेभ्यो', तथा देवनागरी अनुलिपि में 'राजातमेतेभ्यो' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'राजास्तेभ्यो' तथा 'रक्षयेयु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रक्षयेन' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'न्यायवृत्तिर्हितः' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'न्यायवृत्तिहितः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) न्यायवृत्ति : न्याय पूर्वक रहना । द्र० ७:२:१२३, ७:१५:२४ ।

(२) दान्त : वश में किया हुआ या दमन किया हुआ ।

(३) युक्त : उचित । द्र० १:१५:१६, २:६:३, २३, २:९:३३, ३४, ३:२०:१७, ५:३:१७ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करणमें—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे संघवृत्ते एकादशाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः भेदोपादानानि उपांशुदण्डश्च, आदितः पंचत्रिंशच्छततमः । एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य संघवृत्तमेकादशमधिकरणं समाप्तम् ।

मैसूर संस्करण में—

इति संघवृत्ते भेदोपादानानि उपांशुदण्डश्च प्रथमोऽध्यायः आदितः पंचत्रिंशच्छततमः एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य संघवृत्तं एकादशमधिकरणं समाप्तम् ।

वसाक संस्करणमें—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे संघवृत्ते एकादशाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः भेदोपादानानि उपांशुदण्डश्च आदितः पंचत्रिंशच्छततमः । एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य संघवृत्तमेकादशममधिकरणं समाप्तम् ।

उदयवीर शास्त्रीसंस्करणमें—

इति संघवृत्ते एकादशेऽधिकरणे भेदोपादानानि उपांशुदण्डश्च प्रथमोऽध्यायः । आदितः पंचत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३५ ॥

एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य संघवृत्तमेकादशममधिकरणं समाप्तम् ॥ ११ ॥

१२

आबलीयसम्—द्वादशमधिकरणम्

आबलीयस—१. बारहवां अधिकरण

अध्याय १

[द्विषष्टिशततमं प्रकरणम्—दूतकर्म]

एक सौ बासठवां प्रकरण—दूत कर्म

'बलीयसा[1]ऽभियुक्तो[2] दुर्बलः सर्वत्रानुप्रणतो वेतस[3]धर्मा तिष्ठेत् ।

१. अतिप्रबल द्वारा आक्रान्त दुर्बल सब प्रकार से प्रणत होकर वेतस (बेंत) तुल्य स्थित रहे ।

इन्द्रस्य हि स प्रणभति यो बलीयसो नमति[1]' इति भारद्वाजः ।

२. जो वलवान् के प्रति प्रणत होता है, वह इन्द्र के प्रति प्रणत है, ऐसा भारद्वाज का मत है ।

'सर्वसंदोहेन[1] बलानां युध्येत ।

३. 'सेना के सम्पूर्ण सामर्थ्य से युद्ध करना चाहिए ।

पराक्रमो हि व्यसन[1]मपहन्ति ।

४. पराक्रम विपत्ति को विनष्ट करता है ।

पाठभेद :

सर्वभातुप्रणतो' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'सपुत्रानुप्रणतो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) आबलीयस : शक्तिशाली, आक्रमण के प्रति दुर्बल रहना, व्यवहार में तथा उस सम्बन्ध में किया गया कर्म । द्र० ७:६:२८, ७:१४:२८, गण० ३:१५४ ।

(२) अभियुक्त : आक्रान्त, । द्र० ७:५:६, ८:१:५९,

(३) वेतस धर्म : बेत के समान । गण० ३:१५४ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) नमति : झुकना, अधीनता स्वीकार करना । महाभारत १२:६७:११ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) संदोह : सैन्य सज्जा सैन्य प्रचालन, युद्धार्थ संचालन, साथ लाना । द्र० ५:२:५०, ६:२:३८, ७:४:७, १२, १४, ७:१३:५, ९:६:५५, १२:१:७, १३:३:२३ ।

पादटिप्पणी :

४. (१) व्यसन : आपदा । द्र० ३:१४:२, गण० ३:२ ।

स्वधर्मश्चैष क्षत्रियस्य, युद्धे जयः पराजयो वा' इति विशालाक्षः ।

५. यह (पराक्रम) क्षत्रिय का स्वधर्म है, युद्ध में जय हो अथवा पराजय' यह विशालाक्ष का मत है ।

नेति कौटिल्यः ।

६. कौटिल्य का ऐसा मत नहीं है ।

सर्वत्रानुप्रणतः कुलैडक[1] इव निराशो जीविते वसति ।

७. सब प्रकार से विनत नृपति कुलैडक तुल्य जीवन के प्रति निराश रहता है

युध्यमानश्चाल्पसैन्यः समुद्रमिवाऽप्लवो[1]ऽवगाहमानः सीदति ।

८. युद्ध करता हुआ अल्प सैन्य वाला नृपति नौका साधन विहीन रहकर समुद्र में अवगाहन (प्रवेश) कर्ता पुरुष तुल्य दुःखभागी होता है ।

तद्[1]विशिष्टं तु राजानमाश्रितो दुर्ग[2]मविषह्यं[3] वा चेष्टेत ।

९. अतएव शत्रु की अपेक्षा विशेष बलवान् राजा का अथवा अविषह्य दुर्ग का आश्रय लेकर, शत्रु के प्रतीकार की चेष्टा करे ।

त्रयो[1]ऽभियोक्तारो धर्मलोभासुरविजयिन इति ।

१०. धर्म-विजयी, लोभ-विजयी एवं असुर विजयी ये तीन प्रकार के अभियोक्ता होते हैं ।

पादटिप्पणी :

५, (१) क्षत्रिय : चार वर्णोंमें द्वितीय वर्ण है । क्षत्रियोंका कर्म धर्म युद्ध करना है ।

पाठभेद :

'कुलैडक' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'कूलैडक' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) कुलैडक : अपने गोल से अलग हुए या यूथ भ्रष्ट मेढ़ा या जो मेढ़ा घर में केवल मारने के लिए रखा जाता है । गण० ३:१५१ ।

पादटिप्पणी :

८ (१) प्लव : छोटी नाव । द्र० २:१:२५, १८:२:३१ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) तद् : बलवान राजा से तात्पर्य है । ७:१५:१ ।

(२) दुर्ग : द्र० ७:१५:९, गण० १:१२७ ।

(३) अविषह्य : अनाक्रमणीय । द्र० ७:१२:२ १३:३:२० ।

पाठभेद :

'धर्मलोभासुर' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धर्मासुरलोभ' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) त्रय : तीन प्रकारके आक्रमक राजा ।

(२) धर्म विजयी : धार्मिक राजा । द्र० ३:१:३८, ४०, ४३, ४४, ४५,

(३) लोभ विजय : लोभी राजा । १:६:१ ।

(४) असुर विजयी : असुर राजा ।

तेषामभ्य[1]वपत्त्या धर्मविजयी तुष्यति ।

११. उनमें धर्म विजयी आत्म समर्पण से सन्तुष्ट होता है।

तमभ्यवपद्येत, परेषाम[1]पि भयात् ।

१२. अन्य शत्रुओं का भय होने पर भी धर्म विजयी को आत्म समर्पण करे अर्थात् वह अन्य से भी दुर्बल की रक्षा करता है।

भूमिद्रव्यहरणेन लोभविजयी तुष्यति ।

१३. लोभ विजयी भूमि-द्रव्य के अर्पण से सन्तुष्ट होता है।

तमर्थेनाभ्यवपद्येत ।

१४. उसे अर्थ प्रदान द्वारा आवर्जित करे।

भूमिद्रव्यपुत्रदारप्राणहरणेनासु[1]रविजयी ।

१५. असुर विजयी भूमि, द्रव्य, पुत्र-दार (स्त्री पुत्र) एवं प्राण हरण से सन्तुष्ट होता है।

तं भूमिद्रव्याभ्यामुपगृह्य[1]ाग्राह्यै[2]ः प्रतिकुर्वीत ।

१६. भूमि-द्रव्य प्रदान कर, उसे अनुकूल तथा (उससे) दूर रहकर, प्रतीकार करे।

तेषामन्यतममुत्तिष्ठमानं संधिना मन्त्र[2]युद्धेन कूटयुद्धेन वा प्रतिव्यूहेत ।

१७. उनमें उत्तिष्ठमान किसी एक का सन्धि, मन्त्रयुद्ध अथवा कूट युद्ध से प्रतिव्यूहन (अपकार) करे।

पादटिप्पणी :

११ (१) अभ्यवपत्ति : समर्पण। द्र० १२:१:१३, १४।

पादटिप्पणी :

१२ (१) परेषामपि भयात् : दूसरे से भय होने पर।

पादटिप्पणो :

१५ (१) असुर : दैत्य, दानव। द्र० १२:१:१०।

१६. (१) उपगृह्य : देना।

पादटिप्पणो :

(२) अग्राह्य : पहुँचसे बाहर। द्र० २:३४:१०।

पाठभेद :

'संधिना' का तंजौर में 'संधेन' देवनागरी अनुलिपि में 'संधौ' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) उत्तिष्ठमान : जब कूच करने के लिए तैयार हो। गण० ३:१३८, १४४।

(२) मन्त्रयुद्ध : नीतियुद्ध। द्र० ९:२:५, ७:१३:२९, १२:३:९, गण० ३:३२५, ३:१५८।

(३) प्रतिव्यूह : विरोधी मोर्चाबन्दी, प्रति व्यूह रचना।

पादटिप्पणी :

१८. (१) अस्य : बलीराजा।

शत्रुपक्षम[1]स्य सामदानाभ्याम्, स्व[2]पक्षं भेददण्डाभ्याम् ।

१८. उसके शत्रु पक्ष को साम-दान द्वारा तथा स्वपक्ष को भेद-दण्ड द्वारा अनुकूल करे ।

दुर्गं[1] राष्ट्रं[2] स्कन्धावारं[3] वाऽस्य गूढ़ा[4]ः शस्त्र[5]रसा[6]ग्नि[7]भिः साधयेयुः ।

१९. उसके दुर्गं, राष्ट्र अथवा स्कन्धावार को गूढ़ पुरुष शस्त्र, रस एवं अग्नि द्वारा विनष्ट करें ।

सर्वतः पार्ष्णि[1]मस्य ग्राहयेत् ।

२०. उस बली राजा के सब ओर से पार्ष्णिग्राह कराये अर्थात् सब ओर से आक्रमण कराये ।

अटवीभिर्वा राज्यं घातयेत्. तत्कुलीनापरुद्धाभ्यां वा हारयेत् ।

२१: अथवा आटविकों द्वारा इसका राज्य नष्ट कराये अथवा उस कुल के पुरुष या अपरुद्ध पुत्रादि द्वारा राज्य अपहृत कराये ।

अपका[1]रान्तेषु चास्य दूतं प्रेषयेत् ।

२२. अपकारोपरान्त उसके पास सन्धि के लिये दूत प्रेषित करे ।

अनपकृत्य वा संधा[1]नम् ।

२३. अथवा विना अपकार किये सन्धि की याचना करे ।

तथाप्यभिप्रयान्तं कोशदण्डयोः पा[1]दोत्तरमहोरा[2]त्रोत्तरं वा संधि याचेत ।

२४. तथापि अभियान कर्ता बलवान् शत्रु से कोश-दण्ड में चतुर्थांश वृद्धि अथवा दिन-रात के समय में वृद्धि कर सन्धि याचना करे ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) दुर्गं : किला ।

(२) राष्ट्र : देश । १:१२:२२, १:१३:१५ ।

(३) स्कन्धावार : शिविर, सैनिक छावनी । १०:१:१,९:६:४४ ।

(४) गूढ़ : गुप्तचर, जासूस, द्र० २:१६:२४, ३३, १:११:१ ।

(५) शस्त्र : हथियार ।

(६) रस : विष ।

(७) अग्नि : आग ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) पार्ष्णि : सेना का पृष्ठ भाग। द्र० ७: ५:८, ७:१३:१ ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) अवरूद्ध : राजकुमार जो अकृपा प्राप्त है । द्र० १:१३:१८, १:१८:१३, १:१०:३, ९:३:१४ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) अपकारान्तेषु : अपकार के अन्त या अहितकर कार्यों के अन्त में ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) संधानम् : सन्धि या शक्ति की याचना ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) पाद : एक पैर का ।

(२) अहोरात्र : दिन एवं रात्रि ।

स[1] चेद्दण्ड[2]संधिं याचेत, कुण्ठ[3]मस्मै हस्त्यश्वं दद्याद्, उत्साहितं वा गर[4]युक्तम्।

२५. यदि वह दण्ड सन्धि की याचना करे, तो उसे कुण्ठ (अकर्मशील) हाथी-घोड़ा दे अथवा विष प्रदान किये गये उत्साहित हाथो घोड़ा दे ।

पुरुषसंधिं[1] याचेत, दूष्यामित्राटवीबलमस्मै दद्याद्, योगपुरुष[2]ाधिष्ठितम् ।

२६. यदि पुरुष सन्धि की याचना करे तो उसे योग पुरुष युक्त दूष्यबल, अमित्रबल एवं अटवी बल प्रदान करे ।

तथा कुर्याद्यथोभय[1]विनाशः स्यात् ।

२७. ऐसी व्यवस्था करे, जिससे उभय बल विनष्ट हो जाय ।

तीक्ष्णबलं[1] वाऽस्मै दद्याद् यदवमानितं[2] विकुर्वीत, मौल[3]मनुरक्तं वा यदस्य व्यसनेऽपकुर्यात् ।

२८. अथवा उसे तीक्ष्ण बल प्रदान करे, जो अपमानित होने अपकार करे, अथवा स्वानुरक्त मौल बल प्रदान करे जो उसके विपत्तिकाल में पूर्ण अपकार करे ।

कोशसंधिं याचेत, सार[1]मस्मै दद्याद् यस्य क्रेतारं नाधिगच्छेत्, कुप्य[2]मयुद्धयोग्यं वा ।

२९. यदि कोश सन्धि की याचना करे, तो उसे वह सार द्रव्य प्रदान करे, जिसका क्रेता उपलब्ध न हो सके अथवा युद्ध के अयोग्य कुप्य प्रदान करे ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) स च : दुर्बल राजा से तात्पर्य है ।

(२) दण्ड : सेना ।

(३) कुण्ठ : मन्द बुद्धि, जड़, मूढ़, शक्ति हीन, असमर्थ, कायर । द्र० ७:१२:१, ८:४:४३, गण० ३: १५६ ।

(४) गर : विष जिसके खाने से पन्द्रह दिन या एक साल में मृत्यु हो जाती है । द्र० ७:१:३० १४: १:६, ७, गण० ३:२३८ ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) पुरुषसंधि : पैदल सेना को सन्धि के अनुसार लेना चाहिए । गण० ३:१५६ ।

(२) योगपुरुष : गुप्तचर प्रतिनिधि या विष आदि देनेवाला । द्र०१:२१:२९, ५:१:३२, ९:३:२६ ३०, गण० २:१२३ ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) उभय : शत्रु तथा दूष्य बल दोनों ।

पाठभेद :

'दद्याद्यदवमानितं' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'दद्यादवमानितं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) तीक्ष्णबल : तीक्ष्ण की सेना या उग्र वधिक सैनिकों की सेना । द्र० १:१४:५, ९:५:५०, ९:६:३५, ९:७:४९ ।

(२) अवमानित : तिरस्कृत ।

(३) मौलबल : वंशपरम्परा या वंशानुगत सेना । द्र० ९:२:१४, गण० ३:५१ ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) सार : मूल्यवान, बलसमृद्धि । द्र० ७:१२:१६ ।

(२) कुप्य : वन की उत्पत्ति, वन में उत्पन्न सामग्री वस्त्रादि । द्र० १:१६:९, २:१७:१, ७:१६:-१०, ९:३:१० ।

भूमिसंधि[1] याचेत, प्रत्यादेयां नित्या[2]मित्रामन[3]पाश्रयां महाक्षयव्ययनिवेशां वास्मै भूमिं दद्यात् ।

३०. यदि भूमि सन्धि की याचना करे, तो उसे प्रत्यादेय, नित्य अमित्रसान्निध्ययुक्त, आश्रय रहित (दुर्ग रहित) अथवा महाक्षय-व्ययसाध्य निवेश वाली भूमि प्रदान करे।

सर्वस्वेन वा राजधानीवर्जेन संधिं याचेत बलीयसः[1] ।

३१. अथवा राजधानी को छोड़कर सर्वस्व देकर भी बलवान् से सन्धि याचना करे।

यत्प्रसह्य हरेदन्यत्तत्प्रयच्छेदुपायतः ।
रक्षेत्स्वदेहं न धनं का ह्यनित्ये धने दया ॥

३२. अन्य बली शत्रु जिस धन का हरण करे, वह धन उपाय पूर्वक उसे अर्पित कर दे, अपने देह की रक्षा करे, धन की नहीं अनित्य धन पर क्या दया? अर्थात् शरीर रहने पर पुनः धनार्जन सम्भव है।

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे दूतकर्मप्रथमोऽध्यायः ।
आदितः षट्त्रिंशच्छततमः ।

बारहवें अधिकरण आबलीयस के अन्तर्गत दूतकर्म सम्बद्ध प्रथम अध्याय समाप्त। आदि से एक सो छत्तीसवा अध्याय समाप्त।

पादटिप्पणी :

३०. (१) भूमि संधि : द्र० ७:१४:१,

(२) नित्यामित्र : सदा या शाश्वत अमित्र या शत्रु। द्र० ७:७:२९, ७:१०:१२।

(३) अनपाश्रया : बिना आश्रय। दुर्गादि आश्रयरहित।

पादटिप्पणी :

३१. (१) बलीयस : शक्तिशाली, बलवान या बली राजा।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करणमें—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे आबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः, दूतकर्माणि सन्धियाचनम् आदितः षट्त्रिंशच्छततमः।

मैसूर संस्करणमें—

इत्याबलीयसे दूतकर्माणि सन्धियाचनं प्रथमोऽध्यायः आदितः षट्त्रिंशच्छततमः।

वसाक संस्करणमें—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे आबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः दूतकर्माणि सन्धियाचनम् आदितः षट्त्रिंशच्छततमः।

उदयवीरशास्त्री संस्करणमें—

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे दूतकर्माणि संधियाचनं प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ आदितः
षट्त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३६ ॥

अध्याय २

[त्रिषष्टिशततमं प्रकरणम्—मन्त्रयुद्धम्; चतुःषष्टिशततमं प्रकरणम्—सेनामुख्यवधः प्रथमो भागः]

एक सौ तिरसठवां प्रकरण–मन्त्र युद्ध
एक सौ चौसठवां प्रकरण–सेना मुख्यवध प्रथम भाग

स[1] चेत्संधौ नावतिष्ठेत, ब्रूयादेनम्––"इमे शत्रुषड्वर्ग[2]वशगा राजानो विनष्टाः, तेषामनात्मवतां नार्हसि मार्गमनुगन्तुम् ।

१. यदि वह सन्धि में स्थित न हो, तो उससे इस प्रकार कहे 'काम क्रोधादि षड्वर्ग के वशीभूत अमुक राजा नष्ट हो गये, उन अधम राजाओं के मार्ग का अनुसरण करना, तुम्हारे लिये उचित नहीं है ।

धर्म[1]मर्थं[2] चावेक्षस्व ।

२. धर्म और अर्थ देखो ।

मित्रमुखा[1] ह्यमित्रास्ते ये त्वा साहस[2]मधर्म[3]मर्थातिक्रमं[4] च ग्राहयन्ति ।

३. वे मित्र के रूप में तुम्हारे शत्रु हैं, जो तुम्हें साहस, अधर्म और अर्थातिक्रमण करने के लिये प्रेरित कर रहे हैं ।

पाठभेद :

'शत्रुषड्वर्ग' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'षड्वर्ग' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) स : शक्तिशाली राजा ।

(२) शत्रुषड्वर्ग : काम, क्रोध, लोभ, मान, मद एवं हर्ष । द्र०१:६:१ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) धर्म : द्र० ३:१:३९, ४०, ३:१:३८, ४३, ४४, ४५ । गण: १:२९ ।

(२) अर्थ : द्र० १:७:६ गण० ३:८९ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) मित्रमुख : मित्र का नकाब लगाये या मित्र बने ।

(२) साहस : उग्रता, प्रचण्डता, हिम्मत । द्र० १२:२:४ ।

(३) अधर्म : धर्म विरुद्ध कार्य या पाप । गण० १:१:२७ ।

(४) अर्थातिक्रम : हस्तगतया उत्तम वस्तु का त्याग । गण० ३:१५८ ।

शूरैस्त्यक्तात्मभिः सह योद्धुम्साहसम्[1] जनक्षयमुभयतः कर्तुमधर्मः, दृष्टमर्थं मित्रमदुष्टं च त्यक्तुमर्थातिक्रमः ।

४. स्वशरीर की चिन्ता न करने वाले शूरों के साथ युद्ध करना साहस, दोनों ओर से जनक्षय करना अधर्म तथा प्राप्त धन और सज्जन मित्र का परित्याग अर्थ का अतिक्रमण है ।

मित्रवांश्च स[1] राजा, भूयश्चैतेनार्थेन मित्राण्युद्योजयिष्यति यानि त्वा सर्वतोऽभियास्यन्ति ।

५. प्रचुर मित्र वाला वह राजा पुनः इस धन से मित्रों को संयुक्त करेगा, जो कि सब ओर से तुम्हारे ऊपर अभियान करेंगे ।

न च मध्यमो[1]दासीनयो[2]र्मण्डलस्य वा परित्यक्तः, भवांस्तु परित्यक्तः तत्त्वा समुद्युक्तमुपप्रेक्षन्ते 'भूयः क्षयव्ययाभ्यां युज्यंताम्, मित्राच्च भिद्यताम्, अथैनं परित्यक्तमूलं सुखेनोच्छेत्स्यामः' इति ।

६. अथवा उसे मध्यम अथवा उदासीन मण्डल ने उसका त्याग नहीं किया है और आपका परित्याग किया है, वे युद्धोद्यत तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं—'पुनः क्षय-व्यय से युक्त तथा मित्र से भिन्न हो जाय, तो मूल त्याग करने वाले, उसका सुखपूर्वक उच्छेद करेंगे'

स भवान्नार्हति मित्रमुखानाममित्राणां श्रोतुम्, मित्राण्युद्वेजयितुममित्रांश्च श्रेयसायोक्तुम्, प्राणसंशयमनर्थं चोपगन्तुम्'' इति यच्छेत् ।

७. मित्रमुख शत्रुओं की बात सुनना, मित्रों को उद्विग्न तथा शत्रुओं को श्रेय युक्त करना और स्वयं को प्राण संशय एवं अनर्थ में डालना, आप के लिये उचित नहीं है अर्थात् आप ऐसा न करें' इस प्रकार कहकर धनादि प्रदान करे ।

पाठभेद :

'कतुमधर्मः', का देवनागरी अनुलिपिमें 'कतुं धर्मः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणो :

४. (१) साहस : मनुः ७:४८, ८:६ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) स राजा : दुर्बल राजा ।

पाठभेद :

'यत्वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'ये त्वा' पाठभेद मिलता है । तथा 'च्छेत्स्याय' का 'च्छेत्स्यामहे' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) मध्यम : द्र० ६:२:२१, गण० ३:१०८, २:३५९ ।

(२) उदासीन : अनिच्छुक, निरपेक्ष । द्र० ४:३३:३९, ६:२:२२ । गण० २:३५९, ३:२०८ ।

पाठभेद :

'यच्छेत्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'गच्छेत्' पाठभेद मिलता है ।

तथापि प्रतिष्ठमानस्य प्रकृतिकोपमस्य कारयेद् यथासंघ[1]वृत्ते व्याख्यातं योग[2]वामने च ।

८. इस पर भी अभियानोद्यत होने पर इसके प्रकृति को संघ वृत्त एवं योग वामन की व्याप्ख्यानुसार कुपित करे ।

तीक्ष्ण[1]रस[2]दप्रयोगं च ।

९. तीक्ष्ण और रसद का प्रयोग करे ।

यदुक्तमात्म[1]रक्षितके रक्ष्यं तत्र तीक्ष्यान् रसदांश्च प्रयुञ्जीत ।

१०. आत्मरक्षितोक्त विधि के अनुसार वहाँ तीक्ष्णों एवं रसदों का प्रयोग करे ।

बन्ध[1]कीपोषकाः परमरूपयौवनाभिः स्त्रीभिः सेनामुख्यानुन्मादयेयुः ।

११. वन्धकी पोषक जन, परमरूप यौवन सम्पन्न स्त्रियों द्वारा सेना प्रमुखों को उन्मादित करें ।

बहूनामेकस्यां द्वयोर्वा मुख्ययोः कामे जाते तीक्ष्णाः कलहानुत्पादयेयुः ।

१२. एक स्त्री में अनेक अथवा दो सेना प्रमुखों के आसक्त होने पर, तीक्ष्ण कलह उत्पन्न कराये ।

पादटिप्पणी :

८. (१) संघवृत्त : द्र० अधिकरण ११ अध्याय १; १२:१:२९ ।

(२) योगवामन : किसी कपटी द्वारा शत्रु को बाध्य करना । द्र० १२:४:२९, १२:२:८ । गण० ३:१५९, १७२, १८५ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) तीक्ष्ण : बधिक उग्र स्वभाव वाला । द्र० १:१४:५, ९:६:५३, ९:७:४९, १२:५:७, गण० १:५६ ।

(२) रसद : विष या जहर देने वाला । द्र० १:१३:१, १:१२:३ । गण० २:५७ ।

पादटिप्पणो :

१०. (१) आत्मरक्षित : द्र० अधिकरण १ अध्याय २१ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) बन्धकीपोषका : वेश्यालय या ब्राथल का रखने या चलाने वाला व्यक्ति । द्र० '१:२:२१, २८, ११:७:३४, गण० ३:१४८ ।

पाठभेद :

'एकस्यां' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'एकस्य' पाठभेद मिलता है ।

कलहे पराजितपक्षं परत्रापगमने[1] यात्रासाहाय्यदाने[2] वा भर्तुर्योजयेयुः[3] ।

१३. कलह हो जाने पर, पराजित पक्ष को विजिगीषु के पक्ष में जाने अथवा उसके अभियान में सहायता प्रदान करने के लिये प्रेरित करें।

कामवशान्वा[1] सिद्धव्यञ्जनाः[2] सांवदनिकीभिरोषधीभिरतिसंधानाय[3] मुख्येषु[4] रसं[5] दापयेयुः ।

१४. अथवा सेना प्रमुखों में कामवशीभूत मुख्यों को सिद्ध वेषधारी गुप्तचर औषधियों के साथ विष प्रदान करा दें।

वैदेहकव्यञ्जनो[1] वा राजमहिष्याः सुभगायाः[2] प्रेष्यामासन्नां[3] कामनिमित्तमर्थेनाभिवृष्य परित्यजेत् ।

१५. अथवा वैदेहक वेषधारी गुप्तचर परम सुन्दरी राजमहिषी की आसन्न अन्तरंग परिचारिका को कामनिमित्त अर्थ प्रदान द्वारा सन्तुष्ट कर, त्याग दे।

पाठभेद :

'परत्रापगमने' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'परत्रावगमने' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) परत्र : दूसरे स्थान।

(२) यात्रा : चढ़ाई, युद्धयात्रा, अभियान।

(३) भर्तु : स्वामी या राजा।

पाठभेद

'कामवशान्वा' का देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कामवशाद्वा' तथा 'सांवदनिकीभिर' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सांवदनीकीभिर' तथा 'अतिसंधानाय' का 'अभिसंधानाय' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१४. (१) कामवश : कामासक्त। गण० १:३७।

(१) सिद्धव्यंजन : सिद्ध बना गुप्तचर या यक्ति।

(३) सांवदनिकी : किसी से प्रेम पाने का इच्छुक। द्र० ५:१:१९, ११:१:४०, १२:२:१६। गण० ३:१४।

(४) मुख्य : प्रमुख लोग।

(५) रस : विष। द्र० ५:१:७, ३१, ११:१:३८, गण० ३:७३, १९८, २२२।

पाठभेद :

'वैदेहकव्यञ्जनो' का तेलगू अनुप्रति लिपिमें 'वैदेहक व्यञ्जना' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) वैदेहक व्यंजन : व्यापारी बना गुप्तचर या व्यक्ति।

(२) सुभगा : सुन्दरी, पति प्रिया। द्र० ८:४:२४, २६, १२:२:१५, १७ : गण० ३:३८।

(३) प्रेष्या : नौकरानी, भृत्या।

तस्यैव परिचारक[१]व्यंजनोपदिष्टः सिद्धव्यंजनः सांवदनिकीमोषधीं दद्यात् वैदेहकशरीरेऽवधात[२]व्या' इति ।

१६. उसी वैदेहक के परिचारक वेषधारी पुरुष द्वारा प्रेरित, सिद्ध व्यञ्जन पुरुष वशीकरण औषधि (परिचारिका को) यह कहकर प्रदान करे 'वैदेहक के शरीर पर डाल देना'

सिद्धे सुभगाया अप्येनं योगमुपदिशेत् 'राजशरीरेऽवधातव्या' इति ।

१७. उस प्रयोग के सिद्ध होने पर सुभगा राजमहिषी को भी इस योग का उपदेश दे 'राजा के शरीर पर (यह औषधि) डाल देना' ।

ततो रसेनातिसंदध्यात् ।

१८. तदनन्तर उसमें विष मिश्रण द्वारा राजा का घात करे ।

कार्तान्तिक[१]व्यंजनो वा महामात्रं 'राजलक्षणसंपन्नं' क्रमा[२]भिनीतं ब्रूयात् ।

१९. अथवा कार्तान्तिक वेषधारी गुप्तचर क्रमशः विश्वस्त महामात्र से कहे 'तुम राज लक्षण सम्पन्न हो' अर्थात् भविष्य में राजा बनोगे ।

भार्यामस्य भि[१]क्षुकी 'राजपत्नी राज[२]प्रसविनी वा भविष्यसि' इति ।

२०. अथवा भिक्षुकी उसकी स्त्री से कहे 'तुम राजपत्नी होगी अथवा भावी राजा उत्पन्न करोगी' ।

पाठभेद :

'नोपदिष्टः सिद्धव्यञ्जनः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नोपदिष्टव्यञ्जनः' तथा 'सांवदनिकीम्' का तंजौरमें 'सांवदनीतिम्' देवनागरी अनुलिपि में 'सांवदनीकोम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) परिचारक ब्यंजन : परिचारक या सेवक बना गुप्तचर या व्यक्ति ।

(२) अवधातव्या : फेंक देना या छिड़कना या रखना ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) कार्तान्तिक व्यंजन : ज्योतिषी बना व्यक्ति या गुप्तचर या भाग्य वक्ता या शरीर का लक्षण देखकर भविष्य बताने वाला ।

(२) क्रमाभिनीत : द्र० ११:१:६ ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) भिक्षुकी : मनु० ३:९४, ६:२१, गण० १:५२ ।

(२) राज प्रसविनी : राजा की माता । द्र० ११:१:४९ ।

भार्याव्यंजना[1] वा महामात्रं ब्रूयात् 'राजा किल[2] मामवरोधयिष्यति[3], तवान्तिकाय पत्रलेख्यमाभरणं चेदं परिव्राजिकया[4]ऽऽहृतम्' इति ।

२१. अथवा भार्या वेषधारिणी गुप्तचर स्त्री महामात्र से कहे 'राजा मुझे अपने अन्तः पुर में ले जायेगा तुम्हारे यहाँ (मेरे लिये) परिव्राजिका द्वारा यह पत्र लेख और आभूषण भेजा है ।

सूद[1]आरालिक[2]व्यंजनो वा रसप्रयोगार्थं राजवचनमर्थं चास्य लोभनीयमभिनयेत्[3] ।

२३. अथवा (महामात्र का) सूद और आरालिक वेषधारो गुप्तचर विष प्रयोग करने के लिये राजा का कथन और उसके द्वारा प्रलोभन द्रव्य दिया जाना प्रकट करे ।

तदस्य वैदेहकव्यंजनः प्रतिसंदध्यात्, कार्यसिद्धिं[1] च ब्रूयात् ।

२३. राजा के उस कथन को वैदेहक वेषधारी गुप्तचर प्रमाणित करे और कार्य सिद्धि (राजा के कथन से सूद-आरालिक को विष देना) कहे ।

एवमेकेन द्वाभ्यां त्रिभिरित्युपायैरेकैकमस्य महामात्रं विक्रमाय[1]अपगमनाय[2] वा योजयेत् । इति ।

२४. इस प्रकर एक, दो एवं तीन उपायों से राजा के एक-एक महामात्र को विक्रमार्थं अथवा अपगमनार्थं तैयार करे ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) भार्याव्यंजना : भार्या बनी स्त्री या गुप्तचरी । गण० २:३५५ ।

(२) किल : निश्चय ही, अवश्य ।

(३) विरोधयिष्यति : रोकना । यहाँ राजप्रासाद में रोकने से तात्पर्य है ।

(४) परिव्राजिका : भिक्षुणी या संन्यासिनी ।

पाठभेद :

'राजवचनमर्थं' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'राजवचनादर्थं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) सूद : पाचक या रसोइया ।

(२) अरालिक : भोजन परोसने वाला । द्र० १:१३:९ । गण० १:५८, २:३५५ ।

(३) अभिनयेत : द्र० ५:२:३५ ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) कार्यसिद्धि : सफलता ।

पाठभेद :

'एकैकमस्य' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'एकैकस्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) विक्रम : युद्ध ।

(२) अपगमन : त्याग कर चला जाना ।

दुर्गेषु चास्य शून्यपालासन्नाः सत्त्रिणः पौरजानपदेषु [1]मैत्रीनिमित्तमावेदयेयुः–‘[2]शून्यपालेनोक्ता योधाश्चाधिकरणस्थाश्च “[3]कृच्छ्रगतो राजा जीवन्नागमिष्यति, न वा; प्रसह्य वित्तमार्जयध्वम्, अमित्रांश्च हत” इति ।

२५. राजा के दुर्गों में शून्यपाल के आसन्न सत्त्री पौर जानपदों में मैत्री के लिये निवेदन करें ‘शून्यपाल ने योधाओं और अधिकरणस्थ अधिकारियों से कहा है “राजा संकट में है जीवित आयेगा अथवा नहीं, बल पूर्वक धन अर्जित करो, शत्रुओं का वध करो” ।

[1]बहुलीभूते तीक्ष्णाः पौरान्निशास्वाहारयेयुः, मुख्यांश्चाभिहन्युः ‘एवं [2]क्रियन्ते ये शून्यपालस्य न शुश्रूषन्ते’ इति ।

२६. इसका प्रचार बाहुल्य हो जाने पर, तीक्ष्ण पुरुष रात्रि में पुरवासियों को लूटे और प्रमुख जनों की हत्या करें और कहे ‘जो शून्यपाल को सेवा नहीं करते उनकी यही दशा की जाती है’

शून्यपालस्थानेषु च [1]सशोणितानि शस्त्रवित्त[2]बन्धनान्युत्सृजेयुः ।

२७. और शून्यपाल के स्थानों पर शोणित युक्त शस्त्र धन एवं बन्धन छोड़ दें ।

ततः सत्त्रिणः ‘शून्यपालो [1]घातयति [2]विलोपयति च’ इत्यावेदयेयुः ।

२८. तदनन्तर सत्त्री कहें ‘शून्यपाल हत्या और लूट-पाट करता है’

एवं जानपदान् [1]समाहर्तृभेदयेयुः ।

२९. इस प्रकार जानपदों को समाहर्ता से भिन्न करें ।

पाठभेद

‘कृच्छ्रगतो’ का तंतौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में ‘कृच्छ्रागतो’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) मैत्रीनिमित्त : मिलन के लिए ।

(२) शून्यपाल : सूनो राजधानी का राजा या रक्षक

(३) कृच्छ्र : कष्ट प्रद या पीड़ाकर, कठिन, कष्ट साध्य, संकट, प्रायश्चित । द्र० ५:३:१, मनु ६:७८, स्कन्द० ६:५३:८३, भाग० ११:८:४८ ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) बहुलीभूत : अफवाह, जनरव । द्र० १२:३:२ ।

(२) एवं क्रियन्ते : इस प्रकार किया गया है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) सशोणित : खून लगा ।

(२) बन्धन : बाँधने की डोरी ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) घातयति : मारना ।

(२) विलोपयति : लूटना । द्र० ३:१२:२, ७:४:२२, १०:३:१६ ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) समाहर्तु : गोप या स्थानिक, आय आदि का माल आयुक्त । द्र० २:६:१, २:३५:१ गण० १:५० ।

समाहर्तृ[1]पुरुषांस्तु ग्राममध्येषु रात्रौ तीक्ष्णा हत्वा ब्रूयुः 'एवंक्रियन्ते ये जनपदमधर्मेण[2] बाधन्ते' इति ।

३०. तीक्ष्ण पुरुष रात्रि में ग्राम के मध्य सामहर्ता के पुरुषों की हत्या करके कहें 'जो जनपद को अधर्म पूर्वक पोडित करते हैं, उनकी यही दशा की जाती है'

समुत्पन्ने दोषे शून्यपालं समाहर्तारं वा प्रकृति[1]कोपेन घातयेयुः ।

३१. इस प्रकार सर्वत्र दोष उत्पन्न हो जाने पर, शून्यपाल अथवा समाहर्ता का प्रकृतिकोप से वध करा दें ।

तत्कुलीनम संरुद्धं[1] वा प्रतिपादयेयुः[2] ।

३२. (शत्रु के) जाति (सम्बन्धी) अथवा अपरुद्ध पुत्रको राज्याधिष्ठित करें ।

अन्तः पुरपुरद्वारं[1] द्रव्यधान्यपरिग्रहान् ।
दहेयुस्तां च हन्युर्वा ब्रूयु[2]रस्यार्तवादिनः ॥

३३. (वे सत्री) अन्तःपुर पुरद्वार, द्रव्य परिग्रह एवं धान्य संग्रह स्थानों को जला दें और उनके पालकों की हत्या कर दे तथा स्वयं को दुःखी प्रदर्शित करते हुए, उक्त कर्म को पुरवासियों का कर्म कहें ।

पाठभेद :

'हत्वा' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रति लिपि में 'गत्वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) समाहर्तु : गोप या स्थानिक, आय आदि का माल आयुक्त । द्र० २:६:१, गण० १:५०

(२) धर्मेण बाधन्ते : धर्म में बाधा पहुँचाने वाला अर्थात् आततांई ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) प्रकृति कोप : जनविद्रोह ।

पाददिप्पणी :

३२. (१)अवरुद्ध : झूठा दावेदार, प्रिटेण्डर ।

द्र० १:१०:११, १:२:५, २७, ३:३:५, २:२७:
८:५:७, ८:५:२५, ४:१२:७ ।

(२) प्रतिवादयेयु : द्र० १:१:३, ३:१:
३:११:२०, ३:१:३७, ३:१८:१३. ७:१५:
३:१२:५०, ९:३:३८, ९:४:८ ।

पाठभेद :

'द्वारंद्रव्य' का तंजोर में 'द्वार द्रव्य' पाठ
मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) पुरद्वार : नगर का फाटक ।

(२) ब्रूयु : उद्घोष ।

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे मन्त्रयुद्धं [सेनामुख्यवधः–प्रथमो भागः च] द्वितीयोऽध्यायः । आदितः सप्तत्रिंशच्छततमः ।

बारहवें अधिकरण में आबलीयस के अन्तर्गत मन्त्र युद्ध (सेना मुख्य वध और प्रथम भाग) सम्बद्ध दूसरा अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ सैतीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे आबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः दूतकर्मणि वाक्ययुद्धं दूतकर्मसमाप्तं मन्त्रयुद्धम् आदितः सप्तत्रिंशच्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इत्याबलीयसे दूतकर्मणि वाक्ययुद्धं मन्त्रयुद्धं द्वितीयोऽध्यायः आदितस्सप्तत्रिंशच्छततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे आबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः दूतकर्माणि वाक्ययुद्धं दूतकर्म समाप्तं मन्त्रंयुद्धं आदितस्सप्तत्रिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे दूतकर्माणि वाक्ययुद्धं मन्त्रयुद्धं द्वितीयोऽध्याय ॥ २ ॥

आदितः सप्तत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३७ ॥

अध्याय ३

[चतुषष्टिशततमं प्रकरणम्—सेनामुख्यवधः (द्वितीयो भागः); पञ्चषष्टिशततमं प्रकरणम्—मण्डलप्रोत्साहनम्]

एक सौ चौसठवां प्रकरण–सेना मुख्य वध (द्वितीय भाग)

एक सौ पैंसठवां प्रकरण–मण्डल प्रोत्साहन

राज्ञो राजवल्लभानां चासन्नाः सत्रिणः पत्त्यश्वरथद्विपमुख्यानां 'राजा क्रुद्धः' इति सुहृद्विश्वासेन मित्रस्थानीयेषु कथयेयुः :

१. राजा और राजप्रिय जनों के समीपवर्ती सत्त्री पदाति, अश्व रथ एवं गज सेना के प्रमुखों के मित्रस्थानों (मित्रों) से मित्रवद् विश्वासभाव से कहें–पदाति आदि के प्रमुखों के प्रति 'राजा क्रुद्ध' हैं।

बहुलीभूते तीक्ष्णाः कृतरात्रिचारप्रतीकारागृहेषु 'स्वामिवचनेनागम्यताम्' इति ब्रूयुः।

२. उक्त प्रवाद फैल जाने पर, तीक्ष्ण रात्रिसञ्चरण का प्रतीकार करके, गृहों में जाकर कहें, 'स्वामी की आज्ञा से (स्वामी के समीप) आइए'।

तान् निर्गच्छत एवाभिहन्युः, 'स्वामिसंदेशः' इति चासन्नान् ब्रूयुः।

३. निकलते हुए उनकी हत्या कर दें और आसन्न जनों (मित्रवेषधारी सत्रियों) से कहें 'ऐसा स्वामी का आदेश था'।

प्रकरण १६४—सूत्र १६-२१।

प्रकरण १६५—सूत्र १६-२१, यह प्रकरण पूर्व प्रकरण १६३ का अविच्छेद है।

पादटिप्पणी

१. (१) राजवल्लभ : राजा का प्रिय।
(२) अश्व : अश्वारोही सेना।
(३) रथ : रथ की सेना।
(४) द्विप : हाथी की सेना।
(५) सुहृद : सुन्दर या स्नेहयुक्त हृदय वाला।
(६) मित्रस्थानी : स्थानीय का अर्थ ८०० विषों का केन्द्र अथवा तहसील भी होता है।

पादटिप्पणी

२. (१) बहुलीभूत : अफवाह या जनरव।
(२) कृत रात्रि चर : रात्रि में घूमना :
(३) वचन : आदेश।

पाठभेद :

'चासन्नान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'चासन्ना' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) स्वामिसंदेश : राजा का आदेश या संवाद या आज्ञा। द्र० ३:३१:५०।

ये चाप्रवासितास्तान्[1] सत्त्रिणो ब्रूयुः 'एतत्तद् यदस्माभिः कथितम्, जीवितुकामेनापक्रान्तव्यम्[2]' इति ।

४. अप्रवासित मनुष्यों से सत्त्री कहें 'यह वही है जो मैंने कहा था, जीवित रहने की इच्छा वाले को अपक्रान्त हो जाना चाहिए' ।

येभ्यश्च राजा याचितो न ददाति तान् सत्त्रिणो ब्रूयुः–'उक्तः शून्यपालो राज्ञा "अयाच्यमर्थमसौ चासौ च मां याचते, मया प्रत्याख्याताः शत्रुसंहिताः[1]; तेषामुद्धरणे[2] प्रयतस्व[3]" इति' ।

५. याचना करने पर राजा जिन्हें न दिया हो उनसे सत्त्री कहें 'राजा ने शून्यपाल से कहा अमुक अमुक व्यक्ति अयाच्य वस्तु मुझसे माँगता है, मैंने उन्हें नहीं दिया, वे शत्रु से मिल गये हैं, उनके उन्मूलन के लिये प्रयत्न करो,

ततः पूर्ववदाचरेत् ।

६. तदनन्तर पूर्ववत् आचरण करे ।

येभ्यश्च राजा याचितो ददाति तान् सत्त्रिणो ब्रूयुः–'उक्तः शून्यपालो राज्ञा 'अयाच्यमर्थमसौ चासौ च मां याचते, तेभ्यो मया सोऽर्थो विश्वासार्थं दत्तः, शत्रुसंहिताः तेषामुद्धरणे प्रयतस्व'' इति ।

७. याचना करने पर, राजा जिन्हें देता है 'अमुक-अमुक व्यक्ति मुझसे अयाच्य वस्तु मांगते हैं, मैंने विश्वासार्थ वह वस्तु उन्हें दिया है 'वे शत्रु से मिल गये हैं, उनके उन्मूलन के लिये प्रयत्न करो' ।

ततः पूर्ववदाचरेत् ।

८. तदनन्तर पूर्ववत् आचरण करे ।

पाठभेद :

'ये चाप्रवा' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'ये च प्रवा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) अप्रवासित : न मारे गये । द्र० १:१४:२, ४:१३:८, ९ ।

(२) अपक्रान्त : चले जाना चाहिए ।

पादटिप्पणी :

५. (१) शत्रुसंहिता : शत्रु से मिलना या साथी होना ।

(२) उद्धरण : विनाश, शत्रु से मिल गये हैं या साथी बन गये हैं ।

(३) प्रयत : प्रयत्न या उद्यम करना ।

ये चैनं याच्यमर्थं न याचन्ते तान् सत्त्रिणो ब्रूयुः 'उक्तः शून्यपालो राज्ञा "याच्यमर्थमसौ चासौ च मा न याचते, किमन्यत् स्वदोषशङ्कितत्वात्, तेषामुद्धरणे प्रयतस्व" इति' ।

९. और जो राजा से याचनीय वस्तु नहीं माँगते हैं उनसे सत्त्री कहें 'राजा ने शून्यपाल से कहा है 'अमुक-अमुक व्यक्ति मुझसे याचनीय वस्तु नहीं माँगते हैं, स्वदोष से शङ्कित होने के अतिरिक्त अन्य क्या कारण हो सकता है ? इनके उन्मूलन के लिये प्रयत्न करो' ।

ततः पूर्ववदाचरेत् ।

१०. तदनन्तर पूर्ववत् आचरण करे ।

एतेन सर्वः कृत्यपक्षो व्याख्यातः ।

११. इस प्रकार समस्त कृत्य पक्ष व्याख्यायित हो गया ।

प्रत्यासन्नो वा राजानं सत्री ग्राहयेत, 'असौ चासौ च ते महामात्रः शत्रुपुरुषैः संभाषते' इति ।

१२. अथवा राजा का समीपवर्ती सत्त्री इससे (राजा से) कहे 'आपका अमुक-अमुक महामात्र शत्रु पुरुषों से बात करता है' ।

प्रतिपन्ने दूष्यानस्य शासनहरान् दर्शयेत् 'एतत्तत्' इति ।

१३. उसके मान लेने पर (सत्त्री) राजा के दूष्य पुरुषों को महामात्र का सन्देशवाहक के रूप में दिखाये और कहे 'यह वही है' जो मैंने कहा था ।

पाठ भेद :

'उक्तः' का तंजोर में 'उदकः' पाभेभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. कृत्य पक्ष : क्रुद्ध, लुब्ध, भीत वर्ग । द्र० १:१४:१, ९:३:३८ गण० ३:१६५, २०९ ।

पाठभेद :

'संभाषते' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'संभाष्यते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) संभाषते : वार्तालाप या बातचीत करना ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) दूष्य : विद्रोही, षडयन्त्रकारी । द्र० १:११:१७, ३:१४:२७, ९:६:८ । गण० ३:१२५, १७० ।

(२) अस्य : दुर्बल राजा ।

(३) शासनहर : संदेश वाहक । द्र० १:१६:४, २:२८:१८ । गण० १:७९ ।

सेनामुख्यप्रकृतिपुरुषान् वा भूम्या हिरण्येन वा लोभयित्वा स्वेषु विक्रमयेदपवाहयेद्वा ।

१४. अथवा सेना प्रमुख, प्रकृतिजन एवं सेवक पुरुषों को भूमि अथवा हिरण्य का लोभ देकर, उनके स्वजनों में कलह करा दे अथवा वहाँ से उन्हें हटा दे ।

योऽस्य पुत्रः समीपे दुर्गे[1] वा प्रतिवसति तं सत्त्रिणोपजापयेत्[2] 'आत्मसंपन्न[3]तरस्त्वं पुत्रः, तथाप्यन्तर्हितः, तत्किमुपेक्षसे विक्रम्य गृहाण, पुरा[4] त्व युवराजो विनाशयति' इति ।

१५. राजा का जो पुत्र समीप अथवा दुर्ग में रहता है, उसे सत्त्री द्वारा इस प्रकार कहकर-भिन्न करे (फोड़े) 'तुम युवराज की अपेक्षा अधिक आत्म सम्पद् युक्त पुत्र हो तथापि नियन्त्रित किये गये हो, तो तुम क्यों उपेक्षा कर रहे हो, पराक्रम करके राज्य भाग प्राप्त करो अन्यथा युवराज तुम्हारा पहले ही नाश करेगा' ।

तत्कुलीन[1]मपरुद्धं वा हिरण्येन प्रतिलोभ्य ब्रूयात् 'अन्तर्बलं[2] प्रत्यन्त[3]स्कन्ध[4]मन्तं[5] वाऽस्य प्रमृद्नीहि[6]' इति ।

१६. अथवा राजवंशीय या अपरुद्ध राजपुत्र को हिरण्य द्वारा प्रतिलुब्ध कर कहे 'अन्तर्वल सीमा बल अथवा अन्तबल (अन्य बल) को नष्ट करो' ।

आटविकानर्थमानाभ्यामुपगृह्य राज्यमस्य घातयेत् ।

१७. आटविकों को धन-मान द्वारा स्वानुकूल कर, शत्रु का राज्य नष्ट कराये ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) दुर्ग : सबल राजा की राजधानी या किला । गण: १:१२७ ।

(२) उपजाप : गुप्त रूप से प्रोत्साहित करना या प्रोत्साहन ।

(३) आत्मसम्पन्न : व्यक्तिगत गुण: । द्र० ६: ६:६ ।

(४) पुरा : अल्पकाल या शीघ्र ।

पाठभेद :

'अन्तं वाऽस्य' का श्रीमूल में 'अन्यं वाऽस्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) तत्कुलीन : द्र० १:१०:३, १:१३: १८, १:२४:३ ।

(२) अन्तर्बल : सेना जो राज्य की रक्षा के लिये भीतर छोड़ दी जाती है ।

(३) प्रत्यन्त : सीमा । गण: ३:१६६ ।

(४) स्कन्ध : शिविर या सेना का एक भाग या डिवीजन । द्र० ७:३२:११ ।

(५) अन्त : सीमावर्ती किला या अन्त का स्थान ।

(६) प्रमृदनी : नाश या नष्ट करना ।

पार्ष्णिग्राहं वाऽस्य ब्रूयात् 'एष खलु[1] राजा मामुच्छिद्य त्वामुच्छेत्स्यति, पार्ष्णिमस्य गृहाण, त्वयि निवृत्तस्याहं[2] पार्ष्णिं ग्रहीष्यामि' इति ।

१८. अथवा उसके (शत्रु के) पार्ष्णिग्राह से कहे 'यह राजा मेरा उच्छेद कर तुम्हें उच्छिन्न करेगा इसलिये तुम उस पर पीछे से आक्रमण करो, तुम्हारे ऊपर आक्रमण करने पर, मैं इस पर पीछे से आक्रमण करूँगा' ।

मित्राणि वाऽस्य ब्रूयात् 'अहं वः सेतुः[1], मयि विभिन्ने सर्वानेष वो राजाप्लावयिष्यति, संभूय वाऽस्य यात्रां विहनाम' इति ।

१९. अथवा इसके मित्रों से कहे 'मैं तुम्हारा सेतु हूँ मेरे भिन्न होने पर यह राजा तुम सब लोगों को नष्ट कर देगा, अथवा हम लोग सामूहिक रूप इसका अभियान नष्ट करें' ।

तत्संहतानामसंहतानां च प्रेषयेत् 'एष खलु राजा मामुत्पाट्य भवत्सु कर्मकरिष्यति, बुध्यध्वम्, अहं वः श्रेयानभ्युपपत्तुम्[1]' इति ।

२० शत्रु से संहत और असंहत राजाओं को यह सन्देश भेजे 'यह राजा मुझे उत्पाटित कर, आप लोगों को उत्पाटित करेगा, उसे जान लो मैं आप लोगों द्वारा रक्षणीय हूँ' ।

मध्यमस्य[1] प्रहिणुयादुदासीनस्य[2] वा पुनः ।
यथा सन्नस्य मोक्षार्थं सर्वस्वेन तदर्पणम् ॥

२१. (दुर्बलविजिगोषु राजा) मध्यम, उदासीन और अपने आसन्न राजा को सबल से अपने मोक्ष (त्राण) के लिये सर्वस्व समर्पण पूर्वक सन्देश भेजे ।

पादटिप्पणी

१८. (१) खलु : निश्चय ।

(२) निवृत्त : लौटा हुआ ।

पाठभेद :

'एष वो राजा प्लावयिष्यति' का देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'एसप्लवो राजा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) सेतु : बांध । शत्रु के आक्रमण का निरोधन । द्र० २:१:२०, २४, २:४:५, ३:८:३ । गण: १:१३६ ।

(२) विहनाम : निष्फल, असफल करना या प्रतिरोध करना ।

पाठभेद :

'नभ्युपपत्तुम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नभ्यनपत्तुम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) अभ्युपयत्तुः सहायता । द्र० १०:२: ३५, १२:१:११ ।

पादटिप्पणी

२१. (१) मध्यम : द्र० १२:२:६: । गण० २: ३५९,

(२) उदासीन : द्र० ४:१३:१७ । गण० २: ५९, ३:१०८ ।

(३) अर्पण : आत्मसमर्पण ।

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे सेनामुख्यवधः मण्डलप्रोत्साहनं च तृतीयोऽध्यायः ।

आदितः अष्ठत्रिंशच्छततमः ।

बारहवें अधिकरण में आबलीयस के अन्तर्गत सेनामुख्य वध और मण्डल प्रोत्साहन सम्बद्ध तीसरा अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ अड़तीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करणमें—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे आवलीयसे द्वादशेऽधिकरणे तृतीयोऽध्यायः सेनामुख्यवधः मण्डप्रोत्साहनं च आदितोऽष्टात्रिशच्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इत्याबलीयसे सेनामुख्यवधः मण्डलप्रोत्साहनं च तृतीयोध्यायः आदितोऽष्टात्रिशच्छततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे आबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे तृतीयोध्यायः सेनामुख्यवधः मण्डल प्रोत्साहनं च आदितोऽष्टत्रिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे सेनामुख्यवधः मण्डल प्रोत्सहनं च तृतीयोऽध्यायः ।। ३ ।। आदितोऽष्टत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ।। १३८ ।।

अध्याय ४

[षट्षष्टिशततमं प्रकरणम्—शस्त्राग्निरसप्रणिधयः सप्तषष्टितमं प्रकरणम्—वीवधासारप्रसारवधः]

एक सौ साठवाँ प्रकरण—शस्त्र, अग्नि एवं रस का गुप्त प्रयोग

एक सो सड़सठवाँ प्रकरण—वीवधासार प्रसार वध

ये चास्य दुर्गेषु वैदेहकव्यञ्जनाः[1], ग्रामेषु गृहपतिकव्यञ्जनाः[2], जनपद[3]संधिषु गोरक्ष[4]कतापस[5]व्यञ्जनाः, ते सामन्ताटविकतत्कुलीनापरुद्धानां पण्या[6]गारपूर्वं प्रेषयेयुः 'अयं देशो हार्यः[7], इति ।

१. शत्रु के दुर्गों में जो वैंदैहक वेषधारी गुप्तचर, ग्रामों में गृहस्थ वेषवाले गुप्तचर एवं जनपद सन्धि स्थानों पर, जो गोरक्षक और तापस वेषवाले गुप्तचर हों, वे (शत्रु के) सामन्तों, आटविन्कों, उसके सम्बन्धियों एवं अपरुद्ध राजपुत्रों को उपहार (भेंट) पूर्वक सन्देश भेजें—

'यह देश (प्रदेश) हरण करने योग्य है ।'

आगतांश्चैषां दुर्गे गूढपुरुषानर्थ[1]माना[2]भ्यामभिसत्कृ[3]त्य प्रकृतिच्छि[4]द्राणि प्रदर्शयेयुः ।

२. उनके आगत गूढ़ पुरुषों का दुर्ग में अर्थ-मान से सत्कार करके शत्रु के प्रकृति सम्बन्धी दुर्बल स्थानों को प्रदर्शित करें ।

तेषु तैः सह प्रहरेयुः ।

३. उनपर उनके साथ प्रहार करें ।

पादटिप्पणी :

१. (१) वैदेहक व्यंजन : व्यापारी बना गुप्तचर ।

(२) गृहपति व्यंजन : गृहस्थ बना गुप्तचर ।

(३) जनपद सन्धि : सीमावर्ती नगर या दुर्ग । द्र० ३:१:१ ।

(४) गोरक्षक : गोरक्षक बना गुप्तचर ।

(५) तापस व्यंजन : तपस्वी बना गुप्तचर ।

(६) पण्यागार : सामान, भेट स्वरूप दिया जाय, मालगोदाम भी अर्थ किया गया है । द्र० ३:३५:१२, ७:१५:२०, ८:४:२३, २४, ९:६:२३, २९ ।

(७) हार्य : हरण करने योग्य ।

पादटिप्पणी :

२. (१) अर्थ : धन । द्र० १:७:६ ।

(२) मानः प्रतिष्ठा, इज्जत । द्र० १:६:१ ।

(३) सत्कृत्य : सत्कार, आदर ।

(४) छिद्र : दुर्बल स्थान । द्र० २:३:६, ७:४:१३, ७:६:२८ ।

स्कन्धावारे[१] वाऽस्य शौण्डिक[२]व्यञ्जनः पुत्रमभि[३]त्यक्तं स्थापयित्वाऽवस्क[४]न्दकाले रसेन प्र[५]वासयित्वा 'नैषे[६]चनिकम्' इति मदनरसयुक्तान् मद्यकुम्भाञ्छतशः प्रयच्छेत् ।

४. अथवा शत्रु के स्कन्धावार में शौण्डिक वेषधारी गुप्तचर किसी वध्य पुरुष को पुत्र रूप में स्थित कर, रात्रि के अन्तकाल में उसे विष से मारकर 'यह नेषेचनिक है' यह कहकर मादक विषयुक्त सैकड़ों मद्यकुम्भ प्रदान करे।

शुद्धं वा मद्यं पाद्यं[१] वा मद्यं दद्यादेकमहः, उत्तरं रससिद्धं प्रयच्छेत् ।

५. अथवा शुद्ध मद्य दे अथवा एक दिन चतुर्थांश विषयुक्त मद्य दे तदनन्तर प्रचुर विषयुक्त मद्य दे।

शुद्धं वा मद्यं दण्डमुख्येभ्यः प्रदाय मदकाले रससिद्धं प्रयच्छेत् ।

६. अथवा सेना प्रमुखों को शुद्ध मद्य प्रदान कर, मद उत्पन्न होने पर, रससिद्ध मद्य दे।

दण्ड[१]मुख्यव्यञ्जनो वा पुत्रमभित्यक्तमिति समानम् ।

७. अथवा सेना प्रमुख वेषधारी गुप्तचर वध्य को पुत्र रूप में रखकर (तदनन्तर विष से मार कर नैषेचिक रूप में पूर्ववत् विषयुक्त मद्य कुम्भ प्रदान करे) पूर्ववत् करे।

पादटिप्पणी :

४. (१) स्कन्धावार : शिविर या सैनिक छावनी।

(२) शौण्डिक व्यंजन : मद्य विक्रेता बना व्यक्ति।

(३) अभित्यक्त : वध की सजा पाया अपराधी।

(४) अवस्कन्द : आकस्मिक या अचानक आक्रमण।

(५) रसेन प्रवासयित्वा : विष से मारकर।

(६) नैषेचनिक : मृत व्यक्ति के श्राद्ध में दिये जाने वाला।

भेदपाठ :

'पाद्यं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'माद्यं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

५. (१) पाद्यं : एक चौथाई।

पादटिप्पणी :

६. (१) दण्डमुख्य व्यंजन : सेना का मुखिया बना गुप्तचर।

पाक्व[१]मांसिकौ[२]दनिकशौण्डि[३]कापूपि[४]कव्यञ्जना वा पण्यविशेषमवघोषयित्वा परस्परसंघर्षेण कालि[५]कं समर्घ[६]तरमिति, वा प[७]रानाहूय रसेन स्वपण्यान्यपचार[८]येयुः ।

८. अथवा पाक्वमांसिक, औदनिक एवं शौण्डिक वेषधारी गुप्तचर अपने पण्य का वैशिष्ट्य प्रसिद्ध कर, परस्पर स्पर्धापूर्वक कालान्तर देय मूल्य से अथवा अल्पमूल्य से शत्रु के पुरुषों को आहूत कर, विषयुक्त स्वपण्य उन्हें प्रदान करें ।

सुराक्षीरदधिसर्पि[१]स्तैलानि वा तद्व्यवहर्तृहस्तेषु गृहीत्वा स्त्रियो बालाश्च रसयुक्तेषु स्वभा[२]जनेषु परिकिरेयुः ।

९. अथवा सुरा, क्षीर, दधि, सर्षिस् एवं तैल इनके विक्रेताओं से लेकर, स्त्रियां और बालक विषयुक्त स्वपात्रों में गिरा लें ।

'अनेना[१]र्घेण, विशि[२]ष्टं वा भूयो दीयताम्', इति तत्रैवावाकिरेयुः ।

१०. 'इस मूल्य से अथवा अधिक दीजिए' इस प्रकार कहकर, उसी के पात्र में डाल दें ।

एतान्येव वैदेहकव्यञ्जनाः, पण्यविक्रयेणाहर्तारो वा ।

११. वैदेहक वेषधारी गुप्तचर अथवा पण्यविक्रय के व्याज से लाने वाले व्यक्ति—

हस्त्यश्वानां वि[१]धाय[२]वसेषुरसमासन्ना दद्युः ।

१२. हाथी-घोड़ों के विधा (हाथी का छन्न) एवं घासों में विष डाल दें ।

'कालिकं समर्घं' का तेलगू अनुप्रतिलि में 'कालिक-समर्घं' तथा 'न्यपचण्र' का 'न्यवचार' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) पाक्वमांसिक : पका मांस बेचने वाला । द्र० २:३६:८, १४, १२:४:८ ।

(२) औदनिक : पका चावल या भात बेचने वाला । द्र० २:१५:६१, २:३६:८, १४ ।

(३) शौण्डिक : मद्य बेचने वाला ।

(४) आपूपिक : पुआ बेचने वाला । द्र० २:१५:६, १२:४:८ ।

(५) कालिकं : निश्चित समय के लिये उधार लेना । द्र० २:१५:७, ११:१:२८ ।

(६) समर्घ : द्र० १२:४:८ ।

(७) पर : शत्रु ।

(८) अपचार : धोखा । द्र० ४:२:२ ।

पाठभेद :

'तद्व्यवहतृहस्तेषु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तद्व्यवहर्तृषु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

९. (१) सर्पिष : घृत ।

(२) भाजन : वर्तन या पात्र ।

पाठभेद :

'तत्रैवावाकिरेयुः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तत्रैवाविकिरेयुः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अनेनार्घेण : मूल्य । द्र० ३:९:३, ३:१२:२६, ७:१२:१४ ।

(२) विशिष्ट : विशेष :

पादटिप्पणी :

१२. (१) विधा : हाथी आदि का चारा । द्र० २:३:२५, २६, २:३१:५, १२ ।

(२) यवस : घास । द्र० २:३१:१, ९:१:३७, १०:२:१८।

कर्मकरव्यञ्जना वा रसाक्तं यवंसमुदकं वा विक्रीणीरन् ।

१३. अथवा कर्मचारी वेषधारी गुप्तचर विषमिश्रित घास अथवा जल का विक्रय करें।

चिरसंसृष्टा[1] वा गोवाणिजका गवामजा[2]वी[3]नां वा यूथान्यवस्कन्दकालेषु-परेषां मोह[4]स्थानेषु प्रमुञ्चेयुः, अश्वखरोस्ट्रमहिषादीनां दुष्टांश्च ।

१४. अथवा चिरकालिक मित्र बने गोव्यापारी वेषवाले गुप्तचर शत्रुओं के कर्तव्य के निश्चयानिश्चय के अवसरों पर, गाय, बकरी एवं भेंड़ के झुण्ड छोड़ दें और अश्व, खर, ऊंट, महिष आदि पशुओं में दुष्ट पशुओं को—

तद्व्यञ्जना वा चुच्छुन्द[1]रीशोणिताक्ताक्षान् ।

१५. अश्वादि के व्यापारी वेषवाले गुप्तचर चुच्छुन्दरी का रुधिर उनकी आँखों में लगाकर छोड़ दें।

लुब्ध[1]कव्यञ्जना वा व्या[2]लमृगान् पञ्जरेभ्यः प्रमुञ्चेयुः, सर्पग्राहा वा सर्पानुग्रविषान्, हस्तिजीविनो वा हस्तिनः ।

१६. अथवा लुब्धक वेषधारी गुप्तचर व्याल मृगों (हिंसक जंगली जीवों) को पिजड़ों से छोड़ दें, अथवा सर्पग्राह उग्र विष वाले सर्पों को अथवा हस्तिजीवी हस्तियों को छोड़ दें।

अग्निजीविनो वाऽग्निमवसृजेयुः ।

१७. अथवा अग्निजीवी अग्नि छोड़ दें।

गूढपुरुषा वा वि[1]मुखान् पत्त्यश्वरथद्विपमुख्यानभिहन्युः, आदी[2]पयेयुर्वा-मुख्यावासान् ।

१८. अथवा गूढ़ पुरुष विमुख पत्ति, अश्व, रथ एवं द्विपों के प्रमुखों को मार डाले अथवा प्रमुखों के आवासों को जला दें।

पादटिप्पणी :

१४. (१) संसृष्ट : सम्बन्ध ।

(२) अज : बकरा ।

(३) अवी : भेड़ा ।

(४) मोहस्थान : अस्त-व्यस्त, हड़बड़ी ।

पाठभेद :

'चुच्छुन्दरी' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चुचुन्दरी' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१५. (१) चुच्छुन्दर : छछुन्दर । द्र० १४:१:२९ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) लुब्धक : बहेलिया । द्र० १:१४:४ ।

(२) व्याल : दुष्ट हाथी या जंगली जानवर । द्र० २:१५:४२, २:३१:४, २:३२:१, १:२१:२२, २:१:३७ ।

पाठभेद :

'मुख्यावासान्' का देवनागरी अनुलिपि में 'मुख्यावासां' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) विमुख : विरत, पलायित, या हताग्र ।

(२) आदीप : आग लगाना ।

दूष्यामित्राटविकव्यञ्जनाः प्रणिहिताः[1] पृष्ठाभिघातमवस्कन्दप्रतिगृहं[2] वा कुर्युः।

१९. अथवा दूष्य अमित्र एवं आटविक वेषवाले नियुक्त गुप्तचर शत्रु सेनापर पीछे से आक्रमण करे या सुप्तकाल में उनका वध करे या सामना करें।

वनगूढा[1] वा प्रत्यन्त[2]स्कन्ध[3]मुपनिष्क्रष्य[4]भिहन्युः, एकायने[5] वीवधा[6]सार[7]प्रसारान्[8] वा।

१०. अथवा वनगूढ (वन में छिपे) गुप्तचर सेना को प्रत्यन्तस्कन्ध (देश सीमा) के समीप लाकर नष्ट करें अथवा एकायन पर (संकुचित मार्ग पर) वीवध, आसार एवं प्रसार का विनाश करे।

ससंकेतं वा रात्रियुद्धे भूरितूर्यमाहत्य ब्रूयुः 'अनुप्रविष्टाः स्मो, लब्धं राज्यम्', इति।

२१. अथवा रात्रियुद्ध में संकेतपूर्वक प्रचुर तूर्यनाद करके कहें 'हम अन्दर प्रविष्ट हो गये हैं, राज्य प्राप्त कर लिये'।

राजावासमनुप्रविष्टा वा संकुलेषु[1] राजानं हन्युः।

२२. अथवा राजा के निवास में प्रवेश कर भीड़-भाड़ में राजा को मार डालें।

पादटिप्पणी :

१९. (१) प्रणिहिता : रखा हुआ, स्थापित। द्र० ९:३:२।

(२) प्रतिग्रह : स्वीकार या ग्रहण करना या समर्थन देना। द्र० ३:१४:३८, ३:१:३८, ३:१७:३, ५, १२, १२:४:१९, १३:३:४६।

पादटिप्पणी :

२०. (१) वनगूढा : वन में छिपकर रहने वाले या गुप्तचर। द्र० १:११:१, १:१६:२४, ३३।

(२) प्रत्यन्त : सीमा के सैनिक। द्र० १२:३:१६।

(३) स्कन्ध : सेना का एक डिवीजन।

(४) उपनिष्कृष्य : बाहर निकालना या बाहर आने के लिये प्रोत्साहित करना।

(५) एकायन : एक ही व्यक्ति के जाने योग्य मार्ग। द्र० १०:२:९, १८, १२:४:२४, १३:२:४०।

(६) बीवध : पूर्ति या धान्य आदि की प्राप्ति। द्र० ७:६:८, ७:२:२०, ८:५:१४, ९:६:४४, १०:२:६।

(७) आसार : मित्र सेना की प्राप्ति को आसार कहते हैं। द्र० १:१६:२९, ६:२:१८, ८:१:५४, ९:६:४४, ८:२:३८।

(८) प्रसारण : अग्रगामीदस्ता, चारा आदि प्राप्ति के लिये हमला या आक्रमण करना। द्र० ९:२:३८, १०:२:५ १०:२:७।

पाठभेद :

'लब्धं राज्यम्' का तंजीर में 'लुब्धं राज्यम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२२. (१) संकुल : कोलाहल-संक्षोभ।

सर्वतो वा प्रयातमेन म्लेच्छाटविकदण्डचारिणः सत्त्रो[1]पाश्रयाः स्तम्भ[2]वाटापाश्रया वा हन्युः ।

२३. अथवा जिस किसी ओर प्रयात राजा को सत्त्राश्रयी एवं स्तम्भवाटाश्रयी म्लेच्छ, धारविक एवं दण्डचारी (गुप्तचर) मार डालें ।

लुब्धकव्यंजना वाऽवस्कन्दसं[1]कुलेषु गूढ[2]युद्धहेतुभिरभिहन्युः ।

२४. अथवा लुब्धक वेषधारी गुप्तचर अवस्कन्द कालिक तुमुल (कोलाहल) के अवसर पर, गूढयुद्ध की प्रक्रिया से (शत्रु को) मार डालें ।

एकायने वा शैलस्तम्भ[1]वाटखञ्ज[2]नान्तरुदके वा स्वभूमिवलेनाभिहन्युः ।

२५. अथवा एकायन मार्ग में शैल वहुल, स्तम्भवाट वहुल खञ्जनोदक या अन्तरुदक प्रदेश में स्वानुकूल भूमिबल से शत्रुबल का नाश करें ।

नदीसरस्तटाकसेतुबन्धभेदवेगेन वा प्लावयेयुः ।

२६. नदी, सर एवं तटाक का सेतुबन्ध भङ्ग कर, जल के वेग में शत्रुबल प्लावित करें ।

धान्व[1]नवनदुर्गनिम्न[2]दुर्गस्थं वा योगा[3]ग्निधूमाभ्या नाशयेयुः ।

२७. धान्वन दुर्ग, वन दुर्ग अथवा निम्न दुर्ग में स्थित शत्रु को योगाग्नि एवं योगधूम से नष्ट करें ।

पाठभेद :

'पाश्रयाःस्तम्भवाटा' का तेलगू अनुप्रलिलिपि में 'पाश्रयस्तम्भवाटा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) सत्र : छिपने का स्थान या आश्रय स्थान । द्र० ७:१७:५६, १०:२:१५, १८, २४, ८:४:४१ ।

(२) स्तम्भबाट : पेड़ के तने या लट्ठे का घेरा । द्र० ३१:३:४३, ५०, ७:५:४६, ३:३३:२ ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) अवस्कन्द संकुल : कोलाहल के समय आकस्मिक या अचानक हमला ।

(२) गूढ युद्ध : गुप्त या छिपा युद्ध ।

पाठभेद :

'स्तम्भवाट' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्तम्भपट' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'स्तम्भ वना' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) स्तम्भवाट : लकड़ी के तने के लट्ठे का घेरा । द्र० १२।४:२३ ।

(२) खञ्जन : दलदल या अनूप या कच्छ या जलीय या पंकिल भूमि । द्र० १०:४:८ ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) सेतुबन्ध : सिंचाई के लिये बनाया गया वन्धा या बांध । द्र० २:३:२२, ३९, ३:९:३२ ।

पाठभेद

'धान्वनवनदुर्ग निम्न' का श्रमूल में 'धान्वन वननिम्न' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) धान्वन : बालू या रेगिस्तानी स्थान

(२) निम्नदुर्ग : जल दुर्ग ।

(३) योगाग्नि : विषैली आग ।

धान्वनगतं धूमेन, निधानेगतं रसेन, तोयवगाढं दुष्टग्रा[2]हैरुदकच[3]रणैर्वातीक्ष्णाः साधयेयुः, आदीप्तावासान्निष्पतन्तं वा ।

२८. तीक्ष्ण गुप्तचर धान्वन स्थित शत्रु को धूम से, निधानस्थ को रस (विष) से, जल में अवगाढ की दुष्टग्राहों या जल तरण साधनों से सिद्ध करें अथवा आदीप्त आवास से निर्गत होते हुए, पकड़ लें ।

योगेवामनयोगाभ्यां योगेनान्यतमेन वा ।
अमित्रमतिसंदध्यात्सक्त-मुक्ता[2]सु भूमिषु ॥

२९. उक्त भूमियों में स्थित शत्रु को योग वामन और योग द्वारा अथवा अन्य किसी एक योग द्वारा शत्रु को वश में करे ।

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे शस्त्राग्निरसप्रणिधयः वीवधासारप्रसारवधश्च चतुर्थोऽध्यायः । आदित एकोनचत्वारिंशच्छततमः ।

बारहवें अधिकरण में आबलीयस के अन्तर्गत शस्त्र-अग्नि-रस प्रणिधि एवं वीवधसार-प्रसारवध सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त ।

आदि से एक सौ उन्तालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) निधान : रहने का घर, निवास स्थान ।

(२) ग्राह : घड़ियाल या मगर ।

(३) उदक चरणै : पानी पर तैरना या जाना । द्र० १३:३:५ ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) योगवामन : कपट से शत्रु को बलात बाहर निकालना । द्र० १२:२:८, १२:४:२९ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे द्वादशेऽधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः शस्त्राग्निरसप्रणिधयः, वीवधासारप्रसारवधश्च, आदित एकोनचत्वारिंशच्छततम ॥

मैसूर संस्करण में—

इत्याबलीयसे शस्त्राग्निरस प्रणिधयः वीवधासार प्रसारबधश्च चतुर्थोऽध्यायः आदित एकोनचत्वारिंशच्छततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे आबलीयसे द्वादशाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः शस्त्राग्निरसप्रणिधयः वीवधासार प्रसारवधश्च, आदित एकोनचत्वारिंशच्छतः ।

उदयवीर शास्त्रीसंस्करणमें—

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे शस्त्राग्निरस प्रणिधयः ॥ ४ ॥ आदित एकोनचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३९ ॥

अध्याय ५

[अष्टषष्टिशततमं प्रकरणम्—योगातिसंधानम्; एकोनसप्ततिशततमं प्रकरणम्—दण्डातिसंधानम्; सप्ततिशततमं प्रकरणम्—एकविजयः]

एक सौ अड़सठवाँ प्रकरण—योगातिसंधान
एक सौ उनहत्तरवाँ प्रकरण—दण्डातिसंधान
एक सौ सत्तरवाँ प्रकरण—एक विजय

दैवतेज्यायां[1] यात्रायाम[2]मित्रस्य बहूनि पूजागमस्थानानि भक्तितः ।

१. देव पूजा और देवयात्रोत्सव के अवसर पर-भक्ति के अनुसार शत्रु-वेद पूजा हेतु आने-जाने के अनेक प्रसंग होते हैं ।

तत्रास्य योगमुपजंयेत्[2] ।

२. उसमें शत्रु को लक्ष्य कर योग (उपाय) का प्रयोग करे ।

देवतागृहप्रविष्टस्योपरियन्त्र[1]मोक्षणेन[2] गूढ[3]भित्तिं शिलां वा पातयेत् ।

३. देवगृह में प्रविष्ट होने पर शत्रु के ऊपर यन्त्रमोक्षता करके, गूढ़भित्ति अथवा शिला को गिरवा दे ।

पाठभेद :

'पूजागम्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूज्यामगम्' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'पूज्या-गम' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) योग : गुप्त छल, कपट, उपाय: द्र० १: १६: ३-४; द्र० ७:६:४:५:६:४८, गण० ७२ ।

(२) यात्रा : मेला, अभियान । द्र० १:१६:२९; ९:१:३४ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) योग : कपट, उपाय । द्र० १:१६; ३४, ५:१:५४:५, ६:४८: ७, ९:१:१४, १२:४:२९, १२:५:१५ ।

(२) उपवंजयेत् : रखना, अभ्यास करना, प्रसार करना, कूटनीति का प्रयोग भी अर्थ किया गया है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) यन्त्र : द्र० १:२०:२, २:३:३४, २: ४:२, २:१५:६३, २:१८:३, १०:८:४८ । गण० १: २५० ।

(२) मोक्ष: खोलना, गिराना ।

(३) गूढ़ : छिपी दिवाल ।

शिलाशस्त्रवर्षमुत्तमागारात्[1], कपाटमवपातितं वा भित्तिप्रणिहित[2]मेकदेशबद्धं वा परिघं[3] मोक्षयेत् ।

४. उत्तमागार से शिला एवं शस्त्रवृष्टि कराये, उखड़े कपाट को अथवा भित्ति में रखे गये तथा एक ओर बँधे परिघ (अर्गला) को गिरवा दे ।

देवतादेह[1]ध्वज[2]प्रहरणानि वाऽस्योपरिष्टात्पातयेत् ।

५. अथवा देवता के देह के ध्वज एवं प्रहरण, शत्रु पर गिरा दे ।

स्थानासनगमनभूमिषु वाऽस्यगोमय[1]प्रदेहेन गन्धोदक[2]प्रसेकेन[3] वा रसमतिचारयेत्, पुष्प[4]चूर्णोपहारेण वा ।

६. शत्रु के स्थान, आसन अथवा गमन भूमियों पर गोमयप्रलेप अथवा गन्धोदक प्रसेक में अथवा पुष्पचूर्णोपहार में विष प्रयोग कराये ।

गन्धप्रतिच्छन्नं वाऽस्य तीक्ष्णं[1] धूम[2]मतिनयेत् ।

७. अथवा इसे उत्तमगन्ध से प्रच्छन्न तीक्ष्णधूम, अधिक मात्रा में सेवन कराये ।

पाठभेद :

'कपाटम्' का 'कवाटम्' तथा 'एकदेशबद्धं' का 'एकदेशबन्धं' पाठभेद तेलगू अनुप्रतिलिपि में मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) उत्तमागार : मकान का ऊपरी कक्ष या कोठा ।

(२) प्रणिहित : रखा हुआ । द्र० ९, ३:३ ।

(३) परिघं : अर्गला, छड़, बर्छी, लौह गदा । गण० १:१३७, ३:१७३ ।

पाठभेद :

'देह ध्वजप्रहर' का तंजौर में 'देहध्वप्रहर' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'देहस्थप्रहर' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) देह : मूर्ति, प्रतिमा ।

(२) ध्वज : झण्डा, पताका, वैजन्ती, वह बांस या डण्डा जिसमें ध्वज फहराता है । द्र० १:१७:१८ २:२१:१ । गण० ३:१२५ ।

पाठभेद :

'गन्धोदक' का तंजौर में 'शन्धोदक' तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'शुद्धोदक', देवनागरी अनुलिपि 'पुष्पचूर्णोय' का पुष्पगूर्णोप' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) गोमय : गोबरः ।

(२) गन्धोदक : सुगन्धित जल ।

(३) प्रसेक : सींचना, छिड़कना ।

(४) पूष्प चूर्ण : प्रसाद रूप शत्रु को भें करना ।

पादटिप्पणी :

७. (१) गन्धप्रतिच्छन्नं : गन्ध में छिपा हुआ ।

(२) तीक्ष्णं धूम : जहरीला या मारक धूआं द्र० १४:१:४, ९-१४, गण० ३:१४२ ।

शूलकूप[1]मवपातनं वा शयनासनस्याधस्ताद्यन्त्र[2]बद्धतलमेनं कीलमोक्षणेन प्रवेशयेत् ।

८. अथवा शयन-आसन के नीचे यन्त्रबद्धतल वाले इसे (शत्रु को) कीलयुक्त कर शूलकूपगर्त पातित करे ।

प्रत्यासन्ने[1] वाऽमित्रे जनपदाज्जनमवरोध[2]क्षममतिनयेत् ।

९. अथवा शत्रु के समोप होने पर, उसके जनपद से अवरोध समर्थजन को (अवरुद्ध करने के लिये) ले आये ।

दुर्गाच्चानवरोध[1]क्षममपनयेत्, प्रत्यादेय[2]मरि[3]विषये वा प्रेषयेत् ।

१०. अथवा अवरोध करने में असमर्थजन को दुर्ग से निकाल दे, प्रत्यादेय जन को शत्रुदेश में प्रेषित करे ।

जनपदं चैकस्थं शैलवननदीदुर्गेष्वटवीव्यवहितेषु[1] वा पुत्रभ्रातृपरिगृहीतं स्थापयेत् ।

११. शत्रु के एक छत्र जनपद के शैलदुर्ग, वनदुर्ग, नदी दुर्ग अथवा अटवी व्यवहित प्रदेशों पर, पुत्र और भ्रातृ का अधिकार करा दें ।

उपरोध[1]हेतवो[2] दण्डोपनत[3]वृत्ते व्याख्याता ।

१२. उपरोध हेतुओं की व्याख्या दण्डोपनतवृत्त में की गयी है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) शूलकूप : नुकीला लोहे का काँटा, त्रिशूल, शूली, शलाका । द्र० २:३५:१६; ४:१:६३ ।

(२) यन्त्र : कमरे के फर्श के नीचे फाँसी के तख्ते की तरह लगाना या बांधना । द्र० २:१५:६२, २:१८:१, १०:६:४८, १:२०:२३४, २:३:३४, २:५:२ ।

(३) कील : खटका, कँटिया । द्र० १४:३:७०।

पाठभेद :

'वाऽमित्रे' का तंजौर में 'वाटमित्रे' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वाटव्यमित्रे' तथा 'जनपदाज्जनभव' का 'जनपदाच्चानव' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणो :

९. (१) प्रत्यासन्न : समीप । द्र० ७:१०:१७ ।

(२) अवरोध : रोकने में समर्थ ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अवरोध : द्र० १२:९:२ ।

(२) प्रत्यादेय : लौटाना या वापस करना । द्र० १:३:५३ ।

(३) विषय : जिला या भूमि का क्षेत्र । द्र० ४:३:१९ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) व्यवहित : अलग या पृथक् ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) उपरोध : रोक, बाधा ।

(२) हेतवः : कारण । द्र० ७:१५:१२ ।

(३) दण्डोपनत : जो अपनी सेना का समर्पण कर देता है । द्र० ५:१:५३, ७:२:९, ७:३:६, ७:१४:३०, ७:१:२९ । गण० २:३६४ ।

तृणकाष्ठमायोजन[1]नाद्दाहयेत् ।

१३. शत्रुशिविर के एक योजन तक तृण-काष्ठ जलवा दे ।

उदकानि च दूषयेत्, अवस्रा[1]वयेच्च ।

१४. जल को दूषित और स्रवित करा दे ।

कूप[1]कूटा[2]वपातकण्टकि[3]नीश्च बहिरुब्ज[4]येत् ।

१५. बाहर (शत्रु मार्ग में) कूप, कूटावपात एवं कण्टकिनी का निर्माण कराये ।

सुरुङ्गा[1]ममित्रस्थाने बहुमुखीं कृत्वा निचय[2]मुख्यानभिहारयेत्, अमित्रं वा ।

१६. शत्रु स्थान पर, बहुमुखी सुरंग निर्मित करा कर, उसमें प्रमुख व्यक्ति या शत्रु को प्रविष्ट करा दे ।

परप्रयुक्तायां वा सुरुङ्गायां परिखा[1]मुद[2]कान्तिकीं खानयेत्, कूपशा[3]लामनुशा[4]लं वा ।

१७. अथवा शत्रु द्वारा सुरंग का निर्माण कराये जाने की स्थिति में उदकान्तिकी परिख अथवा प्राकार के अनुसार कूपशाला का निर्माण कराये ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) योजन : आठ मील, चार कोस । द्र० ९:१:१८, १०:२:१२ ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) अवस्राव : जल बाहर निकाल देना ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) कूप : कूआँ या गड्ढा । द्र० ३:३:१५, १०:१०:१२ । गण० ३:१०५ ।

(२) कूटावपात : छिपा गड्ढा । द्र० ४:१०:३, ४:१३:१३ ।

(३) कण्टकोनि : कांटेदार, झाड़ी ।

(४) उब्ज : रखना । द्र० १२:५:२ ।

पाठभेद :

'नियममुख्यान' का श्री मूल में 'विचय-मुख्यान' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) सुरुंगा : सुरंग । द्र० १:२०:२, ५:३:४२, ७:१७:३३ । गण० ३:२० ।

२. निचय : संग्रह स्टोर । द्र० ७:१५:२० । गण० २:३३७, ३:४ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) परिखा : खाई, किले के चारों तरफ खुदी हुई खाई ।

(२) उदकान्तिकी : पानी तक पहुँचना ।

(३) कूपशाला : कूप का ओसारा, बरामदा, उसके समीप बना विश्रामस्थल ।

(४) अनुशाला : संलग्न घेरा । द्र० २:४:१६ ।

तोयकुम्भान् कांस्यभाण्डानि वा शङ्कास्थानेषु स्थापयेत् खाताभिज्ञानार्थम् ।

१८. खाताभिज्ञान के लिये तौय कुम्भ अथवा कांस्यभाण्ड शंका स्थानों पर, स्थापित कराये ।

ज्ञाते सुरुङ्गापथे प्रतिसुरुङ्गां कारयेत् ।

१९. सुरंगपथ ज्ञात होने पर, प्रतिसुरंग निर्मित कराये ।

मध्ये भित्त्वा धूममुदकं वा प्रयच्छेत् ।

२०. सुरंग पथ के मध्य भेद करके (सविष) धूम अथवा (सविष) जल डलवाये ।

प्रतिविहितदुर्गो वामूले[1] दायादं कृत्वा प्रतिलोमामस्य दिशं गच्छेत्, यतो वामित्रैर्बन्धुभिराटवीकैर्वा संसृज्येत परस्यामित्रैर्दूष्यैर्वा महद्भिः, यतो वा गतोऽस्य मित्रैर्वियोगं कुर्यात् पार्ष्णि वा गृह्णीयात् राज्यं वाऽस्य हारयेत् वीवधा[2]सार[3]प्रसारान्[4] वा वारयेत्, यतो वा शक्नुयादाक्षिक[5]वदपक्षेपेणास्य प्रहर्तुम्, यतो वा स्वं राज्यं त्रायेत, मूलस्योपचयं वा कुर्यात् ।

२१. अथवा दुर्ग की रक्षा व्यवस्था करके, दुर्बल नृपति मूल (दुर्ग) में दायाद को रखकर शत्रु की प्रतिकूल दिशा में चला जाय, अथवा जहाँ जाकर, अपने मित्रों बन्धुओं और आटविकों से मिल सके अथवा शत्रु के शत्रुओं और बड़े दूष्यों से मिलकर, उसका अनिष्ट कर सके, अथवा जहाँ पहुँचकर, शत्रु के मित्रों को उससे भिन्न करे अथवा उसका पार्ष्णि ग्रहण करे अथवा शत्रु का राज्य हरण करा सके, अथवा उसका वीवधासार-प्रसार निर्धारित कर सके अथवा जहाँ जाकर, अपक्षेप द्वारा आक्षिक तुल्य शत्रु पर, प्रहार कर सके, जहाँ से अपने राज्य की रक्षा कर सके और मूल का उपचय (वृद्धि) करने में समर्थ हो सके, वहाँ चला जायं ।

पाठभेद :

'तोयकुम्भान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अतोयकुम्भान्' तथा 'खाताभि' का 'वाताभि' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'प्रतिलोमामस्य' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतिलोमस्य' तथा 'आक्षिक वदपक्षेपेण' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आक्षिक पादपक्षेपेण' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) मूल : अधोभाग का तल । द्र० ७: २:४, ७:३:३३, ७:८:५ ।

(२) वीवध : पूर्ति । द्र० ९:६:४, १०:२:६ ।

(३) सार : मूल्यवान वस्तु । द्र० १०:५:४३, ४६, ४९ ।

(४) प्रसार : चारा तथा घास आदि के लिये हमला करना । द्र० १०:२:५ ।

(५) अक्षिकवद : कपटी जुआड़ी की तरह पासा फेंकना ।

यतः संधिमभिप्रेतं लभेत ततो वा गच्छेत् ।

२२. जिस ओर से अभीष्ट सन्धि कर सके, उधर चला जाय ।

सहप्रस्थायिनो वाऽस्य प्रेषयेयुः 'अयं ते शत्रुरस्माकं हस्तगतः, पण्यं[1] विप्रकारं[2] वाऽपदिस्य हिरण्यं[3]मन्तः सारबलं[4] च प्रेषय यस्यैनमर्पयेम बद्धं[5] प्रवासितम्[6] वा' इति ।

२३. अथवा उसके सहगामी गूढपुरुष शत्रु को सन्देह प्रेषित करें, 'तुम्हारा वह शत्रु हमारे हाथ में है, पण्य अथवा अपकार के व्याज से हिरण्य और अन्तःसार बल भेजो, जिससे (तुम्हारे उस) शत्रु को बन्दी कर अथवा मार कर तुम्हें अर्पित करें ।'

प्रतिपन्ने हिरण्यं सारबलं चाददीत ।

२४. शत्रु के उक्त कार्य करने पर हिरण्य और सारबल स्वयं ग्रहण कर ले ।

अन्तपालो[1] वा दुर्गसंप्रदानेन[2] बलैकदेश[3]मतिनीय विश्वस्तं घातयेत् ।

२५. अथवा अन्तपाल दुर्ग प्रदान करके, सेना का कुछ भाग अन्यत्र (दुर्गम स्थान पर) ले जाकर, विश्वास उत्पन्न कर, उन्हें मार डाले ।

जनपदमेकस्थं वा घातयितुममित्रानीकमावाहयेत्[1] ।

२६. अथवा सामूहिक रूप से एकत्रित जनपद को निग्रहीत करने के लिये शत्रु की सेना को आहूत करे ।

पाठभेद :

'ततो वा गच्छेत्' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में कुतो वा गच्छेत्' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'प्रेषयेयुः' का देवनागरी अनुलिपि में 'प्रेषयस्व' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) पण्यं : भोग्य या विक्रय वस्तु । द्र० ७:१:१७:४२, ७:६:३७; ८:२:८, ८:४.३४, ९:१:२७ ।

(२) विप्रकार : अपकार या अनाचर या अपमान । द्र० ३:३:१६, ४३:३:४१ ।

(३) हिरण्य : मुद्रा या नगद ।

(४) सारबल : शक्तिशाली सेना ।

(५) बध : बांधना, पकड़ना ।

(६) प्रवासितम् : मार डालना ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) अंतपाल : सीमावर्ती दुर्ग का नायक या अधिकारी ।

(२) सम्प्रदान : हस्तान्तरण या समर्पण करना ।

(३) एक देश : एक स्थान, एक सीमा । द्र० ५:४:१७ ।

पादटिप्पणी :

२६ (१) आवाहयेत् : आमंत्रित करना, बुलाना ।

तदवरुद्ध[1]देशमतिनीय विश्वस्तं घातयेत् ।

२७. अवरुद्ध प्रदेश में ले जाकर, विश्वास उत्पन्न कर, उसे मार डाले ।

मित्रव्यं[1]ञ्जनो वा बाह्यं[2]स्य प्रेषयेत् 'क्षीणमस्मिन् दुर्गे धान्यं स्नेहाः क्षारो[3] लवणं वा, तदमुष्मिन् देशे काले च प्रवेक्ष्यति, तदुपगृह्णाण इति ।

२८. मित्रवेष धारी गुप्तचर शत्रु को सन्देश प्रेषित करे 'उस दुर्ग में धान्य, स्नेह (तैल), क्षार एवं लवण समाप्त हो गया है, अमुक समय और स्थान पर वह सब आयेगा उसे ग्रहण कर लो' ।

ततो रसं[1]विद्धं धान्यं स्नेहं क्षारं लवणं वा दूष्यामित्राटविकाः प्रवेशयेयुः, अन्ये वाऽभित्यं[2]क्ताः ।

२९. दूष्य, एवं आटविक जन अथवा अन्य वध्यजन तदनन्तर, विषयुक्त धान्य, स्नेह, क्षार एवं लवण ले जायं ।

तेन सर्वभाण्डवीवधग्रहणं व्याख्यातम् ।

३०. उक्त विधि से सब प्रकार का भाण्ड, वीवध ग्रहण व्याख्यायित हो गया ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) अवरुद्ध देश : घिरा हुआ क्षेत्र । द्र० २:३:५, १२:५:२७, गण० १:९०, ३:१७: २१० ।

पाठभेद :

'स्नेहाः क्षारो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्नेहाक्षारो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) मित्र व्यंजन : मित्र बना गुप्तचर या व्यक्ति ।

(२) बाह्य : घेरा डालने वाले राजा से तात्पर्य है ।

(३) क्षार : चीनी, शर्करा, खांड़, ईख द्वारा उत्पन्न पदार्थ । २:१५:१४, २:२९:४३, २:३०:१८, २:३१:१३ । गण० ३:२२२ ।

पाठभेद :

'रसविद्धं धान्यं स्नेहं' का तंजौर में 'रसविद्धान्यं स्नेहं तथा देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'रसविद्धान्यस्नेह' तथा 'वाऽभित्यक्ताः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वाऽभिव्यक्ताः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) संविद्ध : विष मिला हुआ । द्र० ७: २७:४९, ३:२७६ ।

(२) अभित्यक्त : अपराधी जिसे बध दण्ड दिया गया हो । द्र० २:५:४, ५:२:४४, ५५, ६५, १२:४, ७ ।

संधिं वा कृत्वाहिरण्यैकदेशमस्मै[1] दद्यात्, विलम्बमानः शेषम् ।

३१. अथवा सन्धि करके, कुछ भाग हिरण्य दे और शेष हिरण्य विलम्ब से दे ।

ततो रक्षाविधानान्यवस्रावयेत्[1][2] ।

३२. शत्रु कृत तदनन्तर रक्षा विधान दूर करा दें ।

अग्निरसशस्त्रैर्वा प्रहरेत् ।

३३. अग्नि, विष अथवा शस्त्र से प्रहार करे ।

हिरण्यप्रतिग्राहिणो[1] वाऽस्य वल्लभाननुगृह्णीयात्[2][3] ।

३४. अथवा शत्रु के प्रियजनों को हिरण्य ग्रहण कराकर, स्वानुकूल करे ।

परिक्षीणो[1] वाऽस्मै दुर्गं दत्त्वा निर्गच्छेत् ।

३५. अथवा परिक्षीण दुर्बल नृपति इसे दुर्ग अर्पित कर निकल जाय ।

सुरुङ्गया[1] कुक्षिप्रदरेण[2] वा प्राकारभेदेन निर्गच्छेत् ।

३६. सुरंग अथवा कुक्षिप्रदर से प्राकार भेदन कर, निकल जाय ।

रात्राववस्कन्दं[1] दत्त्वा सिद्धस्तिष्ठेत्, असिद्धः पार्श्वेनापगच्छेत्[2] ।

३७ रात्रि में अवस्कन्द करके सिद्ध होने पर (दुर्ग में) स्थित रहे, असिद्ध होने पर, पार्श्व से निर्गत हो जाय ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) हिरण्य : द्रव्य, नकद, रुपया । द्र० १:१३:६, १:१९:१२ ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) रक्षा विधान : किलेबन्दी । द्र० १:१९:९, ९:४:३, १३:४:१६ ।

(२) अवस्रावयेत् : कमजोर करना । द्र० ९:४:८ ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) हिरण्य प्रतिग्राहिण : मुद्रा लेने वाला ।

(२) वल्लभ : प्रिय साथी ।

(३) अनुग्रह : कृपा, प्रसाद । द्र० २:१:१४, २:३५:३, १३:४:३, २:१:२१, २:८:३, २:१६:११ गण० १:१११, ३:२०० ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) परीक्षीण : अशक्त, पूरा थका हुआ, श्रान्त । द्र० १:१४:४ । गण० ३:३५, १७७ ।

३६. (१) सुरुंगा : सुरंग । द्र० १:२०:२, ५:२:४२, ७:१७:३, गण० ३:२०१ ।

(२) कुक्षि प्रदर : प्राकार या परकोटा की दीवार के एक तरफ तोड़कर विदीर्ण करना ।

३७. (१) अवस्कंद : आकस्मिक आक्रमण । द्र० ७:३:४०, ७:१०:२९, गण० ३:२७७, ३:११४, १३५, १४ ।

पाषण्ड[1]च्छद्मना मन्दपरिवारो निर्गच्छेत् ।

३८. पाषण्डवेष में अल्प परिवार के साथ निकल जाय ।

प्रेतव्यञ्जनो वा गूढै[2]र्निर्हियेत ।

३९. अथवा मृत वेष में वह गुप्तचरों द्वारा वहाँ से ले जाया जाय ।

स्त्रीवेषधारी वा प्रेतमनुगच्छेत् ।

४०. अथवा स्त्री वेष में मृतक का अनुसरण करते, निकल जाय ।

दैवतोपहार[1] श्राद्धप्रवहणेषु[2] वा रसविद्धमन्नपानमवसृज्य ।

४१. अथवा दैवतोपहार, श्राद्ध एवं प्रवहण के अवसर पर विष मिश्रित अन्न-पान देकर—

कृतोपजापो[1] दूष्य[2]व्यञ्जनैर्निष्पत्य गूढसैन्यो[3]ऽभिहन्यात् ।

४२. दूष्य वेषधारी गुप्तचरों द्वारा शत्रुपक्ष में प्रवेश कर, उपजाप करके, गूढ सैनिकों से युक्त होकर, शत्रु का नाश करे ।

एवं गृहीतदुर्गो वा प्राश्य[1]प्राशं[2] चैत्यमुपस्थाप्य दैवतप्रतिमाच्छिद्रं प्रविश्यासीत, गूढ[3]भित्तिं वा, दैवत[4]प्रतिमायुक्तं वा भूमिगृहम्[5] ।

४३. इस प्रकार दुर्ग शत्रु के हस्तगत हो जाने पर, दुर्बल विजिगीषु भोज्य अन्न युक्त चैत्य (देवालय) में पहुँच कर, देवप्रतिमा के छिद्र में प्रवेश कर अथवा गूढभिति में निवास करे अथवा देवप्रतिमा युक्त भूमिगृह में रहे ।

विस्मृते सुरङ्गया रात्रौ राजावासमनुप्रविश्य सुप्तममित्रं हन्यात् ।

४४. शत्रु के विस्मृत हो जाने पर, सुरंग मार्ग से रात्रि में राजा के निवास गृह में प्रवेश कर, सुप्त शत्रु को मार डाले ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) पाखण्ड : नास्तिक साधु । द्र० १: १५:९:१:१९:२९, २:४, २३, गण० १:९२ ।

(२) मन्द : अल्प या थोड़े ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) प्रेतव्यञ्जन : शव बना व्यक्ति ।

(२) गूढ़ : गुप्तचर या गुप्त प्रतिनिधि ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) देवतोपहार : प्रसाद । द्र० ७:१७: ४४ ।

(२) प्रवहण : उत्सव या मेला ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) उपजाप : गुप्त प्रोत्साहन । द्र० १: ३:१६, १:१६:२६, २:८:३२ ।

(२) दूष्य : गण० ३:१५०:१७० ।

(३) गूढ़ सैन्य : छिपी सेना ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) प्राश्य : आहार योग्य । मनु ११: १४३ ।

(२) प्रतिमा छिद्र : द्र० १३:१:३ ।

(३) गूढ़ भित्ति : खोखली दीवाल ।

(४) दैवत प्रतिमा : देवता मूर्ति ।

(५) भूमिगृह : तहखाना ।

यन्त्रै[1]र्विश्लेषणं[2] वा विश्लेष्याधस्तादवपातयेत् ।

४५. अथवा यन्त्रविश्लेषण को विमुक्त कर नीचे गिरा दे ।

रसाग्नियोगेनावलिप्तं[1]गृहं जतुगृहं[2] वाऽधिशयानममित्रमादीपयेत् ।

४६. रसाग्नियोग से अवलिप्त गृह में अथवा जतुगृह में शयन करते, शत्रु को जला दे ।

प्रमद[1]वनविहाराणामन्यतमे वा विहारस्थाने प्रमत्तं भूमिगृहसुरुङ्गागूढभित्तिप्रविष्टास्तीक्ष्णा हन्युः, गूढप्रणिहिता वा रसेन ।

४७. प्रमद वन, वन एवं विहार स्थान में अथवा विहार स्थान में प्रमत्त शत्रु को भूमिगृह, सुरंग या गूढभिति में प्रविष्ट तीक्ष्ण मार डालें अथवा गूढ़ पुरुष (सूद-आरालिक आदि) विष द्वारा मार डालें ।

स्वपतो वा निरुद्धे[1] देशे गूढाः स्त्रियः सर्परसाग्निधूमानुपरि मुञ्चे[2]युः ।

४८. निरुद्ध स्थान पर, शयन करते, शत्रु के ऊपर, गूढस्त्रियाँ सर्प, विष, अग्नि, एवं विषधूम डालें ।

प्रत्युत्पन्ने वा कारणे यद्यदुपपद्येत तत्तदमित्रेऽन्तःपुरगते गूढसंचा[1]रः प्रयुञ्जीत।

४९. अथवा अनुकूल कारण उपस्थित होने पर, जो जो कारण उचित हो, उस-उस कारण का प्रयोग अन्तःपुर में प्रविष्ट शत्रु पर गुप्त रूप से करे ।

ततो गूढमेवापगच्छेत्, स्वजनसंज्ञां[1] च प्ररूपयेत् ।

५०. तदनन्तर वहाँ से गुप्त रूप से निकल जाय और स्वजनों को संकेत कर दे ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) संज्ञा : संकेत ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) यन्त्र । खटका या मशीन । द्र० १: २०:२, २:३:३४, २:५:२ २:१२:६२, १८:१, १०: ६:४८, १२:५८ गण० ३:१७८ ।

(२) विश्लेषण : पृथक् करना, यहाँ ढीला करने या गिराने से तात्पर्य है ।

४६. (१) रसाग्नियोग : अग्नि जलाने के अनुकूल रसायनिक योग ।

(२) जतुगृह : लाक्षागृह ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) प्रमद वन : जहाँ राजा अपनी रानियों के साथ विहार करता है ।

पाठभेद भेद :

'स्वपतो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्सपातो' पाठभेद भी मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) निसद्ध देश : अन्य जन्य प्रवेश रहित एकान्त स्थान ।

(२) मुञ्च : मोचन, छोड़ना, मिश्र देश के राजाओं को मारने या छोड़ने का उदाहरण मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) गूढ़ संचार : गुप्त रूप से घूमना । द्र० १:१२:५, ११, १:२०:२, २:३:७१, २:९:२६, ४:९:२७ ।

द्वाःस्थान् वर्ष[1]धरांश्चान्यान्निगूढोपहितान्परे[2] ।
तूर्यसंज्ञाभिराहूय द्विषच्छेषाणि घातयेत् ॥

५१. विजिगीषु नृप द्वारपालों, वर्षधरों एवं गुप्त रूप से नियुक्त अन्यजनों को बाह्य संकेतों से आहूतकर, उन्हीं लोगों द्वारा शत्रु के शेष परिवारों का वध करा दे ।

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे योगातिसंधानं दण्डातिसंधानम् एकविजयश्च पञ्चमोऽध्यायः । आदितश्चत्वारिंशच्छततमः ।

द्वादश अधिकरण आबलीयस के अन्तर्गत योगाति संधान, दण्डातिसंधान एवं एक विजय सम्बद्ध पंचम अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ चालोसवांअयाय समाप्त ।

कौटिलीय अर्थशास्त्र का द्वादश अधिकरण आबलीयस समाप्त ।

पाठभेद :

'वर्षधरां' का त्रिवेन्द्रम में 'वर्षवरां' तेलगृ अनुप्रतिलिपि में 'वषंपरां' तथा 'पहितान्परे' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पहितामरैः' तथा 'घात' का 'कारयेत्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) वर्ष : नपुंसक, खोजा, हिजड़ा । द्र० १:२०:२१, १:२१:१ । गण० ३:१७९ ।

(२) पर : शत्रु ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशस्त्रे आबलीयसे द्वादशाधिकरणे पंचमोऽध्यायः योगातिसन्धानं दण्डातिसन्धानम् एकविजयश्च आदितश्चत्वारिंशच्छततमः । एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य आबलीयसं द्वादशभधिकरणं समासम् ।

मैसूर संस्करणमें—

इत्यबालीयसे योगातिसन्धानं दण्डातिसन्धानं एकविजयश्च पंचमोध्यायः आदितश्चत्वारिंशच्छततमः । एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य आबलीयसं द्वादशमधिकरणं समाप्तम् ।

बसाल संस्करण में—

इति कौटिलीयस्यार्थशास्त्रे आबलीयसे द्वादशाधिकरणे पंचमोध्यायः ॥५॥ योगातिसन्धानं दण्डातिसन्धानं एकविजयश्च आदितश्चत्वारिंशच्छततमः । एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य आबलीयसं द्वादश मधिकरणं समाप्तम् ।

उदयवीर शास्त्रीसंस्करण में—

इत्याबलीयसे द्वादशेऽधिकरणे योगातिसंधानं एकविजयश्च पंचमोऽध्याय ॥५॥ आदितश्चत्वारिंशद्रदधिकशततमोऽध्यायः ॥१४०॥ कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य आबलीयसं द्वादशमधिकरणं समाप्तम् ॥१२॥

१३

दुर्ग[1]लम्भोपायः—त्रयोदशमधिकरणम्

अध्याय १

[एकसप्ततिशततमं प्रकरणम्—उप[2]जापः]

दुर्गलम्भोपाय—तेरहवां अधिकरण

एक सौ एकहत्तरवां प्रकरण—उपजाप

विजिगीषुः पर[3]ग्राममवाप्तु[4]कामः सर्वज्ञ[5]दैवतसंयोग[6]ख्यापनाभ्यां स्वपक्षमुद्ध[7]र्षयेत्, परपक्षं चोद्वे[8]जयेत् ।

१. शत्रु ग्राम (नगर) को प्राप्त करने की इच्छा बाला विजिगीषु स्वयं को सर्वज्ञ एवं देव-साक्षात्कार कराने वाला प्रसिद्ध कर, स्वपक्ष को प्रसन्न एवं शत्रु पक्ष को उद्विग्न करे ।

सर्वज्ञ[1]ख्यापनं तु गृहगुह्य[2]प्रवृत्तिज्ञानेन प्र[3]त्यादेशो मुख्यानाम्, कण्टक-

२. प्रमुखों के घर का गोपनीय दुष्कर्म गूढपुरुषों से जानकर, उसे करने से रोकना, कण्टकशोधन अधिकरणोक्त अपसर्पोपदेश द्वारा राजद्वेषीजनों के दोष जानकर, प्रकट करना, अन्य लोगों

पादटिप्पणी :

१. (१) लम्भ : प्राप्ति, लाभ, विजय । द्र० ८:१५:१, १३:५:१, २ । १:१३:२६ ।

(२) उपजाप : गुप्त प्रोत्साहन ।

(३) ग्राम : यहाँ सुरक्षित नगर या राजधानी से तात्पर्य है ।

(४) आप्त काम : संतुष्ट । द्र० १:१८:१०, ३:२:१२, ४५:५:१:३ ।

(५) सर्वज्ञ : सर्वज्ञता, सब कुछ जानने वाला ।

(६) संयोग : साक्षात्कार, साथ ।

(७) उद्धर्ष : उमंग, उत्साह ।

(८) उद्वेज : चिन्तन ।

पाठभेद :

'प्रवृत्तिज्ञानेन' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रवृत्तिज्ञाने' तथा 'पसर्पापगमेन' का 'पसपगमेन' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'पसर्पामिगमेन' तथा 'विज्ञाप्योपायन' का तंजौर में 'विज्ञाप्योपानय' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विज्ञाप्ये वा नय' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) सर्वज्ञ ख्यापन : सर्वज्ञता की प्रसिद्धि । द्र० १०:३:३३ ४:५:१४ ।

(२) गुह्य : गुप्त । द्र० १८:९ १:१५:६० ।

(३) प्रत्यादेश : चेतावनी, कथन, निर्देशन । द्र० ५:१०:१:१३ ४:५:१४ ।

शोधनापसर्पा[4]वगमेन् प्रकाशनं राजद्विष्ट[5]कारिणाम्, वि[7]ज्ञाप्योपा[7]यनख्यापनमदृष्टसंसर्गविद्यासंज्ञादिभिः, विदेशप्रवृत्तिज्ञानं तदहरेव गृ[9]हकपोतेन मुद्रासंयुक्तेन ।

द्वारा अज्ञात संसर्ग विद्या-संज्ञादि द्वारा जानकर, आगत उपायनों का प्रकट करना, विदेश के समाचार को मुद्रायुक्त गृह कपोत द्वारा जानकर, उसी दिन प्रकाशित करना—ये सर्वज्ञयापन के प्रकार दें।

दैवतसंयोगख्यापनं तु—सुरुङ्गामुखेनाग्निचैत्यदैवतप्रतिमाच्छिद्रानुप्रविष्टैरग्निचैत्य दैवतव्यञ्जनैः संभाषणं पूजनं च, उदकादुत्थितैर्वा नागवरुणव्यञ्जनैः संभाषणं पूजनं च रात्रावन्तरुदके समु[2]द्रवालुकाकोशं प्रणिधायाग्निमालादर्शनम्, शिलाशिक्यावगृहीतेप्ल[3]वके[1] स्थानम्, उदकबस्तिना ज[4]रायुणा वा शिरोऽ[5]वगूढनासः पृ[6]षतान्त्रकु[7]लीरन[8]क्रशि[9]शुमारोद्रवसाभिर्वा शतपाम्यं तैलं नस्तः प्रयोगः ।

३. दैवतसंयोगख्यापन निम्न प्रकार से करे—सुरंगमुख से अग्नि, चैत्य दैवतप्रतिमा छिद्र में प्रविष्ट अग्निचैत्य दैवतवेषधारी गुप्तचरों से सम्भाषण एवं पूजन, अथवा जल से निकले नाग-वरुण वेषधारी गूढपुरुषों से सम्भाषण और पूजन, रात्रि में जल के अन्दर मुद्रायुक्त बालुका कोश रखकर, अग्निमाला का प्रदर्शन, शिला युक्त छीका से गृहीत नाव में (धारामध्य) स्थित होना, उदकवस्ती अथवा जरायु से शिर एवं नासिका ढककर अथवा चितकवरा हरिण की आंत, कुलीर, नक्र, शिशुमार एवं उद्रकी वसा से एक सौ बार पकाया गया तैल नाक में प्रयोग करे।

---

(४) अपसर्प : शत्रु देश में जानेवाला गुप्तचर।

(५) अवगमन : जानना, जानकारी प्राप्त करना।

(६) द्विष्ट : जिससे द्वेष हो।

(७) विज्ञाप : अनुरोध, प्रार्थना, सूचित करने योग्य।

(७) उपायन : भेंट, उपहार।

(८) अदृष्ट : किसी को न दिखाई पड़ने वाला।

(९) कपोत : कबूतर, पालतू कबूतर, पूर्वार्ध बीसवीं शताब्दी तथा मध्य युग में कबूतर का प्रयोग समाचार भेजने के लिये किया जता था। कबूतर के पांव में लेख बांधकर उसे गन्तव्य स्थान पर जाने के लिये उड़ा दिया जाता था। इसके पूर्व वे इस कार्य हेतु प्रशिक्षित किये जाते थे।

पाठभेद :

'नाग वरुणव्यञ्जनैः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नागहरिणव्यञ्जनैः' तथा 'बालुकाकोशं का देवनागरी अनुलिपि में 'कालुकाशोकं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) अग्नि चैत्य : अग्नि का मंदिर, पारसियों की अगियारी। गण० ३:१८०।

(२) समुद्र बालुका : समुद्र का फेन तेल में डुबाकर होशम जल में तैरता, जलता है। द्र० १४:२:३६, गण० ३:१८०।

(३) प्लव : नाव या डोंगी। द्र० २:२:१४ १४:२:३६।

(४) जरायु : खेड़ी, गर्भाशय।

(५) अवरुद्ध नास : नाक जल से ढंकी।

(६) पृशन : चितकबरा हिरन।

(७) कुलीर : केकड़ा।

(८) नक्र : घड़ियाल, मगर।

(९) सुशुमार : सुइस, तिमि।

(१०) उद्र : जल मार्जार।

तेन रात्रिगणश्चरति ।

४. इस प्रकार पुरुष रात्रि में (अनेक रात्रि तक) जल संचरण करने में समर्थ होता है।

इत्युदकचरणानि ।

५ उदक चरण विधि समाप्त ।

तैर्वरुण[1]नागकन्या[2]वाक्य[3]क्रिया, संभाषणं च, कोपस्थानेषु मुखादग्निधूमोत्सर्गः ।

६. उनके द्वारा वरुण, नाग कन्याओं की वाक्यक्रिया, एवं परस्पर भाषण करे, कोप कारण उपस्थित होने पर, मुख से अग्नि एवं धूम निकाले ।

तदस्य स्वविषये कार्तान्तिक[1]नैमित्तिक[2]मौहूर्तिक[3]पौराणिके[4]क्षणिक[5]गूढपुरुषाः साचिव्य[7]करास्तद्दर्शिनश्च प्रकाशयेयुः ।

७. राजा के इस सर्वज्ञत्वादि को स्वदेश में कार्तान्तिक, नैमित्तिक, मौहूर्तिक, पौराणिक, ईक्षणिक, गूढपुरुष, सहायक एवं उसे देखने वाले (जानने वाले) प्रकाशित करें ।

पादटिप्पणी :

४. गण : समूह, झुण्ड, वर्ग। द्र० १:२१:१ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) उदकचरणनि : पानी में घूमना, तैरना या चलना । द्र० १२:४:२८, गण ३:१७२ ।

६. वरुण : समुद्र के जल देवता, पश्चिम के दिक्पाल । द्र० १३:२:१६ ।

(२) नाग कन्या : पुराणों में नाग कन्याओं का बहुल वर्णन मिलता है । यह एक प्राचीन जाति थी । अफगानिस्तान के लोग अपने को नागवंशीय क्षत्रिय कहते हैं ।

(३) वाक्य क्रिया : शब्द उच्चारण करना ।

धूमोत्सर्ग : द्र० १४:२:३४ ।

पाठभेद :

'पौराणिकेक्ष' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पौराणिक' तथा 'पुरुषाः साचिव्य' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पुरुष साचिव्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७. (१) कार्तान्तिक : भाग्य वक्ता या वैद्य। गण० १:६५:३:११६, ११७ ।

(२) नैमित्तिक : सगुन विचारक । द्र० १:१३:२३ गण० १६५ ।

(३) मौहूर्तिक : मुहूर्त्त वेत्ता द्र० १:१९:२३। गण० १६५—९५, ३:१०३:११७ ।

(४) पौराणिक : पुराण वाचक ।

(५) एक्षणिक : प्रश्न द्वारा शुभाशुभ या भविष् भाग्य वेत्ता ।

(७) साचिव्य : सहायता । गण० ३, १८४।

परस्य[1] विषये दैवत[2]दर्शन दिव्य[3]कोशदण्डो[4]त्पत्तिं चास्य ब्रूयुः ।

८. शत्रु देश में राजा के दैवत दर्शन और दिव्यकोश एवं सैन्योत्पत्ति के सामर्थ्य को कहें ।

दैवत[1]प्रश्ननिमि[2]त्तवाय[3]साङ्गविद्या[3]स्व[4]प्नमृग[5]पक्षि[6]व्याहारेषु चास्य विजयं ब्रूयुः, विपरीतममित्रस्य ।

९. दैवत-प्रश्न, निमित्त, वायस, अंगविद्या, स्वप्न, मृगों एवं पक्षियों के शब्द होने के समय इस राजा का विजय तथा शत्रु का पराजय कहें ।

सदुन्दुभि[1]मुल्कां[2] च परस्य[3] नक्षत्रे दर्शयेयुः ।

१०. शत्रु के सम्बन्ध में नक्षत्र में दुन्दुभि घोष युक्त, उल्का प्रदर्शित करें अर्थात् उसका भावी अनिष्ट सूचित करें ।

परस्य मुख्यान्मित्रत्वेनोपदिशन्तो दूत[1]व्यञ्जनाः स्वामि[2]सत्कारं ब्रूयुः, स्व[3]पक्षबलाधानं परपक्षंप्रतिघा तं च ।

११. शत्रु के प्रमुखजनों से उनके साथ मैत्र सम्बन्ध रखते हुए, दूत वेष धारी गुप्तचर अपने स्वामी के द्वारा कृत सत्कार को प्रशंसा करें तथा स्वपक्ष का सैन्योत्कर्ष और शत्रुपक्ष का ह्रास कहें।

पादटिप्पणी :

८. (१) परस्य विषय : दूसरे के देश, पुर, जिला या भूमि ।

(२) दैवत दर्शन : देवता का दर्शन या भेंट ।

(३) दिव्यकोश : दैवीय या अलौकिक-कोश ।

(४) दण्डोत्पत्ति : सेना का दैवी स्रोत ।

पाठभेद :

'निमित्तवायसाङ्गविद्यास्वप्न' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'निमित्ता वा साङ्गविद्याः स्वपन' पाठभेद मिलता है ।

पाददिप्पणी :

९. (१) देवत प्रश्न : शुभाशुभ कार्य सम्बन्धी प्रश्न । गण० ३:१८१ ।

(२) वायस : कौए की उड़ान । गण० ३:१६१ ।

(३) अंग विद्या : अंग स्पर्श कर शुभाशुभ का ज्ञान करना, शरीर विज्ञान, यह सामुद्रिक विद्या का एक अंग है । द्र० १:११:५, १:१२:१, गण० १:३६, ३:१६३ ।

(४) स्वप्न : सपना ।

(५) मृग : पशु ।

(६) पक्षी : चिड़िया ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) दुन्दुभी : डंका, नगाड़ा, धौंसा ।

(२) उल्का : द्र० १४:२:३, मनु० १:३८ याज्ञ० १:१४५ । गण० ३:१८२ ।

(३) परस्य नक्षत्र : चन्द्रमा शत्रु के जातक योग में होता है ।

पाठभेद :

'मुख्यान्मित्रत्वेनो' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मुख्यान्मित्रत्वेन' तथा 'बलाधान' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'बलाधारं' तथा 'परपक्ष' का 'प्रतिपक्ष' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) दूत व्यञ्जना : दूत बना गुप्तचर ।

(२) सत्कार : किसी मुखिया के प्रति विजिगिषु का आदर सत्कार करना ।

(३) प्रपक्ष बलाधान : अपने पक्ष को शक्तिशाली बनाना ।

(४) प्रतिघात : शत्रु सेना का ह्रास ।

तुल्ययोगक्षेममात्यानामायु[1]धीयानां च कथयेयुः ।

१२. अमात्यों एवं आयुधीयजनों से समान योग क्षेम कहें।

तेषु[1] व्यसने[2]भ्यु[3]दयावेक्षणमप[4]त्यपूज[5]नं च प्रयुञ्जीत ।

१३. उनसे राजा द्वारा किये जाने वाले विपत्ति काल में साहाय्यदान, अभ्युदय काल में सम्मान, एवं पुत्र का सम्मान भी कहें।

तेन परपक्षमुत्साहयेद्यथोक्तं[1]पुरस्तात् ।

१४. जैसा पहले कहा गया है, इस प्रकार से शत्रु पक्ष को (विरोधभाव के लिए) उत्साहित करे।

भूयश्च वक्ष्यामः ।

१५. शत्रुभेद का पुनः कथन करेंगे।

साधार[1]णगर्दभेन दक्षान्, ल[2]कुटशाखाहननाभ्यां दण्डचारिणः, कुलै[3]डकेन चोद्विग्नान्, अश[4]निवर्षेण विमानितान्, विदु[5]लेनावकेशिना वाय[6]सपिण्डेन कैत[7]वजमेघेने-

१६. सामान्य गर्दभ से दक्षजनों की, लकुट एवं कुठार से दण्डचारियों की, कुलैडक से उद्विग्न लोगों की, अशनि वर्षा से अपमानितों की, निष्फल विदुल अथवा लोहयुक्त अन्नपिण्ड का जलरहि

पादटिप्पणी :

१२. (१) आयुधी : अस्त्र-शस्त्रधारी सैनिक। द्र० १:१९:१५, २:३५:१ ।

पाठभेद

'भ्युदयावेक्षणम्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भ्युदयापेक्षणम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) तेषु : आमात्य तथा आयुध। द्र० ३:१४:२ ।

(२) व्यसन : आपत्ति, आपदा। गण० ३:२ ।

(३) अभ्युदय : उत्कर्ष।

(४) अपत्य : संतति। द्र० ७:७:१४ ।

(५) पूजन : सत्कार।

पादटिप्पणी :

१४. (१) पुरस्तात : पहले, पूर्व। द्र० १:१४:६, ७:९:३३ ।

पाठभेद :

'कूलेडकेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कूलैं केन' तथा डेषिणेति' का 'द्वेषिणेऽति' तथा 'व्याघ्र चर्मणा' का 'व्यालचर्मणा' तथा 'घ्रुवोपकारिणी' 'घ्रुवापकारिणः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१६. (१) गदर्भ : गदहा।

(२) लकुट : वेत की लाठी।

(३) कुलैडक : भेड़ा या बनैला बकरा। १२:१:७ ।

(४) अशनि : बज्र या बिजली।

(५) विदुल : बेंत या जल बेंत।

(६) वायस पिण्ड : कौआ को दिया वाला पिण्ड।

तिविहताशान् [8]दुर्भगालंकारेण द्वेषिणेति पूजाफलान्, [9]व्याघ्रचर्मणा [10]मृत्युकूटेन चोपहि[11]तान्, [12]पीलुविखादनेन [13]करकयोष्ट्र्या[14] गर्द[15]भीक्षीराभिमन्थनेनेति [16]ध्रुवोपकारिण इति ।

बादल से भग्न आशावालों की, अनिष्टकारो अलंकार से पूजाफल (उपहार) प्राप्त करनेवालों को व्याघ्रचर्म और मृत्यु कूट से शत्रुद्वारा प्रतारितों की, पीलुभक्षण, करका एवं उष्ट्री के सेवन तथा गर्दभी क्षीर के मन्थन से नित्य उपकाररत जनों को तुलना कर उन लोगों को शत्रु से भिन्न करे ।

[1]प्रतिपन्नान[2]र्थ[3]मानाभ्यां योजयेत् ।

१७. सहमत होने वालों को अर्थ-मान से पूजित करे ।

[1]द्रव्य[2]भक्त[3]च्छिद्रेषु चैनान् द्रव्यभक्तदानैरनुगृह्णीयात् ।

१८. द्रव्य एवं अन्न का अभाव होने पर, द्रव्य-अन्न देकर, इन लोगों को अनुगृहीत करे ।

अप्रतिगृह्णतां स्त्रीकुमारालंकारानभिहरेयुः ।

१९. न ग्रहण करने वालों के स्त्रियों एवं कुमारों के अनुरूप अलंकार प्रदान करें ।

---

(८) दुर्भगा : जिस स्त्री का पति उसे नहीं चाहता, अभागिन ।

(९) व्याघ्रचर्मः । बाघम्बर ।

(१०) मृत्यु कूट : मृत्यु का जाल या फन्दा ।

(११) उपहित : अच्छा ।

(१२) पीलू : एक प्रकार का वृक्ष, एक प्रकार का फल ।

(१३) कर्का : ओला या पत्थर ।

(१४) उष्ट्र : ऊँटनी ।

(१५) गर्दभी : गदही ।

(१६) ध्रुवोपकारिणी : सर्वदा उपकार करना ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) प्रतिपन्न : उपलब्धि, प्राप्त । द्र० ७:८:३, ९:३:२३, १३:१:२१ ।

(२) अर्थ : धन । द्र० १:७:६ ।

(३) मान : प्रतिष्ठा, मान प्रदान । द्र० १:६:१, गण० १:३७ ।

पाठभेद

'चैनान्' का देवनागरी अनुलिपि में 'चैनां' तथा 'भक्तदानैर' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भक्तादानैर' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी

१८. द्रव्य : धन, मुद्रा । द्र० १:१७:३१, ७:४:१४, गण० १:५ ।

(२) भक्त : भोजन या अन्न । द्र० ७:१५:९ । गण० ३:१०७ ।

(३) छिद्र : संकट । द्र० २:३:६, गण० ३: १८३ ।

दुर्भिक्ष[1]स्तेना[2]टव्युपघातेषु च पौरजानपदानुत्साहयन्तः सत्त्रिणो ब्रूयुः 'राजान-मनुग्रहं याचामहे; निरनुग्रहाः परत्र गच्छामः' इति ।

२०. दुर्भिक्ष, चोर एवं आटविक जनों का उपद्रव उपस्थित होनेपर, पौर-जानपदों को प्रोत्साहित करते हुए, सत्त्री कहें—'हमलोग राजा से अनुग्रह को याचना कर रहे हैं, अनुग्रह मिलने पर, अन्यत्र जायेंगे' ।

तथेति प्रतिप[1]न्नेषु द्रव्यधान्यपरि[2]ग्रहैः ।
साचिव्यं कार्यमित्येतदुपजापाद्भुतंमहत् ॥

२१. पौरजानपदों के सत्त्री का कथन स्वीकार करने पर, द्रव्य-धान्य-निवासस्थान प्रदा कर, अनुग्रह (सहायता) करना चाहिए । यह अद्‌भुत उपजाप है ।

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे उपजापः प्रथमोऽध्यायः । आदित एकचत्वारिंशच्छततमः ।

त्रयोदश अधिकरण के अन्तर्गत दुर्गलम्भोपाय में उपजाप सम्बद्ध प्रथम अध्याय समाप्त ।
आदि से एक सौ एकतालीसवां अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

'उत्साहयन्तः' का देवनागरी अनुलिपि में 'उत्सादयन्तः' तथा सत्त्रिणो' का 'सत्त्रिणे' तथा 'गच्छामः' का तंजौर में 'गच्छामहे' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) दुर्भिक्ष : अकाल । गण० ३:१०१ ।

(२) स्तेन : चोर, लुटेरा ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) प्रतिपन्न : स्वीकृत ।

(२) परिग्रह : लेना, ग्रहण करना । द्र० ३:९:१, १३:३:१७ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयो ऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः उपजापः । आदित चत्वारिंशच्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे उपजा प्रथमोऽध्यायः आदित एक चत्वारिंशच्छततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयो ऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः उपजापः आदित एकच रिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे उप प्रथमोऽध्यायः ॥१॥ आदित एकचत्वारिंशद शततमोऽध्यायः ॥१४१॥

अध्याय २

[द्विसप्ततिशततमं प्रकरणम्—योगवामनम्]

एक सौ बहत्तरवां प्रकरण—योगवामन

मुण्डो[2] जटिलो[3] वा पर्वतगुहावासी चतुर्वर्षशतायुर्ब्रुवाणः प्रभूतजटिलान्तेवासी नगराभ्याशे तिष्ठेत् ।

१. पर्वतगुहा निवासी, चार सौ वर्ष आयु बताने वाला, प्रचुर जटाधारी, शिष्यों वाला मुण्ड अथवा जटिल (वेषधारी गुप्तचर) नगर के समीप स्थित हो ।

शिष्याश्चास्य मूलफलोपगमनैरमात्यान् राजानां च भगवद्दर्शनाय योजयेयुः ।

२. इसके शिष्य मूल-फल उपहारों के साध अमात्यों और राजा को भगवद् दर्शन के लिये प्रेरित करें ।

समागतश्च राज्ञा पूर्वराजदेशाभिज्ञानानि[1] कथयेत्, 'शते शते च वर्षाणं-पूर्णेऽहमग्निं प्रविश्य पुनर्बालो भवामि, तदिह भवत्समीपे चतुर्थमग्निं प्रवेक्ष्यामि, अवश्यं मे भवान्मानयितव्यः, त्रीन् वरान् वृणीष्व' इति ।

३. राजा से मिलने पर वह पूर्व राजाओं एवं देशों के चिन्ह कहें 'सौ सौ वर्ष के पूर्ण होने पर मैं अग्नि में प्रवेश करके पुनः बालक हो जाता हूँ, यहाँ आप के समक्ष चतुर्थ वार अग्नि में प्रवेश करूँगा, आप मेरे द्वारा (वर प्रदानादि से) सम्मान्य हैं, तीन वर माँगो ।

पादटिप्पणी :

१. (१) **योगवामन** : कपटपूर्वक शत्रु को दुर्ग के बाहर निकलने के लिए दबाव डालना या दुर्ग खाली कराना । द्र० २:१:१; ३:९:३१; १२:२:८, १२:४:२९ ।

(२) **मुण्ड** : मुण्डित कपाल; सिद्ध या आजीवक, बौद्ध भिक्षुक या तपस्वी या परिव्राजक । द्र० १:११:१३; १:१२:५, १०:३:३९ ।

(३) **जटिल** : जटाधारी, तपस्वी; पाशुपत आदि सम्प्रदाय का अनुयायी । द्र० १:११:१३, १४, १:१३:१५ ।

(४) **अन्तेवासी** : शिष्य, सेवक, छात्र, परिचायक । द्र० ३:११:५, १५, १:१२:१०, १:१६:२४ २:३५:४ । गण० २५:३५, याज्ञ २:१८४ ।

पादटिप्पणी :

२. (१) **मूलफल** : कन्दमूल फल ।

(२) **भगवद्** : सिद्ध के वेष में रहने वाले स्वामी ।

पाठभेद :

'भवान्मानयितव्यः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भवानानयितव्यः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) **अभिज्ञान** : चिह्न, परिचय । द्र० ३:३१:३,२६ ।

प्रतिपन्नं ब्रूयात् 'सप्तरात्रमिह सपुत्रदारेण प्रेक्षा[1]प्रहवण[2]पूर्वं वस्तव्यम्' इति ।

४. उसके सहमत होने पर कहे 'सात रात्रि पर्यन्त यहाँ स्त्री पुत्र सहित प्रेक्षा-प्रवहण पूर्वक निवास करो ।'

वसन्तमवस्कंन्देत ।

५. निवास करते हुए उसे मार डाले ।

मुण्डो वा जटिलो वा स्था[1]निकव्यञ्जनः प्रभूतजटिलान्तेवासी वस्त[2]शोणितदिग्धां वेणुशलाकां सुवर्णचूर्णेनावलिप्य व[3]ल्मीके निदध्याद् उपजिह्विकानुसरणार्थम्, स्वर्णनालिकां वा ।

६. स्थानिक वेशधारी, प्रचुर शिष्यों वाला मुण्ड अथवा जटिल (गूढ़पुरुष) बकरे के रुधिर से लिप्त, सुवर्ण चूर्ण अवलिप्त वेणुशलाका अथवा स्वर्ण नालिका को वमी के अनुसरण के लिये वल्मीक पर रख दे ।

ततः सत्त्री राज्ञः कथयेत् 'असौ सिद्धः पुष्पितं निधिं जानाति' इति ।

७. तदनन्तर सत्त्री राजा से कहे । वह सिद्ध पुष्पित निधि जानता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) प्रेक्षा : नाटकादि, अभिनय । द्र० २:३:२६; ३:३:२१; ३:१०:३९, ५:१:४३; १३:२:४; ४५ । गण० ३:१८५; १९० ।

(२) प्रहवण : मेला, उत्सव आदि । द्र० १:१०:९; १:२१:२८, १०:६:४५; १०:१९:४६ । गण० ३:३५६, ३:१७७; १८५ ।

पादटिप्पणी

५. (१) अवस्कन्द : आकस्मिक या अचानक आक्रमण करना । मैसूर संस्करण में हन्यात् अर्थ किया गया है । द्र० ७:६:४०; ७:१०:२९ । गण० २:२७७; ३:११४, १३५; १४७, १७०, १७७; १९४ :

पाठभेद :

'वस्तशोणित' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वस्त्रशोणित' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) स्थानिक : इसका साधारण अर्थ माल का अधिकारी या नगर के किसी हल्के का अधिकारी होता है । परन्तु यहाँ उस व्यक्ति से तात्पर्य हैं, जो स्थान के अन्दर गाड़ी या भूमि गत धन को देखने वाला होता है या निधि या खजाना बताता है। द्र० २:३५:६; २:१:७; २:३६:४; १३:२:११। गण० १:११०; ३५० ।

(२) वस्त : अज, या बकरा ।

(३) वल्मीकी : वाबी या दिमकों का बनाया गया मिट्टी का ढूहा या विमोटा ।

(४) उपजिह्विका : चींटी, दीमक की बनाई हुई बिल या वर्मी ।

पादटिप्पणी :

७. (१) पुष्पितं निधिं : बड़ा खजाना जो खोला न गया हो ।

स राज्ञा पृष्टः 'तथा' इति ब्रूयात्, तच्चाभिज्ञानं दर्शयेत्, भूयो वा हिरण्यमन्तराधाय ।

८. राजा के पूछने पर वह 'तथा' (हाँ) कहे, और उसका चिन्ह दिखाये अथवा प्रचुर हिरण्य अन्दर रखकर—

ब्रूयाच्चैनम् 'नाग[1]रक्षितोऽयं निधिः प्रणिपात साध्यः' इति ।

९. राजा से कहे 'यह निधि नाग द्वारा सुरक्षित है, विनय पूर्वक साध्य है' ।

प्रतिपन्नं ब्रूयात् 'सप्तरात्रम्' इति समानम् ।

१०. सहमत होने पर उससे कटे 'सात रात्रि पर्यन्त स्त्री पुत्र सहित पूर्ववत् यहाँ निवास करो' इत्यादि पूर्ववत्,

स्थानिक[1]व्यञ्जनं वा रात्रौ तेजना[2]ग्नियुक्तमेकान्ते तिष्ठन्तं सत्त्रिणः क्रमा[3]भिनीतं राज्ञः कथयेयुः 'असौ सिद्धः सा[4]मेधिकः' इति ।

११. अथवा सत्री पुरुष रात्रि में तेजन अग्नि युक्त, एकान्त में स्थित, एवं पूर्व निश्चित स्थानिक व्यंजन गूढ़पुरुष के विषय में राजा से कहें 'यह सिद्ध भावी समृद्धि देखने वाला है' ।

तं राजा यमर्थं याचेत तमस्य करिष्यमाणः 'सप्तरात्रम्' इति समानम् ।

१२. उससे राजा, जिस अर्थ की याचना करे, उसे पूर्ण करेंगे, इस प्रकार कहकर, सिद्ध पुरुष राजा से कहे 'सात रात्रि पर्यन्त पूर्ववत् यहाँ निवास करो' शेष पूर्ववत् ।

सिद्धव्यञ्जनो वा राजानं जम्भक[1]विद्याभिः प्रलोभयेत् ।

१३. अथवा सिद्ध वेशधारी गूढ़ पुरुष जम्भक विद्याओं से राजा को प्रलोभित करे ।

तं राजेति समानम् ।

१४. उससे राजा जिस अर्थ को याचना करे शेष पूर्ववत् ।

पादटिप्पणी :

९. (१) **नागरक्षित :** सर्प द्वारा रक्षित । यह किम्बदन्ती प्रचलित हैं कि बड़े खजाने पर सांप बैठकर अगोरता है या रखवाली करता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) **स्थानिक :** राजस्व संग्राहक, स्थान विशेष का रक्षक या व्यवस्थापक । द्र० २:१:७; २: ३५:६, २:३६:४ ।

(२) **तेजाग्नि :** द्र० १:४:२ ।

(३) **क्रमाभिनीति :** जिसमें क्रमशः विश्वास उत्पन्न किया जाय । द्र० ११:१:६; १२:२:२९ ।

(४) **सामेधिक :** सम्पदा आदि का भविष्य वक्ता । द्र० १:११:१६ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) **जम्भक विद्या :** जादू या ऐन्द्रजालिक, कपट विद्या, माया विद्या । द्र० १:१२:१; ५:३:५९ । गण० १:५६, ३:१८६ ।

सिद्धव्यञ्जनो वा देशदेवतामभ्यर्हितामाश्रित्य प्रहवणैरभीक्ष्णंप्रकृतिमुख्यानभिसंवास्य[2] क्रमेण[3] राजानमतिसंदध्यात् ।

१५. अथवा सिद्ध वेशधारी गूढ़ पुरुष परम पूजित देश देवता का आश्रय लेकर, सतत उत्सव भोजों से प्रमुख अमात्यों को स्ववश कर, क्रमशः राजा को प्रवञ्चित करे ।

जटिलव्यञ्जनमन्तरुदक[1]वासिनं वा सर्वश्वेतं[2] तटसुरुङ्गा भूमिगृहापसरणं वरुणं[3] नागराजं[4] वा सत्त्रिणः क्रमाभिनीतं राज्ञः कथयेयुः ।

१६. अथवा उदक चरण विद्या से जल के अन्दर निवासशील, सर्वश्वेत, तटवर्ती सुरंग अथवा भूमि गृह अपसरणशील, वरुण या नागराज का स्वरूप प्रख्यात करने वाले जटिल वेशधारी गूढ़ पुरुष के विषय में सत्त्री राजा से कहें ।

तं राजेति समानम् ।

१७. उससे राजा जिस अर्थ की याचना करे शेष पूर्ववत् ।

जनपदान्तेवासी सिद्धव्यञ्जनो वा राजानं शत्रुदर्शनाय योजयेत् ।

१८. अथवा जनपद के सीमा पर निवास करने वाला सिद्ध वेषधारी गूढ़ पुरुष राजा को शत्रु दर्शनार्थ प्रेरित करे ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) **अभ्यर्हिताम् :** पूजित, जिसकी अभ्यर्थना की गयी हो ।

(२) **संवास्य :** आत्मीयता पैदा करना, वश में करना, जीत लेना । द्र० ५:१:१९; ११:१:४० । गण० १:२५० ।

(३) **क्रमेण ।** क्रमशः, धीरे-धीरे ।

पाठभेद :

'सर्व श्वेतं तटसुरुङ्गा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सर्पसुरङ्गा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) **उदकवासिनः :** जल में रहने वाला । गण० ३:१७५ ।

(२) **सर्वश्वेत :** जिसके समस्त बाल पक गए हों ।

(३) **वरुण :** वैदिक साहित्य का देवता है। वैदिकोत्तर साहित्य में समुद्र का देवता माना गया है । वरुण के गुप्तचर संसार में भ्रमण करते हैं। द्र० १३:१:६ ।

(४) **नागराज :** प्राचीन समय में क्षत्रियों की एक जाति थी । अफगानिस्तान के मुसलमानों में एक वर्ग है, जो अपने को नागवंशी क्षत्रियों की संतान मानता है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) **अन्तेवासी :** यहाँ सीमा पर के निवासी से तात्पर्य है ।

प्रतिपन्नं बिम्बं[1] कृत्वा शत्रुमावाहयित्वा[2] निरुद्धे[3] देशे घातयेत् ।

१९. सहमत होने पर, संकेत करके शत्रु आहूत कर, निरुद्ध स्थान पर, हत्या करा दे ।

अश्वपण्योपयाता[1] वैदेहकव्यञ्जनाः पण्योपायन[2]निमित्तमाहूय राजानं पण्यपरीक्षायामासक्तमश्वव्यतिकीर्णं वा हन्युः अश्वैश्च[3] प्रहरेयुः ।

२०. अश्व पण्य के साथ आये हुए वैदेहक वेशधारी गूढ़ पुरुष राजाओं को अश्व रूप पण्योपायनों को देखने के लिए आहूत कर, पण्य परीक्षा में तल्लीन अथवा अश्बों में घिरे राजा को मार डालें और अश्वों द्वारा मूल स्थान पर प्रहार करें ।

नगराभ्याशे[1] वा चैत्यमारुह्य[2] रात्रौ तीक्ष्णाः कुम्भेषु नालीन्[3] वा विदुलानि[4] धमन्तः[5] 'स्वामिनो मुख्यानां वा मांसानि भक्षयिष्यामः, पूजा नो वर्तताम्,' इत्यव्यक्तं ब्रूयुः ।

२१. अथवा तीक्ष्ण पुरुष नगर के समीप रात्रि में चैत्य पर चढ़कर, कुम्भों में नाली अथवा विदुल को धौकते (या फूँकते) हुए अस्पष्ट रूप से बोले—'स्वामी अथवा प्रमुखों के मांस का भक्षण करूँगा, मेरी पूजा की जाय' ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) **विम्ब :** शत्रु की प्रतिमा या प्रतिमूर्ति । द्र० ४:४:२०, ४:१०:५; गण० ३:१८७ ।

(२) **आवाहयित्वा :** आवाहन कर, बुलाकर, आमन्त्रित कर । द्र० ७:५:२२; ९:६:७०:९:७:१० । गण० २:३४१ ।

(३) **निरुद्ध :** एकान्त स्थान । द्र० १५:५:४८ ।

पाठभेद :

'पण्योपायननिमित्तम्' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पण्योपायनिमित्तम्' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'पण्योपयाननिमित्तम्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) **अश्वपण्योपयाता :** अश्व या घोड़ा लेकर बेचने के लिए आया व्यापारी ।

(२) **पायन :** भेंट देना ।

(३) **प्रहरेयुः :** अश्वों द्वारा आक्रमण करे ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) **नगराभ्यासे :** नगर के समीप ।

(२) **चैत्य :** मन्दिर, आयतन, मन्दिर के बृक्ष से भी अर्थ लगाया गया है । द्र० १:२०:२, २:४:२०, २:३५:२; १३:२:२१, २५, २९ । गण० ३:१८७; १८८; १९० ।

(३) **नालीन :** धान्य काण्ड, नडुल, ध्वनि नलिका, कमल का दण्ड ।

(४) **विदुल :** बेंत एक प्रकार का नरकट, जल वेंत । द्र० १३:१:१६ । गण० ३:१८२ ।

(५) **धमन्त :** धोंकना या हवा फूकना । गण० ३:१८७ ।

तदेषां नैमित्तिक[१]मौहूर्तिक[२]व्यञ्जनाः ख्यापयेयुः[३] ।

२२. उनके उस बात की प्रसिद्धि नैमित्तिक एवं मौहूर्तिक वेषधारो गूढ़ पुरुष करें।

मङ्गल्ये[१] वा ह्रदे तटाकमध्ये वा रात्रौ तेजन[२]तैलाभ्यक्ता नागरूपिणः शक्ति[३]-मुसला[४]न्ययोमयानि निष्पेषयन्तस्तथैव ब्रूयुः ।

२३. अथवा मांगलिक अगाध जलाशय में रात्रि के समय तेजन एवं तैलयुक्त नागरूपी गूढ़ पुरुष लौहमय शक्ति तथा मुसल पीसते हुए पूर्ववत् बोलें।

ऋक्षचर्म[१]कञ्चुकिनो वाऽग्नि[२]धूमोत्सर्गयुक्ता रक्षोरूपं वहन्तस्त्रिरप[३]सव्यं नगरं कुर्वाणाः श्व[४]सृगाल[५]वाशितान्तरेषु तथैव ब्रूयुः ।

२४. अथवा ऋक्ष चर्म का कंचुक धारण किये, अग्नि एवं धूम त्याग करते हुए, राक्षस रूपधारी गूढ़ पुरुष नगर की तीन बार विपरीत (बायें से) परिक्रमा करते हुए श्वान एवं सृगाल शब्दों मध्य पूर्ववत् बोलें।

चैत्यदैवतप्रतिमां वा तेजनतैलेना[१]भ्र[२]पटलच्छन्नेनाग्निना वा रात्रौ प्रज्वाल्य तथैव ब्रूयुः ।

२५. अथवा चैत्य दैवत प्रतिमा को तेजन तैल अथवा अभ्रपटल में प्रच्छन्न अग्नि से रात्रि में प्रज्वलित कर पूर्ववत् बोलें।

पादटिप्पणी :

२२. (१) नैमित्तिक : द्र० १:१२:२३ ।

(२) मौहूर्तिक : द्र० १:१३:२३; १:१९:२३ ।

(३) ख्यापयेयुः : प्रसिद्ध या ज्ञापन करना । द्र० १३:२:३३, ३४ ।

पाठभेद :

'तटाकमध्ये' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में (तटाके मध्ये' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) मङ्गलह्रद : पवित्र सरोवर ।

(२) तेजनतैल : द्र० १२:२:२५; १४:२:२५ ।

(३) शक्ति : एक प्रकार का शस्त्र या लोह दण्ड ।

(४) मुशल : गदा, मूसर । मनुः ६:५६ ।

पाठभेद

'श्व सृगाल' का तंजौर में 'शिवासृगालं', देवनागरी अनुलिपि में 'शिवसृगाल', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शिवास्सृगाल' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) कञ्चुकी : खोल, केंचुल । द्र० १२:२:१ ।

(२) धूमोत्सर्ग : मुख से आग निकालते हुए । आज भी जलूसों तथा रामलीला में राक्षसों के बने स्वरूप वाले मुख से आग निकालते हैं । यह आजकल साधारण बात है । द्र० १४:२:३४ ।

(३) अपसव्य : बायीं तरफ । दाहिने का उल्टा । द्र० १:२०:५ ।

(४) श्व : कुत्ता । द्र० ९:१:२९, १३:२४,

(५) शृगाल : सियार या गीदड़ ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) तेजन तेल : द्र० १४:२:२५ ।

(२) अभ्र : अबरक । द्र० २:१४:३९ गण० ३:१८८ ।

तदन्ये ख्यापयेयुः ।

२६. उसे अन्य गूढ़ प्रसिद्ध करें ।

दैवतप्रतिमानामभ्यर्हितानां वा शोणितेन प्रस्रावमतिमात्रं कुर्युः ।

२७. अथवा पूजित दैवत प्रतिमाओं का अत्यधिक रुधिर स्राव करें अर्थात् उनसे मेष आदि का रुधिर निकालें ।

तदन्ये देवरुधिरसंस्रावे संग्रामे पराजयं ब्रूयुः ।

२८. अन्य गूढ़ पुरुष उस देव रुधिर स्राव के विषय में प्रसिद्धि करें, संग्राम में राजा का पराजय होगा ।

संधि[1]रात्रिषु श्मशानप्रमुखे वा चैत्यमूर्ध्व[2]भक्षितैर्मनुष्यैः प्ररूपयेयुः ।

२९. अथवा गूढ़ पुरुष संधि रात्रियों में श्मशान पर, ऊर्ध्वभक्षित मनुष्यों से युक्त चेत्य (चिता) दिखायें ।

ततो रक्षोरूपी मनुष्यकं याचेत ।

३०. तदनन्तर राक्षस रूपधारी गूढ़ पुरुष मनुष्य की याचना करें ।

यश्चात्र शूर[1]वादिकोऽन्यतमो वा द्रष्टुमागच्छेत्तमन्ये लोहमुसलैर्हन्युः, यथा रक्षोभिर्हत इति ज्ञायेत ।

३१. वीर बनने वाला अथवा अन्य जन देखने के लिए आये, उसे अन्य गूढ़ पुरुष लौह मूसल से मार डालें, जिससे ऐसा लगे राक्षसों द्वारा मार डाला गया ।

तदद्भुतं राज्ञस्तद्दर्शिनः सत्त्रिणश्च कथयेयुः ।

३२. उस अद्भुत घटना को उसे देखने वाले और सत्त्री पुरुष राजा से कहें ।

ततो नैमित्तिकमौहूर्तिकव्यञ्जनाः शान्तिं प्रायश्चित्तं ब्रूयुः 'अन्यथा-महदकुशलं राज्ञो देशस्य च' इति ।

३३. तदनन्तर नैमित्तिक एवं मौहूर्तिक वेषधारी गूढ़ पुरुष शान्ति एवं प्रायश्चित्त को बात राजा से कहें 'अन्यथा प्रायश्चित्त न करने पर, राजा और देश का महान् अनिष्ट होने की बात कह दें' ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) सन्धि रात्रि : पूर्णमासी तथा प्रतिपक्ष की रात्रि ।

(२) ऊर्ध्वभक्षित : मनुष्य को खड़े-खड़े खा जाना । गण० ३:१८८ ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) शूरवादिक : अपने को शौर्यशाली या वीर कहने वाला या बीरता की डींग हांकनेवाला ।

पाठभेद :

'महदकुशलं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में (महदकुलं' पाठभेद मिलता है ।

प्रतिपन्नम् 'एतेषु सप्तरात्रमेकैकेमन्त्रबलि[2]होमं[3] स्वयं राज्ञा कर्तव्यम्' इति ब्रूयुः ।

३४. राजा के स्वीकार करने पर 'उन दुर्निमित्तों के विषय में राजा सात रात्रि पर्यन्त प्रत्ये दुर्निमित्त के लिये मन्त्र जप, बलि उपहार एवं होम करे' इस प्रकार कहें ।

ततः समानम् ।

३५. तदनन्तर पूर्ववत् कार्य करे ।

एतान् वा योगानात्मनि दर्शयित्वा प्रतिकुर्वीत परेषामुपदेशार्थम् ।

३६. अथवा राजा अन्य सहायकों के उपदेशार्थ उन योगों को दिखाकर, शिक्षित करे औरस्व प्रतीकार करें ।

ततः प्रयोजयेद्योगान् ।

३७. तदनन्तर योगों का प्रयोग करे ।

योगदर्शनप्रतीकारेण वा कोशाभिसंहरणं कुर्यात् ।

३८. अथवा योगदर्शन प्रतीकार द्वारा कोश संग्रह करे ।

हस्तिकामं वा नागवनपाला हस्तिना लक्षण्येन प्रलोभयेयुः ।

३९. अथवा हाथी के इच्छुक शत्रु राजा के नाग, वनपाल पुरुष शुभ लक्षण युक्त हाथ द्वारा प्रलोभित करे ।

प्रतिपन्नं[1] गहनमेकायनं[2] वाऽतिनीय घातयेयुः, बद्ध्वा वा ऽपहरेयुः ।

४०. स्वीकृति प्रदान करने पर उसे गहन अथवा एक मार्ग वाले वन में ले जाकर मरव डालें अथवा बांध कर अपहृत कर लें ।

तेन मृगयाकामो व्याख्यातः ।

४१. उस प्रकार मृगया के इच्छुक शत्रु राजा की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

पादटिप्पणो :

३४. (१) एकैक : प्रतिदिन ।

(२) बलि : आहूति, भेंट । मनु० ७:८० रघु० १:१८ ।

(३) होम : यज्ञ ।

३६. (१) परेषाम् : शत्रु ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) संहरण : वृद्धि, संग्रह करना, या बटोरना, या पूर्ण करना । द्र० ५:२:४५ ।

पाठभेद :

'पाला हस्तिना ।' का तेलगू अनुप्रतिलिपि 'पलहस्तिना' पाठभेद मिलता है ।

पार्दटिप्पणी :

४०. (१) प्रतिपन्न : स्वीकृत या स्वी करना ।

(२) एकायन : अकेले जाने योग्य मार्ग रास्ता या जिस मार्ग से केवल एक पंक्ति सेना सकती हो । द्र० १०:२:९, १८, १३:४:२०, २५

द्रव्यस्त्रीलोलुपमा[1]ढ्यविधवाभिर्वा परमरूपयौवनाभिः स्त्रीभिर्दाय[2]नि[3]क्षेपार्थमुपनीताभिः सत्त्रिणः प्रलोभयेयुः ।

४२. अथवा सत्री पुरुष द्रव्य एवं स्त्री लोभी शत्रु राजा को दाय भाग तथा निक्षेप के लिये लायी गयी, सुन्दर रूप यौवन सम्पन्न, धनो विधवा स्त्रियों द्वारा प्रलोभित करे।

प्रतिपन्नं रात्रौ स[1]त्त्रच्छन्नाः समागमे शस्त्ररसा[2]भ्यां घातयेयुः ।

४३. राजा के सहमत होने पर सत्री से सम्बन्धित गूढ़ पुरुष रात्रि में समागम के समय शास्त्र एवं विष द्वारा शत्रु राजा की हत्या करा दे ।

सिद्धप्रव्रजितचैत्यस्तूपदैवतप्रतिमानामभीक्ष्णाभिगमनेषु वा भूमिगृहसुरुङ्गागूढभित्तिप्रविष्टास्तीक्ष्णाः परमभिहन्युः ।

४४. अथवा सिद्ध पुरुष, प्रव्रजित, चैत्य, एवं स्तूप दैवत प्रतिमाओं के दर्शनार्थ बार-बार जाने के समय भूमि गृह सुरंग ग़ढ़ भित्तियों में प्रविष्ट तोक्ष्ण पुरुष शत्रु की हत्या कर दें ।

येषु देशेषु याः प्रेक्षा[1] प्रेक्षते पार्थिवः स्वयम् ।
या[2]त्रावि[3]हारे रमते यत्र क्रीडति वा ऽम्भ[4]सि ।।

४५. जिन देशों में राजा स्वयं जिन प्रेक्षाओं को देखता है, यात्रा विहार में रमण करता है अथवा जहाँ जल में क्रीड़ा करता है—

पाठभेद :

'आढचविधवा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आध्यविधवा' तथा 'यौवनाभिः' का तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'यौवनामिः' पाठभेद मिलता है। तथा 'दायनिक्षेप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दायादनिक्षेपा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४२. (१) आढ्य : सम्पन्न, धनी । द्र० ३:९:५ ८, ६३ ।

(२) दाय : उत्तराधिकारित्व ।

(३) निक्षेप : अमानत, धरोहर । द्र०४:३:१७, २:२:४७, ५५, २:१४:५ ।

पाठभेद :

'सत्त्रच्छन्नाः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सत्त्रिच्छन्नाः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) सत्रच्छन्न : द्र० १०:३:१५, १८, २४, ८:४४:४१; ७:५:११, १३:२:५० ।

(२) रस : विष । द्र० ५:१:७, ३१, ९:५:१५, ११:१:२८, २:१२:२ ।

पाठभेद :

'यत्र क्रीडति' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यत्राक्रीडति' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'यात्राक्रीडति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) प्रेक्षा : नाटक, अभिनय, तमाशा । द्र० २:२७:२६, ३:३:२२, ३:१०:३६ ५:१:१७, १३:२:४, गण० ३:१८५, १९० ।

(२) यात्रा : द्र० १:९:३८, ७:५:२२, १२:५:१ ।

(३) विहार : मनोरंजन, खेल, क्रीड़ा । द्र० १:१०:१३, २:३:३ ।

(४) अम्भि : जल ।

धिगुक्त्योदिषु सर्वेषु यज्ञप्रह्वणेषु[2] वा ।
सूतिकाप्रेतरोगेषु प्रीतिशोकभयेषु वा ॥

४६. सब प्रकार की धिगुक्तियों अथवा यज्ञ प्रह्वणों में अथवा सूतिका, मृत एवं रोगों से सम्बन्धित प्रीति, शोक एवं भय में प्रसक्त होता है—

प्रमादं याति यस्मिन् वा विश्वासात्स्वजनोत्सवे ।
यत्रास्यारक्षिसंचारो दुर्दिने संकुलेषु वा ॥

४७. अथवा विश्वास वश जिस स्वजनोत्सव प्रमाद युक्त होता है, जहाँ रक्षा पुरुष रहित होकर जाता है, अथवा दुर्दिन, जन संकुल,

विप्रस्थाने प्रदीप्ते[2] वा प्रविष्टे निर्जनेऽपि वा ।
वस्त्राभरणमाल्यानां फेलाभिः शयनासनैः ॥

४८. विप्रस्थान, प्रदीप्त (आग लगने पर) या निर्जन में प्रवेश करने पर, वस्त्र, आभरण एवं माल्य के युक्त अवशेषों से, शयन-आसनों से—

मद्यभोजनफेलाभिस्तूर्यौर्वाऽभिगता: सह ।
प्रहरेयुररितीक्ष्णाः पूर्वप्रणिहितैः सह ॥

४९. मद्य-भोजनों के अवशेषों से प्रसन्न संज्ञातूर्य वादकों एवं पूर्व युक्त गूढ़ पुरुषों के साथ तीक्ष्ण पुरुष शत्रु पर प्रहार करें।

पाठभेद

'धिगुक्त्यादिषु सर्वेषु' का श्रीमूल में 'चाटूक्त्यादिषु कृत्येषु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) धिगुक्त्या : धिक्कारोक्ति, उपालम्भ ।
(२) प्रवहण : उत्सव या मेला । द्र० १:१०:९, १:२१:२८, गण० २:३५६, ३:१७७, १८५ ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) विप्रस्थाने : गलत रास्ता से जाना या मार्ग भूल जाना । गण० ३:१९० ।
(२) प्रदीप्त : आग ।

पाठभेद :

'मद्यभोजन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में मध्य भोजन' तथा 'ऽभिगताः सह' का 'भिहृतैः सह' तथा 'अरि तीक्ष्णः' का तंजौर में 'अरिस्तीक्ष्णाः" तथा देवनागरी तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अरींस्तीक्ष्णा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) फेला : टोकरी, बक्सा, मंजूषा । द्र० ७:१७:३९, ४०, १३:२:४७, ४९ । गण० २:३५५, ३:१९० ।

यथैव प्रविशेयुश्च द्विषतः सत्त्रहेतुभिः ।
तथैव चापगच्छेयुरित्युक्तं योगवामनम् ॥

५०. सत्त्री जिस प्रकार शत्रुओं में छलकपट पूर्वक प्रवेश करें, उसी प्रकार उनसे निकल आयें, इस प्रकार योग वामन का कथन किया गया ।

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे योगवामनम् द्वितीयोऽध्यायः ।
आदितो द्विचत्वारिंशच्छततमः ।

तेरहवें अधिकरण में दुर्गलम्भोपाय के अन्तर्गत योग वामन सम्बद्ध द्वितीय अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ बयालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) योग वामन : द्र० १२:२:८, १२:४:२९ । गण० ३:१५९, १७२:१८५ ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः योगवामनम् आदितो द्विचत्वारिंशच्छततमः ॥

मैसूर संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपायेयोगवामनं द्वितीयोऽध्यायः आदितो द्विचत्वारिंशच्छततमः ।

वसाकसंस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः योगवामनं आदितो द्विचत्वारिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे योगवामनं द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ आदितो द्विचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥१४२॥

अध्याय ३

[त्रिसप्ततिशततमं प्रकरणम्—अपसर्पप्रणिधिः]

एक सौ तिहत्तरवाँ प्रकरण—अपसर्पप्रणिधि

श्रेणी[1]मुख्यमाप्तं[2] निष्पातयेत[3] ।

१. विश्वस्त श्रेणी प्रमुखको निष्कासित करे ।

स परमाश्रित्य पक्षापदेशेन[1] स्वविषयात्[2]साचिव्य[3]करसहायोपादानं कुर्वीत ।

२. वह शत्रु का आश्रय प्राप्त कर, उसके कार्य के ब्याज से अपने देश से सहायक सामग्रियों का संग्रह करे ।

कृतापसर्पो[1]पचयो[2] वा परमनुमान्य स्वामिनो दूष्यग्रामं वीत[3]हस्त्यश्वं दूष्यामात्यं दण्डमाक्रन्दं[4] वा हत्वा परस्य प्रेषयेत् ।

३. गूढपुरुष का संग्रह करके, शत्रु की अनुमति पूर्वक स्वामी के दूष्य वर्ग, हाथी-घोड़ा रहित, दूष्यअमात्ययुक्त दण्ड एवं आक्रन्द को जीतकर शत्रु के पास भेजे ।

पादटिप्पणी :

१. (१) श्रेणी : द्र० २:४:२६, ४:१:२:३, ८:४:२७, ६:१:८, ५:३:९, ७:१४:२७, १०:१:८ गण० १:१२९ ।

(२) आप्त : विश्वसनीय । द्र० १:२१:१८, ९:६:४० ।

(३) निष्पातयेत् : ३:१:३३, ३७, ३:३:७, ९:६:३५ ।

पाठभेद :

'साचिव्यकर' का श्रीमूल में 'साचिव्यकरण' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) पक्षापदेशेन : अपने पक्ष के ब्याज से ।

(२) स्वविषय : विजीगीषु का विषय या देश या जिला ।

(३) साचिव्य : सहायक, सहायता देने वाला या मंत्री । द्र० १३:१:९, गण० ३:१८४ ।

पाठभेद :

'कृतापसर्पो' का तंजीर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कृतोपसर्पों' तथा 'हस्त्यश्वं इष्या' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हस्त्यश्वइष्या' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३. (१) अपसर्प : गुप्तचर, गूढ़पुरुष । द्र० १:१२:१७, २५, गण० १:२३, ३:१०२ ।

(२) उपचय : एकत्रित चयन करना या बढ़ाना ।

(३) वीत : रहित या शून्य । द्र० १०:४:४९ ।

(४) आक्रन्द : पृष्ठ भाग का मित्र, आमन्त्रित करना या बुलाना । द्र० ६:२:१८: १:१६:२९, गण० १:८१, २:३२, ३:१९२ ।

जनपदैकदेशं[1] श्रेणीमटवीं वा सहायोपादानार्थं° संश्रयेत्[2] ।

४. जनपद के एक देश श्रेणी अथवा आटविक का आश्रय (सम्बन्ध) सहायक सामग्री के लिये प्राप्त करे ।

विश्वासमुपगतः स्वामिनः[1] प्रेषयेत्[2] ।

५. विश्वास प्राप्त कर लेने पर, उन्हें स्वामी के पास प्रेषित करे ।

ततः स्वामी हस्तिबन्धनमटवीघातं वाऽपदिश्य गूढमेव प्रहरेत्[1] ।

६. तत्पश्चात् स्वामी हस्तिबन्धन अथवा आटविक आघात के ब्याज से गुप्त रूप से शत्रु पर प्रहार करे ।

एतेनामात्याटविका व्याख्याताः ।

७. उस प्रकार अमात्य एवं आटविक के गूढ़पुरुष के रूप में शत्रु देश में प्रेषण की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

शत्रुणा मैत्रीं कृत्वाऽमात्यानवक्षिपेत्[1] ।

८. शत्रु से मित्रता करके, अमात्यों का धिक्कृत करे ।

ते तच्छत्रोः प्रेषयेयुः 'भर्तारं नः प्रसादय[1] इति ।

९. वे उसके शत्रु को सन्देश दें 'मेरे स्वामी को प्रसन्न कर दें' ।

पाठभेद :

'सहायोपादानार्थं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सहायोपदानार्थं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) एकदेश : देश का एक भाग । द्र० ५:४:१६, ५:५:३४, ८:४:७ ।

पादटिप्पणी :

(२) संश्रय : आश्रय । द्र० ७:१:१०, ७:१:१७ ९:३:३०, गण० २:२३७ ।

पादटिप्पणी :

५. (१) स्वामी : विजीगिषु ।

(२) प्रेषयेत् : भेजना । द्र० १२:५:२३, ९:१०:१७ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) प्रहरेत् : आक्रमण या प्रहार करे ।

पादटिप्पणी :

८. (१) अवक्षिपेत् : तिरस्कृत या धिक्कारा या कर्मच्युत, फेकना, त्यागना, विसर्जित अपदस्थ करना । द्र० १:१:२ । गण० ३:१४७ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) प्रसादय : प्रसन्न या सन्तुष्ट करना ।

स यं दूतं प्रेषयेत्, तमुपालंभेत 'भर्ता ते माममात्यैर्भेदयति, न च पुनरिहागन्तव्यम्' इति ।

१०. वह शत्रु जिस दूत को भेजे, उस दूत की विजिगीषु निन्दा करे 'तुम्हारा स्वामी (मेरे) मन्त्रियों से मेरा मत भेद कर रहा है, पुनः तुम यहाँ न आना' ।

अथैकममात्यं निष्पातयेत् ।

११. उसके पश्चात् एक अमात्य को निकाल दे ।

स परमाश्रित्य योगा[1]पसर्पा[2]परक्त[3]दूष्यानशक्तिमत[4]ः स्तेनाटविकानुभयोपघातकान् वा परस्योपहरेत् ।

१२. वह शत्रु का आश्रय प्राप्त कर, कपट गूढ पुरुषों, अपरक्त पुरुषों, दूष्यपुरुषों, शक्ति रहित चोर-आटविकों अथवा उभयपक्षघातकों को शत्रु के समीप ले जाय ।

आप्त[1]भावोपगतः प्रवीर[2]पुरुषोपघातमस्योपहरेद् अन्त[3]पालमाटविकं दण्ड[4]चारिणं वा 'हठसौ चासौ च ते शत्रुणा संधत्ते' इति ।

१३. वह शत्रु का विश्वासपात्र बनकर, उसके वीर पुरुषों का निम्न प्रकार से घात करे । अन्तपाल, आटविक अथवा दण्डचारी पर दोष लगाये 'वह तथा वह तुम्हारे शत्रु से सन्धियुक्त है'

पाठभेद :

'दू यं इतं' तथा 'उपालभेत' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्वयं दू इतं' तथा 'उपालभेत' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उपालम्भेत' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी

१०. (१) उपालम्भ : उलहना । द्र० २:१०: २३, ३१ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) अथैकममात्य : द्र० ९:६:२५, ४१ ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) योग : १:१८:९, १३:३:५४, ५६, १:५:१६, १:१६:३४, ५:१:५४, ५:६:४८, ७:६:४१ ९:१:१५, १२:४:२९, गण० १:१३ २:२३०, ३:१७२, १८२ ।

(२) अपसर्प : गुप्तचर, गुप्त प्रतिनिधि, गूढ़ पुरुष । द्र० १:१२:१७,२५, गण० १:२३, ३:१०५।

(३) अपरक्त : असन्तुष्ट । गण० ३:१९३ ।

(४) अशक्तिमतः : शक्ति शून्य, शक्ति हीन।

पाठभेद :

'आटविकंदण्ड' का तंजौर में 'आटविकदण्ड' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) आप्त : विश्वास । द्र० १:२१:१८।

(२) प्रवोर : उत्तम, श्रेष्ठ, शौर्य सम्पन्न। गण० ३:१९३ ।

(३) अन्तपाल : सीमान्त अधिकारी । द्र० ९:३:२२, गण० १:५७, ३:३० ।

(४) दण्डचारिण : सेना का नेता या अधिकारी । गण० ३:१९३ ।

अथ पश्चादभित्यक्तशासनैरेनान् घातयेत् ।

१४. उसके अनन्तर विजिगीषु के बध्य पुरुषों द्वारा उपलब्ध कराये गये, मैत्री प्रकाशक कूट लेखों के व्याज से इन्हें मरवा डाले ।

दण्डबलव्यवहारेण वा शत्रुमुद्योज्यं घातयेत् ।

१५. अथवा दण्ड बल सहायता का वचन देकर, शत्रु को उसके शत्रु से भिड़ा दे और सहायता न देकर, उसका नाश करा दे ।

कृत्यपक्षोपग्रहेण वा परस्यामित्रं राजानमात्मन्यपकारयित्वाऽभियुञ्जीत ।

१६. अथवा कृत्य पक्ष को अनुकूल करके, शत्रु के शत्रु राजा द्वारा अपना अपकार करा कर, युद्धोद्योग करे ।

ततः परस्य प्रेषयेत् 'असौ ते वैरी ममापकरोति, तमेहि संभूय हनिष्यावः, भूमौ हिरण्ये वा ते परिग्रहः' इति ।

१७. तदनन्तर शत्रु को सन्देश प्रेषित करे 'वह तुम्हारा शत्रु मेरा अपकार करता है, आओ हम दोनों मिलकर, उसे मार डालें, भूमि अथवा हिरण्य में तुम्हारा भाग होगा' ।

प्रतिपन्नमभिसत्कृत्यागतमवस्कन्देन प्रकाशयुद्धेन वा शत्रुणा घातयेत् ।

१८ उसके सहमत होने पर, आने पर, सत्कार करके, शयन काल में मरवा दे अथवा प्रकाश युद्ध में शत्रु द्वारा वध करा दे ।

अभिविश्वासनार्थं भूमिदानपुत्राभिषेकरक्षापदेशेन वा ग्राहयेत् ।

१९. विश्वास के लिये भूमिदान, पुत्र के अभिषेक अथवा रक्षा के व्याज से शत्रु को ग्रहण करा दे ।

पाठभेद :

'अभित्यक्त' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिव्यक्त' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१४. शासन : आज्ञापालन । द्र० १:१६:२२, २:१०:१, २:२:९, ३७, २:२८:२० । गण० ३:१९३ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) दण्डबल व्यवहार : सैनिक शक्ति का प्रयोग । द्र० ८:१:३४,३८ ९:२:४, गण० ३:५२ ।

(२) उद्योज्य : उद्वेजित करना या उभाड़ना । द्र० १:४:८ ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) कृत्यपक्ष : क्रुद्ध, लुब्ध तथा भीत वर्ग । द्र० १:१२:२५, १:१४:६, गण० ३:१६५, २०९ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) परिग्रह : भाग या हिस्सा, लेना; स्वीकार करना । द्र० २:६:६, २:२६:१, २:३६:२२, २८, ३७, १२:२:३३: ३:९:१, ५:६:४६ ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) प्रकाशयुद्ध : खुला युद्ध । द्र० ७:६:१७, ४०, गण० २:११६ ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) अपदेश : बहाना, छल, ब्याज । द्र० ४:८:२, ५:६:१० ।

अविषह्यमुपांशुदण्डेन वा घातयेत् ।

२०. अथवा अविषह्य (ग्रहण करने योग्य न होने पर) शत्रु का उपांशुदण्ड द्वारा घात करा दे ।

स चेद्दण्डं दद्यान्न स्वयमागच्छेत्तमस्य वैरिणा घातयेत् ।

२१. यदि वह दण्ड (सेना) दे और स्वयं न आये, तो उसकी सेना को शत्रु द्वारा नष्ट करा दे।

दण्डेन वा प्रयातुमिच्छेन्न विजिगीषुणा तथाप्येनमुभयतः संपीडनेन घातयेत् ।

२२. यदि वह अपने बल के साथ जाना चाहता हो और विजिगीषु के साथ न जाना चाहे तो दोनों ओर से पीडित कर, उसका नाश करे ।

अविश्वस्तो वा प्रत्येकशोयातुमिच्छेद्राज्यैकदेशं वा यातव्यस्यादातुकामः तथाऽप्येनं वैरिणा सर्वसंदोहेन वा घातयेत् ।

२३. अथवा यदि अविश्वास के कारण शत्रु एकाकी स्वबल के साथ इस इच्छा से आक्रम करने की इच्छा करे कि वह यातव्य के राज्य का एक भाग स्वयं ग्रहण कर लेगा, तो भी उसे द्वारा अथवा अपने समग्रबल द्वारा नष्ट करा दे ।

वैरिणा वा शक्तस्य दण्डोपनयेन मूलमन्यतो हारयेत् ।

२४. अथवा वैरी के साथ युद्धरत शत्रु के मूल स्थान पर, सैन्य प्रेषित कर, हरण करा दे अर्था वहाँ विनाश कर दे ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) अविषह्य : अनाक्रमणीय, अनाक्रम्य, किसी प्रकार काबू में न आने वाला । द्र० ७:७:२, ७:१२:२, १२:१:९, ३:१०:८, ३:१५, १:४:९ । गण० ३:१९१ ।

(२) उपांशुदण्ड : चुपचाप गुप्त दण्ड देना । द्र० २:१३:२०, १:१७:६ । गण० ३:१३३, १४४, १९४ ।

भेदपाठ :

'चेद्दण्डं दद्यान्न' का तंजौर में 'चेद्यान्न' पाठभेद मिलता है । तथा 'वैरिणा' का त्रिवैन्द्रम् में 'वैरि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) उभयत : दोनों तरफ से। ग ३:१९४ ।

पाठभेद :

'द्राज्यैकदेशं' का देवनागरी अनुलिपि में ' ज्यैकदेषं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. संदोह : सैन्य सज्जा या मोबिलाइ या सैन्य परिचालन । द्र० ६:३:८, ७:४:७, १ ४, ७:१३:५, ९:७:५५, १२:१:३, १३:३:२३।

शत्रुभूम्या वा मित्रंपणेत, मित्रभूम्या वा शत्रुम् ।

५. अथवा शत्रु भूमि प्रदान करने की शर्त पर, मित्र से अथवा मित्र भूमि प्रदान करने की शर्त पर, शत्रु से सन्धि करे ।

ततः शत्रुभूमिलिप्सायां मित्रेणात्मन्यपकारयित्वाऽभियुञ्जीत—इति समानाः पूर्वेण सर्व एव योगाः ।

२६. तदनन्तर शत्रु की भूमि लेने की इच्छा होने पर, मित्र द्वारा अपने ऊपर अपकार कराकर, उस पर आक्रमण करे, तत्पश्चात् पूर्ववत् सब कार्य करे ।

शत्रुं वा मित्रभूमिलिप्सायां प्रतिपन्नं दण्डेनानुगृह्णीयात् ।

२७. मित्र भूमि ग्रहण के लिये शत्रु के इच्छुक होने पर, सैन्य प्रदान द्वारा अनुगृहीत करे ।

ततो मित्रगतमतिसंदध्यात् ।

२८. तदनन्तर मित्र पर, आक्रमण करने पर, मित्र के साथ होकर, उसका घात करे ।

कृतप्रतिविधानो वा व्यसनमात्मनो दर्शयित्वा मित्रेणामित्रमुत्साहयित्वा आत्मानमभियोजयेत् ।

२९. अथवा समुचित रक्षा विधान करके, अपना संकट दिखाकर, मित्र द्वारा शत्रुको प्रोत्साहित करके, अपने ऊपर आक्रमण कराये ।

ततः संपीडनेन घातयेत्, जीवग्राहेण वा राज्यविनिमयं कारयेत् ।

३०. तत्पश्चात् दोनों घोर से पीडित कर, मरवा डाले अथवा जीवित ग्रहण कर, राज्य विनिमय कराये ।

पादटिप्पणी :

२५. पणेत : सौदा या मोल भाव ।

पादटिप्पणी :

२६. योग : कपटोपाय, कौशल, प्रयोग या न्याय-काम में लगाना । द्र० १:१८:९, १३:३:५४ २६, १:५:१६, १:६:३४, ५:१:५४, ५:४:४८, ५:६:४१, ९:१:१५ ।

पाठभेद :

'मित्रगतमतिं' का तंजौर में 'मित्रं तमति' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मित्रमति' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'कृतप्रतिविधानो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ततः प्रतिविधानेन' पाठभेद मिलच है ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) संपीडन : अपने तथा अपने मित्र के बीच दबाव या क्षुब्ध करना ।

(२) विनिमय : अदला बदली या प्रतिदान ।

मित्रेणाश्रित[1]श्चेच्छत्रुरग्राह्यो[2] स्थातुमिच्छेत् सामन्ता[3]दिभिर्मूल[4]मस्य हारयेत् ।

३१. यदि मित्र द्वारा शरण प्राप्त शत्रु अग्राह्य होकर, स्थित रहना चाहे, तो सामन्त आदि द्वारा इसके मूल का हरण करा दे ।

दण्डेन वा त्रातु[1]मिच्छेत् तमस्य घातयेत् ।

३२. अथवा दण्ड (सेना) से रक्षा करना चाहे, तो वह उस सेना को नष्ट करा दे ।

तौ[1] चेन्न भिद्येयातां प्रकाशमेवान्योन्य[2]भूम्या पणेत[3] ।

३३. यदि दोनों (शत्रु, मित्र) भेद युक्त न हों, तो प्रकट रूप से एक दूसरे की भूमि से एक-दूसरे के साथ सन्धि करे ।

ततः परस्परं मित्र[1]व्यञ्जना वा उभयवेतना[2] वा दूतान् प्रेषयेयुः 'अयं ते राजा भूमिं लिप्सते शत्रुसंहितः[3]' इति ।

३४. तदनन्तर मित्र और शत्रु के पास मित्र वेषवाले अथवा उभय पक्ष से वेतन प्राप्त करने वाले गूढपुरुष निम्न सन्देश के साथ दूत प्रेषित करें, 'यह राजा शत्रु से मिलकर तुम्हारी भूमि ग्रहण करना चाहता है ।'

पाठभेद :

'मित्रेणाश्रित' का श्रीमूल में 'मित्रेणाहूत' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) आश्रित : मित्र द्वारा शरण दिला कर ।

(२) अग्राह्य : ग्रहण के अयोग्य । द्र० २:३:१४, ३:११:२२, १२:१:१६ ।

(३) सामन्त : पड़ोसी राजा ।

(४) मूल : राजधानी केन्द्र । द्र० ७:२:१४, ७:३:३३, ७:८:५, २:९:२०, ८:३:६६, ८:५:१०, ९:७:५५ ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) त्रातुम् : रक्षा करना ।

पाठभेद :

'अन्योन्य' का 'अन्योन्यस्य' तथा 'भूम्या' का 'भूम्या' पाठभेद तेलगू अनुप्रतिलिपि में मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) तौ : शत्रु तथा उसके मित्र से तात्पर्य है ।

(२) अन्योन्य : परस्पर एक दूसरे से ।

(३) पणेत : सौदा करना या लेन देन करना । द्र० ७:७:८, ७:७:१२ ।

पाठभेद :

'मित्रव्यञ्जना वा उभय' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मित्रध्यञ्जनोभय' तथा 'वेतना वा' का 'वेतनान्वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) मित्रव्यञ्जन : मित्र बना । द्र० ९:५:३१, ३७ ।

(२) उभयवेतन : दोनों तरफ से वेतन लेने वाला । द्र० १:१२:१८, १:१६:३४, ७:१४:६, ८ ।

(३) शत्रु संहितः : शत्रु से मिला । गण० १:६० ।

तयोरन्यतरो जाताशङ्कारोषः, पूर्ववच्चेष्टेत ।

३५. उन दोनों में जब कोई एक शंका-रोषयुक्त हो और पूर्ववत् चेष्टा करे, तो पूर्ववत् उससे आक्रमण करा कर, उसे नष्ट करा दे ।

दुर्गराष्ट्रदण्डमुख्यान् वा कृत्यपक्षहेतुभिरभिविख्याप्य प्रव्राजयेत् ।

३६. अथवा दुर्ग प्रमुख, राष्ट्र प्रमुख एवं दण्ड प्रमुखों को कृत्यपक्ष को साहाय्यदान करना प्रख्यात कर, देश से निर्गत करा दे ।

ते युद्धावस्कन्दावरोधव्यसनेषु शत्रुमतिसंदध्युः ।

३७. वे शत्रु के आश्रित रहकर युद्ध अवस्कन्द, अवरोध सम्बन्धी आपदा के समय शत्रु का नाश कर दें ।

भेदं वाऽस्य स्ववर्गेभ्यः कुर्युः ।

३८. अथवा शत्रु का अपने वर्ग से भेद करा दें ।

अभित्यक्तशासनैः प्रतिसमानयेयुः ।

३९. वध्यजनों द्वारा आनीत कपट लेखों से अपने मिथ्या कथन को प्रमाणित करे ।

पाठभेद :

'जाताशङ्कारोषः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'जातशङ्कारोषः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) जाताशंकारोष : शंकितचित्त तथा रोषयुक्त ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) कृत्यपक्ष : क्रुद्ध, लुब्ध तथा भीत वर्ग ।

(२) प्रव्राजयेत् : बाहर निकालना ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) अवरोध : घेरा डालना । द्र० १२:५:१ ।

(२) व्यसन : आपदा । द्र० ३:१४:३ । गण० ३:२ ।

पाठभेद :

'अभित्यक्त' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिव्यक्त' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) अभित्यक्त : अपराधी जिसे वध का दण्ड दिया गया हो । द्र० २:५:४, ५:२:४४, ५५, ६५, १२:४:७, गण० ३:१९६ ।

(२) शासन : मन्त्र, सन्देश ।

लुब्धक[1]व्यञ्जना वा मांसविक्रयेण द्वाःस्था दौवारिकापाश्रयाश्चोराभ्यागमं परस्य द्विस्त्रिरिति निवेद्य लब्धप्रत्यया भर्तुरनीकं[2] द्विधा निवेश्य ग्रामवधे[3]ऽवस्कन्दे च द्विषतो ब्रूयुः 'आसन्नश्चोरगणः, महांश्चाक्रन्दः, प्रभूतसैन्यमागच्छतु' इति ।

४०. अथवा लुब्धक वेष धारी गूढ पुरुष मांस विक्रय के व्याज से द्वार पर, स्थित होकर, द्वारपालों का आश्रय प्राप्त कर, चोरों के आने की बात शत्रु से दो-तीन बार निवेदित करें, विश्वास प्राप्त होने पर, स्वामी की सेना को ग्रामवध और अवस्कन्द के लिये दो भागों में विभक्त कर, शत्रु से कहें—'चोर गण आसन्न हैं, महान् आक्रन्द उपस्थित है, प्रचुर सेना (हमारे साथ) आये' ।

तद[1]र्पयित्वा ग्रामघात[3]दण्डस्य, सैन्यमितर[2]दादाय रात्रौ दुर्गद्वारेषु ब्रूयुः 'हतश्चोरगणः, सिद्धयात्रमिदं सैन्यमागतम्, द्वारमपाव्रियताम्' इति ।

४१. वह सेना ग्रामघात रक्षार्थ नियुक्त सेना को समर्पित कर, दूसरी सेना साथ लेकर, रात्रि में दुर्गद्वार पर, इस प्रकार कहे—'चोरगण मारे गये, यात्रा सफल कर, यह सेना आ गयी है, द्वार खोला जाय' ।

पूर्वप्रणिहिता[1] वा द्वाराणि दद्युः ।

४२. अथवा पूर्वनियुक्त गूढ पुरुष द्वार खोल दें ।

तैः सह प्रहरेयुः ।

४३. उनके साथ दुर्ग पर, आक्रमण करें ।

कारुशिल्पिपाषण्डकुशीलववैदेहकव्यञ्जनानायुधीयान् वा परदुर्गे प्रणिदध्यात् ।

४४. (अथवा) कारु, शिल्पी, पाषण्ड, कुशीलव, वैदेहक अथवा आयुधीय वेष धारण करने वाले गूढ पुरुषों को शत्रु के दुर्ग पर नियुक्त करे ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) लुब्धक : व्याध, बहेलिया, शिकारी । द्र० ३:४:२२, गण० ३:१९६ ।

(२) अनीक : सेना ।

(३) ग्रामवध : ग्राम या नगर को नष्ट करना ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) तद : शत्रु की बड़ी सेना या बल ।

(२) इतरद : अवस्कन्द के लिए प्रयोग हुआ है ।

(३) ग्रामघात : ग्राम, गांव या नगर का नाश करना ।

पाठभेद :

'पूर्वप्रणिहिता' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रणिहिता' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) प्रणिहिता : गुप्त रूप से नियुक्त या सेवा में रखा हुआ । द्र० ९:३:३ ।

पाठभेद :

'व्यञ्जनानायुधीयान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्यञ्जननायुधीयान्' पाठभेद मिलता है ।

तेषां गृहपतिकव्यञ्जनाः काष्ठतृणधान्यपण्यशकटैः प्रहरणा[१]वरणा[२]न्यभिहरेयुः, देवध्वज[३]प्रतिमाभिर्वा ।

४५. उनमें गृहपति वेषी गूढपुरुष काष्ठ, तृण, धान्य एवं पण्य वाहनों द्वारा प्रहरण, आवरण (कारु आदि) को उपलब्ध कराये अथवा देवध्वज प्रतिमाओं के साथ प्रहरणादि उपलब्ध करायें ।

ततस्तद्व्यञ्जनाः प्रमत्तवधमवस्कन्दप्रतिग्रहमभिप्रहरणं पृष्ठतः शङ्खदुन्दुभिशब्देन वा 'प्रविष्टम्' इत्यावेदयेयुः ।

४६. तदनन्तर तत् तद् वेषधारी गूढ पुरुष प्रमादियों का वध, हठात् आक्रमण एवं सब ओर से प्रहार पीछे के ओर उपस्थित होने का समाचार शंख एवं दुन्दुभिशब्द से निवेदित करें ।

प्राकारद्वाराट्टालक[१]दानमनीक[२]भेदं घातं वा कुर्युः ।

४७. तदनन्तर (गूढपुरुष) प्राकार, द्वार एवं अट्टालकखण्डन अनीकभेद अथवा धात करें ।

सार्थ[१]गणवासिभिरातिवाहिकैः[२] कन्या[३]वाहिकैरश्वपण्यव्यवहारिभिरुपकरणहारकैर्धान्यक्रेतृविक्रेतृभिर्वा प्रव्रजितलिङ्गि[४]भिर्दूतैश्च दण्डातिनयनं[५]; संधिकर्म विश्वासनार्थम् ।

४८. सार्थगण के मध्य रहने वाले आतिवाहिक, कन्या वाहिक, अश्वपण्यव्यापारी, उपकरण हारक, धान्य क्रय-विक्रय कारी, अथवा प्रव्रजित वेषधारी दूतों द्वारा शत्रु सैन्य का दूरनयन तथा विश्वासार्थ सन्धिकर्म का पालन किया जाय ।

पाठभेद :

'प्रहरणावरणनि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रहरणवारणानि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५ (१) प्रहरण : अस्त्र-शस्त्र । गण० ३:५७, गण० ३:१२५, १४२ ।

(२) आवरण : कवच । द्र० ७:१५:८ । गण० ३:५७, १२५, २०० ।

(३) देवध्वज : झण्डा या पताका ।

पाठभेद :

'घातं वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पातं वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) आट्टलक : बुर्ज ।

(२) अनीक : सेना या सैन्य पंक्ति । द्र० १३:७:४० । भाग०

पाठभेद

'धान्यकेतृ' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धान्यक्रेतृभि' तथा 'दूतैश्च' का 'द्यूतैश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) सार्थ : कारवां । द्र० ४:५:१५, १३:३:५१ । म० भा० ३:६४, ११, रघु० ७:६४ । गण० ३:११३, ३:१७८ ।

(२) अतिवाहक : व्यापारियों के रक्षक वर्ग या रक्षक । द्र० ३:१६:१८, २:२८:२५ ।

(३) कन्या : कन्यावाहिक, दुलहन के साथ आने वाले लोग ।

(४) लिङ्ग : चिन्ह । ३:२:१०,१७, २:२९:३६; ३:१३:१४ ।

(५) अतिनयनम् : गुप्त रूप से लाकर । द्र० ७:१४:२४, १३:३:४० ।

इति राजापसर्पाः[1] ।

४९. राज—अपसर्प प्रसंग समाप्त ।

एत एवाटवीनामसर्पाः कण्टकशोधनोक्ताश्च ।

५०. यहाँ तथा कण्टकशोधन में कहे गये, गूढ पुरुष आटविकों के विषय में भी ज्ञातव्य हैं ।

व्रज[1]मटव्यासन्न[2]मपसर्पाः[3] सार्थं[4] वा चोरैर्घातयेयुः ।

५१. अपसर्प (गूढपुरुष) अटवीके समीपवर्ती व्रज अथवा सार्थ को चोरों के साथ मिलकर नष्ट करें ।

कृतसंकेतमन्नपानं चात्र मदनरसबिद्धं वा कृत्वाऽपगच्छेयुः ।

५२. पूर्वनिश्चित संकेतानुसार अन्नपान मदकारी द्रव्ययुक्त कर, पलायित हो जांय ।

गोपालकवैदेहकाश्च ततश्चोरान्[1] गृहीतलोप्त्र[2]भारान्[3] मदनरसविकारकालेऽवस्कन्दयेयुः ।

५३. तदनन्तर गोपालक और वैदेहक चोरी का माल लिये, चोरों को मदनरसविकार के समय पकड़ ले ।

संकर्षण[1]दैवतीयो वा मुण्डजटिलव्यञ्जनः प्रहवणकर्मणा मदन[2]रसयोगेन[3]ातिसंदध्यात् ।

५४. अथवा संकर्षण को देव मानने वाला मुण्ड एवं जटिल वेषधारी गुप्तचर भोजन-पान काल में मदन रस का योग कर उन्हें छले ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) अपसर्प : गुप्तचर या गुप्त प्रतिनिधि या एजेन्ट । द्र० १:१२:१७, २५ ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) व्रज : पशुओं का समूह । द्र० ७:१४:२५, ७:१६:५, गण० ३:१३३ ।

(२) आसन्न : निकटवर्त्ती ।

(३) अपसर्प : गुप्तचर । द्र० १:१२:१७ ।

(४) सार्थ : कारवां । ४:५:१५, १३:३:४८, गण० ३:११३, १९८ ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) चोरान् : चोरों, लुटेरों ।

(२) तलोप्त्र : चुराई गयी वस्तु । द्र० ४:५:१७, १३:३:५३ । गण० ३:१९९ ।

(३) भार : बोझ । द्र० २:१९:१९: ।

पाठभेद :

'संकर्षणदैवतीयो वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में संकर्षणदैवतीयोगा वा' तथा 'व्यञ्जनः' का व्यञ्जनाः' तथा 'योगेगातिसंदध्यात्' का 'योगामतिसंदध्यात्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५४ (१) संकर्षण : बलभद्र या बलराम ।

(२) मदनरस : कामोत्तेजक । १:१८:१९, ४:३:२८, ४:५:१६, ११:१:२४, १३:३:५६ ।

(३)योग : द्र० १:१८:९, १:२:१६, १:१६:३४, १:१:५४, ५:६-४८, ८:६:४४, ९:१:१५, १३:४:२९, १३:३:५६ । गण० १:१३, ६:१७२, १८२ ।

अथावस्कन्दं[1] दद्यात् ।

५५. इसके अनन्तर आक्रमण करे ।

शौण्डिकव्यञ्जनो वा दैवतप्रेत[1]कार्योत्सवसमाजेष्वाटविकान् सुराविक्रयोपायन[2]निमित्तं मदनरसयोगेनातिसंदध्यात् ।

५६. अथवा सुरा विक्रेता के वेषवाला गूढ पुरुष देवकार्य, प्रेतकार्य, उत्सव एवं अन्य सामाजिक अवसरों पर आटविकों को सुरा विक्रयोपायन को निमित्त बनाकर, मदनरस प्रयोग से उन्हें छले ।

अथावस्कन्दं दद्यात् ।

५७. अनन्तर आक्रमण करे ।

ग्राम[1]घातप्रविष्टां वा विक्षिप्य बहुधाटवीम् ।
घातयेदिति चोराणामपसर्पाः[2] प्रकीर्तिताः[3] ॥

५८. ग्राम घात के लिये प्रविष्ट आटविकों को अनेक प्रकार से विकृत चित्त कर, उनका नाश कराये। चोरों में अपसर्प प्रयोग का वर्णन समाप्त ।

पादटिप्पणी :

५५. (१) अवस्कन्द : अचानक आक्रमण या हमला । द्र० ७:६:४०, ७:१०:२९, १०:५:५४। गण० २:२७७, २:११४, १३५, १४७, १६०, १७७, १९४।

पाठभेद :

'योगेनात' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'योगाभ्यामिति' तथा 'संदध्यात्' का 'ध्यात्' पाठभेद मिलता है।

कौ–१८

पादटिप्पणी :

५६. (१) प्रेतकार्य : श्राद्ध । द्र० ३:१३:८ ।
(२) उपायन : भेंट, उपहार ।

पादटिप्पणी :

५८. (१) ग्रामघात : द्र० १३:२:४१ ।

(२) अपसर्प : गुप्तचर, गुप्त प्रतिनिधि या एजेण्ट । प्र० १:१२:१७, २५, १३:३ । गण० १: २३, ३:१०५ ।

(३) प्रकीर्तिता : वर्णन किया गया या प्रशंसित ।

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे अपसर्पप्रणिधिः तृतीयोऽध्यायः। आदितस्त्रिचत्वारिंशच्छततमः ।

तेरहवें अधिकरण के अन्तर्गत दुर्गलम्भोपाय में अपसर्पप्रणिधि सम्बद्ध तृतीय अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ तिरालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः अपसर्पप्रणिधिः आदितस्त्रिचत्वारिंशच्छततमः ॥

मैसूर संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये अपसर्पप्रणिधिस्तृतीयोऽध्यायः आदितस्त्रिचत्वारिंशच्छततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयस्यार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशाधिकरणे तृतीयोऽध्यायः अपसर्पप्रणिधि आदितस्त्रिचत्वारिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे अपसर्पप्रणिधि स्तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ आदितस्त्रिचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १४३ ॥

अध्याय ४

[चतुःसप्ततिशततमं प्रकरणम्—पर्युपासनकर्म[1]; पञ्चसप्ततिशततमं प्रकरणम्—अवमर्दः[2]]

एक सौ चौहत्तरवाँ प्रकरण—पर्युपासन कर्म

एक सौ पचहत्तरवाँ प्रकरण—अवमर्द

कर्शन[1]पूर्वं पर्युपसन[2]कर्म ।

१. कोश-दण्ड का कर्शन पूर्वक पर्युपासन कर्म करना चाहिए ।

जनपदं यथानिविष्ट[1]मभये[2] स्थापयेत् ।

२. जनपद को यथानिविष्ट अभय रखना चाहिए ।

उत्थित[1]मनुग्रह[2]परिहाराभ्यां[3] निवेशयेत्, अन्यत्रापसरतः[4] ।

३. विरोधार्थ उत्थित जनपद को अनुग्रह एवं कर मुक्ति द्वारा बसाये किन्तु अन्यत्र गमन करने वाले जनपद की सहायता न करे अर्थात् इसे अन्यत्र जाने दे ।

पाठभेद :

'पर्युपासनकर्म' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पर्युपानं कर्म' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) कर्शन : कमजोर बनाना । द्र० ४:३:-१८, ७:३:१६, ७:४:१०, ७:१०:४, ७:८:८, गण० ३:२०० ।

(२) पर्युपासन : घेरा डालना । गण० ३:२०

पाठभेद :

'मभये' का तंजोर में 'मदुभये' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'मुदये', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मभयं' पाठभेद मिलता है ।

पाददिप्पणी :

२. (१) निविष्ट : निर्धारित, निर्दिष्ट, स्थित, प्रतिष्ठित, निश्चित, नियन्त्रित, व्यवस्थित । द्र० ७:४:२०, ३:२:२३ ।

(२) अभय : भय से रक्षण या रक्षा करना । द्र० ७:१६:६ ।

पादटिप्पणी :

३. (१) उत्थित : उठा हुआ । द्र० १:१९:५, १:७:२, १:९:१ । गण० ३:२०० ।

(२) अनुग्रह : अर्थादि दान । द्र० २:१:१५, २:२५:३, ३:१:२१, २:८:३, २:१६:११ । गण० १:१२१, ३:२०० ।

(३) परिहार : करादि में छूट । द्र० २:७:२, २:८:३, २:१६:१५ । गण० १:१२१, ३:३४७, २००, २१० ।

(४) अपसरत : पलायन, भगाना, प्रस्थान, चले जाना ।

संग्रामा[1]दन्यस्यां भूमौ निवेशयेत् एकस्यां वा वासयेत् ।

४ संग्रामोचित भूमि के अतिरिक्त अन्य भूमि पर पृथक् पृथक् अथवा एक ही भूमि पर, अधिक लोगों को बसाये ।

न ह्यजनो जनपदो राज्यमजनपदं वा भवतीति कौटिल्यः ।

५. जन रहित जनपद नहीं होता अथवा जनपद रहित राज्य नहीं होता—ऐसा कौटिल्य का मत है ।

विष[1]मस्थस्य मु[2]ष्टिं सस्यं वा हन्याद्, वीव[3]धप्र[4]सारौ च ।

६. विषय परिस्थिति में पड़े शत्रु की मुष्टि अथवा सस्य नष्ट करे और वीवध-प्रसार भी विनष्ट करे ।

प्रसारवीवधच्छेदान्मु[1]ष्टिसस्यवधादपि ।
व[2]मनाद्गूढघाताच्च जायते प्रकृ[3]तिक्षयः ॥

७. प्रसार-वीवध का उत्छेद मुष्टि-सस्य का नाश, वमन एवं गूढघात से प्रकृतिक्षय होता है ।

पाठभेद :

'संग्रामादन्यस्यां' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'संग्राममन्यस्यां' तथा श्रीमूल में 'समग्रमन्यस्थां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) संग्राम : युद्ध भूमि ।

पाठभेद :

'राज्यमंजनपदं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'राज्यं जनपदं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६. (१) विषम : अगम्य, दुर्जय दुर्ग । द्र० २:८:२१ । गण० २:११४ ।

(२) मुष्टि : अन्न बोना । द्र० ९:१:३४, १३:४:७ ।

(३) वीवध : पूर्ति । द्र० ७:६:८, ७:७:२, ८:५:१४, ९:६:४४, १०:२:६ । गण० २:१०७, १३३, १६१, २०० ।

(४) प्रसार : चारे या यवस के लिए भ्रमण या आक्रमण ।

पादटिप्पणी :

७. (१) मुष्टि : अन्न या अनाज बोना । द्र० ९:१:३४, १३:४:६ ।

(२) वमन : एक स्थान से दूसरे स्थान पर आपत्ति में चले जाना । द्र० २:१:१, ४:३:१८ । गण० ३:३०० ।

(३) प्रकृति : स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोश, दण्ड तथा मित्र राज्य की सात प्रकृतियां हैं ।

'प्रभूतगुणबद्धोन्यकुप्य[2]यन्त्र[3]शस्त्रा[4]वरण[5]विष्टि[6]रश्मि[7]समग्रं मे सैन्यम्, ऋतुश्च पुरस्तात्, अपतुः परस्य, व्याधि[8]दुर्भिक्ष[9]निचय[10]रक्षा[11]क्षयः[12] क्रीतबल[13]निर्वेदो[14] मित्रबलनिर्वेदश्च' इति पर्युपासीत ।

८. 'मेरी सेना प्रभूतगुणयुक्त, धान्य, कुप्य, यन्त्र, शस्त्र, आवरण, विष्टि एवं रश्मि से सम्पन्न है और ऋतु अनुकूल है तथा ऋतु शत्रु के प्रतिकूल है तथा व्याधि एवं दुर्भिक्ष से उसके निचय और रक्षकों का नाश हुआ है, उसका क्रीतबल और मित्रबल खिन्न है' उस अवस्था में पर्युपासन कर्म (घेरा डालना) करे ।

कृत्वा स्कन्धावारस्य रक्षां वीवधा[1]सारयोः[2] पथश्च, परिक्षिप्य दुर्गं खातसालाभ्यां, दूषयित्वोदकम्, अवस्राव्य[3] परिखाः संपूरयित्वा वा, सुरुङ्गाबलकुटिकाभ्यां वप्र[4]प्राकारौ[5] हारयेत्, दारं[6] च गुडेन[7] ।

९. अपने स्कन्धावार, वीवध, आसार एवं पथ की सुरक्षा का शत्रु के दुर्ग को खाई और सालों के अनुसार परिणत कर, सुरंग और बल कुटिकों (टेढी खाइयों) से वप्र और प्राकार पर आक्रमण करे, दार को गुड से—

पादटिप्पणी :

८. (१) धान्य : अनाज ।

(२) कुप्य : वन द्रव्य तथा सम्पत्ति । द्र० १:-१६:२९, २:१७:१ ।

(३) यन्त्र : मशीन द्र० २:१५:६२, २:१८:१, १०:६:४८, २:२०:२, २:३:३४, २:५:२ ।

(४) शस्त्र : हथियार ।

(५) आवरण : कवच । द्र० ७:५:८, गण० ३:५७, १२५ ।

(६) विष्टि : श्रमिक । द्र० २:१:२५, १:४:१, २:१५:६३, २:१:२०, ९:२:९, १०:१९:१ १०:४:१७ ।

(७) रश्मि : डोरी । द्र० २:२८:१३ ।

(८) व्याधि : बीमारी । द्र० ३:५:१३, ८:३:१३ ।

(९) दुर्भिक्ष : अकाल । द्र० ८:४:१ ।

(१०) निचय : संग्रह, स्टोर, गोदाम । द्र० ७:१५:१० ।

(११) रक्षा : रक्षात्मक उपाय ।

(१२) क्षय : नाश । द्र० ७:२:२ ।

(१३) क्रीतबल : धन देवर खड़ी की गयी सेना ।

(१४) निर्वेद : थकान ।

पाठभेद

'च गुडेन' का तंजौर में 'चहुलेन', देवनागरी अनुलिपि में 'चगुलेन' तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'बहुलेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिपण्णी :

९, (१) वीवध : पूर्ति । द्र० ७:६:८, ७:७:२, ८:५:१४, ९:६:४४, १०:२:६ । गण० ३:१०७, १२३, १७२, २०० ।

(२) आसार : मित्रबल । द्र० ८:१:३८, १०:२:७, ७:६:८, ७:७:२ । गण० १:२३, ३:२०४ ।

(३) अवस्राव्य : खांई से पानी निकाल देना । द्र० ७:१०:३२ ।

(४) वप्र : परिखा । द्र० २:३:५, १२:१:११ । गण० ३:१०३ ।

(५) प्राकार : परकोटा ।

(६) दार : दरार । मनु० १:११३, २:२१७ ।

(७) गुड : हाथी का कवच या चमड़ा । द्र० १३:४:९, गण० १:२०१ ।

निम्नं वा पांसु[2]मालयाऽऽच्छादयेत् ।

१०. अथवा निम्न भाग को पांसुराशि से आच्छादित करे ।

बहुलारक्षं यन्त्रैर्घातयेत् ।

११. अत्यधिक रक्षायुक्त भाग को यन्त्रों से नष्ट करे ।

निष्किरा[1]दुपनिष्कृष्याश्वैश्च[2] प्रहरेयुः ।

१२. (रक्षापुरुषों को) कपटपूर्वक निकालकर, अश्वों से उनपर प्रहार करें ।

विक्र[1]मान्तरेषु च नियोग[2]विकल्प[3]समुच्चयै[4]श्चोपा[5]यानां सिद्धिं[6] लिप्सेत ।

१३. शत्रु द्वारा विशेष विक्रम प्रदर्शित करने पर, उपायों में नियोग, विकल्प एवं समुच्चय का प्रयोग कर, सिद्धि प्राप्त करे ।

दुर्गवासिनः श्येनकाक[2]नप्तृ[3]भास[4]शुक[5]सारि[6]कोलूक[7]कपोतान् ग्राहयित्वा पुच्छेष्वग्नियोगयुक्तान् परदुर्गे विसृजेत ।

१४ श्येन, काक, नप्तृ, भास, शुक, सारिका, उलूक एवं कपोत को पकड़वाकर, उनके पूछों को अग्नि प्रदीपकयोग युक्त करके, शत्रु दुर्ग में छोड़ दे ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) निम्न : खोखला, गहरा, ढाल, दरार । द्र० २:३:१, २:३३:८, ९:१५:२७ । गण० ३:१०३ ।

(२) पांसु : मिट्टी ।

पाठ भेद :

'निष्किराद्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'निष्कुराद्' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) निष्किर : बाहर जाने या निकलने का मार्ग । द्र० २:३:१४ । गण० ३:२०१ ।

(२) अश्वैश्च प्रहरेयु : द्र० ३:२:२ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) विक्रमान्तरेषु : युद्ध के विरामकाल या अन्तराल में ।

(२) नियोग : द्र० ९:७:७३, ८६, १५:१:६३ मनु० ९:५९, गण० २:३४४, ३:१००, २०१ ।

(३) विकल्प : एक या दूसरे उपाय से काम लेना या कई में एक को ग्रहण करना । द्र० ७:१६:४, १५:१:६५ । गण० २:३४८, ३:२०० ।

(४) समुच्चय : समूह, राशि, सम्मिलित। द्र० १५:१:६, गण० २:३४४, ३:२०० ।

(५) उपायानाम् : चारों उपाय—अर्थात् साम, दाम, दण्ड, भेद । द्र० २:१०:४७, ९:६:२, गण० ३:६४, ९३ ।

(६) सिद्धि : सफलता ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) श्येन : बाज । द्र० १०:५:१२, गण० २:१३८, १४० ।

(२) काक : कौआ । द्र० ९:१:३१, १४:२:४३ १४:३:१७ ।

(३) नप्तृ : चकोर, या मोर के आकार का पक्षी । द्र० १४:३:१ । गण० ३:२०२, २२९ ।

(४) भास : गृद्ध । द्र० १४:१:२५, १४:२:४१ गण० ३:२१७ ।

(५) शुक : तोता । द्र० १:१५:४ ।

(६) सारिका : मैना । द्र० १:१५:४ ।

(७) उलूक : उल्लू, पेचक । द्र० १४:३:१, ६।

(८) कपोत : कबूतर ।

अपकृष्ट[1]स्कन्धावारादुच्छ्रित[2]ध्वजधन्वारक्षो वा मानुषेणा[3]ग्निना परदुर्गमादीपयेत्[4] ।

१५. अधःस्थित स्कन्धावार से ध्वज एवं धनुष उठाये, पुरुष अथवा रक्षा पुरुष, मानुषाग्नि से शत्रु दुर्ग में आग लगाये ।

गूढपुरुषाश्चान्तदुर्गपा[1]लका नकु[2]लवानरविड़ालशुनां पुच्छेष्वग्नियोगमाधाय का[3]ण्डनिचयरक्षाविधानवेश्मसु विसृजेयुः ।

१६. अन्तपाल एवं दुर्गपाल के वेषवाले गूढपुरुष नकुल, वानर, विडाल एवं श्वान के पूछों को अग्नि दीपक योग से युक्त कर, इन्हें काण्डनिचय एवं रक्षा विधान वाले गृहों में छोड़ दे ।

शुष्कमत्स्यानामुदरेष्वग्निमाधाय वल्लू[1]रे वा वाय[2]सोपहारेण वयोभिर्हारयेयुः ।

१७. शुष्कमत्स्यों के उदर अथवा वल्लूर में अग्नि दीपकयोग रखकर, वायस-उपहार (पक्षि-खाद्य) के रूप में पक्षियों द्वारा उसे अपहृत करा दे अर्थात् पक्षियों द्वारा दुर्ग में पहुँचा दे, जिससे वहाँ आग लग जाय ।

पाठभेद :

'धन्वारक्षो' का तेलगू अनुलिपि में 'धन्वारक्षा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) अपकृष्ट : हटाया या गिराया हुआ ।

(२) उच्छ्रितध्वज : झण्डा ऊँचा किए ।

(३) मानुषाग्नि : द्र० १:२०:४, १४:२:३८ । गण० २:९९, ३:२०२ ।

(४) दीपयेत् : आग लगाना ।

पाठभेद :

'चान्तर्दुर्ग' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चान्त्वदुर्ग' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) दुर्गपाल : दुर्ग रक्षक ।

(२) नकुल : नेवला । द्र० १४:३:७८, १४:४:३ ।

(३) काण्ड : सरकण्डा, सरई, डंठल, बेंत, नरकुल या नरकट । गण० ३:२२९ ।

पाठभेद :

'वल्लूरेवा' का तंजौर में 'पल्लूकरेबा' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भल्लूकरेवा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) वल्लूर : सुखाया मांस, जंगली सूअर का मांस । गण० २:१९४ ।

(२) वायस : कौआ । द्र० १३:१:९, गण० ३:१८१ ।

सरल[1]देवदा[2]रुपूतितृ[3]णगुग्गुलश्रीवेष्ट[4]कस[5]र्जरसलाक्षागुलिकाः खरोष्ट्राजावीनां[6][7] लेण्डं[8] चाग्निधारणम् ।

१८ सरल, देवदारु, पूतितृण, गुग्गुल, श्रोवेष्टक, सर्जरस, एवं लाक्षा की गोलियाँ और खर, ऊँट, अज, भेड़ के लेण्ड (लेड़ी) अग्नि धारक होते हैं ।

प्रि[1]यालचूर्णमव[2]ल्गुजम[3]षीमधूच्छि[4]ष्टमश्वखरोष्ट्रगोलेण्डमित्येष क्षेप्योऽग्नियोगः ।

१९. प्रियालचूर्ण, अवल्गुज, मषी, मधूच्छिष्ट, खर, उष्ट्र एवं बैल का लेण्ड—उनका क्षेप्य अग्नियोग होता है ।

सर्वलोहचूर्णमग्निवर्णं वा कु[1]म्भीसीसत्रपुचूर्णं वा पारिभ[2]द्रकपलाशपुष्पकेश[3]म[4]षीतैलमधूच्छिष्टकश्रीवेष्ट[5]कयुक्तोऽग्नियोगो विश्वा[6]सघाती वा ।

२०. अग्निवर्ण सर्वलोह चूर्ण अथवा कुम्भी, सीस, एवं त्रपुचूर्ण, पारिभद्रक, पलाशपुष्प, केश, मषीतैल, मधूच्छिष्ट एवं श्रोवेष्टक से युक्त होने पर, अवश्य अग्नियोग होता है अर्थात् इनसे अवश्य आग लगती है ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) सरल : चीड़वृक्ष । गण० ३:३०२ ।

(२) देवदारु : देवदार का पेड़ । गण० ३:२०२ ।

(३) पूतितृण : एक प्रकार की घास या गुलबन सफा । गण० ३:२३९ ।

(४) श्रीवेष्टक : सभी वृक्ष का गोंद, ताड़पीन या रजन । गण० २:२०२, २०३ ।

(५) सर्ज : साल वृक्ष, असनवृक्ष, सर्जरस, धूना, सलई का पेड़ । साल का चूने वाला रस । गण० ३:२२४ ।

(६) अज : बकरी ।

(७) अवी : भेंड़ा या बकरा ।

(८ लेण्ड : लेड़ी । गण० २:२१० ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) प्रियाल : चिरौंजी । गण० ३:२०३, २२३ ।

(२) अवलगुज : सोमराजी नामक पौधा, वकुची । गण० ३:२२२, ३०३ ।

(३) मषी : सेफालिका का एक प्रकार का फूल । द्र० १४:२:३० ।

(४) मधूच्छिष्ट : मोम ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) कुम्भी : कायफल । द्र० १४:३:६२ ।

(२) पारिभद्रक : देवदारु या नीम का पेड़ ।

(३) केश : ह्रीवेर ।

(४) मशी : द्र० १३:४:१९,२०, १४:२:२० ।

(५) श्री वेष्टक : ताड़पीन या रजन । द्र० १४:४:१८ ।

(६) विश्वासघाती : एक प्रकार का परिघ । द्र० २:१८:५ ।

तेनावलिप्तः शण[1]त्रपुस[2]वल्कवेष्टितो बाण इत्यग्नियोगः ।

२१. उक्त योग से अवलिप्त शण एवं त्रपुसवल्क वेष्टित बाण अग्नियोग होता है ।

न त्वेव विद्यमाने पराक्रमेऽग्निमवसृजेत् ।

२२. पराक्रम काल होने पर अग्नियोग का प्रयोग न करे ।

अविश्वास्यो ह्यग्निर्दैवपीडनं च, अप्रतिसंख्यात[1]प्राणिधान्यपशुहिरण्यकुप्यद्रव्य क्षयकरः ।

२३. अग्नि विश्वास योग्य नहीं होता तथा वह दैवपीडन है और असंख्य प्राणी, धान्य, पशु, हिरण्य एवं कुप्य द्रव्य का नाशकारी होता है ।

क्षीणनिचयं चावाप्तमपि राज्यं क्षयायैव भवति ।

२४. क्षीण निचयवाला राज्य प्राप्त होनेपर भी, क्षयकारी होता है ।

इति पर्युपासन[1]कर्म ।

'सर्वारम्भोपकरणविष्टिसंपन्नोऽस्मि, व्याधितः पर उपधा[2]विरुद्धप्रकृति[3]रकृतदुर्गकर्मनिचयो वा, निरासारः सासारो[4] वा पुरामित्रैः[5] संधत्ते' इत्यवमर्दकालः ।

२५. पर्युपासन कर्म समाप्त ।

मैं समस्त आरम्भोपकरण एवं विष्टि से युक्त हूं, तथा शत्रु व्याधित, विरुद्धप्रकृति युक्त, दुर्ग कर्म एवं निचयकर्म रहित, आसार रहित अथवा आसार युक्त होने पर भी, पूर्व मित्रों से सन्धियुक्त हो रहा है' इस प्रकार की स्थिति अवमर्द काल है ।

पाठभेद :

'त्रपुसवल्क' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'त्रपुसीप्रवल्क' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) शण : सन ।

(२) त्रपुस : एक प्रकार का पौधा या कंकड़ी या खीरे की छाल । गण० ३:२०३ ।

पाठभेद :

'अप्रतिसंख्यात' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अप्रतिसंघात' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) अप्रतिसंख्यात् : बहुत, अगणित ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) क्षीण निचय : कम हुआ संग्रह, गोदाम या स्टोर । द्र० ७:१५:१० ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) पर्युपासन : घेरा डालना । द्र० १३:४:१ ।

(२) उपधा : निष्ठा की गुप्त जांच । द्र० १: १०:१, गण० १:४८ ।

(३) प्रकृति : राज प्रकृति के घटक । द्र० ६: ३:१ ।

(४) आसार : मित्रों की सेना, सेना की सहायता पुनः बलीकरण बलवृद्धि । द्र० १:१६:२९, ६:२:१८, ७:६:८, ७:७:२, ८:१:३८, १४, ९:६: ४४, १०:३:७ ।

(५) पुरामित्र : द्र० ९:६:६९, १२:३:१५ ।

(६) अवमर्द : रौंदना । द्र० ७:१०:२९ ।

स्वयमग्नौ जाते समुत्थापिते वा प्रहवणे प्रेक्षानी[1]कदर्शन सङ्गसौरिक[2]कलहेषु नित्ययुद्धश्रान्तबले बहुलयुद्धप्रतिविद्धप्रेतपुरुषे जागरणक्लान्त सुप्तजने दुर्दिने नदीवेगे वा नीहार[3]संप्लवे[4] वाऽवमृद्नीयात्[5] ।

२६. स्वयं अग्नि लगने, उत्सव प्रचलित रहने, प्रेक्षा दर्शन एवं अनीक दर्शन में आसक्त रहने, सौरिक कलह होने, नित्ययुद्धरत बल के श्रान्त होने, युद्ध में अधिक सैन्य पुरुषों के घायल होने तथा मरने पर, जागरण से खिन्न लोगों के सो जाने पर, दुर्दिन होने पर, नदी वेग पार करने पर, अथवा नीहार जन्य उपद्रव होनेपर, शत्रुका मर्दन करे ।

स्कन्धावारमृत्सृज्य वा वनगूढः शत्रुं निष्क्रान्तं घातयेत् ।

२७. अथवा स्कन्धावार छोड़कर, वन में छिपकर, निकलते शत्रुका नाश करे ।

मित्रासार[1]मुख्यव्यञ्जनो[2] वा संरुद्धेन मैत्रीं कृत्वा दूतमभित्यक्तं प्रेषयेत्—'इदं ते छिद्रम्[3] इमे दूष्याः'; 'संरोद्धुर्वा छिद्रम्, अयं ते कृत्यपक्षः' इति ।

२८. मित्र वेशधारी अथवा मित्रबल के प्रमुख का वेश धारण करने वाला गूढ पुरुष संरुद्ध शत्रु से मैत्री करके, अभित्यक्त दूत इस सन्देश के साथ प्रेषित करे—'यह तुम्हारा छिद्र (कमजोरी) है, ये तुम्हारे दूष्यपुरुष हैं', अथवा 'संरोद्धा का यह छिद्र है, यह तुम्हारा कृत्यपक्ष है' ।

तं प्रतिदूतमादाय निर्गच्छन्तं विजिगीषुर्गृहीत्वा दोषमभिविख्याय प्रवास्यापगच्छेत् ।

२९. प्रति सन्देश लेकर, निकलकर, आते हुए, उस दूत को विजिगीषु पकड़कर, (उसका) दोष प्रख्यात कर, और उसे मार कर, चला जाय ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अनीक : सेना, सैन्य पंक्ति या सैनिक दल । गण० ३:२०४ ।

(२) सौरिक : मदिरा सम्बन्धित । द्र० १०:१:१५ ।

(३) नीहार : कुहरा ।

(४) संप्लव : बाढ़ या प्लावन ।

(५) मद : द्र० १३:४:३२ ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) निष्क्रान्त : निष्क्रमण, निकलते हुए ।

पाठभेद :

'व्यञ्जनो वासंरुद्धेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्यञ्जनोवसंरुद्धेन' तथा 'अभित्यक्तं' का 'अभिव्यक्तं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) आसार : द्र० १०:१६:२९, ६:२:१८, ८:१:५६, ९:६:४४, ७:१:३८, १०:२:७, ७:६:८, ७:७:२ । गण० १:२२, ३:२०४ ।

(२) व्यञ्जन : छद्मवेषः । द्र० १:२१:७, २:२:१२ ।

(३) छिद्रम् : दुर्बल या कमजोर स्थान ।

(४) दूष्या : विश्वासघाती ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) प्रवास्य : मार डालना या देश निकाल देने योग्य ।

ततो मित्रासारव्यञ्जनो वा संरुद्धं ब्रूयात् 'मां त्रातुमुपनिर्गच्छ, मया वा सह संरोद्धारं जहि' इति ।

३०. अथवा मित्र-आसार वेशधारी गूढ पुरुष संरुद्ध से कहे—'मेरी रक्षा के लिये आओ, चलो अथवा मेरे साथ चलकर संरोद्ध, का वध करो' ।

प्रतिपन्नमुभयतः संपीडनेन घातयेत्, जीवग्राहेण वा राज्यविनिमयं कारयेत् ।

३१. उसके स्वीकार करने पर, दोनों ओर से संपीडित कर, घातित करे, अथवा जोवित पकड़कर, राज्य विनिमय कराये ।

नगरं वाऽस्य प्रमृद्नीयात् ।

३२. अथवा उसके नगर का मर्दन करे ।

सारबलं वाऽस्य वमयित्वाऽभिहन्यात् ।

३३. अथवा उसका सार बल दुर्ग से निकाल कर, मार डाले ।

तेन दण्डोपनताटविका व्याख्याताः ।

३४. उस प्रकार से दण्डोपनत एवं आटविकों की व्याख्या सम्पन्न हो गयी ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) संरुद्ध : घिरा हुआ या रोका हुआ । द्र० २:९:२५, १३:४:२८ ।

पादटिपप्णी :

३१. (१) उभयत : दोनों तरफ । द्र० १३:३:२२,३० । गण० ३:१९४ ।

(२) विनिमय : अदला-बदली, प्रतिदान, परिवर्तन ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) नगरं : राजधानी से तात्पर्य है ।

(२) प्रमृद्नीयात् : बरबाद करना । द्र० १३:४:२६ ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) सारबल : श्रेष्ठबल या सेना । द्र० ५:६:४६, १०:५:४३, ४६, ४९, २:५:८, २:७:२, २:१२:१, गण० १:२०, ३:१३२ ।

(२) वमयित्वा : बाहरकर । द्र० २;१:११, १३:४:७ ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) दण्डोपनत : आत्मसमर्पण करना । द्र० २:१:५३; ७:२:९, ७:३:६, ७:१५:३०, ७:१६:२९ । गण० ३:२६४ ।

दण्डोपनताटविकयोरन्यतरो वा संरुद्धस्य प्रेषयेत्—'अयं संरोद्धा व्याधितः, पार्ष्णिग्राहेणाभियुक्तः, छिद्रमन्यदुत्थितम्, अन्यस्यां भूमावपयातुकामः, इति।

३५. अथवा दण्डोपनत एवं आटविक में कोई एक संरुद्ध के पास सन्देश भेजे—'यह संरोद्ध व्याधित है, पार्ष्णि ग्राह से आक्रान्त है, इसकी अन्य दुर्बलता भी उपस्थित है, अन्य भूमि पर पलायित होना चाहता है, ।

प्रतिपन्ने संरोद्धा स्कन्धावारमादीप्यापयायात् ।

३६. उसके स्वीकार करने पर, संरोद्धा स्कन्धावार में आग लगाकर, चला जाय।

ततः पूर्ववदाचरेत् ।

३७. तदनन्तर पूर्ववत् आचरण करे।

पण्यसंपातं वा कृत्वा पण्येनैनं रसविद्धेनातिसंदध्यात् ।

३८. अथवा पण्यसंपात (व्यापारी संघ का आगमन दिखाकर) करके, विष मिश्रित पण्य वस्तुओं द्वारा शत्रु का नाश करे।

आसारव्यञ्जनो वा संरुद्धस्य दूतं प्रेषयेत् 'मया बाह्यमभिहतमुपनिर्गच्छाभिहन्तुम्' इति ।

३९. अथवा आसार वेशधारी गूढपुरुष संरुद्ध के पास दूत प्रेषित करे—'मेरे द्वारा अभिहत बाह्य शत्रु का सर्वथा हनन करने के लिये निकल आओ'।

प्रतिपन्नं पूर्ववदाचरेत् ।

४०. स्वीकार करने पर, पूर्ववत् आचरण करे।

पाठभेद :

'व्याधितः' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'व्याधितं' तथा 'अभियुक्तः छिद्रम्' का 'भियुक्तच्छिद्रम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६५. (१) संरुद्ध : स्थिर हुआ।

(२) व्याधित : बीमार। द्र० ३:४:१३, ४:२:१३। गण० ३:३५।

पादटिप्पणी :

३७. (१) पूर्ववद् : पहले जैसा।

पादटिप्पणी :

३८. (१) पण्यसंपात् : सामान को एकत्रित करना। द्र० १:१७:४२, ७:६:३६, ८:४:३४, ९:३:२७। गण० ३:३०:३०५।

पाठभेद :

'मया वाह्यमभि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मया वा ह्यभि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३९. (१) बाह्यम् : बाहर। द्र० १२:५:२८।

मित्रबन्धुं वाऽपदिश्य[1] योगपुरुषाः [2]शासनमुद्राहस्ताः प्रविश्य दुर्गं ग्राहयेयुः ।

४१. शासन एवं मुद्रा हाथ में लिये हुए योग पुरुष, मित्र अथवा बन्धु के व्याज से दुर्ग में प्रवेश करके, दुर्ग विजिगीषु को ग्रहण करा दें ।

आसारव्यञ्जनो वा संरुद्धस्य प्रेषयेत्—'अमुष्मिन् देशे काले च स्कन्धावारमभिहनिष्यामि, युष्माभिरपि योद्धव्यम्' इति ।

४२. अथवा आसार वेशधारी गूढपुरुष संरुद्ध को सन्देश भेजे—'अमुक देश और समय में स्कन्धावार का अभिहनन करूँगा, आप भी उस समय युद्ध करें ।

प्रतिपन्नं यथोक्तमभ्याघातसंकुलं दर्शयित्वा रात्रौ दुर्गान्निष्क्रान्तं घातयेत् ।

४३. स्वीकार करने पर, पूर्व कथनानुसार अभ्याघात बाहुल्य दिखाकर, रात्रि में निकलते हुए, शत्रु को मार डाले ।

यद्वा मित्रमावाहयेद् आटविकं वा, तमुत्साहयेत् 'विक्रम्यो संरुद्धे भूमिमस्य प्रतिपद्यस्व' इति ।

४४. अथवा मित्र या आटविक को आवाहित करे और उसे इस प्रकार उत्साहित करे 'संरुद्ध शत्रुपर आक्रमण कर उसकी भूमि प्राप्त करो' ।

विक्रान्तं प्रकृतिभि[1]र्दूष्य[2]मुख्योपग्रहेण वा घातयेत्, स्वयं वा रसेन 'मित्र घातकोऽयम्' इत्यवाप्तार्थः ।

४५. आक्रान्त होने पर, अमात्यादि प्रकृतियों द्वारा या दूष्य प्रमुखों को अनुकूल कर, उनके द्वारा शत्रु मरवा दे, अथवा विष द्वारा मार डाले और प्रसिद्ध करें; यह मित्र घातक है, इस प्रकार स्वकार्य सिद्ध करे ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) शासन मुद्रा हस्तां : हाथ में सील मुहर युक्त प्रवेश करे । गण० ३:३०५ ।

पाठभेद :

'आघातसंकुल' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभ्याघातसंकुल' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद

'मुख्योपग्रहेण' का श्रीमूल में 'मुख्यावग्रहेण' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) प्रकृतिभिः : जनता या प्रजा । द्र० ६:१:१ ।

(२) दूष्यमुख्य : प्रमुख विश्वासघाती ।

विक्रमितुकामं[1] वा मित्रव्यञ्जनः परस्याभिशंसेत्[2] ।

४६. अथवा मित्र वेशधारी गूढपुरुष शत्रु से कहे—'विजिगीषु आप पर आक्रमण करने की इच्छा कर रहा है ।

आप्तभावोपगतः प्रवीरपुरुषानस्योपघातयेत् ।

४७. अत्यन्त विश्वस्त हो कर, वह उसके वीर पुरुषों की हत्या करा दे ।

संधिं वा कृत्वा जनपदमेनं निवेशयेत् ।

४८. अथवा सन्धि करके, उसे जनपद में निविष्ट करे ।

निविष्टमस्य जनपदमविज्ञातो हन्यात् ।

४९. उसके निविष्ट जनपद को अज्ञात रूप से नष्ट करे ।

अपकारयित्वादूष्याटविकेषु वा बलैकदेशमति[1][2]नीय दुर्गमवस्कन्देन हारयेत् ।

५०. अथवा दूष्याटविकोंका अपकार करा कर, सेना का कुछ भाग दूर ले जाकर, आक्रमण कर, दुर्ग को हस्तगत करे ।

दूष्यामित्राटविकद्वेष्यप्रत्यपसृताश्च[1] कृतार्थमानसंज्ञा[2]चिह्नैः[3] परदुर्गमवस्कन्देयुः ।

५१. दूष्य, अमित्र, आटविक, द्वेष्य, प्रत्यपसृत और धनमान, सम्मानित एवं आक्रमण-कालादि से सूचित जन शत्रुदुर्ग को अवस्कन्दित करें ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) विक्रम : आक्रमण । द्र० १:१७:२८, १:१९:५, १२:३:१५, ५:६:२५, ७:३:१०, ९:१:५ ।

(२) अभिशंसेत् : आक्रमण करना या झूठा दोष लगाना ।

पाठभेद :

'निविष्टमस्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'निविष्टमन्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) बलैकदेश : द्र० १२:५: २५ ।

(२) अतिनीय : गुप्तरूप से सेना लाना । द्र० ७:१:४:२४; १३:३:४८ ।

पाठभेद :

'प्रत्यपसृताश्च' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रत्यवसृताश्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) प्रत्यपसृता : शत्रु को सेना का भगोड़ा । द्र० ७:१६:१६, गण० २:३४६, ३:२०६ ।

(२) संज्ञा : संकेत; सिगनल । द्र० १:२:११ ।

(३) चिन्ह : लक्षण, पहचान; निशान । द्र० १:१२:११ ।

परदुर्गमवस्कन्द्य स्कन्धावारं वा पतितपराङ्मुखाभिपन्न[1]मुक्त[2]केशशस्त्र[3]भय-विरूपे[4]भ्यश्चाभयमयुद्ध[5]मानेभ्यश्च दद्युः ।

५२. शत्रु दुर्ग अथवा स्कन्धावार हस्तगतकर, पतित, पराङ्मुख, विपन्न, मुक्तकेश, शस्त्र-भय से विरूप हुए और युद्ध न करने वालों को अभयदान दें ।

परदुर्गमवाप्य विशुद्धशत्रुपक्षकृतोपां[1]शुदण्डप्रतीकारमन्तर्बहिश्च प्रविशेत् ।

५३. शत्रुदुर्ग प्राप्तकर, शत्रुपक्ष का शोधन कर, उपांशु दण्ड द्वारा विरुद्धजनों का प्रतीकार कर, (दुर्ग के) अन्दर और बाहर प्रवेश करे ।

एवं विजिगीषुरमित्रभूमिं लब्ध्वामध्यमं[1] लिप्सेत्, तत्सिद्धावुदासीनं[2] ।

५४. इस प्रकार विजिगीषु अमित्र भूमि प्राप्तकर, मध्यम को स्वाधीनस्थ करने की इच्छा करे, उसके सिद्ध होने पर, उदासीन को स्ववश में करे ।

एष प्रथमो मार्गः पृथिवीं जेतुम् ।

५५. पृथिवी को जीतने का यह प्रथम मार्ग है ।

मध्यमोदासीनयोरभावे गुणा[1]तिशयेनारिप्रकृती[2]: साधयेत्, तत् उत्तरा[3] प्रकृतीः

५६. मध्यम एवं उदासीन के अभाव में गुणाधिक्य से शत्रु प्रकृति को स्वानुरक्त करे, तदनन्तर उत्तर प्रकृति (कोश-दण्डादि) को स्वानुकूल करे ।

पादटिप्पणी

५२. (१) अभिपन्न : पलायित, पराभूत, आत्मसमर्पण ।

(२) मुक्तकेश : खुला बाल ।

(३) मुक्तशस्त्र : बिना हथियार के ।

(४) भय विरूप : विकृत हो जाना ।

(५) अयुद्ध : युद्ध न करने वाले ।

पाठभेद

'शत्रुपक्षं' का श्रीमूल में 'शत्रुपक्षः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५३ (१) उपांशुदण्ड : चुपचाप दण्ड देना । द्र० १:१३:२०, १:१७:६, गण० ३:१३६, १४४, १९४ ।

पादटिप्पणी :

५४. (१) मध्यम : मध्यवर्ती राजा । द्र० ६: १:२१, १२:२:६ ।

(२) उदासीन : निरपेक्ष या इच्छा रहित राजा । द्र० ४:१३:१७, ६:२:२२ ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) गुण : द्र० २:१३, २७, ३९, २३: ४:४४, ७:१:१२, १९, ८:१:३, गण० १:२१५ ।

(२) अरिप्रकृति : शत्रु की प्रकृति । द्र० ६: २:१४ ।

(३) उत्तरा : अन्य प्रकृति या घटक ।

एष द्वितीयो मार्गः ।

५७. यह (पृथिवी विजय का) द्वितीय मार्ग है।

मण्डलस्याभावे शत्रुणा मित्रं मित्रेण वा शत्रुमुभयतः संपीडनेन साधयेत् ।

५८. मण्डल के अभाव में शत्रु द्वारा मित्र को अथवा मित्र द्वारा शत्रु को दोनों ओर से संपीडित कर, सिद्ध (अनुकूल) करे।

एष तृतीयो मार्गः ।

५९. यह तृतीय मार्ग है।

शक्यमेकं[1][2] वा सामन्तं[3] साधयेत्, तेन द्विगुणो द्वितीयम्, त्रिगुणस्तृतीयम् ।

६०. अथवा जीतने योग्य एक सामन्तको अपने अनुकूल करे, उससे दो गुना शक्तिवाला होकर, द्वितीय सामन्त को वश में करे, तदनन्तर त्रिगुण शक्तिसम्पन्न होकर, तृतीय सामन्त को अपने अधीन करे।

एष चतुर्थो मार्गः पृथिवीं जेतुम् ।

६१. पृथिवी जीतने का यह चतुर्थ मार्ग है।

जित्वा च पृथिवीं विभक्तवर्णाश्रमां[1] स्वधर्मेण[2] भुञ्जीत ।

६२. राजा पृथिवी का विजय कर, वर्णाश्रम का समुचित विभाजन कर, स्वधर्मानुसार (पृथिवी का) भोग करे।

पाठभेद :

'शक्यम' का तंजौर में 'कशक्यम्' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अशक्यम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६०. (१) शक्यम् : द्र० ६:१:३, ८:८:९।

(२) एकम् : अकेला, विना मित्र के।

(३) सामन्त : पड़ोसी राजा। द्र० ७:१८:२९।

पादटिप्पणी :

६२ (१) वर्ग : ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शुद्र।

(२) स्वधर्म : राजा के कर्तव्य।

उपजा[1]पोऽपस[2]र्पश्च वाम[3]नं पर्यु[4]पासनम् ।
अवम[5]र्दश्च पञ्चैते दुर्गलम्भ[6]स्य हेत[7]वः ॥

६३. उपजाप, अवसर्प, वामन, पर्युपासन एवं अवमर्द ये पाँच दुर्गप्राप्त करने के हेतु (साधन) हैं।

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे पर्युपासनकर्म अवमर्दश्च चतुर्थोऽध्यायः ।

आदितश्चतुश्चत्वारिंशच्छततमः ।

तेरहवें अधिकरण दुर्गलम्भोपाय के अन्तर्गत पर्युपासन कर्म एवं अवमर्द सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त। आदि से एक सौ चौवालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

'उपजापोऽपसर्पश्च' का तंजौर में 'उपजापापसर्पौं च' तथा देवनागरी अनुलिपि एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उपजापोपसर्पौंच' तथा श्रीमूल में 'उपजापोअसर्पौ वा' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६३. (१) हेतव : साधन ।
(२) उपजाप : गुप्तप्रोत्साहन ।
(३) अपसर्प : गुप्तचर। द्र० १:१२:१७; २५।
(४) वामन : खाली करने के लिए बात करना या दुर्ग के बाहर निकालना। ३:९:३१;
(५) पर्युपासन : घेरा डालना। १३:४:१ ।
(६) अवमर्द : आक्रमण करना या रौंद डालना ।
(७) लम्भ : विजय करना ।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपा त्रयोदशाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः पर्युपासनकर्म अवमर्दश्च आदितश्चतुचत्वारिंशच्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये पर्युपासन कर्म अमर्दश्च चतुर्थोऽध्यायः आदितश्चतुश्चत्वारिंशच्छततमा ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयस्यार्थशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः दुर्गलम्भोपाये पर्युपासनकर्म अवमर्दश्च त्रयोदशाधिकरणे आदितश्चत्वारिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे पर्युपासनकर्म अवमर्दश्च चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ आदितश्चतुश्चत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १४४ ॥

अध्याय ५

[षट्सप्ततिशततमं प्रकरणम्—लब्धप्रशमनम्]

एक सौ छिहत्तरवां प्रकरण—लब्धप्रशमन

द्विविधं विजिगीषोः समुत्थानम्[1]—अटव्यादिकम्, एकग्रामादिकं[2] च ।

१. विजिगीषु का समुत्थान दो प्रकार का होता है—अटवी आदि और एक ग्राम आदि ।

त्रिविधश्चास्य[1] लम्भः—नवो[2], भूतपूर्वः[3], पित्र्यं[4] इति ।

२. विजिगीषु का लाभ तीन प्रकार का होता है—नवीन, भूतपूर्व एवं पित्र्य ।

नवम[1]वप्य[2] लाभं परदोषान्[3] स्वगुणैश्छादयेत्[4], गुणान् गुणद्वैगुण्येन ।

३. विजिगीषु नवीन लाभ प्राप्तकर, शत्रु के दोषों को अपने गुणों से तथा उसके गुणों को अपने दूने गुणों से आच्छन्न कर दे ।

पादटिप्पणी :

१. (१) समुत्थान : सैनिक उद्योग या कार्यवाही । द्र० ३:९:१५, ४:११:२ । गण० ३:२०९ ।

(२) एकग्राम : केवल एक ग्राम या नगर ।

पादटिप्पणी :

२. (१) त्रिविधश्च लम्भ : तीन प्रकार का लाभ या विजय या अवाप्ति । द्र० ८:१:५१ ।

(२) नवो : नवीन, नया । गण० ३:२०९ ।

(३) भूतपूर्व : पहले से अधिकार में ख्याति प्राप्त । द्र० १३:५:२२ । गण० ३:२०९ ।

(४) पित्र्य : उत्तराधिकार द्वारा प्राप्त या दाय । गण० ३:२०९ ।

पाठभेद :

'लाभं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'लम्भं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी

३. (१) नवम् : नवीन राज्य या प्रदेश या भूमि ।

(२) अवाप्य : प्राप्य ।

(३) परदोष : शत्रु का दोष ।

(४) गुणैश्छादयेत् : गुणों से जनता पर छा जाना ।

स्व[1]धर्मकर्मानु[2]ग्रहपरिहा[3]रदा[4]नमा[5]नकर्मभिश्च प्रकृति[6]प्रियहितान्यनुवर्तेत ।

४. वह स्वधर्म, कर्म, अनुग्रह, परिहार, दान एवं मान कार्यों से प्रकृतिप्रिय एवं हितकर कार्यों को करे ।

यथा[1]संभाषितं च कृत्य[2]पक्षमुपग्रा[3]हयेत्, भूयश्च कृतप्रयासम् ।

५. पूर्व कथनानुसार कृत्यपक्षपर, अनुग्रह करे, और अधिक परिश्रमकारी पर, विशेष अनुग्रह करे ।

अविश्वास्यो हि विसंवा[1]दकः स्वेषां परेषां च भवन्ति, प्रकृतिविरुद्धाचारश्च ।

६. स्वकथन का पालन न करने वाला तथा प्रकृति के विरुद्ध आचरणशील नृप अपने लोगों तथा अन्य लोगों का विश्वसनीय नहीं होता है ।

तस्मात्समानशीलवेषभाषाचारतामुपगच्छेत् ।

७. अतएव राजा (प्रजा के) समान शील, वेष, भाषा एवं आचार स्वीकार करे ।

देशदै[1]वतसमा[2]जोत्सवविहा[3]रेषु च भक्तिमनुवर्तेत ।

८. देश दैवत, समाजोत्सव एवं विहारों में भक्तिभाव का अनुसरण करे ।

पादटिप्पणी :

४. (१) स्वधर्म : बिहित कर्म करना या अपने धर्म पर रहना । द्र० १:४:१६; १:१४:२, १:३:१२ । गण० १:१११, ३:२०० ।

(२) अनुग्रह : लोगों पर कृपा करना । द्र० २:१:१५, २:२५:३ ।

(३) परिहार : छूट । द्र० २:१:१५, २:७:२, २:१६:१२, २.३५:३, ३:९:३३, १३:४:३ । गण० ३:३२१, ३:७४, २००, २१० ।

(४) दान : मनु० ३:१५८ । याज्ञ० ३:२:४, ९:५:२६ ।

(५) मानः सम्मान, सत्कार, प्रतिष्ठा । गण० १:३७ ।

(६) प्रकृतिप्रिय : जनप्रिय ।

पादटिप्पणी :

५. (१) यथा संभाषित : जैसा बातचीत से निश्चित किया गया हो ।

(२) कृत्यपक्ष : क्रुद्ध, लुब्ध, भीत वर्ग । द्र० १:१४:६, १०:१२:२५, ९:२:३८ । गण० ३:१६५, १९४ ।

(३) उपग्राहयेत् : उपहार देना । द्र० ७:५:२२, ७:७:१, ५:१:११, ७:१:३२, १२:१:१६, ४:३:७, १:१८:१५ । गण० ३:२६३ ।

पादटिप्पणी :

६. (१) विसंवादक : अपनी बात का निर्वाह न करने या बात देकर मुकर जाने वाला । द्र० १:१८:६, १५, ३:११:४६, १३:५:६ ।

पादटिप्पणो :

८. (१) देशदैवत : देश के देवता ।

(२) समाज : उत्सव या मिलन । द्र० १:२१:२८, ३:२५:३६, ५:९:३९, ५०, १०:१:१५, १३:३:३६ । गण० ३:१०५ ।

(३) विहार : क्रीड़ा, प्रमोद, मनोरंजन, आमोद प्रमोद, खेलकूद । द्र० १:१०:१३, २:२:३, ८:४:२०, २१ ।

देश[1]ग्रामजातिसंघ[2]मुख्येषु चाभीक्ष्णं सत्त्रिणः परस्याप[3]चारं दर्शयेयुः, महा[4]भाग्यं भक्तिं च तेषु स्वामिनः, स्वामिसत्कारं च विद्यमानम् ।

९. सत्री पुरुष देश, ग्राम, जाति एवं संघ प्रमुखों के प्रति किये गये, शत्रु का दुष्कर्म बार-बार दिखायें और उनके प्रति स्वामी की भक्ति और महाभाग्य तथा वर्तमान में स्वामी का सत्कार भाव दिखायें ।

उचितैश्चैनान् भोग[1]परिहार[2]रक्षा[3]वेक्षणैर्भुञ्जीत ।

१०. उचित भोग, परिहार, एवं रक्षावेक्षणों से उनका उपभोग करे ।

सर्वदेवताश्रमपूजनं च विद्या[1]वाक्य[2]धर्म[3]शूरपुरुषाणां च भूमिद्रव्यदानपरिहारान् कारयेत्, सर्वबन्ध[4]नमोक्षणमनुग्र[illegible]दीनानाथव्याधितानां च ।

११. विजिगीषु समस्त देवों एवं आश्रमों की पूजा करे, विद्याशूर, वाक्यशूर एवं धर्मशूर पुरुषों को भूमि, द्रव्य एवं करमुक्ति प्रदान करे, सबको बन्धनमुक्ति दे, दीनों, अनाथों एवं व्याधितों पर अनुग्रह करे ।

पादटिप्पणी :

९. (१) देशग्रामजाति : देशनगरजाति । द्र० ३:१:१५, १९, ४:९:१५, ३:१६:२९, ४:६:९, ३:१०:४५ । गण० ३:४५ ।

(२) संघ : द्र० ३:१:२२, ३:७:४०, ३:१० ४५; ९:६:७२ । गण० १:३३, ३:११७ ।

(३) अपचार : दुष्टाचरण, अहितकर आचरण, धोखा । द्र० ४:२:२ ।

(४) महाभाग्य : भाग्यवान, सुविख्यात, पुण्यवान ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) भोग : लाभ, प्राप्ति उत्पत्ति, सेवा, फल । पञ्च भाग को देना अर्थ किया गया है । द्र० १:१४:५, ३:२७:१०, ३:१०:१५, ७:७:१३, २६ । ण० ३:१३७, १३९, २१० ।

(२) परिहार : छूट, कर से छूट या कर मुक्ति या कर मोक्ष । द्र० ७:१६:१३, १४, १५, ३:७:२ २:१६:२ । गण० १:११२, ३:७४, २००, २१० ।

(३) रक्षा : रक्षण, पालन । द्र० १:१६:३५, ११:१:५५ । गण० ३:३०१ ।

पाठभेद :

'सर्वदेवताश्रम' का तंजौर में 'सर्वताश्रम' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सर्वत्राश्रम' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) विद्या : विद्वान् । द्र० १:५:११ ।

(२) वाक्य : वाग्मी ।

(३) धर्म : धर्मात्मा । द्र० ३:१:३९, ४०, ३:१:३८, ४३, ४४, ४७ ।

(४) सर्वबन्धन : सब कैदी । द्र० ३:३:४, ४:९:३०, ३:११:७, ४२, ३:१२:६:१६ ।

चातुर्मास्येष्वर्धमासिक[1]घातम्, पौर्णमासीषु च चातूरात्रिकम्, राज[2]देश-नक्ष[3]त्रेष्वैकरात्रिकम् ।

१२. चार मासों में पन्द्रह दिन, पूर्णमासियों में चार रात्रि तथा राजप्राप्ति एवं देश प्राप्ति के नक्षत्रों में एकरात्रि तक प्राणदण्ड न दिया जाय ।

योनि[1]बाल[2]वधं [3]पुंस्त्वोप[4]घातं च प्रतिषेधयेत् ।

१३. स्त्रीबध, बालवध और पुंस्त्वोपघात निषिद्ध किया जाय ।

यच्च कोश[1]दण्डोप[2]घातकधर्मिष्ठं वा चरित्रं मन्येत तदपनीय ध[3]र्म्यव्य[4]वहारं स्थापयेत ।

१४. विजिगीषु राजा जिस चरित्र को कोश, दण्ड का घातक अथवा अधार्मिक माने, उसे हटाकर, धर्मयुक्त व्यवहार की स्थापना करे ।

चोर[1]प्रकृतीनां म्लेच्छ[2]जातीनां च स्थान[3]विपर्यासमनेकस्थं कारयेत्, दुर्ग-राष्ट्रदण्डमुख्यानां च ।

१५. चोर जातियों और म्लेच्छ जातियों एवं दुर्ग, राष्ट्र और दण्ड प्रमुखों, स्थान विपर्यास अनेकत्र करे ।

पाठभेद :

'चातूरात्रि' का देवनागरी अनुलिपि में 'चातुरात्रि' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'एकरात्रि' पाठ भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) घात : हत्या ।

(२) राजनक्षत्र : राज्याभिषेक ।

(३) देशनक्षत्र : देश विजय ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) योनि : मादा, स्त्री प्राणी । द्र० ३:१०:५० । गण० ३:२१० ।

(२) बाल : छोटे बच्चे । गण० ३:२१० ।

(३) पुंस्त्व : प्रजनन शक्ति । द्र० ४:३:४ ।

(४) उपघात : नाश, क्षति पहुँचाना । द्र० २:१६:६, ४:२:३२, ७:१६:१७ ।

पाठ भेद

'घातक' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'घातिकम्' तथा 'चरित्रं' का देवनागरी अनुलिपि में 'चारित्रं' तथा 'धर्म्यव्यव' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धर्मव्यय' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी

१४. (१) कोश : खजाना । द्र० ८:१:५, ९:४:८, ९:७:२४ ।

(२) दण्डोपघात : सेना के लिए विनाशक या हानिकारक ।

(३) धर्म्य : न्याय । द्र० ३:१:३८:३९, ४०, ४७ ।

(४) व्यवहार : आचरण, रीति, विवाद, मुकदमा । द्र० ३:१:३९, ३:१:२, ३:२:१ । गण० १:१३५ ।

पादटिप्पणी

१५. (१) चोरप्रकृति : जरायम पेशा ।

(२) म्लेच्छजाति : असभ्य, अनार्य । द्र० १:१२:२१, ३:१३:३, ७:१०:१६, ७:१४:२७ । मनु० २:२३ ।

(३) स्थान विपर्यास : स्थान परिवर्तन ।

परोप[1]गृहीतानां च मन्त्रिपुरोहितानां परस्य[2] प्रत्यन्तेष्वनेकस्थं वासं कारयेत् ।

१६. शत्रु द्वारा उपकृत मन्त्री एवं पुरोहितों को शत्रु के सोमान्त में विभिन्न स्थानों पर, कियुक्त करे।

अपका[1]रसमर्थाननु[2]क्षियतो वा भर्तृविनाशमुपांशुदण्डेन प्रशमयेत् ।

१७. उपकार करने में समर्थ अथवा स्वामी का नाश सोच कर, निवास करते हुए, लोगों को उपांशु दण्ड देकर, शान्त करे।

स्वदेशीयान् वा परेण वाऽप[1]रुद्धानपवाहितस्थानेषु स्थापयेत् ।

१८. स्वदेशीय जनों अथवा शत्रु द्वारा अवरुद्ध लोगों को अपने अपने अधिकार से च्युत किये गये, शत्रुपदीयजनों के पदों पर नियुक्त करे।

यश्च तत्कुलीनः प्रत्यादेयमादातुं शक्तः, प्रत्यन्ताटवीस्थो वा प्रबाधितुमभिजातः, तस्यै विगुणां भूमिं प्रयच्छेत्, गुणवत्याश्चतुर्भागं वा कोशदण्डदानमवस्थाप्य, यदुपकुर्वाणः पौरजानपदान् कोपयेत् ।

१९. शत्रुकुल का जो व्यक्ति प्रत्यादेयभूमि पुनः प्राप्त करने में समर्थ हो अथवा प्रत्यन्त स्थिति एवं अटवोस्थित जो पुरुष बाधा करने में सक्षम हो, उसे गुणहोन भूमि प्रदान करे, अथवा कोश-दण्ड देने की उस शर्त पर गुणवत भूमि का चतुर्थ भाग दे, जो कि पौर जानपदों को कुपित करे।

कुपितैरेनं घातयेत् ।

२०. कुपित पौर जानपदों द्वारा उसे घातित करे।

पादटिप्पणी :

१६ (१) परोपगृहीता : शत्रु द्वारा उपकृत, स्वीकृत या अनुकूल या प्रसाद। द्र० १:२१:२।

(२) प्रत्यन्त : सीमावर्ती देश, सीमा प्रान्त का क्षेत्र। द्र० १:१७:४२, ९:१:३४। गण० ३:१६६।

पाठभेद :

'अनुक्षियतो' का देवनागरी अनुलिपि में 'अनुक्षीयतो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१७. (१) अपकार समर्थ : ऊपकार करने में सक्षम। द्र० ७:३:७।

(२) अनुक्षीयत : मन ही मन चिन्तन। द्र० ५:१:५५।

पादटिप्पणी :

१८. अपरुद्ध : शत्रु का अप्रिय। द्र० १:१८ १३, १०:१०:३, १:१३:१८, ९:३:२४।

प्रकृतिभिरुपकृष्टमपनयेत्, औपघातिके वा देशे निवेशयेत् । इति ।

२१. प्रकृतियों द्वारा निन्दित को हटा दे अथवा नाशकारी स्थान पर, उसे नियुक्त करे।

भूतपूर्वे येन दोषेणापवृत्तस्तं प्रकृतिदोषं छादयेत्, येन च गुणेनोपावृत्तस्तं तीव्रीकुर्यात् । इति ।

२२. पूर्वकाल में जिस दोष से राज्य शत्रु के हाथ में गया हो, उस प्रकृतिदोष को प्रच्छादित करे, जिस गुण से राज्य स्वहस्तगत हुआ हो, उसे सुदृढ करे।

पित्र्ये पितुर्दोषांश्छादयेत्, गुणांश्च प्रकाशयेत् इति ।

२३. पिता से सम्बन्धित राज्य के विषय में पितृ दोषों को आच्छन्न करे, और गुणों को प्रकाशित करे।

चारित्रमकृतं धर्म्यं कृतं चान्यैः प्रवर्तयेत् ।
प्रवर्तयेन्न चाधर्म्यं कृतं चान्यैर्निवर्तयेत् ।।

२४. अप्रचलित धर्मयुक्त आचरण को तथा अन्यों द्वारा प्रवर्तित धर्माचरण को प्रवर्तित करे, प्रचलित अधर्माचरण को तथा अन्यों द्वारा प्रचलित अधर्माचरण को निषिद्ध करे।

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे लब्धप्रशमनंपञ्चमोऽध्यायः ।

तेरहवें अधिकरण के अन्तर्गत दुर्गलम्भोपाय में लब्ध प्रशमन सम्बद्ध पञ्चम अध्याय समाप्त।

पादटिप्पणी :

२१. (१) उपकृष्ट : अवज्ञापित निबन्ध, अवज्ञापित। गण० ३:२११।

पादटिप्पणी :

२३. (१) पित्र्य : पैत्रिक; पित्रों से सम्बन्धित। मनु० २:५, गण० ३:२०९।

पादटिप्पणी :

२४. (१) प्रवर्तयेत : उपक्रम या चलाना।

पाठभेद :

गणपति शास्त्री संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशाधिकरणे पंचमोऽध्याय लब्धप्रशमनम् । आदित पंचचत्वारिंशच्छततमः एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य दुर्गलम्भोपायस्त्रयोदशमधिकरणं समाप्तम् ।

मैसूर संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे लब्धप्रशमनं पंचमोऽध्यायः आदितः पंचचत्वारिंशच्छतः । एतावता दुर्गलम्भोपायस्त्रयोदशमधिकरणं समाप्तम् ।

आदितः पञ्चचत्वारिंशच्छततमः। एतावता कौटिलीयार्थशास्त्रस्य दुर्गलम्भोपायः त्रयोदशमधिकरणं समाप्तम्।

आदि से एक सौ पैंतालीसवां अध्याय समाप्त। कौटिलीय अर्थ शास्त्र का दुर्गलम्भोपाय एवं तेरहवां अधिकरण समाप्त।

वसाक संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेघिकरणे पंचमोऽध्यायः लब्धप्रशमनम्। आदितः पंचचत्वारिंशच्छततमः। एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य दुर्गलम्भोपायस्त्रयोदशाधिकरणं समाप्तम्॥

उदयवीर शास्त्री संस्करण में—

इति दुर्गलम्भोपाये त्रयोदशेऽधिकरणे लब्धप्रशमनं पंचमोऽध्यायः॥ ५॥ आदितपंचचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः॥ १४५॥ एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य दुर्गलम्भोपायस्त्रयोदशाधिकरणं समाप्तम्॥ १३॥

१४

औपनिषदिकम्[1]—चतुर्दशमधिकरणम्

औपनिषदिक १ चौदहवा अधिकरण

[सप्तसप्ततिशततमं प्रकरणम्—परबलाघात[2]प्रयोगः]

एक सौ सतहत्तरवाँ प्रकरण—परबलाघात प्रयोग

चातुर्वर्ण्य[3]रक्षार्थमौपनिषदिमधर्मिष्ठेषु[4] प्रयुञ्जीत ।

१. चातुर्वर्ण्य के रक्षार्थ अधर्मिष्ठों में औपनिषदिक का प्रयोग करे ।

कालकूटा[1]दिर्विष[2]वर्गः श्रद्धेय[3]देशवेषशिल्पभाषाभिजनापदेशैः कुब्ज[4]वामन[5]-

२. विश्वसनीय देश, वेष, शिल्प, भाषा एवं सुपात्रता प्रकट करने वाले कुब्ज, वामन,

---

पादटिप्पणी :

१. (१) औपनिषदिक : शत्रु पर विजय प्राप्त हेतु रहस्यमय युक्तियाँ । द्र० ४:३:१३, ३:१२:१९, ७:१५:१२ । गण० ३:३१३ ।

(२) परबलाघात : शत्रु सेना के नाश हेतु ।

(३) चातुर्वर्ण्य : द्र० ६:१३, गण० १०:६३ ।

(४) अधर्मिष्ठ : धर्म विरुद्ध या शास्त्र विरुद्ध कर्म या आचरण । औषधि एवं मन्त्रों के रहस्यों को उपनिषद कहते हैं । गुप्त उपाय तथा अलौकिक अभ्यास, जिनके कारण शत्रु का नाश होता है जिनका पहले अधिकरण में वर्णन किया गया है । इस प्रकरण में मारने, अंगभंग, हीनांग करने का कल्प तथा उपाय का वर्णन किया गया है ।

पाठभेद :

'शिल्पभाषाभिजना' का तंजौर में 'शिल्पभाभिजना' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शिल्पभाजना' तथा 'ष्वघातव्यः' का तंजौर में 'ष्वघातव्यं', तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में ष्वाघातव्यः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) कालकूट : हलाहल विष, समुद्र मन्थन से प्राप्त तथा शंकर द्वारा पान किया गया विष । इस विषपान के पश्चात् शंकर का नाम नीलकण्ठ पड़ा । महाभारत—१:१८:४१, उत्तराखण्ड में कालकूट एक पर्वत हैं ।

(२) विषवर्ग : द्र० २:१७:१२ ।

(३) श्रद्धेय : द्र० १:१२:६, ३:१:२५, ४:१:२१, १४:१:२ ।

(४) कुब्ज : कुबड़ा । द्र० १:१२:९ । गण० १०५:८, ३:२:३ ।

(५) वामन : बौना । बलि के साथ छल करने के लिए विष्णु के एक अवतार का नाम है । विष्णु के दश अवतारों में एक वामन अवतार है । विकलांग, बौना, ठिगना, छोटा । द्र० १:१२:९, १:२३:५, १:२९:३, ९, २२, महा० ३:८३, १०३, २०२ ।

किरात[6]मूक[7]बधिर[8]जडा[9]न्ध[10]च्छद्मभिर्म्लेच्छ[11]जातीयैरभिप्रेतैः[12] स्त्रीभिः पुंभिश्च [13]शरीरोपभोगेष्ववधातव्यः ।

किरात, मूक, बधिरजड तथा अन्ध वेष धारी जनों और म्लेच्छ जातीयों के प्रिय स्त्रियों एवं पुरुषों द्वारा शत्रु शरीर के उपभोग्य वस्त्रादि में कालकूट आदि विष वर्ग लिप्त कराया जाय।

राजक्रीडा[1]भाण्डनि[2]धानद्रव्योपभोगेषु गूढाः शं[3]स्त्रनिधानं कुर्युः, सत्त्रा[4]जीविनश्च रात्रिचा[5]रिणोऽग्नि[6]जीविनश्चाग्निनिधानम् ।

३. गूढ पुरुष राजा के क्रीडा सामग्री एवं आभूषण रखने के स्थानों में और उपभोग्य सामग्री के स्थानों में शस्त्र रख दें अथवा क्रीडा भूषणादि के प्रयोग काल में शस्त्र प्रयोग करें। रात्रिचारी सत्त्री और अग्निजीवी पुरुष शत्रु के स्थानों पर अग्नि रख दें।

चित्र[1]भेक[2]कौण्डिन्यक[3]कृक[4]णपञ्चकु[5]ष्ठशतप[6]दीचूर्णमुच्चि[7]दिङ्गकम्ब[8]ली-

४. चित्रभेक, कौण्डिन्यक, कृकण, पंचकुष्ठ शतपदी का चूर्ण तथा उच्चिदिङ्ग, कम्बली, शत-

---

(६) किरात : द्र० १:१२:९, १:२१:१, गण० १:५८।

(७) मूक : गूंगा। द्र० ३:२:१३। मनु० ७:२४७, ३:१२९ गण० ३:२१६।

(८) बधिर : बहरा। मनु० ७:१४७।

(९) जड़ : मूर्ख। द्र० १:१२:१०; याज्ञ० २:२५। मनु० २:११०।

(१०) अन्ध : अन्धा। द्र० १:१२:१०। गण० ३:३५।

(११) म्लेच्छ : द्र० १:१२:२१, ३:१३:३, ७:१०:१६।

(१२) अभिप्रेत : प्रिय, अर्थभूमि।

(१३) परशरीरोपभोगेषु : शत्रु जो प्रयोग या भोग करता है।

पादटिप्पणी :

३. (१) क्रीडा : खेल का सामान।

(२) निधानद्रव्य : कोशागार का सामान। द्र० १:११:१३, २:११:११६।

(३) शस्त्रनिधान : शस्त्र रखना या जमा करना या शस्त्र कोष।

(४) सत्त्रा : मिलकर या सत्त्रों का कार्य करने वाले।

(५) रात्रिचर : रात्रि में घूमने वाला।

(६) अग्निजीविन : अग्नि द्वारा जीविका उपार्जन करने वाले लोग।

पाठभेद :

'क्रकण्टक' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'क्रकण्टक' तथा श्रीमूल में 'कृकणक' तथा 'भल्लातकावल्गुजरस' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भल्लातकावल्गुकारस' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी

४. (१) चित्र : चितकवरा, चित्रवर्ण। द्र० २:५:३०, ४:९:३, ४:११:१ गण० ३:२१४।

(२) भेक : मेढ़क।

(३) कौडिन्यक : एक प्रकार का कीड़ा, इसके मलमूत्र में विष होता है।

(४) कृकण : जंगली तीतर, वन तीतर, मतान्तर से कुछ लेखक कीट भेद मानते हैं।

(५) कुष्ठ : कुट, कुड़ा एक प्रकार का विष। पंच कुष्ठ में कुष्ठ के पत्ते फल फूल छाल एवं जड़ आते हैं।

(६) शतपदी : कनखजूरा, कनजलूका। गण० ३:२१४।

(७) उच्चदिङ् : एक प्रकार का कीड़ा होता है जिसमें अल्प विष होता है। गण० ३:२१४।

(८) कम्बली : कीट विशेष। कम्बली; कमला, छोटी उगली की तरह गोल कीट।

शतक[9][10]न्देध्म[11]कृक[12]लासचूर्णगृह[13]गोलिका[14]न्धाहिकक्क[15]कण्टकपू[16]तिकीटगोमा[17]रिकाचूर्णं भल्ल[18]ातकाव[19]ल्गुजरसयुक्तं सद्यः प्राणहरम्, एतेषां वा धूमः।

मूली, कन्द, इध्म एवं कृकलास का चूर्ण और गृहगोलिका, अन्धाहिक, क्रकण्टक, पूति कीट एवं गोमारिका का चूर्ण भल्लातक और अवलगुज के रस से युक्त होकर सद्यः प्राण हरण करने वाला होता हैं अथवा इनका धूम प्राणहारो होता है।

कीटो वाऽन्यतमस्तप्तः कृष्णसर्पप्रियङ्गुभिः।
शोषयेदेष संयोगः सद्यः प्राणहरो मतः॥

५. अथवा उक्त कीटों में कोई एक कीट (आग में) तपाकर आघ्राण करने पर प्राण हर होता है, कृष्ण सर्प और प्रियंगु के साथ योग करने पर उक्त तप्त कीट सद्यः प्राण हारी होता है।

धामार्गवयातुधानमूलं भल्लातकपुष्पचूर्णयुक्तम् आर्धमासिकः।

६. धामार्गव एवं यातुधान का मूल भल्लातकपुष्प के चूर्ण से संयुक्त होने पर (बना हुआ योग) आधे महीने में प्राणहरण करता है।

---

(९) शतकन्ध : इसके पुष्प श्वेत एवं सुगन्धित होते हैं। मूल स्तम्भ से कन्द सदृश लम्बा गोल दोनों सिरों पर पतले और श्वेत गुच्छा निकला होता है। इसके क्षुप कांटेदार होते हैं। सफेद मुसली के नाम से भी इसका प्रयोग होता है।

(१०) कन्द : सूरन, जिमिकन्द।

(११) इध्य : पलाश की जलौनी या इंधन।

(१२) कृकलाश : गिरगिट इसे कृकलाश भी कहते हैं।

(१३) गृहगोलिका : पतली छिपकली।

(१४) अन्धाहिक : एक बिषहीन सर्प, एक प्रकार की मछली।

(१५) क्रकण्टक : कूकर पक्षी या जंगली तीतर।

(१६) पूतिकीट : एक प्रकार की क्रिमी।

(१७) गोमारिका : औषधि विशेष।

(१८) भल्लातक : भिलावा।

(१९) अवल्गुज : आयुर्वेद में अवल्गुज को वाकुची का पर्याय माना जाता है। किन्तु अर्थशास्त्र के इन सन्दर्भों से इसके वाकुची की अभिधेयता स्पस्ट नहीं है। इसे बंगला में सोमराजी नामक वृक्ष विशेष कहते है।

पादटिप्पणी :

५. (१) कृष्ण सर्प : काला साँप।

(२) प्रियङ्गु : इसको फलनी, श्यामा, गन्धफला, गोवन्दिनी, कृष्ण पुष्पी, फूलफेन, दहिगन या दहिगना या मथुरा माला कहते है। गण० ३:२३९।

इसको कागनी, बड़ी पीपल, कटुकी भी कहते हैं। यह एक प्रकार की लता होती है, जो स्त्री के स्पर्श से खिल उठती है।

प्रियङ्गु के फूल छोटे एवं हल्के गुलाबी रंग के होते हैं।

यह जलप्राय: स्थानों में कालसी, हिमालय के नीचे नालों में पाया जाता है। जलप्राय स्थानो में भी पाया जाता है।

पादटिप्पणी :

६. (१) धामार्गव : चिचिड़ा या पोशातकी कहते हैं। गण० ३:२१४।

(२) यातुधान : राक्षस शब्दवाचक औषधि का एक भेद है। यातुधान तथा यातुधानी इनका उल्लेख ऋग्वेद तथा वैदिक साहित्य में मिलता है। इसे उतरन नामक लता जो जंगलों में पाई जाती है कुछ लेखकों ने अर्थ किया है। भूत प्रेत पिशाच अर्थ होता है।

(३) भल्लातक : भिलावा। गण० ३:२१४।

व्याघातक[१]मूलं भल्लातकपुष्पचूर्णयुक्तम् कीट[२]योगो मासिकः ।

७. व्याघातक मूल एवं भल्लातक पुष्प चूर्णयुक्त कीट योग एक मास में प्राण हरण करता है।

कला[१]मात्रं पुरुषाणां, द्वि[२]गुणं खराश्वानां, चतुर्गुणं हस्त्युष्ट्राणाम् ।

८. (कीट योग) कलामात्र पुरुषों को, दो कला (दूना) गर्दभ एवं अश्वों को, चार कला हाथी एवं ऊँटों को दिया जाय।

शत[१]कर्द[२]मोच्चि[३]दिङ्गककरवीरकटुतु[४]म्बीमत्स्यधूमो मद[५]नकोद्र[६]वपला[७]लेन हस्ति[८]कर्णपलाशपलालेन वा प्र[९]वातानुवाते [१०]प्रणीतो यावच्चरति तावन्यारयति ।

९. शतावरी, कर्दम, उच्चिदिङ्ग, करवीर, कटुतुम्बी एवं मत्स्य का धूम मदन, कोद्रव पलाल अथवा हस्ति कर्ण, पलाश एवं पलाल के साथ सामने की तेज हवा में रखे जाने पर, जहाँ तक (धूम) जाता है, वहाँ तक (प्राणियों) को मारता है।

पादटिप्पणी :

७. (१) व्याघातक : अभिलतास सोनालू, किरमाला, वृक्ष में चैत्र के अन्त से फूल ने आरम्भ होते हैं। जेठ तक इसमें पीले फूल लग जाते हैं। फूल में पाँच पंखुडिया होती है। जेठ में फलियां लगती हैं। हेमन्त में कलियां काला रंग पकड़ लेती हैं।

(२) कीटयोग : कीड़ों का मिश्रण।

पाठभेद :

'द्विगुण' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'द्विगुण' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८. (१) कला : अल्पमात्रा (अत्यल्प)।

(२) द्विगुण : दो कला मात्र।

चतुर्गुण : चार कला मात्र।

पाठभेद :

'कटुतुम्बी' का तंजौर में 'कुन्धतुम्बी' देवनागरी अनुलिपि में 'कूटघतुम्बी' तथा 'मदन' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दन' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

९. (१) शत : शतावरी।

(२) कर्दम : यक्ष कर्दम, कपूर, अगर, कस्तूरी और कंकोल इन चारों चीजों के पीसे लेप को यक्ष कर्दम या कर्दम कहते हैं।

(३) उच्चिदिङ्ग : द्र० १४:१:४, आ० ३:२१४।

(४) कटुतुम्बी : तितलौकी, तुम्बी, तिक्तलौकी, इक्ष्वाकु।

(५) मदन : धतूरा, तुवर। गण० ३:२१४।

(६) कोद्रव : कोदो। द्र० ४:२:२८।

(७) पलाल : काण्ड। धान या गेहूं के काटने पर नीचे का हिस्सा या पुआल या सस्य शून्य धान को पलाल कहते हैं।

(८) हस्तिकर्ण : एरण्ड या रेंण का पत्ता हाथी के कान की तरह होता है इसलिए हस्तिकर्ण रेंण का नाम किया गया है। गण० ३:२१५।

(९) प्रवतानुवात : जबकी हवा सामने की तरफ से शत्रु की तरफ बढ़ती हो। गण० ३:२०३:२१५।

(१०) प्रणीता : बनाया हुआ, रचा हुआ, निबद्ध निर्मित,। द्र० ५:४:११, १२, १३।

पूतिकीट[1]मत्स्यकटुतुम्बीशतकर्दमेध्येन्द्र[2]गोपचूर्णं पूतिकीटक्षु[3]द्राराल[4]हेम[5]विदारीचूर्णं वा वस्तशुङ्गखुरचूर्णयुक्तमन्धीकरो धूमः ।

१०. पूति कीट, मत्स्य, कटुतुम्बी, शतावरी, कर्दम, इध्म, एवं इन्द्रगोप चूर्ण अथवा पूति कीट क्षुद्रा, अराल, एवं विदारी चूर्ण बकरे के शृंग एवं खुर के चूर्ण के साथ संयुक्त योग का धूआं अन्धा करने वाला होता है ।

शतिक[1]रञ्जपत्रहरिता[2]लमन[3]:शिलागुञ्जा[4]रक्तका[5]र्पासपला[6]लान्या[7]स्फोटका[8]चगोशकृद्रसपिष्टमन्धीकरो धूमः ।

११. पूति करञ्ज, पत्र, हरिताल, मनः शिला, गुंजा, रक्तकार्पास एवं पलाल को आस्फोट, काच एवं गोबर के रस के साथ पीसने पर उसका धूआं अन्धा करता है ।

पाठभेद :

'तुम्बी' का देवनागरी अनुलिपि में 'तुम्ब' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) पूतिकीट : दुर्गन्धित कीटाणु । इसका अर्थ उस कीटाणु का अर्थ किया गया है उसके पीठ पर कुछ काटा होते हैं ।

(२) इध्म : पलाश की जलौनी लकड़ी । द्र० १४:१:४ । गण० ३:११४ ।

(३) इन्द्रगोप : वीरबहूटी, एक प्रकार का कीड़ा जो सफेद या लाल रंग का होता है ।

(४) क्षुद्रा : भटकटैया, कण्टकारी । गण० ३:२१५ ।

(५) अराल : देवधूप विशेष । गण० ३:२१५ ।

(६) हेम : धतूरा । द्र० ७:१२:१४ । गण० ३:२१५ ।

(७) विदारी : वृष्यकन्दा, क्षीर शुक्ला, इक्षुगन्धा, पाताल प्रभा, भुइ कुष्माण्ड ।

(८) विदारीकन्द : विदारीकन्द की वेल अनूप के जंगलों में होती है ।

दक्षिण में कोकण के पर्वतों, कनौज पश्चिम हिमालय, कुमाऊँ; नेपाल, विन्ध्याचल । इसे भूमि कुष्माण्ड भी कहते हैं ।

पादटिप्पणी :

११. (१) पूति करञ्ज : कटीला करञ्ज, कांटेदार करंजुआ । समस्त भारत में मिलता है । इसकी लताएं कटीली होती हैं । बगीचों के मेंढ़ पर इसकी झाड़ लगायी जाती है । करञ्ज को करञ्ज वा कट करञ्जा आदि कहते हैं । भारतवर्ष के सभी प्रान्तों में पाई जाती है । अत्यन्त काटेदार लता होती है । कुछ लेखक चिरवल्व को पूति करञ्ज कहते हैं ।

(२) हरिताल : गन्धक और संखिया के योग से बना पीला खनिज द्रव्य ।

(३) मन:शिला : मैनसिल । गण० ३:२१५ ।

(४) गुञ्जा : घुघुची, चोटली, गुञ्जा की लता होती हैं । इसके पत्ते बारीक और कुछ लम्बे इमली के पत्ते के समान होते हैं । सेम के फलियों के से गुच्छे होते हैं । इसके फूल कुछ सफेद रंग के होते हैं । इसके सफेद लाल दो भेद होते हैं किन्तु दोनों की वेलिया लता समान होती हैं । लाल रंग के गुञ्जा पर काला दाग होता है । सफेद रंग की गुञ्जा पूर्ण श्वेत होती है ।

(५) रक्त कार्पास : लाल रुई ।

[६) पलाल : पुआल ।

(७) स्फोटक : लाल मदार या आक ।

आयुर्वेद साहित्य एवं संस्कृत कोषों में आस्फोत (आस्फोट) आस्फोटा (आस्फोटा) संज्ञा अनेक वनस्पतिनों का बाचक है । टीकाकारों ने भी इसका अर्थ सारिका तथा गिरिकर्णिका आदि अनेक वनस्पतियों से किया है ।

(८) काच : एक प्रकार का नमक, लवण भेद । गण० ३:२१५

स[1]र्पनिर्मोकं [2]गोऽश्व[3]पुरीषमन्ध[4]ाहिकशिरश्चान्धीकरो धूमः ।

१२. सर्पनिर्मोक, गोपुरोष, अश्व पुरीष एवं अन्धाहिक का शिर—इनका धूआँ भी अन्धा करता है ।

पारा[1]वतप्ल[2]वकक्र[3]व्यादानां [4]हस्तिन[5]रवरा[6]हाणां च मूत्रपुरीषं का[7]सीस[8]हिङ्गुय-[10]वतुषक[11]णतण्डुलाः[12] [13]कार्पासकुटज[14]कोश[15]ातकीनां च बीजानि [16]गोमूत्रिका[17]भाण्डीमूलं [18]निम्बाशिग्रु[19] [20]फणिर्जका[21]क्षीवपीलु[22]भङ्गः[23] [24]सर्पशफरीचर्म[25] [26]हस्तिनथशुङ्गचूर्णमित्ये

१३. पारावत, प्लवक, क्रव्याद, हाथी, मनुष्य एवं वराह का मूत्र एवं पुरीष अथवा कासीस, हिंगु, यव तुष, तन्दुलकण, तन्दुल एवं कार्पास, कुटज तथा कोशातकी के बीज अथवा गोमूत्रिका एवं भाण्डीर का मूल, निम्ब, शिग्रु, फणिज, काक्षीब एवं पीलु का छाल अथवा सर्प और मत्स्य को

पादटिप्पणी :

१२. (१) निर्मोक : केंचुल ।

(२) गोपुरीष : गोबर ।

(३) अश्वपुरीष : घोड़े की लीद ।

(४) अन्धाहिक : दो मुहा सांप या अन्धा सांप या मत्स्य विशेष । द्र० १४:१:४ । गण० ३:२१४ ।

पाठभेद :

'फणिर्जका' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'फणर्जका', श्रीमूल में 'फणिज्जका' तथा 'पीलुकभङ्ग' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पीलकभाङ्ग' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) पारावत : कबूतर । गण० ३:२१५ ।

(२) प्लवक : मेढ़क । द्र० १:३:२७:; ३५ ।

(३) क्रव्याद : मांसभक्षक जन्तु ।

(४) हस्ति : हाथी ।

(५) नर : पुरुष ।

(६) वराह : सूअर ।

(७) कासीस : द्र० सिद्धमन्त्रः श्लोक ८६; १०० । हृदय दीपकनिघण्टु : श्लो० ५७ ।

(८) कौसीस : गण० ३:२१५ ।

(९) हिङ्गु : हींग ।

(१०) यवतुष : यव की भूसी ।

(११) कण : चावल की खुद्दी ।

(१२) तन्दुल : चावल ।

(१३) कार्पासिक : रूई की बीया ।

(१४) कुटज : कुटकी ।

(१५) कोशातकी : तरोई; चाँदनी रात ।

(१६) गोमूत्रिका : एक प्रकार की घास ।

(१७) भाण्डी : मजीठ की जड़, इसे योग वल्ली की जड़ भी कहते हैं ।

(१८) निम्ब : नीम ।

(१९) शिग्रु : शहजन ।

(२०) फणिज : जम्बीर का एक भेद एक म के अनुसार मरुवक अर्थ किया गया है । गण० ३:२१५ ।

(२१) आक्षीव : सहजन विशेप । द्र० १२५। गण ३:२४० ।

(२२) पीलूक : पंजाब; राजस्थान; सिन्धु; गुजरात, विहार, उत्तरप्रदेश के इटावा जिले में कोंकण, कर्णाक आदि प्रदेशों से मिलते हैं । पीलु तिक्त किंचिर स्निग्ध होता है । चरक संहिता में शिरो विरोचन ज्वरहर आदि इसके गुण कहे गये हैं । शुश्रुत विरेचन द्रव्यों में पुष्प का पाठ है ।

(२३) भङ्ग : छिलका ।

(२४) सर्प : केंचुर ।

(२५) शफरी : क्षुद्र मछली ।

(२६) शृङ्ग चूर्ण : हाथी के दांत का चूरा ।

धूमो[२७]मदनकोद्र[२८]वप[२९]लालेन [३०]हस्तिकर्णप[३१]लाशपलालेन वा प्रणीतः प्रत्येकशो यावच्चरति तावन्मारयति ।

बाल, हाथी के नख और दांत का चूर्ण इनका धूआँ मदन, कोद्रव, पलाल अथवा हस्तिकर्ण एवं पलाश, पलाल के साथ किये जाने पर जहाँ तक जाता है, वहाँ तक प्राणियों को मारता है ।

काली[१]कुष्ठ[२]नड[३]शताव[४]रीमूलं सर्प[५]प्रच[६]लाक[७]कृकणप[८]ञ्चकुष्टचूर्णं वा धूमः पूर्वकल्पेनार्द्रशुष्कपलालेन वा प्रणीतः संग्रामावरणावस्कन्दनसंकुलेषु कृतनेज[९]नोदकाक्षिप्रतीकारैः प्रणीतः सर्वप्राणिनां नेत्रघ्नः ।

१४. काली, कुष्ठ, नड एवं शतावरी का मूल अथवा सर्प, प्रचलाक, कृकण एवं पञ्च कुष्ठ का चूर्ण पूर्ण कल्प (मदन कोद्रव पलाल) के साथ या आर्द्र शुष्क पलाल के साथ करके संग्रामावतरण एवं आक्रमण की भीड़ में नेजनोदकानुसार अक्षि प्रतीकार युक्त पुरुषों द्वारा किया जाने वाला धूआँ समस्त प्राणियों के नेत्र नष्ट करता है ।

---

(२७) मदन : मैनफल :

(२८) कोद्रव : कोदो ।

(२९) पलाल : पुआल ।

(३०) हस्ति कर्ण : एरण्ड वृक्ष, पलाश का चूर्ण।

(३१) पलाश : ढाक ।

पाठभेद

'कृकण' का देवनागरी अनुलिपि में 'कृकणक' तथा 'पूर्वकल्केन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूर्वकल्केन' पा पाठभेद मिलता है । तथा 'आर्द्र शुष्कपलालेन वा' का श्रीमूल में आर्द्रे शुष्कपलाले वा' तथा 'स्कन्दनसंकुलेषु' का तंजौर में 'स्कन्दनं कुलेषु' तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्कन्दनाकालेषु' तथा 'कृतनेजनो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कृततेञ्जनो' तथा श्रीमूलमें 'कृततेजनो' पाठभेद मिलता है ।

पाददटिप्पणी :

१४. (१) काली : चकोतरा नीबू । गण० ३: २०९ ।

(२) कुष्ठ : कूट । गण० ३:२१६ ।

(३) नड : नरकट ।

(४) शतावरी : सतावर ।

(५) सर्प : साँप ।

(६) प्रचलाक : मोर की कलगी या पूँछ ।

(७) कृकण : द्र० १४:१:४ । गण० ३:२१४ ।

(८) पञ्चकुष्ठ : द्र० १४:१:४; गण० ३: २१४ ।

(९) नेजनोदक : द्र० १४:४:२ २ ।

शारिका[1]कपोत[2]बक[3]बलाका[4]लेण्ड[5]मर्क[6]अक्षि[7]पीलुक[8] स्नुहि[9]क्षीरपिष्टमन्धीकरणमञ्जनम् उदकदूषणं च ।

१५. शारिका, कपोत, वक एवं वलाका का पुरीष अर्क, अक्षि, पीलु एवं स्नुही क्षीर के साथ पीसे जाने पर, तैयार अञ्जन अन्धा करने वाला और जल प्रदूषित करने वाला होता है ।

यवक[1]शालि[2]मूलमदन[3]फलजाती[4]पत्रनरमूत्र योगः प्लक्ष[5]विदारी[6]मूल[7]युक्तो

१६. यवक एवं शालि का मूल मदनफल, जातीपत्र और नर मूत्र को योग प्लक्ष और

पाठभेद :

'मर्काक्षि' का तंजौर तथा तेलगू अनु प्रतिलिपि में 'मङ्काक्षी' तथा 'पीलुक' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पीलक' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणो :

१५. (१) शारिका : मैना ।

(२) कपोत : कबूतर ।

(३) वक : वकुला ।

(४) वलाका : वकुली या वक पंक्ति ।

(५) लेण्ड : लेंड़ी या मल ।

(६) अर्क : मदार या आक ।

(७) अक्षि : बहेड़ा । यह हरीतकी कुल की औषधि है । यह समस्त भारत में ३००० फुट तक के ऊँचाई तक प्राप्त होता है । इसका छिलका प्राय: काम में आता है । यह रुक्ष, लघु कसाय, उष्ण; स्वाश, काश एवं स्वर भेद नाशक हैं । चरक के अनुसार विरेचनोपग तथा ज्वरहर; महाकषाय एवं सुश्रुतोक्त त्रिफला की औषधि में या बेहड़ा भी है । इसका प्रयोग अन्धीकरण; अंजन योग; जल दूषणयोग, मदनयोग विसूचिकायोग हिमदंशयोग में होता है । उपर्युक्त प्रयोगों को देखने से (आक्षि) अक्षीष कोई उग्रस्वभाव की वनस्पति लक्षित होती है तथा जिसमें आक्षीर भी निकलता है । वनस्पतिवाची संज्ञा के रूप में (अक्षि) के साक्ष्य यत्र तत्र आयुर्वेदीय साहित्य में (अक्षिपीड़) अक्षिपीड़क; अक्षीष—च० सू० धन्वन्तरि निघण्टु में आक्षि पीड़ा को यवतिला का पर्यायवाची माना गया है । यवतिला का उल्लेख आयुर्वेदीय रस ग्रन्थों में बहुश: मिलता है । प्रोफेसर आ० एस० सिंह ने इसका वनस्पतिक विनिश्चय जौ गेहूँ की खेतों में उगने वाली तिरछी नामक वनस्पति से किया है ।

(८) पीलुक : द्र० १४:१:१३ ।

(९) स्नुहि : थूहर या सेहुण । इसका समन्त-दुग्धा भी अर्थ किया गया है ।

पाठभेद :

'शालिमूल' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'शालमूल' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) यवक : जौ है । यवक मदन योग में प्रथमोल्लिखित घटक द्रव्य है । योग के प्रयोग संदर्भ को देखते हुए यवक (मूल) भी योग के अन्य निर्दिष्ट द्रव्यों की भाँति मादक गुण वाला प्रतीत होते हैं। यद्यपि यवक का उल्लेख आयुर्वेदीय साहित्य में भी मिलता है । किन्तु कहाँ इसका परिणाम खाद्योपयोगी धान्य वर्ग में हुआ है । अतः अर्थशास्त्रोक्त यह 'यवक' धान्य वर्गीय यवक से सर्वथा भिन्न प्रतीत होता है । इसका अर्थ यूनानी औषधि शैलस से भी किया गया है ।

(२) शालि : जड़हन धान, जो रोपा जाता है। गण० ३:२१६ ।

(३) मदनफल : धतूरा ।

(४) जातीटत्र : चमेली की पत्ती, मालती या जावित्री । गण० ३:२१६ ।

(५) प्लक्ष : पाकड़, पिलखन या लाख निकलने वाला पीपल । पंचक्षीरी वृक्षों में प्लक्ष का नाम आता है । पंचक्षीरीवृक्ष—वट, उदुम्बर, पीपल और पाकड़ एवं मधूक ।

(६) बिदारी : भूमि काटना ।

(७) मूल : जड़ ।

मूकोदुम्बरमदनकोद्र[10]वक्वाथयुक्तो ह[11]स्तिकर्णप[12]लाशक्वाथयुक्तो वा मद[13]नयोगः ।

विदारी के मूल से युक्त अथवा मूक, उदुम्बर, मदन एवं को द्रवके क्वाथ से युक्त अथवा हस्ति कर्ण एवं पलाश के क्वाथ से युक्त होने पर, मदन योग बनता है, वह चिन्ता विभ्रम, उत्पन्न करता है ।

शृङ्गिगौत[2]मवृक्ष[3]कण्टकारमयू[4]रपदीयोगो गुञ्जा[5]लाङ्ग[6]लीविष[7]मूलिके[8]ङ्गुदी-योगः करवीर[10]ाक्षिपीलु[11]क[12]र्कमृगम[13]ारणीयो गोमद[14]नकोद्र[15]क्वाथयुक्तो ह[16]स्तिकर्णपलाश-क्वाथयुक्तो वा मदनयोगः ।

१७. शृङ्गी, गौतम, वृक्ष (लोध), कण्टकार एवं मयूरपदी का योग, गुञ्जा, लाङ्गलो, विषमूलिका एवं इङ्गुदी का योग, करवीर, अक्षि, पीलुक, अर्क एवं मृगमारणी का योग मदन एवं कोद्रव क्वाथ से अथवा हस्ति कर्ण एवं पलाश क्वाथ से युक्त होने पर, मदन योग बनता है, अर्थात् उन्मादक योग बनता है ।

---

(८) मूक : मत्स्य विशेष । गण० ३:२१६ ।

(९) उदुम्बुर : गूलर । गण० ३:२१५, २२१ ।

(१०) मदन : धतूरा ।

(११) कोद्रव : कोदो ।

(१२) हस्तिकर्ण : द्र० १४:१:१३ । गण० ३:२१५ ।

(१३) पलाश : द्र० २:१४:१:१३ । गण० ३:२१५ ।

पाठभेद :

'गौतमवृक्ष' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गोमेवृक्ष' तथा 'पीलुकार्क' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पीलकार्क' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) शृङ्गि : मछली या शृङ्गी मछली । गण० ३:२१६ ।

(२) गौतम : एक विशेष वृक्ष ।

(३) कण्टकार : भटकटैया । इसका नाम कटाई भटकटाई, भटकटैया, फहेरी, कंडियारी मिलता है । प्रायः समस्त भारत में इसके स्वयं जात क्षुप पाये जाते हैं । इसके अतिरिक्त लंका-पाकिस्तान दक्षिण पूर्वी एशिया एवं आस्ट्रेलिया में भी यह पाई जाती है । अरब में भी छोटी भटकटाई होती है । सर्वत्र सुलभ होने से यह आवश्यकता पड़ने पर प्राप्त की जा सकती है । सुखाया पंचाङ्ग बजारों में पंसारियों के यहाँ मिलता है । चरक के अनुसार (सू० अ० ४) कण्ठ्य हिक्कानिग्रहण, कासहर, शोथहर, शीतप्रशमन, एवं अङ्गमर्दप्रशमन महाकवियों के द्रव्यों में तथा सुश्रुतोक्त (सू० अ० ३८) वृहत्यादि गुण वरुणादि गण एवं लघु पंच मूल में कण्टकारी की भी गड़ना है।

आयुर्वेदीय निघण्टुओं में 'लक्ष्मण' के नाम से 'श्वेतपुष्पी कण्टकारी' का भी उल्लेख मिलता है । और गर्भ संस्थापक गुणों के लिए इसकी प्रशंसा की गयी है । किन्तु श्वेत पुष्प की भटकटैया दुर्लभ है । और उपलब्ध नहीं होती है । इसका अर्थ शाल्मली वृक्ष भी किया गया है ।

(४) मयूरपदी : अजमोदा । द्र० २:१९:२५ । गण० ३:२१६ ।

(५) गुंजा : घुंघुची । द्र० १४:१:११ । गण० ३:२१५, २३६ ।

(६) लाङ्गली : जल पीपल, पृथक्पर्णी तथा नारिकेल भी कहते हैं ।

(७) बिषमूली : कालकूट विष । गण० ३:२१६ ।

(८) इङ्गुदी : हिङ्गोट, मालकाग्नि । गण० ३:२१६ ।

(९) करबीर : कनेर । गण० ३:२१४ ।

(१०) अक्षि : बहेरा ।

(११) पीलुक : एक वृक्ष, पीलुक फल, स्वाद तीखा और मधुर ।

(१२) अर्क : मदार ।

(१३) मृगमारणी : औषधि भेद । गण० ३:२१६ ।

(१४) मदन : धतूरा ।

समस्ता वा यवसे[1]न्धनो[2]दक[3]दूषणाः ।

१८. अथवा उक्त समस्त योग यवस, इन्धन एवं उदक को दूषित करने वाले होते हैं।

कृतकण्डल[1]कृकलास[2]गृह[3]गोलिकान्धाहिक[4]धूमो नेत्रवधमुन्मादं च करोति।

१९. पकाये गये स्नायु समूह वाले कृकलास, गृहगोलिका एवं अन्धाहिक का धूआं नेत्र नाशक और उन्मादक होता है।

कृकलास[1]गृह[2]गोलिकायोगः कुष्ठकरः ।

२०. कृकलास एवं गृह गोलिका का योग कुष्ठ कर होता है।

स एव चित्रभेका[1]न्त्र[2]मधुयुक्तःप्रमेह[3]मापादयति, मनुष्यलोहितयुक्तः शोषम्[4]।

२१. उक्त योग ही चित्र भेक के अन्त्र और मधु से युक्त होने पर, प्रमेह तथा मनुष्य के रुधिर से युक्त होने पर, शोष उत्पन्न करता है।

दूषीविषं[1] मदनकोद्रवचूर्णमपजिह्विका[2]योगः ।

२२. दूषीविष मदन एवं को द्रव चूर्ण और अपजिह्विका का योग।

पादटिप्पणी :

१८. (१) यवस : चारा। द्र० २:३१:१, ९:३:१७। गण० ३: १७०।

(२) इन्धन : जलौनी।

(३) उदक : जल।

पाठभेद :

'कृत कण्डल' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कृतषण्डक' पाठभेद मिलता है।

१९. (१) कृतकण्डल : पकाया गया स्नायु-समूह।

(२) कृकलाश : गिरगिट। द्र० १४.१:४। गण० ३: २१४।

(३) गृहगोलिका : छिपकली या पल्ली।

(४) अन्धाहिक : अन्धा, सर्प। द्र० १४:१:४।

पादटिप्पणी :

२०. (१) कृकलास : गिरगिट। द्र० ४:१:४, गण० ३:२१४।

(२) गृहगोलिका : छिपकली। द्र० १४:१:१९; गण० ३:२१४।

पाठभेद :

'प्रमेहम' का देवनागरी अनुलिपि में 'प्रमोहम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२१. (१) चित्रभेक : चितकबरा मेढ़क। गण० ३:२१४।

(२) अन्त्र : आंत।

(३) प्रमेह : मूत्ररोग या मूत्रस्राव होना।

(४) शोषम् : क्षय या सुखण्डी। द्र० ४:२:७१; १५:४:७।

पाठभेद :

'अपजिह्विका' का श्रीमूल में 'उपजिह्विका' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२२. (१) दूषीविष : स्थावर, जंगम या कृत्रिम का वह अंश, जो शरीर में रह जाने के कारण शरीर में विष उत्पन्न कर देता है जो मारक नहीं होता। गण० ३:२१७:२३८।

(२) अपजिह्विका : कीट विशेष या दीमक या चींटी। गण० ३:२१७।

मातृ[1]वाहकाञ्जलिका[2]रप्रचला[3]कभेका[4]क्षि[5]पीलुक[6]योगो विषूचिकाकरः ।

२३. मातृ वाहक, अञ्जलिकार, प्रचलाक, भेक, अक्षि एवं पीलुक का योग विषूचिका (हैजा) उत्पन्न करता है ।

पञ्चकुष्ठ[1]ककौण्डिन्य[2]कराजवृक्ष[3]पुष्पमधुयोगो ज्वरकरः ।

२४. पञ्चकुष्ठ, कौण्डिन्यक, राजवृक्ष एवं पुष्प मधु का योग ज्वरकारी होता है ।

भास[1]नकुल[2]जि[3]ह्वाग्रन्थिक[4]योगः खरीक्षीरपिष्टो मूकबधिरकरो मासार्ध-ासिकः ।

२५. भास, नकुल, जिह्वा एवं ग्रन्थिका का योग गर्दभीर के साथ पीसे जाने पर एकमास या ाधे मास में मूक-बधिर (गूंजा-बहरा) करने वाला होता है ।

कला[1]मात्रं पुरुषणामिति समानं पूर्वेण ।

२६. पुरुषों को एक कला की मात्रा दी जाय, शेष पूर्वोक्तवत् ।

ादटिप्पणी :

२३. (१) मातृवाहक : पक्षिभेद । गण० ३:२१७ ।

(२) अञ्जलिकार : औषधि विशेष या औषधि ेद। गण० ३:२१७ ।

(३) प्रचलाक : मोर की कलंमी या पूंछ । ण० ३:२१५ ।

(४) भेक : मेढ़क ।

(५) अक्षि : कूट. सहिजन या बेहड़े के किस्म ा एक वृक्ष । गण० ३:२१६ ।

(६) पीलुक : चींटी । द्र० १४:१:१३, गण० ३:२१५ ।

ाठभेद :

'वृक्षपुष्पमधु' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि े 'वृक्षमधुपुष्पमधु' पाठभेद मिलता है ।

ादटिप्पणी :

२४. (१) पञ्चकुष्ठ : कुष्ठ एक वृक्ष का नाम है। इसको कूठ भी कहते हैं । पत्ता, फल, फूल, छाल जड़ पंचकुष्ठ कहा जाता है । द्र० १४:१:१४, गण० ३:२१४ ।

(२) कौण्डिन्यक : द्र० १४:१:४ । गण० ३:२१४ ।

(३) राजवृक्ष : अमिलताश, पियालवृक्ष, भद्र-चूड़ । गण० ३:२१७ ।

(४) पुष्पमधु : महुआ (मधूक) ।

भेदपाठ :

'भासनकुल' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भाजनकुल' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) भास : गृद्ध । गण० ३।२१७ ।

(२) नकुल : नेवला ।

(३) जिह्वा : मजीठ । द्र० ४:११:२१ । गण० ३:२१७ ।

(४) ग्रन्थिका : पिप्पलीमूल । गण० ३:२१७ ।

२६. (१) कला : एक मिनट, ४८ सेकण्ड । द्र० १७:१:८ ।

भङ्क्त्वाथोपनयनमौषधानाम्, चूर्णं प्राणभृताम् सर्वेषां वा क्वाथोपनयनम् एवं वीर्यवत्तरं भवति ।

२७. उक्त योगों में औषधियों का उपयोग कूट कर एवं क्वाथ कर तथा प्राणियों (के लिये) चूर्ण कर किया जाय अथवा सबका क्वाथ बनाकर प्रयोग किया जाय, उस प्रकार अधिक प्रभावकारी होता है।

इति योगसंपत् ।

२८. योग संपत् समाप्त ।

शाल्मली[1]विदारि[2]धान्य[3]सिद्धोमूलै[4]र्वत्सना[5]भसंयुक्तश्चुच्छुन्दरी[6]शोणितप्रलेपेन दिग्धो वाणो यं विद्ध्यति स विद्धोऽन्यान् दशपुरुषान् दशति, ते दष्टादशान्यान् दशन्तिपुरुषान् ।

२९. शाल्मली, विदारी एवं धान्य में सिद्ध, पिप्पली मूल एवं वत्सनाभ से युक्त और चुच्छुन्दरी के रुधिर से प्रलिप्त बाण, जिसे वेधता है, वह व्यक्ति अन्य दस पुरुषों को काटता है और वे अन्य दस व्यक्तियों को काटते हैं (उस प्रकार विष प्रसार से सेना नष्ट हो जाती है) ।

पाठभेद :

दिग्धो बाणो' का तंजोर 'निद्धो बाणो' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सिद्धो वाणो' तथा 'दष्टादशान्यान् का तंजोर में 'दष्टाशान्यान्', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हृष्टाश्चान्यान्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

२९. (१) शाल्मली : सेमर का वृक्ष । गण० ८:२४६ ।

(२) विदारी : भूमिकुष्माण्ड । द्र० १४:१: १० ।

(३) धान्य : धनिय या अनाज ।

(४) मूल : पिप्पलीमूल या बीज । द्र० ७:२: १४, ७:३:३३, ७:८:५, २:९:२, ८:३:६६, ८:५:१ ९४,४५ ।

(५) वत्सनाभ : एक प्रकार का विष ।

(६) चच्छुन्दर : छछून्दर ।

भल्लातक[1]यातुधाना[2]वानु[3]धामार्गव[4]बाणानां[5] पुष्पैरेलक[6]ाक्षि[7]गुग्गुलु[8]र्हालाहला[9]नां व कषायं [10]वस्तनर[11]शोणितयुक्तं दंशयोगः ।

३०. भल्लातक, यातुधान, अवानु, धामार्गव एवं बाण के पुष्पों से सिद्ध एलक, अक्षि, गुग्गुल एवं हालाहल का कषाय (काढ़ा) बकरे और नर के रुधिर युक्त करने पर दंश योग बनता है।

ततोऽर्ध[1]धरणिको योगः सक्तु[2]पिण्याका[3]भ्यामुदके प्रणीतो धनुः[4]शतायामुदकाशयं दूषयति ।

३१. उस कषाय का आधा धरणि योग सक्तु एवं पिण्याक के साथ संयुक्त कर जल में डालने पर, सौ धनुष पर्यन्त बड़े जलाशय को दूषित करता है।

पाठभेद :

'धामार्गववाणानां' का तंजौर में 'धामार्गबाणा' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धायामार्गवबांणा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३०. (१) भल्लातक : भिलावा। द्र० १४:१:१६।

(२) यातुधान : द्र० १४:१:६। गण० ३:२१४।

(३) आवानु : इसका अर्थ विचारणीय है।

(४) धामार्गव : चिचिड़ा। गण० ३:२१४।

(५) बाण : अर्जुनवृक्ष। गण० ३:२०३।

(६) एलक : इलायची। भारतीय साहित्य एव परम्परा में एलेक (ऐलेयक) का प्रयोग दो परस्पर भिन्न (वर्गों) द्रव्यों के लिए होता है। (१) फल वर्गीय वनस्पति तथा (२) घृतकुमारीघनसार। किन्तु फलवाची ऐलेयक का उल्लेख तो शास्त्रों में प्राचीन काल से मिलता है। किन्तु घृतकुमारीसार के अर्थ में ११वीं-१२वीं शताब्दी से ही मिलता है। प्रोफेसर आर० एस० सिंह एवं ए० एन० सिंह ने अर्थशास्त्र के सन्दर्भ में एलक से घृतकुमारी सार की अभिधेयता का ही अनुमोदन किया है। गुजरात, राजस्थान महाराष्ट्र आदि पश्चिमी क्षेत्रों में मिलता है। इसकी संज्ञा गन्ध वाले वृक्ष से दी गयी है।

(७) अक्षि : वृक्ष विशेष।

(८) गुग्गुल : गुगुल

(९) तालाहल : विष।

(१०) वस्त : बकरा।

(११) नर : पुरुष।

पाठभेद :

'उदके प्रणीतो' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'उदक प्रणीतो' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

३१. (१) धरण : सोलह रूप्य मासक या २० सेम के दाने का एक धरण होता है। द्र० २:१९:६।

(२) सक्तु : सत्तू-जौ चना या केवल जौ का बनता है।

(३) पिण्याक : खली। द्र० २:१५:५२, २:१९:२९, ४३। गण० ३:२१८।

(४) धनु : चार हाथ लम्बा। याज्ञ० २:१६७, मनु० ८:२३७। गण० १:२५२, ३ २३७, १२८।

मत्स्यपरम्परा ह्येतेन दंष्टा[1]ऽभिमृष्टा[2] वा विषीभवति, यश्चैतदुदकं पिबति स्पृशति वा ।

३२. इससे खाने अथवा स्पर्श करने से मछलियाँ विषाक्त हो जाती हैं और जो यह जल पीता और स्पर्श करता है, वह भी विषयुक्त हो जाता है ।

रक्तश्वेत[1]सर्षतैपैर्गोधा[2] त्रिपक्ष[4]मुष्ट्रिका[5]यां भूमौ निखातायां निहिता वध्येनोद्धृता यावतः पश्यति तावन्मारयति, कृष्ण[6]सर्पो वा ।

३३. रक्त-श्वेत सरसों के साथ गोधा को उष्ट्रिका बाँधने की भूमि में तीन पक्ष तक गाड़ दी जाय तदनन्तर वध्य पुरुष द्वारा निकाली जाने पर, जैसे ही देखती है मार डालती है, इसी प्रकार किये जाने पर, कृष्ण सर्प भी मार डालता है ।

विद्युत्प्रदग्धोऽङ्गारो ज्वालो वा विद्युत्प्रदग्धैः काष्ठैर्गृहीतश्चानुवासितः कृतिकासु भरणीषु[3] वा रौद्रेण[4] कर्मणाऽभिहुतोऽग्निः प्रणीत[5]श्च निष्प्रतीकारो दहति ।

३४. बिजली से जला अंगारा अथवा ज्वाला बिजली से जले काष्ठों द्वारा अभिवर्धित कर तैयार की गयी, अग्नि में कृतिका अथवा भरणी नक्षत्र में रौद्र कर्म द्वारा हवन करके, सम्पन्न अग्नि प्रतीकार रहित होती है अर्थात् अतिदाहक होती है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) दष्टा : काटना ।

(२) अभिमृष्टा : स्पर्श किया हुआ ।

पाठभेद :

'गोधात्रिपक्ष' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गोधात्रीपक्ष' तथा 'मुष्ट्रिकाया' का तंजौर में 'मुष्टिकायां' तथा 'कृष्णसर्पो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कृष्णो सर्पो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) रक्त : लाल ।

(२) श्वेत : सादा या सफेद ।

(३) गोधा : गोह । द्र० १०:६:३५ ।

(४) पितृपक्ष : आश्विन मास का कृष्ण पक्ष ।

(५) उष्ट्रिका : ऊँटनी । द्र० १४:२:४४ ।

(६) कृष्ण सर्प : काला सांप :

पाठभेद :

'दग्धोऽङ्गारो ज्वालो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दग्धोद्वारोज्जवलो' तथा श्रीमूल में 'दग्धोऽङ्गारोऽज्वालो' तथा 'कर्मणाऽभिहुतो का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कर्मणाऽभिहतो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) अनुवासित : कुछ दिन तक रखने पर या बसाया हुआ ।

(२) कृत्तिका : सत्ताईस नक्षत्रों में तीसरा नक्षत्र, तारों का पुञ्ज ।

(३) भरणी : तीन तारों का पुञ्ज जो दूसरा नक्षत्र है ।

(४) रौद्र : रुद्र देवता के लिए है ।

(५) प्रणीत : अनुष्ठित या बनाया हुआ ।

कर्मा[1]रादग्निमाहृत्य क्षौद्रेण[2] जुहुयात्पृथक् ।
सुरया शौण्डि[3]कादग्निं मा[4]र्गतोऽग्निं घृतेन च ॥

३५. कर्मार से अग्नि लाकर क्षौद्र से हवन करे, शौण्डिक से अग्नि लाकर, सुरा से तथा मार्ग से अग्नि लाकर, घृत से हवन करे ।

माल्येन चैक[1]पत्न्यग्निं पुंश्च[2]ल्यग्निं च सर्षपैः ।
दध्ना[3] च सूतिका[4]स्वाग्निमा[5]हिताग्निं च तण्डुलैः ॥

३६. पतिव्रता की अग्नि में माला से, पुंश्चली की अग्नि में सर्षपों से, सूतिका गृह की अग्नि में दधि से तथा अग्निहो त्री की अग्नि में तण्डुलों (चावलों) से हवन करे ।

चाण्डा[1]ग्निं च मांसेन चिता[2]ग्निं मानुषेण च ।
समस्तान् बस्तवसया मानु[3]षेण ध्रुवे[4]ण च ॥

३७. चाण्डाल की अग्नि में मांस से, चिताग्नि में मनुष्य मांस से, हवन करे और पुनः समस्त अग्नियों में बकरे की वसा, मनुष्य मांस से, अश्वत्थ में (हवन) करे ।

पाठभेद :

'मार्गतोऽग्नि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'भागः वोऽसि', श्रीमूल में 'भार्ग्यायोऽग्नि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३५. (१) कर्मार : लोहार । याज्ञ० १:१६३ । मनु० ४:२१५ । गण० ३:२१९ ।

(२) क्षौद्र : शहद ।

(३) शौण्डिक : मदिरा बेचनेवाला । द्र० ४: १:२ ।

(४) मार्ग : रास्ता ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) एकपत्न्य : सती स्त्री ।

(२) पुंश्चली : व्यभिचारिणो या आचार ९ ।

(३) दध्ना : दही ।

(४) सूतिका : जच्चा घर ।

(५) आहिताग्नि : ब्राह्मण या अग्निहोत्री के घर की पवित्र अग्नि ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) चाण्डालाग्निं : डोम के घर की अग्नि । द्र० १:१४:३३, १:१४:३, ६२ ।

(२) चिताग्नि : चिता से लाई गयी अग्नि ।

(३) वस्तबसया : बकरे की चर्बी । गण० ३: २२० ।

(४) मानुष : मनुष्य का मांस । द्र० १:२०:४, गण० १:९९, ३:२०२ ।

(५) ध्रुव : सूखी लकड़ी या अस्वत्थ की लकड़ी ।

जुहु[1]यादग्निमन्त्रेण राजवृ[2]क्षस्य दारुभिः ।
एष निष्प्रतीकारोऽग्निर्द्विषतां नेत्रमोहनः ।।

३८. राजवृक्ष की लकड़ियों से अग्नि मन्त्र द्वारा हवन करे । यह अग्नि प्रतीकार रहित होता है और उससे शत्रुओं की दर्शन शक्ति मूढ हो जाती है ।

अदिते[1] नमस्ते, अनुमते[2] नमस्ते, सरस्वति[3] नमस्ते, देवसवितर्[4]नमस्ते ।

३९. अदिते नमस्ते इत्यादि मन्त्र से हवन किया जाय ।

अग्नये[1] स्वाहा, सोमाय[2] स्वाहा, [3]भूः स्वाहा, भुवः[4] स्वाहा ।

४०. अग्नये स्वाहा इत्यादि मन्त्र हवन में प्रयोगार्ह है ।

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे परबलघातप्रयोगः प्रथमोऽध्यायः ।

चौदहवें अधिकरण औपनिषदिक के अन्तर्गत परबलघातप्रयोग सम्बद्ध प्रथम अध्याय

पाठभेद :

'वृक्षस्य दारुभिः' का तंजौर में 'वृक्षदारुभिः', तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वृक्षकदारुभिः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) जुहुयात् : यज्ञ की हवि देना ।

(२) राजबृक्ष : अमिलतास या पियाल । द्र० ४:१:२३ । गण० ३:२१७ ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) अदिति : ऋग्वैदिक देवी । देवताओं की माता । ऋ० ८:१०:१४, १:१९:१०, १:१५३:३ ८:९:१५ ।

(२) अनुमति : वैदिक देवी अथर्वेद । गण० १:१८:२ । ऋ० १०:५६:९७, १०:१६:३ ।

(३) सरस्वति : वैदिक देवी । ऋ० १:३:१०, ११, १२, १:१३:९, १:८९:३ ।

(४) सवितु : वैदिक देवी । ऋ० १:३४:१०, १:२३, ३, १:२४:२६ ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) अग्नि : वैदिक देवता । ऋ० १:६६: ८, १:१४३, ५, ५:४:३, ३:१:१८, २:३, १६:९, २:१९:१५, २:३५, १:३:८, २:३६:३ ।

(२) सोम : वैदिक देवता, एक लता, चन्द्रमा, सुभृत कपूर ।

(३) भू : पृथ्वी, भूलोक । द्र० ७:४:२, ७ ।

(४) भुव : अन्तरिक्षलोक ।

पाठभेद

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे औपनिषदिके चतुर्दशाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः परघातप्रयोगः, आदितः षट्चत्वारिंशदुत्तरशततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इत्यौपनिषदिके परघातप्रयोगः प्रथमोऽध्यायः आदितः षट्चत्वारिंशदुत्तरशततमः ।

१४:१

आदितः षट्चत्वारिंशच्छततमः ।

समाप्त। आदि से एक सौ छियालीसवां अध्याय समाप्त।

क संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे उपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः परघातप्रयोगः, आदितः षट्चत्वारिंशदुत्तरशततमः ।

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे परघातप्रयोगः प्रथमोऽध्यायः ।:१।। आदितः षट्चत्वारिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ।।१४६।।

अध्याय २

[अष्टसप्ततिशततमं प्रकरणम्—प्रलम्भनम्[1], तत्र अद्भुतोत्पादनम्]

एक सौ अठहत्तरवाँ प्रकरण—प्रलम्भन और उसमें अद्भुतोत्पादन

शिरीषो[2]दुम्बर[3]शमी[4]चूर्णं सर्पिषा[5] संहृत्यार्धमासिकः क्षुद्योगः[6] ।

१. शिरीष, उदुम्बर एवं शमी का चूर्ण सर्पिष के साथ मिलाकर खाने से आधे मास तक भूख नहीं लगती । यह क्षुद्योग है ।

कशेरु[1]कोत्पल[2]कन्देक्षु[3]मूलविस[4]दूर्वा[5]क्षीर[6]घृत[7]मण्ड[8]सिद्धो मासिकः ।

२. कसेरुक, उत्पल कन्द, इक्षुमूल, विस, दूर्वा, क्षीर, घृत एवं मण्ड में सिद्ध योग एक मास तक क्षुधाशान्त करता है ।

पाठभेद :

'सर्पिषा संहृत्या' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सपिषां हृत्या' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) प्रलम्भन : धोखा देना, वञ्चना, भ्रान्त करना, प्रलोभन देना, छलना, मोहित करना ।

(२) शिरीष : सिरिस वृक्ष या शुकतरु । श्वेत शिरिष और कृष्ण । तीसरी प्रकार की शिरीष की छाल श्वेत-पीत या हरित पीत होती है । करहार या किनही कहते हैं । किणही का अपभ्रंश किनही है । यह एक विषघ्न द्रव्य है । एक प्रकार का और शिरीष पाया जाता है, जिसे भण्डीर कहते हैं ।

(३) उदुम्बर : गूलर ।

(४) शमी : शिम्बा, वागुजी, छिकुर, छेकरा । मनु० ८:२४, याज्ञ० १:३०२ ।

(५) सर्पिषा : घृत ।

(६) क्षुधा : भूख । मनु० ७:१३४, ४:१८७ ।

पाठभेद :

'कोत्पल' का तंजौर में 'कोल्पल' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) कशेरुक : इसे रोमराजलकन्द कहते हैं । वृष्यकन्द, राजकसेरुक, कसेरु, गुण्डकन्द, सूकरेष्ट नाम मिलता है । यह सारे भारत में प्राप्त है । शृंगाहक के साथ इसका उल्लेख तथा श्राद्ध में देने का विधान है । शंखलिखित धर्म सूत्र तथा पातञ्जलि महाभाष्य ।

(२) उत्पल : नील कमल ।

(३) इक्षमूल : गन्ना या ईख की जड़ ।

(४) विस : मृणाल या कमलनाल ।

(५) दूर्वा : दूब ।

(६) क्षीर : दूध ।

(७) घृत : घी ।

(८) मण्ड : मलाई या माड़ ।

१४:२:३-५]

माष[1]यव[2]कुलत्थ[3]दर्भमूल[4]चूर्णं वा क्षीरघृताभ्याम्, वल्ली[5]क्षीरघृतं वा सम[6]सिद्धं, साल[7]पृश्नि[8]पर्णीमूलकल्कं पयसा पीत्वा, पयो वा तत्सिद्धं मधुघृताभ्यामशित्वा मासमुपवसति ।

३. माष, यव, कुलत्थ एवं दर्भमूल का चूर्ण क्षीर एवं घृत से पीकर अथवा वल्ली, क्षीर एवं घृत समान प्रमाण में सिद्ध करके, पीकर अथवा साल एवं पृश्निपर्णी के मूल का कल्क दूध से पीकर अथवा उक्त कल्क के साथ सिद्ध दूध मधु-घृत के साथ पीकर एक मास तक उपवास करने में मनुष्य समर्थ होता है ।

श्वेतबस्तमूत्रे सप्तरात्रोषितैः सिद्धार्थकैः सिद्धं तैलं कटुका[2]लाबौ[3] मासार्धमासस्थितं चतुष्पद[4]द्विपदानां[5] विरूप[6]करणम् ।

४. श्वेत बकरे के मूत्र में सात रात तक रखे गये, सिद्धार्थक का तैल कडुवे तुम्बी में एक महीना या पन्द्रह दिन रहने पर, चतुष्पदों एवं द्विपदों के ऊपर लगाये जाने पर, विरूप करता है ।

तक्र[1]यव[2]भक्षस्य सप्तरात्रादूर्ध्वं श्वेतगर्दभस्य लेण्ड[3]यवैः सिद्धं गौर[4]सर्षपतैलं विरूपकरणम् ।

५. सात रात्रि तक तक्र-यव खाने वाले पुरुष को बाद में श्वेत गर्दभ की लीद एवं यव से सिद्ध गौरसर्षप का तैल प्रयोग करने से विरूप करता है ।

पाठभेद

'तत्सिद्धं मधु' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तत्सिद्धमधु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी ।

३. (१) माष : उर्द ।

(२) यव : जौ ।

(३) कुलत्थ : कुलथी, देव यज्ञ में यह निषिद्ध माना गया है ।

(४) दर्भमूल : कुश की जड़ ।

(५) वल्ली : अजमोदा, अजवायन, देशी अजवायन की लता होती है ।

(६) सम : बराबर ।

(७) साल : साल वृक्ष ।

(८) पृश्नि : परर्णी ।

(९) जलकुम्भी : जलपिप्पली, गज पीपल मिट वन ।

पादटिप्पणी :

४. (१) सिद्धार्थक : सरसो ।

(२) कटुक : तीक्ष्ण, तीता, कडुआ, तीती ।

(३) अलावु : तुम्बी, लौकी, विष्णु धर्मसूत्र के अनुसार निषिद्ध आहारों में कटु तुम्बी भी है, इसका विषघ्न प्रयोग है । विशेषतः सर्प दंश में ।

(४) चतुष्पद : चौपाया ।

(५) द्विपद : दो पैरवाले ।

(६) विरूप : रंगरूप बदल जाना ।

पादटिप्पणी :

५. (१) तक्र : मट्ठा, घोल या छाछ ।

(२) यव : जव ।

(३) लेण्ड : लीद, विष्टा ।

(४) गौरसर्षप : सफेद सरसो ।

एतयो[1]रन्यतरस्य मूत्रलेण्डरससिद्धं सिद्धार्थकतैलमर्क[2]तूल[3]पतङ्ग[4]चूर्णप्रतीवापं[5] श्वेतीकरणम् ।

६. श्वेत बकरे या श्वेत गर्दभ के मूत्र और लीद के रस में सिद्ध सरसों का तैल अर्क, तूल एवं पतङ्ग का चूर्ण का एक साथ मिश्रण श्वेतोकरण योग होता है। अर्थात् इसका प्रयोग श्वेत कर देता है।

श्वेतकुक्कुटा[1]जगर[2]लेण्डयोगः श्वेतीकरणम् ।

७. श्वेत कुक्कुट एवं अजगर के पुरीष (लीद) से सम्पन्न योग श्वेत करने वाला होता है।

श्वेतबस्त[1]मूत्रे श्वेतसर्षपाः सप्तरात्रोषितास्तक्रमर्कक्षीर[2]लवणं धान्यं[3] च पक्षस्थितो योगः श्वेतीकरणम् ।

८. श्वेत बकरे के मूत्र में सात रात्रि पर्यन्त रखे गये श्वेत सरसों और तक्र, अर्कक्षीर, लवण एवं धान्य पन्द्रह दिन स्थित रहे, यह योग श्वेतोकरण है।

कटुकालाबौ[1] वल्लीगते[2] गतमर्धमासस्थितं गौरसर्षपपिष्टं रोम्णां[3] श्वेतीकरणम् ।

९. लता में लगे कटुक अलाबु (तुम्बी) में पन्द्रह दिन रखा गया श्वेत सरसो पीसने के पश्चात् उपयोग करने पर रोम को श्वेत करता है।

पाठभेद :

'सिद्धार्थक तैल' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सिद्धार्थ तैल' तथा 'पतङ्गचूर्ण' का तंजौर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पतङ्गपूर्ण' पाठभेद मिलता।

पादटिप्पणो :

६. (१) एतयोश्वेत : बकरी या गधे से तात्पर्य है।

(२) अर्क : मदार।

(३) तूल : रुई, कपास।

(४) पतङ्ग : पारस पीपल, शाली भी अर्थ किया गया है। पतंग का उल्लेख सुश्रुत संहिता तथा अष्टांग हृदय में मिलता है। इसको पत्रांग पट्ट रंजन पट्टराग, सपन, बकम कहते हैं। बकम का बूकम नाम प्रसिद्ध है। दक्षिण भारत तथा बंगाल में इसके स्वयं जात वृक्ष होते है। एक मत के अनुसार पट्टरङ्गम् भी अर्थ किया गया है।

(५) प्रतीवाप : द्र० २:२५:२२, २:१२:५, ८:९:१२। गण० ३:२२३।

पादटिप्पणी :

७. (१)कुक्कुट : मुर्गा या जंगल का मुर्गा।

(२) अजगर : अजगर।

पादटिप्पणी :

८. (१) बस्त : बकरा।

(२) अर्कक्षीर : मदार का दूध।

(३) धान्य : अनाज। द्र० १४:१:३३; गण० ३:२१८।

पाठभेद :

'गतम्' का श्रीमूलमें 'नगरम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

९. (१) कन्दुकालावु : तीती तुम्बी या लौकी या कुट्टतुम्बी। गण० ३:२२१।

(२) वल्लीगते : लता में लगा रहना। द्र० १४:२:३। गण० ३:२२१।

(३) रोम्ण : बाल। द्र० ५:२:१४।

अलोजुनेति[1] यः कीटः श्वेता[2] च गृह[3]गोलिका ।
एतेन पिष्टेनाभ्यक्ताः केशाः स्युः शङ्खपाण्डराः ॥

१०. अलोजुन कीट, श्वेत गृहगोलिका इन्हें पीसकर लगाने से केश शंखवत् श्वेत हो जाते हैं ।

गोमयेन[1] तिन्दुका[2]रिष्ट[3]कल्केन वा मर्दिताङ्गस्य भल्लातकरसानुलिप्तस्य मासिकः कुष्ठयोगः ।

११. गोमय अथवा तिन्दुक एवं अरिष्ट के कल्क से मर्दन किये गये अंग में भल्लातकरस का लेप करने से एक मास में कुष्ठ हो जाता है ।

कृष्णसर्पमुखे गृहगोलिकामुखे वा सप्तरात्रोषिता गुञ्जा[1]ः कुष्ठयोगः ।

१२. कृष्णसर्प अथवा गृहगोलिका के मुख में सात रात्रि तक स्थित गुञ्जा कुष्ठ उत्पन्न करता है ।

शुकपित्ता[1]ण्ड[2]रसाभ्यङ्ग[3]ः कुष्ठयोगः ।

१३. शुक के पित्त एवं अण्डा के रस का लेप कुष्ठोत्पादक होता है ।

पाठभेद :

'अलोजुनेति यः कीटः' का श्रीमूल में 'अर्कतूलोऽर्जुने कीटः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अलेजुन : एक प्रकार का कीट या कीड़ा ।

(२) श्वेत : सफेद, श्वेत कौड़ी, श्वेत कन्टकारी श्वेत दूर्वा ।

(३) गृहगोलिका : छिपकली । गण० ३:२१४ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) गोमय : गोवर ।

(२) तिन्दुक : तिन्द का वृक्ष । इसका दन्तधावन निषिद्ध है । यह सहारनपुर और शिवालिक के पश्चिम भाग में होते हैं । इसके दो प्रकार होते हैं । एक को विष तेन्दू दूसरे को पित्रा कहते है । इसका फल कड़वा या दुर्गन्ध युक्त होता है ।

(३) अरिष्ट : रीठा, चर्म वैलूण्यकर योग में काम आता है, आयुर्वेद साहित्य, निघण्टु एवं संस्कृत कोषों में 'अरिष्ट' संज्ञा बह्वर्थक है । इस प्रसङ्ग में इससे 'रीठा' समझने हैं । इसका प्रयोग नीम के वृक्ष के रूप में भी मिलता है । मादक शराब के लिए भी इस शब्द का प्रयोग किया जाता है । इसके बीज काले चिकने होते हैं । कमायूँ के जंगलों में बहुत मिलते हैं । गण० ३:२३, ३:२३३ ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) गुञ्जा : घुमची, चोडली, रत्ती । द्र० १४:१:११, ११:३:१ । गण० ३:२१५, २३६ ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) पित्त : पित्त ।

(२) अण्ड : अण्डा ।

(३) अभ्यङ्ग : मालिस या मर्दन ।

कुष्ठस्य प्रियाल[1]कल्क[2]कषाय[3]: प्रतीकारः ।

१४. प्रियाल कल्क का कषाय, कुष्ठ का प्रतीकार है अर्थात् कुष्ठ दूर करता है।

कुक्कुट[1]कोशातकी[2]शतावरी[3]मूलयुक्तमाहारयमाणो मासेन गौरो भवति ।

१५. कुक्कुट, कोशतकी एवं शतावरी मूल का आहार कर्ता एक मास में गौर हो जाता है।

वट[1]कषाय[2]स्नातः सहचर[3]कल्कदिग्धः कृष्णो भवति ।

१६. वट कषाय में स्नात तथा सहचर के क्वाथ से लिप्त पुरुष कृष्ण वर्ण हो जाता है।

शकुन[1]कङ्गु[2]तैलयुक्ता हरिताल[3]मनःशिला[4]ः श्यामीकरणम् ।

१७. शकुन एवं कङ्गु तैल से युक्त हरिताल और मनः शिल श्यामवर्ण करता है।

खद्योत[1]चूर्णं सर्षपतैलयुक्तं रात्रौ ज्वलति ।

१८. सर्षप तैल युक्त खद्योत चूर्ण रात्रि में प्रज्वलित होता है।

पादटिप्पणी :

१४. (१) प्रियाल : चिरौंजी । द्र० १३:४:१९ । गण० ३:२०३, २२३ ।

(२) कल्क : काढ़ा या मिट्टी । यज्ञ० १:२७१ । गण० ३:२२३ ।

(३) कषाय : एक तरह का क्वाथ जिसका चतुर्थांश शेष रहता है ।

पाठभेद :

'कुक्कुट' का श्रीमूल में 'कुक्कुटो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) कुक्कुट : १४:२:७ ।

(२) कोशातकी : पटोली, तरोई या धामार्गव या चिचड़ा ।

(३) शतावरी : संतावर ।

पादटिप्पणी :

१६. (१) वट : बरगद । गण० ३:२२३ ।

(२) कषाय : क्वाथ । द्र० १४:२:१४ ।

(३) सहचर : पियावासा या कटसरैया। गण० ३:२२३ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) शकुन : गृद्ध । याज्ञ० १:१६८। गण० ३:२२३ ।

(२) कंगु : कांगनी या प्रियङ्गु ।

(३) हरिताल : गन्धक संखिया से बना एक खनिज द्रव्य ।

(४) मनःशिला : मैनशिल, कुनटी ।

पादटिप्पणी :

१८. (१) खद्योत : जुगनू या सनकिरवा । द्र० १४:३:३ ।

खद्योतग[1]ण्डूपदचूर्णं समुद्रज[2]न्तूनां भृ[3]ङ्गकपालानां ख[4]दिरक[5]र्णिकाराणां पुष्पचूर्णं वा शकुनकङ्गुतैलयुक्तं तेज[6]नचूर्णम् ।

१९. खद्योत एवं गण्डूपद चूर्ण, समुद्र जन्तुओं का चूर्ण, भृंग कपालों का चूर्ण अथवा खदिर एवं कर्णिकार के पुष्प का चूर्णं शकुन एवं कङ्गुतैल से युक्त तेजन चूर्ण या—

परि[1]भद्रकत्वङ्[2]मषी [3]मण्डूकवसया युक्ता गात्रप्रज्वालनमग्निना ।

२०. मण्डूकवसा से युक्त नोम की छाल से वनी स्याही शरीर को अग्नि से बिना पीडा के प्रज्वलित करती है ।

पारिभद्रकत्वक्तिलकल्कप्रदिग्धं शरीरमग्नि ना ज्वलति ।

२१. पारिभद्र की छाल एव तिलकल्क से लिप्त शरीर (विना पीड़ा के) अग्नि से प्रज्वलित होता है ।

पीलुत्व[1]ङ्मषीमयः पिण्डो हस्ते ज्वलति ।

२२. पीलुछाल की स्याही का पिण्ड (गोला) हाथ में प्रज्वलित होता है ।

मण्डूकवसादिग्धोऽग्निना ज्वलति ।

२३. मण्डूकवसा से लिप्त होने पर, अग्नि से प्रज्वलित होता है ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) गण्डूपद : केंचुआ छोटा, गेडुए ।

(२) समुद्रजन्तु : समुद्री जीव ।

(३) भृंग : भौंरा; मस्तकचूर या भुजंगा या कौंछग पक्षी ।

(४) खदिर : खैर । गण० ३:२२४ ।

(५) कर्णिकार : कनैल । गण० ३:२२४ ।

(६) तेजन चूर्णः : द्र० १३:२:२३ । गण० ३:३१६ ।

पादटिप्पणी :

२०. (१) पारभद्रक : नीव । द्र० १४:२:२७, गण० ३:२०३, २२४, २२५ ।

(२) मषी : कज्जल, स्याही । द्र० १४:४:१९ । गण० ३:२०३, २२४ ।

(३) मण्डूक : मेढ़क ।

पाठभेद :

'भद्रकत्वक्तिल' का श्रीमूल में 'भद्रकत्वग्वज्र-कदलीतिल' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) पीलुत्वक् : पीलू की छाल । द्र० १४:१:१२, २३, १४:२:३४ । गण० ३:२२६, सिद्धमन्त्र० ९३, ९८, १३१ । हृदयदीपिका० ११४ ।

(२) मषी : स्याही ।

तेनप्रदिग्धमङ्गं कु[1]शाम्रफलतैलसिक्तं स[2]मुद्रमण्डूकीफे[3]नकस[4]र्जरसचूर्णयुक्तं वा ज्वलति ।

२४. उक्त पिण्ड से लिप्त अंग कुश एवं आम्रफल के तैल से सिक्त अथवा समुद्र की मण्डूकी, समुद्रफेन, एवं सर्जरस से युक्त होने पर (अग्नि से) प्रज्वलित होता है ।

मं[1]ण्डूकक[2]ुलीरादीनां वसया समभागं तैलं सिद्धमभ्यङ्गं गात्राणामग्निप्रज्वालनम् ।

२५. मण्डूक, कुलीर आदि की वसा के साथ समभाग सिद्ध तैल लगाने से शरीर अग्नि से प्रज्वलित होता है ।

बेणु[1]मूलशैव[2]ललिप्तमङ्गं मण्डूकवसादिग्धमग्निना ज्वलति ।

२६. वेणुमूल एवं शैवाल लिप्त तथा मण्डूकवसा परिलिप्त अंग अग्नि से प्रज्वलित होता है।

पारिभ[1]द्रकप्रतिबलो[2]वञ्जुल[3]वज्र[4]कद[5]लीमूलकल्केन मण्डूकवसासिद्धेन तैलेनाभ्यक्तपादोऽङ्[6]गारेषु गच्छति ।

२७. पारिभद्रक, प्रतिवला, वञ्जुल, वज्र एवं कदली के मूल के कल्क और मण्डूकवसा से सिद्ध तैल पैर में लगाकर पुरुष अंगारों पर चलने में समर्थ होता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) कुशाम्र : एक फल कुसुम । द्र० १४:२:३५ ।

(२) समुद्रमण्डूकी : समुद्र की मेढ़की । गण० ३:२२२ ।

(३) फेन : समुद्रफेन ।

(४) सर्ज : विरोजा, साल से चूने वाला रस या राल । द्र० १३:७:१८, गण० ३:२२४ ।

पाठभेद :

'मण्डूक कुलीरा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मण्डूकवसाकुलीरा', श्रीमूलमें' 'मण्डूकवसासिद्धेन पयसा कुलीरा' तथा 'अभ्यङ्गं' का तेलगू अनुप्रति लिपि में 'अभ्यङ्गो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२५. (१) कुलीर : केकड़ा; चौथी राशि अर्थात् कर्क । द्र० १४:२:४०, गण० ३:२२५ ।

(२) मण्डूक : मेढ़क, कुछ पौधों के नाम यथा मण्डूकपर्णी ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) वेणुमूल : बांस की जड़ ।

(२) शैवल : शैवाल; सेवार, जलनीली ।

पाठभेद :

'वसासिद्धेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपिमें 'वसादिग्धेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२७. (१) पारिभद्रक : नीबू द्र० २३:२:२० ।

(२) प्रतिबला : खरेठो औषधि विशेष ।

(३) वन्जुल : बेंत, नरकुल, तिनिस ।

(४) वज्र : थोहर । द्र० १०:६:३५ ।

(५) कदली : केला ।

(६) अंगार : जलता कोयला ।

उपोदका[1] प्रतिबला[2] वञ्जुलैः[3] पारिभद्रकः ।
एतेषां मूलकल्केन मण्डूकवसया सह ॥

२८. उपोदका, प्रतिबला, वञ्जुल एवं पारिभद्रक को मूल का कल्क मण्डूक वसा के साथ—

साधयेत्तैलमेतेन पादावभ्यज्य निर्मलौ ।
अङ्गारराशौ विचरेद्यथा कुसुमसंचये ॥

२९. सिद्ध करे, इस तैल को निर्मल पैरों में लगाकर, पुष्प राशि के समान अंगार राशि पर, पुरुष चलने में समर्थ होता है ।

हंसक्रौञ्च[1]मयूराणामन्येषां वा महा[2]शकुनीनामुदकप्लावानां[3] पुच्छेषु बद्धानल[4]दीपिका रात्रावुल्का[5]दर्शनम् ।

३०. हंस, क्रौंच, मयूर अथवा अन्य बड़े जल पक्षियों के पूँछों में बांधी गयी नलदीपिका रात्रि में उल्का सदृश दिखायी पड़ती है अर्थात् लोगों में भय उत्पन्न करती है ।

वैद्युतं भस्माग्निशमनम् ।

३१. विद्युत् से जली लकड़ो का भस्म अग्नि को शान्त करता है ।

स्त्रीपुष्प[1]पायिता माषा[2] व्रजकुली[3]मूलं मण्डूकवसामिश्रं चुल्ल्यां[4] दीप्तायामपाचनम् ।

३२. स्त्रीपुष्पपायिता माष एवं मण्डूकवसामिश्रित व्रजकुलीमूल चूल्हा के जलने पर भी नहीं पकते हैं ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) उपोदक : पुदीना ।

(२) प्रतिबला : खरेटी । द्र० १४:२:२७ ।

(३) वञ्जुल : वेत । द्र० १४:२:२७ ।

(४) पारिभद्रक : नीम । द्र० १४:२:२०, २७ ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) क्रौञ्च : जलकुक्कुटी, कुररी । मनु० १२:६४ ।

(२) महाशकुनी : बड़ा पक्षी । द्र० १४:२:१७ । गण० ३:२२३ ।

(३) उदकप्लावानाम् : जल में तैरने वाले । गण० ३:१०९, १८१, २१५ ।

(४) नल : नरसल या बेंत ।

(५) उल्का : लूक । मनु० १:३८, याज्ञ० १:१४५, १३:१:१०, गण० ३:१८२ ।

पाठभेद :

'मूलं मण्डूक' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मूलमण्डूक' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) पुष्पपायिता : रजोधर्म का रक्त ।

(२) माषा : उड़द ।

(३) व्रजकुली : मूल, कटहल की जड़ गणपति शास्त्री के अनुसार । गण० ३:३२५ ।

(४) चुल्ल : चूल्हा ।

चुल्लीशोधनं प्रतीकारः ।

३३. चूल्हे से उतार कर उन्हें दूर करना ही उसका प्रतीकार है ।

पीलु[1]मयो मणि[2]रग्निगर्भः सुवर्चला[3]मूलग्रन्थिः सूत्रग्रन्थिर्वा पिचु[4]परिवेष्टितोमुखादग्निधूमोत्सर्गः ।

३४. पीलु का अग्निगर्भ कलश, सुवर्चलामूल की ग्रन्थि (गांठ) अथवा सुवर्चला की सूत्रग्रन्थि पिचु से परिवेष्टित होकर मुख से अग्नि-धूम निकालने का साधन होती है ।

कुशाम्र[1]फलतैलसिक्तोऽग्निर्वर्षप्रवातेषु ज्वलति ।

३५. कुश, आम्रफल, तैल से प्रज्वलित अग्नि वर्षा और वात (वायु) में भी जलती रहती है।

समुद्रफेनकस्तैलयुक्तोऽम्भसि प्लव[1]मानो ज्वलति ।

३६. तैल युक्त समुद्रफेन जल में तैरता हुआ, प्रज्वलित होता है ।

प्लव[1]मानानामस्थिषु कल्मा[2]षवेणुना निर्मथितोऽग्निर्नोदकेन शाम्यति, उदकेन ज्वलति ।

३७. प्लवमानों को हड्डियों में कल्माषवेणु से मथकर उत्पन्न की गयी अग्नि जल से शान्त नहीं होती अपितु जल से और प्रज्वलित होती है ।

पाठभेद

'पिचुपरिवेष्टितो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विचुपरिवेष्टितो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३४. (१) पीलु : गुड़फल । द्र० १४:१:१३, २३, १४:२:२२, गण० ३:२२६ ।

(२) मणि : बड़ा कलश ।

(३) सुवर्चला : अलसी, हुरहुर सूर्यमुखी का फूल, आदित्यभक्ता, सिद्धमन्त्र ५९, हृ० दी० २० ।

(४) पिचु : रुई । गण० ३२६ :

पादटिप्पणी

३५. (१) कुशाम्र : द्र० १४:२:२४ ।

३६. (१) प्लवमान : तैरना । द्र० २:२:२४; १४:२:३० ।

पाठभेद :

'प्लवमानानाम्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्लवङ्गमानाम्' पाठभेद मिलता है । तथा 'उदकेन ज्वलति' का श्रीमूल में 'उटकेन च ज्वलति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) प्लवमान : तैरने वाली पक्षियों की हड्डी ।

(२) कल्माष : चितकबरा । द्र० १:२०:४, गण० ३:२२६ ।

शस्त्रहतस्य शूलप्रोतस्य वा पुरुषस्य वामपार्श्वपर्शु[1]कास्थिषु कल्माषवेणुना-निर्मथितोऽग्नि, स्त्रियः पुरुषस्य वाऽस्थिषु मनुष्यपर्शुकया निर्मथितोऽग्निर्यत्र त्रिरपसव्यं गच्छति न चात्रान्योऽग्निर्ज्वलति ।

३८. शस्त्र द्वारा हत अथवा शूल निहत पुरुष के वामपार्श्व की पसलियों में कल्माषवेणु द्वारा मथकर उत्पन्न की गयी अग्नि अथवा स्त्री और पुरुष को पसली की हड्डियों में पुरुष की पसली (की हड्डी) से मथकर उत्पादित अग्नि जहाँ तीन वार अपसव्य (बायीं ओर से) घुमा दी जाय वहाँ अन्य अग्नि प्रज्वलित नहीं होती है ।

चुच्छुन्दरी[1] खञ्जरीटः[2] खारकीटश्च[3] पिष्यते ।
अश्वमूत्रेण संसृष्टा निगलानां[4] तु भञ्जनम् ॥

३९. चुच्छुन्दरी, खञ्जरीट एवं खारकीट पृथक्-पृथक् अश्वमूत्र के साथ पीसा जाय पुनः मिश्रित किया जाय । यह मिश्रण लौह तोड़ने वाला होता है ।

अयस्कान्तो[1] वा पाषाणः कुलीर[2]दर्दुर[3]खारकीट[4]वसाप्रदेहेन द्विगुणः ।

४०. अथवा कुलीर, दर्दुर एवं खारकीट की वसा से लिप्त अयस्कान्तपाषाण दूना प्रभावकारी होता है अर्थात् निगड भंजक होता है ।

नारकगर्भः[1] कङ्क[2]भास[3]पार्श्वो[4]त्पलो[5]दकपिष्टश्चतुष्पदद्विपदानां पादलेपः ।

४१. नारकगर्भ कंक एवं भास की पसली उत्पल और जल से पीसकर चतुष्पदों और द्विपदों का पादलेप बनता है । इसका लेप करके चलने से थकावट नहीं आती ।

पाठभेद :

'पर्शुकास्थिषु' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पशुकास्थिषु' तथा 'पशुर्कया' का 'पशुकया' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) पर्शुला : पसली ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) चुच्छुन्दरी : छँछ़दर । गण० ३: १३०, २१८ ।

(२) खञ्जरीट : खञ्जन । गण० ३:२२६ ।

(३) खारकीट : खारी भूमि से उत्पन्न कीड़ा या ऊसर भूमि से उत्पन्न कीड़ा ।

(४) निगल : सिक्कड़, जंजीर, शृंखला ।

पाठभेद :

'कुलीरद' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कुलिन्द' तथा श्रीमूल में 'कुलीराण्ड' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) अयस्कान्त : चुम्बक । अयसकरा अर्थ लोहा या फौलाद । गण० १:२२३, ३:२२६ ।

(२) कुलीर : केकड़ा, कर्कट । द्र० १४:२:२५, गण० ३:३२७ ।

(३) दर्दुर : मेंढ़क ।

(४) खारकीट : द्र० १४:२:३९ ।

पाठभेद :

'नारकगर्भः' का श्रीमूल में 'दारकगर्भः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) नारकगर्भ : बछड़े का गर्भ ।

(२) कङ्क : बगुला ।

(३) भास : गृद्ध ।

(४) पार्श्व : पसली ।

(५) उत्पल : नील कमल ।

उलूकगृध्रवसाभ्यामुष्ट्रचर्मोपानहावभ्यज्य वटपत्रैः प्रतिच्छाद्य पञ्चयोजनान्यश्रान्तो गच्छति ।

४२. उलूक और गृध की वसा से, ऊँट के चर्म से, बने जूते लिप्त कर तथा उन्हें वट पत्र से आच्छादित कर (और उन्हें पहनकर) पचास योजन बिना श्रम के मनुष्य चलने में समर्थ होता है।

श्येन[1]कङ्क[2]काक[3]गृध्र[4]हंस[5]क्रौञ्च[6]वीचीर[7]ल्लानां मज्जानो रेतांसि वा योजनशताय, सिंहव्याघ्रद्वीपिकाकोलूकानां मज्जानो रेतांसि वा ।

४३. श्येन, कंक, काक, गृद्ध, हंस, क्रौंच एवं वीचिरल्ल की मज्जा या रेतस अथवा सिंह, व्याघ्र, द्वीपि, काक और उलूक की मज्जा या रेतस् (का लेप) सौ योजन बिना श्रम गमन कराने वाला होता है।

सार्ववर्णिकानि गर्भपतनान्युष्ट्रिकायामभिषूय[2] श्मशाने प्रेतशिशून वा तत्समुत्थितं मेदो योजनशताय ।

४४. सभी वर्णों के गर्भपातों को मिट्टी के बर्तन में निचोड़कर अथवा मृत शिशुओं को श्मशान स्थल पर बर्तन से निचोड़ कर उन सब मज्जाओं का लेप सौ योजन (बिना श्रम) गमन कराने वाला होता है।

अनिष्टैरद्भुतोत्पातैः परस्योद्वेगमाचरेत् ।
आराज्यायेति निर्वादः समानः कोपे उच्यते ।।

४५. विजिगीषु राज्य के लिये अनिष्टकारी एवं अद्भुत उत्पातों से शत्रु में उद्वेग उत्पन्न करे, द्वेषभाव होने पर, यह कलङ्क दोनों पक्ष के लिये समान है।

पाठभेद :

'वीचीरल्लानां' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रति- में 'वीचिरल्लानां' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४३. (१) श्येन : बाज ।
(२) कङ्क : बक, बगुला ।
(३) काक : कौआ । द्र० ९:१:३१, १४:३:७७ ।
(४) गृद्ध : गीध ।
(५) हँस : हंस ।
(६) कौञ्च : जल कुक्कुट ।
(७) बीचीरल्ल : एक जीव उसकी पीठ पर कम्बल की तरह रेखा होती है।
(८) रेतसि : वीर्यं ।
(९) द्विपिन् : चीता ।

पाठभेद

'सार्ववर्णि' का तंजौर में 'साप्तपर्णि' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सार्पपर्णि' तथा 'गर्भपतनानि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गर्भं वानानि' तथा 'अभिषूय' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिष्ट्वा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

४४. (१) वर्णं : द्र० १:२१:७ ।
(२) अभिषूय : निचोड़ या चुआकर ।
४५. (१) कोप : विद्रोह । द्र० १:१३:२०, १:१६:२९ ।

[४:२]

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे प्रलम्भने अद्भुतोत्पादनं द्वितीयोऽध्यायः। आदितः सप्तचत्वारिंशच्छततमः ।

चौदहवें अधिकरण औपनिषदिक के अन्तर्गत प्रलम्भन में अद्भुतोत्पादन सम्बद्ध 'द्वितीय अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ चौहत्तरवाँ अध्याय समाप्त ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्रीसंस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे औपनिषदिके चतुर्दशाधिकरणे द्वितीयोऽध्यायः प्रलम्भने अद्भुतोत्पादनम्, आदितः सप्तचत्वारिंशच्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इत्यौपनिषदिके प्रलम्भने अद्भुतोत्पादनं द्वितीयोऽध्यायः आदितसप्तचत्वारिंशदुत्तरशततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे औषनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे द्वितीयोध्यायः प्रलम्भने अद्भुतोत्पादनम् आदितस्सप्तचत्वारिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्रीसंस्करण में—

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे प्रलम्भने अद्भुतोत्पादनं द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ आदितः सप्तचत्वारिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥१४७॥

अध्याय ३

[अष्टप्ततिशततमं प्रकरणम्—प्रलम्भनम्, तत्र भैषज्यमन्त्रयोगः]

एक सौ अठहत्तरवाँ प्रकरण—प्रलम्भन और उससे भैषज्ययोग

मा[१]र्जारोष्ट्र[२]वृक[३]वरा[४]हश्वा[५]विद्वागु[६]लीन[७]प्तृर्का[८]कोलू[९]कानामन्येषां वा निश[१०]ाचराणां सत्त्वानामेकस्य द्वयोर्बहूनां वा दक्षिणानि वामानि चाक्षीणि गृहीत्वा द्विधा चूर्णं कारयेत्।

१. मार्जार, ऊँट, वृक, वराह श्वाविद्, वागुली, नप्ता, काक, उलूक अथवा अन्य रात्रिचर प्राणियों में से एक, दो या बहुतों की दाहिनी और बायीं आँखें लेकर पृथक्-पृथक् चूर्ण बना लें।

ततो दक्षिणं वामेन वामं दक्षिणेन समभ्यज्य रात्रौ तमसि च पश्यति।

२. तदनन्तर उनकी बायीं आँख का चूर्ण अपने दाहिनी आँख में तथा दाहिनी आँख का चूर्ण बायीं आँख में लगाकर (व्यक्ति) रात्रि में अन्धकार के समय देखने में समर्थ होता है।

एको[१]म्लकं वरा[२]हाशि ख[३]द्योतः काल[४]शारिवा ॥
एतेनाभ्यक्तनयनो रात्रौ रूपाणि पश्यति ॥

३. एक अम्लक, वराह की आँख, खद्योत एवं कालशारिवा उन्हें (इनका योग) आँख में लगाकर मनुष्य रात्रि में रूप देखने में समर्थ होता है।

पाठभेद :

'श्वाविद्वागुली' का तंजौर में 'श्वाविद्धगुली' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'श्वाविद्धवागुली' तथा 'वामानि चाक्षीणि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि 'वामानि वाक्षीणि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१. (१) मार्जार : बिल्ली :
(२) उष्ट्र : ऊँट।
(३) वृक : भेड़िया।
(४) वराह : सूअर।
(५) श्वावित् : शाही या शल्यक्।
(६) वागुली : चमगादण।
(७) नप्तृ : तीतर।
(८) काक : कौआ।
(९) उलूक : उल्लू।
(१०) निशाचर : रात में चलने वाले।

पादटिप्पणी :

३. (१) अमलक : बड़हल, लकुच।
(२) वराह : सूअर। द्र० १४:३१।
(३) खद्योत : जुगनू, सनकिरवा। द्र० १४:
२:१८।
(४) कालशारिवा : भद्रा।

त्रिरात्रोपोषितः[१] पुष्येण[२] शस्त्रहतस्य शूलप्रोतस्य वा पुंसः[३], शिरःकपाले मृत्तिकायां यवानावास्याविक्षीरेण[४] सेचयेत् ।

४. तीन रात तक उपवास करने वाला पुरुष पुष्य नक्षत्र युक्त काल में शस्त्रहत अथवा शूल प्रोत पुरुष के शिर:कपाल में मिट्टी रखकर, उसमें जौ बोकर, उसे अविक्षोर से सींचे ।

ततो यवविरू[१]ढमालामाबध्य नष्टच्छायारूपश्चरति ।

५. उससे उत्पन्न जौ की माला पहनकर, रूप एवं छाया रहित होकर, मनुष्य विचरण करने में समर्थ होता है ।

त्रिरात्रोपोषितः पुष्येण श्व[१]मार्जा[२]रोलू[३]कवा[४]गुलीनां दक्षिणानि वामानि चाक्षीणि द्विधा चूर्णं कारयेत् ।

६. तीन रात्रि तक उपवास करने वाला पुरुष, पुष्य नक्षत्रयुक्त काल में, श्वान, मार्जार, उलूक एवं बागुली को दाहिनो एवं बायों आँखें लेकर उनका पृथक्-पृथक् चूर्ण करे ।

ततो यथास्वमभ्य[१]क्ताक्षो नष्टच्छायारूपश्चरति ।

७. तदनन्तर दाहिनो आँख का चूर्ण दाहिनी आँख और बायीं आँख का चूर्ण बायीं आँख में लगाकर, मनुष्य छाया-रूप रहित होकर, विचरण करता है ।

पाठभेद :

'पुष्येण शस्त्र' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पुष्येशस्त्र' तथा 'यवानावास्यावि' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यवानां वस्तावि' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४. (१) पोषित : उपवास ।
(२) पुष्य : पुष्य नक्षत्र ।
(३) पुंस : पुरुष । द्र० १४:३:७९ ।
(४) अविक्षीर : भेड़ का दूध ।

पादटिप्पणी :

५. (१) विरुढ़ : अंकुरित ।

पादटिप्पणी :

६. (१) श्वश्वान : कुत्ता । द्र० ५:१:२९ ।
(२) मार्जार : बिल्ली । द्र० १४:३१,७७ ।
(३) उलूक : उल्लू । द्र० १४:२:४३, १४:१:१७, १७ ।
(४) वागुली : चमगादड़ ।

पादटिप्पणी :

७. (१) अभ्क्तय : प्रलिप्त । द्र० १४:३:१३ ।

त्रिरात्रोपोषितः पुष्येण पुरुषघातिनः कोण्डकस्य[1] शलाका[2]मञ्जनीं[3] च कारयेत् ।

८. तीन रात्रि तक उपवास करने वाला पुरुष, पुष्य नक्षत्र युक्त काल में पुरुषघाती बाण का शलाका और अञ्जनी निर्मित कराये ।

ततोऽन्यतमेनाक्षि[1]चूर्णेनाभ्यक्ताक्षो नष्टच्छाया रूपश्चरति ।

९. तदनन्तर उस शलाका से श्वमार्जारादि के किसी एक आँख का चूर्ण अपनी आँख में लगाकर, पुरुष छाया-रूप रहित होकर, विचरण करता है ।

त्रिरात्रोपोषितः पुण्येण, कालायसी[1]मञ्जनी[2] शलाकां[3] च कारयेत् ।

१०. तीन रात्रि तक उपवास करने वाला पुरुष, पुष्य नक्षत्र में कालायस से अञ्जनी और शलाका निर्मित कराये ।

ततो निशाचराणां[1] सत्वानामन्यतमस्य शिरःकपालमञ्जनेन पूरयित्वा मृतायाः स्त्रिया योनौ प्रवेश्य दाहयेत् ।

११. तत्पश्चात् निशाचर जीवों (मार्जारादि) में किसी एक के शिर:कपाल में अंजन भरकर मृतस्त्री की योनि में प्रविष्टकर जला दे ।

तदञ्जनं पुष्येणोद्धत्य तस्यामञ्जन्यां निदध्यात् ।

१२. वह अञ्जन पुष्य युक्त काल में निकाल कर उस लौह अंजनदानी में रखे ।

पाठभेद :

'शलाकामज्ज' का तंजौर में 'शलाकामञ्च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

८. (१) काण्डक : उसकी हड्डी । गण० ३: २२९ ।

(२) शलाका : अंजन शलाका । द्र० ३:२:१०, ४:१०:९, २:१८:१०; १४:३:८, गण २:११२ ।

(३) अञ्जनी : शुरमादानी; अंजनदानी ।

पादटिप्पणी :

९. (१) अन्यतमेनाक्षि : किसी एक आँख की ।

पाठभेद :

'कालायसीमज्जनी; का देवनागरी अनुलिपि में 'कालायसीमञ्जरीं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) कालायसी : लोहा या फौलाद । द्र० ३:१७:७१, ४:१:४१, १४:३:८५, गण ३:२३७ ।

(२) अञ्जनी : अञ्जनीदानी, सुरमादानी । द्र० १४:३:८; १२ ।

(३) शलाका : सलाई । द्र० १४:३:८ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) निशाचर : द्र० १४: ३:१

तेनाभ्यक्ताक्षो[1] नष्टच्छायारूपश्चरति ।

१३. उसे आँख में लगाकर, पुरुष छाया-रूप रहित होकर, विचरण करने में समर्थ होता है।

यत्र ब्राह्मणमाहिताग्निं[1] दग्धं दध्यमानं वा पश्येत् तत्र त्रिरात्रोपोषितः पुण्येण स्वयंमृतस्य[2] वाससा[3] प्रसेवं[4] कृत्वा चिताभस्मना पूरयित्वा तमाबध्य नष्टच्छायारूपश्चरति ।

१४. जहाँ आहिताग्नि ब्राह्मण को जला हुआ अथवा जलता हुआ देखें, वहाँ तीन रात्रितक उपवास करने वाला पुरुष, पुष्य युक्त काल में स्वयं मृत पुरुष के वस्त्र से प्रसेव (थैला) बनाकर, उसमें वही चिताभस्म भरकर, उसे स्वशरोर में बांधकर, छाया रूप रहित होकर, विचरण करने में समर्थ होता है।

ब्राह्मणस्य प्रेतकार्ये[1] यो गौर्मार्यते तस्यास्थि[2]मज्ज[3]चूर्णपूर्णाऽहि[4]भस्त्रा[5] पशूनामन्तर्धानम् ।

१५. ब्राह्मण के प्रेतकार्य में जो गऊ मारी जाय, उसको अस्थि-मज्जा के चूर्ण से पूर्ण, सर्वचर्म की भाथी पशुओं का अन्तर्धान करती है।

सर्पदष्टस्य भस्मना पूर्णा प्रचेलाक[1]भस्त्रा[2] मृगाणामन्तर्धानम् ।

१६. सर्पदष्ट (जानवर) के भस्म से पूर्ण मयूर की माभी मृगों (जंगली जानवरों) का अन्तर्धान करने वाली होती है।

पादटिप्पणी :

१३. (१) अभ्यक्त : लगाना । द्र० १४:३:७ ।

पादटिप्पणी :

१४. (१) आहिताग्नि : अग्निहोत्र । द्र० १४:१:३६ ।

(२) स्वयंमृतस्य : द्र० २:२:९ ।

(३) वाससा : वस्त्र ।

(४) प्रसेव : चर्म का थैला । गण० ३:२:३० ।

पाठ भेद

'यो गौर' का तंजौर में 'यागौर' तथा 'मज्जचूर्ण' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मज़्ज़ाचूर्ण' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी

१५. (१) प्रेतकार्य : श्राद्ध कर्म या कार्य ।

(२) अस्थि : हड्डी ।

(३) मज्ज : मज्जा, चर्वी ।

(४) अहि : साँप ।

(५) : भस्त्रा : भाथी । द्र० १४:३:१६, १७, ६८ ।

पादटिप्पणी

१६. (१) प्रचलाक : मोर की पूंछ या कलंगी । द्र० १४:१:१३, गण ३:२१६

(२) भस्त्रा : धोकनी, थैला या खोली । द्र० १४:३:१५, १४:३:१७ ।

उलूक[1]वागुली[2]पुच्छपुरीषजान्व[3]स्थिचूर्णपूर्णाऽहि[4] भस्त्रा[5] पक्षिणामन्तर्धानम् ।

१७. उलूक एवं बागुली की पूँछ, पुरीष, जानु एवं हड्डी के चूर्ण से पूर्ण सर्प की भाथी पक्षियों का अन्तर्धान करने वाली होती है ।

इत्यष्टावन्तर्धानयोगाः ।

१८. अन्तर्धान के आठ योग समाप्त ।

'वलिं[1] वैरोचनं[2] वन्दे शतमायं[3] च शम्बरम्[4] ।
भण्डीरपाकं[5] नरकं निकुम्भं कुम्भमेव च ।।

१९. वैरोचन बलि, शतमायाशाली शम्बर, भण्डोर पाक, नरक, निकुम्भ और कुम्भ की वन्दना करता हूँ ।

पादटिप्पणी :

१७. (१) उलूक : उल्लू । द्र० १४:२:४३, १४:३:१; ६, १७ ।

(२) वागुली : द्र० १४:३:१, ६:१७ ।

(३) जानु : घुटना ।

(४) अहि : सर्प ।

(५) भस्त्रा : चमड़ा की थैली या भाथी । द्र० १४:३:१४; १६, ६८ ।

पादटिप्पणी :

१९. (१) बलिवैरोचन : यह प्रहलाद का पौत्र एवं विरोचन का पुत्र था । इसकी माता का नाम देवी था । विरोचन का पुत्र होने के कारण वैरोचन अथवा वैरोचनि नामान्तर प्राप्त थे । इसकी राजधानी महावलिपुर में थी । सात चिरंजीवियों में एक है । अन्य शेष अश्वत्थामा, व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य तथा परशुराम है । यह दैत्यों का राजा था । अत्यंन्त आदर्श सत्यशील एवं परम विष्णुभक्त सम्राट था । समुद्र मन्थन के समय राक्षसों को कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ । अतएव दैत्यों ने देवों पर आक्रमण कर दिया । इस युद्ध में बलि ने मयासुर द्वारा निर्मित वैहानस नामक विमान का प्रयोग किया । इन्द्र के व्रज द्वारा यह मारा गया । वलि की मृत्यु के पश्चात् नारद की आज्ञानुसार, इसका मृत सरीर अस्ताचल ले जाया गया, जहाँ पर शुक्राचार्य के स्पर्श एवं मन्त्र से यह जीवित हो उठा । उसके जीवित होने पर शुक्राचार्य ने विधि पूर्वक उसका ऐन्द्र महाभिषेक किया । इसने १०० अश्वमेधयज्ञ किये थे । इसके पिता प्रहलाद ने कभी न सूखने वाली माला तथा शुक्राचार्य ने एक दिव्य शंख तथा ब्रह्मदेव ने एक माला इसे दी थी ।

नर्वदा के उत्तरी तट, पर स्थित भृगुकच्छ नामक प्रदेश में इसका अन्तिम अश्वमेध यज्ञ चल रहा था, तब एक ब्राह्मण वेषधारी वालक के रूप में वामन भगवान् ने प्रवेश किया । वामन ने इससे तीन पग भूमि मांगी । शुक्राचार्य ने उसे बहुत समझाया कि वह वामन को कुछ न दे । किन्तु वली अपनी बात पर दृढ़ रहा, शुक्राचार्य ने क्रोधित होकर, उसे शाप दिया कि उसका ऐश्वर्य एवं राजपाट सब नष्ट हो जायेगा । वामन भगवान् ने प्रथम पग में पृथ्वी तथा द्वितीय में स्वर्ग लोक नापते हुए फिर पूछा कि तीसरा पग कहाँ रखूँ । शुक्राचार्य ने फिर उसे मना किया । शुक्राचार्य झारी के अन्दर बैठ गए, ताकि दान के लिए दिया जाने वाला जल बाहर न निकले । जल निकलता न देखकर पात्र की टोंटी

४:३:२०]

देवलं नारदं वन्दे वन्दे सार्वणिगालवम् ।
एतेषामनुयोगेन कृतं ते स्वापनं महत् ॥

२०. देवल, नारद सार्वणिगालव की वन्दना करता हूँ—उनके अनुयोग से तुम्हारा अतिस्वाप किया ।

में उसे साफ करने लगा। इससे शुक्राचार्य की एक आंख फूट गई। यह घटना कृतियुग के पूर्व काल की है। वह दिन कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा का था। वलि ने रावण का गर्व हरण किया था।

(२) **विरोचन :** प्रह्लाद के तीन पुत्रों में एक पुत्र था। सप्तपातालों में से पाँचवें पाताल पर इसका अधिकार था। छान्दोग्य उपनिषद में इन्द्र एवं विरोचन की आत्मज्ञान के सम्बन्ध में एक कथा प्राप्त है। इन्द्र ने आत्मासम्बन्धी उसके प्रश्न के उत्तर में कहा था, पृथ्वी के निष्पाप, अजर अमर, अकाम एवं संकल्प रहित आद्य तत्व को आत्मा कहते हैं। ब्रह्मज्ञान प्राप्त के लिये इन्द्र एवं विरोचना प्रजापति के पास रहे। देह को ही आत्मा समझने वाले असुरों का आसुरी सम्प्रदाय निर्माण हुआ। यह सम्प्रदाय देवों से सम्पूर्णतः विभिन्न था। देवासुर के बीच सम्पन्न हुए तारकामय युद्ध में असुरों के एक सेना का सेनापति था। इसी युद्ध में इन्द्र के द्वारा मारा गया। इसकी विशालाक्षी एवं देवी नामक दो पत्नियां थीं। इसकी कन्या का नाम यशोधरा था। इसकी बहन का नाम विरोचना था। इसके पांच भाई कुम्भ, निकुम्भ, आयुष्मत्, शिवि एवं वाष्कलि थे।

(३) **शतमायं :** एक सौ प्रकार के मायाविज्ञ।

(४) **शम्बर :** यह एक असुर था। इन्द्र का शत्रु था। यह स्वयं को देवता समझने लगा था। इसके कारण इन्द्र ने इसे काटकर पर्वत के नीचे गिरा दिया था। इसका प्रमुख शत्रु दिवोदास अतितिश्व था। इसके निर्देश पर इन्द्र ने इसका बध किया था। पौराणिक मान्यता के अनुसार कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है। यह वृत्रासुर का अनुयायी था। अपनी मृत्यु के पूर्व इसने इन्द्र को ब्राह्मण माहात्म्य समझाया था। योग वाशिष्ठ रामायण में इसकी कथा ब्राह्मण भाव के प्रतिपादन करने के लिये दी गई है।

(५) **भण्डीरपाक :** एक असुर था।

(६) **नरक :** एक दानव था। कश्यप तथा दनु का पुत्र था। इन्द्र ने इसे परास्त किया था।

(७) **निकुम्भ :** यह प्रह्लाद का पुत्र था। शुन्द एवं उपशुन्द इसके दो पुत्र थे। एक निकुम्भ का और वर्णन मिलता है, जो कंस के द्वारा मारा गया था।

(८) **कुम्भ :** प्रह्लाद का द्वितीय पुत्र था।

पादटिप्पणी :

२०. (१) **देवल :** यह एक स्मृतिकार था। एक ऋषि था, असित को एकपर्णा से उत्पन्न पुत्रों में एक था। यह कश्यप गोत्रीय था। असित देवल तथा देवल इन दोनों नामों से इसका निर्देश प्राप्त है। इसका छोटा भाई धौम्य था। वह पाण्डवों का पुरोहित था।

(२) **नारद :** नारद वैदिक द्रष्टा एवं यज्ञवेत्ता थे। बृहस्पत्ति का शिष्य था। पौराणिक कथा के अनुसार, यह देवर्षि तथा ब्रह्माजी का मानस पुत्र था। धर्मज्ञ, तत्त्वज्ञ, कर्मज्ञ एवं राजनीतिज्ञ, नीष्तज्ञ एवं संगीतज्ञ के कारण इसका वर्णन प्राप्त है। इशका संचार त्रिभुवन में था। आकाश मार्ग से प्रवास करता था। इन्हें विष्णु का तीसरा अवतार कहा गया है। ब्रह्मा की जंघा से उत्पन्न पुत्र था। नर नारायन का उपासक था। चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तऋषियों

यथा स्वपन्त्यजगराः स्वपन्त्यपि च[1]मूखला[2]ः ।
तथा स्वपन्तु पुरुषा ये च ग्रामे कुतूहलाः ॥

२१. जिस प्रकार अजगर और चमूखल सोते हैं, उसी प्रकार ग्राम में—

भाण्ड[1]कानां सहस्रेण रथ[2]नेमिशतेन च ।
इमं गृहं प्रवेक्ष्यामि तूष्णीमासन्तु भाण्डकाः ॥

२२. जो कि सहस्र भाण्डकों और सौ रथनेमियों वाले कुतूहल सम्पन्न पुरुष सोएँ, इस गृह में मैं प्रवेश करूँगा, भाण्डक मौन रहें ।

में एक था । त्रैलोक्य के राजाओं का वार्ताहर एवं सलाहकार ऋषि मानकर महाभारत में चरित्र चित्रण किया गया है । प्राचीन राजाओं की अनेक कथायें महाभारत में नारद के द्वारा कही गई हैं । श्रेयः प्राप्ति के लिये नारायण की उपासना का उपदेश नारद ने पुण्डरीक को दिया था । प्राणापान में सर्वप्रथम क्या उत्पन्न होता है । इसका ज्ञान नारद ने देवमत को प्रदान किया था । व्यास को भागवत ग्रन्थ लिखने की प्रेरणा दी थी । यह स्वर्ग्य था । नारद संहिता नामक संगीत शास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थ भी प्राप्त है । यह गान विद्या प्रवीण था । नारद धर्म शास्त्रकार हैं । लघु नारदीय एवं बृहद् नारदीय इसके दो ग्रन्थ उपलब्ध हैं । नारद के नाम पर नारद पुराण लिखा गया ।

(३) सार्वणि : सार्वणि नामक आठवें मन्वन्तरि के अधिपति का नाम है । सवर्णा नामक स्त्री के वंशज होने के कारण यह पैतृक नाम प्राप्त था । कितने ही पुराणों में उनकी माता का नाम छाया तथा मृणमयी दिया गया है । उसके ज्येष्ठ भ्राता का नाम श्राद्धदेव था । वह सातवें मन्वन्तर का अधिपति मनु था । अपने ज्येष्ठ बन्धु वर्य के समान होने के कारण इसे सार्वणि कहा गया है ।

(४) गालव : अनेक गालव व्यक्ति का नाम मिलता है । एक गालव वैदर्भी कौण्डिण्य का शिष्य था । इसका शिष्य कुमारहारित था । महाभारत के अनुसार विश्वामित्र का एक शिष्य था । इसका आश्रम जयपुर से तीन मील की दूरी पर था । इसका दूसरा आश्रम चित्रकूट पर्वत पर था । विश्वामित्र के गालव शिष्य बड़े हठी थे । विश्वामित्र ने इनसे ८०० श्यामकर्ण घोड़े गुरुदक्षिणा में मांगे । इन्होंने राजा ययाति की कन्या माधुरी की सहायता से यह गुरुदक्षिणा दी थी ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) चमू : एक चमू में ७२९ हाथी ७२९ रथ, २१८७ अश्वारोही तथा ३६४५ पदाति होते हैं । द्र० १४:२:९ ।

(२) चमूखला : सेना के दुष्ट या खल सैनिक । द्र० १४:३:९ ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) भण्डक : पात्र, बर्तन ।

(२) रथनेमि : रथ के पहिए का घेरा ।

नमस्कृत्वा च मनवे[1] बद्ध्वा शुनक[2]फेलकाः[3] ।
ये देवा देवलोकेषु मानुषेषु च ब्राह्मणाः ।।

२३. मनु को नमस्कार करके, दुष्ट श्वानों को बाँधकर, देवलोक के देवों और मनुष्यों में ब्राह्मणों को प्रणाम कर—

अध्ययन पारगाः सिद्धा[1] ये च कैलास[2]तापसाः ।
एतेभ्यः सर्वसिद्धेभ्यः कृतं ते स्वापनं महत् ।।

२४. अध्ययन में पारंगतों, सिद्धों एवं कैलास के तपस्वियों को प्रणामकर सर्वसिद्धों के प्रभाव से तुम्हारी घोर निद्रा की है ।

अतिगच्छति च मय्यपगच्छन्तु संहताः ।

२५. मेरे जाने पर सब (देवादि) संहत होकर चले जांय ।

अलिते[1], बलिते[2], मनवे[3] स्वाहा ।

२६. अलिते, वलिते मनवे स्वाहा (मन्त्र) ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) मनु : द्र० १४:३:२६ ।
(२) शुन : कुत्ता ।
(३) फेलक : मंजूषा, पेटक, पिटारी ।

पाठभेद :

'एतेभ्यः' का देवनागरी अनुलिपि में 'एते च' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२४. (१) सिद्ध : द्र० २:८:१८, २६, २:६:१३, १४, १:११:१७, १२:२:७ ।

(२) कैलास : शिव एवं कुबेर का निवास स्थान है । राजा सगर और राजा भगीरथ ने यहाँ तपस्या किया था । कुबेर का यहाँ राक्षसों, गन्धर्वों एवं यक्षों के अधिकारी रूप में अभिषेक हुआ था । कैलाश पर्वत श्रेणी लद्दाख पर्वत माला से ५० मील दूर पड़ता है । सिन्धु नदी के उत्तर के किनारे पर हैं । मान सरोवर निकटस्थ कैलाश २२०२८ फीट समुद्र की सतह से ऊँचा है । हिमालय की एक शिखर का नाम है । यह तिब्बत में राक्षस ताल या रावण हृद के ५० मील की दूरी पर है । कैलाश चोटी का आकार हिन्दू मन्दिर की तरह है । यह पर्वत बलुआ पत्थर का है ।

पाठभेद :

'चमय्यप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चमर्यप' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद :

'अलितेवलिते' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अलितेपलिते' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२६. (१) अलिते : एक मत है कि अलिते शब्द अलित का अपभ्रंश है ।
(२) बलिते : एक देवी प्रतीत होती है ।
(३) मनु : १४:३:२३ ।

एतस्य प्रयोगः ।

२७. इसकी प्रयोग विधि ।

त्रिरात्रोपोषितः कृष्णचतुर्दश्यां पुष्ययोगिन्यां श्वपाकी[1]हस्ताद्बिलखा[2]वलेखनं[3] क्रीणीयात् ।

२८. तीन रात्रि तक उपवास करने वाला पुरुष कृष्ण पक्ष कीपुष्ययुक्त चतुर्दशी को श्वपाकी के हाथ से चूहे का खण्ड खरीदे ।

तन्माषैः[1] सह कण्डोलिकायां[2] कृत्वाऽसंकीर्णं[3] आदहने[4] निखानयेत् ।

२९. उसे माष (उर्द) के साथ पिटारी में रखकर, खुले श्मशान में गाड़ दें ।

द्वितीयस्यां चतुर्दश्यामुद्धृत्य कुमार्या पेषयित्वा गुलिकाः[1] कारयेत् ।

३०. अगली चतुर्दशी को निकाल कर, कुमारी कन्या से पिसवाकर, गुलिकायें निर्मित कराये ।

तत एकां गुलिकामभिमन्त्रयित्वा यत्रैतेन मन्त्रेण[1] क्षिपति तत्सर्वं प्रस्वापयति ।

३१. तदनन्तर एक गुलिका को उक्त मन्त्रों से अभिमन्त्रित कर, वह पुरुष जहाँ प्रक्षिप्त करता वहाँ सब लोगों को सुला देता है ।

एतेनैव कल्पेन श्वाविधः शल्यकं[1] त्रिकालं[2] त्रिश्वेतं[3]मसंकीर्ण आदहने निखानयेत् ।

३२. उक्त प्रकार से तीन स्थान पर काला तथा तीन स्थान पर श्वेत साही का कांटा खरीद कर उसे असंकीर्ण श्मशान पर गाड़ दे ।

पाठभेद :

'द्विलखाव' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विलखाव' तथा देवनागरी अनुलिपि में 'विलिखाव' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२८. (१) श्वपाकी : चाण्डाली ।

(२) बिलखा : मूषक ।

(३) अवलेखनम् : खण्ड ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) माष : उर्दी । द्र० १४:२:३, ३२ ।

(२) कण्डोलिका : छोटी पिटारी । द्र० २: १५:६२ । गण० २:२३१ ।

(३) असंकीर्ण : खुले, विस्तृत ।

(४) आदहन : श्मसान । द्र० १४:३:४९ । गण० ३:२३१ ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) गुलिका : गोली ।

पादटिप्पणी :

३१. (१) मन्त्र : प्रस्वापन मन्त्र से तात्पर्य है ।

पादटिप्पणी :

३२. (१) शल्यक : शाही का कांटा । द्र० १४: ३:५० । गण० ३:२३२ ।

(२) त्रिकाल : तीन काल ।

(३) त्रिश्वेत : तीन सफेद ।

द्वितीयस्यां चतुर्दश्यामुद्धृत्यादहनभस्मना सह यत्रैतेन मन्त्रेण क्षिपति तत्सर्वं प्रस्वापयति ।

३३. दूसरी चतुर्दंशी को निकालकर, उसे श्मशान के भस्म के साथ (वह पुरुष) जहाँ इस मंत्र से अभिमंत्रित कर डालता है, वहाँ सबको सुला देता है ।

‘सुवर्ण[1]पुष्पीं ब्रह्माणीं ब्रह्माणं च कुश[2]ध्वजम् ।
सर्वाश्च देवता वन्दे वन्दे सर्वांश्च तापसान् ।।

३४. सुवर्णपुष्पी, ब्राह्मणी, ब्रह्मा, कुशध्वज एवं अन्य सब देवताओं की वन्दना करता हूं और तपस्वियों की वन्दना करता हूँ ।

वशं मे ब्राह्मणा यान्तु भूमिपालाश्च क्षत्रियाः ।
वशं वैश्याश्च शूद्राश्च वशतां यान्तु मे सदा ।।

३५. ब्राह्मण एवं भूमिपाल क्षत्रिय मेरे वश में हो जाँय, तथा बैश्य और शूद्र सदैव मेरे वश में हों।

स्वाहा । अमिले[1] किमिले वयुचारे प्रयोगे फक्के वयुह्वे विहाले दन्तकटके स्वाहा ।

३६. स्वाहा । अमिले, किमिले, वयुचारे, प्रयोगे, फक्के, वयुह्वे, विहाले, दन्त कटके स्वाहा

पादटिप्पणी :

३४. (१) सुवर्णपुष्पी : एक तरह का पौधा ।

(२) कुशध्वज : कुशकी ध्वजा । राजा जनक के कनिष्ठ भ्राता । जिनकी कन्या का विवाह भरत तथा शत्रुघ्न के साथ हुआ था ।

एक कुशध्वज राजा रथध्वज का पुत्र था । तथा वेदवती का पिता था। दूसरा कुशध्वज मिथिला में सांकाश्य नामक राजधानी में राज्य करता था । माण्डवी तथा श्रुतिकीर्ति उसकी दो कन्याए थीं । वे दशरथ पुत्र भरत तथा शत्रुघ्न को ब्याही गई थीं ।

पाठभेद :

‘वयुचारे’ का तेलगू अनुप्रतिलिपि में ‘वयुजारे’, श्रीमूल में ‘वसुजारे’ तथा फक्के वयुह्वे’ का तेलगु अनुप्रतिलिपि में ‘फके कवयुश्वे’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) अमिला : कमिला, वयुचरा, प्रयोगा, फक्का, वायुवे, विशाला, दन्तकटका ये सब देवियों के नाम हैं । इनका उल्लेख कहीं नहीं मिलता । इनका शुद्ध नाम भी अनिश्चित है ।

सुखं स्वपन्तु शुनका ये च ग्रामे कुतूहलाः ।
श्वाविधः शल्यकं चैततिश्वेतं ब्रह्मनिर्मितम् ॥

३७. ग्राम में जो कुतूहल (दुष्ट) श्वान है ! वे सुखपूर्वक सो जांय, साही के तीन स्थानपर श्वेत कांटा ब्रह्मा द्वारा निर्मित है ।

प्रसुप्ताः सर्वसिद्धा हि एतत्ते स्वापनं कृतम् ।
यावद्ग्रामस्य सीमान्तः सूर्यस्योद्गमनादिति ॥

३८. समस्त सिद्ध सो गये । यह तुम्हारा स्वापन ग्राम की सीमा तथा सूर्योदयकाल तक उसका प्रभाव रहे ।

स्वाहा ।

३९. स्वाहा ।

एतस्य प्रयोगः ।

४०.

श्वाविधः शल्यकानि त्रिश्वेतानि, सप्तरात्रोपोषितः कृष्णचतुर्दश्यां खादिराभिः समिधारग्निमेतेन मन्त्रेणाष्टशतसंपातं कृत्वा मधुघृताभ्यामभिजुहुयात् ।

४१. तीन स्थानपर श्वेत साही के कांटों को असंकीर्ण श्मशान भूमि में गाड़ दें । सात रात्रि उपवास करने वाला पुरुष कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को खदिर आदि समिधाओं से इस मन्त्र द्वारा मधुघृत के साथ एक सौ आठ वार अग्नि में आहुति दे ।

तत एकमेतेन मन्त्रेण ग्रामद्वारि गृहद्वारि वा यत्र निखन्यते तत्सर्वं प्रस्वापयति ।

४२. श्मशान से उखाड़कर, लाये गये, कांटों में से एक कांटा उस मन्त्र समूह से ग्राम द्वार अथवा गृह द्वार पर, जहाँ गाड़ दिया जाय, वहाँ सबको सुला देता है ।

पाठभेद :

'सीमान्तः' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'सीमन्तः' पाठभेद मिलता है ।

पाठभेद

'ग्रामद्वारि गृहद्वारि' का देवनागरी अनुलिपि तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'ग्रामद्वार गृहद्वारि' पाठभेद मिलता है ।

[1]बलिं वैरोचनं वन्दे शतमायं च शम्बरम् ।
[2]निकुम्भं [3]नरकं कुम्भं तन्तुकच्छं महासुरम् ॥

४३. वैरोचन बलि, शतमायवीशम्बर, निकुम्भ, नरक, कुम्भ, महासुर तन्तुकच्छ की वन्दना करता हूं ।

[1]अर्मालवं [2]प्रमीलं च [3]मण्डोलूकं [4]घटोबलम् ।
[5]कृष्णकंसो[6]पचारं च पौलोमीं च यशस्विनीम् ॥

४४. अर्मालव, प्रमील, मण्डोलूक, घटोबल, कृष्ण और कंसोपचर तथा यशस्विनी, पौलोमी को नमस्कार करता हूँ ।

प्रस्वापन मन्त्र : सयन का मन्त्र । प्रथम पद १९वें सूत्र की यह पुनरावृत्ति है । चतुर्थ प्रस्वापन होम का मन्त्र है ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) वलि : वैरोचन ।

(२) निकुम्भ : द्र० १४:३:१९ ।

(३) नरक : द्र० १४:३:१९ ।

(४) कुम्भ : द्र० १४:३:१९ ।

(५) तन्तुकच्छ : महासुर ।

कौटिल्य ने असुरों का वर्णन सुरों के साथ ही साथ किया है । पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश में तथा उसके आसपास पारसियों अथवाअग्निपूजकों की आबादी थी। पारसी लोगों के मुख्य देवता अहुरमज्द थे । अहुर शब्द महाअसुर के रूप में प्रयुक्त होता था ।

अतएव कौटिल्य के लेख में कहीं भी असुरों के उनके विरुद्ध नहीं कहा गया है । असुर सम्प्रदाय मानने हुए पश्चिम असोरिया से लेकर गान्धार तक फैले हुए थे। कौटिल्य को उनके सम्प्रदाय तथा सिद्धान्तों का ज्ञान था । असुरों को कौटिल्य ने एक सम्प्रदाय के रूप में माना था । असुर तथा सुर दोनों ही आर्य हैं, उनमें सैद्धान्तिक मतभेद इसलिए हुआ कि असुर शरीर को आत्मा से भिन्न नहीं मानते थे । जबकि हिन्दू लोग आत्मा को शरीर से भिन्न मानते थे । यहाँ किस महासुर से कौटिल्य का अभिप्राय है । कहना कठिन है ।

पाठभेद :

‘अर्मालव’ का देवनागरी अनुलिपि में ‘अम्मालवी’ तथा ‘घठोवलम्’ का तेलगू अनुप्रतिलिपि में ‘घटोद्वलम्’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४. (१) अर्मालव : द्र० १४:३:३६ ।

(२) प्रमील : मैं समझता हूं कि प्रमील शब्द प्रमीला है ।

(३) मण्डोलूक : यह भी एक प्रसिद्ध असुर प्रतीत होता है ।

(४) घटोवल : एक असुर मालुम पड़ता है ।

(५) कृष्ण : भगवान कृष्ण ।

(६) कंस : भगवान् कृष्ण का शत्रु ।

(७) पौलोमी : दो पौलोमी नाम की स्त्रियाँ प्रसिद्ध हैं । पहली वारुणी भृगुऋषिकी पत्नी पौलोमा का नामान्तर मालूम पड़ता है । इससे भृगुऋषि से च्यवन नामक ऋषि पैदा हुआ था । दूसरी पौलोमी पुलोमा नामक ऋषि की कन्या थी । जिसे शची नामान्तर प्राप्त था । जिससे जयन्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था ।

भागवत के अनुसार यह द्वादश आदित्यों में शक नामक आदित्य की पत्नी थी । उससे जयन्त, ऋषभ एवं मीढुष नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे ।

अभिमन्त्रयित्वा गृह्णामि सिद्धयर्थं[1] शव[2]शारिकाम् ।
जयतु जयति च नमः शलंक[3]भूतेभ्यः स्वाहा ॥

४५. अपनी सिद्धि के लिये अभिमन्त्रित कर शवशारिका का ग्रहण कर रहा हूँ। जयतु, जयति नमः शलकभूतेभ्यः स्वाहा ।

सुखं स्वपन्तु शुनका[1] ये च ग्रामे कुतूहलाः ।
सुखं स्वपन्तु सिद्धार्था[2] यमर्थं मार्गयामहे ।
यावदस्तमयादुदयो याव[3]दर्थं फलं मम ॥

४६. ग्राम के कुतूहली श्वान सुखपूर्वक सो जांय, सिद्धार्थ सुखपूर्वक सोयें, जिस अर्थ को हम खोज रहे हैं, सूर्यास्त से लेकर सूर्योदय तक मुझे अर्थ सिद्धि हो ।

इति स्वाहा ।

४७. इति स्वाहा ।

एतस्य प्रयोगः ।

४८. इसकी प्रयोग विधि ।

चतुर्भक्तोपवासी[1] कृष्णचतुर्दश्यामसंकी[2]र्ण आ[3]दहने बलिं कृत्वैतेन मन्त्रेण शव[4]शारिकां गृहीत्वा [5]पौत्रीपो[6]ट्टलिकां बध्नीयात् ।

४९. चार उपवास करने वाला पुरुष कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को असंकीर्ण श्मशान में बलि करके, उस मन्त्र से शवशारिका लेकर, उसे वस्त्र के टुकड़े में बाँध दे ।

पाठभेद :

'अभिमन्त्र' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिमन्त्रय्य' तथा 'सिद्धयर्थं' का 'सिद्धार्थं' तथा 'जयतु' का 'जयन्तु' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४५. (१) शारिका : मैना ।

(२) सिद्धयर्थं : नगर के सिद्ध लोग अर्थात् जिनका अर्थ सिद्ध हो चूका है ।

(३) शलक : मकड़ा सारिका ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) शुनका : कुत्ता ।

(२) सिद्धार्थं : सफलीभूत व्यक्ति, यहाँ सरसों अर्थ नहीं बैठता ।

(३) यावदस्तमयादुदयो : सूर्यास्त से सूर्योदय तक ।

पाठभेद :

'चतुर्भवत्तोप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चतुर्नक्तोप' तथा 'पौत्री पोट्टलिक' का 'पौत्रीपोट्टलिकां' तथा देवनागरी अनुलिपि में पत्रपालिट्टकं' तथा श्रीमूल में 'पोत्रीपोट्टलिकां' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४९. (१) चतुर्भक्त : चार बार भोजन अर्थात् दो दिन का भोजन ।

(२) असंकीर्ण : निर्जन :

(३) आदहन : श्मशान ।

(४) शवसारिका : मरी हुई सारिका ।

(५) पौत्री : वस्त्र का छोटा टुकड़ा ।

(६) पोट्टलिका : पोटली या थैली । यह लौकिक शब्द है । उत्तर प्रदेश या बिहार में छोटी गठरी के लिए प्रयोग किया जाता है ।

तन्मध्ये श्वाविधः शल्यकेन विद्ध्वा यत्रैतेन मन्त्रेण निखन्यते तत्सवं प्रस्वापयति ।

५०. उसके बीच में साही का कांटा वेध कर इस, मन्त्र के साथ जहाँ उसे गाड़ दे, वहाँ सबकों सुला देता है ।

उपैमि शरणं चाग्निं दैवतानि दिशो दश ।
अपयान्तु च सर्वाणि वशतां यान्तु मे सदा ॥

५१. अग्नि, देवताओं और दशदिशाओं के शरण में हूँ, सबविघ्न दूर हो, सब मेरे वश में हो ।

स्वाहा ।

५२. स्वाहा ।

एतस्य प्रयोगः ।

५३. इसकी प्रयोग विधि ।

त्रिरात्रोपोषितः पुष्येण शर्करा एकविंशतिसंपातं कृत्वा मधुघृताभ्यमभिजुहुयात् ।

५४. तीन रात उपवास करने वाला पुरुष पुष्ययुक्त काल में शर्करा एकत्रित कर, मधुघृत से अग्नि में एक्कीस बार आहुति दे ।

ततो गन्धमाल्येन पूजयित्वा निखानयेत् ।

५५. तदनन्तर गन्ध माला से पूजाकर, शर्कराओं को गाड़ दे ।

द्वितीयेन पुष्येणोद्धृत्यैकां शर्कराभिमन्त्रयित्वा कपाटमाहन्यात् ।

५६. दूसरे पुष्ययुक्तकाल में उन्हें निकालकर, एक शर्करा उक्त मन्त्र से अभिमन्त्रितकर, उसके कपाट पर प्रहार करे ।

पादटिप्पणी :

५०. (१) शल्यक : शाही का कांटा । द्र० १४:३:३२ गण० ३:२३२ ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) अपयान : भगाना, पलायन, दूर जाना । गण० ३:१३०, १३५ ।

पादटिप्पणी :

५४. (१) शर्करा : छर्री, पत्थर के टुकड़े । द्र० १०:४:८; १४:३:५६ । गण० ३:२३४ ।

(२) संपातकृत्वा : मिलाकर ।

पाठभेद :

अभिमन्त्रयित्वा' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अभिमन्त्रय्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) कपाट : दरवाजे का पल्ला ।

अभ्यन्तरं चतसृणां शर्कराणां द्वारमपाव्रियते ।

५७. एक शर्कराधात से चार शर्करा के बराबर द्वार में विवर हो जाता है ।

चतुर्भक्तोपवासी कृष्णचतुर्दश्यां भग्न[1]स्य पुरुषस्यास्थ्ना ऋष[2]भं कारयेत्, अभिमन्त्रयेच्चैतेन ।

५८. चार रात उपवास करने वाला पुरुष कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को भग्न (मृत) पुरुष की हड्डी से वृषभ निर्मित कराये, तथा उक्त मन्त्र समूह से अभिमन्त्रित करे ।

द्वि[1]गोयुक्तं गो[2]यानमाहतं भवति ।

५९. उससे दो बैल से युक्त बैलगाड़ी आ जाती है ।

ततः परमा[1]काशे विक्रा[2]मति ।

६०. तदनन्तर उस पर सवार होकर वह परमाकाश में विचरण करता है ।

रविसंगन्धः परिधमति सवं पृणाति ।

६१. रविसगन्ध इत्यादि मन्त्र प्रथम मन्त्र है ।

'चाण्डाली[1]कुम्भी[2]तुम्ब[3]कटुकसारौघैः[4] स[5]नारीभगोसि । स्वाहा' ।

६२. चाण्डाली कुम्भोत्यादि द्वितीय मन्त्र है ।

पाठभेद :

'चतुर्थभतोप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चतुर्नक्तोप' तथा 'भग्नस्य' का तंजोर में 'भस्य' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५८. (१) भग्न : टूटे हुए ।

(२) ऋषभ : बैल, या सांड़, संगीत का द्वितीय स्वर ।

५९. (१) द्विगो : दो बैल या वरधा ।

(२) गोयान : बैलगाड़ी ।

पादटिप्पणी :

६०. (१) परमाकाश : अन्तिम आकाश, दूरतम, उच्चतम आकाश ।

(२) विक्रम : पग रखना, आकाश में गतिशील होना । द्र० १:१, २८, १:१९:१५, १२:३:१५, ९:१:५; ५:६:२५; ७:३:११ ।

पाठभेद :

'रविसगन्व, परिघमति' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में रविगन्धपरिख्याति' तथा 'पुणाति' का 'फणाति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६१. (१) रविसगन्ध : सूर्य के समान ।

पाठभेद :

'कुम्भीतुम्बकटुकसारोघः' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'कुम्बीत्तम्बकटुकसारोघः' तथा 'भगोसि' का तंजोर में 'भगोसी' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६२. (१) चाण्डाली : चाण्डाल की स्त्री। द्र० १४:१:३७ ।

(२) कुम्भी : कुम्भ, छोटा कलश या घड़ा। द्र० १३:३:२० ।

(३) तुम्बकटु : कटुतुम्बी ।

(४) सारौघ : शक्ति ।

(५) नारीभग : स्त्री का भग ।

तालोद्घाटनं प्रस्वापनं[2] च ।

६३. ये मन्त्र तालोद्घाटन और प्रस्वापन करने वाले हैं ।

त्रिरात्रोपोषितः पुण्येण शस्त्रहतस्य शूलप्रोतस्य वा पुंसः शिरःकपाले मृत्तिकायां तुवरीरावास्योदकेन सेचयेत् ।

६४, तीन रात्रि उपवास करने वाला पुरुष पुष्ययुक्तकाल में शस्त्रहत या शूलप्रोत पुरुष के शिरःकपाल में मिट्टी भरकर, उसमें तुबरी बोकर, उसे जल से सींचे ।

जातानां पुष्येणैव गृहीत्वा रज्जुकां वर्तयेत् ।

६५. उत्पन्न होने पर, पुष्य नक्षत्र में उसे लाकर, उससे रस्सी बनाये ।

ततः सज्यानां धनुषां यन्त्राणां च पुरस्ता[2]च्छेदनं ज्याच्छेदनं करोति ।

६६. उससे पुरुष डोरीयुक्त धनुषों और यन्त्रों का च्छेदन तथा ज्याच्छेदन करने में समर्थ होता है ।

उदकाहि[1]भस्त्रा[2]मुच्छ्वास[3]मृत्तिकया स्त्रियाः पुरुषस्य वा पूरयेत्, ना[4]सिकाबन्धनं मुख[5]ग्रहश्च ।

६७. जलसर्प के भस्त्रा को स्त्री या पुरुष की चिता की ऊपरी मिट्टी से भर दे । यह योग नासिकावरोध और मुखबन्धनकारी है ।

पादटिप्पणी :

६३. (१) तालोद्घाटन : ताला खोलना ।
(२) प्रस्वापन : सोना ।

पाठभेद :

'तुवरीरावास्यो' का तंजौर में 'वरीरावास्यो' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वल्लरीरावास्यो' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६४. (१) तुवरी : अरहर । गण० ३:२३४ ।

पादटिप्पणी :

६६. (१) ज्या : धनुष की डोरी, प्रत्यञ्चा । गण० १:२५३ ।
(२) पुरस्तात् : सामने, आगे ।

पाठभेद :

'नासिकाबन्धनं' को तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'नासिकावर्धनं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६७. (१) उदकाहि : जल का सांप या डेड़हा ।
(२) थस्त्र : भाथी ।
(३) उच्छ्वास : स्वांस से तात्पर्य है ।
(४) नासिका बन्धन : नासिका निरोध ।
(५) मुखग्रह : मुख के काम को रोकदेना ।

वराह[1]भस्त्रा[2]मुच्छ्वासमृत्तिकया पूरयित्वा मर्कट[3]स्ना[4]युनावबध्नीयात्, आना[5]ह कारणम् ।

६८. उक्त प्रकार से वराह की भस्त्रा को चितामृत्तिका से भरकर मर्कट के स्नायु से बाँध दे। यह योग अनाह का कारण बनता है।

कृष्णचतुर्दश्यां शस्त्रहताया गोः कपिलायाः पित्तेन राजे[1]वृक्षमयीममित्रे[2]-प्रतिमा[3]मञ्ज्या[4]त्, अन्धीकरणम् ।

६९. कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को शस्त्रहत कपिला गौ के पित्त से राजवृक्ष से बनी शत्रु को प्रतिमा की आंख में अंजन करे।

चतुर्भक्तोपवासी कृष्णचतुर्दश्यां वलिं कृत्वा शूलप्रोतस्य पुरुषस्यास्थ्ना-कीलकान् कारयेत् ।

७०. चार रात्रि उपवास करने वाला पुरुष कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को वलि करके शूल प्रोत पुरुष की हड्डो से कीलें निर्मित कराये।

पाठभेद :

'वराह भस्त्राम' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'वराहवस्तिम्', तथा देवनागरी अनुलिपि में 'वराहहस्तिम्', तथा श्रीमूल में 'वराहबस्तिभस्त्राम्' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

६८. (१) वराह : सूकर सूअर। द्र० १४:३१; ३।

(२) भस्त्रम् : वराह के चमड़े की।

(३) मर्कट : बन्दर।

(४) स्नायु : अतड़ी।

(५) आनाह : पेशाब पाखाना रुकना या मल-स्तम्भन।

पादटिप्पणी :

६९. (१) राजवृक्ष : अमिलतास, पियाल वृक्ष। गण० ३:२१७।

(२) अमित्र : शत्रु।

(३) प्रतिमा : मूर्ति या पुतला।

(४) अञ्ज्यात् : अंजन करे।

पाठभेद :

'चतुर्भक्तोप' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'चतुर्नक्तोप' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

७०. (१) कील : कांटा। आज भी उत्तर प्रदेश विहार आदि स्थानों में कील शब्द कांटे के लिए प्रयोग होता है।

एतेषामेकः पुरीषेमूत्रे वा निखात आनाहं करोति, पदे[1]ऽस्यासने[2] वा निखातः [3]शोषेण मारयति, आपणे क्षेत्रे गृहे वा [4]वृत्तिच्छेदं[5] करोति ।

७१. इनमें से एक कील जिसके पुरीष या मूत्र में गाड़ दिया जाय उसका आनाह (पुरीष या मूत्र बन्द) कर देता है पद या आसन में निखात कील शोष द्वारा मार डालता है, आपण (दुकान) क्षेत्र या गृह में गाड़ने पर, वृत्तिच्छेद करता है ।

एतेनैव कल्पे विद्युद्दग्धस्य वृक्षस्य कीलका व्याख्याताः ।

७२. उक्त प्रकार से बिजली से जले वृक्ष के कीलों की व्याख्या दी गयी ।

पुनर्नव[1]मवा[2]चीनं निम्बः[3] काम[4]मधुश्च यः ।
कपिरोम[5]मनुष्यास्थि बद्ध्वा मृतक[6]वाससा ॥

७३. अवाचीन, पुनर्नवा, नीम, काममधु, कपिरोम एवं मनुष्य की हड्डी मृतक के वस्त्र से बाँधकर—

निखन्यते गृहे यस्य दृष्ट्वा वा यत्पदंनयेत् ।
सपुत्रदारः सधनस्त्रीन्पक्षान्नातिवर्तते ॥

७४. जिसके घर में गाड़ दिया जाय या जो देखकर, उस पर पदन्यास करे, वह तीन पक्ष के अन्दर स्त्री, पुत्र एवं धन सहित नष्ट हो जाता है ।

पाठभेद :

'पदेऽस्या' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पदेहस्या पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७१. (१) पदे : चरणपात या पादन्यास । द्र० :११:१४; १८; २५, १४:३:७८ ।

(२) आसन : बैठने का स्थान । द्र० ७:१:८; १;५०, गण० २:२३७; २५४, ३:१०७ ।

(३) शोष : शुखण्डी; तपेदिक : । द्र० १४ १: ११; १४:४: २७ ।

(४) वृत्ति : जीविका । द्र० १:७:१; ३:१५६ । गण० ३:११७ ।

(५) छेद : नष्ट ।

पाठभेद :

'एतेनैव कल्पेन' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'एतेन-कल्पेन'. पाठभेद मिलता है । तथा 'विद्युद्दग्धस्य' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विद्युद्दण्डस्य' पाठभेद मिलता ।

पाठभेद :

'काममधुश्च' का श्रीमूल में 'काकमधुश्च' पाठ-भेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७३. (१) पुनर्नवा : गदहपुरान ।

(२) अवाचीन : अधोमुख, अधोगत ।

(३) निम्ब : नीम

(४) काममधु : एक बनस्पति ।

(५) मृतकवाससा : मृतक का वस्त्र ।

(६) कपिरोम : बन्दर का बाल ।

पाठभेद :

'दृष्टवा' का श्रीमूल में 'पिष्ट्वा' तथा 'यत्पदं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'यं पदं' तथा श्रीमूल में 'यं प्रपाययेत्' पाठभेद मिलता है ।

पुनर्नव[1]मवा[2]चीनं नि[3]म्बः काम[4]मधुश्च यः ।
स्वयंगु[5]प्ता मनुष्यास्थि पदे यस्य निखन्यते ॥

७५. अवाचीन पुनर्नवा, निम्ब, काममधु, स्वयं गुप्ता एवं मनुष्य की हड्डी जिसके पदन्यास (या स्थान) पर गाड़ दी जाय—

द्वारे गृहस्य सेनाया ग्रामस्य नगरस्य वा ।
सपुत्रदारः सधनस्त्रीन् पक्षान्नातिवर्तते ॥

७६. जिस गृह, सेना, ग्राम या नगर के द्वार पर गाड़ दी जाय, वहाँ रहने वाला तीन पक्ष (डेढ़ मास) के अन्दर स्त्री, पुत्र एवं धन सहित नष्ट हो जाता है।

अज[1]मर्कट[2]रोमाणि मार्जारनकु[3]लस्य च ।
ब्र[4]ह्मणानां श्व[5]पाकानां का[6]कोलूक[7]स्य चाहरेत् ।
एतेन विष्ठाऽवक्षु[8]ण्णा सद्य उत्सा[9]दकारिका ॥

७७. अज, मर्कट, मार्जार, नकुल, ब्राह्मण, श्वपाक, काक, एवं उलूक के रोम एकत्रितकर, उसे जिस शत्रु की विष्ठा पर डाल दिया जाय वह सद्यः नष्ट हो जाता है।

पाठभेद

'काममधुश्च' का श्रीमूल में 'काकमधुश्च' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

प्रथम पद सूत्र ७३ की पुनरावृत्ति है।

७५. (१) पुनर्नवा : द्र० १४:३:७३। गण० ३:२३६, २३८।

(२) अवाचीन : द्र० १४:४:७३।

(३) निम्ब : द्र० १४:३:७३। गण३ ३:२१५।

(४) काममधु : कौओं की प्रिय नीम का फल अर्थात् नीमकोड़ी। द्र० १४:३:७३।

(५) स्वयंगुप्ता : कच्छुरः, धमासा। गण० ३:२३६।

पाठभेद :

'द्वारे' का 'पारे' तेलगू अनुप्रतिलिपि में पाठभेद मिलता है।

पाठभेद :

'विष्ठाऽव' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'विष्ठाव' तथा त्रिवेन्द्रम् में 'पिष्टाव' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

७७. (१) अज : बकरा।

(२) मर्कट : बन्दर।

(३) नकुल : नेवला।

(४) ब्राह्मण : ब्राह्मणः।

(५) श्वपाक : चाण्डाल।

(६) काक : कौआ।

(७) उलूक : उल्लू।

(८) क्षुण्ण : कूटा पीसा, कुचला हुआ।

(९) उत्साद : नाश, क्षय, अपक्षय।

प्रे[१]तनि[२]र्मालिका[३]किण्वं रोमाणि [४]नकुलस्य च ।
वृश्चि[५]काल्य[६]हि[७]कृत्तिश्च [८]पदे यस्य निखन्यते ।
भवत्यपुरु[९]षः सद्यो यावत्तन्नापनीयते ।।

७८. प्रेत निर्मालिका, किण्व एवं नकुल के रोम और वृश्चिक, अलि एवं अहि का चर्म जिसके ान पर गाड़ दिया जाय, वह सदा तब तक के लिये अपुरुष हो जाता है, जब तक वह हटाया न ाय।

त्रिरात्रोपोषितः पुष्येण शस्त्रहतस्य शूलप्रोतस्य वा पुंसः[१] शिरःकपाले ृत्तिकायां गुञ्जा[२] आवास्योदकेन सेचयेत् ।

७९. तीन रात्रि उपवासकर्ता पुरुष पुष्ययुक्तकाल में शस्त्रहत या शूलप्रोत पुरुष के शिरः-पाल में मिट्टी भरकर उसमें गुञ्जा बोकर जल से सींचे ।

जातानाममावस्यायां पौर्णमास्यां वा पुष्य-योगिन्यां गुञ्जवल्लीर्ग्राहयित्वा ण्डलिकानि कारयेत् ।

८०. उत्पन्न होने पर पुष्ययुक्त अमावस्या या पूर्णमासी को उस गुंजालता को लेकर मण्ड-लिका बनवाये ।

तेष्वन्नपानभाजनानि न्यस्तानि न क्षीयन्ते ।

८१. उसमें रखे गये अन्न-पान के पात्र क्षीण नहीं होते अर्थात् अन्नपान कम नहीं होता ।

दटिप्पणी :

७८. (१) प्रेत : मृत प्राणी । द्र० ३:३:१८ ।

(२) निर्मालिका : शव पर की माला से यी है ।

(३) किण्व : शुराबीज या मद्य बीज । द्र० ६:१, ३८ ।

(४) नकुल : नेवला :

(५) वृश्चिक : बिच्छू ।

(६) अलि : भौंरा ।

(७) अहि : सांप ।

(८) पद : पद चिन्ह । द्र० २:१९:१४, १८, २५ ।

(९) अपुरुष : पुंसत्व विहीन अर्थात् नपुंसक ।

पादटिप्पणी :

७९. (१) पुंस : पुरुष ।

(२) गुञ्जा : घुघुची । द्र० १४:१:११, १४:२:१२ । गण० ३:२१५, २३६ ।

पादटिप्पणी :

८०. (१) मण्डलिक : गोल, घेरा, गोलाकार । गण० ३:२३६ ।

रात्रिप्रेक्षायां प्रवृत्तायां प्रदीपाग्निषु मृतधेनोः स्तनानुत्कृत्य दाहयेत् ।

८२. रात्रिकालीन प्रेक्षा होते रहने पर, प्रदीपाग्नियों में मृतधेनु का स्तन काट कर जलाये।

दग्धान् वृ¹षमूत्रेण पे²षयित्वा नवकुम्भमन्तर्लेपयेत् ।

८३. दग्ध स्तनों को वृष के मूत्र से पीसकर, नये कुम्भ के अन्दर उससे लेप करे।

तं ग्राममपसव्यं परिणीय² यत्तत्र न्यस्तं नवनीतमेषां³ तत्सर्वमागच्छति।

८४. उस कुम्भ को बायीं ओर से गांव की परिक्रमा कर, जहाँ रख दिया जाय, वहाँ उस कुम्भ में ग्रामीणों का सब नवनीत आ जाता है।

कृष्णचतुर्दश्यां पुष्ययोगिन्या शुनो¹ लग्नक²स्य योनौ कालाय³सीं मुद्रि⁴कां प्रेषयेत् ।

८५. पुष्ययुक्त कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को लग्नक श्वान (कुतिया) की योनि में कालायसी मुद्रिका रख दी जाय।

तां स्वयं पतितां गृह्णीयात् ।

८६. स्वयं गिरने पर उसे ग्रहण कर ले।

तया वृक्षफलान्याका¹रितान्यागच्छन्ति ।

८७. उस मुद्रिका द्वारा आहूत (वाञ्छित) वृक्षफल आ जाते हैं।

पादटिप्पणी

८२. (१) रात्रिप्रेक्षा : नाटक, तमाशा, रात्रि नाटक, उत्सव, रात्रि प्रवृत्त नृत्यादि। द्र० २:१७:२६, ३:३:३१, ३:३:३७, २:२७:३९, ५:१:४३:१३:२:४:४५। गण० ३:१८५, १९०।

पादटिप्पणी :

८३. (१) वृष : बैल या सांड़।

(२) पेषयित्वा : पीसकर।

पादटिप्पणी :

८४. (१) अपसव्य : दाहिनी ओर से बाईं ओर परिक्रमा। द्र० १:२०:४, ५:५:११, १२:२:२४, १४:२:३८।

(२) परिणीय : परिक्रमा।

(३) एषा : ग्रामीण जनता या।दहाती।

पाठभेद

'कालायसीं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलि में 'कालायसीं' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८५. (१) शुनो : कुतिया।

(२) लग्नक : काममत्त। गण० ३:२३७।

(३) कालायसी : लोहा। द्र० ३:१७:७, ४:१:४१, १४:३:१०। गण० ३:२:३७।

(४) मुद्रिका : अंगूठी। गण० ३:२८७, २३७।

पादटिप्पणी :

८७. (१) आकारितानि : आहूता।

४:१:८८]

मन्त्रभैषज्यसंयुक्ता योगा मायाकृताश्च ये ।
उपहन्यादमित्रांस्तैः स्वजनं चाभिपालयेत् ॥

८८. जो मन्त्र भैषज्ययुक्त योग तथा मायाकृत योग हैं, उनसे शत्रुओं को नाश तथा स्वजनों का पालन करे ।

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणेप्रलम्भने भैषज्यमन्त्रयोगः तृतीयोऽध्यायः । आदितोऽष्टचत्वारिंशच्छततमः ।

चौदहवें अधिकरण औपनिषदिक के अन्तर्गत प्रलम्भन में भेषज्य मन्त्रयोग सम्बद्ध तृतीय ध्याय समाप्त । आदि से एक सौ अड़तालीसवाँ अध्याय समाप्त ।

ठभेद :

'योगामाया' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'योग-या' पाठभेद मिलता है ।

दटिप्पणी :

८८. (१) भैषज्य : औषधि ।

ठभेद :

तिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे औपनिषदिके चतुर्दशा-करणे तृतीयोऽध्यायः प्रलम्भने भैषज्यमन्त्रप्रयोगः दितोऽष्टचत्वारिंशच्छततमः ।

मैसूर संस्करण में—

इत्यौपनिषदिके प्रलम्भने-भैषज्यमन्त्रप्रयोगः तृतीयोऽध्यायः आदितोऽष्टचत्वारिंशत्छततमः ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे औपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे तृतीयोऽध्यायः प्रलम्भने भैषज्यमन्त्रप्रयोगः आदितोऽष्टचत्वारिंशच्छततमः ।

उदयवीर शास्त्रीसंस्करण में—

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे प्रलम्भने भैषज्यमन्त्रप्रयोगः तृतीयोऽध्यायः ॥३॥ आदितोऽष्टचत्वारिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥१४८॥

अध्याय ४

[एकोनाशीतिशततमं प्रकरणम्—स्वबलोपघातप्रतीकारः]

एक सौ उन्यासीवां प्रकरण—स्वबलोपघात प्रतीकार

स्वपक्षे परप्रयुक्तानां [1]दूषीविष[2]गराणां [3]प्रतीकारः ।

१. शत्रु द्वारा स्वपक्ष पर प्रयुक्त दूषी विष, एवं गरों का प्रतीकार ।

श्लेष्मातक[1]कपित्थ[2]दन्ति[3]दन्त[4]शठगोजि[5]शिरीष[6]पाटली[7]बला[8]स्योनाग[9]पुनर्नवा[10]-[11]श्वेतवारण[12]क्वाथयुक्तं चन्दन[13]सालावृकीलोहितयुक्तं नेजनोदकं राजोपभोग्यानां गुह्य-प्रक्षालनं स्त्रीणाम्, सेनायाश्च विषप्रतीकारः ।

२. श्लेष्मातक, कपित्थ, दन्ती, दन्तशठ, गोजी, शिरीष, पाटली, वला, स्योनाग, पुनर्नवा, श्वेता एवं वारण के क्वाथ से युक्त तथा चन्दन एवं शालावृकी के रुधिर से युक्त नेजनोदक राजोपभोग्य स्त्रियों के गुह्याङ्गों का प्रक्षालन और सेना पर प्रयुक्त विष का प्रतीकार करनेवाला होता है ।

पाठभेद :

'प्रतीकारः' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'प्रतीकारः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१. (१) दूषीविष : जलादि को दूषित करने वाला विष । द्र० १४:१:२२ । गण० ३:२१७, २१७, २३८ ।

(२) गर : अन्य विष । द्र० ७:३:३०, १२:१:२५ । गण० ३:२३८ ।

(३) प्रतीकार : वैर निकालना, बदला चुकाना ।

पाठभेद :

'गोजिशिरीष' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'गोजिगीविष' तथा श्रीमूल में 'गोजीशिरीष' तथा 'स्योनाग' का तंजोर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'स्योनागा' तथा 'नेजनोदकं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'तेजनोदकं' पादभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

२. (१) श्लेष्मातक : लिसोड़ा, शेलू । गण० ३:२३८ ।

(२) कपित्थ : कैथ या कैत ।

(३) दन्ति : ताम्बा, उदुम्बर, निकुम्भ, दांता।

(४) दन्तशठ : जम्बीर । गण० ३।२३८।

(५) गोजि : गाव जुर्वां ।

(६) शिरीष : सिरिष ।

(७) पाटली : संस्कृत काव्य में विशिष्ट वन-स्पतियों में इसका उल्लेख किया गया है । यह समस्त भारतवर्ष में मिलता है । गणपति शास्त्री ने गोजि अमोघ अर्थ किया है ।

(८) बला : खरेटी, वाट्पालक ।

(९) स्योनाग : सोनापाटी । गण० ३:२३८।

(१०) पुनर्नवा : गदहपुर्ना । गण० ३:२३८।

(११) श्वेता : वंशलोचन, वराटिका, शराब। द्र० १:२०:५ । १:९९, ३:२३८ ।

(१२) वारण : एक वृक्ष या शीशम । गण० ३:२४० ।

(१३) शालावृकी : कुतियां ।

[१]पृषत[२]नकुल[३]नीलकण्ठ[४]गोधापित्तयुक्तं [५]महीराजीचूर्णं [६]सिन्दुवारित[७]वरण[८]वारुणी-[९]तण्डुलीयक[१०]शतपर्वाग्र[११]पिण्डीतकयोगो मदनदोषहरः ।

३. पृषत, नकुल, नीलकण्ठ एवं गोधा के पित्त से युक्त महीराजी चूर्ण और सिन्दुवारित, वरण, वारुणी, तण्डुलीयक, शतपर्वाग्र एवं पिण्डीतक का योग मदनदोष (उन्माद) दूर करने वाला होता है।

[१]सृगालविन्ना[२]मदन[३]सिन्दुवारित[३]वरण[४]वारण[५]वल्लीमूलकषायाणामन्यतमस्य समस्तानां वा क्षीरयुक्तं पानं मदनदोषहरम् ।

४. सृगालविन्ना, मदन, सिन्दुवारित, वरण, वारण एवं वल्ली का अलग-अलग क्वाथ अथवा सबका क्वाथ क्षीर के साथ पीने से मदन दोष दूर होता है।

पाठभेद :

'युक्तं महो' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'युक्त मषो' तथा श्रीमूल में 'युक्तं मषी' तथा 'चूर्ण' का तंजोर एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूर्ण' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी ।

३. (१) पृषत : चितकबरा मृग। द्र० २:१३:४०, २:१४:४५ ।

(२) नकुल : नेवला ।

(३) नीलकण्ठ : इसका विजयादशमीं को दर्शन करना शुभ माना गया है। इसी से उस दिन देखने का माहात्म्य है। कथा है कि भगवान् शंकर ने समुद्र मन्थन के समय जब विष किया तो उसे पी लेने पर, उनका कण्ठ नीला पड़ गया। इसी से शंकर का एक नाम नीलकण्ठ पड़ गया। कुछ लेखकों ने नीलकण्ठ का अर्थ मोर किया है।

(४) गोधा : गोध, गोह, घड़ियाल, जल जन्तु भेद। गण० ३:१४० ।

(५) महीराजी : एक प्रकार की वानस्पतिक औषधि।

(६) सिन्दुवारि : सभालु ।

(७) वरण : द्र० ४:१२:८ ।

(८) वारुणी : मदिरा, कदम्ब की मदिरा ।

(९) तण्डुलीयक : वायु विडंग या चौराइ का साग ।

(१०) शतपर्वा : बांस का अंकुर। गण० ३:२३८ ।

(११) पिण्डीतक : मैनफल, तगर या पिण्डारक। गण० ३:२३८।

पादटिप्पणी

४. (१) सृगालवित्रा : पृष्टपर्णी, जलकुम्भी। द्र० १३:२:२४। गण० ३:२३८।

(२) मदन : धत्तूरा।

(३) सिन्दुवारित : निर्गुण्ठी। द्र० १४:४:३। गण० ३:२३८ ।

(४) वरण : वरण नामक एक वृक्ष।

(५) वारण : गजपिप्पली ।इसका वानस्तिक विनिश्चय आयुर्वेदिक निघण्टुओं में वारणया वारणक से भी किया गया है। जिसका परिगणन लता करंज या कंटकीकरंज का पर्याय माना है। लोग व्यवहार में इसे कांटा करंज कहते हैं।

(६) बल्ली : लता, अजमोदा।

कैडर्य[१]पूति[२]तिलतैलमुन्मादहरं नस्तः कर्म ।

५. कैडर्य, पूति एवं तिल के तैल का नास (तैल नाक से लेने से) उन्माद दूर करता है।

प्रियङ्गु[१]नक्तमाल[२]योगः कुष्ठहरः ।

६. प्रियंगु एवं नक्तमाल का योग कुष्ठहर होता है।

कुष्ठ[१]लोध्र[२]योगः पाक[३]शोषघ्नः ।

७. कुष्ठ, एवं लोध्र का योग पाक और शोष दूर करता है।

कटफल[१]द्रवन्ती[२]विलङ्ग[३]चूर्णं नस्तः कर्म शिरोरोगहरम् ।

८. कठफल, द्रवन्ती एवं विलङ्ग के चूर्ण का नाक से प्रयोग करने पर, शिरो रोग दूर होता है।

प्रियङ्गु[१]मञ्जिष्ठा[२]तगर[३]लाक्षा[४]रसमधुक[५]हरिद्रा[६]क्षौद्र[७]योगो रज्जूदकाविषप्रहारपतननिःसंज्ञानां पुनः प्रत्यानयनाय ।

९. प्रियङ्गु, मञ्जिष्ठा, तगर, लाक्षारस, मधुक, हरिद्रा एवं क्षौद्रका योग रज्जुबन्धन, जल विष, प्रहार एवं पतन (ऊपर से गिरने) से संज्ञाशून्य (अचेत) जनों की पुनः चेतना लौटाने के लिये प्रयुक्त होता है।

पाठभेद :

'पूतितिलतैल' का तंजौर में 'पूतिलतैलम्' तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'पूतितैलम्' पाठभेद मिलता है

पादटिप्पणी :

५. (१) कैडर्य : कायफल।

(२) पूति : करंजुआ।

पादटिप्पणी :

६. (१) प्रियङ्गु : कङ्गु, कागनी। द्र० १४:१:५, १४:४:९। गण० ३:२३९।

(२) नक्तमाल : करंजुआ। गण० ३:२३९।

पादटिप्पणी :

७. (१) कुष्ठ : कूट। द्र० १४:१:१४। गण० ३:२३९।

(२) लोध्र : लोध।

(३) पाक : पका वाल, केश की श्वेतता।

(४) शोषपत्र : क्षय रोग, सूखा रोग। द्र० १४.१:२१, १४:३:७१।

पाठभेद :

'द्रवन्ती विलङ्गचूर्णं' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'द्रवंन्ति विलङ्गपूर्णं' तथा 'शिरोरोग हरम्' का देवनागरी अनुलिपि एवं तेलगू अनुप्रतिलिपि 'शिरोरोगहरः' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

८. (१) कटफल : कायफल। गण० ३:२३९।

(२) द्रवन्ती : जमाल गोटा, शम्बरी मूषापर्णी, गण० ३:२३९।

(३) विलङ्ग : वायुविड़ंग, वेल्लं। गण० ३: २२२, २३९।

पाठभेद :

'मञ्जिष्ठा' का तंजौर में 'मञ्जिष्ठि' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

९. (१) प्रियङ्गु : कंगु, कुकनी। द्र० १४:१:४, १४:४:६। गण० ३:२३०।

(२) मञ्जिष्ठ। २.जीठ, अंजन, नागदन्ती। गण० ३:२३९।

(३) तगर : ह्रीवेर, बर्हिष्ठ, जल, वक्रा। गण० ३:२३९।

(४) लाक्षा : लाख, बाल्क।

(५) मधुक : महुआ। गण० ३:२३९।

(६) हरिद्रा : हल्दी। गण० ३:२३९।

(७) क्षौद्र : शहद। क्षुद्रा नामक मधुमक्खियों से बनायी हुई कपिल वर्ण की शहद को क्षुद्रा कहते हैं। द्र० १४:३:३९। गण० ३: २१९, २३९।

मनुष्याणामक्ष[1]मात्रम्, गवाश्वानां द्विगुणम्, चतुर्गुणं हस्त्युष्ट्राणाम् ।

१०. उसकी मात्रा मनुष्यों के लिये अक्षमात्र गाय और अश्वों के लिये दूनी तथा हाथी और ऊँट के लिये चौगुनी होती है ।

रुक्म[1]गर्भश्चैषा[2] मणि[3]ः सर्वविषहरः ।

११. प्रियंगु आदि की गुलिका सुवर्णगर्भित (स्वर्ण के अन्दर रखकर) कर धारण करने से सब प्रकार का विष प्रभाव दूर होता है ।

जीवन्ती[1] श्वेता[2]मुष्कक[3]पुष्प[4]वन्दाका[5]नामक्षीवे[6] जातस्याश्वत्थ[7]स्य मणि[8]ः सर्वविषहरः ।

१२. जीवन्ती, श्वेता, मुष्कक, पुष्प एवं वन्दाका तथा अक्षीव पर, उत्पन्न अश्वत्थ की मणि सर्व विष हरण करने वाला होता है ।

तूर्याणां[1] तैः प्रलिप्तानां शब्दो विषविनाशनः ।
लिप्तध्वजं[2] पताकां[3] वा दृष्ट्वा भवति निर्विषः ॥

१३. जीवन्ती आदि से प्रलिप्त तूर्यो का शब्द होता है, उक्त योग से लिप्त ध्वजा और पताका को देखकर, विष दूर होता है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) अक्ष : सोलह । माषे की एक तौल । गण० ३:२३९ ।

पादटिप्पणी :

११. (१) रुक्म : सोना ।

(२) एषा : सूत्र नव में वर्णित प्रियंगु, मंजिष्ठ या तगर ।

(३) : मणि : गोली, गुटिका ।

पाठभेद :

'अक्षीवे' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'अक्षिपे' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) जीवन्ती : जीवन्ती, जीवा, जीवनी, जीवनीया मधुस्रवा, शाकश्रेष्ठ, तथा पयस्वनी इत्यादि इसके पर्याय है । द्र० १:२०:५ ।

(२) श्वेता : शंखिनी, अतिविषा, अतीसगिरि-कर्णिका । द्र० १:२०:५, १४:३:२ ।

(३) मुष्कक : काली पाढ़री । मोक्षक वृक्ष ।

(४) पुष्प : आक का एक भेद ।

(५) वन्दाका : बाँदा ।

(६) अक्षीव : सोभाञ्जन या सहजन ।

(७) अश्वत्थ : पीपल :

(८) मणी : यंत्र (जन्तर) तावीज ।

पादटिप्पणी :

१३. (१) तूर्यं : तुरही, मृदंग, मुरज, ढोल यहाँ बाजा से अभिप्राय है । द्र० १:१७:८, २:२१:१, गण० १:८५ ।

(२) ध्वज : पताका की लकड़ी या बांस ।

(३) पताका : कपड़े का झण्डा । द्र० १०:९:४६ ।

एतैः कृत्वा प्रतीकारं स्वसैन्यानामथात्मनः ।
अमित्रेषु प्रयुञ्जीत विषधूमाम्बुदूषणान् ॥

१४. इनसे अपनी तथा सेना की रक्षा व्यवस्था करके, शत्रुओं पर विप, धूम एवं उदक दूषणों का प्रयोग करे ।

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे स्वबलोपघातप्रतीकारः चतुर्थोऽध्यायः । आदित एकोनपञ्चाशच्छततमः ।

एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य औपनिषदिकम् चतुर्दशमधिकरणं समाप्तम् ।

चौदहवें अधिकरण औपनिषदिक के अन्तर्गत स्वलोपघातप्रतीकार सम्बद्ध चतुर्थ अध्याय समाप्त । आदि से एक सौ उन्चासवाँ अध्याय समाप्त ।

कौटिलीय अर्थशास्त्र का चौदहवाँ अधिकरण उपनिषदिक समाप्त ।

पाठभेद

'दूषणान्' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'दूषणात्' पाठभेद मिलसा है ।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटलीयार्थशास्त्रे औपनिषदिके चतुर्दशाधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः स्वबलोपघातप्रतीकारः आदित एकोनपंचाशच्छततमः ।। एतवता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्योपनिषदिकं चतुर्दशमत्रिकरणं समाप्तम् ।

मैसूर संस्करण में—

इत्यौपनिषदिके स्वबलोपघातप्रतीकारः चतुर्थोऽध्यायः आदित एकोनपंचाशच्छततमः । एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्य औपनिषदिकं चतुर्दशमधिकरणं समाप्तम् ।

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे औपनिषदिके चतुर्थशेऽधिकरणे चतुर्थोऽध्यायः स्वबलोपघात प्रतीकार, आदित एकोनपंचाशच्छततमः । एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रगौपनिषदिकं चतुर्दशमधिकरणं समाप्तं ॥

उदयवीरशास्त्री संस्करण में—

इत्यौपनिषदिके चतुर्दशेऽधिकरणे स्वबलोपघातप्रतीकारः चतुर्थोऽध्यायः ।।४।। आदित एकोनपंचाशदधिशततमोऽध्यायः एतावता कौटलीयस्यार्थशास्त्रस्यौप् ।।१४९।। निषदिकं चतुर्दशमधिकरणं समाप्तम् ।।१४।।

१५

तन्त्रयुक्तिः—पञ्चदशमधिकरणम्

तन्त्रयुक्ति—पन्द्रहवां अधिकरण

अध्याय १

[अशीतिशततमं प्रकरणम्—तन्त्रयुक्तयः]

एक सौ अस्सीवाँ प्रकरण—तन्त्रयुक्तियाँ

---

१. तन्त्र युक्तिः : विज्ञान का प्रकार या पद्धति या व्यवस्था। सुश्रुत संहिता ३२ तन्त्र युक्तियों का वर्णन करता है। चरक संहिता, जोड़कर संख्या ३४ कर देता है। प्रत्याचार एवं सम्भव एकमत हैं कि इसका संग्रह सम्भवतः ईशापूर्व ६०० पूर्व किया गया था। कौटिल्य ने सुश्रुत का अनुकरण कर ३२ ही माना है। सुश्रुत शल्य चिकित्सक थे। काशी शल्य चिकित्सा का केन्द्र था। चरक काय चिकित्सक थे। सुश्रुत संहिता में उन्हें विश्वामित्र का पुत्र कहा गया है। सुश्रुत काशी में राजा दिवोदास से शल्य तन्त्र का ज्ञान प्राप्त किया था। सुश्रुत संहिता एक ही व्यक्ति की रचना है।

सुश्रुत संहिता पूर्व तन्त्र तथा उत्तर तन्त्र दो भागों में विभक्त है। धन्वन्तरि को दिवोदास माना गया है।

सुश्रुत के अनुसार ३२ तन्त्रोक्तियां हैं—

(१) अधिकण (द्र० ४:१:१) (२) विधान (द्र० १५:१:६) (३) योग (द्र० १५:१:८) (४) पदार्थ (द्र० १५:१:१०) (५) हेत्वर्थ (द्र० १५:१:१३) (६) उद्देश्य (द्र० १५:१:१५) (७) निर्देश (द्र० १५:१:१७) (८) उपदेश (द्र० १५:१:१९) (९) अपदेश (द्र० १५:१:२१) (१०) अतिदेश (द्र० १५:१:२३) (११) प्रदेश (द्र० १५:१:२५) (१२) उपमान (द्र० १५:१:२७) (१३) अथिपत्ति (द्र० १५:१:२९) (१४) संशय (द्र० १५:१:३२) (१५) प्रसंग (द्र० १५:१:३४) (१६) विपर्यय (द्र० १५:१:३६) (१७) वाक्यशेष (द्र० १५:१:३८) (१८) अनुगतं (द्र० १५:१:४१) (१९) व्याख्यानम् (द्र० १५:१:४३) (२०) निर्वचनम् (द्र० १४:१:४५) (२१) निदर्शनन् (द्र० १५:१:४७) (२२) अपवर्ग (द्र० १५:१:५०) (२३) स्वयं संज्ञा (द्र० १५:१:५१) (२४) पूर्व पक्ष (द्र० १५:१:५३) (२५) उत्तरपक्ष (द्र० १५:१:५५) (२६) एकान्त (द्र० १५:१:५७) (२७) अनागतावेक्षणम् (द्र० १५:१:५९) (२८) अविक्रान्तावेक्षणम्। (१५:१:६१) (२९) नियोग (द्र० १५:१:६३) (३०) विकल्प (द्र० १५:१:६५) (३१) समुच्चय (द्र० १५:१:६७) (३२) ऊह्यम् (द्र० १५:१:६९)।

मनुष्याणां वृत्तिरर्थः, मनुष्यवती भूमिरित्यर्थः ।

१. मनुष्यों की वृत्ति अर्थ है, मनुष्ययुक्त भूमि अर्थ है।

तस्याः पृथिव्या लाभपालनोपायः शास्त्रमर्थशास्त्रमिति ।

२. उस पृथिवी का लाभ एवं पालन करने का उपाय निरूपित करने वाला शास्त्र, अर्थशास्त्र है।

तद्द्वात्रिंशद्युक्तियुक्तम्-अधिकरणम्, विधानम्, योगः, पदार्थः, हेत्वर्थः, उद्देशः, निर्देशः, उपदेशः, अपदेशः, अतिदेशः, प्रदेशः, उपमानम्, अर्थापत्तिः, संशयः, प्रसङ्गः, विपर्ययः, वाक्यशेषः, अनुमतम्, व्याख्यानम्, निर्वचनम्, निदर्शनम्, अपवर्गः, स्वसंज्ञा, पूर्वपक्षः, उत्तरपक्षः, एकान्तः, अनागतावेक्षणम्, अतिक्रान्तावेक्षणम्, नियोगः, विकल्पः, समुच्चयः, ऊह्यम् इति ।

३. वह अर्थशास्त्र बत्तीस युक्तितों से युक्त है—

अधिकरण, विधान, योग, पदार्थ, हेत्वर्थ, उद्देश. निर्देश, उपदेश, अपदेश, अतिदेश, प्रदेश, उपमान, अर्थापत्ति, संशय, प्रसंग, विपर्यय, वाक्यशेष, अनुमत, व्याख्यान, निर्वचन, निदर्शन, अपवर्ग, स्वसंज्ञा, पूर्वपक्ष, उत्तरपक्ष, एकान्त, अनागतावेक्षण, अतिक्रान्तावेक्षण नियोग, विकल्प, समुच्चय एवं ऊह्य।

यमर्थमधिकृत्योच्यते तदधिकरणम् ।

४. जिस प्रधान अर्थ (विषय) को अधिकृत कर कहा जाता है, वह अधिकरण है।

पादटिप्पणी :

१. (१) **वृत्ति :** जीविका, वार्ता, वृत्ति मनुष्यों की जीविका का साधन है। वृत्ति का आधार है। वार्ता साधन का प्रश्न उपस्थित करता है, जबकि वृत्ति साध्य का। वार्ता साधन है न कि साध्य है। द्र० १:७:१, ३:१७:६, ७:१६:१, १४:३:७१।

(२) **भूमि :** मनुष्यों से आबाद भूमि को अर्थ कहते हैं। द्र० ७:९:१,३।

पादटिप्पणी :

२. (१) **पृथिव्या :** पृथ्वी के लाभ तथा पालन के उपायों का निरूपण करने वाले शास्त्र को अर्थशास्त्र कहते हैं। द्र० ९:१:१७।

पाठभेद :

'उत्तरपक्ष ।' तेलगू अनुप्रतिलि में लुप्त है।

पादटिप्पणी :

४. (१) **अधिकरण :** विषय को प्रधान स्थान पर रखना, नियुक्त सम्बन्ध, उल्लेख, समान अर्थ का साधिकार कथन करना अधिकरण है। अर्थशास्त्र में १५ अधिकरण हैं।

‘पृथिव्या लाभे पालने च यावन्त्यर्थशास्त्राणि पूर्वाचार्यैः[1] स्थापितानि प्रायशस्तानि संहृत्यैकमिदमर्थशास्त्रं कृतम्’ (१:१.१) इति ।

५. पृथिवी के लाभ और पालन के सम्बन्ध में पूर्वाचार्यों ने जिन अर्थशास्त्रों की प्रस्थापना की है प्रायः उन्हीं को संहृत कर, यह अर्थशास्त्र निर्मित किया है (१:१:१) ।

शास्त्रस्य प्रकरणा[1]नुपूर्वी[2] विधानम्[3] ।

६. शास्त्र का प्रकरणानुपूर्वी कथन, विधान है ।

‘विद्यासमुद्देशः[1], वृद्धिसंयोगः[2], इन्द्रियजयः[3], अमात्योत्पत्तिः[4]’ (१.१.३) इत्येवमादिकमिति ।

७. ‘विद्या समुद्देश, वृद्धिसंयोग, इन्द्रियजय, अमात्योत्पत्ति’ (१.१.३) इत्यादि ।

वाक्य[1]योजना[2] योगः[3] ।

८. वाक्ययोजना, योग है ।

‘चतुर्वर्णा[1]श्रमो[2] लोकः’ (१.४.१६) इति ।

९. ‘चतुर्वर्णाश्रम, लोक है’ (१.४.१६) इति ।

पाठभेद :

प्रस्थापितानि का देवनागरी अनुलिपि में ‘प्रस्तावितानि’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

५. (१) पूर्वाचार्य : द्र० वायु० ५९:२९:३० लिंग पु० उ० २१:२० ।

पादटिप्पणी :

६. (१) प्रकरण : विषय या प्रसङ्ग का निरूपण या व्याख्या का विचार विमर्श करना ।

(२) आनुपूर्वी : क्रमशः निवेशन का क्रम से रचना-व्यवस्था करना ।

(३) विधानम् : विषयानुक्रमणिका से कुछ अधिक । द्र० १०:५:४२ ।

पादटिप्पणी :

७. (१) विद्यासमुद्देश : आन्विक्षकी, त्रयी, वार्ता, दण्डनीति का निर्देश । गण० १:२ ।

(२) वृद्धसंयोग : वृद्धों का साथ । द्र० ३:१५:२ । गण० १:२

(३) इन्द्रिय जय : इन्द्रियों पर विजय । द्र० १:६:२, १५:१:१६ ।

(४) आत्मात्योत्पत्ति : अमात्यों की नियुक्ति ।

पादटिप्पणी :

८. (१) वाक्य : वक्तृता, वचन, उक्ति, कथन ।

(२) योजना : मिलाना, जोड़ना, व्यवस्था, आयोजन; कोई काम करने का विचार ।

(३) योग : वाक्य योजन को योग कहते हैं । द्र० १:५:१६, १:१६:३४, १:१८:१९, ५:१,५४, ५:६:४८, ७:६:४१, ९:१:१५, ११:४:२९, १३:३:५४, ५६ ।

पादटिप्पणी :

९. (१) वर्ण : द्र० १:२१:७, २:८:२१, २:१०:१३, २:२९:३९, ३:१५:५, २:२२:६, ३:९:३५, ४:२:२२, २:१४:५, ३:१२:५३, ४:१:३० । गण० १:३६ ।

(२) आश्रम : द्र० १:१९:२९, अधिकरण १ अध्याय ४ ।

पदावधिकः पदार्थः[1] ।

१०. पद का अर्थ, पदार्थ है ।

मूलहर[1] इति पदम् ।

११. मूलहर, यह एक पद है ।

'यः पितृपैतामहमर्थमन्यायेन भक्षयति स मूलहरः[1]' (२.९.२१) **इत्यर्थः ।**

१२. 'जो पिता एवं पितामह का अर्थ अन्यायपूर्वक भक्षित करता है, वह मूलहर है, (२.९.२१)

हेतुरर्थसाधको हेत्वर्थः[1] ।

१३. अर्थ साधक हेतु, हेत्वर्थ है ।

'अर्थमूलौ हि धर्म[1]कामौ[2]' [१.७.७.] इति ।

१४. धर्म और काम, अर्थमूलक है । (१.७.७) ।

समास[1]वाक्यमुद्देशः[2] ।

१५. समास वाक्य, उद्देश्य है ।

पादटिप्पणी :

१०. (१) पदार्थ : पद या शब्द का अर्थ । दर्शन का एक विषय । जिसमें नाम रूप आदि का कथन किया जाता है, कोई अभिधेय वस्तु । न्याय में १६ वैभिषिक में ६ या ७ सांख्य २५, योग में १६, मीमांसा में २ पदार्थ पाये गये ।

पादटिप्पणी :

११. (१) मूलहर : २:९:२०, २१:७:१३:१३ गण० १:१६३ ।

पाठभेद :

'अर्थमन्यायेन' का देवनागरी अनुलिपि में 'अर्थन्यायेन' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

१२. (१) मूलहर : द्र० १५:१:१११ गण० १:१६३ ।

१३. (१) हेत्वर्थ : सिद्ध हेतु का नाम हेत्वर्थ है ।

पादटिप्पणी :

११. (१) धर्म : द्र० ३:१:३८, ३९, ४०, ४३, ४४, ४५ ।

(२) काम : द्र० १:६:१, १:७:२, ४:१२:२८, मनु० १:९:४, आदि० ६६:३३:३ । वायु० ३८:३७, अग्नि० २५३:९:१० । स्कन्द० ६:२:३४:३५, ६:११ ४८:५९ ।

पादटिप्पणी :

१५. (१) समास : योग सन्धि या संक्षिप्त करना । कहे गए विस्तृत अर्थ के आदि में संक्षिप्त प्रतिपादक वाक्य को समास कहते हैं । समष्टि, मिलाप, शब्द रचना, समास के ४ भेद हैं ।

(१) द्वन्द्व (२) तत्पुरुष (३) वहुव्रीह (४) अव्ययी भाव ।

(२) उद्देश्य : संक्षिप्त वाक्य का नाम उद्देश्य है । निर्देश, अभिप्राय, प्रयोजन अर्थ होता है । द्र० २:२:१० ।

'विद्या[1]विनय[2]हेतुरिन्द्रियजय[3]ः' (१.६.१)

१६. 'विद्याविनय का हेतु, इन्द्रिय जय' है (१.६.१)।

व्यास[1]वाक्यं निर्देशः[2]।

१७. व्यास वाक्य, निर्देश है।

'कर्ण[1]त्वग्[2]अक्षि[3]जिह्वा[4]घ्राणे[5]न्द्रियाणां शब्दस्पर्शरूपरसगन्धेष्वविप्रतिपत्ति[6]रिन्द्रियजयः' (१.६.२) इति।

१८. कर्ण, त्वक्, अक्षि, जिह्वा, घ्राण इन्द्रियों का शब्द स्सर्श रूप, रस एवं गन्ध में अनासक्ति भाव इन्द्रिय जय है' (१.६.२)।

एवं वर्तितव्यमित्युपदेशः[1]।

१९. इस प्रकार करना चाहिए—यह उपदेश है।

'धर्मार्थाविरोधेन कामं[1] सेवेत, न निःसुखः[2] स्यात्' [१.७.३] इति।

२०. 'धर्म और अर्थ से बिना विरोध के काम सेवन करे, निःसुख न रहे' (१.७.३)

पादटिप्पणी :

१६. (१) विद्या : विद्या चार प्रकार की कौटिल्य ने माना है। (१) अन्वीक्षिकी (२) त्रयी (३) वार्ता (४) दण्डनीति।

(२) विनय : द्र० १:५:३ मत्स्य० २१४, ५१ १२।

(३) इन्द्रियजय : द्र० १:६:२, ३, १५:१:१८ द्र० अधिकरण १ अध्याय ६, गण० १:१:३७।

पादटिप्पणी :

१७. (१) व्यासवाक्य : विस्तृत विवरण या कथन।

(२) निर्देश : उल्लेख, संकेत। द्र० २:७:२।

पाठभेद :

'त्वगक्षिजिह्वा' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'त्वगक्षिह्वा' पाठभेद मिलता है।

पादटिप्पणी :

१८. (१) कर्ण : कान, सुनना या शब्द।

(२) त्वग् : इसका गुण स्पर्श है।

(३) अक्षि : आँख इसका गुण देखना है।

(४) जिह्‌वा : जीभ,।

(५) घ्राण : गन्ध।

(६) विप्रतिपत्ति : मतभिन्नता, भ्रान्तधारणा, सन्देह, विरोधी भाव।

पादटिप्पणी :

१९. (१) उपदेश : शिक्षण, अध्यापन निर्देशन। मनु ८:२७२।

पादटिप्पणी :

२०. (१) काम : द्र० १:६:१, १:७:२, भारत मंजरी १:१७:३९ वायु० ५८:२, स्कन्द० ३:३:२१: २७, विष्णु० ३:११:६।

(२) सुख : प्रसन्नता सुख और आनन्द में अन्तर है। शारीरिक प्रसन्नता एवं आत्मिक आनन्द है। द्र० १ अधिकरण ७। द्र० १:७:३, ३:४:९, २६, ३०।

एवमसावाहेत्यपदेशः[1] ।

२१. उसने ऐसा कहा—यह कथन अपदेश है

'मन्त्रिपरिषदं[1] द्वादशामात्यान्[2] कुर्वीतेति मानवाः[3] । षोडशेति बार्हस्पत्याः[4] । विंशतिमित्यौशनसाः[5] । यथासामर्थ्यमिति कौटिल्यः[6]' [१.१५.४७.५०] इति ।

२२. 'मन्त्रिपरिषद् में बारह अमात्य हों ऐसा मनुमतानुयायियों का मत है। सोलह अमात्य हों यह बृहस्पति के अनुयायियों का मत है। बोस अमात्य हों, यह उशनानुयायियों का मत है सामर्थ्यानुसार अमात्य हों, ऐसा कौटिल्य का मत है (१.१५.४७.५०)

उक्तेन साधनमतिदेशः[1] ।

२३. उक्त से अनुक्त का साधन, अति देश है ।

'दत्तस्य[1]अप्रदानमृणा[2]दानेन व्याख्यातम्' [३.१६.१] इति ।

२४. 'दत्त के अप्रदान की व्याख्या ऋणादान द्वारा सम्पन्न हो गयी' (३.१६.१)

वक्तव्येन साधनं प्रदेशः[1] ।

२५. वक्तव्य द्वारा साधन, प्रदेश है ।

पादटिप्पणी :

२१. (१) **अपदेश :** कारणों का वर्णन या तर्क प्रस्तुत करना : भारतीय न्यायवाद के पांच अंगों में दूसरा अंग । द्र० ४:८:२, ५:६.१० ।

पादटिप्पणी :

२२. (१) **मन्त्रिपरिषद :** मन्त्रियों का परिषद मन्त्रिमण्डल ।

(२) **अमात्य :** द्र० १:२:१०, २९ ।

(३) **मानवा :** मनु के अनुयायी १२ अमात्यों की मान्यता देते हैं ।

(४) **बृहस्पति :** १६ अमात्यों की मान्यता देते हैं ।

(५) **उशनस :** २० अमात्यों की मान्यता देते हैं ।

(६) **कौटिल्य :** यथा सामर्थ्य अमात्य की मान्यता देते हैं ।

पादटिप्पणी :

२३. (१) **अतिदेश :** कथा द्वारा अनुच्य विषय की सिद्धि करना । अन्य वस्तु के धर्म का अन्य पर आरोपण, निर्दिष्ट विषय के अलावा और विषयों पर भी लागू होने वाला नियम, सादृश्य, उपमा, निष्कर्ष आत्मसात् करना । कही हुई बात से न कही हुई बात का कहना ।

पादटिप्पणो :

२४. (१) **दत्त :** दान, भेंट देना । ना० ४:१, मनु ९:१६८ ।

(२) **ऋण :** कर्ज । द्र० २:१६:१ । द्र० अधिकरण ३ अध्याय १६ ।

पादटिप्पणो :

३५. (१) **प्रदेश :** संकेत, निश्चय, संकल्प, निर्देश, निर्धारण करना, आगे कथित विषय का कथन द्वारा अनुयुक्त विषय का सिद्ध करने का नाम अपदेश है ।

'साम[1]दान[2]भेद[3]दण्डै[4]र्वा, यथाऽऽपत्सु व्याख्यास्यामः[1] [७.१४.११] इति ।

२६. अथवा साम, दान, भेद एवं दण्ड द्वारा स्वपक्ष में करने की विधि आपत् प्रकरण में ख्यायित करेंगे (७.१४.११) इति ।

दृष्टेनादृष्टस्य साधनमुपमानम्[1] ।

२७. दृष्ट द्वारा अदृष्ट को सिद्ध करना, उपमान है ।

'निवृत्तपरिहारान्[1] पितेवानुगृह्णीयात्[2]' [२.१.१८] इति ।

२८. 'निवृत्त परिहार वालों को पिता तुल्य अनुगृहीत करें । (२.१.१८) ।

यदनुक्तमर्थादापद्यते साऽर्थापत्तिः[1] ।

२९. जो अनुक्त बात अर्थ से सम्पन्न (प्राप्त) हो, वह अर्थापत्ति है ।

'लोकयात्रा[1]विद्राजानमात्म[2]द्रव्यप्रकृतिसंपन्नं प्रियहितद्वारेणाश्रयेत्' .४.१]

३०. आत्म द्रव्य प्रकृति सम्पन्न, लोकयात्राविद्, राजा का आश्रय प्रिय एवं हितकर जनों प्राप्त करें' । (५.४.१)

टिप्पणी :

२६. (१) साम : खुश करना, ढ़ाढस बधाना; ी देना या तुष्ट करना । द्र० ७:१४:११ ।

(२) दान : द्र० ९:५:२६, गण० ३:७४।

(३) भेद : द्र० ९:५:१२, गण० ३:१४५ ।

(४) दण्ड : द्र० १:५:१, गण० १, १५, २३, , १३८; १९२; १९५ ।

टिप्पणी :

२७. (१) उपमान : तुलना; सम, समता, सादृश्य; प्रमाणों में से एक । दिखी हुई वस्तु से अनदेखी सिद्ध करना, वह वस्तु जिससे किसी की तुलना जाय।

टिप्पणी :

२८. (१) परिहार : द्र० २:१:१५, १७; १८; २:८:३; २:१६:१२, २:२५:३, ३:९:३३; , १३:४:११; गण० १:१११; ३:७४; , २१० ।

(२) अनुग्रह : द्र० २:१:१५; १६, २:१६:११; २:३५:३, १३:४:३; गण० १:१११, ३:२०० ।

अधिकरण २, अध्याय १ ।

पादटिप्पणी :

२९. (१) अर्थापत्ति : प्रमाण; जिसमें एक बात से दूसरी बात सिद्ध होती है । यह एक अर्थालंकार है ।

पाठभेद :

'आत्मद्रव्यप्रकृति' का तंजौर तथा तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'आत्मप्रकृति' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३०. (१) लोकयात्रा : लोक व्यापार, आचरण, व्यवहार । द्र० १:२:५; १:४:४५; ५:४:१ ।

(२) आत्मद्रव्यप्रकृति : द्र० ५:४:२, ६:६:२८; ९:७:४९ ।

अधिकरण ५, अध्याय ४ ।

'नाप्रियं[१]हितं[२]द्वारेणाश्रयेत्' इत्यर्थादापन्नं भवतीति ।

३१. 'अप्रिय एवं अहितकर द्वारा आश्रय न प्राप्त करे, यह अर्थ अर्थात् से आपन्न होता है।

उभयतो हेतुमानर्थः संशयः[१] ।

३२. उभयतः हेतुमान् अर्थ, संशय है ।

'क्षीणं[१]लुब्धं[२]प्रकृति[३]मपचरितं[४]प्रकृतिं वा' [७.५.१२] इति ।

३३. 'क्षीणलुब्ध प्रकृति अथवा अपचरित प्रकृति (७.५.१२) इति !

प्रकरणान्तरेण समानोऽर्थः प्रसङ्गः[१] ।

प्रकरणान्तर के समान अर्थ, प्रसंग है ।

'कृषि[१]कर्म[२]प्रदिष्टायां भूमौ–इति समानं पूर्वेण' [१.११.१०] इति ।

३५. कृषि कर्म प्रदिष्ट भूमि में—यह पूर्व के समान है' (१.११.१०) ।

प्रतिलोमेन[१] साधनं विपर्ययः[२] ।

३६. प्रतिलोम द्वारा साधन, विपर्यंय है ।

पादटिप्पणो :

३१. (१) अप्रिय : अरुचिकर, नापसन्द ।

(२) अहित : अयोग्य, अनुचित, अहितकर । मनु० ३:३ ।

पादटिप्पणो :

३२. (१) संशय : शंका, शक, सन्देह, संशय, न्याय के २४ जातियों में से एक कोई अर्थ जो दोनों पक्षों के हेतू को करते हुए, प्रयुक्त होता है ।

द्रष्टव्य—अधिकरण ६ अध्याय ५ ।

पाठभेद :

'मपचरित' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'मुपचरित' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

३३. (१) क्षीण : दुर्बल : द्र० ७:३:१२, १४, ७:४:७ । नारद—२४:८० ।

(२) लुब्ध : लोभी । द्र० १:१४:४७, ३:१३:१४; ७:४:७; ३:४:२२ ।

(३) प्रकृति : जनता । द्र० ७:५:१० ।

(४) अपचरित : दोष, दुष्कृत्य, चरित्रहीन। द्र० ७:३:१३; १४, ७:४:७, ७:५:१२:१६; गण २:२४७ ।

पादटिप्पणो :

३४. (१) प्रसङ्ग : संलग्नता, विषय, संयोग। मनु० ९:५, द्र० ७:५:२०; ८:१:३; ८:३:३६, गण ३:२ ।

पादटिप्पणो :

३५. (१) कृषिकर्म : कृषि कार्य । द्र० १:११ १० । गण० १:३२ ।

(२) प्रदिष्ट : दिखाया, बनाया निश्चित कि हुआ । द्र० १:११:५; १०; १२ ।

पादटिप्पणी :

३६. (१) प्रतिलोम : वैपरीत्य । द्र० ७:१६ १०; ८:१:३, ९:७:५२, १०:५:४३ । गण० १: १०० ।

(२) विपर्यंय : कथित विषय के बैपरीत्य द्वार किसी विषय का निर्देश करना । द्र० ७:७:५ ।

'विपरीतमतुष्टस्य' [१.१६.१२] इति ।

३७. 'अतुष्ट का विपरीत' (१.१६.१२)

येन वाक्यं समाप्यते स वाक्यशेषः ।

३८. जिससे वाक्य समाप्त होता है यह शेष है ।

'छिन्नपक्षस्येव राज्ञश्चेष्टानाशश्च' [८.१.९] इति ।

३९. 'और छिन्न पक्षवत् राजा का चेष्टा नाश–(८.१.९) ।

तत्र 'शकुनेः' इति वाक्यशेषः ।

४०. उसमें 'शकुनि' यह पद वाक्य शेष है ।

परवाक्यमप्रतिषिद्धमनुमतम् ।

४१. अप्रतिषिद्ध परवाक्य अनुमत है ।

'पक्षावुरस्यं प्रतिग्रह इत्यौशनसो व्यूहविभागः' [१०.६.१] इति ।

४२. 'दो पक्ष, उरस्य, प्रतिग्रह यह औशनस का व्यूह विभाग है' (१०.६.१) ।

अतिशयवर्णना व्याख्यानम् ।

४३. अतिशय वर्णन व्याख्यान है ।

पादटिप्पणी :

३७. (१) विपरीत : प्रतिकूल, नियम विरुद्ध; ल्टा । द्र० ९:५:२५ ।

पादटिप्पणी :

३८. (१) वाक्य शेष : जिसके द्वारा वाक्य समाप्त किया जाता है । द्र० ८:१ ।

पादटिप्पणी :

३९. (१) छिन्नपक्ष : पर कटा ।

पादटिप्पणी :

४०. (१) शकुन : पक्षी । द्र० १४:२:१७, ३० गण० ३:२२३ ।

पादटिप्पणी :

४१. (१) अनुमत : सम्मत, अनुज्ञात; स्वीकृत ।

पादटिप्पणी :

४२. (१) पक्ष : दोनों पार्श्व । द्र० १०::५:८; १७; १०:६:१; गण० १:२०, ३:१२७, १२८; १३७ ।

(२) उर : द्र० १०:५:८; १४.३:१७ । गण० १:२१; ३:१२७, २२७; १३७ ।

(३) प्रतिग्रह : द्र० ३:१४:३८; ७:७:३, ५, १२, १२:४:१९, १३:३:४६, ८:१:४२, १०:२:२०, १०:५:५८; १०:६:१:२ ।

पादटिप्पणी :

४३. (१) व्याख्यानम् : सिद्ध विषय का अत्यधिक वर्णन । २:२५:२५ ।

'विशेषतश्च संघानां संघधर्मिणांच राजकुलानां द्यूतनिमित्तो भेदस्तन्निमित्तो विनाशइत्यसत्प्रग्रहः पापिष्ठतमोऽव्यसनानां तन्त्रदौर्बल्यात्' [८·३·६४] इति।

४४. 'विशेषकर संघों और संघधर्मी राजकुलों में द्यूतनिमित्त भेद होता है, और उसी से विनाश होता है—यह असत् प्रग्रह व्यसनों में पापिष्ठतम है क्योंकि तन्त्र दौर्बल्यकारक है' (८-३:६४)

गुणतः शब्द निष्पत्तिनिर्वचनम् ।

४५. गुण के अनुसार शब्द की निष्पत्ति निर्वचन है ।

'व्यस्यत्येनं श्रेयस इति व्यसनम्' [८·१·४] इति ।

४६. 'कल्याण से च्युत (पृथक्) करता है अतः व्यसन हैं' (८-१-४)

दृष्टान्तो दृष्टान्तयुक्तो निदर्शनम् ।

४७. दृष्टान्त युक्त दृष्टान्त निदर्शन है ।

'विगृहीतो हि ज्यायसा हस्तिना पादयुद्धमिवाभ्युपैति' [७·३·३] इति।

४८. 'ज्यायान् के साथ विगृहीत (हीन शक्तिवाला नृपति) हाथी के साथ युद्ध करने वाले पदाति की गति को प्राप्त होता है ।' (७-३-३)

पाठभेद :

'धर्मिणां च' का देवनागरी अनुलिपि में 'धर्मिणाश्च' तथा 'इत्यसत्प्रग्रहः' का 'इत्यसत्परिग्रहः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४४ (१) संघ : द्र० १:१७:५३, १:१८:९:८:३:६४ । वामन० ६१:३४; २५ ।

अधिकरण ८, अध्याय ३ । गण० १:२२; ३:१२७ ।

पादटिप्पणी :

४५ (१) निर्वचन : अन्तर्निहित गुण द्वारा किसी एक की सिद्धि करने का नाम निर्वचन है । इसका शाब्दिक अर्थ उक्ति; उच्चारण शब्दावली होता है ।

पादटिप्पणी :

४६. (१) व्यसन : द्र० २:१४:४; ३:१४:२; ३:६:३०; ७:१:३३ :

अधिकरण ७; अध्याय १ ।

पादटिप्पणी :

४७. (१) दृष्टान्त : प्रस्तुत विषय को समझाने के लिए समानधर्मी दूसरी वस्तु का कथन । द्र० २:१०:९ ।

(२) निदर्शन : प्रदर्शन, उदाहरण । दृष्टान्त सहित यदि दृष्टान्त का निर्देश किया जाय ।

पाठभेद :

'हस्तिना' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'हस्तिनः' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

४८. (१) ज्यायसा : द्र० ७:३।३:७:५:४०, ९:७:१२ ।

द्रष्टव्य—अधिकरण ७, अध्याय ३ ।

(२) हस्तिना : हाथी । द्र० ७:२:३ ।

[1]अभिप्लुत[2]व्यपकर्षणम[3]पवर्गः ।

४९. अभिप्लुत का व्यपकर्षण अपवर्ग है ।

नित्यमासन्नम[1]रिबलं वासयेद् अन्यत्राभ्यन्तर[2]कोप[3]शङ्कायाः [९.२.६]

इति ।

५०. 'अभ्यन्तर कोप की शंका की स्थिति को छोड़कर शत्रुबलको नित्य, आसन्न बसाये' (९-२-६) ।

[1]परै[2]रसमितः शब्दः [3]स्वसंज्ञा ।

५१. दूसरों से असमित शब्द स्व संज्ञा है ।

'[1]प्रथमाप्रकृतिः, तस्य [2]भूम्यनन्तरा [3]द्वितीया, भूम्येकान्तरा तृतीया'

[६.२.१३-१५] इति ।

५२. 'प्रथमा प्रकृति, उसकी भूमि के अनन्तर द्वितीया प्रकृति, एक भूमि के अन्तर वाली तृतीया प्रकृति' (६-२-१३-१५) ।

प्रतिषेद्धव्यं वाक्यं [1]पूर्वपक्षः ।

५३. प्रतिषेध योग्य वाक्य पूर्वपक्ष होता है ।

दटिप्पणी :

४९. (१) अभिप्लुत : पराभूत, व्याकुल, र्ग का संकोचीकरण ।

(२) व्यपकर्षण : दूर करना, खींचकर दूर करना नीचे ले जाना, वञ्चित करना, निकाल देना ।

(३) अपवर्ग : अपवाद; पूर्णता, समाप्ति, पूर्ति, शैथिल्य, बर्जन विषय को व्यापक रूप से हुए, उसके विषय में संकोच कर देना ।

दटिप्पणी :

५०. (१) अरिबल : शत्रु की सेना ।

(२) कोप : विद्रोह ।

(३) शङ्का : सन्देह, अनिश्चितता ।

द्रष्टव्य—अधिकरण ९, अध्याय २ ।

भेद :

'रसमितः' का देवनागरी अनुलिपि में 'रसंज्ञितः' तेलुगु अनुप्रतिलिपि में 'रसम्मितः' पाठभेद है ।

पादटिप्पणी :

५१. (१) परे : दूसरे ।

(२) असमित : असंकेतित, स्वीकार न किया हुआ । असम्मत । संकेत के लिए किसी वस्तु को दूसरे संकेत न किया हुआ शब्द ।

(३) स्वसंज्ञा : दूसरों से संकेत न किया हुआ शब्द ।

पादटिप्पणी :

५२. (१) प्रथमा प्रकृति : द्र० ६:२:१३ ।

(२) भूम्यनन्तरा : द्वितीया प्रकृति : द्र० ६: ३:१४ । गण० २:३४० ।

(३) भूम्येकान्तरा : तृतीया प्रकृति । द्र० ६: २:१५ । गण० २:३६३ ।

द्रष्टव्य—अधिकरण ६, अध्याय २ ।

पादटिप्पणी :

५३. (१) पूर्वपक्ष : अगला हिस्सा या पार्श्व । किसी विवाद का पूर्व पक्ष या प्रश्न या दृष्टिकोण । किसी तर्क का प्रथम या प्रतिकूल या प्रतिशेष किया हुआ वाक्य । द्र० ७:९:६५ ।

'स्वाम्य[1]मात्य[2]व्यसन[3]योरमात्यव्यसनं गरीयः' [८.१.७] इति ।

५४. 'स्वामी एवं अमात्य के व्यसनों में अमात्य व्यसन प्रबल होता है' (८-१-७) ।

तस्य निर्णयनवाक्यमुत्तर[1]पक्षः ।

५५. उसका निर्णायक वाक्य उत्तरपक्ष होता है ।

'तदायत्तत्वात्[1], तत्कूटस्थानीयो[2] हि स्वामी' [८.१.१७-१८] इति ।

५६. 'तदायत्त होने से उसका मूलस्थान स्वामी होता है' (८-१-१७-१८)

सर्वत्रायत्त[1]मेकान्तः[2] ।

५७. सर्वत्र आयत्त अर्थ एकान्त है ।

'तस्मादुत्थान[1]मात्मनः कुर्वीत' [१.१.९५] इति ।

५८. अतएव अपना उत्थान करे' (१-१९-५) ।

पश्चादेवं[1] विहितमित्यनागतावेक्षणम्[2] ।

५९. बाद में ऐसा विधान होगा—यह अनागतावेक्षण है ।

पादटिप्पणी :

५४. (१) **स्वामी व्यसन :** स्वामी या राजा की आपदा या विपत्ति । द्र० १:१४:७, ३:११:५०, ४:७:१२, ६:१:१२, ७:५:५, ८:१:१८ ।

(२) **अमात्य व्यसन :** अमात्य की आपदा या विपत्ति । द्र० १:६:१, १:८:१, १:७:२९, ८:१:२९ ।

(३) **व्यसन :** आपदा, आपत्ति । द्र० ३:१४:२ ।

द्रष्टव्य अधिकरण ८, अध्याय १ ।

पादटिप्पणी :

५५. (१) **उत्तर पक्ष :** पूर्व पक्ष का निर्णय कारी वाक्य उत्तर पक्ष कहा जाता है । द्र० ८:५:२९, ९:७:६५ ।

किसी विषय का द्वितीय पक्ष । उत्तर में प्रस्तुत तर्क का जवाब । अनुमान की प्रक्रिया में, गौणउक्ति ।

पादटिप्पणी :

५६. (१) **तदायत्तत्वात् :** अधीनस्थ । द्र० ८:१:१७ ।

(२) **तत्कूटस्थ :** मूल स्थान । द्र० ८:१:१८, ५:१:३३, ८:५:१८ ।

पादटिप्पणी :

५७. (१) **सर्वत्राय :** सर्वथा अवर्ज्य ।

(२) **एकान्त :** जो विषय सब देश तथा काल में प्रयोज्य होता है जिसका त्याग नहीं किया जा सकता, उसे एकांत कहते हैं ।

पादटिप्पणी :

५८. (१) **उत्थान :** द्र० १:९:५ ।

द्रष्टव्य—अधिकरण १ अध्याय १९ ।

पादटिप्पणी :

५९. (१) **पश्चादेवं :** इस प्रकार का विधान न करना ।

(२) **अनागतवेक्षणम् :** इसमें तथा प्रदेश में अन्तर है । तत्पश्चात् इसी प्रकार का विधान किया जाय इस प्रकार कहने का नाम अनागत वेक्षणम् होता है । वेक्षण का अर्थ अच्छी तरह देख भाल होता है । पीछे इस प्रकार का विधान किया जाएगा, इस प्रकार कहना अनागतवेक्षणम् है ।

'तुलाप्रतिमानं[१] पौतवाध्यक्षे[२] वक्ष्यामः' [२.१३.२८] इति ।

६०. 'तुलाप्रतिमान पौतवाध्यक्ष में कहेंगे' (२-१३-२८) ।

पुरस्तादेवं[१] विहितमित्यतिक्रान्तावेक्षणम्[२] ।

६१. पहले ऐसा किया—यह अतिक्रान्तावेक्षण है ।

'अमात्यसंपदुक्ता[१] पुरस्तात्[२]' [६.१.७] इति ।

६२. 'अमात्य सम्पत् पूर्वोक्त है' (६.१.७) ।

एवं नान्यथेति नियोगः[१] ।

६३. ऐसा हो अन्यथा नहीं—यह नियोग है ।

'तस्माद्धर्म्य[१]मर्थ्यं[२] चास्योपदिशेत्, नाधर्म्यमनर्थ्यं[३] च' [१.१७.३३] इति ।

६४. 'अतः उसे धर्म्य और अर्थ्य का उपदेश है, अधर्म्य एवं अनर्थ्य का नहीं' (१-१७-३३)

अनेन वाऽनेन वेति विकल्पः ।

६५. इस प्रकार अथवा उस प्रकार हो—यह विकल्प है ।

पादटिप्पणी :

६०. (१) तुलाप्रतिमानं : तौल द्र०२:१६:१० । गण० १:७ ।

(२) पौतवाध्यक्ष : द्र० २:१३:२८, २:१९:१, २:२:२, गण० १:७, १३६, १५६ ।

द्रष्टव्य—अधिकरण २ अध्याय १०

पादटिप्पणी :

६१. (१) पुरस्तात् : पहले, आगे । द्र० १: १९:३० ।

(२) अतिक्रान्त : इसके पूर्व इसका विधान किया गया था, इस प्रकार कहना । द्र० १:१९:३०, ८:५:११, १०:६:९:११ । गण० ३:१३८ ।

पादटिप्पणी :

६२. (१) अमात्य : द्र० १:८:१, १:८:२९ ।

(२) पुरस्तात् : द्र० १:९:२ ।

द्रष्टव्य अधिकरण ६ अध्याय १

पादटिप्पणी :

६३. (१) नियोग : किसी काम में लगाना, उपयोग, प्रयोग, निदेश, आदेश । द्र० १:१५:२५, ७:१६:४, ९:७:७४:३, ९:७:७३, ७६, मनु० ९: ५९ । गण० २:३४४, ३:१००, २६१ ।

पाठभेद :

'धर्म्यमर्थ्यं' का तेलगू अनुप्रतिलिपि में 'धर्ममर्थं' तथा 'नाधर्म्यमनर्थ्यं' का 'नाधर्ममनर्थं' पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६४. (१) धर्म : द्र० ३:१:३८, ३९, ४३, ४४, ४५, १५:१:१४ । गण० १:३७ ।

(२) अर्थ : द्र० १:१०:३३, ७:५:३२ । गण० ३:८९ ।

(३) अनर्थ : द्र० १:७:३३, १:७:३, २:३५: १०, ७:५:२३, ९:७:६१ । गण० १:२७ ।

पादटिप्पणी :

६५. (१) विकल्प : सन्देह, अनिश्चय, अनिर्णय वैकल्पिक, चाहे इस प्रकार या उस प्रकार किया जाय । द्र० ७:१६:४ । गण० २:३४४, ३:१००।

६६. (१) दुहितर : पुत्री, कन्या । द्र० ३:५: १० ।

द्रष्टव्य० अधिकरण ३ अध्याय ५

‘दुहितरो वा धर्मिष्ठेषु विवाहेषु जाताः’ [३.५.१०] इति ।

६६. ‘अथवा धर्मिष्ठ विवाहों में उत्पन्न पुत्रियाँ उत्तराधिकारी हों’ (३-५-१०) ।

अनेन चानेन चेति समुच्चयः ।

६७. इस प्रकार और इस प्रकार होगा यह समुच्चय हैं ।

‘स्वयंजातः पितुर्बन्धूनां च दायादः’ [३.७.१३] इति ।

६८, ‘स्वयं जात पिता और बन्धुओं का दायाद होता है’’ (३-७-१३) ।

अनुक्तकरणमूह्यम् ।

६९. अनुक्तकरण ऊह्य होता है ।

‘यथा च दाता प्रतिग्रहीता च नोपहतौ स्यातां तथाऽनुशयं[2]कुशलाः कल्पयेयुः’ [३.१६.५] इति ।

७०. ‘जिस प्रकार दाता और प्रतिग्रहीता उपहत न हों उस प्रकार का अनुशय कुशल जन कल्पित करें’ (३-१६-५)

पादटिप्पणी :

६७. (१) समुच्चय : संग्रह, समष्टि, सन्धि शब्दों या वाक्यों का संयोग है । द्र० ७:१६:४, ७:१५:१३, ९:७:७३ । गण० २:३४४, ३:१०० ।

पाठभेद :

‘स्वयंजातः पितुर्बन्धूनां’ का तेलगू अनुप्रतिलिपि में ‘स्वसंजातः पितृवन्धूनां’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

६८. (१) स्वयं जातः : अपने से हुआ पति से उत्पन्न पुत्र ।

द्रष्टव्य० अधिकरण ३ अध्याय ७

पादटिप्पणी :

६९. (१) ऊह्य : अभापित बात या न कहीं बात को कर लेना ।

पाठभेद :

‘यथा च दाता’ का तेलगू अनुप्रतिलिपि में ‘यथावद्दाता’ पाठभेद मिलता है ।

पादटिप्पणी :

७०. (१) यथा । यह सूत्र ३:१६:५ का पुनरावृत्ति है । कथित, जिस प्रकार, जैसे ।

(२) अनुशय : प्रतिसंहरण या वापिस लेना । द्र० ३:१३:३६, ३:१४:२, ३:१६:२, अग्नि० २२७, १३-१५, २५८-४८ । मत्स्य २२७-१३-१४, यम० ५:८:२४:२५, अधिकरण ३, अध्याय १६ । गण० २:९१:९३ ।

एवं शास्त्रमिदं युक्तमेताभिस्तन्त्रयुक्तिभिः ।
अवाप्तौ पालने चोक्तं लोकस्यास्य परस्य¹ वा ।।

७१. इस प्रकार यह शास्त्र इन तन्त्रयुक्तियों से युक्त है और इस लोक और परलोक की प्ति तथा पालन के लिए निर्मित है।

धर्ममर्थं¹ च कामं च प्रवर्तयति पाति च ।
अधर्मानर्थविद्वेषानिदं शास्त्रं निहन्ति च ।।

७२. यह शास्त्र धर्म, अर्थ और काम को प्रवर्तित तथा अर्थ विद्वेषी अधर्मों का नाश करता है।

येन शास्त्रं च शस्त्रं च नन्द¹राजगता च भूः ।
अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन² शास्त्रमिदं कृतम् ।।

७३. जिसने अमर्षवश शास्त्र, शस्त्र एवं नन्द राजगत भूमि का उद्धार किया उसी ने यह स्त्र निर्मित किया।

इति तन्त्रयुक्तौ पञ्चदशेऽधिकरणे तन्त्रयुक्तयः प्रथमोऽध्यायः । आदितः ञ्चाशच्छततमः । एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य तन्त्रयुक्तिः पञ्चदशमधिकरणं माप्तम् ।

पन्द्रहवें अधिकरण तन्त्रयुक्ति में तन्त्रयुक्तियों से सम्बन्धित प्रथम अध्याय समाप्त।
आदि से एक सौ पचासवाँ अध्याय समाप्त।

टिप्पणी :

७१. (१) परस्य : परलोक से तात्पर्य है।

टिप्पणी :

७२. (१) धर्ममर्थञ्च कामं : धर्म, अर्थ, काम, प्रति हानि अधर्म तथा अनर्थ है।

टिप्पणी :

७३. (१) नन्द : मगध का राजा।
(२) तेन : कौटिल्य।

पाठभेद :

गणपतिशास्त्री संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे तन्त्रयुक्तो पञ्चदशाधिकरणे प्रथमोऽध्यायः तन्त्रयुक्तयः । आदितः पञ्चाशच्छततमो प्रथमोऽध्यायः एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य तन्त्रयुक्तिः पञ्चदशमधिकरणं समाप्तम् ।।

(दृष्ट्वा विप्रतिपत्तिं बहुधा शास्त्रेषु भाष्यकाराणाम् । स्वयमेव विष्णुगुप्तश्चकार सूत्रमाष्यं च ॥)

समाप्तमिदं कौटिलीयमर्थशास्त्रम् ।

कौटिलीय अर्थशास्त्र का तन्त्र युक्ति सम्बद्ध पन्द्रहवाँ अधिकरण समाप्त ।

(शास्त्रों में भाष्यकारों की प्रायः विप्रतिपत्ति देखकर विष्णुगुप्त ने सूत्र एवं भाष्य स्वयं किया)

यह कौटिलीय अर्थशास्त्र समाप्त ।

मैसूर संस्करण में—

इति तन्त्रयुक्तो पञ्चदशोऽधिकरणे तन्त्रयुक्तयः प्रथमोऽध्यायः । आदितः पञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायः, अशीत्यधिकशततमं प्रकरणं समाप्तम्, एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य तन्त्रयुक्तिः पञ्चदशमधिकरणं समाप्तम् ॥

वसाक संस्करण में—

इति कौटिलीयार्थशास्त्रे तन्त्रे युक्तौ पञ्चदशोऽधिकरणे प्रथमोऽध्यायः तन्त्रे युक्तयः आदितः पञ्चाशच्छततमोऽध्यायः । एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य तन्त्रयुक्तिः पञ्चदशमधिकरणं समाप्तम् ।

उदयवीर शास्त्री में—

इति तन्त्रयुक्तौपञ्चदशोऽविकरणे तन्त्रयुक्तयः प्रथमोऽध्यायः ।।१।। आदितः पञ्चाशदधिकशततमोऽध्यायऽ ।।१५०।। एतावता कौटिलीयस्यार्थशास्त्रस्य तन्त्रयुक्तिःपञ्चदशमधिकरणं समाप्तम् ॥१५॥

रघुनाथ सिंह पुत्र बटुकनाथ सिंह, जन्म स्थान ग्रा० खिवली पञ्चक्रोशी स्थित रामेश्वर समीप वरुणा तट तथा वर्तमान निवासी मु० घीहट्टा (औरंगाबाद) वाराणसी ने सन् १९८६ में 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' के तृतीय खण्ड को लिखकर समाप्त किया ।

सूत्र-श्लोकानुक्रमणिका

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अ		अग्न्युदकयोः	८–४–२
		अग्नये स्वाहा	१४–१–४०
कृत्यकिन्यबहु	१०–४–७	अग्निर्ग्राममर्धग्रामं	८–४–४
करदाः परत्र	३–१०–१५	अग्निजीविन	२–३६–२०
कान्तिर्व्याघातः	२–१०–५७	अग्निजीविनो	१२–४–१७
कालेऽतीर्थे	२–२८–१५	अग्निपतङ्गवद्	७–१५–१४
कारादयो	२–१०–१३	अग्निप्रतीकारं च	२–३६–१५
कामायाः कुमार्याः	२–२७–१३	अग्निरवहितोहि	२–३–९
कामायाः शत्यो दण्डः	४–१२–२१	अग्निरसशस्त्रैर्ग	१२–५–३३
कार्याणां च करणैः	७–५–२१	अग्निष्टोमादिषु च	३–१४–२९
कृतानि कर्तृन्यो	२–१–९	अग्राह्याः कर्म कालेषु	३–११–२२
कृतारम्भमारब्ध	१–१५–५२	अर्घपतने वा	३–१२–२८
कृतावृद्धि	३–११–७	अचोरं चोर इति	४–८–६
कृत्यान्कृत्यपक्षीयैः	१–१२–२	अच्छः स्निग्धः सप्रभो	२–१२–१७
कृष्यायां भूमौ	२–२–१	अजस्रपण्यानां	२–१६–७
प्तामाच्छिद्य	२–१–१०	अजमर्कटरोमाणि	१४–३–७७
पन्तोवावहीनं	१–१–१२	अजानन्तोऽस्य	४–६–५
पटलमध्यक्षः	२–७–१	अजावीनां	२–२९–४१
भूमिहस्तदोषाणां	३–२०–१२	अटव्यन्तपालपुर	२–१६–२१
यायां स्त्रियाः	४–१२–३३	अटव्यन्तपाल	१–१६–७
लामनायुक्तोः	२:१३:३०	अट्टालक प्रतोलीमध्ये	२–३–१२
षु नान्दीपिनद्धं	२–१९–१६	अश्वमवृक्षा	१०–४–४
ङ्कं चिह्नं, वर्णं	२–१९–११	अतऊर्ध्वं	३–१–३०
कुश वेणु यन्त्रादि	२–३१–१३	अतऊर्ध्वंयशु	३–३–२
ङ्गारतुषभस्मानि	१–१७–१०	अत ऊर्ध्वंचतुर्वर्षः	२–३०–१३
ङ्गारास्तुवान्	२–१५–६०	अत ऊर्ध्वं सक्तु	२–२९–९
ङ्गरक्षकस्यैकः	१०–६–४५	अतः परं श्रावणादीनां	२–२०–४२
ङ्गुष्ठोङ्ककं	२–११–५७	अतः परेषां	२–११–११६
भ्यसब्दाभिधान	२–१०–११	अतः पादार्धं	१–९–२
वेर्नौला	१–२१–६	अतः प्रतिलोमाः	७–८–१६
भ्यारगत	१–१९–३१	अतः सैन्यानां	१०–५–२०

प्रतीकानि	अधि॰ अ॰ अङ्काः	प्रतीकानि	अधि॰ अ॰ अङ्काः
अतिकर्षणे	३–१०–६	अथावस्कन्दं	१३–३–५५
अतिव्ययकर्तारं	२–३६–९	अथैकममात्यं	१३–३–११
अतिगच्छति च	१४–३–२५	अथैकममात्यं	९–६–३५
अति दुर्गं प्रतिष्टब्धं वा	९–३–२४	अथोभयवेतनाः	७–१४–८
अतिरिक्तं वायुः	३:११:४२	अथोभयवेतनाः	७–१४–६
अतिवृष्टि	९–७–८४	अदण्डयदण्डने राज्ञो	४–१३–४२
अतिशयवर्णना	१५–१–४३	अदण्डनैश्च दण्डयानाम्	७–५–२२
अति संधानकामयोः	७–४–४	अदक्षिणामुखं	१०–३–४८
अतुष्टान् सामदान	१–१३–२५	अदर्शनं कार्यं निर्वेदः	८–३–५४
अतुष्टांस्तुष्टिहेतोः	१–१३–१७	अदानमादानं	८–३–२९
अतोऽन्यथा	३–१–१२	अदायादा	३–६–८
अतोधनुः शतान्तराः	१०–१–१५	अदायादकं राजा	३–५–२८
अतोऽन्यथा वा	१–२०–३	अदिते नमस्ते	१४–१–३९
अतोऽन्यतयेन	४–७–११	अधार्मिकाद्धार्मिकस्य	९–४–१०
अतोऽन्योलवणक्षार	२–१२–३४	अध्यक्षश्चैषां	२–२८–६
अतोऽर्धकिशोराणां	२–३०–२४	अध्ययनपारगाः	१४–३–३४
अतोगोदानं	१–५–१०	अनगृहीते	११–१–४०
अतोनवपुराणानां	२–२२–१५	अननुगच्छन्तः	३–१०–१७
अथधान्यमाष	२–१९–२९	अनपसारः कण्टक	२–१४–१३
अत्याहारितमर्थं	८–५–२६	अनभियोगश्चार्थे	२–१६–१३
अत्युष्णमल्पयव	९–१–३७	अनभियुक्तस्तु	७–५–८
अत्युष्णोपक्षीणे	९–१–४५	अननुरुपंभवतः	२–१०–३१
अत्यक्तं तुल्यशीलाभिः	१–१८–१५	अनभिसरतां	४–३–९
अथर्वमित्रश्चजुहुयात्	१०–३–३५	अनभिसतुंर्द्वादश	४–३–३१
अथवाऽऽयंभाघाय	३–१३–५	अनवगाहमानाः	०–१–४०
अथर्वेदेतिहास	१–३–२	अनवस्था ह्येषा	१–१५–३३
अथर्ववेदविदो	४–३–३७	अनर्थं संयोगो मुहूर्त	८–३–३१
अथ पश्चादमित्यक्त	१३–३–१४	अनर्थोऽधर्मः शोक	९–७–६२
अथवाशमयेदेनम्	७–६–३४	अनर्थ्याश्च प्रिया	५–४–१४
अथावस्कन्दं	११–१–२७	अनर्थ्यसंयोगात्	८–३–३०
अर्थानुबन्धकत्वाद्	९–४–२०	अनर्थ्यानां च करणैः	७–५–२३
अथामात्यः शत्रोः	९–६–३७	अनपकृत्य	१२–१–२३
अथामित्रशासनम्	९–६–४१	अनाथस्यशरीरस्थं	४–७–२३
अथावस्कन्दंद	१३–३–५७	अनात्मवान हि	५–४–३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अनादेयमकृषतो	३–१०–१४	अनेनान्येनच	९–७–७६
अनासन्नैः सह	१–१५–५४	अनेनार्घेण	१२–४–१०
अनाहिताग्निः शत	३–१४–३७	अन्तपालः सपाद	२–२१–२४
अनिष्पन्ने शारीरं	२–८–३१	अन्यथावादिनः	२–२१–१९
अनिसृष्टोपभोक्ता	३–१२–१६	अन्यथापूर्वः	३–१०–१०
अनिष्टैरद्भुतोत्पातैः	१४–२–४५	अन्तस्थायिनिलब्धे	९–६–१७
अनीकस्थानयुद्ध	१–१६–८	अन्यशोणितोपधाने	४–१२–१७
अनीकस्थप्रमाणैः	२–२–१२	अन्येभ्यस्त द्विधेभ्यो	९–३–१६
अनीश्वराः	३–६–१६	अन्यथा यथोक्तं	४–१३–२३
अनीश्वराः	३–५–१	अन्नस्य ऊष्म।	१–२१–७
अनीश्वराः	३–५–१	अन्तर्गृहगतः	१–२०–१४
अनुग्रह परिहारौ	२–१–१५	अन्यथा हिंसायाँ	४–१३–२९
अनुकरणमूल्यम्	१५–१–६९	अन्यत्र श्रेषोप	४–१–६
अनुत्थाने ध्रुवो	१–१९–३६	अन्यनौप्रतिवद्धां	१–२१–१९
अनुरक्तप्रकृतिः	७–८–१४	अन्येष्वन्तपाल	२–१–५
अनुज्ञातक्रयादुपरि	४–२–२८	अन्तरेषु द्विहन्त	२–३–१३
अनुज्ञातसंधि	७–१६–१	अन्येषां वा बध्नतां	२–१–२१
अनुप्रहरतां	३–११–३८	अन्तर्वंशिक	१–२४–३
अनुदके चक्रि	१०–२–१६	अन्यैरमात्यगुणैः	१–८–१८
अनुनयस्त्रिविधो	२–१०–३७	अन्तर्गृहचरांस्तेषां	१–१२–२१
अनुपलब्धस्य	१–१५–२०	अन्यथा नियम्येत	२–१–३१
अनुप्रविष्टावैकत्र	४–५–९	अन्यथा द्वादशपणो	२–१४–१६
अनुयुञ्जीत संयोगं	४–७–२४	अन्यत्र नेनिजतो	४–१–१५
अनुशासद्धि धर्मेण	३–१–४३	अन्यत्र दीव्यतो	३–२०–२
अनुग्रहपरिहारौ	९–५–११	अन्यतो विगृहीतं	७–९–४२
अनुदके कूपसेतु	२–३४–८	अन्यायवृत्तिर्निविष्टं	७–११–३१
अनुलभूमिप्राप्त्योः	८–५–७	अन्तपाल वैदेहक	८–४–३४
अनेकमुख्यं हि	२–४–३०	अन्यद्वा शरीरं	७–१७–४७
अनेकेषुचाभियोगेष्व	२–८–२६	अन्तर्धान मन्त्रेण	४–५–४
अनेन चानेन	१५–१–६७	अन्यथानिचितभेषां	४–२–२६
अनेन वाऽनेन	१५–१–६५	अन्यतरादाने	३–१२–५०
अनेन मण्डल पृथक्त्वं	६–२–२६	अन्तःपुर पुरद्वारं	१२–२–३३
अनेन वाऽन्येन वा	९–७–७५	अन्यथा द्वादश	२–२६–१२
अनेनविज्ञापित	२–१०–३९	अन्तर्वेद्यामृत्विजे	३–२–५
अनेनैवोपायेन	९–७–७४	अन्यथास्तेयदण्डं	४–६–१५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अन्तपालो वा	११–५–२५
अन्धो राजा शक्यते	८–२–११
अन्यतरसिद्धिर्हि	७–१५–१५
अन्तर्वशिकसैन्यं	१०–१–३
अन्धश्चलितशास्त्रो	८–२–९
अन्तपालः पण्य	८–४–३६
अन्यथा हिराज्य	९–७–३९
अन्तरे वा मृतस्य	३–१२–२०
अपकार समर्थान्	१३–५–१७
अपकारयित्वा	१३–४–५०
अपकरणे द्वादश	३–१०–४०
अपकारान्तेषु	१२–१–२२
अपकारिषुचहेडं	५–६–६
अपकारो विग्रहः	७–१–७
अपकुर्यात्समर्थंवा	७–१८–४०
अपत्य समाधातु	७–१७–१५
अपत्यदारं मातापितरौ	२–१–२८
अपव्ययमाने	३–१३–३४
अपराधं सहेतावल्पं	२–७–४१
अपसर्पर्णेवोप	२–९–१२
अपराजिता प्रतिहत	२–४–१७
अपरुद्धं तु मुख्य	१–१८–१३
अपरुद्धा दानं	९–३–१८
अपसर्पाधिष्ठितं	२–७–९
अपकृष्टस्कन्धावाराद्	१३–४–१५
अपसृतातिक्षिप्त	८–५–११
अपरिमितदेशकाल	९–२–१७
अपनीय ततोऽन्यस्यां	७–१८–३९
अप्रतिपद्यमानं	९–६–६७
अप्रतिविहिताः	३–४–३६
अप्रतिकार्यासत्र	७–३–१८
अप्रणीतस्तुः	१–४–१३
अप्रशस्तान्यङ्ग	२–३०–२
अप्रतिगृह्णतां	१२–१–१९
अप्रतीकारेहीन	३–९–३७

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अप्रदावा निरस्येत	३–१६–३६
अप्रतिविद्धस्यात्यायः	२–११–४१
अप्रतिपन्नस्य	९–३–३०
अप्रवृत्तवधानां	२–२६–२
अप्सु निष्ठ्यूतास्तैल	२–१२–३
अपाय नित्यो	१–१७–४७
अप्राप्त व्यवहाराणां	३–५–२०
अपितृद्रव्याः	३–५–७
अपितृका वह्वोऽपि	३–५–१३
अपि शक्या गतिः	२–९–३४
अपीह श्लोकौ भवतः	१०–३–२१
अपुरुषा गौर्वन्ध्येव	७–११–२५
अपुत्रा पति शयनं	३–२–३३
अपूर्वस्य संघो	७–६–११
अपूर्वदेशाधिगमे	२–३६–४७
अभय वनमृगाः	३–१०–३१
अभिनीतं प्रभायुक्तं	२–१३–६१
अभियोक्तादण्डं	३–१–३५
अभिप्लुतव्यपकर्षण	१५–१–४१
अभ्यन्तरोनाशणे	९–२–३१
अभ्युच्चीयमानो	७–१–१४
अभ्रपटलमष्टकेन	२–१४–३१
अमात्यमूलाः	८–१–२३
अमानुषेष्वपि	१–८–११
अमात्यसंपदोपेतो	१–१६–२
अमात्य संपादोपेताः	२–९–१
अमात्यसंपद्दुक्ता	१५–१–६२
अमात्यजनपद	८–१–११
अमात्यसंपदुक्ता	६–१–७
अमित्राद्वाशत्री	९–३–२६
अमित्रमात्मनीवा	७–१८–२३
अमित्रस्यवानलकाले	९–२–११
अमित्रं विजगीषुं	१–१८–३८
अमित्रसिद्धौ हि	७–५–२
अमित्रं वाऽस्य	७–१८–१८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
व्यसनान्	७–१८–४२	अयं सर्वं संदोहकर्म	९–६–५५
त्राटवीसंचारं	२–३४–११	अयस्कान्तो वा	१४–२–४०
णामत्ययो	२–२१–३	अरिसाधारणं यद्वा	७–१८–३६
स्याभर्तुरकामस्य	३–३–१५	अरिमित्रेण मित्रं	७–१३–४०
प्राणिवधे	४–१३–२४	अरितोऽभ्यागतोदोषः	७–६–३८
धर्म०	३–३–१९	अरिवर्जाः प्रकृतयः	६–१–१५
युक्तो न	३–१–२५	अरिविजगीषुमध्यानां	६–२–२२
योक्तुः	३–१–३३	अरिसंपद्युक्तः	६–२–१६
योक्ताचेत्	३–१–२७	अरिविजगीष्वोस्तु	७–८–११
ज्ञानेनचास्य	३–१२–४९	अरिविजगीष्वोः	६–२–२१
त्यक्तशासनैः	१३–३–३९	अराजबीजीलुब्धः	६–१–१३
तं स्वयं	८–५–२२	अराजपण्याः	२–२५–३९
योगे गूढबलैः	४–५–१६	अरत्निरिन्द्रकीलः	२–३–२६
चारशीलं वा	५–१–३३	अरन्ध्रव्यसनो वा	७–७–१३
तोपरुद्धा	८–४–४०	अरण्यं जातं श्रोत्रियस्वं	५–२–६
च्छन्नच्छेः	२–१३–३१	अरत्नौ तण्डुलद्रोण	२–३१–१३
सं च कर्म	१–१८–४	अर्थक्रमः सम्बन्धः	२–१०–६
मन्त्रयित्वा	१४–३–४५	अर्थ एव प्रधान	१–७–६
सृतं परिसृतं	१०–५–५३	अर्थो धर्मः काम	९–७–६०
विश्वासनार्थं	१३–३–१९	अरेर्नेतुश्च	७–९–४८
तं वा परकुड्यात्	३–८–५	अरेर्नेतुश्चमध्यस्थो	७–१३–२५
मिष्ठानाम्	१०–२–११	अर्थोऽर्थानुबन्धः	९–७–१४
व्याधितयोः	८–५–३	अर्थोऽनर्थ इति	९–७–६४
न्तरकोपो	९–३–११	अर्थशास्त्रम्	
न्तर कृते पुरुषम्	४–६–१८	अर्थयुक्त्याचलं	७–१८–३५
न्तरावग्रहं	९–३–१०	अर्थयुक्तत्याचलं	७–१८–३५
न्तरो वाक्षेण		अर्थमूलौ हि	१–६–७
न्तरानभ्यन्तरेषु	९–५–२४	अर्थं मूलौ हि	१५–१–१४
न्तर कोपशङ्कायां	९–३–९	अर्थमूलौ धर्मकामौ	८–२–३१
न्तरेषु प्रतिजपत्सु	९–५–९	अर्थमानावक्षेपे	५–५–१२
न्तरं चतसृणां	१४–३–५७	अर्थपूजा वाक्छल्यम्	८–३–२८
यीयानम्	७–१–९	अर्थप्रतिबद्धश्च	८–३–३२
यमानः	७–१७–३२	अर्थपदाक्षराणाम	२–१०–९
र्थं वदराम्ले	२–१४–३३	अर्थदूषणदण्ड	८–३–३०
: सिञ्चति	५–५–११	अर्थगुणहीनः	१–१६–४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अर्घ्य प्रतीकारः	४–१–२
अर्घद्रोणंखरपृषत	२–१५–५४
अर्धन्यूनश्चान्द्र	२–२०–४९
अर्धमाषकः माषकः	२–१९–८
अर्घं वालानाम्	२–१५–४६
अर्धवास्तुकमुत्तमागारं	२–३–२२
अर्धाढकमजैऽक	२–१५–५६
अर्पयेत्काचकर्मणः	२–१३–२
अर्मलिवं प्रमीलं	१४–३–४४
अलभ्यमानायां	११–१–५०
अलिते वलिते	१४–३–२६
अलोजुनेतियः	१४–२–१०
अल्पकोशः कुप्य	५–३–३१
अल्पकोशो हि राजा	२–१–१६
अल्पशेषलेख्य	२–७–२८
अल्पं पश्चात्कोषं	९–३–२
अल्पः पश्चात्कोषो	९–३–१
अल्पायतिश्चेन्महाव्ययो	२–९–१
अल्पां बाधां सहेरन्	३–१६–३४
अल्पागमातिव्ययता	७–१२–३०
अल्पा प्रत्यासन्ना	७–१०–१७
अल्पेऽपि चास्य	९–१–४
अवरुद्धं स्वभूमिभ्यः	८–५–१५
अवहीनान् वा	११–१–१२
अवश्यसैन्यं श्रेयः	७–९–२४
अवश्यं हि शक्यं	७–९–२५
अवर्गे वर्ग करणं	२–१०–६२
अवक्षेपः प्रतिमान	२–१४–५३
अवगूर्णे निष्क्रयः	३–१९–९
अवस्थाय तज्जातं	४–१२–१६
अवक्षेपेण हि	७–५–१९
अवलेप्यानां यावत्	२–१४–५१
अवस्करं भ्रममुदपानं	३–८–६
अवाप्तार्थस्तमपि	११–१–३३
अवाप्तार्थः कालं	१–१५–४५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अविक्षेपो राजपरिग्रह	५–३–२६
अविषह्यमुपांशुदण्डेन	१३–३–२०
अविनीतोहि	८–३–२
अविद्याविनयः	८–३–१
अविलोपेव्यसने	९–२–२०
अविशिष्टलिङ्ग	२–१०–१७
अविवीतानां	४–१३–१०
अविश्वस्तो वा	१३–३–२१
अविश्वास्यो हि	१३–५–५
अविश्वासो	१३–४–२१
अविशन्ती	२–२७–१
अविसंवादाद्धि	५–४–१
अव्यायाश्चादयो	२–१०–११
अव्यक्तरुपादुहिलितिका	२–११–७८
अशक्ये दण्डोपनत	७–२–१
अशक्ये सर्वम्	९–७–३१
अशक्तो वा सैन्येषु	१०–२–१
अशक्तः कुत्सिते	३–१४–
अशक्तः कोपं मदं	३–१८–१
अशीतिकाः पुरुषाः	१–२०–२१
अशक्तिमतो वा	९–६–३१
अशस्त्राश्चरेयुः	५–३–३८
अशुचो हि कारवः	३–११–३६
अशुद्धस्तच्च	४–६–१४
अशुद्धं छेदयेत्	२–५–११
अशृण्वतां चतुष्टः	३–११–४१
अंशो दण्ड समः पूर्वं	७–४–२२
अश्वमेधावभृथ	४–१३–१६
अश्वपण्योपयाता	१३–२–२०
अश्वसधर्माणो हि	२–९–१
अश्वविभवेनायताम्	२–३०–४
अश्वव्यूहो	१०–५–३५
अश्वस्यत्रयः	१०–५–५
अश्वाध्यक्षः	२–३०–१
अश्वानां चिकित्सकाः	२–३०–४३

तीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
यामचतुरश्र	२–३–५	अहिभयादभ्यन्तर	९–५–३१
ध्यक्षेण	२–३३–१	अहीन कालं राजार्थं	५–४–११
द्वानानाम्	५–२–४०	अह्नश्च विक्रयं	२–२५–४०
ग्राम्या	२–१–४	अह्नश्चाष्टम	२–१६–१५
वर्षात्प्रभृति	२–२७–७		
तिसंघात्या	२–११–१००	आ	
शीतिर्गौर	२–१९–५	आकरप्रभवः कोशः	२–१२–३७
नीको दुर्जयः	१०–६–३२	आकरर्मान्तद्रव्य	२–१–१९
दशवर्गाणां	१०–१–१३	आकराध्यक्षः	२–१२–२१
मे सेनापति	१–१९–१६	आकरिकमपहरन्त	२–१२–२०
ङ्गुला	२–२०–९	आकरोद्गतंसीसा	२–१३–९
ताङ्गुलो	२–२–१९	आकृताहोसुपहरं	२–७–२६
मे ऋत्विगाचार्य	१–१९–२३	आकृतिग्रहणमाकारः	१–१५–९
यवमध्या	२–२०–६	आक्रन्देनाभियुञ्जानः	७–१३–३९
परमाणयो	२–२०–२	आख्यायप्रोषित	३–४–३२
र प्रयोग्याः	२–३०–२८	आगतांश्चैषां	१२–४–२
ां प्रग्रहः	८–३–६५	आगतानां समुद्र	२–७–१७
वातिग्रहे	३–१४–३८	आगन्तु लवणं	२–१२–२९
प्ते तु कर्मणि	३–१४–३६	आचार्या विद्यावन्तश्च	५–३–१८
लुदयेभाण्ड	२–१६–१९	आटविकामिजैर्वा	५–६–१२
वेनत्ववश्यं	७–६–३३	आटविकानर्थ	१२–३–१७
वृस्य कार्याणि	७–१३–४४	आटवीभिर्वाराज्यं	१२–१–२१
स्यातदेशकालं	३–११–१७	आढ़कमेणकुरङ्गाणां	२–१५–५५
प्रतिपत्तौ	३–११–२६	आढकस्यार्घकर्ण	४–२९
रं बालप्रति	३–११–१६	आढ्यविधवा	११–१–४२
मावरोधे	४–१३–१२	आतिपातिकानां	३–१५–७
हि दुर्गं	७–१३–९	आतोघानिछैषा	१–२१–१७
मिविक्रयस्तु	३–१६–१०	आत्मविक्रयिणः	३–१३–१३
मिप्रतिक्रोशे	३–९–७	आत्माधिगतं	३–१३–१४
मतः प्रतिपातं	२–२६–८	आत्ययिकेकार्ये	१–१४–५८
न्नेवंकृत इदमाव	२–१०–५२	आत्मवांस्त्वल्प	६–१–१८
संनाह	१०–३–२१	आत्मचक्षुषिनिवेश्य	१–२१–१४
हिरण्य सुवर्णाः	३–१६–३९	आत्मसम्पन्नं	१–१७–४३
हिभयादभ्यन्तरः	८–२–३	आत्मसंभावितः	१–१४–५
हिस्यमेतद्	१–१७–९	आत्मवति लब्धावकाशः	५–४–४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
आत्मरक्षा हि सततं	५-४-१६
आत्मबलानुकूल	१-१९-२५
आत्मनो वा भूमिं	२-१६-२३
आत्रिपक्षादिति	३-१५-१७
आदातृवा दात्रपि	७-९-४१
आदितलस्य पञ्चभागाः	२-३-१९
आदिष्टः प्रदिष्टायां	५-४-८
आदेयः प्रत्यादेयः	९-४-४
आदौ वृध्येन	७-७-३१
आधान विक्रमा	३-१२-६
आधार परिवाह	३-९-२७
आधि वा स कामं	३-१-३६
आन्तरवत्यमुशीरवर्णम्	२-११-६७
आन्वीक्षिकी	१-२-१
आन्वीक्षिकीत्रयी	१-४-३
आपत्प्रतीकारेण	५-६-१७
आपदि सारमात्मानं	२-१६-२२
आपदर्थं हि	३-२-३४
आपद्धि सौहृदस्थैः	७-९-८
आप्तपुरुषाधिष्ठितो	५-६-७
आप्तशास्त्रप्राह	१-२१-२४
आप्तपुरुषाधिष्ठितम्	१-३१-१८
आप्तभावोपगतो	९-६-४०
आप्तभावोपगतः	१३-३-१३
आप्तभावोपगतः	१३-४-४७
आप्तदोषं कर्म कारयेत्	४-८-१७
आपन्न सत्वायाः	१-१७-२५
अभिजातोपरुद्धा	८-४-३७
आभ्यन्तरो मुख्यस्तम्भो	८-४-४८
आभ्यन्तरं वाह्यं	५-५-२
आभ्यामसंपथो	७-१२-२८
आमिश्रायामदूष्यतः	९-६-९
आयव्यय नीवीनाम	१-७-१८
आयुक्तो वा सरूप्य	२-१३-३२
आयुधागाराध्यक्षं	२-१८-१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
आयुधीयस्योत्तमः	४-११-२३
आरण्योऽग्निरेव	७-३-११
आरब्धारस्तु	४-४-२३
आरम्भसाम्य यः	७-१३-५
आर्यप्राणो	३-१३-११
आर्याविष्ठित	९-२-१८
आलम्बनाभावे	९-६-१०
आलानग्रैवेक	२-३२-१२
आवरणिनः शस्त्रपाणयो	४-३-३०
आवाहविवाहाभ्यां	९-६-४०
आवेशनिभिः	२-१४-३
आशानिर्वेदि	८-५-८
आशुतरा मे	७-१-२२
आश्वयुजः कार्तिकश्च	२-२०-५६
आषाढेमासि नष्ट	२-२०-४१
आश्रमिणः पाषण्डावा	३-१६-३३
आश्रयकारी	१०-२-११
आसनैः सहः	१-१५-५३
आसन्ने चानुपाते	७-१-५६
आसन्नाश्चास्य	५-५-१
आसन्नो वाऽस्य	७-२-१२
आसमाप्तेश्चैनं	७-८-३०
आसारव्यञ्जनो	१३-४-३१
आसारव्यञ्जनो वा	१३-४-४२
आस्रावयेच्चोपचितान्	२-९-३४
आहर्तुः पूर्वः	२-५-१२
आहूय वा बाह्यान्	९-५-१६

इ

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
इक्षवो हि बह्वाबाधा	२-२४-३१
इक्षुरस गुडमधु	२-१५-१
इङ्गितमन्यथावृत्तिः	१-१५-८
इङ्गिताकारौ	५-५-९
इति दानकर्म	९-६-२४
इति देशमानम्	२-२०-२०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
इच्छायारम्भिनिष्पत्ति	२–१८–२०
इतरेषुमैत्री	९–६–४५
इति स्वविषये	२–१६–१७
इति कर्षकेषुप्रणयः	५–२–१६
इति कालावस्थापनम्	९–७–६६
इति गुणावस्थानम्	७–१–१९
इति कार्यविस्थापनम्	९–७–२२
इतिगोमण्डलं	२–२९–४७
इति शुद्धाः	१०–५–३७
इति योगसंपत्	१४–१–२८
इति स्वाहा	१४–३–४७
इति विद्यायोगः	२–३०–२५
इति संधि विक्रमौ	७–६–१८
इति तुलाप्रतिमानं	२–१९–२८
इति राजपरिग्रहेषु	४–९–८
इति प्रकृतयः	६–२–२३
इति प्रकृतिव्यसन	८–१–६०
इति देशावस्थापनम्	९–७–५३
इति सिद्धिः	९–३–३४
इति प्रसादककोपकी	९–४–१५
इति भेदकर्म	९–६–५२
इति व्यवहारिषु प्रणयः	५–२–२६
इति योनिपोषकेषु	५–२–२९
इति कोपजस्त्रिवर्गः	८–२–३७
इति हयङ्गवलविभागः	१०–५–३९
इति दण्डव्यूहाः	१०–६–२३
इति पञ्चदशोपायाः	९–७–७८
इति भोगव्यूहाः	१०–६–२९
इति मण्डलव्यूहाः	१०–६–३३
इति राजापसर्पाः	१३–३–४९
इति षड्गुणाः	७–१–१२
इतो लाभ इतरतो	९–७–३७
इतो लाभ इतरतो	९–७–२९
इतोऽर्थं इतरतः	९–७–४४
इतोऽनर्थं इतरतः	९–७–३२

प्रतोकानि	अधि० अ० अङ्काः
इतोऽनर्थं	९–७–४१
इत्यसंहत व्यूहाः	१०–६–३८
इत्यष्टादशकं कर्म	४–५–२३
इत्यभियुञ्जानेषूक्तम्	९–६–६२
इत्यायशरीरम्	२–६–९
इत्यभिहित संधि	७–११–४०
इत्यरिभूतसंधिः	७–११–४२
इत्यष्टावन्तर्धान	१४–३–१८
इत्यादेयप्रत्यादेयौ	९–४–९
इत्यरिविशेषाः	६–२–१७
इत्यनुलोमाः	३–७–२५
इत्याप्यप्रयोगः	५–१–२०
इत्युदकचरणानि	१२–१–५
इत्युपनिषत्प्रतिषेधः	५–१–३७
इत्युपायचतुर्वर्गः	९–६–५६
इत्येतेऽन्ये	३–७–३४
इत्येवमग्नि	१–२०–९
इत्येवं क्षुद्रकान्	१–१३–१३
इत्यौशनसोविभागः	३–६–५
इदंक्रियतां इति	२–१०–३३
इन्द्रनीलौनीलावलीयः	२–११–३१
इन्द्रयमस्थानम्	१–१३–१०
इन्द्रस्य हि	१२–१–२
इन्द्रस्य हि मन्त्रि	१–१५–५५
इष्वस्त्र प्रहरणावरण	२–३३–६
इहापकारीत्याज्यः	७–६–३२
ई	
ईर्ष्यया वाह्य विहारेषु	'३–३–११
ईप्सितः पणेत	५–४–७
उ	
उक्तस्याविशेषेण	२–१०–६७
उक्तासर्वेषां भूमिः	१०–४–११
उक्तेन साधनमतिदेशः	५१–१–२३
उग्रान्नैषद्यां	३–७–३१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
उचितानां चरित्राणां	७-५-२०	उदासीनवधे	४-१३-१७
उचितं वा मित्राद्	७-१५-२६	उदासीनं च	७-१८-३७
उचितश्चैनान्	१३-५-१७	उद्गत चूलिकमच्छं	२-१३-१४
उच्चैर्धान्यस्य	२-१५-६४	उद्दिष्टानां	३-९-१२
उच्छिन्नं वा भूम्य	७-१८-१५	उद्वृत्तमन्त्रो	१-१६-१
उच्छिद्येत मन्त्रभेदी	१-१५-६	उन्मथ्यावधान	१०-५-५५
उच्छेदनीयं	७-१८-१४	उपनिधिभोक्ता	३-१२-३
उच्छेदनीयोहि	७-१०-२७	उपस्थितस्याधि	३-१२-११
उज्झितप्रनष्ट	४-६-१३	उपरुद्ध परिक्षिप्तयोः	८-१-१३
उटज चिमियचाप	३-१७-५	उपनिविष्टसमाप्तयोः	८-५-११
उत्थितमनुग्रह	१३-४-३	उपजापः	१-१-१५
उत्तम समोरथो	२-३०-२१	उपरोधहेतवो	१२-५-१२
उत्सव समाज	२-२४-३६	उपलब्धविद्याप्रभावाणां	४-१-७
उत्साहहीनः	७-१४-२७	उगनिवेशदिग्	२-२९-४०
उत्साह प्रभावयो	९-१-२	उपकारिजमुपकार	७-१६-११
उत्साहवतश्च	९-१-९	उपहन्तृषु	६-१०-४२
उत्तरपश्चिमं भागं	२-४-१४	उपप्रदानमर्थोपकारः	२-१०-५४
उत्तममध्यमावरेषु	२-७-४	उपस्थितमकारयतः	२-१४-६
उत्तमाश्वस्य	२-३०-१८	उपजापोऽपसर्पश्च	१३-४-६१
उत्तमावरमध्यत्वम्	३-१०-१८	उपलब्धस्य	१-१६-२६
उत्तराध्यक्षाः	२-९-२९	उपधाभिः शुद्ध	१-११-१
उत्तरः पूर्वो वा	२-४-२१	उपलभमानो	१-१७-४६
उदक प्राप्तंपण्य	२-२८-९	उपस्थानगतः	१-१९-२९
उदक द्रोणं तण्डुला	२-२५-१७	उपस्थितं च राज्येन	१-१८-१६
उदकधारणं सेतु	४-११-१७	उपनिघर् ऋणेन	३-१२-१
उदकान्ते सैन्यमासीत	१-२१-२०	उपयोगनिमित्तं	३-१२-४
'उदकाहिभस्त्राम्	१४-३-६७	उपरिनिविष्टं	३-९-३०
उदकानि च	१२-५-१४	उपात्तच्छन्वोशस्त्रो	७-१७-६१
उदपात्राण्यपि	३-५-२३	उपायाः सामोप	२-१०-४७
उदश्विच्छ्व	२-२९-२७	उपेक्षितमशक्त्या	८-५-२७
उदारकस्तुल्यः	२-१५-२७	उपेक्षणमासनं	७-१-८
उदासदासवर्ज्जम्	३-१३-१	उपेक्षेत वा	७-१८-२२
उदासीनस्य	९-७-१६	उपैमिशरणं	१४-३-५१
उदासीनं वा	७-१८-२४	उपोदका प्रतिबला	१४-२-२८
उदासीनश्चेन्मध्यमं	७-१-२७	उभयतो हेतुमानर्थः	१५-१-३२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
यं कुष्ठ गन्धि च	२–११–६८	एकपदावरस्त्रिपद	२–१२–२१
य दूष्यप्रतिवेधस्तु	१–१–३८	एकरूपं चात्र हिरण्यं	५–२–६१
यं च प्रजानां	२–१५–५	एकः शयीत	१–१६–२२
क वागुली	१४–३–१७	एकस्य स्कन्धावारं	९–६–४४
गृध्रवसास्थाम्	१४–२–४२	एकशीर्षकः शुद्धोहारः	२–१९–१
मानभलाबुद्धि	४–३–८	एकाम्लकं वराहाक्षि	१४–३–३
		एकाङ्गबाहुल्यं	१०–५–२७
ऊ		एकायनमार्ग	१०–२–१८
तुलाः	४–१–१३	एकायने वा	१२–४–२५
वल्ककार्पास	२–२३–२	एकार्थेनाथ संबद्धम्	७–९–४३
दायादं	३–२–३५	एकेनान्यत्र यातव्यं	७–३–२५
राजिर्दण्डः	१०–६–२०	एकेषां पणनिमित्तो	८–३–६३
ष्ठमंशं	४–१–५३	एको ह्यत्यासेवितो	१–७–५
नमः शुक्रबृहस्पति	१–१–१	एतन्मन्त्रज्ञानम्	१–१–५–२३
ष्मोपस्नेहकिमि	१–१८–३	एत एव मणिमध्यास्त	२–११–१६
कर्बुरः पक्व	२–१२–१	एतदेवविपरीतंम्	५–५–८
ऋ		एतया समन्ततः	९–७–४
चर्म कञ्चुकिनो	१३–२–२४	एतया समन्ततः	९–७–४३
त्विगाचार्यं	२–१–७	एतया समन्ततः	९–७–४५
त्विगाचार्य	५–३–३	एतया सर्वबलनिवेशा	१०–४–१२
दर्थं प्रणयाद्	७–९–३९	एतयामुण्डावृषल्यो	१–१२–५
तुप्रतिरोधिभिः	४–१२–९	एतयोरन्यतरं	७–२–२०
तौ चैनांरक्षेत्	५–६–४२	एतयोरन्यतरस्य	१४–२–६
त्विक्षयोः	३–५–२२	एतस्मात्काकण्युत्तर	२–१३–५०
ए		एतस्य प्रयोगः	१४–३–५३
मन्त्री	१–११५–३६	एतस्य प्रयोगः	१४–३–२७
दत्तशुल्कं	३–४–३३	एतस्य प्रयोगः	१४–३–४०
त्यागघाती	७–६–४१	एतस्य प्रयोगः	१४–३–४८
प्रतिकान्तं	३–८–११	एत एवाटवीनाम्	१३–३–५०
पुत्राणां	३–६–१	एते चान्ये च	१–६११
स्या हि	११–१–१८	एतेन नटनर्तक	२–२७–२५
हन्यात्र	१०–६–५१	एतेन पत्यध्यक्षो	२–३३–७
सुवर्णपाक	१–१८–८	एतेन परस्याक्षगतकं	१–२१–१५
पीड़नो	८–४–७	एतेन वागेक्पथो	७–१२–१७
दहेदग्निः	५–४–१७	एतेन सर्वः	१२–३–११

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
एतेनामात्याटविका	१३–३–७	एवमर्थचरान्पूर्वं	४–९–२८
एतेन नस्य दम्य	२–२९–३४	एवं वश्येन्द्रियः	१–७–२
एतेन स्कन्धावार	११–१–३०	एवं शत्रो च मित्रे च	१–१२–२०
एतेन मिथः समवायो	२–१२–५२	एवं समस्य	७–३–२०
एतेन यात्रामध्ये	९–७–५७	एवं वैदेहिक व्यञ्जनाः	२–३५–११
एतेन यात्रादि	९–६–५४	एवमध्यन्तरे शून्य	२–३६–१४
एतेन विधिना	१०–५–५७	एवं समाहर्तृप्रदिष्टाः	२–३५–१३
एतेन वैयावृत्यविक्रमो	३–१२–३२	एवं वर्तितव्यम्	१५–१–११
एतेन मन्त्रिसेनापति	९–३–१८	एवं इत्याख्यानम्	२–१०–२८
एतेनाद्रेशोऽन्वाधिश्च	३–१२–१८	एवं कुर्यात्समुदयं	२–६–२८
एतेनान्तपालंदुर्गं	२–४–३१	एवं राजपण्ययोग	५–३–४४
एतेन भृतानाम्	५–३–३३	एवं दूष्येष्वधार्मिकेषु	५–२–६१
एतेन प्रदेशेन राजा	५–२–३३	एवं नान्यथेति	१५–१–६३
एतेनैव कल्पेन	१४–३–७२	एवं देशकालयोः	७–६–११
एतेन रूपदर्शकः	५–२–४८	एवं दुर्ग चतुर्भागं	२–३६–४
एतेशास्त्रेष्वनुगताः	४–११–२६	एवं दृष्वाध्रुवे	७–१–५३
एतेषांकारणानाम्	४–८–११	एवं यथासुखम्	१०–२–५
एतेनैव कल्पेन	१४–३–३२	एवमोजादश	१०–५–१९
एतैः कृत्वा	१४–४–१५	एवभोजादश	१०–५–१६
एतावानर्थः	३–५–२६	एवं रुपायं	२–२९–१५
एतानतिक्रम्य	३–४–४२	एवं शास्त्रमिदं	१५–१–७१
एतान् वा योगान्	१३–२–३६	एवं षड्भिर्गुणैरेतैः	७–१–३८
एतान्येव	१२–४–११	एवं समः सममति	७–७–१५
एतावता कर्मण्या	५–३–६	एवं सर्वमुपयोग	१०–५–४४
एतावता भरणेन	५–३–४	एवं सावाहेत्यपदेशः	१५–१–२१
एतासां चतसृणाम्	९–५–३०	एवं सिद्धिस्त्रिविधैव	६–२–३४
एतेषामेष	३–४–४१	एवं स्वार्थश्च कृतो	७–१८–१९
एतेषामेकांशुक	२–११–१०५	एवं स्वविषये	१–१३–२६
एतेषामेकः	१४–३–७१	एष क्षयः	७–१–२५
एनुहिक्षीरलिप्तानि	४–३–२३	एष चतुर्थो मार्गः	१३–४–६१
एवं चतुर्मण्डलक्षेपः	६–२–२	एष तृतीयो मार्गः	१३–४–५९
एवं चोरानचोरावान्	४–१–६५	एष त्रयी धर्मः	१–३–४
एवं चजनपदचतुर्भागं	२–३५–६	एष दूतधर्मः इति	१–१६–१७
एवं जानपदान्	१०–२–२९	एष द्वितीयो मार्गः	१३–४–५७
एवंमयं नवबुद्धिः	१–१७–३२	एष प्रथमो मार्गः	१३–४–५५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
एव प्रदेशो वह्व	२-१९-२७
एव समव्यूहः	१०-५-१४
एवमनुलोमा	९-७-६९
द्विमालिक	२-१८-१९
तेत्तरवर्तको	२-११-७०
द्वयोरपि	७-११-५
एवं कार्याणि धर्मस्थाः	३-२-४
एवं गृहीत दुर्गौ	१२-५-३४
एवं त्रिभागोनो	१०-५-२२
एवं द्रव्य द्विपवनं	२-१-३९
एवं दुर्गराष्ट्रमुख्यान्	५-६-३८
एवं नवं च जीर्णं	२-१४-५५
एवं पक्षेण मन्त्रेण	७-१४-२९
एवं परस्य यातव्यो	७-४-११
एवं विषेभ्यः पृथवी	७-१०-३८
एवं वज्रसमुद्गानं	९-२-३०
एवं भक्तवेतनविकल्पः	५-३-४६
एवमन्योन्यसंचापं	७-१८-४४
एवं मृतो वा	७-७-९
एवं मृतो हि शत्रुः	६-१-१४
एवं मृतो वा सम	७-६-२०
एवं मृतं हीनं	७-७-२९
एवमवेक्षितायव्यय	५-३-४५
एवं मन्त्रोपलब्धिः	१-१५-२६
एवमस्य पुत्र पौत्रान्	५-१-५६
एवमतिसंदध्यात्	४-८-१६
एवमयं त्वनुग्रहीतव्ये	७-८-२९
एवं मण्डलमात्यार्थं	७-१३-४२
एवमभ्युच्चितो	७-१८-१०
एवमस्य दण्डोपनताः	७-१६-२९
एवमाबाहेरयपदेशः	१५-१-२१
एवमवृणीयानां	२-२०-६५
एवं मित्रं हिरण्यं	७-११-४५
एवमरिस्य कलहस्थानेष	११-१-५३
एवमभ्युच्चवतो	७-१६-९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
एवमुपवृतयात्मानम्	७-१८-२८
एवंमुभयतोवद्ध	११-१-६
एवंमुत्साहप्रभावं	९१-१६
एवं मूल्यं भागं च	२-२०२-३५
एवभेकैश्वर्यममात्यः	५-६-२३
एवमेतत्सहिष्णु	१०-५-४७
एवमेकेनद्वाभ्यां	१२-३-२४
एवं विजगीषुः	१३-४-५४
अदृष्टकारितं	६-२-८
औपवाह्योऽल	२-३२-६
औरभ्रं त्रयमेतद्	१-१-१५
औरसे तूपन्ने	३-७-१९

क

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कर्कटक सधर्माणो	१-१७-५
कक्षान्तरेष्व	१-२०-१३
कण्टकशोधन	१-१२-१७
कङ्कटकर्मान्ताश्च	२-२३-१०
कटुकालाबौ	१४-२-९
कटफलद्रवन्ती	१४-४-८
कर्णत्वगक्षि	१-६-२
कर्णत्वगक्षिजिह्वा	१५-४-१८
कणिकादास कर्मकर	२-१५-६०
कर्णकीलायससंबन्धो	३-८-३
कर्तुर्द्विगुणः साप	२-१४-१२
कर्तुश्च द्विशतोदण्डः	२-१४-१४
कर्तृकारयितृ	३-९-१४
कर्तुः कारयितुः	३-१-३
कथमेतद् इति पृच्छा	२-१०-२७
कदलीत्रिभागा	२-११-८७
कन्दमूलफलादि	२-१७-११
कन्यायां समानजातीयाद्	५-६-४०
कन्यामाहितिकां वा	३-१३-१२
कन्यादोषमौप	३-१५-१४
कन्यामन्यां दर्शयित्वा	४-१२-१४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कन्यादानं	३–२–२
कन्यागर्भः	३–७–१०
कन्या ह्यदायादा	७–१७–१६
कर्पासिसारं	२–२४–२६
कपालसंश्रयतिष्ठेत	७–२–१४
कपित्थतुला	२–२५–१९
कपिला वृत्तपुच्छा च	२–११–९५
कपिप्लुतो	२–३०–३६
कम्बलः कौचपकः	२–११–९८
कर्मकरस्य	३–१३–२६
कर्मकर वलीवर्दानां	२–२९–४५
कर्मकर व्यञ्जनोवा	५–२–६७
कर्मणा वैश्यो	३–७–३५
कर्मणश्च प्रवेश	४–८–१०
कर्मणामारम्भोपायः	१–१५–४२
कर्मणि मृतस्य	७–१६–२८
कर्मण्य समाप्ते तु	३–१४–३५
कर्मनिष्ठापने	३–१४–५
कर्मान्तक्षेत्रवशेन	२–४–२४
कर्मफलाच्च	१–११–६
कर्मफलोपभोगानां	६–१–३
कर्मस्कन्धाश्चत्वारो	२–२२–१०
कर्मसु चैषां नित्यं	२–९–२
कर्मसुकृतेन	१–९–७
कर्मसु मृतानां	५–३–२८
कर्माकरणे	३–१०–३६
कर्माणि चास्य	१–१९–३
कर्मारम्भाणां	६–२–२
कर्मातिक्रमे	२–३०–४५
कर्मारादग्निमाहृत्य	१४–१–३५
कर्माभिग्रहस्तु	४–६–१६
कर्मानुरूपं कारुभ्यो	२–२–२९
कर्मोदकमार्गम्	३–१०–१
कर्मोदकप्रमाणेन	२–२४–१९
करण हीनं निक्षेप	३–१२–३८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
करणाधिष्ठित	२–७–८
करणीयं सिद्धम्	२–६–१३
करदं तु प्रविशतः	३–१०–१२
करदस्य वा	३–१०–११
करदाः करदेष्वाधानं	३–१०–९
करदेभ्यः कृतक्षेत्र	२–१–८
कलत्रगर्भ्यन्तः	८–५–१
कलत्रस्थानम्	१०–२–८
कलहे पराजितपक्षं	१२–२–१३
कलहे तीक्ष्णाः	११–९–३६
कलहे द्रव्यमपहरतो	३–१९–२३
कलामात्रं पुरुषाणाम्	१४–१–२६
कलामात्रं पुरुषाणां	१४–१–८
कलहे घ्नतः पुरुषं	४–११–१
कलहे पूर्वागतो जयति	३–१९–११
कलायाद्द्विगुणः	२–१५–३७
कलिका विन्दुचित्रा	२–११–८३
कल्पक प्रसाधकाः	१–३१–१२
कल्याणबुद्धिना	७–७–१४
कल्याणबुद्धिका	९–३–४१
कल्याणबुद्धिस्तु	९–३–४०
कवचिनो रथा	९–२–२१
कर्शनपूर्वं	१३–४–१
कर्शनमात्रमस्य	७–४–१०
कर्शनीयं वाऽस्य	७–१८–१२
कर्शनीयोच्छेदनीययोः	७–१८–१६
करोरुकोत्पल	१४–२–२
कर्शितमेनं त्रायेत	७–१८–१३
कर्षकवैदेहका	३–१४–१९
कर्षकः सस्यानां	३–१३–१८
कर्षक गोपालक	३–९–११
कर्षक प्रायेतु	८–१–३२
कर्षकस्यः	३–१०–३४
कर्षकस्य ग्रामं	३–१०–३५
कर्षहीनातिरिक्ते	४–२–१०

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
३–१९–१२	कारणापदेशेन	३–११–१२
२–१९–२५	कारणमृतस्याङ्क	२–२९–२५
२–२४–३	कारणादाने	३–९–२०
३–१०–७	कारुकरक्षणम्	१–१–६
१–११–९	कारुशिल्पकुशीलव	४–१०–६
२–१२–१३	कारुशिल्पिनः	२–३६–६
४–१–४०	कारुशिल्पि	१–१८–१२
४–१–४२	कारुशिल्पिकुशी	३–१३–३०
२–१२–१६	कारुशिल्पिनां	४–२–१८
३–२०=९	कारुशिल्पिपाषण्ड	१३–३–४४
२–३०–३७	कारुशिल्पिनो	५–३–१६
७–१७–४९	कार्तान्तिक	१२–२–१९
५–२–२०	कार्तान्तिकनैमित्तक	५–३–१३
३–६–२	कार्तान्तिकव्यञ्जनो	११–१–४९
१–३–३३	कार्तान्तिकादिः	११–१–२१
२–११–७४	कार्मिके चोपस्थिते	२–७–२२
२–११–७३	कार्यस्यान्यथाकरणे	४–१–७
५–३–२२	कार्यसामर्थ्यात्	१–८–२८
५–२–३४	कार्यस्यासिद्धा	१–१६–२९
२–९५–४	कार्यस्यान्यथा करणे	२–१४–३
४–१–६१	कार्याः कार्मारिकाः	२–३–३५
४–१–५९	कालपर्वतकं रक्तकालम	२–११–५१
९–७–१	कालकूटवत्सनाभ	१–१७–१२
१–१–११	कालकूटादिः	१४–१–२
४–१३–२८	कालमानमत	२–२०–२८
५–५–६	कालः शीतोष्णवर्षात्मा	९–१–२२
१२–२–१४	कालः श्रेयान्	९–१–३०
३–६–१०	कालश्च सकृदभ्येति	५–६–३१
८–३–११	कालातिपातने	२–२४–४
३–२–३२	कालातिपातने	४–१—५
८–३–३८	कालान्तरादपिच	२–१४–६
११–१–४	कालायसताम्रवृत्त	२–१७–१४
७–१२–२४	कालायसपिण्डः	४–१–४१
७–९–४९	कालायसकाष्ठरज्जु	३–१७–७
७–१५–१३	कालायसस्यार्घं	२–१३–५५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कालिका कपिला	२-११-८३
कालिङ्गकस्तापी	२-१३-२१
कालिङ्गाङ्गरजाः	२-२-१५
कालीकुण्ठन	१४-१-१४
काले तीर्थे च	२-२८-१६
कालेयकः स्वर्णं भूमिजः	२-११-६९
काशापितं राजहारः	२-६-१५
काष्ठपञ्चविंशति	२-१९-२६
काष्ठवेणुनावश्च	४-३-७
काष्ठवेणुपाषाण	५-२-२२
काष्ठमिव हि	१-१७-२३
किञ्जल्कवर्णं	३-१३-४
किंवदन्तीं च विद्युः	१-१३-१०
किलाटो घाण	२-२९-२९
किंशुककुसुम्ब	२-१७-१०
किष्कुमात्रमाणिद्वारं	३-८-१५
कीटो वाऽन्यतमः	१४-१-१५
कुक्कुट सूकरमर्घं	५-२-२७
कुक्कुट कोशातकी	१४-२-१५
कुचन्दनं रूक्षमगुरुकालं	२-११-५०
कुटुम्ब कामा	३-२-२१
कुटुम्बर्द्धिलोपे	३-४-३०
कुटुम्बिनः	२-२५-३५
कुटुम्बिकाध्यक्ष	४-९-१२
कुडुवाश्चतुरशीतिः	२-१९-४६
कुडुवार्धंचतुरष्ट	२-१९-४५
कुण्ठा वहवः	७-१२-११
कुतो हि साध्वी	३-४-११
कुद्दकरोचकशक्तु	२-१५-८
कुपितैस्तैरेनं	१३-५-२०
कुपितमूलभिन्न	८-५-१०
कुप्यवर्गः शाकति	२-१७-४
कुप्यप्रदिष्टानां च	२-२-५
कुप्याध्यक्षो	२-१७-१
कुमारकान्	११-१-९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कुमारमभिषिच्य	५-६-२१
कुमारासन्नाः	७-१७-३३
कुमारकुमारमातृ	६-३-७
कुमारोहि विक्रम	१-१७-१०
कुम्भेनेवाश्मा	७-३-५
कुम्भैर्दशभिर्वहः	२-१९-३३
कुर्याद्गवाश्वव्यायोगं	१०-४-१८
कुर्याद्वेक्षणं पूर्वौ	७-३-३५
कुलनीवीग्राहकस्या	३-२०-१६
कुलस्य वाभवेद्	१-१७-५३
कुलाना च स्त्री	२-३५-५
कुल्यकुमारमुख्यान्	५-६-२०
कुल्यकुमारमुख्योपग्रहं	५-६-१४
कुल्यानप्यस्य	७-१६-२०
कुशाम्रफलतैल	१४-२-३१
कुशीलवाः शस्त्राग्नि	१-२१-१६
कुशीलवावर्षारात्र	४-१-५८
कुशीलवैश्चारणा	४-१-६३
कुशीलवास्त्वर्घं	५-३-१५
कुशीलवा रूपाजीवाश्च	५-२-३३
कुष्यलोध्रयोगः	१४-४-७
कुष्ठोन्मादक्लैब्यादिभिः	३-१८-४
कुष्ठोन्मादयोश्चि	३-१८-६
कुष्ठस्य प्रियाल	१४-२-१४
कुसुम्भमसूर	२-२४-१४
कूर्चिकां सेनाभक्तार्थं	२-२९-२८
कूटकाकण्यपक्षाराला	४-१०-९
कूटमुद्राणां	२-२१-४
कूट मुद्रायां पूर्वः	२-३४-४
कूट साक्षिणो	३-११-४५
कूटरूपं कारयतः	४-१-४८
कूपकूटावपात	१२-५-१५
कृकलासगृहगोलिक	१४-१-२०
कृच्छ्रे च प्रतिपृष्टः	८-३-४९
कृच्छ्रोपजापाहि	९-५-

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
१३-३-२९	कृत्स्ने च मण्डले	७-१३-४३
१३-३-५२	कृत्स्नं हिशास्त्रम्	१-६-३
७-१४-१३	कृत्यपक्षोपग्रहेण	१३-३-१६
४-४-११	कृत्याभिचाराभ्याम्	४-१३-२७
१-५-३	कृत्रिमा हि भूमिगुणाः	७-११-९
४-५-८	कृषिपाशुपाल्ये	१-४-१
३-१२-४५	कृषिकर्म प्रदिष्टायां	१५-१-३५
४-५-१०	कृष्णचतुर्दश्यां	१४-३-८५
७-८-२३	कृष्णसर्पमुखे	१४-२-१२
८-५-२८	कृष्णचतुर्दश्यां	१४-३-६९
२-१२-१९	केदारारामसेतु	३-९-२८
२-८-२९	केवलमेव वर्तमानः	३-७-३८
१-१३-१	केशनी विदन्त	३-३-२६
७-७-२०	केशाकेशिकं संग्रहणं	४-१२-३५
३-१४-८	कैडर्यपूति	१४-४-५
१-१५-१	कैवर्तकाष्ठतृण	२-२८-१७
५-३-३७	कोद्रववरकोदारक	२-१५-३४
२-२८-१९	कोद्रवव्रीहीणामर्धं	२-१५-२५
२-२१-२०	कोपाज्जनमेजयो	१-६-६
१४-१-१९	कोपजस्त्रिवर्गः	८-३-४
२-२३-७	कोशगृहविधानते	१-२०-२
३-१-२८	कोशभाण्डागर	४-९-६
७-६-३०	कोशमकोशः	५-२-१
२-१४-४४	कोशमादाय च	८-१-३६
७-८-८	कोशमूलो हि दुर्गं	८-१-३४
१-१०-१९	कोशमूलोहिदण्डः	८-१-४७
१३-३-३	कोशवानप्यपक्षः	७-११-३०
७-८-३१	कोशसंधिं याचेत	१२-१-२९
७-८-१९	कोशदण्डव्यसनयोः	८-१-४१
७-५-४९	कोशदानेन शेषाणां	७-३-२७
७-५-४५	कोशद्रव्याणां वृद्धिप्रयोगाः	२-८-७
१२-५-४२	कोशपूर्वाः	२-८-१
१-१६-२४	कोशाध्यक्षः	२-११-१
१-१४-१	कोशाधिष्ठितस्त्व	२-५-१७
१३-४-९	कोशागारपर्वतकं	२-११-५२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कोशाभावे दण्डः	८-१-४८
कोशाभावे च शक्य	८-१-४४
कोशोदण्डः कुप्यं	८-१-२०
कोष्ठपण्यकुप्यायुध	४-९-५
कोष्ठकाङ्गण	३-८-२८
कोष्ठकोष्ठागारारम्थां	२-३०-३
कोष्ठागाराध्यक्षः	२-१५-१
कोष्ठागारे वर्धमान	२-५-७
कौटिलीयमर्थशास्त्रम्	१-१-१
क्रमावहीनमुत्क्रम	२-७-३५
क्रियाविपन्नोव्यालः	२-३२-१०
क्रियाभैषज्य	२-३०-४७
क्रियाविशेषकाः	२-१०-१८
क्रिया हि द्रव्यं	१-५-४
क्रीत्वा पण्यं	३-१५-९
क्रुद्धलुब्धभीतमानिनः	१-१३
क्रेतृविक्रेत्रोरन्तर	४-२-२४
क्रेतृसंघर्षे मूल्य	२-२१-९
क्रेतृषां मत्तसुप्तानां	२-२५-१३
क्रेता शुल्कं राजपण्य	२-१२-३१
क्रौञ्चो विषास्याशे	१-२०-८
क्लृप्तमानूपग्रामा	२-२८-२४
क्लृप्तमायं परिहापयति	२-८-१२
ख	
खड्गमहिषवारण	२-१८-१३
खद्योतगण्डूपद	१४-२-१९
खद्योत चूर्णं	१४-२-१८
खनकाकाशयोविस्याः	७-१०-३६
खनका हि खातेन	७-१०-३७
खनिभ्यो द्वादशविधं	२-१२-३६
खनिः संग्रामोपकरणानां	७-१४-२५
खनिरत्ननिधि	४-१-५१
खनि वाण्यभोगयोः	७-११-१०
खनिसारकर्मान्तेभ्यः	४-९-२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
खनिः स्रोतः प्रकीर्णकं	२-११-
खन्यध्यक्षः शङ्ख	२-१२-
खन्योरपि यः	७-१२-
खातप्रावृत्ति	३-९-
खुरुम्बः पाण्डुरोहितः	२-१२-
ग	
गच्छप्रतिच्छन्नं	१२-५-
गणिकाध्यक्षो	२-२०-
गणिकादासी	२-२०-
गणिकादुहितरं	४-१२-
गणिकापुत्रान्	२-२७-
गणिकाभोगं	२-२७-
गणिकाभरणमर्थं	२-२७-
गणिकामिकामां	२-२७-
गण्यपण्येष्वष्टभागं	४-२-
गमनमात्रसाध्यत्वाद्	९-४-
गम्यशैलनिम्न	१०-४-
गम्येन वा पुंसा	३-४-
गाढश्चाभ्युद्धार्यश्च	२-१४-
गाणनिक्यान्या	२-७-
गान्धर्वासुरोप	३-२-
गावो ह्यसगन्धं	१-८-
गीतवाद्यपाण्य	२-२७-
गुडयुक्तानां वा	२-२५-
गुण प्रातिलोम्यमभावः	८-१-
गुण वचनमतैषामेव	२-१०-
गुणवतीमादेयां	७-११-
गुणतः शब्द निष्पतिः	१५-१-
गुणः सूत्रवानादीनि	२-१३-
गुणातिशययुक्तो	७-१-
गुप्तपुत्रदार	१-१३-
गुप्ते देशे महानसिकः	१-२१-
गुरुव्यासनं यातव्यं	७-५-
गुरुस्निग्धं पेशलगन्धि	२-११-

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
९-७-७३	ग्रामभृतकवैदेहका	२-१-११
७-५-१०	ग्रामादनिणयन	२-२५-३
७-९-१८	ग्रामारण्यानाम्	१०-२-१
१३-४-१६	ग्रामान्तरेषु च	२-३४-६
१२-४-१८	ग्रामान्तरेषु वा	४-१३-९
३-१-१०	ग्रामार्थेनग्रामिकं	३-१०-१६
३-८-२	ग्रामिकस्य ग्रामाद्	३-१०-१८
१-३-९	ग्रामेरुकं रक्तं	२-११-४६
१-१२-१९	ग्रामेरुकं स्निग्धं	२-११-६३
२-१३-३५	ग्रामेष्वन्तः सार्थिकाः	४-१३-७
४-०-१७	ग्रामारण्योपजीवि	७-१६-५
५-५-११	ग्रासाच्छादनमितरे	३-५-३२
४-५-१३	ग्रीष्मे ग्रहणं कालः	२-३१-८
११-१-४५	ग्रीष्मे बहिरधिश्रयणं	४-३-३
७-१७-५९	**घ**	
२-२३-१५		
३-१४-१	घनं सुषिरंपृषतादि	२-१-३
३-१३-२०	घनं सुषिरं संयूह्य	२-१४-१७
३-१३-२४	घने सुषिरे वा [illegible]	२-१४-३४
१०-३-१८	घाताभियोगं	३-१९-२२
२-१२-११	घृतस्याष्टौ	२-२९-५
२-१७-१३	घ्नतः पञ्चाशतको	२-२६-११
२-११-११०	**च**	
२-२९-१	चक्र चराणां वा	७-१७-५५
२-३५-७	चक्रयुक्तं नावं	४-१-८
२-२९-२	चञ्छुन्दरी	१४-२-३९
१३-३-५३	चण्डालाग्निं च	१४-१-३७
१४-२-११	चण्डाली कुम्भी	१४-३-६२
२-६-७	चतस्र एव	१-२-८
३-२-४	चतुर्गोरुतं	२-२०-२६
२-११-४४	चतुर्णमुद्धानकः	१०-६-३६
१३-३-५८	चतुर्थभंशं धाम्यानां	५-२-५
३-१०-२४	चतुर्थमंशं धान्यानां	५-२-१४
५-३-२३	चतुर्थे हिरण्य प्रति	१-१९-१२
४-४-९	चतुर्दण्डापकृष्टं	२-३-५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
चतुर्दण्डः सेतुवनपथः	२–४–५
चतुर्दशाङ्गुलं	२–२०–११
चतुर्दण्डान्तरा रथ्या	२–४–३
चतुर्भक्तोपवासी	१४–३–४९
चतुर्भागसुवर्णं वा	१–१३–४६
चतुर्भागकास्तिल	१–१५–४
चतुर्भक्तोपवासी	१५–३–५८
चतुर्भक्तोपवासी	१४–३–७०
चतुर्मास्येषु	१३–५–१२
चतुर्मासिकं प्रातिवेध	२–१९–४०
चतुररत्निर्दण्डो	२–२०–१८
चतुरश्रांवापी	२–५–२
चतुरङ्गुलो	२–२०–८
चतुरस्रं	२–३०–३१
चतुर्दिशं जनपदान्ते	१–३–१०
चतुरशीत्यङ्गुलो	२–२०–१७
चतुर्वर्णाश्रमस्यायं	३–१–३८
चतुर्वर्णाश्रमो लोको	१–४–१६
चतुर्विधंनामाख्य	२–१०–१५
चतुर्विंशतिरर्घगुच्छः	२–११–१३
चतुष्कर्षं पलम्	२–१९–४
चतुष्पदद्विपद	५–३–१७
चतुष्पञ्चाशद्रश्मि	२–११–१०
चतुर्वर्णाश्रमो	१५–१–९
चतुष्षष्टिरर्घहारः	२–११–९
चतुष्पदद्विपदानाम्	४–६–१०
चतुष्पदाभावे	३–६–३
चतुष्पञ्चाशद	१–२०–१६
चत्वारिंशद्धस्ति	२–२०–५३
चत्वारोहस्ति परघाः	२–३–२८
चत्वारिंशत्कलाः	२–२०–३४
चत्वारो दुर्जयः	१०–६–२२
चन्दनं सातनं	२–११–४२
चन्दनागुरुवच्च	२–११–७२
चरकपांशुधावकाः	४–१–४९
चरित्रमपक्कतं	१३–५–२
चरुं वश्चरामः	४–३–४
चर्मणां मृदु	२–११–९
चलिभतशास्त्रस्तु	८–२–१
चलामित्रं प्रयातो	७–१३–८
चलामित्राद् भूमि	७–१०–
चातुर्वर्ण्यरक्षार्थम्	१४–१–
चातुर्वर्ण्य पुत्राणां	३–६–१
चापपक्षः	१०–६–१
चामूरं चीनसी	२–११–८
चारकादभियुक्तं	४–९–२
चारकमभित्वा	४–९–२
चाररात्रिषु	२–३६–३
चारसंचारिणो	५–३–२
चिकित्सककुटीर	२–३२–१
चिकित्सकानीक	२–३२–१
चिकित्सकप्रमाणाः	२–२५–३
चिकित्सकः प्रच्छन्न	२–३६–१
चिकित्सक व्यञ्जनो वा	५–१
चिकित्सकाः	१०–३–४
चित्रभेककौडिन्य	१४–१–
चिरप्रवासः	३–११–
चिरसंसृष्टा	१२–४–१
चिरतरेणाल्पतरं	७–१–२
चिरादल्पो भटासारस्य	७–१२–१
चिरादविनिपाती	७–९–४
चीनसी रक्तकाली	२–११–१
चुल्लीशोधनम्	१४–२–३
चेतनाचेतनिकं	२–३६–४
चैत्यदैवतप्रतिमां	१३–२–३
चैत्यदैवतद्वार	११–१–३
चैत्योपवनवृक्षेण	५–२–४
चैत्रो वैशाखश्च	२–२०–४
चोचचित्रक	२–२५–३
चोरं त्वभयपूर्वं	३–१४–३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्का:
चौरं पारदारिकं वा	४-१०-१४
चौरं पारदारिकं	४-६-१९
चोरप्रकृतीनां	१३-५-१५
चोरव्यालभयान्तिम्ना	२-३४-७
चोरहृतमन्ययूथ	२-२९-१२
चोरहृतमविद्यमानं	३-१६-२६
चोरहस्तान्नदीवेगात्	४-१२-३८
चोराणामभिप्रघर्षणे	४-९-७
चोराणाभिप्रघर्षणे	२-५-२०
चोरेणाभिग्रस्तो	४-८-७
छ	
छत्रमेतदिति	३-५-२०
छायायामष्टपौरुष्या	२-२०-३९
छिन्नधान्यपुरुष	८-५-१४
छिन्नस्यं भग्नयुगं	४-१३-२२
छिन्नपक्षस्येव	१५-१-३९
छेदश्चिक्कण: समवर्ण:	२-१३-२५
ज	
जनपदान्तेवासी	१३-२-१८
जनपदं महान्तम्	५-२-२
जनपदं चैकस्थं	१२-५-११
जनपदमेकस्थं	१२-५-२६
जनपदैकदेश	१३-३-४
जनपदान्ते ध्रुवन्विधि	२-५-४
जनपदं यथानिविष्ट	१३-४-२
जनपदमध्ये समुदयस्थानं	२-३-३
जनपदनिवेश:	१-१-४
जनपद: सर्वकर्मणां	७-१४-१९
जनपदमूला	८-१-२९
जनयितुमत्यन्यस्मिन्	३-७-७
जन्मप्रभृति	१-१७-४
जाम्बूनदं शातकुम्भं	२-१३-३
जरद्गुधेनुर्गर्भिणी	२-२९-४
जातैरासव:	३-१८-११

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्का:
जातव्यसनप्रकृति:	७-७-१८
जातव्यसनप्रकृति:	७-७-११
जातव्यसनप्रकृति:	७-७-२२
जातव्यसनप्रकृति:	७-७-२७
जातकामानाम्	११-१-३५
जातानां पुष्येणैव	१४-३-६५
जातानाममावास्यायां	१४-३-८०
जातिं कुलंस्थान	२-१०-५
जातिभूमिषु च	२-२२-९
जातिहिङ्गुलिकेन	२-१३-१९
जातिरुपलक्षण	२-१८-४
जातिविशिष्टाम	४-१२-३७
जातेर्विशेषेषु पुरेषु	२-१०-४२
जात्यादजात्यो हि	७-१७-२०
जात्यप्राज्ञयो:	७-१७-२१
जानपदास्वमित्र	८-१-२७
जानपदमेकार्थोपगतं	९-२-१६
जितद्रव्यादध्यक्ष:	३-२-१०
जानपदोऽभिजात:	१-९-१
जायतेप्लक्षबीजाशात्	७-६-३९
जारं चोर इत्यभिहरत:	४-१२-३४
जित्वाऽपि हि क्षीण	७-१३-३१
जित्वा च पृथ्वीं	१३-४-६२
जिह्वानासोपघाते	४-११-२५
जीवति भर्तरि	३-२-३६
जीवद्विभागे	३-५-१६
जीवन्मरणमेतद्	१-१७-२२
जीवन्तीश्वेता	१४-४-१२
जीवन्तीष्वेता	१-२-५
जीवितविवाहभूमि	३-११-१८
जुहुयादग्निमन्त्रेण	१४-१-३८
जोङ्गकं रक्तम्	२-११-४८
जोङ्गकं रक्तपीतकम्	२-११-६२
ज्यायांश्चेन्न	७-३-६
ज्यायांसमुत्थाप्य	९-७-२०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
ज्यायान् वा हीनं	७–७–२४
ज्यायसा ह्यवगृहीतः	७–५–४१
ज्यायस्त्वे चापि	७–५–४७
ज्यायसा संभूय	९–७–१२
ज्येष्ठामूलीय	२–२०–६०
त	
त एते प्रतिलोमाः	३–७–३०
त एवागम्ययोः	३–३–३१
त उभयतवेतनाः	१–१२–१८
त एनं संधौ	९–६–६६
त एते कृतार्थाः	७–८–१५
तक्र यव भक्षस्य	१४–२–५
तच्चिन्त्यं अचिन्त्यं	६–२–१२
तच्चेन्मण्डलम्	७–१८–७
तच्चेदुभयं मध्यमो	७–१८–३
तच्चेन्निवेदितम्	४–६–४
तच्च द्रव्यं राज	३–१६–१९
तज्जातकरणाधिष्ठितः	२–५–८
तच्चेन्निवेदितम्	४–६–७
तटाकसेतुबन्धानां	३–९–३३
तण्डुलानां प्रस्थः	२–१५–४३
ततः सत्रिणः	९–५–२३
ततः स दुष्टप्रकृतिः	६–१–१७
ततः पूर्ववदाचरेत्	१२–३–८
ततः प्रकाशयेत्	११–१–३९
ततस्तद्व्यञ्जनाः	११–१–४८
ततः परं नगर राजदेवता	२–४–१५
ततः समानम्	१३–२–३५
ततः पूर्ववदाचरेत्	१३–४–३७
तत एकांगुलिकाम्	१४–३–३१
ततः परमाकाशे	१४–३–६०
ततः परस्परं	१३–३–३४
ततः स्वामी	१३–३–६
ततः परं मासोत्तर	२–३०–१२
ततः परस्य प्रेषयेत्	१३–३–१७
ततः पुत्रार्थी	३–२–३९
ततः प्रभूतोदकमल्पोदकं	२–२४–११
ततः पुलाको	२–३०–१०
ततः शासनमभि	९–६–४७
ततः संधिच्छेद	७–१७–४८
ततः सत्रिणः परेषु	९–६–४३
ततस्तद्व्यञ्जनो वा	७–१७–३७
ततः परं कोश	२–७–२९
ततः परमर्घं	४–२–२९
ततः परं कर्तुं	३–११–२
ततः सार्थमध्यक्षो	२–२१–२९
ततः पूर्ववदाचरेत्	१२–२–६
ततः संपीडनेन	१३–३–३०
ततः परेषु कृच्छ्रेण	१–१५–४०
ततः शुल्वकाकण्यु	२–१३–१६
ततः सत्रिणः	१२–२–२८
ततः पूर्वस्याह्नः	४–८–३
ततः सज्यानां	१४–३–६६
ततः परम् ऊर्णासूत्र	२–४–१३
ततः सस्त्री राज्ञः	१३–२–७
ततः शत्रुभूमिलिप्सायां	१३–३–२६
ततः सत्रिणः	९–६–३०
ततः कर्षोत्तरं	२–१९–१४
ततः परं त्रिभिर्मु	२–२०–३८
ततः कालान्तरागतो	३–१२–४३
ततः सत्रिभिः	९–६–१५
तत एकमेतेन	१४–३–४२
ततः संधि मदूष्यं	५–६–११
ततः सत्रिणः परेषु	९–४–३३
ततः आषाढादृशोत्तरं	२–१५–१९
ततः परं धर्मस्थै	३–४–१५
ततस्तद्व्यञ्जनाः	१३–३–४६
ततः प्रयोजयेद्	१३–२–३७
ततः पूर्ववदाचरेत्	१२–३–१०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
ततः सर्वाधिकरणानां	२–७–३	तत्प्रदिष्टः	२–३५–२
ततः पतिसोदर्यं	३–४–३८	तत्प्रतिरूपक	२–१२–४
ततः परं गन्धमाल्य	२–४–९	तत्सधर्मामातापितृ	३–७–१५
ततः सारपदेन	२–१६–२०	तत्सीस चतुर्भागेन	२–१३–१३
ततः परं नगरधान्य	२–४–११	तत्कुलीनम्	१२–२–३२
ततो राजा दूष्यदण्डोपनता	५–१–५४	तत्कुलीनमपरुद्ध	५–६–१३
ततो गन्धमाल्येन	१४–३–५५	तत्कुलीनमपरुद्धं	१२–३–१६
ततो निशाचराणां	१४–३–११	तत्य स्वदेशो	२–२५–२५
ततो दक्षिणं	१४–३–२	तत्प्रतीकारद्विगुणं	१०–२–२
ततोऽर्धमापथं	२–१५–२२	तत्कूटस्थानीयो	८–१–१८
ततो रसेनातिसंदध्यात्	१–२–२२	तत्पलशतमायमानी	२–१९–२१
ततो रक्षाविधानानि	१२–५–३२	तत्स्वयमुपस्थितं	५–६–२९
ततो हृतपक्षमुपगृह्णीतरं	५–१–११	तत्संहतानाम्	१२–३–२०
ततो यथादत्तम्	३–८–२७	तत्सर्माविन्धूनां	३–७–८
ततो गूढमेवापगच्छेत्	१२–५–५०	तत्कुलीनापरुद्धाभ्यां	७–१८–३३
ततोऽन्ये वाह्याः	३–९–२	तत्त्रिषु चतुर्षु वा	१–१५–३८
ततो यथास्वम्	१४–३–७	तत्तु स्त्रीधनं	३–२–२९
ततो द्वारापोहमन्त्रेण	४–५–३	तत्र सत्ये स्थितोः	३–१–४०
ततोऽन्यतम	१४–३–९	तत्र शकुनेः	१५–१–४०
ततो मित्रगतम्	१३–३–२८	तत्राभिजनशरीर	२–१०–२५
ततो वैदेहकव्यञ्जनाः	५–३–४३	तत्र रसदा रसं दद्युः	५–१–४८
ततो यवविरूढम्	१४–३–५	तत्र फलद्विगुणो	२–८–९
ततोऽन्यतोऽपगच्छेत्	७–१७–५८	वत्र यद्भूमिष्ठा	१–१५–५९
ततो दौवारिका	५–१–२५	तत्र रत्नोपभोगे	२–८–१५
ततो मित्रासार	१३–४–३०	तत्र येऽनुप्रशंसेयुः	१–१३–४
ततोऽर्धधरणिको	१४–१–३१	तत्र पञ्चबन्धो	२–८–११
ततोऽर्धमर्धमाणवकः	२–११–१५	तत्र दम्यः	२–३२–२
ततो रक्षोरूपी	१३–२–३०	तत्र पुरुष प्रकृतीनां	९–७–४९
ततोऽन्यमुपस्थापयेत्	३–१४–१४	तत्र पूर्वे दिवस	१–१९–९
ततोऽयं विजयच्छन्दः	२–११–८	तत्र स्वामिसंपत्	६–१–२
ततो नैमित्तिक	१३–२–३३	तत्र धर्मोपधाशुद्धान्	१–१०–१
ततोऽन्यतो गच्छेत्	७–१७५४	तत्र विर्मग्रवृत्तिः	१०–६–४
ततो रसविद्धं	१२–५–२९	तत्रस्थो दोषनिर्घात	५–५–१५
तस्माच्छक्ति सिद्धि	६–२–३६	तत्र ब्राह्मणं ब्रूयात्	३–११–३५
ततस्त्वविषं	९–६–२४	तत्र दशबन्धो दण्डः	२–८–६

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तत्राभिजनशरीर कर्म	२–१०–४९	तथेतिप्रतिपन्नान्	१–१४–११
तत्र साम पञ्चविधं	२–१०–४८	तथाऽनर्थः संशयो	९–७–५६
तत्र यथावदनुपूर्वं क्रिया	२–१०–७	तथाप्यभिप्रयान्तं	१२–१–२४
तत्र रत्लोपघावुत्तमो	२–५–९	तथा कुर्यात्	१२–१–२७
ततः परं वेतनहानिं	४–१–२०	तथापि प्रतिष्ठमानस्य	१२–२–८
तत्र द्वादशगुणो दण्डः	२–८–१९	तथाप्यतुष्यतो	१–१३–११
तत्र तु प्रतिविशेषः	७–३–२१	तथाहि सद्यः	७–१४–१७
तत्र पणबन्धः	७–१–६	तथा ब्रुवाणं योगपुरुषा	५–६–३५
तत्र नाम सत्वाभिधायि	२–१०–१६	तथेति प्रतिपन्नेषु	१३–१–२१
तत्र कालपत्रकम	२–१०–५८	तथैवेतरेषां प्रेषयेद्	५–१–४०
तत्रस्थः कोशदण्डः	१–१८–७	तथैव भूम्येकान्तरा	६–२–१५
तत्रस्थाः प्रकृत्यौ	२–२५–१२	तदवशिते वेश्मनि	३–८–१७
तत्र हीनचतुर्गुणो	२–८–१३	तदपराधेन	२–३०–४८
तत्रापि यथार्हमुपायान्	९–३–२१	तदभावे पिता	३–५–११
तत्रापि स्थलनदी	७–१२–३	तदभावे पितुराचार्यः	३–६–२३
तत्रापि कुद्धे नार्तेन	३–१–१३	तदभिविख्याप्य	५–१–३२
तत्रारण्यो ग्रामः	९–१–१९	तदनिसृष्टं विक्रीणानस्य	५–२–१५
तत्रापि स्थलमौदकं	७–११–३	तदञ्जनं	१४–३–१२
तत्रास्ययोगम्	१२–५–२	तदात्मनो	१०–२–११
तत्रापि वागेस्थल	७–१२–१८	तदात्ववैपुल्यान्	९–४–१८
तत्रापि चक्रपाद	७–१२–२७	तदन्ये ख्यापयेयुः	१३–२–२६
तत्रापि बहु कुण्ठाल्य	७–१२–९	तदप्यनुग्रहेण	५–२–७
तत्राधिकरणानां	२–७–२	तदप्यस्मै	३–१०–१३
तत्रापि गूहमाना	३–४–१५	तदस्य वैदेहव्यञ्जनाः	९–६–३२
तत्रापि महासारम्	७–१२–१४	तदर्पयित्वा	१३–३–४१
तत्रापि गृहीतानुपूर्व्या	३–११–२०	तदवरुद्धदेशम्	१२–५–२७
तत्रैतद्भवति	७–९–३७	तदद्भुतं राज्ञः	१३–२–३२
तत्रैतद्भवति	७–६–१४	तदस्य स्वविषये	१२–१–७
तत्रैविद्येभ्यः	३–५–२९	तदभावेऽप्यसोदर्यं	३–४–४०
तत्रोत्तमो दण्डः	३–१६–८	तदस्यगूढाः	१–११–१८
तत्रोपयुक्तनिधायक	२–८–२२	तदन्ये देवरुधिर	१३–२–२८
तत्रोपवेणुको	२–३०–३३	तदस्य वैदेहक	१२–२–३३
तथाप्युतुष्यन्त	१–१८–५	तद्विशिष्टं स्वयं ग्राह	१–२–३
तथाप्यगुप्तानां	४–१३–११	तदात्मपुत्रस्नुषा	३–२–१६
तथा इत्यमात्यः	५–६–३६	तदायत्तत्वात्	१४–१–४६

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तदुद्देशः संवृतः	१–१५–३	तद्विशिष्टं तु	१२–१–९
तदुपयोगेन व्याख्यातम्	२–८–१७	तद्विरुद्धवृत्तिः	१–६–४
तदुभयवेतना	९–६–४८	तद्विशिष्टबलाभावे	७–२–७
तदुभयं पानव्यसने	८–३–६०	तद्व्यञ्जना वा	१२–४-१५
तदुभयवरोक्तं	३–९–१७	तद्वा द्रव्यं राजा	३–११–४०
तदुभयमष्टाङ्गुला	२–११–८४	तद्वेलाकुलग्रामाः	२–२८–२
तदुभयं नियम्यो	३–१–२४	तद्द्वैयावृत्तकराणा	२–५–१८
तदुभयं रसेन योजयित्वा	५–१–३१	तन्निमित्तं वारयतो	३–४–१४
तदुभयं रात्रौ भोषयेत्	५–२–५१	तन्नाशे वणिजस्तच्च	२–२५–१४
तदुभयमासुरीवृत्ति	९–७–२	तन्मध्ये श्वाविधः	१४–३–५०
तदुभयं विलोपार्थं	९–२–१९	तन्माषैः सह	१४–३–२९
तदुभयं तापनिकषाभ्यां	२–१४–३२	तन्तुवाया	४–१–८
तदुभयमष्टाङ्गुलायामम्	२–११–७६	तन्त्रयुक्तयः	१–१–१७
तदेव पाषाणलगुड़	९–२–२७	तपनीयमुज्ज्वाल्य	२–१३–५३
तदेव विजितद्रव्य	८–३–४४	तपनीयं ज्येष्ठं सुवर्णं	२–१३–४७
तदेव षण्डभक्षणे	३–१०–२८	तपस्विनां तु	१–१९–३२
तदेभिः कारणैराश्रयेत्	७–१५–१२	तप्तकालधौतकयोः	२–१४–८
तदेव प्रतिदानार्थं	२–१५–७	तमर्थमानाभ्याम्	१–११–३
तदेवाक्षणगृहीतायाम्	४–९–२६	तमर्थेनावम्य वपद्येत	१२–१–१४
तदेव हृतो दूवढस्य	४–७–१५	तमन्येनमिक्षिप्तम्	३–१२–३४
तदेव निष्पततो	३–१–३२	तमश्यवद्येत	१२–१–१२
तदेव स्त्रिया	३–३–१०	तमन्योन्येन	९–३–२३
तदेवाष्टगुण	२–२१–१४	तमाचार्यंशिष्यः	१–९–१०
तदेव सेनापतिः	२–३३–९	तमात्मदोषत्यागेन	९–३–११
तदेव निविष्टपण्यस्य	२–२१–१२	तमाषाढ़ीपर्यंवसान	२–७–७
तदेषां नैमित्तिक	१३–२–२२	तमितरेषामुभयवेतनाः	९–६–६८
तदेवाश्वानां प्रतिबलं	९–२–२८	तमेषां भक्तवेदना	२–३२–२०
तदेव नीते सीमा	३–९–१३	तमितरस्तदात्वे	७–८–९
तदेषां दशवर्गी	१०–३–४६	तमेतेषु कलहस्थानेषु	५–१–४१
तदेषां याचिते	११–१–२९	तमेव हि प्रत्यावृत्तो	७–४–८
तद्वाग्निवत्	१५–१–३	तमेव संकुचित	४–७–३
तद्भावभावित्वात्	९–२–१४	तया वृक्षफलानि	१४–३–८७
तद्राजा तथैव	१–२१–५	तया कौशेयं	२–११–११४
तद्द्वेष्याः	२–११–१	तया स्वपक्षं	१–४–२
तद्विनाप्तकं तच्च	२–१३–६	तयोः कोपो गरीयान्	८–३–५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तयोरप्यनन्तर	८-३-४३
तयोर्मनुसोपेतो	३-६-१२
तयोरुत्पन्नो	२-६-२६
तयोः कलहो रात्रौ	५-१-५२
तयोरलब्धलाभ	७-१३-२०
तयोश्चतुरङ्गुलं	३-८-१४
तयोर्विशेषलाभात्	७-७-६
तयोर्विशेषलाभात्	७-९-६
तयोः परिभवाद	८-३-१६
तयोरन्यतरो	१३-३-३५
तयोः पादावरो	२-३१-१२
तयोर्यः प्रत्युपस्थितार्थः	७-१०-२
तयोरल्पबहुत्वे	७-११-६
तयोर्यो दैवकृत	७-१२-२
तयोर्यः प्रत्युपस्थितार्थो	७-११-२
तयोरेकपुरुषानुग्रहे	७-८-१७
तयोरपचरणे	४-१-३१
तयोर्मित्राक्रन्दोप	९-४-२५
तयोश्चलामित्र	९-७-२८
तयोः अर्थो न वेत्ति	९-७-८
तयोस्तापनमवध्वसनं	१-१४-३६
तमेव सशोणितदंशं	४-७-९
तस्मात्साक्षिमत्	३-१२-५३
तस्मात्कोशदण्ड	८-२-४
तस्मात्सहस्रैकीयः	९-३-४
तस्माद्ब्राह्मेषु	९-५-२०
तस्मादेव बलः परः	१२-१२-२
तस्मात्प्रभूतोदके	९-१-४८
तस्मात्कोपं च	८-३-६६
तस्माद्विरक्तप्रकृतिमेव	७-५-११
तस्मात्सर्वसंदोह	७-४-१२
तस्माद्राजानो	१-१३-१२
तस्माद्वज्रमणिमुक्ता	२-१३-५९
तस्मात्कोपो गरोयान्	८-३-२२
तस्माद् बुद्धिवृद्धैः	१-१५-२१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तस्मादाप्तपुरुषा	२-४-२१
तस्मात्स्वधर्मं भूतानाम्	१-३-११
तस्माद्वज्रमणिमुक्ता	२-१४-४३
तस्मात्कर्तारं करणं	२-९-४
तस्मात्पूर्वं	२-८-२
तस्माद् ग्राम्यसुखेषु	१-१७-२
तस्मान्मा तृबन्धुषु	१-१७-१७
तस्माद्धर्म्यमर्थ्यं	१-१७-३३
तस्मादन्तपालदुर्गे	१-१७-११
तस्मात्स्वविषयात्	१-१७-१४
तस्माल्लोकयात्रार्थी	१-४-५
तस्मात्समाप्तकरणं	४-८-१३
तस्मादरिषड्वर्गं	१-७-१
तस्मादेकान्तरावरा	२-३३-४
तस्मादल्पव्ययारम्भ	७-१२-३१
तस्माद्विक्रयः	२-२१-१५
तस्मादप चरित	७-५-१५
तस्मात्समानशील	१३-५-७
तस्मादुत्थानम्	१५-१-४८
तस्मात्प्रकृतीनां	७-५-२८
तस्माद्धर्म्यमर्थ्यं	१५-१-६४
तस्मान्नित्योत्थितो	१-१९-३५
तस्माद्दण्डमूलाः	१-५-१
तस्मादमात्यसंपदोपेतः	२-१०-३
तस्माद्ब्राह्ममधिष्ठानम्	१-१०-२०
तस्यमान्मन्त्रोद्देश	१-१५-५
तस्मादस्याध्यक्षाः	२-९-२८
तस्मादस्य	१-२१-१
तस्मादस्य यो	२-९-११
तस्मादिमं	१-१५-४७
तस्माद्वतुमत्यां	१-१७-५४
तस्मादुञ्छषड्भाग	१-१९-९
तस्मादभिजनप्रज्ञा	१-८-२६
तस्मान्नीतिविदो	१-८-२२
तस्मादुत्थानम्	१-१९-५

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
१-१५-१४	तस्य त्रिभागं	३-११-९
१-२०-१७	तस्य कण्टकशोधनं	४-४-२
१-१५-३०	तस्य निर्णयन	१५-१-५५
१-१९-२९	तस्य पूर्वः पूर्वः	९-७-६३
१-१५-१७	तस्य परिचारकजनं	४-७-१४
१-१५-१२	तस्यातिक्रमे	३-८-७
७-९-३४	तस्यातिक्रमे	३-१५-८
८-५-३०	तस्यातिक्रमे पूर्वः	३-९-३१
९-४-७	तस्यातिक्रमे	७-१७-७
९-५-२	तस्यातिक्रमे चतुः	३-८-१०
१-१६-१४	तस्यातिक्रमे	३-२-४०
६-२-१८	तस्यातिक्रमे	३-१४-१६
१-१७-८	तस्यारम्भे रागविशेषु	२-१३-५७
११-१-४१	तस्याः पञ्चपलिकं	२-१९-१३
६-२-११	तस्यां हि सर्वविद्या	१-२-७
७-६-१२	तस्यातिक्रमे लोकः	१-३-१५
७-१७-९	तस्यां गतागतः	७-६-२३
७-१७-१२	तस्यातिक्रमे	२-४-२२
१०-५-७	तस्याः पृथिव्या	१५-१-२
६-२-९	तस्याकरणे वा	५-२-३१
२-३४-१०	तस्यां समन्ततः	९-७-३३
३-१२-४०	तस्यां समन्ततः	९-७-३०
९-७-६१	तस्याः शतपदा	२-१९-३८
२-३-४	तस्यातिक्रमे चतुर्विंशति	३-८-१२
८-३-३९	तस्याभिशस्ताङ्को	४-८-२८
२-४-८	तस्यातिक्रमे	३-३-९
२-१४-३८	तस्यापिहित काचकस्यो	२-१४-४०
६-२-१४	तस्यातिक्रमे	५-१-६०
९-१-२३	तस्यायं प्रकरण	१-१-२
३-१४-३	तस्यामायत्ता	१-४-४
१०-५-१५	तस्यापरसार	४-८-४
६-१४-२०	तस्यातिक्रम उत्तमो	४-८-२०
२-१४-४२	तस्यापि द्विरथोत्तरा	१०-५-१८
९-६-३६	तस्यां पूर्वमनर्थं	९-७-४२
१-१५-१०	तस्यां पूर्वां पूर्वां	९-७-४६

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तस्यामनर्थं	९–७–३८	तामन्यत्र विक्रापयेत्	२–२५–८
तस्यातिक्रमे पूर्वः	३–८–२०	ताम्रवृत्तकंसवैकृन्त	४–१–३५
तस्यां हिमवत्	९–१–१८	ताम्रपर्णिकं पाण्ड्यक वाटकं	२–११–२
तस्याकरणे वा	५–२–८	ताम्रपिण्डो	४–१–३६
तस्यां चातुर्वर्ण्य	७–११–२१	ताम्रपादयुक्तं रूप्यं	२–१३–४
तस्याप्रतिब्रुवतः	३–१–२९	ताम्रं पीतकं करोति	२–१३–५२
तस्यैव परिचारक	१२–२–१६	ताम्रवृत्त कंसकाच	३–१७–८
तस्योपविचारः	२–३२–५	तारमुपशुद्धं वा	२–१३–४१
तस्योत्तरपक्ष	९–७–६५	तालचापदार	२–१८–८
तस्योपघातो	८–३–३३	तालावचरचारण	३–४–२२
तस्योप विचारः	२–३२–७	तालीतालभूर्जानां	२–१७–१
तस्योपविचारः	१–३२–९	तालोद्घाटनं	१४–३–६३
तस्योपविचारो	२–३२–३	तावता हि कालेन	३–५–१८
तस्योपलब्धिः	२–२४–७	तावदविच्छिन्नः	३–५–१
तस्योपकरणं प्रमाणं	४–८–२४	तावन्तः प्रतिलोमाः	९–७–७१
तस्योपयुंभय	२–५–३	तावन्तः पादगोपाः	१०–२–११
ता अष्टौ लक्षा	२–२०–३	तावन्मात्रमेकद्वारं	२–२–१
ना अष्टौ यवमध्यः	२–२०–५	तांश्चापदेशैः	४–८–२
ता अष्टौ यूका	२–२०–४	तासां हिरण्यधान्यक्षयः	७–५–३३
ताः पञ्चभिरमात्य	६–२–२५	तासामभावे	२–२७–१
तां स्वयं पतिवां	१४–३–८६	तासां सिद्धिः	९–७–६०
तान् निर्गच्छत्	१२–३–३	तासां दैवत ब्राह्मण	९–७–८३
ताननुगुणान्	११–१–३	तांसां यथास्वं	६–१–२१
तानि दिवसवेतनेव	४–२–३५	तासां मोरहापलाश	२–२५–३३
तानेकैकलशः	१–१४–४३	तासां सौवर्ण कुड्यका	२–११–११३
तान् राजा स्वविषये	१–१२–६	तासामर्घंधरणा	२–१९–२३
तानवमन्यमानान्	१–१३–११	तासु पाषाणकुद्दालाः	२–३–३४
तानुपदेक्ष्यामः	८–३–३	तिथिषु प्रतिमानदानैश्च	२–२३–५
तान्यनु सुखेन	२–१–१४	तिमितमपरान्नद्विगुणं	२–१–३५
तापो बहिरन्तश्च	२–१३–२६	तिरोहितान्तर	३–१–२
ताभिरभ्युच्चितो	६–२–३५	तिस्रो नीराजनाः	२–३२–२१
ताभिर्घर्मार्थौ	¦१–२–९	तीक्ष्ण काकणीरुप्य	२–१४–८
ताभ्यां बहुगुण	१–४–३	तीक्ष्णं चास्य मयूरः	२–१३–४८
ताभ्यां पार्श्वाभिघाती	१०–३–९	तीक्ष्ण ताम्र संस्कारं	२–१३–४६
ताभ्यां पीडनैः	८–४–४९	तीक्ष्णदण्डो हि	१–४–८

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
९–६–५३	तुल्यसामन्तव्यसने	७–५–१
१२–१–२८	तुल्यमन्त्रशक्तीनाम्	७–१५–२
१९–२–९	तुल्यातुल्ययोः	३–६–२१
५–१–२७	तुल्यानां वा यस्य	७–२–२४
९–६–५४	तुल्ये पुरुषभोगे	७–९–३५
३–२०–२१	तुल्ये हिरण्यभोगे	७–९–३६
३–२–४४	तुल्ये लाभे देशकालौ	९–४–२४
४–१०–१	तुल्ये क्षयव्यये	७–१३–३४
४–३–१५	तुल्ये संपन्नालाभे	७–१०–३
१०–२–१५	तुल्ये बलीयस्त्वे	७–१०–७
३–२–४३	तुल्ये लाभगुणे	९–७–३१
३–४–३६	तुल्योत्साहशक्तीनां	७–१५–६
४–२–२	तुच्छश्रावणायाम	३–११–८
२–१६–१६	तुटो लवो निमेषः	२–२०–२९
२–१५–६२	तुत्थोद्गतं गौडिकं	२–१३–१०
१५–१–६०	तुषारपायनमुष्ण	२–२४–२४
२–१५–११	तुषारदुर्दिनमगाध	९–१–३८
२–१४–१८	तुष्टलिङ्गमतुष्टं	९–५–२५
२–१४–१५	तुष्टान् भूयो	१–१३–१६
४–२–६	तुष्टानर्थभानाभ्याम्	१–१३–२४
४–२–२०	तूष्णीं वा प्रतिवाक्ये	५–४–१३
२–१९–३९	तूर्यशब्दे राज्ञो	२–३६–३५
२–१३–२८	तूर्यध्वजपताका	२–३३–११
४–२–१३	तूर्याणां तैः	१४–४–१३
४–२–१२	तृणकटच्छन्ना	२–३६–१९
२–२६–९	तृणकाष्ठमा	१२–५–१३
७–१–३०	तृतीये स्नानभोजनं	१–१९–११
७–१–२३	तृतीये हस्तिनः	१०–१–८
७–१–२७	तृतीये प्रणयेदर्थं	७–३–३१
४–८–१५	तृतीये तूर्यघोषेण	१–१९–२०
७–१५–७	ते कुमारं	७–१७–३५
७–१५–४	ते गूढशस्त्रैस्तीक्ष्णैः	५–१–२४
७–१५–८	ते ग्रामाणामध्यक्षाणां	४–४–४
७–१५–१०	ते चेद्यथोक्तं	९–६–३८
१३–१–१२	ते चेत्तथा कुर्युः	४–४–१२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तेजो हि संधान	७-३-८	तेन पलोत्तरा	४-२-५
ते तच्छत्रोः	१३-३-९	तेनार्घवृद्धो	४-२-१७
ते तदभिविख्याप्य	५-१-२६	तेन द्विपटवानं	४-१-१२
तेना करोद्गतमपसार्यते	२-१४-२	तेनाहर्गणदक्षिणा	३-१४-३३
तेन दोषेणतरे	५-१-४९	तेन प्रदिग्धमङ्गं	१४-२-२४
तेन मरको व्याख्यातः	८-४-८	तेन सहैकमुपगृह्य	७-२-२२
तेन सेनापतिकुमार	९-६-५०	तेन हस्तिनाम्	१०-५-२३
तेन त्र्यङ्गबलविभागः	१०-५-४०	तेन मध्यमकनिष्ठौ	३-६-११
तेन भृता राजानः	१-१३-७	तेन पूर्वे व्याख्याताः	७-१३-१७
तेन पारशवः	५-१-८	तेन मूलहरता	७-१३-१३
तेन आघि प्रणाशोप	३-१२-८	तेन पूर्वः पश्चिमश्च	७-१२-२१
तेन सर्वत्रार्त	३-१३-३६	तेनामित्राह वीबल	७-१३-२१
तेन व्यसनी	७-११-३३	तेन रात्रिगणश्चरति	१३-१-४
तेन कर्षोत्त रादण्ड	४-२-११	तेनावलिप्तः	१३-४-२१
तेन कृत्याभिचारशिलो	४-४-१६	तेन सर्वभाण्ड	१२-५-३०
तेन धान्यपण्य	४-२-२५	तेन मृगयाकामो	१३-२-४१
तेनार्घवृद्धो	४-२-३०	तेन दण्डोपनत	१३-४-३४
तेन रूपाजीवा	७-१७-३८	तेन दोषेणेतरे	५-१-४९
तेनाटवीबलकालो	९-२-७	तेन पूर्वे व्याख्याताः	७-८-१०
तेन देशजाति कुल	३-१०-४५	तेन दोषेणेतरे नियंतव्याः	५-१-४८
तेन धान्यपण्यविक्रये	४-२-२७	तेन दोषणेतरे	५-१-४२
तेन कूटश्रावणकारकाः	४-४-१३	तेन हीनः क्रीताः	७-११-४४
तेन रागस्यापहर्ता	४-४-२२	तेन भाण्डभारो व्याख्यातः	२-२८-२२
तेन तपोवन	३-९-२३	तेन परपक्षम्	१२-१-१४
तेनाश्वखरोष्ट्र	२-२९-४२	तेन प्रदेशेन राजा	२-२१-२८
तेन वा प्रेषितम्	७-१४-२०	तेन संघभृताव्याख्याता	३-१४-१२
तेन समाहृवयो व्याख्यातः	३-२०-१३	तेन दोसेणेतरे	५-२-४८
तेन गोमण्डलं	२-३०-४९	तेन शिरोहस्तपाद	२-११-२७
तेन सौवर्ण राजतानि	२-१४-४९	तेन काशिकं पौण्ड्रकं	२-११-१०६
तेन त्रिवर्ण द्विवार्ण	३-६-१८	तेन मदनयोगव्यवहारी	४-४-११
तेन तुल्यः	३-७-५	तेन तत्पूयते पापं	४-१३-४३
तेन कर्षोत्तरा	४-२-८	तेन प्रदेष्टारो	४-४-८
तेनासनयान	७-२-३	तेन मरको व्याख्यातः	४-३-१४
तेन धरणानि	२-१९-९	तेन मृगपशुपक्षि	४-३-३४
तेन हि ध्वजेव	१-१७-१९	तेन चण्डालाशुचयो	३-१९-१०

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
४-२-२१	तेषामन्ता वसायिनः	१-१६-१५
४-३-२७	तेषां कर्मफल	२-२४-४
५-२-५४	तेषां तुर्यमागन्तुकं	२-२७-२६
३-१८-८	तेषामाधिः	३-१४-१३
१-१९-२८	तेषां देवी व्यञ्जना वा	५-१-२९
९-३-३३	तेषामश्यवपत्या	१२-१-११
२-५-१५	तेषामेकयोगात	९-७-७७
१४-३-१३	तेषामभावोगनपद	८-१-२१
३-८-८	तेषां नदीपर्वतदुर्ग	२-३-२
७-८-२४	तेषां कृतोत्साहानां	४-५-२
१-१०-१०	तेषामनियत	७-१७-३६
४-१-३४	तेषां कुप्यभृतममित्र	९-२-१०
४-१-३८	तेषां ज्यायसैकेन	७-५-४०
४-१-४७	तेषां द्वैधीभावे	३-९-१६
२-१५-४८	तेषां ऊर्ध्वं	३-५-२
४-१-२९	तेषां बन्धनोपकरण	२-३२-११
४-१-२४	तेषामपि मर्मज्ञ	१-८-८
७-१३-२८	तेषां हि प्रमादं	१-१५-११
३-१३-१६	तेषामशुद्धा	२-१२-८
२-१३-२९	तेषामन्तेवासिनः	२-९-३
४-१-४३	तेषां हरणोपायाश्च	२-८-२०
४-३-२९	तेषामानुपूर्व्या	२-७-११
४-३-२	तेषामयःशूलेन	४-१-६३
२-९-५	तेषां जङ्घाग्र	२-३५-९
४-७-२२	तेषां च कृतदाराणां	३-५-३३
३-१६-४०	तेषां पण्यपत्तन	७-१६-१०
१-१५-२५	तेषां शत्रु विरोधे	७-१८-३१
१३-३-३७	तेषामलाभे	७-१४-२६
९-७-८०	तेषां ज्यायसः	७-७-४
९-७-२१	तेषां गृहपतिक	१३-३-४५
१२-१-१७	तेषामभावे तदभावः	८-१-९
७-४-२०	तेषां तीक्ष्णभद्र	२-३०-३०
१०-६-४२	तेषां महोपकारं	७-१६-१७
७-१-२०	तेषामन्यतमस्या	२-२१-२३
८-५-२	तेषां बन्धनोपकरणं	२-३०-४२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तेषां मुखानि छेदन	२-१८-११
तेषां च पुत्रेष्वनुक्षियत्सु	५-१-५५
तेषामाढकप्रस्थ	२-१९-३०
तेषामध्यक्षाः शुद्धा	३-२०-८
तेषां कार्तान्तिक	१-१३-२३
तेषां जनपदमभिजनम	१-९-३
तेषामभीक्ष्णविनिपाते	१-१२-१६
तेषां स्वयोनौ	३-७-३६
तेषामलाभे यथा	७-११-३९
तेषामर्थसंशय	९-७-१३
तेषां ग्रहणहिंसायां	४-३-२२
तेषामसंभाषायां	१-१६-२५
तेषामाक्रोशे	४-११-१४
तेषामन्यथा	३-१०-३३
तेषां वा तूर्य	७-१७-३९
तेषामन्तराणि	२-१-६
तेषामजातस्नेहे	१-१७-६
तेषां किल्विषम्	१-१३-८
तेषां बाह्यं चारं	१-१२-७
तेषां मुण्डजटिल	१-१४-६
तेषु तैः सह	१२-४-३
तेषु पुष्पफ	२-४-२५
तेषु चैतावचातुर्वर्ण्यम्	२-३५-४
तेषु प्रशान्तेषु	९-५-६
तेषु यथास्वबल	९-१-२४
तेषु यथा स्वबल	९-१-२०
तेषु यथोक्ता दण्डाः	३-१६-४१
तेषु व्यसनाभ्युदय	१३-१-१३
तेषु राजा नित्ययुक्तः	५-३-३६
ते षोडश सुवर्णः	२-१९-३
ते षोडशधरणम्	२-१९-६
तेष्वननुज्ञातानां	२-२५-३७
तेष्वन्नपानभाजनानि	१४-३-८१
तेष्वविक्रीतेषु	४-२-३४
ते ह्यस्य स्वपक्ष	१-१५-५१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
ते ह्येनमपचरन्तम्	१-८-१७
ते ह्यस्य मर्मज्ञ	१-८-६
ते ह्यस्य विश्वास्या	१-८-२
ते ह्यस्य सर्वम्	१-८-२१
ते ह्यपरिगृहीतं	५-२-२५
तैरभ्युच्चितस्तृतीयं	९-१-३४
तैर्भूम्येकान्तरा	७-१८-३०
तैर्मन्त्र्यमाणोहि	१-१५-३१
तैर्वरुणनागकन्या	१३-१-०६
तै सह प्रहरेयुः	१३-३-४३
तैः पश्चिमा	१-११-८
तैश्च यथोचिताम्	५-६-४
तैरूर्पणिकं अशोकग्रामिकं	२-११-६१
तैलाभ्यक्तमाशु	४-७-१
तोयकुम्भान्	१२-५-१८
तोयाशये वा	७-१७-४१
तोयाशयापाश्रयवती	१०-४-१०
तौ चेन्नभिधेयातां	१३-३-३१
तौ हि शुल्कहरोः	३-२-११
तौ हि द्विकार्यं	७-५-४१
तौ हि सुखौ भेदयितम्	७-५-४२
तं चेत्संघो	११-१-४६
तं ग्राममपसव्यं	१४-३-८१
तं चेत्संभूय	३-१०-४१
तं प्रति दूतमादाय	१३-४-२१
तं भिक्षुक्यः	१-१२-१०
तं भूमिद्रव्याभ्याम्	१२-१-१६
तं दूष्यगृहप्रतिद्वारि	५-१-१०
तं दूष्यगृहप्रतिद्वारि	५-२-४३
तं ब्रूयात् दूतमुखाः	१-१६-१३
तं राजा दूष्यद्रव्योपभोग	५-१-६
तं राजा यमर्थं	१३-२-१२
तं राजेति समानम्	१३-२-१३
तं रात्रौ इति समानम्	५-१-१३
तं सत्त्रिणः	१-१२-८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
त्वं हस्ती महामात्रवधे	५–१–१७	दण्डेन वा त्रातुम्	१३–३–३२
त्वद्गूढपुरुषा	१–८–१४	दण्डेन वा प्रयातुम्	१३–३–२२
त्वं चाहं च भूमिं	७–१०–१	दण्डो हि केवलो	३–१–४२
त्वं चाहं च मित्रं	७–९–४	दंडो हि महाजने	९–६–३
"त्वं मित्रम्" इत्येवम्	७–९–५	दंडोपनताटविकयोः	१३–४–३५
त्वं चाहं च शून्यं	७–११–१	दत्तस्याप्रदानम्	१५–१–२४
त्वं चाहं च दुर्गं	७–१२–१	दत्तस्याप्रदान	३–१६–१
त्वमेतावन्तं काल	७–६–६	दत्त्वा चाभयं	७–१६–२३
त्वमेतावत्कार्यं साधय	७–६–७	दत्तशुल्कं पञ्च	३–४–३४
त्वमेतं देशं याहि	७–६–५	दत्तमव्यवहार्यम्	३–१६–२
त्वष्टृकर्मणः शुल्वभाण्डं	२–१३–३४	दत्तभागविभागस्य	२–१२–३०
		दन्तमूलपरीणाह	३–३२–२२
द		दधिधान्याम्लादिः	२–१५–१
दक्षिणपूर्वं भागं	२–५–१०	दन्तयुग स्वयं मृत	२–२–९
दक्षिणापथेऽपि	७–१२–२५	दम्पत्योः पितापुत्रयोः	३–११–२१
स्वान् वृषमूत्रेण	१४–३–८३	दशकुलीवाटं	२–४–२६
दण्डनीतिरेका	१–२–६	दशकुलीं गोपो	२–२६–२
दण्डप्रणेतः	३–१३–१८	दशगुणः	२–७–१३
दण्डपारुष्याच्च	८–३–३६	दशदंडो रज्जुः	२–२०२९
दण्डपारुष्यम्	३–१९–१	दशधरणिकं पलं	२–१९–२०
दण्डकर्मसु च सर्वेषु	३–१७–१५	दशपणिको योजने	५–३–१९
दण्डबलव्यवहारेण	१३–३–१५	दशपुरुषो	२–३३–३
दण्ड बाहुल्यामावापः	१०–५–२५	दशभागश्चैषां	२–२५–३०
दण्डमित्रयोस्तु	८–१–५७	दशभागिकौ द्वौ	२–३–२०
दण्डविष्टकराबाधै	२–१–३७	दर्शने प्रसीदति	५–१–७
दण्डमित्रव्यसनयो	८–१–५३	दशवर्षोपेक्षित	२–११–१३
दण्डमुख्यव्यञ्जनो	१२–४–७	दशरात्रादूर्ध्वम्	२–३०–११
दण्डमूलो हि मित्रं	८–१–४२	दशावरं च यूथः	४–११–१६
दण्डवधादाक्रोश	३–१६–६	दांडकर्मिकम्	१–१–७
दण्डवतो मित्रं	८–१–५६	दंडकर्मिकवच्च	९–५–२९
दण्डश्चतुर्गुणः	९–६–६१	दांडकर्मिकवद्धा	५–६–१५
दण्डश्च हिरण्येनान्ये	७–९–३०	दाता प्रतिग्रहीता	३–१५–१९
दण्डसंपत्	१०–५–४१	दानं द्विगुणं	९–६–५९
दण्डान्तरा द्विदण्डान्तरा	२–२–१४	दाने शुचिः	३–१२–४१
दण्डाभावे च ध्रुवः	८–१–४३	दाने शुचिः अन्यथा	३–१२–४८

कौ०–३४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
दाने शुचिः	३-१२-४४
दानुरूपं च	२-१६-९
दायनिक्षेपोप	३-१-७
दाररक्षणं निशान्त	१-१७-२
दासकर्मकरेभ्यो	२-२५-९
दासं दासीं वा	३-१३-२५
दासद्रव्यस्य	३-१३-२२
दासमनुरूपेण	३-१३-२१
दासशब्देन वा	५-२-५६
दासस्य दास्या	४-१२-२७
दासाहितक बन्धून	२-१-२५
दिवसपञ्चरात्र	२-७-३०
दिवसस्य हरत्यर्कः	२-२०-६५
दिवसान्तरमेकैकं	४-८-२५
दिवसानुवृतो	२-६-१८
दिवसानुवृत्तो नित्यः	२-६-२४
दिवसे पञ्चरात्रे वा	२-३६-४६
दिवाकाकः कौशिकं	१-१-३१
दिवायामं च	१०-१-१३
दिवा रात्रौ वा	४-१३-४
दिवा स्त्री प्रेक्षा	३-३-२१
दीर्घकान्तारम्	१०-२-१७
दीर्घपथ भारवलान्तावां	२-३० १९
दीर्घं प्रवासिनः	३-४-३७
दीर्घरोगोन्मादग्नि	१-१२-१४
दीर्घसत्रव्याधि	३-११-१०
दुर्भोत्पादनं	३-१९-२५
दुर्गकोशव्यसनयोः	८-१-३३
दुर्गः कोशादुपजाप्यः	८-१-३५
दुर्गजनपदशक्त्या	५-३-१
दुर्गं दग्धं हृतं	१०-६-५०
दुर्गप्रतिष्टब्धयोरपि	७-१०-२८
दुर्गम कृत प्रवेशस्य	४-१०-६
दुर्गमित्रप्रतिष्टब्धो	७-१४-१५
दुर्गं राष्ट्रं	१२-१-१९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
दुर्गराष्ट्रदूष्यान्	५-१-४०
दुर्गराष्ट्रप्रमाणं	१-१६-१
दुर्गराष्ट्रमुखान्	१३-३-३६
दुर्गराष्ट्रयोः कण्टकशो	५-१-१
दुर्गवासिनः	१३-४-१४
दुर्गसंपदुक्ता	६-१-१
दुर्गसेतुकर्मवणिक्	५-२-१
दुर्गच्चानवरोध	१२-५-१०
दुर्गादीनि च कर्माणि	७-१५-२२
दुर्गादोनि च कर्माणि	७-११-८
दुर्गार्पणः कोशो	८-१-३८
दुर्गापाश्रया पुरुषा	७-११-२३
दुर्गापाश्रयो वा	७-२-१०
दुर्गाभावे च कोशः	८-१-३१
दुर्गाप्तिर्हि	७-१०-८
दुर्गेषु वणिजः संस्था	१-१२-२१
दुर्गे हि कोश	८-१-३१
दुर्जयेन सर्वान्	१०-६-४३
दुर्दर्शो हि राजा	१-१९-३०
दुर्भिक्षस्तेनाटवी	१३-१-२०
दुर्भिक्षे राजा	४-३-१०
दुराब्धकर्माणं	७-८-१
दुरुक्तशल्यं	८-३-२१
दुर्बल एव च भूमिलाभः	७-१०-६
दुर्बलं तु न्यायवृत्तिम्	७-५-१८
दुर्बलमभिज्ञातो	८-२-२३
दुर्बलं वेश्म	४-१३-१३
दुर्बलसामन्ता	७-१०-१०
दुर्बलाद् भूमिलाभे	७-१०-९
दुर्बलोऽभिजातो	८-२-२१
दुर्बलो राजा	७-१५-१
दुर्विभक्तमन्योन्य	३-५-३०
दुष्टपौरजानपादो	७-१५-२४
दुष्टाः पशुमृगव्यालाः	२-२६-१४
दुष्टेषु संधि	७-१४-४

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
१–४–१२	दूषीविषं मदन	४–१–२२
१५–१–६६	देयं देशं न पृच्छति	४–९–१५
१२–२–२५	देवतं नारदं	१४–३–२०
१–१–१४	देवतागृहप्रवृष्ट	१२–५–३
५–२–५३	देवतादेहध्वज	१२–५–५
५–१–५३	देवताध्यक्षो	५–२–३८
१०–६–४९	देवपशुमृषभ	४–१३–२०
१०–३–१५	देवपितृपूजा	२–६–११
१०–५–२८	देवब्राह्मण तपस्विस्त्री	३–२०–२२
५–२–५५	देवरथ पुण्यरथ	२–३३–५
९–४–१३	देवोगृहे लीनो हि	१–२०–१५
५–१–५	देशकालकार्य	८–१–५०
५–१–१५	देशकालकार्यवशेन	१–१५–४९
५–१–३०	देशकालविदूर स्थान	३–११–१०
५–१–२१	देशकालातिपातने वा	३–१२–२६
५–१–१४	देशकालातिपातनेन	३–१४–१०
५–१–९	देशकालान्तरितानां	३–१२–३०
१२–४–१९	देशकालातिपत्तौ	३–१६–११
८–५–१८	देश कालातिपत्तौ	७–१८–११
७–१५–२५	देशग्रामजाति	१३–५–९
९–६–१	देशदैवतसमाज	१३–५–८
९–५–१९	देवपशुप्रतिमामनुष्य	४–१०–१६
५–२–२६	देशःपृथवी	९–१–१७
५–१–१२	देवराज बिहारयोः	८–४–२१
९–५–१५	देशविहारः कर्म	८–४–२३
९–६–८	देशस्य जात्याः	३–७–४०
७–२–१९	देशः श्रेयान् इत्येके	९–१–२८
१०–३–१४	'देहि' इत्यर्थना	२–१०–२९
१०–३–४	दैपतचैत्यं	५–२–३९
१३–४–५१	दैवतप्रतिमानाम्	१३–२–२७
७–८–३२	दैवतप्रश्नमित्ति	१३–१–९
६–२–३७	दैवतस्वस्तिवाचनेषु	७–१५–२८
७–८–७	दैवतसंयोगख्यापनं	१३–१–३
९–६–१	दैवतेज्यायां	१२–५–१
९–५–१४	दैवतोपहार	१२–५–४१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
दैवतोपहारश्राद्ध	७–१७–४४	द्रव्यभोगानाभागमं	३-१२-११
दैवप्रमाणो मानुष	७–११–३४	द्रव्यपुत्रस्य	३-५-९
दैवपीड़नम्	९–३–१	द्रव्यवनयोरपि	७-१२-३
दैवं मानुषं वा	८–१–२	द्रव्यहस्तिवन	७-११-१३
दैव मानुषं हि कर्म	६–२–७	द्रव्यहरितवनजीवं	२-३४-१२
दैवं सभेयं रक्तं	२–११–४७	द्रव्यस्त्रीलोलप	१३-२-४२
दैवादग्निरुदकं	९–७–८२	द्रव्यावामाधानं	३-२०-११
दैवान्यष्टोमहाभयानि	४–३–१	द्वयनः संवत्सरः	२-२०-६३
दोषशुद्धिर्वलावापः	८–५–१९	द्वयोरट्टालकयोर्मध्ये	२-३-११
दोषशुद्धौ हि	९–५–१८	द्वयोरपि पुरस्ताद्	७-१३-३५
ल्दोहनकालमति	२–२९–३३	द्वयोस्तु व्यसने	८-१-६२
दौवारिकान्तः	५–३–५	द्वयोर्द्वयोर्व्यसनयोः	८-२-२६
दौवारिकान्तर्वंशिक	५–६–२	द्वात्रिंशदङ्गुलं	२-३०-१४
दृष्टकारितं मानुषं	६–२–१०	द्वात्रिंशद्वलमासः	२-२०-५१
दृष्टदोषः	३–१–४६	द्वात्रिंशद्गुच्छः	२-११-११
दृष्टलिङ्गे मैथुना	३–३–१४	द्वात्रिंशद्भागस्तप्त	२-१९-४३
दृष्ट्वा लेखं यथा	२–१०–४५	द्वादशपणममुद्रो	२-३४-३
दृष्टान्तो दृष्टान्तयुक्तो	१५–१–४७	द्वादशराज प्रकृतया	६-२-२८
दृष्टा हि जीवितः	९–७–३६	द्वादशवर्षास्त्री	३-३-१
दृष्टेनादृष्टस्य	१५–१–२७	द्वादशाढ़कं पिस्टस्य	२-२५-१८
दृढवास्तुके वा रूपे	२–१४–३५	द्वादशाङ्गुला	२-२०-१०
दृश्यते ह्यचोरोऽपि	४–८–१२	द्वादशाङ्गुलाया	२-११-८०
दृश्यते हि दुर्गवताम्	८–१–४०	द्वाभ्यामुच्छिन्नो वा	७-२-२३
दृश्यमानेषु च	११–१–२६	द्वाभ्यांमन्त्रयमाणो	१-१५-३७
द्यूतकामंकापटिकै	१–१७–३७	द्वारादेयं शुल्कं	२-२२-८
द्यूतस्त्री व्यसनयोः	८–३–४७	द्वारे गृहस्य सेनायां	१४-३-७६
मद्ययोर्धूतम्	८–३–६२	द्वाश्यामुपहतो वा	७-२-२१
द्यूताध्यक्षो	३–१०–१	द्वाः स्थानां	२-३६-३२
द्यूताभियोगे जेतुः	३–२०–३	द्विकर्ष ही नातिरिक्ते	४-२-६
द्यूते तु जितमेवाक्ष	८–३–४१	द्विगुण पक्षस्थूणो	१०-६-१७
द्रव्यनाशः कोश	८–३–१९	द्विगुणप्रत्यासारा	१०-४-८
द्रव्यनाशाच्चत्रु वेदनं	८–३–१८	द्विगुणं महिषोष्ट्राणां	२-१५-४३
द्रव्यवनकर्मान्ताश्च	२–१७–२	द्विगुणं रसादीनां	२-१९-३७
द्रव्यवनच्छिदां च	२–१७–३	द्विगुण लोहां	२-१९-१७
द्रव्यभक्तच्छिद्रेषु	१३–१–१८	द्विगुणान्तरं	१०-५-४

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
७-१८-९	द्वौ मासवृतुः	२-२०-५४
२-२८-२३	द्वौ लवौ निमेषः	२-२०-३१
२-१५-३३	**ध**	
१४-३-५९	धर्मस्थं विश्वासोपगतं	४-४-६
२-२०-१५	धर्मस्थश्चेद्विवदमानं	४-९-१३
२-२९-३२	धर्मस्थश्चस्वामिन	३-१६-१२
१०-१-७	धर्मस्थीये चारके	४-९-२१
३-२-१२	धर्मस्थः प्रदेष्टा वा	४-९-१८
१४-३-३०	धर्मश्च व्यवहारश्च	३-१-३९
१४-३-३३	धर्मस्थास्त्रय	३-१-१
७-१८-२	धर्मंदानमसापुष्पु	३-१६-४
१४-३-५६	धर्मंमर्थंच	१२-२-२
१-१९-१०	धर्मं विवाहात्	३-४-३१
१-१९-१९	धर्मकामा	३-२-२७
२-२०-२४	धर्ममूलत्वात्	९-७-९
२-२०-२५	धर्ममर्थं च कामं	१५-१-७२
२-२०-३६	धर्माधिगतः पूर्वैः	६-१-१०
३-१५-१६	धर्मविसविथनः	२-३६-५
२-२०-४६	धर्माधर्मौत्रय्याम्	१-२-१९
२-२०-२२	धर्मार्थाविरोधेन	१५-१-२०
२-३०-५०	धातु समुत्थं तज्जात	२-१२-१८
२-२०-१२	धात्रीमाहितिकां वा	३-१३-११
१३-५-१	धारणिका संनिधाने	३-१२-१४
१-१९-३	धार्मिकाभियोगी	६-१३-१२
२-३-२३	धार्मिकं जातिकुल	९-६-२१
१०-५-५८	धामार्गवयातु	१४-१-६
८-३-१४	धान्य मूला हि	७-११-११
७-१-३	धान्य मूल्यं कोश	२-१५-४
७-२-४	धान्य पशुहिरण्यै	२-१-१३
६-६-३	धान्यभाषा दश	२-१९-२
७-२-५	धान्यषड्भागं	१-१३-६
८-२-५	धान्यस्नेहक्षार	२-१५-१२
२-२०-३०	धान्यरसलोहपण्याः	५-२-१९
१०-६-२१	धान्यशाकमूलफल	४-३-२०
२-३-२५	धान्यवृद्धिः	३-११-४

प्रतीकानि	अधि॰ अ॰ अङ्काः
धान्यस्नेहक्षार	४-२-२२
धान्वनवननिम्नः	१०-४-२
धान्ववनदुर्गं	१२-४-२७
धान्वनवनसंकट	१०-३-२४
धिगुक्त्यादिषु	१३-२-४६
ध्रुवं हि साक्षिभिः	३-११-४८
ध्वज मूलमतिक्रान्तानां	२-२१-१६
ध्वजमूलोपस्थितस्य	२-२१-७
ध्वजस्थानमेतद्	१-१७-१८

न

प्रतीकानि	अधि॰ अ॰ अङ्काः
न कंचिदवमन्येत	१-१५-२२
नक्षत्रमतिपृच्छन्तं	९-४-२६
नगरं वाऽस्य	१३-४-३२
नगराभ्यासे वा	१३-२-२१
न च तत्रारामा	२-१-३३
न च बाहिरिकान्कुर्यात्	२-४-३२
न च मध्यमोदासीन	१२-२-६
न च प्राकाम्यमकामायाम्	४-१२-५
न च प्राकम्यभकामायां	४-१२-१९
न च प्राक्रान्तं	३-१४-२४
न च प्राकाम्यमकामायां	४-१२-१३
न च हृतस्य	७-१६-२६
न चान्योन्यं	१-१२-१२
न चाऽभियुक्ते	३-१-२६
न चाकामः पुरुष	३-२-४
न चानर्घेणकालिकां	२-२५-७
न चात्मार्थं कंचिद्	५-६-४३
न चानिवेद्य	४-६-६
न चानिवेद्यभर्तुः	२-९-७
न चानिवेद्य भर्तुः	३-१४-१५
न चेदनुगृह्णीयात्	७-१८-८
न चेदनुगृह्णीयात्	७-१८-४
न चैनाः कुल्या	१-२०-१९
न चैकमकारणात्	३-५-१७

प्रतीकानि	अधि॰ अ॰ अङ्काः
न चैकपुत्रमविनीत	१-१७-५१
न चोत्तमां न चाकामां	४-१२-४०
नट नर्तकगायन	७-१७-३४
नट नर्तकगायन	२-१-३४
न त्वेव कुर्यात्	१-१०-१७
न त्वेव विद्यमाने	१३-४-२२
न त्वेवाभिप्रजातयोः	३-१४-१३
न त्वेवार्यस्य	३-१३-४
न दीर्घकालं मन्त्रयेत्	१-१५-४६
नदी दुर्गं तु	७-१०-३०
नदी दुर्गं हि	७-१०-३२
नदीपथे च विज्ञाय	२-१६-२५
नदीपर्वतदुर्गीयाभ्यां	७-१०-३१
नदीवेगज्वालास्तेन	३-१३-३५
नदीमातृकं हि	७-१२-७
नदीशैलवन	२-१-३
नदीसरस्तटाक	१२-४-२६
न दूषणमदुष्टस्य	१-१०-१८
न पुरुष सम्वाध	१-२१-२७
"न प्रयच्छामि"	२-१०-३०
न प्रातिभाव्यमन्यत्	३-११-१५
न भक्षयन्ति ये त्वर्थान्	२-९-३६
नमस्कृत्वाचमनवे	१४-३-२३
नमां परोनाहं	७-१-१५
नलतूलानल तूलवर्णा	२-११-९४
नवमवाप्य	१३-५-३
नवं शरावं सलिलस्य	१०-३-३१
नष्ट कोणं निरश्रि	२-११-४१
नष्टप्रस्मृतम्	२-६-२०
नष्टप्रस्मृवादि	२-१५-९
नष्ट विनष्टं वा	५-३-३
नष्टापहृतंच	२-१९-२५
नष्टा पहृतमनिवेद्य	३-१६-२०
'नव' विनष्टे	३-३-७
नवस्तु राजा	८-२-११

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
१-१७-३१	निक्षेपप्रयोगैरुपचितः	५-२-४७
१३-४-५	निक्षेपश्चोपनिधिना	३-१२-३३
१-४-६	निक्षेपापहारे पूर्वपदानं	३-१२-३५
८-४-५	निक्षेपोवनिधि	२-२५-६
१-८-२३	निष्क्रयानुरुपां	४-१२-२८
८-२-२०	निगूहतः फल्गु भाण्डं	२-२१-३१
२-१५-२२	निचयापसारसंपन्नं	७-१५-११
२-४-२८	नित्यमल्पभोगं	७-९-१७
३-२-२५	नित्यमल्पभोगं	७-९-१५
२-११-५४	नित्यमासन्नं	१५-१-५०
५-२-४३	नित्यमुदक स्थानम	२-३६-४३
७-१७-४५	नित्यमुख्याः स्युः	५-३-२७
४-३-४	नित्यं वश्यं लघूत्थानं	७-९-३८
२-२-१०	नित्यश्च कामेन	८-३-१२
२-२-७	नित्यश्च विद्या	१-५-११
२-११-१०८	नित्यश्च शत्रुरुप कृते	७-१०-१५
७-३-९	नित्यानन्तरंक्षिप्रो	९-२-१५
९-४-२७	नित्यानुषक्तो हि	७-१४-२२
३-१२-९	नित्यश्च कोपेन	८-३-१०
३-११-१९	नित्यामित्रालाभे	७-१०-१४
३-६-१३	नित्यो नित्यो त्यादिको	२-६-२३
३-१४-४	नित्यो हि हिरण्ययेन	७-९-२९
१५-१-३१	निन्दा प्रंशन्सा	२-१०-२३
३-१९-२	निर्दिष्टकालकार्यं	२-१४-२
३-१९-३	निर्दिष्ट कालायां	३-३-४
१४-२-४१	निर्दिष्टदेश कालकर्म	४-१-४
१-१९-६	निम्न योधिनो हि	७-१०-३५
२-२८-३९	निम्नं वा पांसु	१३-४-१०
२-१६-१२	निम्नस्थल योधिभ्यो	७-१०-२४
२-७-३८	निम्बकुशाम्रकपित्थ	२-१५-३९
३-१६-१७	निर्याविऽभियाने	१-२१-२६
४-६-९	नियुक्तः कर्मसु	५-५-१
३-१९-१८	नियोगविकल्पसमुत्त्ययै	७-१६-७
१-१५-६०	निरन्तर्येस्तेयं	३-१७-२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
निरन्तरयोगित्वात्	९-७-५५	नीराजनोपरुद्धं	२-३०-४६
निरवन्यते गृहे	१४-३-७४	नींवीमवलिखतो	२-७-३६
निरस्तस्य अवेशो	३-१०-१९	नृशंसमदुष्टवव:	१-१७-७
निरावाधकत्वात्	९-४-२१	नेति कौटिल्यः	१२-१-६
निराश्रयत्वाद्ग्रामाणां	२-१-३५	नेति कौटिल्यः	७-१२-२३
निरुत्साहस्तु प्रभाववान्	९-१-५	नेति कौटिल्यः	८-१-१२
निरुत्साहस्तु	७-११-२९	नेति कौटिल्यः	८-१-३०
निरुपकारः सोदेत्	३-१२-१०	नेति कौटिल्यः	८-१५-५
निविद्धंवाद	३-१-१९	नेति कौटिल्यः	८-३-११
निविष्टमस्य	१३-४-१९	नेति कौटिल्यः	८-२-१४
निविष्टांस्चावेसेत	३-१-१८	नेति कौटिल्यः	७-१५-१६
निवृत्तपरिहारान्	१५-१-२८	नेति कौटिल्यः	८-४-१०
निवृत्तपरिहारान्	२-१-१८	नेति कौटिल्यः	७-५-११
निवृत्तवृद्धिको	३-१२-१३	नेति कौटिल्यः	७-१३-३२
निवृत्तोत्साहं	९-६-२२	नेति कौटिल्यः	८-३-२७
निवेद्यपुत्ररक्षार्थं	५-६-४६	नेति कौटिल्य	८-१-२८
निवेशकालंहि	३-२-३२	नेति कौटिल्य	७-१२-१५
निवेशसमकालं	२-१-१७	नेति कौटिल्यः	७-१२-११
निवेशार्धंहस्तिनरवम्	२-३-२९	नेति कौटिल्यः	८-३-३४
निष्क्रमश्चतुर्विशति	२-२६-६	नेति कौटिल्यः	९-२-२२
निष्क्राम्यं प्रवेश्यं	२-२२-२	नेति कौटिल्यः	७-५-४
निष्कीर्णं मूत्र पुरीषं	४-७-२	नेति कौटिल्यः	७-१७-४
निष्किरादुपनिनिष्क्रष्य	१३-४-१२	नेति कौटिल्यः	७-४-१
निष्पतिताप्रेत	२-२७-२	नेति कौटिल्य	९-१-६
निष्पन्नेहृरितपवन्ना	५-२-१०	नेति कौटिल्यः	३-१९-२०
निष्प्रवानाहि	७-५-३६	नेति कौटिल्यः	३-१४-३
निष्पतितप्रेत	३-१३-८	नेति कौटिल्यः	१-४-७
निष्पत्तौनिक्षिपेद्वा	२-८-३२	नेति कौटिल्यः	१-१५-३२
निष्पन्तरसस्यमन्य निषपं	४-३-१९	नेति कौटिल्यः	७-९-११
निसृष्टिस्थापना	२-१०-४३	नेति कौटिल्यः	३-२०-५
निस्तत्रगुदाक्षं	४-७-५	नेति कौटिल्यः	७-९-२३
निस्त्रिंशमण्डलाग्रासि	२-१८-१२	नेति कौटिल्यः	७-९-४१
नीचत्वं परदेशं	२-२-४८	नेति कौटिल्यः	७-९-३२
नीता हि दक्षिणा	३-१४-३१	नेति कौटिल्यः	७-९-१४
नीराजनाभाद्रमुजे	२-३०-५१	नेति कौटिल्यः	८-४-३१

तीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कौटिल्यः	८-४-३५	“नैवम्” इति भारद्वाजः	५-६-२४
कौटिल्यः	८-४-१७	नैवम् इत्यपसारो	४-६-१२
कौटिल्यः	७-९-१९	नैषां करणपूर्वौ	३-१२-३७
कौटिल्यः	८-४-१४	नोपकुर्यादमित्रंवा	७-१८-३
कौटिल्यः	८-३-५८		
कौटिल्यः	८-३-५२	**प**	
कौटिल्यः	८-३-१०	पक्वेष्टकास्तम्भं	२-५-५
कौटिल्यः	७-९-२७	पक्वं पक्वमिवारामात्	५-२-७०
कौटिल्यः	८-४-३२	पक्षकक्षोरस्यानाम्	१०-६-३०
कौटिल्यः	३-११-४७	पक्षकक्षोरस्यैः	१०-६-२४
कौटिल्यः	९-१-३२	पक्षमाससंवत्सर	२-६-२५
कौटिल्यः	८-४-२५	पक्षकक्षोरस्यानाम्	१०-६-३४
कौटिल्यः	८-२-२२	पक्षकक्षोरस्यानां	१०-५-१७
कौटिल्यः	९-१-१३	पक्षानुमतौ	२-११-२७
कौटिल्यः	८-१-४६	पक्षाववस्थापि	१०-६-१२
कौटिल्यः	८-४-३	पक्षावुरस्यं	१०-६-१
कौटिल्यः	८-२-६	पक्षावुरस्यं	१५-१-४२
कौटिल्यः	८-१-२२	पक्षिभृगाणां	२-२६-४
कौटिल्यः	८-४-४२	पक्षे हीनो बन्धु	७-१४-१४
कौटिल्यः	७-११-१४	पक्षोकक्षोरस्यैः	१०-६-८
कौटिल्यः	८-३-४२	पक्षौकक्षावुरस्यं	१०-६-२
कौटिल्यः	८-४-२८	पङ्कविषमव्याधि	२-२९-१३
कौटिल्यः	७-१०-१३	पञ्चचत्वारिंशत्	१०-५-१३
कौटिल्यः	८-४-२२	पञ्चत्रिंशदश्ववाहायाः	२-२०-५२
कौणपदन्तः	८-४-६	पञ्चदशरथस्य	१०-५-१०
पिशुनः	१-८-१४	पञ्चदशमुहूर्तो	२-२०-३७
पिशुनः	१-८-११	पञ्चदशहस्तादेको	२-३-१७
भारद्वाजः	१-१५-२७	पञ्चदशाहोरात्राः	२-२०-४३
भारद्वाजः	८-१-६	पञ्चद्रोणे शालीनां	२-१५-४२
वातव्याधिः	८-३-८	पञ्चधनुः शतापकृष्टं	१०-५-१
पुत्रः	१-८-२०	पञ्चधनुरनीक	१०-५-८
रान्	१-८-२४	पञ्चनिमेषाः	२-२०-३२
मन्त्र सिद्धिः	६-२-३९	पञ्चपणिकं द्विपद	३-१६-२३
विग्रम्	१-१५-१८	पञ्चपलावरा	२-११-२२
	७-१-३१	पञ्चभागवृद्धिर्गोधूमः	३-१५-२८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
पञ्चभागवरो	२-३०-१७	पत्तनाध्यक्षनिवद्धं	२-२८-
पञ्चभागवृद्धिः	२-१५-३६	पत्तनानुवृत्तम्	२-२८-
पञ्चमेमन्त्रिपरषदा	१-१९-१३	पत्यश्वरथद्वियाना	१०-५-४
पञ्चकुष्ठकौण्डिन्यक	१४-१-२४	पतेषुराः	२-२८-
पञ्चत्रिंशत्पललोहां	२-१९-१२	पत्तश्वरथद्वियानां	१०-६-४
पञ्चविंशतिपणा	४-१०-२	पत्रमाश्लिष्टं यमक	२-१४-
पञ्चरात्रिकं	४-१-१९	पतिकुलान्निष्पत्य	३-४-१
पञ्चवर्षोपरत	३-९-३२	पतिकुलान्निष्पतितायाः	३-४-
पञ्चवर्षभंखराश्वानां	२-२९-४८	पतिगुरूप्रजा	४-११-११
पञ्चहस्तमाणिद्वारम्	२-२-२७	पतितः पतिताज्जातः	३-५-३०
पञ्चारत्नि धनुः	१०:५:६	पतिस्तु ग्राह्य	३-११-२
पञ्चाशद्भागो	२-१९-४४	पतिविप्रकाशत	३-४-
पणान्माषकमुपजोवितो	४-१-४७	पतिदायं विन्दमाना	३-२-२
पणमानः क्षय व्यय	७-८-२	पतिश्चेत्क्षमेत	४-१२-३
पणिकं वा प्रहारं	३-३-२९	पत्तिव्यूहः	१०-५-३
पणिक्पथेन हि	७-१४-२४	पत्तिबाहुल्यं	१०-१-२
पणितः कल्याणवुद्धि मन	७-७-१०	पत्यरथ्यस्वद्विपाः	५-३-३
पणितः कल्याण वुद्धि	७-७-१७	पत्यश्वरथ	५-३-११
पणितः कल्याण वुद्धि	७-७-२१	पथिकोत्पथिकाश्च	२-३६-११
पणितस्तस्यापकार	७-७-२५	पथिद्वैधीभावे	१०-२-१
पणितस्तस्यापकार	७-७-३०	पथि प्रमाणं	३-१०-
पणितस्तस्यापकार	७-७-१२	पथिव्याधिकर्ममद	२-३१-१
पणितस्तस्यापकार	७-७-८	पथि व्यन्तरे	३-४-२
पणितस्तस्यापकार	७-७-८	पथिभक्तमर्घ	३-१-२
पणितस्तस्यापकार	७-७-१९	पदसमूहो वाक्यामर्थं	३-१०-२
पणोऽध्यर्घ पणश्च	२-२२-१४	पदावधिकः	१५-१-१
पण्य व्यवहारो	२-८-८	पर कर्मोदयो	७-१२-२
पण्यसंपातं	१३-४-३८	परकुडचमुदकेन	३-८-२
पण्यवाहुल्यात्	४-२-३३	परकुड्यभभिघातेन	३-१९-२
पण्यं कुर्यादसिद्धवा	७-६-३६	परगृहाभिगमने	४-१३-
पण्यानामदेशकाल	२-३६-७	परचक्राटवीग्रस्तं	२-१-३
पण्याधिष्ठातारः	२-१६-१४	परचक्राटवीभयाद्	२-२९-
पण्याध्यक्षःस्थल	२-१६-१	परचक्रातविकाभ्याँ	३-१३-
पण्योपघातेचैव।	४-२-३२	परचक्राटवीहता	४-१२-३
पत्तयः पक्षयोः	१०-५-३८	परचक्राटवीहृतम्	३-१६-

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
३-१३-२	परस्पर साधका	९-७-७१
३-७-१४	परस्पराद्वाभेदयेत्	१-१३-१८
१३-४-५३	परस्परं द्वेषान्मोक्षः	३-३-१६
१३-४-५२	परस्माद्धीययानाः	७-१-१३
२-२९-१९	परस्यचैतेवोद्धव्याः	१-१२-२४
३-२-१५	परस्य चैनान्	९-३-३५
२-६-१	परस्य चैतद्	९-२-१२
२-२९-१७	परस्यान्तरुच्छेदनम्	९-७-१७
१२-५-१७	परस्यमुख्यान्	१३-१-११
४-८-२२	परस्यभार्यां	२-२८-२०
३-४-७	परस्यापसंधेमता	७-६-२१
२-१६-११	परस्य विषमे	१३-१-८
२-३५-१२	परस्यवाचिवक्त्रे	१-१६-१२
१०-३-४९	परस्यैत दूवाक्यम्	१-१६-१६
५-६-१९	पराक्रमो हि	१२-१-४
१-११-२	पराधिष्ठानमनुज्ञातः	१-१६-१
२-६-१९	परात्संक्रायपेत्	५-४-१५
७-१४-२८	परानीकस्य प्रत्यतीकं	७-७-१६
९-६-१२	परानीकव्यूहदुर्गं	२-२-१४
४-१२-१२	परावापात्प्रत्याघात्	१७-५-२९
१-१-१६	परार्पणं संश्रयः	७-१-१०
४-१-१६	पराजितश्चेदद्विगुण	३-२०-६
१५-१-४१	परावृत्ते दिवसे	२-२०-४०
३-१६-२८	पराध्यर्नांपणो	४-१-२२
२-१६-१८	पराक्रीतः क्रीतः	३-७-१८
९-६-४	परिगृहीतां दासीमं	४-९-२४
७-३-१७	परिभवोद्रव्यनाशः	८-३-१५
२-१८-१४	परिभाषणमविज्ञाते	२-५-१९
४-१२-७	परिव्राजकस्य	१-३-१२
५-२-१३	परिशूनमशिरः	२-२६-१२
३-११-३३	परिक्षणो वा	१२-५-३५
९-६-२६	परिक्षीणः	१-१४-४
९-६-७२	परिचारकच्छशना	७-१७-४१
९-१-३३	परिवर्तने निष्पातन	३-१२-७
९-५-२८	परिव्राजिका लब्ध	१-१०-७

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
परिभवोपघात	७-१७-२२	पश्चान्निविष्टं	३-९-२१
परिभूतः स्वैः	८-३-१७	पश्चात् बन्धने	२-१४-२५
परिभाणोद्रोण	४-२-३	पश्चिमं चैनां	३-१-१६
परिश्रान्तपरिक्षीणयो	८-५-५	पाक्वमांसिको	१२-४-८
परुषा श्वेतप्राया	२-११-७९	पाखण्डच्छद्मवा	१२-५-३८
परुषाकदली	२-११-८५	पाषण्डचण्डालानां	२-४-२३
परे परेभ्यः स्वे	८-३-४२	पाञ्चालिक देवदण्ड	२-१८-६
परेण चोक्तः स्वासां	१-१६-२७	पाठालोध्रतेजो	२-२५-१७
परेणाभियुक्तोवा	५-६-२२	पातभित्वाऽपक्रमतो	३-११-३
परेषु वलित्वं	१-१६-१९	पातैः पुरुषकाराणां	७-५-२४
परोक्तदण्डः	३-१-२०	पादहीनं षडवानां	२-३०-२३
परोक्षेणाविकर्ण	३-१-६	पादः पञ्चछतीनां	२-३६-१८
परोपगृहीताना	१३-५-१६	पादगुणहीनः	१-१६-३
परोपदिष्टं परोक्षम्	१-९-६	पादधिकोज्येष्ठः	२-२५-२०
परोद्वेगकारणाद्वा	७-१६-२५	पादावरमेतन्	२-३०-२०
पर्वतानामभिज्ञातो	१-१२-२	पादवस्त्रहस्तकेश	३-१९-५
पर्वतान्तर्द्विपाश्च	८-१-३१	पादनंस्त्रीणां	२-१५-४५
पर्वसुचवित्तर्दिच्छ	४-३-४१	पादोना कलायचमसी	२-१५-२१
पर्वसुच पर्वत पूजा	४-३-३३	पादोनमश्वतर	२-२९-४४
पर्वसुच नदी पूजा	४-३-१०	पानं मानीयं चौषधेन	१-२१-११
पर्वसुचमूषिकपूजाः	४-३-२६	पान संपत्	ल-३-६१
पर्वसुच नागपूजा	४-३-३८	पानागाराण्यनेक	२-२५-११
पर्युषितः कलहो	३-१९-१७	पानागारेषु वा	२-२५-५
पत्नहीनातिरिक्ते	४-२-४	पाने तु शब्दादीनाम्	८-३-५७
पत्नहीनोहीनद्विगुणो	४-१-३७	पारग्रामिकं वा	१-१८-१०
प्लवमानानामस्पिषु	१४-३-३७	पारसमुद्रकं	२-११-५१
पशवो रश्मि	३-१०-३२	पारावतप्लवक	१४-१-३३
पशुमृगद्रव्य	१-६-५	पारिभद्रक	१४-२-१०
पशुविक्रेता प्रादिकं	२-२९-३०	पारिभद्रकत्व	१४-२-२१
पशुप्रचारार्थं	३-१०-२१	पारिभद्रकप्रतिवल	१४-२-२७
पशुव्याधिमरके	४-३-१६	पारुष्यस्तेय	३-११-२०
पश्चादेवं विहितम्	१५-१-४९	पार्वतं तु स्वारक्षं	७-१०-३३
पश्चिम दक्षिणंभागं	२-४-१२	पार्वतं वन दुर्गं	१०-२-२०
पश्चिममितिहास	१-५-१३	वालिनामधेदण्डाः	३-१०-२७
पश्चात्प्रतिज्ञाते	२-७-४०	पाशजालकूटावपातेषु	४-१०-३

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
१०–४–९	पिप्पली मरिचशृङ्गि	१–१५–२०
७–२–१६	पियङ्गुणामधंसारो	२–१५–२६
७–१३–२३	पिष्टमामंकुल्याषाश्च	२–१५–२३
१०–३–१३	पीडनानुत्पत्तौ	८–४–५०
१–१८–९	पीडनीयोच्छेदनीययोः	७–१०–२६
५–२–३७	पीतकास्ताम्रकास्ताम्र	१–१२–५
७–१३–३७	पीतिका तागवृक्षिका	२–११–१०९
७–१६–१६	पीलुत्वङ्नषीमयः	१०–२–२२
१२–३–१८	पीलुमयोमणिः	१४–२–३४
७–१३–२९	पुण्ये कर्मणि	१–१८–२
६–१३–२२	पुण्यशीलाः	२–३६–४५
७–१३–२४	पुण्य स्थानोदक	२–३६–२८
७–१३–४८	पुत्रत्वेऽधिकृतः	३–७–१७
२–३६–२६	पुत्रदारमप्रतिविधाय	२–१–२९
२–३–६	पुत्रं भ्रातरमन्यं	९–३–१५
२–११–९९	पुत्र रक्षणं तु	१–१७–३
२–१५–३	पुत्रयोरपियो	७–१७–१८
२–११–७१	पुत्र भरणार्थं वा	३–२–३०
१–१७–३९	पुत्रभ्रातृवन्धूषु	९–७–६८
८–२–७	पुत्रिका पुत्रान्	१–१७–४९
३–५–१८	पुत्रवतीधर्मकामां	३–२–४५
३–६–६	पुत्रवती विन्दमाना	३–२–२८
४–१२–४	पुत्र सर्वंस्वदाने	७–१७–२८
२–५–४	पुत्रार्थी हि	३–३–४२
४–१२–११	पुनरपराधे द्विगुणं	४–९–१६
३–२०–१८	पुनरावर्तमानस्य	१०–३–५७
६–१–१२	पुनर्भूतायाः	३–७–१२
६–१–११	पुवर्नवमवाचीनं	१४–३–७३
१–८–१६	पुनर्नवमवाचीनं	१४–३–७५
३–५–१५	पुनः स्वेषे प्रवासनन्	३–१४–२६
३–२–१०	पुरस्तल्लाभे सेना	९–३–७
१०–३–२९	पुरस्तादस्याघाते	१०–२–९
१–३१–२	पुरस्तायुपस्थानम्	१०–१–४
३–५–१२	पुरस्नाद्विषमायां	१०–३–११
१३–५–२३	पुरस्तादभिहम्	१०–३–७

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
पुरल्तादेव	१५-१-६१	पूतिकरञ्जपत्र	१४-१-११
पुरस्तायध्वनः	१०-१-१७	पूति कीटमत्स्य	१४-१-१०
पुरस्तान्नायकः	१०-२-४	पूजिताश्चार्थमान	१-११-२२
पुरस्तादलङ्कार	१-२०-१२	पूज्याविद्या बुद्धि	३-२०-२३
पुराणमितिवृत्तम्	१-२-१४	पूज्यपूजनेदूष्य	८-१-२५
पुराणचोर गोपाल	४-५-१५	पूर्वः पूर्वश्चास्य	९-६-४६
पुराणचोरव्यञ्जना	४-५-१२	पूर्वं भङ्गप्रदानेन	१०-३-६
पुराणचोरव्यञ्जनाः	२-३५-१४	पूर्वकृतापवाय	४-८-२६
पुराण प्रति संस्कारं	२-११-११७	पूर्वं पूर्वं चैथां	९-२-१३
पुराणां ग्रामाणां	५-१-४३	पूर्वं सिद्धं पश्चादव	२-८-२१
पुरुषभृतिरष्टांशः	३-१-२२	पूर्वं पश्चाद्वा	३-११-२१
पुरुषवद्धिराज्यम्	७-११-२४	पूर्वं प्रणिहिता वा	२-१४-२४
पुतुषमवन्धनीयं	३-२०-१९	पूर्वप्रनिहिता	१३-४-४२
पुरुष संघि याचते	१२-१-२६	पूर्वमहर्मागं	१-५-१२
पुरुष मुक्तो हि तेजस्वौ	८-३-२५	पूर्वयोः पञ्चपत्रिकः	२-१९-२४
पुरुष विप्रकाराद्वा	३-३-१८	पूर्वच्चगृहीत्वैनान्	४-५-१८
पुरुषभोगं हिरण्य भोगं	७-९-२६	पूर्वानुवृत्तम्	३-१०-२
पुरुषं चापराधं	४-१९-१७	पूर्वां-पूर्वां विजानीयात्	९-५-३२
पुरुषं घ्नत्याः	२-२७-२२	पूर्वाह्णे व्यायाम	३-३१-६
पुरुषाधिष्ठितश्च	१-१८-३	पूर्वागतो वा	३-१६-३१
पुरुषापराधविशेषेण	३-२०-२०	पूर्वे च प्रहरणकालाः	१०-३-२१
पुरुषोपस्थाने	३-१४-२०	पूर्वेणपश्चिमस्यानु	२-१०-४१
पुरुषोपकरणहीना	२-२८-२६	पूर्वोत्तरार्थ	३-१-४०
पुरोपवनस्पतीनां	३-१९-२८	पृच्छयं न पृच्छति	४-९-१४
पुरोयानमक्रत	१०-४-१४	पृथग्वा सहयाने	८-५-२४
पुरोहितपुरुषाः	१०-३-४४	पृथुशिलासंहतं ना	२-३-८
पुरोहित मुदितो	१-९-९	पृथग्भूतोमिथ्यावादी	२-७-२३
पुरोहितमयाज्य	१-१०-२	पृथिव्यालाभे पालने	१-११-५
पुष्पफलवाह	१-६-५	पृथिव्यामाभे	१५-१-४
पुष्पफलवाटेभ्यः	२-२२-११	पृषतकाचकर्मणः	२-१३-४३
पुष्पफलशाक	२-२२-४	पृषतन कुल	१४-४-३
पुष्पफलशाकमूल	३-१७-६	पृष्ठतो विषमायां	१०-३-१२
पुष्पफलच्छायावद्	३-१९-२९	पृष्ठतः कक्ष्या	१-२०-१०
पुंस पूर्वः	३-४-१८	पृष्ठतोऽग्निहृत्य	१०-३-८
पूर्णकद्वीपकं पद्मगन्धि	२-११-६५	पेक्षायामनंशदः	३-१-३०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
पदेशेन पृषतं	२–१४–४५	प्रजानां दोषबाहुल्या	३–१७–१६
कं श्यामं	२–१–१०३	प्रज्ञातः कूटरूपकारक	४–४–२१
ध्यक्षः	२–१९–२१	प्रज्ञापयतो यथोपघातं	२–८–२५
गिकस्त्वन्यः	३–७–२९	प्रज्ञापनाज्ञापरि	२–१–३८
र्षिकं	४–१–५४	प्रज्ञाशास्त्रचक्षुर्हि	९–१–१५
कुमाराः	४–१२–१५	पञ्चसंवत्सरो	२–२०–६४
वकयाधि	३–९–३६	प्रणिपातेन ब्राह्मणबलं	९–२–२२
राणां	२–२४–३२	प्रणाली मोक्षो वर्षति	३–८–२३
युद्धं निर्दिष्टे	७–६–४०	प्रतिकुष्टातिक्रमे	३–९–९
द्वार	१३–३–४७	प्रतिक्रेतृभयाद्वा	२–२१–१३
रान्तरेण	१५–१–३४	प्रतिग्रहग्रहण	७–१७–१४
कूटतुष्णीं	७–१६–८	प्रतिपन्नं ब्रूयात्	१३–२–४
र्यमल्यं	३–८–१६	प्रतिपन्नस्याभरणमादाय	५–१–११
कः प्रकीर्णो	२–३०–३५	प्रतिपन्नं चैत्यस्थाने	५–२–६०
पिकावर्जनि	१०–५–५४	प्रतिपन्नं राजा रहसि	५–१–१६
मुल्यप्रग्रहैस्तु	७–५–३७	प्रतिपन्नं यथोक्तम्	१३–४–४३
तिसंपदः	१–१–८	प्रतिपन्नमभिसत्कृत्य	१३–३–१८
तिभिरूप	१३–५–२१	प्रतिपन्नं विश्वं	१३–३–१९
ति कोपकमघ	५–६–३२	प्रतिपन्नमर्थेन	७–८–३
राजदिवादयोः	८–४–१६	प्रतिपन्नेसंरोद्धो	१३–४–३६
तिव्यसनवर्गः	१–१–१०	प्रतिपन्नमुभयतः	१३–४–३१
विरुद्धः	८–२–१८	प्रतिपन्नान्	११–१–४३
वयवानां	८–१–६१	प्रतिपन्नामिष्टाभि	९–३–२९
पवादे	३–१८–७	प्रतिपन्नानर्थं	१३–१–१७
वृद्धिः	३–११–५	प्रतिपन्नं	१३–२–३४
पं यण्यनिष्पत्ति	४–२–३६	प्रतिपन्नं राजा	११–१–३२
नुपश्चा	३–१३–१६	प्रतिपन्नं ब्रूयात्	१३–२–१०
समं महामात्राः	२–७–२४	प्रतिपन्ने हिरण्यं	१२–५–२४
समृद्धिः	२–८–३	प्रतिपन्नेषु	११–१–२३
चरित्र	२–७–१०	प्रतिविज्ञपिदुर्वा	९–५–२२
रे चावघोषयेत्	३–८–२४	प्रतिपन्नं कर्मणि रसेन	५–१–३४
वणे	३–१०–३८	प्रतिपन्नं गहनम्	१३–२–४०
विक्रयमूल्य	४–१–२७	प्रतिपन्नेदूष्यान्	१२–३–१३
मुखे सुखम्	१–१९–३४	प्रतिपन्नं रात्रौ	१३–२–४३
गाः	१–१७–२६	प्रतिपन्नं पूर्ववदाचरेत्	१३–४–४९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्का:	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्का:
प्रतिमानान्योमयानि	२-१९-१०	प्रत्युत्पन्ने वा	१२-५-४१
प्रतिमुक्तस्वधा	३-६-४	प्रथमसप्तमावष्ट	३-३१-५
प्रतिरोधकाः प्रमत्तस्य	८-३-४३	प्रथमनेजने चतुर्भाग	४-१-२३
प्रतिरोधकाऽविक्रयो	८-३-४१	प्रथमाप्रकृतिः	१५-१-५२
प्रतिलोमेन साधनं	१५-१-३६	प्रथमे रात्रिभागे	१-१९-१८
प्रतिलोममुपांशूनां	७-१६-१८	प्रथमे पुरस्तात्	१०-१-६
प्रतिलेपिनारसेन	२-१३-५६	पथिकोत्पथिकाः	२-२१-१७
प्रतिविहिता	३-४-२५	प्रदिष्टाभयस्थावर	२-२-२
प्रतिवेशगृहाति	३-४-३	प्रदीपः सर्वं विद्यानम्	१-२-१२
प्रतिषेधेऽर्घ	३-४-२०	प्रदीप्तमनभिधावतो	२-३६-२३
प्रतिविद्धायां	३-४-२	प्रदेष्टारस्त्रयः	४-१-१
प्रतिविद्धाः स्याल	३-११-२८	प्रधानाभावे	७-१४-१०
प्रतिषिद्धस्य च वसतः	३-८-२४	प्रनष्ट सेतुभोगं	३-९-१४
प्रतिषेद्धव्यं	१५-१-५३	प्रपक्षकक्षोरस्या	१०-६-३
प्रतिषिद्धा स्त्री	३-३-२०	प्राप्तेऽर्घेवाऽर्घान्तिरं	२-१६-३
प्रतिषिद्धयोः	३-३-३०	प्रभावहीनः	७-१४-१८
प्रतिषिद्धे वा नयतः	३-४-२३	प्रभावमन्त्रयोः	९-१-१०
प्रतिषिद्धानां	३-४-५	प्रभाववानुत्साह	९-१-७
प्रतिष्ठितेऽह्नि	१-१९-१७	प्रभूत गुणवत्	१३-४-८
प्रतिसूर्यवातं	१०-३-२३	प्रभूताभियोगादल्य	२-८-३०
प्रतिहतविक्रमं	९-३-२७	प्रभूतं में भृतबलं	९-२-३
प्रतिहतहताग्रवेगयोः	८-५-६	प्रभूतं में श्रेणीबलं	९-२-४
प्रतीतशब्दप्रयोगः	२-१०-१२	प्रभूतं में शत्रुबलं	९-२-६
प्रत्यक्षपरोक्षानुमेया	१-१५-१९	प्रभूतं में मित्रबलं	९-२-५
प्रत्यक्षपरोक्षानुमेया	१-९-४	प्रभूत हिरण्य हेतोः	५-२-६३
पत्तयोऽश्वा	१०-६-४०	प्रभूतप्रभावह	९-१-८
प्रत्याख्यानेसुचिः	१-१०-१२	प्रमदवनविहाराणाम्	१२-४-४७
प्रत्याख्याने सुचिः	१-१०-६	प्रमादस्थानेषु	२-९-८
प्रत्याख्यानेसुचिः	१-१०८	प्रमादं याति	१३-२-४०
प्रत्याख्याने सुचिः	१०-१-४	प्रमादावस्कन्न	५-२-९
प्रत्यन्ते हस्तिवन	२-२-६	प्रमादाद्दीप्तेषु	२-३६-२४
प्रत्यापत्तेर्हि तदेव	१-१७-१३	प्रमादादम्यावहेयुः	२-२९-१४
प्रत्यासन्नेवा	१२-५-९	प्रमाद्यन्तम्	१-१९-२
प्रत्यासन्नो वा दूष्यस्य	५-२-६८	प्रम्रियमाणे वा	५-६-२५
प्रत्यासन्नो वा	१२-३-१२	प्रयासवधान्	८-२-२५

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
७–१६–२०	प्रतारेणगभँपातयत	४–११–६
१–१६–३०	प्रहवणेषु चैषां	३–१०–४४
३–१२–१२	प्रहवणनिमित्तम्	१–१०–९
२–३०–२९	प्राकारमध्ये	२–३–३२
१–१२–४	प्राकारमुभयतोः	२–३–१६
२–२४–२५	प्राकारसमं मुखमवस्थाप्य	२–३–३१
२–११–४	प्रागेव मरणाबाध	५–६–२
२–४–६	प्राज्ञ शूरयोः	७–१७–२३
२–२२–३	प्रातिभाव्यं दण्ड	३–१६–९
७–३–२२	प्रातिवेधनिकं	२–१९–४२
२–२६–३	प्रातिवेशिकभिक्षुक	३–४–४
४–१३–३६	प्रातिलोम्येन	९–७–५२
१–११–४	प्रादीपिकोऽग्निना	२–३६–२५
३–१६–४२	प्राप्तफलां प्रकुर्वंतो	४–१२–३
३–१५–४०	प्राप्तव्यवहाराणां	३–५–१९
९–४–२२	प्राप्ताधिकारां	२–२७–१६
२–२४–३०	प्रायशश्चाचार्याः	९–१–४२
४–९–१०	प्रायशश्च कोपवशा	८–३–७
११–१–३८	प्रायशो हि कितवाः	३–२०–७
४–१२–२४	प्रियङ्गुनक्त	१४–४–६
४–९–११	प्रियङ्गुमञ्जिष्ठा	१४–४–९
३–९–१९	प्रियमेकपुत्रम्	१–१७–४१
३–२–८	प्रियं परस्य वा रक्ष्यं	७–९–४६
२–२५–३१	प्रियालचूर्णम	१३–४–१९
४–११–७	प्रियो यस्य भवेद्	७–२–२५
१३–४–७	प्रिष्टः प्रियहितं	५–४–१२
७–१८–३२	प्रेतनिर्मालिका	१४–३–७८
१४–३–३८	प्रेतविण्मूत्रोच्छिष्ट	३–१३–९
३–३६–११	प्रेतव्यञ्जनो वा	१२–५–३९
२–३५–१०	प्रेतं व्यसनगतं	३–१२–५
२–१५–५७	प्रेतव्याधिव्यसन	३–४–१३
४–५–५	प्रेतव्यञ्जनो वा	७–१७–५१
२–१०–८	प्रेतं वा स्त्रीविषेण	७–१७–५२
९–२–२४	प्रेतव्याधितसूतिका	५–३–३०
४–११–२२	प्रेतस्य पुत्राः	३–११–१४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
प्रेतस्य व्यसनिनो	३-१-३४
प्रेषणं सन्धिपालत्वम्	१-१६-९
प्रेयकं नील पीतश्वेत	२-११-७५
प्रोषितपतिकाम	४-१२-३०

फ

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
फलदानेन भूमीनां	७-३-३४
फलभूयस्त्वेन	७-१४-५
फल्गुद्रव्यकर्मान्तेभ्यः	४-९-३
फल्गुबलावच्छन्न	१०-३-१७
फल्गुबलमन्ते	१०-५-४५
फाणितगुडमत्स्य	२-१५-१४
फाणितः पञ्चपलिकः	२-२५-३३
फेनीघातो वल्लीफलानां	२-२४-२२

ब

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
बन्धुमुख्य प्रग्रह	७-१७-११
बलवन्तमन्यायवृत्ति	७-५-१६
बलवन्तमन्यायवृत्ति	७-५-१७
बलवान् वा राजा	९-३-८
बलवतश्चानभिजातस्य	८-२-२४
बलवत्सामन्तां	९-७-११
बलिं वैरोचनं	१४-३-१९
बलिं वैरोचनं	१४-३-४३
बलीयसाऽभियुक्तो	१२-१-१
बलीवर्दानां	२-१५-५१
ब्रह्मसोमारण्य	३-९-२६
बह्वा बार्धा वा	५-६-९
बहिरन्तश्च कर्मान्ताः	२-१७-१७
बहिः परिखाया	२-४-२०
बहिरधिश्रयणं	२-३६-१७
बह्वेकपुत्रयोः	७-१७-२७
बहुपुरुष प्रजानां	३-२-३१
बहुलारक्षं यन्त्रैः	१३-४-११
बहुलीभूते	१२-३-२
बहुपुत्रः प्रत्यन्तम्	१०-१७-४२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
बहुलीभूते तीक्ष्णः	१२-२-
बहुहलपरिक्रुष्टायां	२-२
बहूनां कन्यापहारिणां	४-१२-
बहूनामेकामधिपरतां	४-१३-
बहूनामेकसंरोध	१-१७-
बहूनामेकस्यां	१२-२-
बर्षाविग्रहे	४-३-
बालाधिष्ठितमपुरुषं	४-१३-
बालिशज्जातीयो वा	३-१२-
बालिश्यादभियोक्तुर्वा	२-११-
बालिश्याद्वा	३-११-
बालेयातरि यानस्थः	४-१३-
बाह्यमाभ्यन्तरं	२-२
बाह्यतोलुब्धक	१-१-
बिम्बविहारमृग	४-१
बिपर्यये कार्मिकस्य	२-७-
बुद्धिमानाहार्यं	१-१७-
बृद्धस्तु व्याधितो	१-१७-
बैरं वा परैः	७-१४-
ब्राह्मणं तमः प्रवेशयेत्	४-११-
ब्राह्मणक्षत्रिययो	३-७-
ब्राह्मणस्य प्रेतकार्ये	१४-३-
ब्राह्मणक्षत्रियवैश्य	९-२-
ब्राह्मणं पापकर्माणं	४-५-
ब्राह्मणतश्चैषां	३-१०-
ब्राह्मणमपेयमभक्ष्यं	४-१३-
ब्राह्मणस्य सत्त्रिपरिग्रहः	४-८-
ब्राह्मण्यामगुप्तायां	४-१३-
ब्राह्मणोदकुम्भाग्नि	३-११-
ब्राह्मणस्यानन्तरा	३-६-
ब्राह्मणानां तु	३-६-
ब्राह्मणमधीयानम्	३-४-
ब्राह्मणेभ्यश्च	१०-३-
ब्राह्मैन्द्रयाम्य	२-४-
ब्रूयाच्चैनम्	१३-२-

	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
	२-२९-६	भिन्नेषु प्रधानम्	७-१४-३
	९-२-१३	भिन्नेष्वन्यतमं	९-६-४९
		भिन्नेष्वन्यतम	७-१४-९
भ		भिषग्भैषज्या	१-२१-१०
	५-६-३७	भिषजः प्राणावाधिक	४-१-५६
	९-४-१८	भीरुं वा प्रतिघातेन	९-६-२७
	१-८-१२	भुञ्जीत स्त्रियमन्येषां	४-१२-३९
	२-७-३७	भूतपूर्वमभूतपूर्वं	२-१-१
	३-१०-२३	भूतपूर्वे येन	१३-५-२२
	२-१४-५०	भूमिगुणानाम्	७-११-२२
	१४-१-२७	भूमिद्रव्यहरणेन	१२-१-१३
	१४-३-२२	भूमिद्रव्यकन्यादान	७-१६-६
	३-३-१२	भूमिद्रव्यपुत्र	१२-१-१५
	३-१०-४०	भूमितृणोदक	२-२९-३७
	२-११-६६	भूमीनाभात्तसाराणां	७-३-३३
	३-३-३	भूमिलाभं शत्रु	७-१०-४
	७-६-३१	भूमिवासवन	१०-४-१३
	१४-१-३०	भूमिसंधिं याचेत	१२-१-३०
	२२-३-१८	भूमौ चैषां	११-१-१७
	१२-२-२१	भूम्यनन्तरः	६-२-१९
	२-१२-१२	भूम्येकदेशत्यागेन	७-३-३२
	१२-२-२०	भूम्येकान्तरं प्रकृति	६-२-२०
	१४-१-२५	भूमश्च वक्ष्यामः	१३-१-१५
	४-१३-५	भूमो वा याचितः	७-७-२३
	५-२-११	भृतकल्पमशोणितं	३-१९-१३
	५-१-१९	भृत्येन मित्रेण वा	७-६-२२
	१-१२-१३	भेदं वा ब्रूयात्	७-१४-२
	५-१-५०	भेदमुभयोर्वा	७-२-१५
	११-१-५२	भेदं वाऽस्य	१३-३-३८
	३-३-१३	भेदस्त्रिगुण	९-६-६
	८-५-१८	भेदोपादानानि	१-१-१३
	११-१-१६	भैषज्यव्याधिभय	२-३६-२९
	७-११-१९	भोगं गृहीत्वा	२-२७-२०
	७-११-१८	भोगं दायमयं	२-२७-१०
	२-२१-५	भ्रेषोपनिपाताभ्यां	३-१२-२३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्का:
म	
मङ्गल्येवाहृदे	१३-२-२३
मणयो रुप्यं सुवर्णं वा	२-१४-४१
मणिः कौटोभालेयकः	२-११-२८
मणिमध्यं वा	२-११-२६
मणिमध्योऽर्घमाणवकः	२-११-१
मण्डलं वा प्रोत्साहयेत्	७-१८-६
मण्डलस्य चानुग्राह्यो	७-३-१२
मण्डलस्याभावे	१३-४-५८
मण्डूककुलीरादीनां	१४-२-२५
मण्डूकवसादिग्धो	१४-२-२३
मतिकर्मसुपृष्ठः	५-४-६
मत्स्यग्राहविशुद्ध	१-२१-२१
मत्स्यपरम्परा	१४-१-३२
मत्स्यबन्धकाः	२-२८-३
मत्स्यह्यवहरित	१४-२-२३
मत्स्यानामुदरेषु	१३-४-१७
मत्स्या यथान्तःसलिले	२-९-३३
मन्दापराधं बालं	४-८-१४
मदाद्दम्भोद्भवो	१-६-९
मदेन हस्तवधः	४-११-४
मद्यकामं योगयानेन	१-१७-३६
मद्यभोजनफेलाभिः	१३-२-४९
मधुकनिर्यूह युक्ता	२-२५-२८
मधुमधुकमजापयः	२-१२-१०
मध्यमचरितेन	७-१८-२६
मध्यमं त्वनुगृह्णतोः	७-८-२०
मध्यमंत्वरिविजग्रीषु	७-१३-२६
मध्यमभोरहनश्च	२-३६-१६
मध्यमश्चेत्	७-१८-५
मध्यमश्चेत् स्वमित्रं	७-१८-२०
मध्यमश्चेदनुगृहीतो	७-८-२२
मध्यमसम	२-३०-२२
मध्यमस्य पुरुषस्य	२-२०-७

प्रतीकानि	अधि० अ०
मध्यमस्य प्रहिणुयात्	
मध्यमस्यात्मा	
मध्यमस्योत्तरे	
मध्यमोदासीनयोः	
मध्यमोदासीनयोः	
मध्यमोदासीनयोः	
मध्यस्थायिनं वा	
मध्यस्थायिनि लब्धे	
मध्ये चान्ते च स्थान	
मध्ये भित्वा	
मध्ये ह्युपहितः	
मनुष्यकरं वा वृक्षे	
मनुष्याणां	
मनुष्याणामक्षमात्रम्	
मन्त्रसाध्यत्वात्	
मन्त्रशक्तिहीनः	
मन्त्रशक्तिसम्पन्नो	
मन्त्रशक्तिः श्रेयसी	
मन्त्रयमाणो हि	
मन्त्रभैषज्यसंयुक्ता	
मन्त्रभेदो हि	
मन्त्रभेदो ह्ययोग	
मन्त्रपूर्वाः	
मन्त्रकर्म चास्य	
मन्त्राधिकादेऽपि	
मन्त्रिपरिषदं	
मन्त्रिभिस्त्रिभिः	
मन्त्री चैषां वृत्तिकर्म	
मन्त्रिणमपि हि	
मन्त्रिणामुपदेशात्	
मन्त्रिणो हि	
मन्त्रिपुरोहित	
मन्त्रिपरिषदं	
मन्त्रिपुरोहितसेना	
मन्त्रिपुरोहित सेनापति	

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
मन्त्रिपुरोहिताभ्याम्	१०-३-३२	मार्गादेशिकाम्	९-२-८
मन्त्रिपुरोहितादि	८-१-१३	माघः फाल्गुनश्च	२-२०-५८
मन्त्र्यादिवर्ज्यानाम्	९-३-२०	मार्जकरक्षकधरक	२-१५-६३
मन्त्रो मन्त्रफलावाप्तिः	८-१-८	मार्जारश्वनकुल	२-३६-३०
मन्त्रो वा सर्वेषां	२-२९-३६	मार्जाराक्षकं	२-११-३९
मन्दरागप्रभः सशर्करः	२-११-३४	मार्जारोष्ट्र	१४-३-१
मर्मवधवैगुण्यकरणे	४-१-५७	मात्स्यन्यायाभिभूताः	१-१३-५
मर्यादाभेदे	३-९-२२	मातापित्रोर्भगिनीं	४-१३-३०
मर्यादापहरणे	३-९-२१	माताभस्त्रा	३-७-२
मर्यादां स्थापयेत्	१-७-८	मातुः परिजनो	१-१८-११
मयूरनकुल	१-२०-६	मातुश्चित्तक्षोभभयात्	५-६-४१
मयूरकं त्रिपुटकं	२-११-४	मातृकादुहितृ	२-२७-१७
महतश्च प्रयत्नस्य	९-५-८	मातृपितृपुत्रभ्रात्रा	४-११-१३
महत्यर्घापहारे	२-८-२८	मातृव्यञ्जनया वा	५-२-६४
महत्यवकाशे हि	७-११-७	मातृवाहकाञ्जलिकार	१४-१-२३
महाक्षयव्यय	७-११-२७	मातृहस्तादन्यत्र	२-२७-११
महाक्षयव्ययनिवेशां	७-११-२६	माधुरमापरान्तकं	२-११-११५
महाकुलीनो दैव	६-१-३	माध्यन्दिनात्	३-१४-३०
महाजनस्यैकं घ्नतः	३-१९-१६	मानहीने	४-१-११
महादोषमबुद्ध	१-१७-३०	मानाद्द्रावणः	१-६-८
महादोषमुपपन्नं	१-१५-३९	मानाध्यक्षो	२-२०-१
महादोषो हि	७-२-८	मानुषहीनो	३-६-९
महापराधानार्थं	९-६-३४	मानुषं नयापनयो	६-२-६
महापराधे तु	३-१४-२७	मानुषमांसविक्रये	४-१०-१५
महापराधेऽपि	९-३-१४	मानुषेणाग्निना	१-२०-४
महापशुमनुष्यक्षेत्र	२-१७-९	मायायोगविदस्तस्मात्	४-३-४४
महापशूनामेतेष्वेव	३-१९-२७	मायायोगविदो	४-३-११
महापशुमेकं दासं	४-१०-११	मालतीमूर्वार्कं	२-१७-७
महाभोगमनित्यम्	७-९-१६	माल्येकं पाण्डुरक्तम्	२-११-४९
महाविषयविक्रयो	७-११-१२	माल्येन चैकपत्यग्निं	१४-१-३६
"माकार्षीः" इति	२-१०-३२	माषकलनीद्रोणभामं	२-२५-२६
मागधिका पौण्ड्रिका	२-११-१०७	माषको वेतनं	४-१-३२
मार्गविपर्यासे	२-३६-३१	माषयवकुलत्थ	१४-२-३
मार्गशीर्षः पौषश्च	२-२०-५७	मासद्विमास	२-२९-९
मार्गशीर्षी तैषीं	९-१-४०	मासद्विमासपर्युषित	२-२९-१०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
मांसपर्लविंशत्या	२-१५-४७
मांसमार्द्रं शुष्कं	२-२९-२६
मासादूर्ध्वं	२-७-२७
मिथकथनमन्येन	५-४-१०
मिथः समवाये	३-१-११
मिथः समवायात्	३-२-६
मिथ्यावादे	२-७-३९
मिथ्यावादे चैषां	२-८-२३
मित्रकृच्छ्रेऽपि नित्यम्	७-९-९
मित्रं बन्धु	१३-४-४१
मित्रं चेन्न सांघम्	९-६-१४
मित्रभावाद्ध्रुवं	७-९-४४
मित्रमभूतं व्यवहितं	८-१-५४
मित्रममित्रं	७-१३-१५
मित्रमित्रं च	७-१३-१८
मित्रमुखा हि	१२-२-३
मित्रमुपकृष्टं	५-५-१४
यित्रमुपकृष्टं	९-३-२८
मित्रव्ञ्जनो वा	१२-५-२८
मित्रव्यञ्जनो वा	९-५-२७
मित्रव्यसनतो वा	७-१८-४१
मित्रबलमासारः	१०-२-७
मित्रवांश्च	१२-२-५
मित्रसंघस्य वा	९-६-१६
मित्रहिरण्ये हि	७-९-३३
मित्रहिरण्ये हि भूमिलाभात्	७-९-२
मित्राणि वाऽस्य	१२-३-१९
मित्राणि वा व्यपाश्रयेत	४-३-१८
मित्रादात्मवृद्धि	७-८-१८
मित्रादात्मवृद्धि हि	७-८-२१
मित्रभावे प्रकृतीनां	९-७-३४
मित्राभियोगिनोः	७-१३-१४
मित्राभियोगी हि	७-१३-१६
मित्रामित्रेषु व्यामिश्रा	९-७-७०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
मित्रामित्राणाम्	९-६-११
मित्रासारमुख्य	१३-४-२८
मित्रेण ग्राहयेत्	७-१३-४१
मित्रेणाश्रितः	१३-३-३१
मित्रेणोपग्राहयेद्	९-३-२५
मित्रोपकारममित्रोपघातम्	७-८-६
मित्रोपघतत्रस्त	८-५-२१
मुकुलावदातं	४-१-१८
मुखसमः संक्रमः	२-३-३०
मुख्यस्त्रीबन्धनं	७-३-३६
मुख्येषु त्वेषां	९-६-५
मुख्यैरवगृहीतं वा	५-६-४७
मुच्यमानमृण	३-११-११
मुञ्जबल्वजादि	५-१७-८
मुण्डजटिलकुहक	१-२०-१८
मुण्डजटिलानां	७-१७-५०
मुंडो जटिलो वा	१३-२-१
मुंडो जटिलो वा	१-११-१३
मुण्डो वा जटिलो वा	१३-२-२६
मुद्गमाभाषशैम्ब्या	२-२४-१३
मुद्गमाभाषाणामर्घं	२-१५-३०
मुद्गराङ्कादन्यद्वासः	४-१-१६
मुद्राध्यक्षो	२-३४-१
मुषितं प्रवासितं	४-१३-८
मुषितसंनिधौ	४-८-१
मूकमूषापूतिकिट्ट	२-१४-२३
मूढवाताहता	२-२८-८
मूलरक्षणादातिरिक्तं	९-२-२
मूलहर इति पदम्	१५-१-११
मूलहरतादात्विक	२-९-२०
मूल्यद्विगुणः	३-१७-४
मूल्यं भागो व्याजी	२-६-१०
मूल्येन चार्यत्वं	३-१३-१५
मूर्वार्कशणगवेषु	२-१८-९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
मूषिककरं वा प्रयुञ्जीत	४–३–२४	यत्र वाह्यावाह्यान्	९–५–१७
मूषिकभये मार्जार	४–३–२१	यत्र तु दण्डः प्रहितः	७–८–२७
मृगद्रव्यवनान्	४–१०–४	यत्र दूष्यः प्रतिषेद्धव्यः	५–१–३९
मृगपशूनाम्	२–२६–७	यत्र ब्राह्मणमाहिताग्नि	१४–३–१४
मृगयाकामर्मप्रतिरोधकः	१–१७–३८	यत्र बाह्या अभ्यन्तरान्	९–५–४
मृगयाद्यूतमद्य	५–५–३	यत्परस्य दुर्बलं	१०–५–४९
मृगयायांतु	८–३–४६	यत्स्वं द्रव्यमन्यैः	३–१६–३०
मृगहस्तिवनयोः	८–४–४४	यत्प्रायसैन्यो यत्र	१०–३–४१
मृतायां बाधः	४–१२–२	यत्प्रसह्य हरेत	१२–१–३२
मृते भर्तरि	३–२–१९	यत्किंचनकारी	७–११–३५
मृद्वीकारसो	२–२५–२४	यत्किञ्चिदारभमाणो	७–११–३७
मृदुदण्डः	१–४–९	यथाकालं च शष्पादि	२–२४–३१
मेढ्रफलोपघाति	४–११–२४	यथाकालमनागता	२–७–२१
मेदकप्रसन्नः	२–२५–१६	यथा च दाता	३–१६–५
मेषशृङ्गीत्वक्	२–२५–२२	यथा मदान्धो हस्ती	१–१४–७
मैथुने द्वादशपणः	४–१३–४१	यथा च योगपुरुषैः	१–२१–३९
मौलभृतकश्रेणी	९–२–१	यथा च दाता	१५–१–७०
म्लेच्छाभदोषः	३–१३–३	यथा चैषामाश्रय	१–६–२०
		यथा चाण्डोलोद	१–१४–१०
य		यथा छिद्रं तथा	७–११–३८
य एनमापत्सु	१–८–१०	यथा दण्डक्यो नाम	१–६–५
यः कोपं कर्तुं	९–३–३६	यथा वर्णप्रमाणं	२–१४–५
यच्च कोशदण्ड	१३–५–१४	यथापराध इति	३–१७–५
यच्च पण्यं प्रचुरं	२–१६–२	यथापराधमिति	२–७–१५
यच्चाप्रादायस्यान्त	२–७–१९	यथा निर्दिष्टाश्चैताः	२–२८–१०
यतश्चोत्तिष्ठेत	३–५–८	यथास्वं भूमिषु	२–२४–२३
यतः संधिमभिप्रेतं	१२–५–२२	यथा सामन्तानाम्	९–७–६
यतः परस्यापचयः	१०–५–५२	यथा संभाषितं लभेन	३–१३–२७
यतो निमित्तं व्यसनं	८–५–२१	यथा स्वपन्त्यजगराः	१४–३–२१
यतो वा दूष्य	१०–३–१०	यथा सेतुभोगं	३–८–४
यत्पुंवशेन	२–२४–१५	यथा ह्यनाश्वाद	२–९–३२
यत्रेश्वरांश्चाधिकृतांश्च	२–१०–४६	यथालीनः सर्पो	१–१४–८
यत्रागतः सैन्य	९–१–२१	यथासामर्थ्यमिति	१–१५–५०
यत्रात्मनः सैन्य	९–१–२५	यथार्हदण्डः	१–४–१०
यत्र स्थानं व्रजवश्च	१०–३–५०	यथा ह्यश्रोत्रियः	१–१५–६१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
यथहिगुणसंयुक्ता	२-१०-४१	यदिवा मन्यते	७-१-३४
यथासंभाषितं	१३-५-५	यदि वा मन्येत	७-६-८
यथाहस्तमवशेषः	२-३१-१५	यदि वा मन्येत	७-६-१०
यथासंभाषितं वा	३-१२-२७	यदि वा पश्येत्	७-१-३२
यथा स्वगणिनां धेनुः	१-१४-९	यदि वा मन्येत	७-६-१
यथेष्टमनवसितभागं	२-२४-१७	यदिवा कश्चिन्मुख्यः	५-६-१६
यथैव प्रविशेयुश्च	१३-२-५०	यदि वा पश्येत्	६-२-३८
यथोद्देशं वास्तुदेवताः	२-४-१८	यदि वा भन्येत "संधि"	७-१-३७
यथोपकारं वा	३-९-१८	यदि वा मन्येत "नास्मि"	७-१-३६
यदङ्गमल्पसारम्	१०-५-५१	यदि वा भन्येत यान	७-१-३५
यदनुक्तमर्थाद्	१५-१-२९	यन्त्रविश्लेषणम्	१२-५-४९
यदमित्रासारप्रति	७-१६-१५	यन्त्रगोप्पणमुष्टि	२-१८-१५
यदमित्रमासारं	७-१६-१४	यन्त्रैरुपनिषद्योगैः	१०-६-४८
यदमित्रमेकतः	७-१६-१३	यन्निसृष्टभुपजीवेयुः	४-२-२३
यदस्य कार्यम्	१-१५-२४	यमर्थंयधिकृत्य	१५-१-४
यदुक्तमात्मरक्षितके	१२-२-१०	यवकशालिमूल	१४-१-६
यद्दण्डेन कोशेन वा	७-१६-११	यवमाषतिलपलाश	२-१२-९
यद्बलः सामन्तस्तद्	७-२-६	यश्चतत्कुलीनः	१३-५-१९
यद्वा परस्य	१०-५-५०	यश्च मुख्यः पक्षवान्	५-६-८
यद्वा मित्रम्	१३-४-४४	यश्चात्र शूरवादिको	१३-२-३१
यद् घनानांतीक्ष्णेन	२-१४-४७	यश्चास्य परविषये	२-९-२६
यद्दण्डकोशभूमिभिः	७-१६-१२	यश्चास्यापकुर्यात्	७-१६-२४
यद्द्विगुणवास्तुकानां	२-१४-४६	यश्चैषां यथादिष्टमर्थं	२-९-९
यद्दच्छाघाते	४-१०-१५	यश्चैनान् दहेद	४-११-८
यदा चास्य प्राणहरं	७-२-१०	यष्टीनामष्टसहस्र	२-११-७
यदा पश्येत्	७-४-६	यः सत्यः सन्वः	९-३-३७
यदा वा पश्येत्	७-४-१५	यः समुदयं	२-९-१५
यदा वा पश्येतन	७-४-१९	यस्यवा प्रवीर तुरुषो	९-६-४६
यदावापश्येतपरस्यः	७-४-७	यस्य वा स्वदशात्	९-६-२८
यदा वा पश्येत् मित्र	७-४-१६	यस्या हि भूमेः	७-१०-१६
यदा वा पश्येत्	७-४-५	यस्माच्चसामन्ताद्	५-६-१०
यदा वा प्रयात	९-१-४४	यस्तूपनतान्	७-१६-३०
यदा वा फलमेकहार्यं	७-४-१७	यस्मिन् वा गुणे	७-१-२४
यादिवा पश्येत	९-४-८	यस्मिन् वा गुणे	७-१-२८
यदिवापश्येत् आयधी	७-१-३३	यस्य वा यस्याद्	९-६-६१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
याचितकावक्रीतका	३-२०-१४	येभ्यश्च राजा	१२-३-५
याचितमत्क्रीतकं	३-१२-२२	ये बन्धुषु निःस्नेहाः	१-१२-३
यातव्यः स्वप्रचार	३-१४-२८	येषां वा दूष्याणां	५-१-४५
यातव्ययौगपद्ये	७-५-९	येषु देशेषु याः	१३-२-४५
यातव्यसंहितो वा	७-८-१	ये ह्यस्य गुह्य	१-८-५
यातव्येन वा संधायै	७-८-३३	योऽर्थः शत्रुवृद्धि	९-७-५
यातव्योऽभियास्यमानः	०-७-३२	योऽस्य पुत्रः	१२-३-१५
यात्रान्ते तु कर्शनीयम्	९-७-५८	योऽहं स भवान्	२-१०-५३
यात्रा विहारगतो वा	५-१-२३	योऽहं स भवान्	२-१०-३४
यात्रामभ्युत्थितो	५-३-४२	योगदर्शनप्रतीकारेण	५-२-४५
यात्रासमाजोत्सव	१-२१-२८	योगदर्शनप्रतीकारेण	१३-२-३८
यान् यज्ञसंघैः	१०-३-३०	योगपुरुषाश्चात्र	५-२-३२
यावद्धिरण्यम्	३-१७-१२	योगवामनयोगाभ्यां	१२-४-२९
यावदश्वरथ	१०-५-२४	योजनमधभा	१०-२-१२
यावदुपकरोति	७-९-१२	योनिबालवधं	१३-५-१३
यावद्भूयो गुह्यम्	१-८-९	यो भृत्यात्मपीड़ा	२-९-२३
यास्त्वनिष्कासिन्यः	२-२३-११	यो महदर्थसमुदये	२-९-२५
युग्यपुरुषापचयाः	९-४-१	यो यद्युदुत्पद्यते	२-९-२२
युद्धव्याधिजराकर्म	२-३०-२७	यो वा यथाऽयोगं	७-१४-११
युवराजे वा क्रमेण	५-६-१८	यो वा लाभः सिद्धः	७-९-३
यूथचरमेकचरं	२-२-११	यौगपद्यात्तु	१-९-८
यूथवृषं वृषेण	२-२९-३८	यौनस्थ्यं च याचेत	५-६-४५
येन शास्त्रं च शस्त्रं	१५-१-७३	यौवनोत्सेकात्	१-१७-३५
ये च कारणादभिक्रुद्धाः	१-११-२१	यं चात्र गूढाजीविनं	४-४-५
ये चाप्रवासिताः	१२-३-४	यं चात्रापसर्पोपदेशेन	४-५-१४
ये चाप्यसम्बन्धिनः	१-१२-१	यं तु मन्येत "कृतार्थो	७-८-२८
ये चास्य हतभूमा	४-७-२१	यं वा नानालोहक्षाराणाम्	४-४-२०
ये चास्य धान्यपशु	१-१३-१५	यं वा भूतमर्थं	४-९-२०
ये चास्यामात्याः	७-१६-३१	यं वा मन्त्रयोगं	४-४-१४
ये चाऽस्य दुर्गेषु	१२-४-१	यं वा मन्येत	५-४-२
ये चैनं याच्यर्थं	१२-३-९	यं वा रसस्य कर्तारं	४-४-१७
ये जनपदे शूराः	१-१२-२	यः परं एव त्वां०	३-१८-९
येन वाक्यं	१५-१-३८	यः पितृपैतामह	२-९-२१
येनावृतः सहस्थितः	४-७-२०	यः पितृपैतामहम्	१५-१-१२
येभ्यश्च राजा	१२-२-७	यः समुदयं परिहाय	२-९-१२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
यः समुदयं व्यय	२-९-१७
यः एतावद्धिरण्यं	३-१७-१३
यः साहसं	३-१७-११

र

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
रक्तश्वेतसर्षपैः	१४-१-३३
रक्षातिक्रमे	२-२६-६
रक्षिणामवार्यं	२-३६-४०
रक्षितो राजा	१-१७-१
रक्षेत्स्वदण्डं	८-५-२०
रक्षोभयेरक्षोघ्नान्य	४-३-४०
रक्षोघ्नरक्षितम्	३-१-३७
रजकाः काष्ठफल	४-१-१४
रजकैस्तुन्नवाया	४-१-२५
रज्जुन राजमार्गे	४-७-२६
रज्जुशस्त्रविषैर्वाऽपि	४-७-२५
रज्जुवर्तकैर्वर्मं	२-२३-१७
रात्रिभागो द्वौ	२-३१-७
रात्रिप्रेक्षायां	१४-३-८२
रत्नसारफल्गुकुप्यानां	३-१७-३
रत्नसारफल्गु	३-१६-२४
रत्नापन्हार	४-१-५०
रथव्यूहेन	१-५-३०
रथानां द्वौ	१०-५-२१
रथिकानीकस्य	५-३-१२
रथोरस्यो	१०-६-३९
रथ्यासु कुटव्रजाः	२-३६-२२
रविसगन्धः	१४-३-६१
रसस्य तु सुरायाः	२-१९-३५
रसाग्नियोगेन	१२-५-४६
रहस्यव्यवहारेष्वेका	३-११-३१
रहसि वृद्धो व्याधितो	३-१२-३९
राजकामुकमन्तः	४-११-११
राजद्रव्याणामन्य	२-८-१६
राजमार्गद्रोण	२-४-४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
राजवर्षमासः	२-६-१२
राजव्यसनमेवम्	५-६-१
राजश्रोत्रिय	३-११-२९
राजतानां विसं	२-१४-५४
राजपुत्रमात्मसंपन्नं	५-६-३३
राजन्ययोग	३-११-३
राजन्यं वैश्यं वा	३-११-३६
राजमार्गे द्विगुण	२-३६-२७
राजव्यञ्जनो	१०-३-४२
राजव्यञ्जनमरूप	५-६-३
राजपरिग्रहो	२-२६-३७
राजराज्ययोर्वक्ष्यामः	५-१-२
राजशब्दैभिः	११-१-२०
राजक्रीडाभाण्ड	१४-१-३
राजमुद्रापरिवर्तने	२-२१-६
राजचोराग्निमुदक	३-१५-३
राजविवादस्तु	८-४-२०
राजद्विष्टातिचाराभ्याम्	३-३-३२
राजार्थं तु यान्	५-६-४४
राजार्थे कारणिकस्या	२-७-३४
राजा आत्मद्रव्य	६-२-१३
राजा देशहितान्	३-१०-४६
राजा क्रोशकमन्त्र	४-११-२१
राजानमवगृह्योपजीविनः	५-१-३
राजाज्ञया पुरुष	२-२७-१९
राजावासमनुप्रविष्टा	१२-४-२२
राजानमुत्थित	१-१९-१
राजा राज्यमिति	८-२-१
राजा कारणाद्धि	५-६-२८
राज्योपघातिनस्तु	५-१-४
राज्ञः प्रमादालस्याभ्यां	७-५-२६
राज्ञः सारथिः	५-३-२१
राज्ञः स्वधर्मः	३-१-४१
राज्ञां विश्वासोपगमः	७-१७-२
राज्ञो हि व्रतमुत्थानम्	१-१९-३३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
राज्ञोऽभ्यन्तरो	८–२–२
राज्ञो राजवल्लभानां	१२–३–१
रात्राववस्कन्दं	१२–५–३७
रात्राववस्कन्देन	१०–३–१९
रात्रौ द्विगुण:	३–३–२२
रात्रौ निष्कशने	३–३–२४
रात्रौ दिवा वा युद्धे	५–१–२२
राष्ट्रपीडाकरं	२–२१–३१
राष्ट्रमुख्यान्तपाल	९–३–२२
रिक्थं पुत्रवत:	३–५–१०
रूप्यगर्भश्चैषां	१४–४–११
रूप्याद्ध्रियमानं	२–१३–८
रूपदर्शकविशुद्ध	२–५–१०
रूपदर्शक:	३–१२–२५
रूपदर्शकस्य	४–१–४४
रूपस्य द्वौ भागावेक:	२–१४–२०
रूपाजीवा: स्नान	१–२०–२०
रूपाजीवा	२–२७–२७
रूपाजीवाया:	४–१३–२८
रूपाभिग्रहस्तु	४–६–३
रूपिकमष्टकं शतम्	२–१२–२६
रूप्यभाण्डं घनं सुषिरं	२–१३–४५
रोषनिमित्तो घात:	४–७–१८
रोषदानं परहिंसायाम्	३–१६–७

ल

लक्षणाध्यक्षश्चतुर्भाग	२–१२–२४
लक्षितमल्पं वा	२–२५–४
लब्धलाभाधिकारेऽपि	७–१७–२६
लघु समुत्थमल्पं मित्रं	७–९–२१
लघुस्निग्धमश्यानं	२–१५–५६
लघुसमुत्थमल्पं	७–९–२०
लघुव्यसनममित्रं	७–५–५
लब्धलाभापगमने	७–१३–२१
लघ्वपि हि व्यसनम्	७–५–६

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
लब्धमपि च महान्तं	९–३–३
लब्धसंश्रय:	७–१५–२१
लब्धायां सिद्ध:	११–१–५१
लब्ध्वा वा	३–२–२०
लभेत पुश्चली भोगं	३–१३–३७
लभेत सामदानाभ्याम्	१–१४–१२
लम्भपालनोहि	८–१–५१
लवणाध्यक्ष: पाक	२–१२–२८
लाजान्मधुनेति	१–२०–१६
लाभविघ्ना:	९–४–२५
लाभसाम्ये संधि:	७–६–३
लिङ्गवचनकालकारक	२–१०–६
लिच्छिकिवृजिक	११–१–५
लुप्तव्यायाम	२–१–३०
लुब्धकश्वगणिन:	२–३४–९
लुब्धक्षीणं वा	९–६–२३
लुब्धकश्वगणिभि:	२–२९–२१
लुब्धकव्यञ्जना वा	१२–४–१६
लुब्धकव्यञ्जना	१३–३–४०
लुब्धक व्यञ्जना	१३–४–२४
लुब्धकश्वगणिभिर	१–२१–२३
लुब्धका: श्वगणिनो	४–३–२९
लुब्धा लोभेनासंतुष्टा	७–५–३१
लेखकश्चेद् उक्तं न	४–९–१७
लेखपरिसंहरणार्थं	२–१०–२५
लोकयात्राविद्	१५–१–३०
लोकपात्राविद्	५–४–१
लोभ एकदेशिको	८–५–३४
लोभादैल:	१–६–७
लोमदोहवाहन	४–१३–२१
लोहजालिकापट्टक	२–१८–१६
लोहाध्यक्षस्ताम्र	२–१२–२३

व

वक्तव्येन	१५–१–२५

प्रतीकानि	अधि॰ अ॰ अङ्काः	प्रतीकानि	अधि॰ अ॰ अङ्काः
वटकषायस्नाताः	१४–२–१६	वर्मतोमरशरावाप	२–३२–१५
वडवायाः प्रजातायाः	२–३०–८	वर्षादिदक्षिणायनं	२–२०–६२
वडवावृषकिशोराणां	२–३०–७	वर्षाशिरद्धेमन्तान्	२–२१–३१
वणिक्पथः पराति	७–१४–२३	वर्षारात्रमानूपग्रामाः	४–३–६
वणिजस्तु संवृतेषु	२–२५–१५	वर्षति मरुत्प्रायं	९–१–५०
वणिजो रूपाजीवाः	१०–२–१०	वर्षण्यिष्टा	३–२–३८
वत्सस्थानमेतद्	२–१७–१५	वर्षत्रिभागः	२–२४–६
वत्सा वत्सतरा	२–२९–८	व्रजमटण्यासन्नम्	१३–३–५१
वत्सो वृषो धेनुः	२–२६–१०	ब्रह्मचर्यं चा	१–५–९
वत्सेनेव हि धेनुं	२–१७–१६	बलविशिष्टः	१०–३–१
वधः परिक्लेशो	२–१०–५६	बलव्यसनानि	८–५–१
वधे बधः	४–११–५	बलवानराजबीजो	७–११–२८
वद्धतीर्थाः	२–२८–१४	बलव्यसनावस्कन्द	१०–३–३
वने वनचराः कार्याः	१–१२–२	बलं शक्तिः	६–२–३१
वनचरव्यञ्जनाश्चैनम्	७–१७–५३	बलापोदानसाम्ये	७–१३–७
वनगूढा वा	१२–४–२०	वलिहोमस्वस्तिवाचनैः	४–३–५
बन्धनागराध्यक्षस्य	४–९–२३	वलीवर्दानां	२–२९–४३
बन्धवधभयाद्वा	१–१८–६	बलीयानबलं हि॰	१–४–१४
बन्धकीपोषकाः	५–२–२८	बलीयसोर्वा	७–२–१३
वन्धकी पोषकाः	११–१–३४	वल्लभैः कार्मिकैः	२–१–३८
बन्धनागारे	२–३६–४४	वल्गनो नीचैः	२–३०–३२
वन्धकीपोषकाः	१२–२–११	वशं मे ब्राह्मणा	१४–३–३५
बन्धनोत्सृष्टो	३–७–९	वश्ययोरपि महाभोगं	७–९–१३
बन्धुरत्नापहारणम्	१–१६–३४	वश्यमनित्यं श्रेयः	७–९–११
बन्धुस्तेषां तु यः	४–७–२७	वसन्तमवस्कन्देत	१३–२–५
वन्धुरदण्डः	३–४–१९	वसतिभोगापहारे	२–२७–२१
वप्रस्योपरि प्राकारं	२–३–७	वसेदविसृष्टः	१–१६–१८
वरयितुर्वा वरदोष	३–१५–१५	वस्त्रचतुष्पदद्विपद	२–२२–७
वराहभस्त्राम्	१४–३–६८	वस्त्रास्तरण प्रावरण	२–२३–९
वर्णसंघातः पदम्	२–१०–१४	बहिः कन्या कुमार	१–२०–११
वर्णहीनेमपावरे	२–१४–१०	बहिर्ग्रामस्य प्रकृतायां	४–१२–२३
वर्णविरोधेन	२–२९–३९	बहिर्विहारगतो वा	५–१–२८
वर्णोत्तमानां गुरूणां	४–१०–१२	बहिर्जनुभञ्जनी	२–३–१५
वर्णोत्कर्षमपसारणं	४–१–३०	बहुगुण हीन	३–१५–४
वर्तमानः पर्युषितो	२–६–१७	बहुषु हि कुण्ठेषु	७–१२–१२

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
९-६-२९	वास्तुच्छिद्रानुशालेषु	२-४-१६
३-४-३९	वाह्यप्रतिपानं	२-२५-१०
२-१६-८	बाह्यमाभ्यन्तरं चायं	२-५-२२
२-९-३१	ब्राह्मणस्य वैश्यायाम्	३-७-२१
१-३-१०	ब्राह्मणेनैषितं०	१-९-११
३-१८-१	ब्राह्मणप्रवजित	२-२८-१८
८-२-३४	वाह्येषु तु प्रच्छन्न	४-९-९
८-२-३३	वाह्येषु प्रतिजपत्सु	९-५-१२
१-१६-२०	वाह्योत्पत्तिरभ्यन्तर	९-५-३
१५-१-८	विक्रमो भद्र	२-३०-४०
६-१-६	विक्रमितुकामं	१३-४-४६
२-११-१०२	विक्रमान्तरेषु च	१३-४-३
३-१०-२९	विक्रमयेद्भर्तरि	७-६-३५
१-११-११	विक्रमकाले	११-१-२४
२-२४-१०	विक्रमस्य प्रकाशयुद्धं	७-६-१७
१-२-४	विक्रान्तं	१३-४-४५
१-३-११	विक्रान्तं तत्रैव घातयेत्	५-१-१८
३-१६-३७	विक्को मोढो	२-३१-१०
२-१-३२	विक्रमो वल्गित	२-३०-४१
३-८-१९	विक्रयप्रतिक्रोष्टा	३-९-६
२-२४-१६	विक्रये पण्यानामर्घ	२-६-२२
३-४-८	विक्रमाधिकारेऽपि	७-१७-२४
७-१७-६०	विक्रान्तं प्रकृतिकोपेन	५-६-२६
७-११-१७	विक्रीतमभियुञ्जाने	८-५-२३
२-१६-२४	विक्रीय पण्य	३-१५-१
७-१२-२१	विक्रेता चेद्दृश्येत	३-१६-१४
२-१-२६	विक्षिप्तवस्त्रगात्र	४-७-१०
५-३-२९	विक्षिप्तसैन्यम्	७-९-२२
२-२९-२०	विक्षेपव्याधितान्त	२-१५-१०
२-१-२७	विक्षेपव्याधिता	२-६-२१
७-१०-२३	विगृहीतो हि	१५-१-४८
३-२०-४	विगृह्यासन हेतु प्रति	९-४-१३
२-४-७	विगृहीतो हि ज्यायसा	७-३-३
१०-१-१	विगृह्यासनहेतुभिः	७-४-१४
१-२०-१	विगृह्य कथनम्	५-४-९

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः

विग्रहीतश्चेत् ७-३-१४
विग्रहे हि क्षयव्यय ७-२-२
विच्छिन्नतण्डाः ३-५-६
विजिगीषुर्मित्रं ६-२-२४
विजिगीषुर्द्वितीयां ७-६-१
विजिगीषोर्वा ७-१८-१७
विजिगीषुशक्त्यपेक्षः ७-३-१
विजिगीषुः १३-१-१
विजिगीषोरमित्रं ७-९-४५
विजिगीषुद्वितीयायां ७-७-१
विजिगीषुरात्मनः ९-१-१
विजययुक्ताः १०-३-३६
विचितवस्त्रहस्त २-१३-३३
वित्तापहारिणो वा ३-१३-७
विदलमृत्तिकाभय २-१७-१५
विद्विशिष्टानुपांशु १-१३-२०
विद्यमानमुभयम् ३-७-३
विद्याविनयहेतुः १५-१-१६
विद्याविनीतो राजा० १-५-१७
विद्याविनयहेतुः १-६-१
विद्यासमुद्देशः १-१-३
विद्यानां तु यथास्वम् १-५-६
विद्यासमुद्देशः १५-१-७
विद्युत्प्रदग्धो १४-१-३४
विघापाचकसूत्र २-३०-२६
विध्वस्तगणनां च ५-३-४०
विनयकर्मणि च ५-६-३९
विनयमूलो दण्डः १-५-२
विनाशयतस्तद् ३-८-२७
विनीतं भक्षयित्वा ३-१०-२२
विनीतो राजपुत्रः १-१८-१
विपर्यये तमेव २-७-२०
विपर्यये जयति १०-३-५१
विपर्यये चापं १०-६-१३
विपर्यये विक्रमेण ७-१५-१८

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः

विपर्यये विषमसंधिः
विपर्यये कृतप्रतीकारो
विपर्यये झषास्यः
विपर्यये करः
विपर्यये संधाय
विपर्यये खरोष्ट्रा
विपरीता व्यवहिता
विपरीतः परस्थानीय
विपरीताश्रेणीमनुष्या
विपरीता हस्तिनो
विपरीतोऽतिसंधत्ते
विपरीतमतुष्टस्य
विपरीता दण्डधारणा
विपरीतोऽतिसंधत्ते
विपरीतः कपालः
विपरीतोऽति संधीयते
विपरीतोऽति
विपरीतोऽन्तभेदी
विपरीतः प्रकोप इति
विपरीता बलवत्
विपरीतः पुत्रः
विपरीता प्राज्ञादनुरक्ता
विपर्यये प्रत्यादेयः
विपर्यये कूटयुद्धम्
विपर्यये स्फोटनं च
विपर्यये बाह्यकृत्यम्
विपर्यये मूल्यद्विगुणो
विपर्यये यथायतिव्य
विपरीतः प्रसादकः
विपत्तौ श्रेणी
विपत्तौ कण्टकशोधनाय
विपुलारम्भो हि
विप्रस्थाने प्रदीप्ते
विभज्यामात्य०
विभक्तमुख्याम्

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
२-११-३५	विशेबोघाणपिण्याक	२-१५-५२
७-५-३२	विशेषस्तु	९-६-६४
१-१७-४०	विशेषस्तु "गुणैकदेशे	७-४-३
७-५-३५	विशेषतश्च	८-३-६४
२-१४-५२	विश्वासमुपगतः	१३-३-५
७-५-२५	विषण्णालिक	२-३६-३४
२-१२-३२	विंशतिवर्षो ग्राह्यः	२-३१-९
८-४-१९	विषह्यदानादायत्यां	७-३-२९
३-१६-३८	विषमस्थस्य	१३-४-६
११-१-१४	विषहृतस्य	४-७-१२
१०-१-१५	विषप्रदस्य तु	१-२१-८
३-१५-११	विषदायकं पुरुषं	४-११-८
३-२-१	विष्कम्भ चतुरश्रम	२-३-१०
२-१०-४४	विसी महाविसी च	२-११-७७
४-११-२०	विस्मृतेसुरङ्गया	१२-५-४४
३-३-१५	वीतसंगिलवच्चारीन्	९-६-७३
८-४-३८	वृक्षच्छेदनेदम्य	४-१३-१४
२-३४-५	वृक्षाम्लकरम्दर्दाम्र	२-१५-१
११-१-३७	वृत्तपाणिग्रहण	३-१५-१२
२-१९-३२	वृत्तचौलकर्मा०	१-५-७
२-१९-३८	वृत्तिविकारं च	५-५-१०
२-१९-७	वृत्तिरावन्ध्यंः	३-२-१४
२-११-१४	वृत्तिकामांश्चोपजपेत्	१-११-७
१-१५-४९	वृत्तोपनयनः	१-५-८
३-१६-३१	वृद्धमित्रो हि	७-१३-१९
२-१९-१९	वृद्धि क्षयं च स्थानं	७-१८-४३
२-७-१४	वृद्धिच्छेदे	४-१-९
७-५-४८	वृहस्पतिसववर्ज	३-१४-३२
११-१-१०	वेणुशरशलाका	२-१८-१०
१०-३-५४	वेणुमूल शैव	१४-२-२६
७-१५-३	वेणु दल रज्जु	३-३-८
३-१९-४	वेतनादाने	३-१३-३३
३-१८-५	वेतनेषु च	२-२३-१६
२-१३-२	वेत्रशीकवल्लीवा	२-१७-६
१५-१-४४	वेदेष्वप्यनुश्रूयते	१०-३-२८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
वेशशौण्डिकेषु	११-१-८
वैगुण्ये च प्राणावाधः	८-१-११
वैजयन्तीक्षुर	२-३२-१४
वैडूर्यं उत्पलवर्णः	२-११-३०
वैद्युतं भस्माग्नि	१४-२-३१
वैदेश्यं सार्थं	२-२१-२६
वैदेहिकायां	३-७-३२
वैदेहकान्तेवासिनश्च	१-११-१५
वैदेहकानां वा	४-२-१९
वैदेहकव्यञ्जनो वा	५-२-४९
वैदेहकानाभेकरात्र	३-१५-५
वैदेहकव्यञ्जना वा	७-१७-४३
वैदेहकव्यञ्जना वा	७-१७-४६
वैदेहकव्यञ्जनो	१२-२-१५
वैदेहकव्यञ्जनो वा	५-२-४६
वैदेहकव्यञ्जनो वा	२-२१-२७
वैयावृत्यविक्रयस्तु	३-१२-२५
वैरं वा परैर्ग्राहयित्वा	७-८-४
वैराज्यं तु जीवितः	८-२-८
वैरिणा वा सक्तस्य	१३-३-२४
वैश्यान्मागध	३-७-२७
वैवाहिक मन्वायन	२-२१-१८
वैश्यस्याध्ययनं	१-३-७
वैषम्ये सर्वत्रानुयोगं	२-८-२७
व्यवस्थितार्थमर्यादः	१-३-१७
व्यवहारस्थापना	१-१-५
व्यसनाभियानं	९-१-४१
व्यसनयोगपद्ये	८-१-१
व्यसन साहाय्यय	२-१०-३५
व्ययक्रियाभारिक	२-१२-१२
व्ययकर्मणि च भागी	२-१-२३
व्यस्यत्येनं	८-१-४
व्यवहितयोरपि	७-१०-२०
व्यस्यत्येनं श्रेयस	१५-१-४६
व्यसनोपघातत्व	७-१४-१२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
व्यवहारमवस्थितं	११-१-११
व्यसनीषु वा	८-१-१४
व्यसनत्वरावमान्	७-६-११
व्यसनयौगपद्ये	८-१-५१
व्यसनिनमपायस्थाने	७-७-[illegible]
व्यसनेषु चासन्नः	८-१-१०
व्यसनयौगपद्येऽपि	७-३-११
व्याधिभयमौपनिषदिकैः	४-३-१३
व्यवहारिकं कर्मं	४-५-२१
व्यालग्राहविशुद्ध	१-२१-२१
व्यालभये मदनरयुक्तानि	४-३-[illegible]
व्यामिश्रो वा	१०-५-३१
व्याधिर्भिक्षयोः	८-४-[illegible]
व्याजी परिशुद्धौ	४-१-४[illegible]
व्यामिश्राणामुत्तमाना	३-१५-[illegible]
व्याधिते विशेषः	८-२-१[illegible]
व्याधितो राजा	८-२-१[illegible]
व्यासवाक्यं	१५-१-१[illegible]
व्याघातकमूलं	१४-१-[illegible]
व्यायामयुद्धे हि	७-१३-३[illegible]
व्याल एकक्रियापथः	२-३२-८
व्युष्टदेशकालमुखानु	२-७-३१
व्युष्टदेशकालमुख	२-७-३१
व्युष्टदेशकाल	२-[illegible]-३१
व्यूहं तु स्थापयित्वा	१०-५-४८

श

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
शकुन कङ्गुतैल	१४-२-१[illegible]
शक्तप्रजननयोः	७-१७-३[illegible]
शक्तिप्रासकुन्तहाहक	२-१८-[illegible]
शक्तिमत्तराश्च	८-१-२[illegible]
शक्तिदेशकालबलाबल	९-१-११
शक्तिदेशकालानां	९-१-२[illegible]
शक्तिसाम्ये यो	७-१३-[illegible]
शक्तिसंपन्नो हि	७-१३-[illegible]

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
७-१७-३१	शत्रुं वा मित्रभूमि	१३-३-२७
६-२-३०	शत्रुभूम्या वा	१३-३-२५
७-१-१७	शत्रुणा मैत्रीं	१३-३-८
६-२-३३	शत्रूणामापाते	१०-१-१२
९-१-२७	शत्रोः शङ्कित	९-७-७२
७-५-३९	शपथ वाक्य	३-२०-१७
१३-४-६०	शमव्यायामयोः	६-२-४
८-४-११	शमव्यायामौ	६-२-१
८-३-५१	शमान्तरं पत्तिं	१०-५-३
८-४-१८	शयनादुत्थितः	१-२१-१
८-४-२६	शरीरमवेक्षेत	५-३-२
७-११-१५	शरीरप्रकृति श्रुत	३-१८-२
७-८-१२	शस्त्रवर्मकवच	२-२१-२२
९-१-४३	शस्त्रहतस्य	१४-२-३८
२-१०-५५	शस्त्रेण प्रहरत	४-११-३
२-३६-३६	शाकानामध्यर्धगुणः	२-१५-४९
४-८-९	शाकलं कपिलं	२-११-५५
३-३-२७	शाभावशेन	२-३१-१८
२-१२-६	शासक निर्मापक	२-२८-१३
२-२२-५	शान्ति वा सिद्धतापसाः	४-३-२५
२-२८-५	शासनप्रधाना हि	२-१०-२
९-३-३८	शासनेशंसनमित्याचक्षते	२-१००१
५-३-२५	शासनमविनष्टम्	१-१६-३२
४-१-५२	शासनं च यथोक्तम्	१-१६-१०
१४-१-९	शासनमेवंवाच्यः	१-१६-६
२-३०-१६	शास्त्रस्य प्रकरण	३-१-४५
९-७-१५	शास्त्रं विप्रतिपद्येत	३-१-४५
९-६-६	शास्त्र समुद्देशः	१-९-१८
७-१३-११	शास्त्रविददृष्टकर्मा	१-८-२२
१२-१-१८	शस्त्रेण रसेन वा	५-१-७
९-७-१८	शारिकाकपोत	१४-१-१५
१-६-१२	शरीरदण्डं क्षिपति	४-९-९
९-६-३१	शालावशेन वा	२-३०-६
९-७-१०	शालिव्रीहिक्रोद्रव	२-२४-१२
९-७-९	शाल्यादिर्ज्येष्ठम्	२-२४-२०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
शाल्मलीविदारी	१४-१-२९
शिक्षाविशेषेण	४-१-३३
शिक्षाकल्पो	१-३-३
शिरीषोदुम्बर	१४-२-१
शिरस्त्राणकण्ठत्राण	२-१८-१७
शिलाशस्त्रवर्षम्	१२-५-४
शिल्पवन्तः पादातः	५-३-१४
शिविरमार्गसेतु	१०-४-१७
शिशिराद्युत्तरायणं	२-२०-६१
शिष्यमाणो	१-१७-४५
शिष्याश्चास्यावेदयेयुः	१-११-१०
शिष्याश्चास्य	१३-२-२२
शीघ्राभियाने	८-१-५८
शीतोदकीयं पद्माभं	२-११-५३
शीर्षकमुपशीर्षकं	२-११-६
शुकपित्ताण्ड	१४-२-१३
शुकः सारिका	१-२०-७
शुद्धस्फटिको	२-११-३२
शुद्धं पूर्वामभिनवं	२-५-१३
शुद्धं शुद्धरक्तं	२-१नू-९७
शुक्तिः शङ्खः प्रकीर्णकं	२-११-३
शुद्धस्यैको	२-१३-१५
शुद्धं वा मद्यं	१२-४-४
शुद्धं वा मद्यंदण्ड	१२-४-६
शुल्क मन्वाधेयं	३-२-३०
शुल्कं स्त्रीधनं	३-२-४१
शुद्धं परिवासयतः	४-८-८
शुद्रस्य द्विजाति	१-३-८
शुद्राप्यानुपाल्या	६-१०-२४
शुल्कस्थानाग्दाभय	२-२१-२१
शुल्कभयात्पण्य	२-२१-१०
शुल्कमष्टगुणं	२-२१-११
शुल्क स्त्रीधन	३-३-५
शुल्कं दण्डः पौतवं	२-६-२
शुल्क व्ययकर्मणी	४-१२-१८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
शुल्कस्थाने नष्टा	२-१६-२१
शुल्कादायिनः	२-२१-२
शुल्कादानात्	३-८२-७
शुल्काध्यक्षः	२-२१-१
शुल्वं तारं वा गर्भः	२-१४-३०
शुल्वरुप सुवर्ण	२-१४-३१
शुल्वेन शुल्बाप	२-१४-२२
शुश्रूषा श्रवण	१-५-५
शुश्रूषा श्रवण ग्रहण	६-१-४
शुष्क मत्स्य मांस	२-१५-२१
शुष्कचर्मवृत्त	१०-३-२२
शुष्क सारदारुभय	२-१९-३४
शूद्रकर्षकप्रायं	२-१-२
शूद्रस्यब्राह्मणवादिनो	४-१०-१३
शूद्रएव वैश्यस्य	३-७-२३
शूद्रं जन्मभरणान्तरे	३-११-३७
शूद्र सधर्माणो वा	३-७-३७
शूद्रो येनाङ्गेन	३-१९-८
शूद्रादायोग वक्ष	३-७-२६
शूनपाणिपादोवर	४-३-४
शून्यं वा निवेशयितुम्	५-३-३२
शून्यमूलास्वामि	८-५-१७
शून्य मूलो हि	७-१३-६
शून्यपालस्थानेषु	१२-२-२७
शूरकृतास्त्रयो	७-१७-२५
शूरैस्त्यक्तात्मभिः	९२-२-४
शूलकूपमवपातमं	१२-५-८
शृङ्गिणादंष्ट्रिणा	४-१३-१८
सृङ्गिदष्ट्रिभ्याम्	४-१३-१९
शृङ्गि गोतमवृक्ष	१४-१-१७
शेषमुपनिधिना	३-१२-३१
शेषमुपनिधिना	३-१२-२४
शेषद्रव्याणाम्	३-६-७
शेषमुपनिषिना	३०१२-२१
शेषमुपनिधिना	३-१२-१७

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
महोरात्रभागम्	१-५-१५	श्रद्धेयानांतु	३-१-५
कृतिनाशस्तु	८-१-६३	श्रद्धेया रागविवादेषु	४-१-२१
काचमणय:	२-१[illegible]-३६	श्रावण: प्रौष्ठपदश्च	२-२०-५५
षाणां कर्मणां	४-१-६४	श्रुताद्धि प्रज्ञोपजायते	१-५-१६
शा नवनीतवर्णा	२-११-११२	श्रूयते हि शुकसारिका	१-१५-४
मतोमृग	२-१५-५९	श्रेणीमुख्यप्राप्त	१३-३-१
ल्यानामर्घं	२-१५-३१	श्रेणीमुख्ययो:	८-४-३७
षास्तमुपजीवेयु:	३-६-१५	श्रेणीमुख्याहस्त्य	५-३-९
णितानुसिक्तं	४-७-६	श्रेयो हि मित्रं	९-७-४७
मनाक्षि मन्त:	३-१८-३	श्रेष्ठानां पाण्डुश्वेत	२-१३-५
सामर्थ्यापदेशेन	९-५-५	श्रोतृणामेकैकं	२-१-४
ण्डिकव्यञ्जनो	१४-३-५६	श्रोत्रियास्तपस्विको	२-१२-३३
र्यं स्थैर्यं	८-१-३०	**ष**	
र्यशिल्पाभिजन	१०-३-३८	षट्कं तैलमतसीनाम्	२-१५-३८
र्यममर्ष: शीघ्रता	६-१-५	षट्कंसो दण्डो	२-२०-२०
गादन्यत्र	२-३६-३३	षट्त्रिंशदङ्गुल	२-११-८९
वपाणिपाद	४-७-८	षट्छतमत्ययमन्यत्र	२-२५-२
वो नीलश्चाप्राप्तक:	२-१३-२७	षडङ्गुलादूर्ध्वं	२-१९-११
मं दोङ्गकं	२-११-५८	षडश्रश्चतुरस्रो	२-११-३३
मिका कालिका	२-११-८८	षड्भागः सूपः	२-१५-४४
नकङ्क काक	१४-२-४३	षण्डेभ्यः शाकमूलक	२-२२-१२
स्थूल मध्यतां	२-२३-३	षण्यभूमिभ्यो	४-९-४
ष्मातक	१४-४-२	षण्डवाटगोपाल	२-२४-२८
पुरप्रातिलोम्येन	३-२-२३	षण्णव द्वादशेति	२-३०-३९
कीमने	४-१३-३४	षण्यदोषो दोषः	३-१५-२
कस्यायगमने	४-१३-३५	षष्टिवेतनस्याढ़कं	५-३-३४
पुरकुलप्रविष्टायां	३-३-६	षष्ठे स्वैरविहारं	१-१९-१४
विष: शल्यकानि	१४-३-४१	षष्ठे तूर्यघोषेण	१-१९-२१
कुक्कुटा	१४-२-७	षाड्गुण्यस्य	७-१-१
तारभागी	२-१३-४४	षाड्गुण्ययेवैतद्	७-१-५
सूत्रे	१४-२-८	षाड्गुण्यसमुद्देशः	१-१-९
वस्त्रमूत्रे	१४-२-४	षोडश इति	१-१५-४८
वाकुली	२-११-१११	षोडशद्रोणं	२-१४-५
स्निग्धं मृदु	२-१३-११	षोडशद्रोणाखारी	२-१९-३१
मूत्रम्	१०-३-३४	षोडशभागो	२-१६-१०

स

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
स एव चित्रमेकान्त्रम्	१४-१-२१
स एव शिरः	२-३-३४
स एव पटलसंपुटेश्च	२-१४-२
स एव लाभो व्यालघातिनः	४-३-३२
स एव पक्षकक्षाभ्यां	१०-६-१०
स एनं बन्धनागार गतो	३-१२-४७
स एवातिक्रान्तः	१०-६-११
स एवोरस्मातिक्रान्तो	१०-६-१५
सकक्षातिक्रान्तः	१०-६-९
सकथमनिविष्टं	७-११-३२
स कर्मदिवसद्रव्य	२-९-१८
सकायतदेव लभेत	४-१३-३७
सकामा तदेव लभेत	४-१३-३१
स कामयां चतुष्पञ्चाशत्	४-१२-६
स कृषिकर्मप्रदिष्टायां	१-११-१०
सकृदात्माघाता	३-१३-६
सकृदेव नद्धिः	५-२-३०
सकेसरः स्निग्धो	२-१३-२०
सक्थिग्रीवाभञ्जने	३-१९-१४
सगर्भोढायाः	३-७-११
सगोत्रेणान्यगोत्रेण	३-७-६
सगोपस्थानिको	४-६-२०
संघेन परिहृतस्य	३-१४-१७
सचेत्कोपं	३-१७-१४
सचेत्संघो	१२-२-१
स चेत्तथाकुर्यात्	४-४-१०
स चेत्तथाकुर्यात्	४-४-१८
सचेत्तथाकुर्यात्	४-४-१५
सचेत्तथाकुर्यात्	४-४-७
स चेदज्ञानादिभिः	२-९-१४
स चेद्दण्डसंधिं	१२-१-२५
स चेद्दण्डं	१३-३-२१
सचेद्ब्रूयात् याचित	४-६-११

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
सचेद्राजार्थभुपनय	२-९-१६
सचेदपसारम्	३-१६-१५
सचेदल्पमपि	३-१४-९
सचेद्ब्रूयाद्	४-६-८
सचेदाचारक्रमं	३-१६-१३
सचैषां पापिष्ठतमो	७-११-३६
स तच्चक्षुः	१-१५-५६
स तस्यांस्त्री पुरुषाणां	२-३६-३
सति भार्यार्थे	३-५-३१
स तूर्यघोषध्वज	१०-६-४६
स तेन गुप्तः	१-४-१५
स तेन हिरण्येन	५-२-६३
सतोऽर्थस्य	२-५-२५
सतोऽर्थस्य	८-३-४५
सत्त्राभावे हिरण्यं	७-१७-५७
सत्त्राप्रसरेद्यत्तः	७-५-४६
सत्त्रिणश्च	५-३-४७
सत्त्रिणेमित्रव्यञ्जना	९-५-३१
सत्त्रिणोमित्रव्यञ्जना	९-५-१३
सत्त्रिणामेकश्चैनं	१-१७-२८
सत्त्रिणोद्वन्द्विनः	१-१३-२
सत्त्रिप्रयोगादूर्ध्वं	४-४-२४
सत्त्रिनलस्त्वैनं	१-१७-३४
सत्त्रीचैनम्	९-३-३१
सत्त्री वा स्त्रीलोलुपं	११-१-४४
सत्पुरुषाचारः	८-३-९
सत्यप्यमित्रभावे	७-१८-२९
सत्यं गुर्वपिगुरुतरं	७-५-७
सत्यं शपथो वा	७-१५-५
सत्यं शपथो	७-१७-३
सत्वप्रज्ञावाक्य	१-११-१९
सदुन्दुभिमुल्कां	१२-१-१०
सदोषभायतिप्रदर्शनं	२-१०-३६
सदोष	१-१५-२१
सद्वादशद्वारो	२-४-२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
नुर्ग्रहः	२–२०–१३	समरागलेख	२–१३–१८
नुर्मुष्टि	२–२०–१४	समरागं समद्वन्द्व	२–१३–६०
नगराभ्याशे	१–११–१४	समरागी विक्रयक्रय	२–१३–२२
न्द्वोऽश्व	१–२१–२५	समश्चेन्न संधिम्	७–३–७
ल्लानाम् वा	३–१४–३४	समव्यूढतीर्थ	२–२९–२३
नवांश्चेदनादेयः	२–९–२४	समौलभृतश्रेणि	२–३३–८
रमाश्रित्य	१३–३–१	समस्ता वा यव	१४–१–१८
रमाश्रित्य	१३–३–१२	समं वा त्रिवर्गम्	१–७–४
स्थानीकानाम्	१०–६–३५	समवायिकैरेव	७–१४–१
यातिक्रमे	७–१७–१८	समज्यायोभ्यां	७–३–२
रात्राद्र्ध्वम्	३–९–८	समसंघो तुयः	७–९–७
रिमाण्डे वा रूपे	२–१४–३७	समः संधिः	१७–१–३४
दपणो द्रोण	२–१९–३६	समबलाभावे	७–१५–५
दपणा	३–११–१	समबलेन याचिताः	१–३–५५
दचर्म कोशैः	१०–३–२०	समवाये चैषांम	११–१–१९
रूपं वा	३–४–१०	सम्भूय वा गृह	३–८–१८
स्तैलवसाम	२–१५–१३	सम्वत्सरमृतुं	३–१–९७
त्रयादेयं द्यूतं	८–३–५३	सम्वत्सरेण सतति	४–७–२८
रात्रस्यान्तर्मृते	४–११–२	समस्तानाम्	१–६–५
र्तवप्रजातां	४–१२–८	समागतश्च	१३–२–३
विंशतिर्नक्षत्र	२–११–१२	समाजे वा सर्वपण्य	५–२–५०
मे हस्त्यश्वरथ	१–१९–१५	समायविद्येभ्यस्त्रिगुण	५–३–२०
ये मन्त्रमध्यासीत्	१–१९–२२	समानश्चातुशयो	३–१५–१०
रालिरुत्सेधो	२–३१–११	समा विषमा	१०–३–५२
रलिन	२–३१–१४	समायां दण्डमण्डल	१०–३–५३
विंशतिर्नाक्षत्र	२–२०–५०	समासवाक्यमुद्देशः	१५–१–१५
हृत्ताम्	२–२८–२७	समास्थिराऽभिकाशा	१०–४–३
वान्नाहंति	१२–२–७	समाहर्ता दुर्गं	२–६–१
पादकः	२–११–३७	समाहर्ता जनपदं	२–३५–१५
मोक्षणाभावे	९–७–४८	समाहर्ता जनपदे	४–४–३
कयोः	७–१७–२९	समाहर्ता चतुर्था	२–३५–१
वं वदितो	१–१७–२७	समाहर्तृपुरुषांस्तु	१२–२–३०
तः शत्रुभ्यो	९–७–२६	समाहर्तृप्रदिष्टाश्च	२–३५–८
ची युगपद्	९–७–२३	समाहर्तृवन्नागरिको	२–३६–१
विषमनिम्नस्थल	९–१–५१	समाहर्तृप्रणिधौ	४–४–१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
समाहर्तृप्रदेष्टारः	४–६–१	सर्ववीजानांतु	२–२४–२७
समुच्छ्र्यादर्धतले	२–३–२१	सर्वत्र प्रथमेऽपराधे	२–२५–१८
समुत्पन्ने दोषे	१२–२–३१	सर्वत्रायत्तम्	१५–१–५७
समुद्रफेनकः	१४–२–३६	सर्व एव विवादाः	१३–१–२४
समुद्रो जनपदं	२–३४–२	सर्वहितमेकस्य	३–१०–३१
समेधाशास्तिभिश्च	१–१—१७	सर्वतः पार्ष्णिमस्य	१मे–१–२०
समेन वा याचितः	७–११–४३	सर्वमात्ययिकं	१–१९–३०
समेन चामंपात्रमाम्	७–३–४	सर्वं चैषामुपकरण	२–१३–३४
समेनैकेन द्वाभ्यां	७–५–४३	सर्वधातूनां गौरव	३–१२–७
समेव्यूहे देशकाल	१०–६–४७	सर्वं चापेक्षितं	१–२०–२३
समे हि लाभे संधिः	७–८तु३४	सर्वमुपपन्नमिति	१–८–२७
स यं दूतं	१३–३–१०	सर्वतोभद्र चामदग्नय	२–१८–५
स यच्छीलस्तच्छीलाः	८–१–१७	सर्वशास्त्राण्यनुक्रम्य	२–१०–६३
स युग्मोरस्यो	१०–६–२२	सर्वत्रचोपहतान्	४–२–४३
सयद्येकपुत्र	१—७–१८	सर्वत्राशुचीन	१–१०–१५
सरतां सर्वतो वृत्तिः	१०–६–६	सर्वप्रवजिताश्च	१–११–८
स रथकर्मान्तान्	१–३३–२७	सर्वचित्रमहाभोगं	७–९–४०
सरल देवदारु	१३–४–१८	सर्वत्रराजभार्यागमने	४–१३–३३
स राज्ञा पृष्टः	१३–२–८	सर्वस्वं पुत्रदारं	३–१६–३
सर्पदष्टस्य	१४–२–१६	सर्वं वेद भवान्	१–१६–२८
सर्पव्यालत्रासनातं	२–२९–२२	सर्वगुणसम्पन्न	१–१३–३
सर्पभयेमन्त्रैरोषछिभिश्च	४–३–३५	सर्वत्राष्टगुण	२–७–१२
सर्वदेशकाल	१०–५–५६	सर्वस्नेहधान्य	२–४–२७
सर्वत्रानुप्रणतः	१२–१–७	सर्वावाहस्कालाः	९–१–४२
सर्वत्र हि कोपश्चरगिति	८–३–६	सर्वारम्भोपकरण	१३–४–२५
सर्वसंदोहेन	१२–१–३	सर्वातिथिमृगं	२–३–४
सर्वत्रात्मनि सर्गं	७–१५–२९	सर्वाधिकरणेषु	२–५–१६
एवंवास्तुकयोः	३–८–१३	सर्वाभियोगकरश्च	८–१–४३
सर्वद्रव्यप्रयोजक	८–१–५२	सर्वापराधेपीऽनीयो	४–८–२७
सर्वलोहचूर्णम्	१३–४–२०	सर्वेषु च कलहस्थानेषु	११–१–५४
सर्वज्ञख्यापनं	१३–१–२	सर्वेषामासन्नाः	११–१–६
सर्वतो वा	१२–४–२३	सर्वेषां वा स्त्री	४–७–१७
सर्वदेवताश्रम	१३–५–११	सर्वेषां प्रीत्यारोपण	३–२–१३
सर्वतो वनाजीवः	१०–२–५	सर्वेषां तृणोदक	२–१९–४६
सर्वदेशकाल	१०–४–१६	सर्वेषामन्तरालानां	३–७–३९

तीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
र्वमहिंसा	१–३–१३	साक्षिभेदेयतो	३–११–३९
र्वा शालाः	२–५–६	साचिव्यावकाशदाने	४–१२–२९
र्वेन वाः	११–१–३१	सातत्येन हि	८–३–४८
र्वथाशुद्धान्	१–१०–१४	सातिना नलतूला	२–११–९२
र्वतश्च प्रजाता	२–४–२९	सातिनाकृष्णा	२–११–९३
र्वासु चैषाम्	३–७–२४	साधयेत्तैलमेतेन	१४–२–२९
र्वेकर्म	१–११–१२	साधारण एष दोषः	१–८–७
त्सां धेनुं	१–१९–२४	साधारणगर्दभेन	१३–१–१६
र्वामिप्राप्तफलं	४–१२–१	साध्वी व्यञ्जनाभिः	५–२–५२
र्थकर्मप्रदिष्टायां	१–११–५	सान्त्वमभ्युपपत्तिश्च	२–१०–२४
लिभिः सत्थ०	१–१०–३	सान्त्वमेकगुणम्	९–६–५८
र्वतोमुखः	१०–६–३१	सापेक्षं वा	७–१८–२१
र्वं वा	१२–४–२१	सामर्ग्यजुः	१–३–१
वंसारी	१०–६–२५	सामदानाभ्यां	७–१६–३
मनणे	३–१०–३५	सामदानभेददण्डैः	१५–१–२६
याचनमन्यतः	२–१५–६	सामन्तं संहितप्रयाणे	७–६–२
वर्णानामर्घं	२–१५–५	सामन्तप्रत्यया	३–८–१
रसुरा	२–२५–३२	सामन्तेनैव सामन्तं	७–६–१५
र्डितत्वात्	१–८–४	सामन्तादीनाम्	५–६–२०
हिणः प्रतिभुवः	२–७–५	सामन्ताटविक	९–६–७१
र्मचर्या	३–२–३	सामन्तं सामन्तेन	७–७–२
त्थायिनो	९–३–३२	सामन्तचत्वारिंशत्	३–९–३
त्थायिनो	१२–५–२३	सामन्ताटविक	७–१६–७
षु हि मुख्यो	८–४–१२	सामवायिकानाम्	९–४–२३
प्रयाणेमित्र	७–९–१	सामवायिकानाम्	९–७–५९
त्थायिनो०	१–८–१	सामवायिकानामपि	७–५–३८
ध्यकार्यं	७–१–१८	सामान्या हि पथि	३–१४–२२
प्राध्यम्०	१–७–९	सामान्ये वेश्मनि	३–८–२६
मावेदुर्गम्	७–१५–९	सामुत्थायिकैरवगृहीतो	८–२–१७
योरपि	७–१२–५	सामुद्रहस्त्यश्व	२–२६–५
माहार्योदकं	२–१–२०	सामूलीगोधूमवर्णा	२–११–९१
क्रियेष्वेव	३–११–४४	सायं प्रातश्चलक्षितं	२–१३–३६
यमेव	३–१३–३१	सारतो वा हिरण्यमाढ्यान्	५–५–३५
भावे	३–१३–३२	सारभाण्डमित्यसार	४–२–१६
वेदमियोगा	३–११–४१	सारबलभृतः	१०–५–४६

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
सारबलं वाऽस्य	१३-४-३३
सार्थेनान्वाविहस्तो	३-१२-१९
सार्थिकानां शस्त्रावरण	५-३-४१
सार्थव्रजस्कन्धावार	१०-३-१६
सार्थगण वासि	१३-३-४८
सार्थव्रजाश्रम	३-१-९
सार्घः सोरः	२-२०-४८
सार्ववर्णिकानि	१४-२-४४
सा वृद्धिः	७-१-२१
साहसमन्वयवत्	३-१७-१
साहसानुप्रवेश	३-१-८
सा हि स्वसमुत्थाभ्यां	७-१०-२१
सिद्धं कालमप्राप्तं	२-८-१०
सिद्धनामसाधन	२-८-५
सिद्धप्रयोगादूर्ध्वं	४-६-१
सिद्धप्रव्रजित	१३-२-४४
सिद्धमायं न प्रवेशयति	२-८-१८
सिद्धमुपचारकस्य	३-१३-१०
सिद्धव्यञ्जनो वा	१३-२-१३
सिद्धव्यञ्जनरुपौवा	५-६-४८
सिद्धव्यञ्जनो वा	५-२-५९
सिद्धिकर्मसंयोगः	२-६-१६
सिद्धे सुभगाया	१२-२-१७
सीताध्यक्षः	२-२४-१
सीताध्यक्षोपनीतः	२-१५-२
सीता भागो बलिः	२-६-३
सीमविवादं	३-९-१०
सीमवृक्षेषु चैत्येषु	३-१९-३०
सीमावरो चेन	२-३५-३
सीसरुपसुवर्ण	२-१४-२७
सीसत्रपुपिण्डो	४-१-३९
सीसान्वयेन	२-१३-७
सुकरो हि मित्रेण	९-६-१३
सुकरो हि मित्रे	७-१३-१७
सुखग्रहणनिर्ज्ञेयं०	१-१-१९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
सुखमेतदवबोद्धुम्	३-४-१२
सुखं सिद्धिः	६-२-३२
सुखं स्वपन्तु	१४-३-३७
सुखं स्वपन्तु	१४-३-४६
सुखा हि प्राप्तुं	७-१०-१८
सुखोपरुद्धा	१-१७-२१
सुखोपनीतचार्वर्थ	२-१०-१०
सुप्रतिविहित	१-१६-५
सुप्राप्यानुपाल्यः	८-४-५
सुप्तमत्तप्रव्रजने	३-३-२३
सुप्तमत्तयोर्हि०	१-१६-२३
सुप्तमत्तादानात्	३-२-९
सुभगाकुमार्यो	८-४-२४
सुमहताऽपिक्षयव्ययेन	७-१३-३
सुमहताऽप्यर्थेन	८-३-३५
सुरङ्गाममित्रस्थाने	१२-५-१६
सुरङ्गया	१२-५-३६
सुराकिण्वविचयं	२-२५-३८
सुराक्षीरदधि	१२-४-९
सुराध्यक्ष	२-२५-१
सुरुङ्गायुक्ते वा कूपे	५-२-४२
सुवर्णकाराणामसुचि	४-१-२६
सुवर्णसूत्रान्तरं	२-११-२५
सुवर्णरजतवज्रमणि	५-२-१७
सुवर्णमासकाश्चत्वारः	२-२०-३५
सुवर्णरजतवज्रमणि	२-६-४
सुवर्णपुष्पीं ब्राह्मणीं	१४-३-३४
सुवर्णं पूर्वं निकष्य	२-१३-१७
सुवर्णाध्यक्षः सुवर्ण	२-१३-१
सुवर्णान्माषकमपहरतो	४-१-२८
सुविज्ञातप्रणीतो हि०	१-४-११
सुविदितशत्रुशासन	२-९-२७
सुव्याजा हि	९-५-५
सुव्यावर्त्या श्रेणी	८-४-२९
सूचीमुखाह्यनर्था	९-३-५

तीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
वर्णपश्चात्य	३-६-१४	सोदभर्णामनेक	३-५-१४
वर्णायथाः	१०-३-४३	सोपकारं व्यवहितं	७-६-३४
र्णिका चिकित्सक	२-३६-३८	सोमाप्यायनः शुक्लः	२-२०-४४
वर्णाहकाश्च	२-३०-४४	सोमावच्छेदनो	२-२०-४५
वर्णरोक्षार्थमात्रः	२-२३-१३	सौगान्धिकः पद्मरागो	२-११-२९
वर्णप्रमाणं ज्ञात्वा	२-२३-४	सौराष्ट्रकाः पाञ्चनदा	२-२-१६
वर्णमूल्यं	४-१-१०	सौवर्णकुड्यकं रक्तपीतं	२-११-६४
वर्णैकावलीशुद्धा	२-११-२०	सौभाग्यभङ्गे	२-२७-५
वल्कमयी	२-२३-१९	सौभाग्यालंकार	२-२७-४
वस्त्रताम्रवृत्त	५-२-१८	सोवर्णकुड्यकं	२-११-१०४
ह्रासे वेतन	२-२३-६	सौवर्णिकः पौरजान	२-१४-१
ध्यक्षः	२-२३-१	सौवर्णिकेनादृष्टमन्यत्र	२-१४-११
रालिक	१२-२-२२	संकटगतमग्निा	१२-४-२८
रालिक	७-१७-४०	संकर्षण दैवतीयो	१३-३-५४
रालिकव्यञ्जना	५-१-३६	संख्यातार्थेषु कर्मसु०	१-८-१३
रालिक स्नापक०	१-१६-९	संग्रामस्तु	१०-३-२६
ध्यक्षः	२-२६-१	संग्रामदन्यस्यां	१३-४-४
र्णोजसिद्धिः	२-२४-८	संगृतापतिमाकाङ्क्षेत	४-१२-३१
विन्नामदन	१४-४-४	संघभृताः संभूय	३-१४-१८
योरण्याहार्यं	७-१२-४	संघलाभो	११-१-१
ः सस्यानां	७-१४-२१	संघेरकृतचिकीर्षा	७-६-१६
ो मुञ्चस्तोय	३-९-३८	संघमुख्यश्च	११-१-५६
निवृत्तम्	१०-१-१६	संघमुख्यपुत्रम्	१-१-३१
विकुमाराभ्याम्	७-३-२४	संघमुख्यांश्च	११-१-२२
विरसत्०	१-१०-५	संघेश्वेवम्	११-१-५४
विरर्थमानाभ्याम्	१०-३-४५	संघाश्चाप्येवम्	११-१-५५
मुख्यप्रकृति	१२-३-१४	संघा हि संहत	११-१-२
नेकमनेकस्य	९-२-९	संघानां वा	११-१-२८
समुद्रविहय	२-१५-१५	संजातलोहिता	२-३१-१७
चन्द्रचित्रा	२-११-८६	संजातादायव्यय	२-६-२७
पाष्णिग्राह	९-७-२४	संज्ञाप्रतिकारो	२-३०-३८
मणिमध्यायष्टि	२-११-२	संज्ञाभाषान्तरज्ञाश्च	२-२७-३०
मित्रविगृहीता	९-७-२७	संदर्शनेकोपः	५-५-९
मन्त्रिपरम्परा	१-१५-१६	संदिष्टमर्थमप्रयच्छतो	३-२०-१५
ः राज्ञ	२-१०-४	संधिविग्रहासन	७-१-२

प्रतीकानि — अधि० अ० अङ्काः

संधिविग्रहोपादानं ७-१-११
संधिरात्रिषु १३-२-२९
संधिं वा कृत्वा १२-५-३१
संधिं वा कृत्वा १३-४-४८
संधिः परिपणितः ७-६-४
संधिविग्रहाभ्यां ७-१-४
संधिविग्रहयोश्चेत् ७-३-१६
संधिविग्रहक्रमहेतुभिः ७-२-१८
संधिनैकतो विग्रहे ७-३-१९
संधिनाऽऽसनेन ९-७-१०
संधिविग्रहयोः ७-४-१
संधेयश्चशत्रु ७-१३-२७
संधेयतामात्मनः ७-१५-१७
संधेयस्य वा ७-१५-१९
संध्यादीनामयथा ९-५-१
संनामिन्युत्कीर्णिका २-१४-१९
संनिधाता कोशगृहं २-५-१
संनिधाताकृता ८-४-३३
संनिधातृ समाहर्त्रोः ८-४-३१
संनिविष्ट समम ३-५-२१
सन्धिविग्रहयोस्तुल्यायां ७-२-१
संपन्नाभावेऽव्यसनिनं ५-६-३४
संपन्ना नित्यामित्रा ७-१०-१२
संप्रतिपत्तावुत्तमः ३-११-२५
संपादयत्संपन्नाः [illegible]-१-१६
संपुटिका चतुरस्रिका २-११-१०१
संभग्नस्फुटितगात्रम् ४-७-७
संभूयक्रमे चैषां ४-२-३१
संभूय वापि सर्पान् ४-२-३६
संभूय सेतुबन्धात् २-१-२२
संभूयाभिगमनेन ७-४-२१
संभाषितवेतनस्तु ३-१३-२९
संभाषितादधिक ३-१४-११
संयातीर्नावः २-२८-११
संयुक्तबलवत्सेवी ७-१५-३०

प्रतीकानि — अधि० अ० अङ्काः

संरुद्धगतिरसार्वं ७-१२-२०
संरुद्धस्य वा तत्रैव ४-९-२५
संवरणमात्रं० १-२-५
संवदनमन्त्रेण ४-५-६
संश्रुत्यार्थान् १-१४-२
संसिद्धमेवास्य ५-२-६५
संसिद्धे तूद्घृतपण्ये ३-१४-२१
संस्था या धर्मशास्त्रेण ३-१-४४
संस्थानामन्ते ९-१२-१
संस्थानं प्रचारः २-६-१४
संस्थाध्यक्षः ४-२-१
संहतानीकं १०-३-५
संहतामक्षयेयुः २-९-६
संहत्यारिविजिगीष्वो ७-१३-१
संहत्य दण्डं ब्रूयात् १०-३-२७
संहितश्चेत् "परप्रकृतयो" ७-२-१३
"संहिताः स्मः" ७-१७-६
सांव्यवहारिकेषु ३-१२-२९
सांख्यं योगो १-२-१०
सांघिकं च भेदं ९-६-५१
सांनाहृत्रः सप्त २-३२-४
स्कन्धावारम् १३-४-२७
स्कन्धावार निवेशः १-१-१२
स्कन्धावारे १२-४-४
स्कन्धोपनेयोबहुधा ७-३-२८
स्तम्भमुक्तोमुख्यः ८-४-३०
स्तम्भैः समन्ततो ३-१०-२०
स्तम्भस्य परिक्षेपः २-३-१८
स्तेनमनिसृष्टोप २-१२-२१
स्तेनपारदारिकयोः ४-१०-१०
स्तेनाभित्रव्याल ८-३-४०
स्तेनव्याल सर्प २-२९-२४
स्त्रियं पुरुषं वा ३-१७-१०
स्त्रियः पानं च० १-१६-२१
स्त्रियास्त्वर्घकर्म ४-८-८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
स्त्रियं दासी	२–३६–४१	स्थूलस्थाण्वश्म	१०–४–१
स्त्रिया मुखसंदर्शने	२–२३–१४	स्थिरः परुषोविषम	२–१३–२४
स्त्रियमयौनो गच्छतः	४–१३–४०	स्थिरकर्मानासमाप्य	७–८–१३
स्त्रीविप्रकाशद्वा	३–३–१७	स्नापकसंवाहका०	१–२१–१३
स्त्रीषु हि बालिश्य	८–३–५६	स्पर्धया वा	३–९–५
स्त्रीपुंसयोर्मैथुनार्थेन	३–३–२५	स्वकरणाभवे	४–१–५५
स्त्रीव्यसने भवति	८–३–५९	स्वकरणाभावे	३–१६–१८
स्त्रीव्यसने तु	८–३–५०	स्वकार्याणां वशैनैते	७–३–३६
स्त्री प्रकृतासकामा०	८–१२–२०	स्वचक्रपरचक्रयोः	८–४–१३
स्त्रीपानव्यसनयो	८–३–५५	स्वचक्रपीडनम्	८–४–१५
स्त्रीवेशधारी वा	१२–५–४०	स्वगृहप्रद्वारेषु	२–३६–२१
स्त्रीणां ग्राममध्ये	३–३–२८	स्वजनविकारः कोपः	९–८–३
स्त्री तु पुत्रार्थमेवं	३–३–४७	स्वतः परतोवा	९–७–७
स्त्री चाप्रतिश्राविणी	३–११–२३	स्वदूतैः कारयेद्	१–१६–३५
स्त्रीपुष्पपायिता	१४–२–३२	स्वदेश ग्रामयोः	३–१८–१२
पथो वारिपथश्च	२–६–८	स्वदेशादन्वाय	१–२–६
गतो हि श्वा	९–१–१९	स्वदेशीयानां	२–२९–१८
येऽपि	७–१२–२२	स्वदेशीयान्	१३–५–१८
योरपि	७–११–४	स्वदोषेणागतः	७–६–२८
न समां	२–३१–४	स्वदोषेण गतागतो	७–६–२५
नस्याशुद्धिर्यंव	२–३२–१९	स्वधर्मः स्वर्गाय	१–३–१
नविशेषेण	२–२७–१५	स्वधर्मकर्मानुग्रह	१३–५–८
नच्छत्रवेष्टन	५–२–३६	स्वधर्मश्चैष	१२–१–५
नपानकर्म	९–५–१०	स्वधर्मो ब्राह्मणस्य	१–३–५
नासनगमन	१२–५–६	स्वपक्षे	१४–४–१
नपरिवर्तन	२–१८–२	स्वपक्षे परपक्षे वा	५–१–५७
नमासनमुपेक्षणं	७–४–२	स्वपक्षपरपक्षयोर	१–१०–५१
निकव्यञ्जनं	१३–२–११	स्वपतो वा	१२–५–४८
लेयं हि	७–१०–२९	स्वपरस्थानीयोपकारयोः	८–४–४६
रस्तुप्रयास	३–१२–१५	स्वभूमिष्ठानाम्	९–६–६५
नांपृथग्	१०–६–७	स्वभूमिपत्यस्वस्य	१०–४–१
ं वृत्तं निस्तलं	२–११–५	स्वभूमिं युद्धकालं	२–३३–१०
मपि च लाभं	२–१६–६	स्वभूमिजानांराजपण्य	२–१६–४
ं गुरु प्रहार	२–११–४०	स्वभूमिषु च राजानः	७–१६–३३
पक्षः	१०–६–१६	स्वभूमिष्ठेषु तु	९–६–६३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
स्वभूमौ च वसेत्सर्वः	१–२०–२२
स्वभूम्यवस्थित	६–१५–२३
स्वयार्जितम्	३–५–३
स्वयमभिप्रस्थितो	३–८–२५
स्वयमागच्छन्तीनां	२–२३–१२
स्वयमग्नोजाते	१३–४–२६
स्वयमुपहृतः	१–१४–३
स्वयमागतानां	७–१६–२१
स्वयमन्यैर्वा	२–८–१४
स्वयमुद्धस्य	४–७–१६
स्वयमारूढा हि स्त्री	५–६–३०
स्वयमादिष्टपुरुषैर्वा	४–७–१९
स्वयवादिदण्डो	३–१–२१
स्वयंबन्धुभिर्वा	३–७–१६
स्वयं जातः	३–७–४
स्वयं संख्यातदण्डेन	७–३–२३
स्वयं वा राज्यं	७–१६–३२
स्वयं जातः पितुः	३–७–१३
स्वयं जातः पितुः	१५–१–६८
स्वयं ग्राहेणाहृतम्	३–१६–२७
स्वयं प्रकृता राज	४–१२–२२
स्वयं प्रसितारो विषयाः	४–१३–२
स्वयं हि राजा	९–१–३
स्वयं दृष्टं प्रत्यक्षं	१–९–५
स्ववर्गानुकर्षिणो	५–३–१०
स्वबलरक्षा	१०–४–१५
स्वविक्षिप्तमित्र	८–५–१५
स्वविषयस्थो वा	७–२–११
स्ववेश्मनो विरात्रादूर्ध्वं	४–१३–६
स्वसस्यापहारिणः	५–५–१२
स्वसेतुभ्योहस्त	२–२४–१८
स्वसैन्यव्यायाम	९–१–२९
स्वस्वामिसम्बन्धस्तु	३–१६–२९
स्वं हन्ता	३–२९–१६
स्वात्माऽऽधाने	३–९–३४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
स्वापतेयं विक्रय	२–२–७
स्वाम्यमात्यजन	८–१–५
स्वाम्यमात्यजनपद	६–१–१
स्वाम्यभावे	३–१०–३
स्वाम्यमात्यव्यसनयोः	८–१–७
स्वाम्यमात्य	१५–१–५४
स्वामिनोभृत्यानां	३–११–३२
स्वामिनश्चासन्न	८–१–४५
स्वामिनो दोषेण	७–६–२४
स्वामिनः स्वस्यां	३–१३–२३
स्वामिशीलमात्मनश्च	५–५–१३
स्वामिपरिबन्ध	५–३–८
स्वामिन्यामत्ता	९–६–७
स्वामिनो दोषेण गतः	७–५–२६
स्वामिनश्चानिवेद्य	३–१०–२६
स्वामी च सम्पन्नः	८–१–१६
स्वाहा	१४–३–३१
स्वाहा अमिले	१४–३–३६
स्वाहा	१४–३–५२
स्वे स्वे तु वर्गे	३–१–१५
ह	
हरिचन्दनं शुकपत्र	२–११–४
हरितालमनःशिला	२–१४–४८
हर्षाद्वातापिः	१–६–१०
हंसक्रौञ्चमयूराणां	२–१५–५८
हंसक्रौञ्चमयूराणामः	१४–२–३०
हस्तिकामं वा	१३–२–३९
हस्तिघातिनं	२–२–८
हस्तिच्छविकः	२–१३–२३
हस्तिगामुरस्यं	१०–५–३२
हस्तिनोऽश्वा	१०–६–४१
हस्तिनोह्यन्तः	१–१–४६
हस्तिनामेव	१०–५–३४
हस्तिनाशेषितेन	४–१३–१५
हस्तिस्तम्भसंक्रम	१०–२–१४

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
९-२-२६	ह्रस्व प्रवासिनां	३-४-२४
१-१८-१८	**क्ष**	
७-११-१६	क्षत्रायामुग्राच्छ्वपाकः	३-७-३३
७-१२-८	क्षत्रियवैश्ययोः	३-६-२०
२-२-१३	क्षत्रियस्य	३-७-२२
१-३-४०	क्षत्रियस्याध्ययनं	१-३-६
३-१९-११	क्षत्रियात्सूतः	३-७-२८
२-३१-१	क्षयः स्थानं वृद्धिः	६-२-५
२-४-२९	क्षयस्थानवृद्धीनां	९-७-५१
१२-४-१२	क्षये मूल्यं स्तेय	३-१६-१६
१०-६-२८	क्षिप्रमल्पो लाभः	७-९-५०
१०-५-४२	क्षिप्तो वा तं चार्थं	८-६-४
२-१५-५०	क्षीणाः पीडनोच्छेदन	७-५-३०
२-३१-२	क्षीणलुब्धप्रकृति	७-५-१२
२-३१-३	क्षीणलुब्धा हि	७-५-१४
५-२-२४	क्षीणनिश्चयं	१३-४-२४
७-९-२८	क्षीणतृणकाष्ठोदक	९-१-३६
७-९-३१	क्षीणदायकुटुम्बम्	४-६-२
९-४-२	क्षीणलुब्धप्रकृति	१५-१-३३
१२-५-३४	क्षीणाः प्रकृतयो लोभं	७-५-२७
३-१०-३०	क्षीणा लुब्धा	७-५-२९
४-११-९	क्षीरघृतभृता	२-२९-३५
४-११-१०	क्षीरयावसिकी	२-३१-१६
२-२८-१२	क्षीरद्रोणो गवां	२-२९-३५
११-१-३१	क्षुद्रपशूनां	३-१९-२६
९-७-१९	क्षुद्रकमुख्य क्षययोः	८-४९
१०-३-५६	क्षुद्रकारवो वन्धकी	५-२-२१
७-३-१०	क्षुद्रपशुर्मनुष्यश्च	२-२८-२१
४-७-१३	क्षुद्रपशुमनुष्य	३-१०-५
१-१५-४४	क्षुण्ण धृष्टोपक्ष	२-१५-२४
१५-१-१३	क्षेत्र विवादं सामन्त	३-९-१५
२-११-२	क्षेत्रिकस्याक्षिपतः	३-१०-८
२-११-२४	क्षेत्रे वा जनभेद्	३-६-२४
९-१-३५	क्षेत्रेभ्यः सर्वसस्यादाने	२-२२-१३
७-१-२९	क्षेपणः काचार्पणादीनि	२-१३-३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
क्षेपणोगुणः क्षुद्रक	२–१३–३
क्षेमरात्रिषु	२–३६–१२
क्षौमदुकूल क्रिमि	२–२२–६
क्षौमदूकूलक्रिमि	२–२३–८
क्षौद्रमार्द्वीकं च	२–१५–१६
त्र	
त्रयः प्राचीना	२–४–१
त्रयः सप्ताहिकाः	२–२४–९
त्रयाणामेकवाक्ये	१–१२–१५
त्रयाणामर्धचन्द्रकः	१०–६–३७
त्रयी विशेषो०	१–२–३
त्रयी वार्ता०	१–२–५
त्रयोऽभियोक्तारो	१२–१–१०
त्रयोंऽशास्तपनीय	२–१३–५१
त्रिपक्षादूर्ध्वं	३–१–३१
त्रिपक्षादूर्ध्वमनमि	३–१६–२२
त्रिपञ्चभागिको	२–३–२४
त्रिपदीप्रविक्रान्त	३–८–९
त्रिपौरुषी पौरुषी०	१–१९–७
त्रिफलकः फलकहारः	२–११–२
त्रिभागाधिकायामा	२–३–३३
त्रिरज्जुकं निवर्तन	२–२०–२३
त्रिराघुषितमव्याहृतं	३–९–४
त्रिरात्रादूर्ध्वमग्राह्यः	४–८–१
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–१०
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–६४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–२८
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–७१
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–६
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–५४
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–४
त्रिरात्रोपोषितः	१४–३–८
त्रिरुद्धोषितमर्थिभ्योः	२–२१–८
त्रिवर्गभयसंशुद्धान्	१–१०–१६
त्रिवर्षप्रजातति	४–१२–१०
त्रिवर्षोपभुक्तम्	३–२–१७
त्रिविधश्चास्य	१३–५–२
त्रिंशत्काष्ठाः	२–२०–३३
त्रिशतं चतुः पञ्चा	२–७–६
त्रिंशदहोरात्रः	२–२०–४७
त्रीणित्रिकाण्यनीकं	१०–५–१२
त्र्यङ्गुलावरं	२–३०–१५
त्र्यभिक्रान्तपक्ष	१०–६–१८
ज्ञ	
ज्ञातयः श्रोत्रियाः	३–१६–३२
ज्ञाति हस्तादभि	३–२–२४
ज्ञातिसामन्त धनिकाः	३–९–१
ज्ञातियौनमौरव	२–६०–५०
ज्ञाते सुरङ्गापथे	१२–५–१९
ज्ञात्वा यथाबुद्ध	७–६–२९
ज्ञात्वा कल्याणबुद्धि	७–६–२७
ज्ञात्वावसेदपसरेद्वा०	१–१६–३

●

कौटिल्य द्वारा प्रयुक्त विशिष्टशब्दावली

	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अ		अङ्गणम्	३-८-२८
	२-१०-५१	अङ्गाः	२-२-१५
	१०-४-१४	अङ्गानि (वेदस्य)	१-३-३
	१-१-३२	अङ्गुलम्	२-२०-६
	२-२०-८	अचक्रखुरा	१०-२-३
	१०-४-३	अचलः	१०-६-४०
	२-४-१३	अजः	१४-३-१७
	१४-४-१०	अजगरः	१४-२-६
	२-२७-२८	अजविन्दुः	१-६-७
	२-१३-१	अजाजी	२-१५-२०
	१४-३-१	अञ्जनवर्णः	२-११-८९
	१४-१-१५	अञ्जनमूलक	२-११-३६
	१४-४-१२	अञ्जनम्	२-१२-६
	१०-३-४७	अञ्जनम्	१४-३-६९
	१०-३-४७	अञ्जलिकारः	४-१०-२७
	१-६-१०	अटवी	१०-३-४
	१-२०-५	अटवीबलं	९-२-७
	२-२०-१९	अट्टालकः	१०-१-१
	१३-१-४	अट्टालकम्	२-३-१०
	१४-१-३	अणिद्वारम्	२-३-२७
	१०-५-४६	अण्डम्	१४-२-१३
	१०-४-१४	अतसी	२-१७-७
	१३-१-६	अतिक्षिप्तं	८-५-२
	३-८-२८	अतिक्रान्तावेक्षणम्	१५-१-६१
	३-८-११	अतिदेशः	१५-१-२३
	२-३-३५	अतिमात्रम्	८-४-१३
	२-११-५७	अतिवादः	४-१-५९
	७-५-४८	अतिवाहः	२-३५-१२
	९-२-२	अतिवाहनम्	४-३-१५
	२-१७-१२	अतिसर्गः	३-१६-१३
	१३-२-१०	अतिसंहितं	८-५-१९

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
अतिसन्धिः ७–९–६
अतिसन्ध्यात् ७–६–१
अतिहरणम् ४–३–१६
अतीतव्यवहारः २–१–१२
अतीयकुम्भः १२–५–१८
अत्ययः ७–३–२८
अत्ययः ८–४–३२
अत्ययसन्धिः ७–२–२८
अत्यावादः १०–५–२८
अतिसारणं १–१६–३३
अत्याहारः ८–५–२६
अत्याहारयमाणः २–६–७
अथर्ववेदः १–३–३
अदितिः १४–१–३९
अदितिः ११–१–४२
अदितिकौशिकः १–१७–१९
अद्वैध्यः ६–१–११
अद्वैध्यमित्रं ७–९–४३
अदृष्ट पुरुषः ७–३–२५
अधरनटाकः ३–९–२९
अधर्मः १–२–११
अधिकरणम् ३–१–१७
अधिकरणी ४–४–२०
अधिकारिणी २–१४–५३
अधिकुर्यात् १–१०–१
अधिगमः ३–१०–१९
अधिचारः ११–१–४५
अधिचरत २–२०–१६
अधिमासकम् २–७–८
अधिश्रयणं ४–३–३
अधिष्ठानम् ५–२–१३
अधिष्ठानम् १–१६–१०
अध्यक्षस्थानम् २–२०–१२
(अध्यक्षाः) १–५–८
अध्यासनं ३–१९–६

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
अध्वजं १०–३–३१
अनन्तावल्केशी ७–१२–७
अनभृत सन्धिः ७–११–४२
अनक्षग्राहिणी १०–४–३
अनभिग्रहः ७–५–२२
अनयः ५–२–६
अनपाश्रया १२–१–३०
अनुप्रलीनं १०–३–६
अनवग्रहः १–१५–३६
अनवग्रहा० ८–४–३
अनवधं २–११–५१
अनवमिश्रं ८–५–४
अनवधरागः २–११–२१
अनर्थत्रिवर्गः ९–७–६२
अनर्थ्यसंयोगः ८–३–२०
अनागतावेक्षणम् १५–४–४३
अनिकारः ९–४–२५
अनिःस्रावी १–१५–१
अनित्यामित्रा ७–१०–१६
अनिर्देशः ३–३–७
अनिष्कासिन्धः ३–१–७
अनीकदर्शनं १३–४–२६
अनीकस्थः २–१–७
अनीकस्थानम् १–१६–८
अनुग्रहः ७–३७–३२
अनुग्रहः २–१–१५
अनुप्रणतः १२–१–१
अनुनयः २–१०–३७
अनुपातः ७–१७–४७
अनुप्रवेशः ३–२९–१७
अनुभाष्य ३–५–२६
अनुमतम् १५–१–४१
अनुमतिः १४–१–३०
अनुमताः ३–११–२६
अनुयानं १०–४–१३

अधि० अ० अङ्काः

३-१३-४६
७-७-११
१-८-२६
८-५-१
९-१-४६
१३-४-१६
१०-५-३५
२-४-१६
२-२१-१४
२-६-२४
७-१८-४
३-७-२५
१०-५-५३
६-१-१३
१०-११-१६
३-१६-३१
१४-१-९
२-६-१९
२-६-२७
३-२०-१४
१-१२-१९
३-१४-२
१०-३-५६
४-३-६
५-३-७
२-१-६
१०-१-२
२-१९-२३
१०-५-३
१-१२-१
४-२-२४
३-७-३४
२-६-२१
३-८-१३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अन्तर्धिः	७-१३-२५
अन्तर्धिः	७-२-१३
अन्तर्वंशिक	५-३-५
अन्तर्वंशिकसैन्यस्थानम्	२-२०-१३
अन्तर्हितः	१२-३-१५
अन्तःस्थायी	९-६-१६
अन्तावसायिनः	३-१८-८
अन्तम्	१३-१-४
अन्धः	१-१२-९
अन्ताह्निकः	१४-१-४
अन्यजातः	२-२-२०
अन्यभावदेशीयः	७-६-८
अन्वर्थी	३-११-२८
अन्वाधिः	३-५-४
अन्वाधिः	३-१२-१८
अन्वाधेयं	३-२-३७
अन्वायनं	२-२१-१८
अन्वावायः	१०-५-२
अपकृष्टं	७-६-२७
अपचकितः	७-३-१२
अपचरणं	४-१-३१
अपचरिताः	७-२-२८
अप्रजायमाना	३-२-३८
अप्रतिहतः	२-१८-१७
अप्रतिहतः	२-४-९
अप्रतिहत कोष्ठकः	२-४-१७
अप्रतिहतः	१०-६-४१
अपत्यपूजनं	१३-१-१३
अपदेशः	४-८-२
अपदेशः	१-१२-६
अपनयः	९-५-१
अपयानं	१०-५-५५
अपरक्तदूष्याः	१३-३-१२
अपवर्गः	१५-१-४९
अपव्ययनं	२-१२-६

कौ०-४०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अपव्ययः	३-१-१९	अभिग्राहः	३-११-१९
अपबर्तकः	२-११-२४	अभिचारशीलः	१४-४-१६
अपवाहनं	४-९-१५	अभिजातः	८-२-२०
अपराजिवा	२-४-१	अभिज्ञानं	४-५-७
अपराजिताकोष्ठकः	२-४-१७	अभित्यक्तः	९-३-३२
अपरान्तः	२-११-१५	अभित्यागः	१२-४-४
अपरुद्धः	१-१०-३	अभित्यक्ताः	९-३-३१
अपतुं	१३-४-८	अभित्यक्त शासनं	१३-३-३३
अवशब्दः	२-१०-६१	अभिनयः	११-१-६
अपसव्यं	१३-२-२४	अभिपन्नः	१३-३-५२
अपसारः	७-१५-१०	अभिप्रघर्षणं	२-५-२०
अपसारकः	२-११-१००	अभिप्रहरण	१३-३-४६
अपसारणं	२-१४-२३	अभिभर्त्सनं	२-१०-३६
अप्रसाराः	३-११-५०	अभिन्न भेदनं	१०-४-१४
अपसर्पणं	१-१२-६	अभिभर्त्सनं	३-१८-१
अपसर्पाः	१०-१-१४	अभिमृष्ट	१-१४-२
अपसृतम्	८-५-१	अभियन्तिः	१-१८-६
अपस्रवः	७-५-४४	अभियर्नि	१०-५-५५
अपहारः	२-८-१८	अभियास्यत्कर्म	९-१-१
अपह्रारः	३-३-१४	अभियोगः	४-१-१
अपच्छिन्ना	७-१६-१६	अभियोजनं	४-५-१५
अपापरोगः	८-२-१९	अभिवृषा	१२-२-१५
अप्राप्ततीतव्यबहाराः	३-१-१२	अभिरदनं	४-११-१४
अपामार्ग	२-२५-३३	अभिरूपदायिकं	२-१-७
अप शयः	४-२-१७	अभिवदनं	४-१-६३
अपाश्रयः	३-१-१२	अभिव्यक्तः	९-६-२९
अपाश्रयाः	६-२-७	अभिशंसनं	९-५-२१
अपुत्रकं	२-६-२०	अभिशस्त्र	३-१-१३
अप्रतिसम्बद्धा	७-१६-१६	अभिशस्ताङ्कः	४-८-२७
अभयवनम्	३-१०-३१	अभिषेकः	१३-२-१५
अभिकाशा	१०-४-३	अभिष्यन्दः	२-१-१
अभिक्रान्तः	१०-६-९	अभिसंधानं	३-१-१९
अभिघातः	१०-५-१४	अभिसम्बन्धः	१-१३-२३
अभिगृहः	७-५-२२	अभिसंवासनं	१३-२-१५
अभिग्रसनं	४-९-१३	अभिसरणं	७-७-२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अभिसंस्कारः	१०-३-४५	अरः	६-२-३९
अभिसंस्कृतं	१०-३-४५	अरण्यचराः	३-१-९
अभिसारः	३-१६-१२	अरण्यचराः	७-१-५०
अभिसृतं	१०-५-५३	अरत्निः	३-८-५
अभिहारः	९-२-२३	अरलाः	३-२०-१०
अभिहित सन्धिः	७-११-४०	अराजबीजी	७-११-२६
अभिहोत्रः	१०-५-४५	अराला	१४-१-१७
अभीक्ष्णविनिपातः	१-१२-१६	अराजवाच्याः	३-१२-२९
अभूमि प्राप्तं	८-५-१	अरिभाविनस्सामन्ताः	७-१८-२९
अभ्यागारिकः	१-२०-२१	अरिमित्रम्	६-२-१८
अभ्यङ्गः	१४-२-१३	अरिमित्रमित्रम्	६-२-१८
अभ्या भव बहूनं	३-९-१	अरिभेदः	२-१७-४
अभ्याघातः	१०-२-९	अरिष्टः	१४-२-११
अभ्यासः	१-२०-८	रूपवेला	७-१७-४१
अभ्यवपत्तिः	२-१०-३५	अर्कः	२-१७-७
अभ्यवपत्तिः	१२-३-२०	अर्गलम्	२-३-१५
अभ्याघातसङ्कुल	१३-४-४३	अर्जुनः	२-१७-४
अभ्युच्चयः	७-१३-२९	अर्जुनः (हैहयः)	१-६-९
अभ्युच्चीयमानः	७-१७-३२	अर्थः	३-१-१
अमात्यकर्म	१-९-९	अर्थं परित्याग	८-३-१९
अमानितं	८-४-१	अर्थक्रमः	२-१०-६
अमात्यायत्तानि	८-१-८	अर्थकृच्छ्राणि	१-१५-३५
अमात्योत्पत्ति	१-१-३	अर्थं त्रिवर्ग	९-७-६०
अमित्र प्रग्रहणं	७-१६-८	अर्थदूषणं	८-३-२३
अमृतांशुकः	२-११-३६	अर्चना	३-१०-२३
अमृत	८-५-१	अर्मलिवः	१४-३-४४
अम्बरीषः	१-६-१२	अर्थ पूजा	८-३-३८
अम्बरीषः	२-३-१५	अर्थ शास्त्रम्	५-६-४७
अम्लकं	१४-३-३	अर्थं विनाश	८-३-२९
अम्बष्ठः	३-७-२१	अर्थदानं	८-३-२९
अयः	६-२-९	अर्थानुशासनम्	१-१९-३५
अयनम्	२-२०-६२	अर्थापत्तिः	१५-१-२९
अयस्कान्तः	१४-२-४०	अर्थोपधा	१-१०-६
अयस्कन्ता	२-१४-१९	अर्घं	२-७-२
अयूकः	६-१-१३	अर्घगुच्छः	२-११-१३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
अर्घचन्द्रिकः	१०–८–२७	अवग्राहः	९–३–८
अर्घधरणिकः	१४–१–३१	अवघाटिकम्	२–११–६
अर्घनाकालः	२–३०–३	अवघोषः	२–२१–२३
अर्घमयूरः	२–३०–३	अवघोषकः	४–११–७
अर्घचन्द्रकं	२–११–४	अवचारणं	७–१–४३
अर्घमाणवकः	२–११–१५	अवचूर्णितम	२–१२–१८
अर्घमाणिकं	१३–५–१२	अवच्छेदः	२–५–११
अर्घवराहः	२–३०–३३	अवतरणं	१०–४–१४
अर्घवाहु	२–१८–५	अवदोहनं	४–३–१५
अर्घसीतिकाः	३–११–२३	अवधानं	१२–२–१६
अर्घहारः	२–११–९	अवनिधत्ते	२–९–२५
अलङ्कारभूमिः	२–२४–१२	अवन्ती	२–२४–५
अलावुः (बूः)	१०–२–१४	अवपातः	१०–१–१२
अलाबू	१०–३–१४	अवपातनं	१२–५–४
अलिः	१४–३–७८	अवभृथः	१०–३–२८
अल्पप्रयासता	७–९–३६	अवमर्दः	
अल्पभोगः	२–९–१३	अवमर्शभित्तिः	३–८–१९
अल्पव्ययः	२–४–१८	अवरुद्धः	२–३२–८
अल्पः वादे	९–२–३	अवरोधः	१–१–११
अल्पारम्यः	७–१३–४	अवरोधनं	१२–२–२१
अवकर्षः	१०–५–१	अवरोधाः	१–२०–२१
अवक्रयः	३–९–३६	अवरोपणं	४–७–४
अवक्रयः	४–२–३६	अवलीन	२–१९–१२
अवक्रयणं	३–८–२५	अवलेखनं	१४–३–२८
अवकेशी	१३–१–१६	अवलेप्यम्	२–१४–१७
अवक्षारः	९–१–४७	अवल्गुजः	१३–४–१९
अवक्षेणं	३–१–१८	अवल्गुज	१४–११–४
अवक्षेपः	७–५–१९	अववर्तनं	८–४–२३
अवक्षेपः	१२–५–२१	अवसितं	१–११–१७
अवक्तव्यकराः	३–१–६	अवसुप्तिः	१०–२–१७
अवज्ञावधः	८–३–९	अवसृष्टं	२–६–१६
अवक्लृप्तिः	२–७–४	अवस्रावणं	७–९–३१
अवगूर्णं	३–१९–१	अवस्करः	२–८–६
अवगृहीतः	३–१–१३	अवस्कन्द	१३–२–५
अवग्रहः	४–३–१२	अवस्कन्द कालः	१०–३–३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
स्कन्द प्रतिग्रहः	१३–३–४६
त्वारः	२–८–१०
शीर्णक्रिया	७–६–२२
हीनं	२–१–१२
दि:	१४–३–४
नीः	१४–३–१
विषह्यम्	३–१४–४
वृत्तिः	७–६–३१
लोकग्राम	२–११–६८
निवर्षं	१३–१–१६
लोकग्रामिकं	२–११–६१
स्तकाः	२–२४–५
स्तः	१४–१–८
कर्माणि	१०–४–१३
करणं	२–१७–४
गृहम्	१२–४–१७
वतर	५–२–२७
स्त्य	१५–४–१२
दमकः	५–३–१२
दमकः	२–१–७
भूमिः	१०–४–४
श्रोत्रियः	१–१–६१
मुख्यः	५–३–९
वाह्यमासः	२–२०–५२
विद्या	१–५–१२
शाला	२–३०–४
व्यूह	१०–५–३६
ध्यक्षः	५–३–११
ङ्गी	२–४–१७
दङ्ग	२–१४–३९
स्वार्थं	२–१२–२०
वर्गः	१०–१–१३
नीकः	१०–६–३२
यः	७–१२–२६
रम्भं	७–११–४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
असम्पातः	३–८–१५
असक्तपृषतं	२–१३–६०
असगन्धः	१–८–१९
असत्प्रग्रहः	
असवर्णा	३–७–१९
असंमोषः	६–१७–२६
असंस्कृताः	३–६–१३
असम्भाषा	१–१६–२५
असंहत व्यूह व्यूहनं	१०–६–१
असंहत व्यूहाः	१०–६–३४
असह्यः	१०–६–११
असिः	२–१८–१२
असुरविजयी	११–१–१५
अश्विततुत्थं	२–१३–४९
अस्वकरणं	२–३६–७
अस्थि	१४–३–२५
अस्वामिसंहतं	८–०–१
अहिपृष्ठम्	२–३–१५
अहिभयं	१–१७–७
अहिस्त्रा	१४–३–१५
अहोरुपहरः	२–७–२६

आ

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
आकर	१–१–४
आकर	२–१२–२२
आकरकर्मान्ताः	२–१–१९
आकार	१–१५–७
आकाराध्यक्षः	२–१२–१
आकाशयोधिनः	१०–४–२
आक्रन्दः	१–१६–२९
आक्रन्दासारः	६–२–१८
आक्षिकः	१२–५–२१
आख्यातं	२–१०–१७
आख्यानं	२–१०–२३
आगमनं	४–८–३४

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
आचरणः २–३१–६
आचामोदकं ३–८–८
आचार्यं स्थानं २–४–८
आचूषणं १–१७–३१
आच्छेदनम् ८–५–२५
आजीवः ३–१२–१५
आजीवनं ८–४–३६
आज्ञालेखः २–१०–४
आह्विकः ४–५–१५
आटविकाः ७–१४–२७
आढकः ४–२–९
आढ्यविधवा १३–२–४१
आणिः २–३–२०
आणिद्वारम ३–८–१५
आतिपतिकाः ३–१५–७
आतिवाहिकाः १३–३–१४
आतोद्यम् १–२१–१७
आत्तप्रतिदानं ९–६–२४
आत्मनिसर्गं ७–५–३९
आत्मवत्ता
आत्मवान् ६–१–१६
आत्मसम्भावितः ११–१–३१
आत्मसंस्थाकरणं ८–२–४
आत्मामिषः ७–३–२३
आत्मोपनिधानं २–१०–५३
आत्यमिकं १–१८–१८
आथर्वणं कर्म ९–७–८४
आदहनम् १४–३–४०
आत्मधारणा ७–१०–२०
आदानं २–६–१४
आदिष्ट सन्धिः ७–३–३२
आदीपनं ७–१–४५
आदेयः ९–४–५
आदेशः ३–१२–१८
आदौ ७–७–३१

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
आधानं १०–४–९
आधान गतिकः २–३२–६
आधारः ३–९–३
आधिः ३–१–१६
आधिकं ३–१–६
आध्मानं ४–७–५
आनन्त्यं २–३–१४
आनाहः ४–३–३१
आनूपः १०–४–२
आनूप्याः ७–११–३
आनृशंस्यम् ७–६–२६
आन्तरवती २–११–६०
आन्तरवत्यं २–११–५७
आन्वीक्षिकी (विद्या)
आपणः १४–३–७१
आपत् ९–६–५
आपातः १०–१–१२
आपातनीयं २–६–१५
आपत्तिः ९–७–३६
आपदः ९–७–८२
आपन्नसत्वा १–१७–२५
आपमित्यकं २–१५–
आपूविकः ७–१७–४५
आप्तभावोपगतः १३–३–१३
आप्लावनं १२–३–१९
आबन्ध्यः ४–१२–७,२८
आभ्यन्तर प्रकृतयः १–१–११
आभियोगः ४–४–६
आमकं ४–८–१४
आमिषं ८–३–४४
आम्रः १–१७–४
आम्रं २–११–८५
आम्लीयाः १–१७–३५
आयः २–६–२२
आयतिः ६–१–१०

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
२–१०–५२	आवेदकः	३–१–१७
९–६–७	आवेशनम्	२–१४–१
६–३–३९	आवेशम्	१–२१–८
२–१९–२९	आवेशनिका	५–१–४७
२–१९–२१	आशानिर्वेदः	७–६–३०
२–३२–९	आशास्ति	१–११–१७
२–६–१०	आश्रमः	३–१–९
२–६–२०	आश्रमधर्मः (शास्त्रम्)	१–११–१
१०–१–६	आश्रयकारी	१०–२–९
२–१८–१५	आश्वयुजः	२–२–५६
७–१–३३	आश्वासः	१०–४–१३
३–७–२६	आषाढः	२–२०–६०
४–१–३५	आसङ्गः	१–१६–१२
२–१५–६३	आसनम्	१–१२–७
७–१७–४३	आरक्षविपर्यासः	१०–१–१३
२–३०–२९	आसनम्	७–१–२०
१–१३–९	आसवः	२–२५–१७
६–२–२	आसारः	१–१६–२९
७–१७–४०	आसारः	७–४–१६
२–११–८	आस्रावणं	७–१–३२
२–११–८१	आसुरविवाहः	३–२–७
१२–२–३३	आसुरीवृत्तिः	९–९–२५
९–२–१८	आसुरीसृष्टिः	९–७–८२
३–२–४	आस्तरकः	१–१२–९
२–११–४२	आस्तरणम्	२–३२–१४
२–३२–१२	आस्फोतः	२–२५–३३
२–३०–३३	आस्फोटः	१४–१–११
१–१२–२०	आस्फोहिमं	२–१८–६
२–१८–१७	आहरणीयम्	२–६–१६
३–९–२५	आहार	४–४–९
७–८–२	आहार्यबुद्धिः	१–१७–४४
१०–५–२१	आहितक	३–१–१२
१४–३–४	आहितकः	२–१–२५
७–१५–२२	आहितकम्	४–६–११
२–११–९७	आहिच्छत्रक	२–११–३५

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः

ओजा: १०-५-१६
औत्तरपर्वतकः २-११-७०
औत्पातिकं २-७-२
औत्पादिकः २-७-२
औदनिकावासः २-३६-१४
औदार्यं १०-४-१४
औपकारिकः ११-२-४
औपघातिकः १३-५-२१
औपनिषदिकं १४-१-१
औपपादिकः १-१०-३
औपवाह्यम् १०-१-४
औपवाह्याः २-३०-३०
औपवाह्यः २-३२-६
औपवेणुकः २-३०-३०
औपशायिकदोषः ३-१५-१२
औपशायिकः २-२२-१६
औपस्थायिकः ५-३-१७
औपायनिकं २-६-२०
औरभ्रकं भयम् १-१७-१२
औरसः ३-७-१९
औषधवर्गः २-१७-११

ए

एकचरः २-२-११
एकतोभोगि ७-१६-१३
एकपात्रम् ११-१-१०
एकपादप्लुतः २-३०-३६
एकप्रग्रहः १-१०-३
एकप्लुतः ४-३-३६
एकरात्रिकं १३-५-१२
एकलोष्टवधः १-१७-३९
एकविजयः
एकाङ्गम् १०-४-१४
एकाङ्गविजयः १०-४-१४
एकान्तः १५-१-५७

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः

एकान्तः ७-७-११
एकाम्लकं ४-३-३
एकायनम् १२-४-२५
एकायनमार्गः १०-२-१७
एकार्थाभिप्रयातः ७-१८-२१
एकावली २-११-२१
एकैश्वर्यं ५-६-२३
एधनम् ८-१-१३
एलकः १४-१-३०
एला २-२५-२७
ऐन्द्राबार्हस्पत्यं १-१७-२४
ऐलः १-६-७

इ

इक्षु २-२४-२०
इङ्गितम् १-१५-८
इङ्गुदी १४-१-११
इज्यास्थानम् २-४-८
इतिहास १-५-१३
इध्मं १४-१-४
इन्द्रः १-१३-१०
इन्द्रकोशः २-१-१२
इन्द्रकीलः २-३-३६
इन्द्रगोपः १४-१-१०
इन्द्रच्छन्दः २-११-७
इन्द्रधनुः ५-७-१३
इन्द्रनीलः २-११-३१
इन्द्रवानः २-११-२७
इन्द्रवानकं २-११-३७
इन्द्रावृहस्पती १-१६-२४
इन्दीवरं २-२५-३३
इरिणम् २-१-१
इषवः २-१८-१०
इष्टकाः २-५-५
इष्टिः ९-४-२५

	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
	७-१७-५	उत्साह	९-१-२
ई	:	उत्साहसिद्धिः	६-२-३४
	१३-१-७	उत्सेकः	१-१५-११
	:	उत्सेचकः	२-२८-१३
उ	:	उदकं	१२-५-२०
	३-७-२२	उदक चरणानि	१२-४-२८
	१४-१-४	उदक नालिका	४-८-२१
	१-१३-९	उदक पीडनं	८-४-२
	७-३-३३	उदकवस्तिः	१३-१-३
	७-२-२२	उदकप्लवाः	१४-२-४०
	४-६-३३	उद्रकवर्णः	२-११-३०
	४-६-१३	उदकपरिचारकः	७-१७-४८
	१-१३-९	उदकानि	१०-१-१७
	२-१७-५	उद्रः	६-१-६
	२-४-१३	उदग्र	१०-५-४२
	३-१६-२०	उद्रवसा	१३-१-३
	२-१४-१९	उदग्रता	१०-५-४२
	४-४-१०	उदासीन लिप्सा	७-१३-२८
	२-१६-५	उद्घातिमं	२-१०-६
	२-१९-२३	उदञ्जरः	३-८-११
	२-३२-१२	उद्धर्षणं	११-१-५०
	१५-१-५५	उद्धारकः	२-७-३२
	२-११-१७	उदपात्रम्	३-५-२३
	२-९-२८	उदपानकम्	२-३-१५
	३-१७-१०	उद्धन्वः	४-७-३
	१३-४-५६	उद्भाण्डीकृतः	२-३६-१३
	१-२१-७	उद्भेदजं	२-१५-१५
	२-२१-१७	उदयः	३-१२-२६
	१४-२-४१	उदयनः	९-८-३६
	२-११-६२	उदयानम्	३-८-६
	२-११-३०	उद्यानं	१०-२-१७
	२-१८-६	उद्यानकम्	१०-६-३६
	१४-२-४५	उदरदासः	३-१३-२
	२-३४-८	उदारकः	२-१५-२७
	२-१४-३	उदश्वित्	२-२९-२७

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
उदासीनः	६–२–२२	उपधानं	४–२–२२
उदास्थितः	१–११–४	उपनतः	७–१६–३०
उदाहरणम्	१–५–१४	उपनिपातः	३–१२–२३
उदुम्बरः	१४–२–१६	उपनिपाताः	१–१–६
उद्दूषणं	७–१४–६	उपनिधिः	४–६–११
उद्देशः	१५–२–१५	उपनिविष्टं	८–४–१
उद्देशः	१–१५–३	उपनिष्कर्षः	१२–४–२४
उद्देशः	३–९–१२	उपनिषत्प्रणिधानं	७–१–३२
उद्रः	१३–१–३	उपनिषत्प्रतिषेधः	५–१–३७
उन्मत्तः	३–१–१३	उप प्रदानं	२–१०–५४
उन्मथ्यावघानं	१०–५–५३	उपभोगः	१४–१–२
उन्मादः	१–१२–१४	उपभोगः	४–७–२३
उन्मथ्यावघानम्	१०–५–५५	उपमानं	१५–१–२७
उन्मानम्	२–७–२	उपयुक्तः	२–५–१६
उपकण्ठं	२–३०–४१	उपयोगः	७–३–१
उपकरणानि	२–१८–१८	उपरितहाक	३–७–२९
उपगतः	३–७–१६	उपरिनिबन्धः	४–८–२१
उपगमनम्	१३–२–२	उपरोधः	७–१६–१६
उपग्रहः	७–३–२८	उपरोहः	३–१२–२
उपग्राहः	११–१–८	उपलिङ्गनम्	४–६–१२
उपग्राहः	७–५–२२	उपलेखनं	४–९–१७
उपघातः	७–१५–२३	उपवाद	३–१८–१
उपचयः	७–३–१६	उपवासः	१०–३–३४
उपचारणं	११–१–६	उपवासाः	३–१०–८
उपजवः	२–३–४१	उपविचारः	२–३२–७
उपजा	२–६–२२	उपवृंहणम्	७–१७–७
उपजापादभुत	१३–१–२१	उपवेधकः	४–११–७
उपजिह्विका	१३–२–६	उपशीर्षकम्	२–११–१६
उपतीदनम्	५–५–९	उपसंप्राप्तिः	९–६–५४
उपत्यका	२–१२–१२	उपसर्गः	२–८–३
उपदाग्राहकः	४–४–७	उपसालः	३–१०–२०
उपदेशः	१५–१–१९	उपस्कन्दनम्	२–३–१५
उपदेहः	१–१७–३१	उपस्थायुकाः	२–३१–१
उपधिः	४–१–१७	उपस्थानम्	१–१९–२६
उपधिः	३–१–२	उपस्थानम्	२–७–३

अधि० अ० अङ्काः

२-२३-२
२-१५-११
२-५-२
८-४-५
७-२-२१
३-१-२
२-१०-४७
३-११-५
३-१६-११
१०-५-५६
२-१०-३१
१३-५-२२
१-१४-३
२-३१-१
७-४-२
१४-२-२८
१२-५-२
१३-३२२
१-१२-१८
७-१५-१४
७-९-४४
२-१-१७
१-१-१२
१३-१-१०
४-८-२२
४-९-१७
१३-४-१४
२-१५-६२
२-१४-४७
४-३-४१
२-११-५९
२-३-३५
१४-१-८
२-१७-१२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
उष्ट्रिका	१४-१-३३
उष्ट्री	१३-१-१३
उष्णीषः	१-२२-१
ऊ	
ऊर्णा	२-२३-२
ऊर्ध्वंभक्षितः	१३-३-२९
ऊर्ध्ववाहुः	२-१८-५
ऊर्मिमार्गः	२-३०-३५
ऊरुवेष्टः	४-८-२२
ऊह्यम्	१५-१-६९
ऋ	
ऋक्षः	१३-२-२४
ऋतुः	२-२०-५४
ऋत्विक्	५-३-३
ऋतुगामित्वं	१-३-९
ऋषभः	१४-३-५८
क	
कक्षाभिक्रान्तः	१०-६-९
कक्षौ	१-१-१२
कक्ष्याः	१-२०-१
कक्ष्या	२-३२-१२
कङ्कः	१४-२-४३
कङ्गु	१४-२-१७
कञ्चग्रहणी	२-३६-१८
कचग्रहणी	९-२-२७
कञ्चुकः	२-१८-१७
कञ्चुकम्	१-२१-१
कटच्छन्नम्	२-३९-१९
कटभङ्गमुष्टिः	५-२-१०
कटफलः	१४-४-८
कटवानकम्	२-११-१०१
कटी	२-११-२७
कटुकवर्ग	२-१५-२०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कटुकालावुः	१४–२–४	कपिलं	२–११–५५
कटुतुम्बी	१–१–९	कपोलः	१३–१–२
कटुमानं	२–१३–४१	कम्बुः	२–१३–१०
कणिङ्कः	५–५–११	कम्बोजाः	११–१–४
कण्टकः	२–१७–५	कम्बल	२–११–९८
कण्टक प्रतिसराः	२–३–१५	कम्बली	१४–१–४
कण्टकाः	६–१–८	करका	१३–१–११
कण्टकारः	१४–१–१७	करञ्जः	२–२५–३३
कण्ठत्राणं	२–१८–१७	करणः	४–११–३१
कण्डकः	१४–३–८	करणं	३–१–१५
कण्डला	१४–१–१९	करदाः	२–१–८
कण्डोली	२–१५–६२	करभः	२–१२–८
कण्डोलिका	१४–३–२९	करमर्दः	२–१५–१८
कदर्मः	१–१४–४	करवीरः	१४–१–९
कन्दः	२–१५–२१	करसाधनं	१–१३–११
कन्दलीवज्रकन्दकल्कः	२–१३–९	करुप्यः	२–२–१५
कन्यापुरम्	१–२०–११	कर्कटकः	५–१–३३
कन्याप्रकर्म	४–१२–१	कर्णकीलः	३–७–१
कन्यावाहिकाः	१३–३–४८	कर्णिकारः	१४–२–११
कपालसन्धिः	७–२–१४	कर्तनम	२–२३–२
कबन्ध दहनं	४–३–१५	कर्दमः	१४–१–९
करणाधिष्ठितः	८–४–३१	कर्पणः	२–१८–७
कर्दमोदकं	१०–४–८	कर्पूरः	२–१२–१
कर्मपथः	७–१२–२९	कर्मकराः	२–१५–६१
कलत्रगर्षि	८–५–१	कर्मगृहम्	२–४–१३
कलमितिका	२–११–९८	कर्मनिषद्या	२०–३–१०
कलह स्थानं	११–१–६	कर्मसंवत्सरः	२–७–१
कल्यः	९–४–४	कर्मारः	२–२४–४
कंसः	२–२०–१४	कर्मान्तः	१–१०–१५
कंसः	२–१२–२३	कर्वुरः	२–१२–१४
कपाट	२–३–२४	कर्वानम्	४–३–१८
कपाटः	२–१८–१७	कर्षः	२–१९–४
कपालः	१४–२–१९	कर्षकम	३–९–११
कपिः	१४–३–७३	कलभः	२–२–३
कपित्थः	२–१५–३९	कला	२–२०–२५

अधि० अ० अङ्काः
२–११–२७
२–१२–६
२–११–३१
२–२–१५
१–३–३
७–१७–४०
२–३–३४
१–१४–२
७–८–१२
९–२–२७
४–३–१५
९–१–३१
२–१३–४८
३–२०–८
१०–६–३६
१४–३–७३
२–१२–१३
१३–१–१३
४–१–११
२–१३–४१
७–१२–२९
३–११–३६
२–१३–३३
१४–३–९
२–३–३४
२–१८–१४
३–६–२
५–५–११
३–७–१०
२–११–७३
३–१०–१
१–१०–११
२–११–४
४–१–६०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
कामः	१–६–१
कामाचारः	३–६–१०
कामोपधा	१–१०–८
काम्बुकं	२–१३–१०
काम्बोजः	११–१–४
कारणादगतागतः	७–६–२५
कारणाद्गतोऽकारणादागतः	७–६–२५
कारणिकः	२७–७–२२
कारुकाः	१–१–६
कारुषः	५–३–१६
कारुषः	१–२०–१५
कार्तान्तिक	५–३–१३
कार्तीकः	२–२०–५६
कार्दमिकं	२–११–२
कार्पासिः	१४–१–१३
कार्पासिकम्	२–११–११५
कार्मान्तिकावासः	२–४–१३
कार्मान्तिकः	१–१२–६
कार्मान्तिकः	५–३–८
कार्मारिकाः	२–३–३५
कार्मुक	२–१८–८
कार्यानुशासनं	१–१९–३३
कार्यानुशासनम्	१–१९–३३
कार्यावस्थापनं	९–७–२२
कार्योपग्रहः	९–४–२४
कार्वटिक	२–१–४
कार्वटिकं	२–१–४
कालकूट	२–१७–१२
कालचित्रं	२–११–५२
कालताम्रं	२–११–४४
कालपर्वतः	२–११–५१
कालशारिवा	१४- ३–३
कालायसी	१४–३–८५
कालावस्थापनं	९–७–६६
कालायसम्	४–१–४१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्कः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्कः
कालिकं	११–१–२८	कुटजः	४–१–११
कालिका	२–११–८१	कुट्टकम्	२–१५–६२
कालिङ्गकम्	२–१७–१२	कुट्टनशाला	३–८–२८
काली	१४–१–१४	कुट्टनी	३–६–११
काली	१–२१–७	कुट्टाक	२–२४–१
कालेयकः	२–११–६९	कुट्टिडम्	२–५–१
काशिराजः	१–२०–१६	कुटीरक्षकः	२–३२–१६
काशी	२–११–१०६	कुठारः	२–१८–१४
काश्यपः	२–३–२७	कुठारी	२–३–३४
काष्ठद्रोणी	२–१६–१४	कुडुबः	२–१९–३०
काष्ठा	२–२०–२९	कुण्ठाः	७–१२–९
कासीसं	१४–१–१३	कुण्डम्	२–५–७
कास्तीरराष्ट्रं	२–११–३७	कुत्सनम्	३–१८–१
किञ्जल्कः	५–५–११	कुथः	२–३२–१४
किटिका	२–१८–१७	कुद्दालः	२–३–३४
किट्टं	२–१२–१	कुन्तः	२–८–७
किण्वम्	१४–३–७८	कुपितमूलं	८–५–१
कितवः	२–२०–७	कुप्यगृहम्	२–४–१०
किंशुकः	२–१७–१०	कुप्यभृतं	९–२–१०
किरातः	१–१२–९	कुप्यम्	२–११–१
किष्कुः	३–८–१३	कुप्यवनहस्तः	२–२०–१६
कीटाः	२–१७–१२	कुप्याध्यक्ष	३–१७–१
कीलकाः	१४–३–७२	कुमारकाः	११–१–९
कीलमोक्षणं	१२–५–८	कुमारपुरम्	१–२०–११
कीलाटः	२–३९–३९	कुमाराभिहरणं	१०–४–१३
कुकुरः	११–१–५	कुमारध्यक्ष स्थानम्	१–२०–१२
कुक्कुटः	१४–२–७	कुमारः	५–३–७
कुक्कुटः	३–७–३१	कुमारीपुरम्	२–३–३२
कुक्कुटी	१४–२–१५	कुम्भः	१४–३–४३
कुक्षिप्रदरः	१२–५–३६	कुम्भः	२–१९–३३
कुङ्कुमः	२–७–१०	कुम्भः	१४–३–८३
कुचन्दनं	२–११–५०	कुम्भः	११–१६–४९
कुञ्जरोपवाह्यः	२–३२–६	कुम्भभाण्डः	१०–४–२०
कुटः	२–३६–२२	कुम्भी	४–१३–३३
		कुम्भीपाकः	

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
२–३–५	कूटकूपः	१२–५–१५
११–१–५	कूटयुद्धं	७–६–१७
२–१२–१५	कूट युद्ध विकल्पाः	१०–३–१
११–१–५	कूपः	१०–१–११
२–४–२६	कूपशाला	१२–५–१७
२–२४–१४	कूपकूटः	१०–१–१२
१४–३–३२	कूर्चिका	२–१९–२८
१४–१–४०		
१३–१–३	कूपीसः	२–१८–१७
१३–१–१६	कूर्पः	२–११–३६
१२–१–७	कूर्मं	५–१–३३
२–१५–३२	कूलपथः	७–१२–२१
१–१४–२	कृकणः	१४–१–४
११–१२–९	कृकणकः	१४–१–४
२–१५–३८	कृकलाक्षः	१४–१–४
२–१७–४	कृतकः	३–१०–१७
१४–३–३४	कृतप्रतिघातावस्थः	२–८–२८
२–१४–१९	कृतप्रणाशः	७–६–३०
१–३–८	कृतविदूषण	७–६–१६
१–१२–१३	कृतश्लेषणं	७–६–१६
२–१७–१२	कृत्तिः	१४–३–७८
३–३–४६	कृत्तिकाः	१४–१–३४
३–५–३०	कृत्यपक्षः	१२–३–११
२–१७–१०	कृत्यपक्षोपग्रहः	११–१–८
२–१५–२०	कृत्याकृत्यपक्षरक्षणं	१–१–३
४–१–६५	कृत्याकृत्यपक्षोपग्रहः	१–१–३
२–३–१५	कृत्याशीलः	१४–४–१६
५–१–३३	कृत्यः	५–१–१९
३–२०–७	कृत्रिमं	२–१४–४
४–१–४८	कृषि कर्म	१५–१–३५
४–२०–२१	कृषितन्त्रम्	२–२४–१
४–४–१३	कृष्णः	१४–३–४४
४–४–११	कृष्णसर्पाः	१४–१–५
४–४–२२	कृसरः	२–१२–५
४–३–२९	केदारः	१०–४–३

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः

केशकारः २–३०–४४
केशम् १३–४–२०
केशाः ३–३–२६
कैतवजमैषः १३–१–१६
कैडर्यः १४–४–५
कोचपकः २–११–९८
कोटयभिघातः १०–४–१३
कोटिः २–११–२८
कोटीजघनघातः १०–६–४९
कोठः २–११–८७
कोदण्डः २–१८–८
कोद्रवः १४–३–१३
कोप्याः १४–१–४४
कीलम् २–१५–१८
कोलियं २–११–२
कोविदारः २–१२–६
कोशः १०–१–४
कोशणारपर्वतः २–११–५२
कोशगृहम् १–२–३
कोशातकी १४–२–१५
कोशासङ्ग वर्गः ८–४–४९
कोशसन्धिः १२–१–२९
कोशाभिहरणं १०–४–१३
कोशोपघात २–११–१५
कोशोपनत सन्धिः ७–३–३१
कोष्ठकम् ३–२–२८
कोष्ठागारम् २–३–८
कोष्ठागाराध्यक्षः २–१५–१
कोचपकः २–११–९
कौटिल्यः ७–१–५
कौणपदन्तः १–८–१४
कौणपदन्तः ८–१–४१
कौण्डिन्यकः १४–१–४
कोपीनदर्शनं ८–३–६१
कोमारभृत्यः .१–१७–२५

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः

कौशिकः ९–१–३१
कौशिकस्त्रियः १३–१–४२
कौशेयम् २–११–१४
क्रकचः २–१८–१४
क्रमुकः २–२५–३०
क्रव्यादयः १४–११–१३
क्राकचिककिष्कु २–२०–१५
क्रिमितानम् ३–२३–८
क्रीतः ३–७–१७
क्रोषः १–६–१
क्रौञ्चः १–२०–८
क्लव २–६–१०
क्लीवः ३–५–३०
क्वाथः १–२१–७

ख

खचितम् २–११–१०
खञ्जनम् २–३–१
खज्जनम् १०–४–८
खज्जनहीना १०–४–८
खञ्जरीटः १४–३–३१
खड्ग २–१२–१३
खड्गाः २–१४–१२
खण्डफुल्लः ३–८–१४
खण्डसङ्घात्यम् २–११–१०
खदिरः २–१७–४
खद्योतः १४–२–११
खनक १०–४–२
खनकयोधिनः ७–१०–३६
खनिभोगः ५–११–१०
खनिः १–१०–१४
खनित्रं २–१२–१४
खरः ९–१–४१
खरकं २–११–४
खरपट्टः ४–८–२४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
खरपट्टः शास्त्रं	४–८–२४	गवेधुः	२०–१८–९
खातपौरुषम्	२–२०–१७	गवेधुका	२–१७–७
खातप्रावर्तिमम्	३–९–३५	गान्धर्वं विवाहः	३–२–६
खानम्	३–८–२१	गान्धारः	२–१४–३५
खातम	१०–१–१	गान्धारः	३–१८–८
खातसुरङ्गाः	७–१७–४८	गाढ़पेटकः	२–१४–२७
खारकीटः	१४–२–३९	गाणनिक्यं	१–२–२५
खारी	२–१९–३१	गायनः	१–१२–१०
खरोष्ट्रपथः	७–२–२७	गायनः	७–१७–३४
खुरम	२–१७–१३	गिलः	९–६–७३
		गीतम् (कला)	२–२७–२८
ग		गुग्गुलुः	१४–१–३०
गङ्गा	४–३–१२	गुच्छः	२–११–११
गजपिप्पली	२–२५–२९	गुञ्जाः	१४–१–११
गणिकाध्यक्षः	२–२७–१	गुञ्जाः	२–१९–२
गणिता	२–७–१०	गुड	२–१५–१७
गण्डिका	४–३–८	गुडः	१३–४–९
गण्डिका	१०–२–१४	गुणः	३–१–१५
गण्डिका	२–१४–५३	गुणः	२–१३–३९
गण्डूपदं	१४–२–१९	गुणद्वैगुण्यं	१३–५–१
गतागतः	७–६–२३	गुणसङ्कीर्तनम्	२–१०–४९
गदा	२–१८–६	गुणावस्थापनम्	७–१–१९
गन्ध	२–४–९	गुडेनः	१३–४–९
गन्धः	७–१२–२२	गुरुकुलम्	३–११–१०
गंधयुहनम् (कला)	२–२७–२८	गुल्मः	२–३५–१२
गव्य	६–१–८	गुल्मः	१०–४–३
गर्भधान्यं	९–१–१२	गुल्माः	२–२–३
गर्भिणिका	२–११–४२	गुह्यम्	१४–४–२२
गर्दभः	१३–१–१६	गुह्यप्रवृत्तिः	१३–१–२
गर्भः	१–१७–४२	गूढपुरुषप्रणिधिः	१–१२–१
गर्भः	१४–२–४४	गूढ़जः	३–७–८
गवयः	२–१७–१४	गूढप्रणिहितः	१२–५–४७
गवाश्व	२–४–१४	गूढ़भित्तिः	१–२०–२
गवाश्वव्यायोगः	१०–४–१८	गूढाजीवाः	११–१–४२

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
गूढाजीवाः ४-४-२३
गूढाजीविनः ३-२०-२
गृध्रः १४-२-४२
गृन्थिभेदः ४-१०-१
गृहकपोताः २-३४-११
गृहगोलिकाः १४-७-४
गृहपतिः
गृहपतिकव्यञ्जनः १-११-९
गृहीतानुवर्तनं ९-६-२४
गैरिकः २-१३-१८
गोजी १४-४-२
गोतमं १४-१-१७
गोघा ५-१-३३
गोधा १०-६-३५
गोधामुखं २-३-३१
गोधूमः २-११-८१
गोऽध्यक्षः २-२९-१
गोपः २-१-७
गोपायकः २-७-३३
गोपालकः २-२५-२
गोपित्तम् २-१२-८
गोमारिका १४-१-४
गोमूत्रकः २-११-३०
गोमूत्रिका १०-५-५३
गोमूत्रिका १४-१-१३
गोभेदकः २-११-३०
गोमृगः २-१७-१३
गोमेधिकः २-१२-३०
गोयानं १४-३-५९
गोयूषः १०-६-४९
गोरुतं २-२०-२५
गोरोचना २-१२-८
गोवृषः ३-१०-३४
गोशीर्षकः २-११-४४

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
गोष्पणपाषाणः २-१८-१५
गौः १४-१-११
गौडः २-१३-१०
गौरसर्षपः २-१५-२०
गौरार्द्रम् २-१७-१२
ग्रन्थिका १४-१-२५
ग्रहणं १-५-५
ग्रामकूटः ४-४-८
ग्राममृतकः ५-३-२३
ग्रामिकः ३-४-९
ग्रामेरुः १-११-४६
ग्रासः १०-२-१८
ग्राहणम् ११-१-३१
ग्रीष्मः २-२०-६०
ग्रैवेकम् २-३२-१२

घ

घटिका २-१९-४६
घटोबलम् १४-३-४४
घनम् २-१४-१७
घनसुषिरम् २-१४-१७
घुणजग्धं १-१७-२३
घुणः १-१७-२३
घृतम् १४-१-३५
घोटमुख ५-५-११

च

चक्रचरः ४-४-३
चक्रचराः ७-१७-५७
चक्रपथः ७-१२-३
चक्रम् ७-३-२२
चक्रम् ४-१०-८
चक्रवर्तिक्षेत्रम् ९-१-१८
चक्रवाकः २-२६-६
चक्रवालः २-१३-१०
चक्रान्तः १०-२-४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
चक्रिचतुष्पदं	१०–२–१६	चापः	२–१७–५
चक्री	१०–३–१६	चापं	२–१८–८
चकोरः	२–१५–२०	चारः	८–१–१२
चक्रवालः	३–७–२६	चारः	३–१–४७
चतुरस्रम्	१०–१–१	चारकः	४–९–२१
चतुरस्रिका	२–१७–१०	चारणाः	४–३–६३
चतुष्पदपरिचारकाः	५–३–१७	चारसञ्चारिणः	५–३–२४
चतुष्पदपारिकर्मिकाः	५–३–१७	चारायणः	५–५–११
चन्दनम्	२–११–४३	चार्यं	१–१०–२०
चन्द्रोत्तरा	२–११–३६	चात्मनिकाः	२–१५–६२
चमसी	२–१५–२९	चिक्कणा	२–१२–२
चमूमुखः	१०–६–१८	चिकित्सतः	७–१७–४५
चरणः	२–१–६७	चिकित्सकः	५–३–१२
चर्मं	२–११–९६	चित्रकम्	२–२५–३०
चर्म	२–१८–१६	चित्रभेकः	१४–२–४
चर्मकरण्डः	१०–२–१४	चित्रभोगं	२–१६–१०
चर्मकाराः	२–२३–१७	चित्रम् (कला)	२–२७–२८
चर्मकारस्थानम्	२–४–१३	चिङ्गिटं	२–१५–२७
चर्मादिवर्गः	२–१७–१३	चिमियः	२–५–१
चर्याः	२–३–१४	चिरतत्रः	१४–२–४३
चलयन्त्रम्	२–१८–६	चीनः	२–११–१४
चलयन्त्राणि	२–१८–६	चीनसी	२–११–८८
चलसन्धिः	७–१७–३३	चुच्छुन्दरी	१४–१–२९
चलमित्रं	७–१३–७	चुन्चुवालुका	२–१२–५
चलितशास्त्रः	८–२–९	चूतः	२–१२–३
चाक्रवालिकं	२–१३–१०	चूर्णवासः	१–२१–१४
चातुर्मास्यं	१३–५–१२	चूर्णी	२–११–२
चातुरन्तः	६–१–१७	चूलिका	२–१३–१४
चातूरात्रिकं	१३–५–१२	चेदिः	२–२–१५
चान्द्रमासः	२–२०–४९	चेल्लम्	२–१४–५३
चापकुक्षि	१०–६–१३	चेष्टा	७–२–१८
चापकुक्षिः	१०–६–१३	चैत्यं	२–३५–३
चापपाद	१०–६–१४	चैत्यम्	४–३–४१
चापं	१०–६–१३	चैत्यम्	१–२०–३

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
चैत्रः २-२०-५९
चोचम् २-२५-२९
चोर्चं २-२५-२९
चोदना २-१०-३३
चोरकः २-१५-२०
चोरग्रहणीविद्या ४-५-१३
चोरप्रसंज्ञाऽ ८-४-३४
चोररज्जुः २-६-३
चोररज्जुकः ४-१३-१०
चौर्णेयं २-११-२
चौलम् १-५-७

छ

छत्रम् १-१३-७
छन्दिका ११-१-९
छर्दिः ३-१९-२
छन्दोविचितिः (वेदाङ्गं) १-३-३
छाया १-७-८
छायानालिकाप्रतोदः १-७-८
छाया पौरुषम् २-२०-१०
छिद्रं ७-११-३७
छिन्न पुरुषवीवध ८-५-१
छेदः २-२०-३९

ज

जघनं १०-५-३४
जघनाभिघातः १०-४-१३
जङ् २-२२-७
जङ्घाकारिकः २-१-७
जटिलः १३-१-१
वर्णाः जडः १-१२-९
जनपदसन्धिः ३-१-१९
जनपदान्तः १३-२-१९
जनपदः २-१-१
जटिलाः ७-१७-५०
जम्बूः २-१२-१२

प्रतोकानि अधि० अ० अङ्काः
जम्बूनदी २-१३-३
जम्भक विद्या १३-२-१३
जस्म्भवाभः ३-११-३१
जयन्तः २-४-१७
जयन्तकोष्ठकः २-४-१७
जरद्गुः २-२९-४
जरायुः १३-१-३
जबः ९-४-२४
जाङ्गलीविदः ४-३-३५
जातरुपं २-१३-३
जातिटिङ्गुलकः २-१३-१९
जाती १४-१-१६
जातिः १०-३-४३
जात्यम् ४-१-१९
जात्यः ७-१७-१८
जानुः १४-३-१७
जानुभञ्जनी २-३-१५
जामदग्न्यः २-४-७
जामदग्न्यं २-१८-५
जाम्बवाजः २-११-३१
जाम्बूनदं २-१३-३
जापंकः २-११-४७
जालकम् २-११-२७
जालूथः १-२१-१६
जाल्मः ४-४-९
जिह्वा १४-१-२५
जीमूतप्रभः २-११-३१
जीवकाः ३-२०-१६
जीवञ्जीवकः २-२६-५
जीवन्ती १-२०-५
जीवन्मरणम् १-१७-२२
जोङ्गः २-११-४८
जोङ्गकं २-११-५७
जोङ्गनी २-१४-२३
ज्वरः १६-१-२४

	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
	२-१८-९	तरगसावनानि	
	७-३-३५	तरल प्रतिवन्धः	२-११-६
	२-२०-६०	तर्कुभ्रामी	२-११-४
	९-१-४०	तर्कुः	२-११-४०
	२-११-३५	तरः	२-३५-१२
	१-३-३	तर्जनं	४-९-१३
झ		तला	४-८-२२
	१०-६-१९	तलिच्छकम्	२-११-९८
ट		तलः	४-८-२२
	४-४-२०	तादात्विकः	२-९-२०
ड		तापसव्यञ्जनः	१-११-१३
	२-६-२०	तोपी	२-१३-२१
	१-१७-४२	ताम्रपर्णिकं	२-११-२
		ताम्रधातु	२-१२-१२
त			
	१४-२-५	ताम्रपर्णी	२-११-२
	१४-४-९	ताम्रपीतं	२-१२-५
	२-५-८	ताम्रं	४-१-३५
	४-२-१६	वारं	२-१३-८
	३-९-३३	तार्णसं	२-११-४५
	१४-१-३६	ताणंसं	२-११-४५
	१४-४-३३	तार्पाबाधं	८-४-२
	६-१-४	तालजङ्घः	१-६-६
	१३-२-११	तालपत्रम्	२-३-१५
	४-१-१९	तालभूर्जः	२-१७-९
	९-४-१७	तालमूलमुरजकं	२-३-७
	१४-३-४३	वर्णा तालमूलं	२-१८-१०
	२-११-१७	तालवृन्तं	२-१८-६
	२-११-९७	तालावचराः	२-२७-५९
	४-१-८	ताली	२-१७-९
	८-३-५४	तालं	२-१८-८
	८-३-५४	तालः	१४-३-६३
	८-५-२१	तालः	२-१२-२२
	२-१३-३३	तालः	२-३-७
	३-२०-२१	तिनिशः	२-१७-४

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
तिन्दुकः	१४–२–११	तृणकाष्ठं	१२–५–१३
तिमितः	२–१५–३५	तृणच्छन्नम्	२–३६–१९
तिरोजनपदः	२–३४–४	तेजनाग्निः	१३–२–११
तिरोहितं	३–१–२	तेजन तैलं	१३–२–२३
तिर्यग्वृत्तिः	१०–६–४	तेजनोदकम्	१४–१–१४
तिलकः	२–१७–४	तेजनः	१४–१–१४
तिलः	२–१७–४	तेजोवती	२–२५–२७
तीर्थंकरः	३–२०–२१	तेजः	९–२–२१
तीर्थग्रहणं	१०–४–१३	तैतत	२–३०–२१
तीर्थानि	१–१२–२०	तैलपर्णिकं	२–११–६१
तीर्थम्	१०–४–१७	तैलामलकोद्वर्तनम्	२–२३–४
तीर्थं	३–२४–३	तोमरः	२–१८–७
तीव्रीकरणम	१३–५–२२	तोयग्रहणं	१०–४–१३
तीक्ष्णधातुः	२–१२–१५	तोयतरणा वतरणं	१०–४–१४
तीक्ष्णमूत्रम	२–१२–८	तोरणम्	२–३–२१
तीक्ष्णाः	१–१२–२	तोत्रोपवाह्यः	२–२३–६
तीक्ष्णक्षारः	२–१२–८	तौरुपं	२–११–४८
तुच्छं	३–११–८	तौरुपः	२–११–४८
तुतः	२–२०–२९	त्यक्तात्मा	१०–३–४६
तुत्थः	२–१३–१०	त्वक्	४–७–२
तुत्थोद्गत	२—१३–१०	त्वष्टृकारवः	२–१३–३३
तुन्नवायाः	४–१–८	त्वष्टृकर्म	२–१३–४४
तुरगास्तरणम्	२–११–९८	त्सरवः	२–१८–१३
तुला	२–१९–११	त्रपु	४–१–३५
तुलोत्सेधः	२–३–१७	त्रपुधातुः	२–१२–१४
तुलाप्रतिमानम्	२–१९–२८	त्रपुसं	१३–४–२०
तुलामानपीतवं	१–१–४	त्रासिका	२–१८–७
तूलं	१४–२–६	त्रासनं	१०–४–१५
वर्णा तुलाविषमं	२–१६–१९	त्रिकचाली	२–३०–३३
तुवरी	१४–३–६४	त्रितालः	२–३०–३५
तुष्णींदण्डः	१–११–२१	त्रिपुटकं	२–१४–२०
तुष्णीं युद्धं	७–६–४१	त्रिपुटः	२–११–४
तूर्यकराः	५–३–१५	त्रिफला	२–२५–२२
तूर्याणि	१४–४–१३	त्रिशूलप्रकारः	२–१८–६
तूर्यफेला	७–१७–३९	त्रिशूल	२–१८–६

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
२–१९–३२	दरणम	१०–४–६
	दरणहीना	१०–४–३
	द	
	दरी	२–१–३
७–१२–२२	दर्दुरः	१४–२–४०
२–२०–६२	दर्भः	१४–२–३
१–९–३	दशकुली	११–१–१७
३–२०–२१	दशकुलीवाटः	२–४–२६
१–१६–३३	दशमुलीसंग्रहः	४–४–३
९–३–३६	दशवर्गाधियतयः	१०–३–४६
३–१९–१	दशार्णः	२–२०–१५
७–१०–२०	दाखं	२–१८–८
२–२०–२१	दानकर्मं	९–६–२५
३–३–२५	दाण्डकर्मिकं	७–१६–२५
१–१६–३३	दाण्डक्यः	१–६–५
१२–५–१२	दात्यूहः	२–२६–५
७–१५–१	दात्ररश्मिग्राहकः	२–२८–१३
१३–३–२४	दानम	९–५–११
७–१६–१	दापकः	२–७–३१
१–१२–६	दाय	३–१–७
१०–३–५३	दायादः	७–१७–१९
१०–६–१	दारकगर्भः	१४–३–५
५–३–४७	दारदकम्	२–१७–१२
२–६–१६	दारुहरिद्रा	२–२५–२७
२–१८–१०	दावः	८–३–४०
१२–१–२५	दासः	२–१५–६३
७–१०–३३	दासा	२–१–२५
१–२१–२६	दासी	२–२८–२८
७–२–१	दासी	१०–२०–१८
३–७–१५	दिग्देवताः	२–४–२०
२–१५–१९	दिवसः	३–१–१७
१४–४–२	दिवायामः	१०–१–१४
३–३–९	दिवायोधिनः	१०–४–२
१४–४–२	दीर्घः	५–५–११
३–९–३८	दीर्घसलम्	३–११–१०
२–३२–१	दीर्घसूत्रः	६–१–३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
दीर्घः	५-५-११	देयात्यादानं	८-४-३५
दुकूलम्	२-११-१०२	देयविसर्गं	९-६-४
दुन्दुभि	२-३४-१०	देवः	२-२४-२६
दुर्गनिवेशः	२-४-१	देवकुलम्	३-९-२३
दुर्गपालः	१-१२-६	देवगृहम्	२-३६-२८
दुर्गमुख्यः	१३-३-३६	देवच्छन्दः	२-२-११
दुर्गम्	२६-४-८६	देवताध्यक्षः	५-२-३८
दुर्गलम्योपायः	१३-१-१	देवदण्डः	२-१८-६
दुर्गसम्प्रदानं	१२-५-२५	देवदासी	२-२३-
दुर्जयः	१०-६-२२	देवपथः	२-३-१३
दुर्दिनम्	१३-२-४७	देवमातृका	६-१-८
दुर्बुद्धिः	१-१७-४४	देवरथ	२-३३-
दुर्भिक्षम्	८-४-१	देवरात्रिः	४-३-१
दुर्योधनः	१-६-८	देवत्रः	१४-३-२
दुहित्कितिका	२-११-७८	देवसरः	२-२८-
दूतकर्म	१२-१-१	देवसभा	२-११-४
दूतमर्माणि	१-१६-३४	देवस्थानम्	३-९-२६
दूतप्रणिधिः	१-१६-१	देवी	१-१०-१
दूतव्यज्जनभेदनं	१०-६-४९	देवीगृहम्	१-२०-१
दूतस्य कर्म	१-१६-३४	देशलौच्यं	७-६-३
दूरायातः	८-५-१	देश विहारः	८-४-२
दूर्वा	१४-२-२	देशावस्थापनं	९-७-४
दूषीविषम्	१४-४-१	देशोपनतसन्धिः	७-३-३
दूष्टपार्णिग्राहं	८-५-१	देशः	३-१-१
दूष्यग्रामः	१३-३-३	देशिकः	८-५-१
दूष्यप्रकोपः	१०-६-४९	देशोपनतः	७-३-३
दूष्य शत्रु संयुक्ताः	१-१-११	दैवतप्रश्नः	१३-१-
दूष्यशुद्धिः	९-५-१९	दैवपीडनम्	८-४-१
दूष्यवधः	१-११-१७	दैवपीड़ा	८-४-१
दूष्याः	१-१-११	दैवम्	६-१-१
दुःखासङ्गः	८-३-१४	दैवविवाहः	३-२-
दृढ़कः	१०-६-१०	दैवानिमहाभयानि	४-३-१
दृति	४-३-८	दैव समेय	२-११-४
दृषत्	२-१८-१५	दोङ्गकं	२-११-४८
दृषत्	२-१८-१५	दोव शुद्धिः	८-५-१

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
३-१५-२	धमन्	१३-२-२१
२-२९-२	धमनिका	२-१८-१७
९-४-२५	धारकः	२-१५-६३
१३-३-४०	धरणम्	४-१-२९
५-३-६	धर्मभ्राता	३-१६-३७
१०-५-३९	धर्मावसथिनः	२-३६-५
१२-५-५१	धर्मशास्त्रम्	२-५-१४
१४-४-८	धर्मस्थाः	२-५-५
२-१-३९	धर्मस्थाः	३-१-१
५-३-११	धर्म्यव्यवहारः	१३-५-१४
२-१५-१९	धर्म्यः	९-४-४
२-८-१८	धर्मोपधा	१-१०-४
२-१८-८	धवः	१४-१-४
४-२-३	धातुशास्त्रम्	३-२-१
२-३६-१८	धातुः (द्वादशविधा)	२-१२-३६
६-२-३८	धान्यकान्तं	७-११-६
२-३६-१४	धान्यभोगः	७-११-१०
२-११-६६	धान्यपण्यस्थानम्	२-४-९
१०-१-१	धान्यम्	१४-१-२९
४-१-१२	धान्यास्त्रं	२-१५-१९
५-३-१७	धान्यव्यावहारिकावासः	२-४-११
५-३-१७	धान्वनम्	१०-३-२४
२-१७-१३	धान्वनयोधिनः	१२-४-२
११-१-६	धामार्गवः	१४-१-६
७-१-११	धारणिकः	३-११-३
८-२-५	धारयिष्णुः	१-९-१
ध	धाराः	२०-३०-४१
	धूमः	२-५-२०
३-११-३	धृतदण्डः	३-११-२८
३-१०-२०	धेनुकः	२-१८-१६
२-२०-१८	धेनुः	१-१४-९
२-२०-१३	धोरणः	३-३२-६
२-२०-१४	धौतसूत्रपर्णं	४-१-१८
२-१७-४	ध्रुवनिधिः	२-३-४
१-२१-१	ध्मायकः	२-१३-३३

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
ध्रुवः १४–१–३७
ध्वजस्थानम् १–१७–१८
ध्वजः १४–४–१३

न

नक्र १३–१–३
नकुलः १४–३–७७
नक्षत्रमाला २–११–१२
नक्तमालः १४–४–६
नक्तमाललता ४–८–२२
नगरं १३–४–३२
नगरम् २–३६–१
नगरदेवतास्थानम् २–४–१५
नगरव्यावहारिकासः २–४–११
नट १–१२–९
नडः १४–१–१४
नदीपालः २–५–३
नदीमातृकम् ७–१२–७
नदीवेगः १३–४–२६
नन्दकः २–११–३१
नन्दराजः १५–१–७३
नप्ता १३–४–१४
नमः ६–२–११
नरः १४–१–१३
नरकः १४–३–१९
नर्तकः ७–१७–३४
नलः १४–२–३०
नलतूलः २–११–९२
नलतूला २–११–९४
नलाधानम् १०–४–२
नवकर्म २–११–११६
नवनीतं १४–३–८४
नवमालिका २–११–५९
नव वेत्रलता ४–८–२२
नवागतम् ८–५–१

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
नवः १३–५–२
नष्टम् ५–३–३१
नष्टम् २–२९–१२
नष्टप्रस्मृतम् २–६–२०
नस्तः प्रयोगः १३–१–३
नाकुलः २–३–३
नाक्षत्रमासः २–२०–५०
नागः १३–१–३
नागकन्या १३–१–६
नागपर्वतः २–११–५४
नागरकः ७–१७–४५
नागरक्षितः १३–२–९
नागराजः १३–२–१६
नागरायणम् २–३२–४
नागलता २–१७–६
नागवनपालः २–२–१०
नागवनाध्यक्षः २–२–७
नागवरुण व्यञ्जनाः १३–१–४
नागवृक्षः २–११–१०८
नागोदरिका २–१८–१७
नाट्यम् (कला) २–२७–२८
नादेयः १०–४–२
नाभागः १–६७–१२
नाभिः ६–२–३१
नाम २–१०–१६
नायकः ५–३–७
नारक १४–८–४१
नारदः १४–३–२०
नारोष्ट्र २–३०–३८
नारोष्ट्रकर्म २–३२–७
नालिः १३–२–२१
नालिका २–२०–२९
नाली २–१४–२३
नावध्यक्षः २–२८–१
नाष्टिकः ४–६–९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
वासिका	१४–३–६७	निरुक्तम् (वेदाङ्गम्)	
निकुम्भः	१४–३–१९	निरुक्तं	१–३–३
निक्षेपः	३–१–७	निरुत्वातिनी	१०–३–३
निक्षेपकः	४–६–११	निर्दशाहाः	३–१–२४
निम्नोपहितः	१२–५–५१	निर्णयनम्	७–१४–२४
निचयः	१०–४–१३	निर्देशः	३–६–२
निचयः	९–८–१	निर्भोगः	५–४–१०
निच्चारः	२–३–४	निर्मालिका	१४–३–३
नित्यव्ययः	२–६–२२	निर्याणम्	१–२१–२६
नित्यमित्रम्	७–९–३९	निर्यापणम्	४–१–४८
नित्यवश्यं मित्रम्	७–९–४१	निर्यूथः	२–२–११
नित्यामित्रा	७–१०–१४	निर्वचनम्	१५–१–४५
नित्यानन्तरम्	९–२–१५	निर्वादः	१५–२–४५
नित्योत्पादिकव्ययः	२–६–२३	निर्वेशः	७–४–२
निदर्शनम्	१५–१–४७	निर्हरणम्	७–१७–४०
निदानं	१४–९–३	निवर्तनं	२–२०–२३
निधानम्	१४–१–३	निवेशनम्	३५–२१
निधायकः	२–८–२२	(निशाचर)	१४–३–१
निन्दा	२–१४–२३	निशान्तप्रणिधिः	१–२०–१
निन्दुम्	३–२–३८	निशानम्	११–१–१३
निपाता।	२–१०–१९	निश्शर्करा	१०–४–८
निबंधः	३–१–१९	निषण्णः	२–३०–३५
निबन्धकः	४–९–१२	निषादः	३–७–२१
निबन्धपुस्तकस्थानम्	२–७–१	निष्करः	१३–४–१२
निबन्धायतनम्	३–९–३५	निष्क्रयः	३–११–९
निबन्धायतनम्	३–९–३५	निष्किंचनः	३–५–२३
निमित्तम् (शास्त्रम)	१–१२–१	निष्फुरः	२–३–१४
निमित्तम	१३–१०–७	निष्कुटाः	४–५–२
निमन्त्रणां	३–२०–१४	निष्कुलः	३–१–१२
निमिषः	२–२०–२९	निष्ठापनम्	२–१४–५
निम्नयोधिनः	७–१०–३४	निष्ठीवनम्	२–१२–३
नियमः	१४–१–१३	निष्पतनम्	२–६–१३
नियामकः	२–२८–१३	निष्पतितम्	४–६–१३
नियोगः	१५–१–६३	निष्पातनम्	३–१२–७
नियोगः	३–१–८	निसर्गः	३–१२–९

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
निसृष्टं १४–२–२३
निसृष्टव्यवहाराः ३–१–१२
निसृष्टार्थः १–१६–२
निसृष्टिलेखः २२–१०–४३
निसृष्टिस्थापन २–१०–४३
निस्तलं २–११–५
निस्त्रिंशः २–१८–१२
निःश्रेणी ३–८–२१
नीचैर्गतः २–३०–३४
नीति शास्त्रम् ५–४–३
नीप्रं ४–६–१६
नीप्रम् ३–८–१४
नीरजस्का ३–२–४५
नीलं ४–१–१९
नीलकण्ठः १४–४–३
नीलावलीयः २–११–३१
नीवी २–६–२७
नीवीग्राहकः २–९–२८
नीहारसंप्लवः १३–४–२६
नृत्तम् (कला) २–२७–२८
नेजनम् ४–१–१४
नेता ६–२–३९
नेमिः ६–२–३९
नैमित्तिकः १–१३–२३
नैवेशनिकम् ३–५–२१२
नैषेचनिकम ११–१–२४
नौः १०–३–२४
न्यङ्गम् ११–१–६

प

पक्वमांसिकः १२–४–८
पक्वान्न सुरामांस पण्यावासः २–३–११
पक्षः २–१०–४३
पक्षिणः १४–३–१७
पक्षौ १–१–१२

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
पक्षौ १०–५–१७
पङ्कः १०–३–२४
पङ्गुः ९–१–९
पञ्चाङ्गः १–१५–४२
पश्चात्कोपचिन्ता ९–३–१
पञ्चपाणिः २–३०–३५
पञ्चालिकम् २–१२–६
पट्टः २–१८–१६
पट्टसः २–१८–१४
पणः ३–१–३०
पणकर्म १–१४–११
पणनम् ७–७–८
पणमान ७–८–१
पण्डितः १–१५–२२
पण्यगृहम् २–३–१४
पण्यपत्तनम् २–१–११
पण्यम् ८–४–३४
पण्य सम्पातः ८–४–३६
पण्यसंस्थन ४–२–१
पण्याध्यक्षः २–१६–१
प्रतङ्गः १४–२–६
पताका १४–४–१३
पतितः ३–५–३०
पत्रकम् २–१५–६२
पत्तूरः २–२५–३३
पत्रोर्णा १४–१–१०
पत्यध्यक्षः ५–३–११
(पथिभक्तम्) ३–१–३३
पथिमानं २–२०–११
पदातिभूमिः १०–४–५
पदार्थ १५–१–१०
पदिकः १०–६–४५
पद्मरागः २–११–२१
पद्मम् २–११–४०
पद्मा २–२–१०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
[illegible]	२–१५–१७	परिपूर्णता	३–१०–९
रघात प्रयोगः	१३–५–१	परिबन्धबलं	५–३–८
रदूषणसन्धिः	७–३–३४	परिबन्धः	५–३–८
रदूषणः	७–३–३४	परिव्राजिका	१–१०–७
रदेशापवाहनम्	२–१–१	परिभावः	७–१४–१
रप्रयोगः	४–६–२	परिभाषणम्	४–११–१९
रपुराभियानिकरथः	२–३३–५	परिमर्दनम्	२०–१४–४८
रप्रचारसङ्क्रान्तः	१०–४–१९	परिमाणी	४–२–३
रमन्त्रणम्	५–५–९	परिमितार्थः	१–६–३
रमाणुः	२–२०–२	परिमृदितं	१–१३–१८
रमिश्रा	९–६–११	परिमोषणम्	७–५–२३
रवक्तव्यः	३–२०–१५	परिरमः	२–२०–११
[illegible]	२–१८–१४	परिवर्तकः	२–१५–५
रस्परोपकारसन्दर्शनं	२–१०–५१	परिवर्तनम्	२–१५–१,५
राञ्जिका	३–१९–१३	परिवापः	३–३–३
रायणं	२–३२–१२	परिवासः	३–१०–२३
रिकिरणम्	१२–६–९	परिवासनम्	४–८–८
रिकुट्टनम्	२–४–४४	परिवाहः	३–९–२७
रिक्रमः	७–३–२७	परिसृतम्	१०–५–५३
रिक्षीणं	८–५–१	परिसृप्तम्	८–५–१
रिखा	१–२०–१	परिस्तोमः	२–११–९८
रिग्रहः	१२–२–३३	परिहापणम्	२–८–१२
रिघः	२–३–२५	परिहार	२–२०–४२
रिक्षयः	१–१४–४	परिहारो पहतः	८–४–४९
रिक्षिप्तम	८–५–१	परिह्वारः	२–७–२
रिक्षेपः	२–३२–१२	परिहारः	२–१–१५
रिचित्तज्ञानम् (कला)	२–२६–२८	परिहीणम्	३–१२–२६
रिच्छेदः	४–७–२३	परुषकं	२–१५–१८
रित्यागस्थानम्	७–६–३०	परोक्तम्	३–२–२०
रिधानलेखः	१–१०–४१	परोक्षम्	३–१–६
रिदेशः	२–२०–१२	पर्जन्यकं	२–१८–५
रिदेवः	२–२०–२२	पर्जन्यकं	२–१८–५
रिपणितः	७–६–४	पर्यग्रम्	२–२–१०
रिगणितः	७–६–४	पर्यादानम्	५–२–५८
		पर्युपासनम्	१३–४–१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
पर्युषितः	३-१९-१७	पापेयः	२०-२०-२१
पर्येषणम्	७-१-३८	पारतल्पिकः	४-५-१
पर्शुका	१४-२-३८	पारलोहित्यकम्	२-११-६६
पल्लं	२-१९-२०	पारशवः	३-७-२१
पलालः	१४-१-९	पारसमुद्रकः	२-११-५१
पलाशः	१४-१-१९	पारसमुद्रः	२-११-२८
पश्चात्कारः	३-१९-२२	पारावतः	२-१२-६
पश्चात्कोपः	९-१-१	पाराशराः	१-१५-२१
पश्चिमं	३-१-१६	पारिकर्मिकः	३-२-१०
पष्ठौही	२-२९-४	पारिजातपुष्पकः	२-११-२१
पाकपत्राणि	२-१२-९	पारिपन्तकः	१०-६-२८
पाकः	१४-४-७	पारिभद्रकः	१४-२-२०
पाखमांसिकावासः	२-३६-३४	पारियाणिकरथः	२-३३-५
पाञ्चनदः	२-२१-१६	पारिवन्तकः	१०-६-२८
पाञ्चाल	११-१-५	पारिवेल्ली	२-१४-११
पाटच्चरः	८-३-१५	पारिहीणकम्	२-१५-१
पाटम्	४-११-१९	पार्वतदुर्गः	१०-२-२०
पाटली	१४-४-२	पार्वेतः	१०-४-२
पाठः	३-१-४५	पार्श्वं	२-१५-१
पाठा	२-२५-२६	पात्स्थायी	२०-५-१
पाण्डु काली	२-११-९०	पार्श्वानुवृत्तिः	३-३०-३१
पाण्डुरक्तं	२-११-४९	पार्श्वाभिघातौ	१०-३-१
पाण्ड्यकवाटः	२-११-२	पार्श्वस्थायी	७-१२-२१
पात्रचयः	१०-३-३०	पार्ष्णिग्राहश्चिन्तः	७-१३-१
पातः	७-४-२४	पार्ष्णिग्राहः	१-१६-२१
पादगोपाः	१०-५-११	पार्ष्णिग्राहासारः	६-२-१८
पादचर्मकोशः	१०-३-२०	पालक	५-३-१७
पादप्रक्षालनम्	४-१३-१६	पाली	३-१०-२७
पादपाशिकः	२-२-१०	पाशिका	२-११-२
पाद	१४-२-२९	पाशिक्यम्	२-११-२
पादाताः	५-३-१४	पाशुपाल्यम्विद्या	१-४-१
पादुका	२-३-१५	पाषण्डावासः	२-४-२१
पानसम्पत्	८-३-६१	पाषाणः	९-२-२७
पानानुबन्धः	८-३-५४	पांसुधावकः	२-१३-११
पापरोगी	८-२-१९	पिङ्कः	२-१४-४१

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
२–२९–३४	पुरव्ययः	२–६–१५
१४–२–३४	पुरश्चरणम्	४–५–७
२–११–९९	पुरस्ताल्लाभः	९–३–३
२–१५–६२	पुराणचोराः	४–५–१५
	पुराणम् (विद्या)	५–६–४७
१४–२–२२	पुराणभाण्डं	४–२–१
२–२९–२	पुरीषम्	१४–३–१७
१४–३–३	पुरुषान्तरसन्धिः	७–३–२४
१४–१–३१	पुरोगः (लाभः)	९–४–२३
२–१७–१३	पुरोयानम	१०–४–१४
२–११–३५	पुरोहितः	५–३–३
१३–५–२	पुरोहितपुरुषाः	५–३–१३
२–२५–२२	पुरोहितस्थारम्	२–४–६
२–१७–४	पुलाकः	२–३०–१०
२–१५–२६	पुलिन्दः	२–१–६
१४–२–१४	पुल्कसः	३–५–३१
१–१५–२७	पुंश्चली	४–८–१४
५–६–११	पुष्यः	१४–३–६
५–६–११	पुष्पमधु	१४–१–२४
७–४–४८	पुष्पम्	१४–४–१२
८–१–३	पुष्पकासीसः	२–१३–१९
१२–१–१६	पुष्परक्तं	४–१–१९
१३–१–१६	पुष्पवन्दाकाः	१–२०–५
१४–१–१३	पुष्पाभिकीर्ण	२–३०–३५
२–१७–१३	पुष्पवाटः	२–६–५
२–३०–१९	पुष्यरथः	२–३३–५
२–११–१०३	पुष्यरागः	२–११–३०
२–१२–२	पूतिः	१४–५–५
२–३६–१३	पूतिकरञ्जः	१४–१–११
३–९–५	पूतिकीटः	१४–१–४
२–१४–७	पूतिकिट्टः	२–१४–२३
२–१०–६०	पूगः	१–१३–२
१४–३–७३	पूतितृणम्	१३–४–१८
१४–३–७३	पूतितैलम्	१४–४–५
१–१६–७	पूरः	४–४–३०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्कः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्कः
पूरास्रावः	३–९–३१	प्रकाशयुद्धं	७–६–४
पूर्णकद्वीपः	२–११–६५	प्रकृतयः	६–१–१
पूर्वपक्षः	१५–१–५३	प्रकृताः	६–१–१५
पूर्वप्रणिहितः	१३–२–४९	प्रकृतिः	३–१८–२
पूर्वप्रहारः	१०–४–१३	प्रक्रयः	३–९–३१
पूर्वभुक्तिकाः	३–९–११	प्रकर्म	३–१५–११
पूर्वसाहसदण्डः	३–१–३	प्रकर्ममासः	१–२०–४०
पृच्छा	२–१०–२७	प्रकृतिक्षयः	१३–४–७
पृथगर्वाभिप्रयात	७–१८–२९	प्रकृतिप्रग्रहः	१०–३–३
पृथगः	२–३०–३३	प्रकृष्टः	७–६–८
पृश्निपर्णी	१४–२–३	प्रकृष्टभौमं	७–९–४०
पृषतकारवः	२–१३–३३	प्रक्षेपवृद्धिः	३–१३–१५
पृषतादियुक्तम्	२–१३–४०	प्रग्रहः	७–५–११
पृषतः	१३–१–३	प्रग्रीवः	२–५–३
पृषतान्श्रम्	१३–१–३	प्रघर्षः	१–२१–१४
पेटकः	२–१४–२६	प्रचयः	२–५–२
पैशाच (विवाहः)	३–२–९	प्रचलाकः	१४–३–१६
पोत्री पोट्टलिका	१४–३–४९	प्रचलाकः	१४–१–१४
पौण्ड्रकम्	२–११–१०६	प्रच्छन्दकः	४–४–३
पौतव	२–१९–१	प्रजननम्	७–१७–११
पौतवं	४–२–२	प्रजवः	१०–३–४०
पौतवाध्यक्षः	२–१९–१	प्रजापतिः	२–२४–२०
पौतवविवीतमानं	२–२–१३	प्रज्ञापनलेखः	२–२४–२०
पौनर्भवः	३–७- १२	प्रज्ञापनालेखः	२–१०–३८
पौराणिकः	३–९–२९	प्रणयपण्यागारं	८–४–२३
पौराणिकः	१३–१–७	प्रणयः	७–३–१०
पौराणिकः	५–३–१३	प्रणामनम्	७–३–३३
पौर्व्यावहारिकः	५–३–७	प्रणाली	३–८–२१
पौरुषं	२–२०–७	प्रणाशः	४–३–११
पौरुषेयः	६–१–८	प्रणिधिः	१–१६–१
पौलोमी	१४–३–४४	प्रणिनिकाय	५–४–१६
पौषः	२–२०–५७	प्रणिपातः	९–२–२३
प्रकराः	२–२४–३२	प्रतति	१०–४–३
प्रकाण्डम्	२–११–६	प्रतापः	७–४–९
प्रकोपकः	९–४–११	प्रतानम्	१–२०–५

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
८–३–५०	प्रतिष्ठित	१–१९–१७
२–११–३५	प्रतिसंसर्ग	५–४–१०
५–५–११	प्रतिसंसर्गः	१–१६–७
१०–२–२०	प्रतिसमाननम्	२–७–३०
७–१४–२९	प्रतिसन्धानम्	१२–२–२३
२–१६–१८	प्रतिसंहारः	७–३–२२
१–९–१	प्रतिष्टब्धम्	२–६–१६
७–१७–२६	प्रतिस्तम्भनम्	७–१८–१२
२–२३–५	प्रतिहृतम्	८–५–१
९–२–१	प्रतिहस्ती	१–१४–७
१–९–३	प्रतीकार	९–४–२५
७–१४–१०	प्रतीकारः	१०–२–२
२–३–२०	प्रतीकारलाभः	२–७–२
२–१९–१०	प्रतीवाप	२–१२–५
३–६–४	प्रतीवापः	२–१२–५
२–१३–२३	प्रतोदनम्	४–५–१४
२–१३–२३	प्रतोली	२–३–११
१–१५–२४	प्रत्यक्षः	१–९–४
१–७–३८	प्रत्यनुभाषा	२–१०–४५
२–१०–४५	प्रत्यन्तम्	७–६–३५
३–९–३०	प्रत्यन्तः	१–१७–४३
११–१–८	प्रत्यन्त स्कन्धः	१२–४–२०
२–७–२२	प्रत्ययः	११–१–३५
२–७–२	प्रत्यवरः	२–४४–२०
२–१३–५७	प्रत्यवसितिः	१–११–४
१४–२–२८	प्रत्यंशः	३–५–२६
१०–४–१७	प्रत्यारख्यान्	२–१०–२३
३–४–२५	प्रत्यादानम्	७–२–१३
२–१९–४०	प्रत्यादानं	७–३–१३
७–१२–८	प्रत्यादेयं	९–७–५५
१०–५–१	प्रत्यादेयः	९–४–८
३–११–२३	प्रत्यादेशः	४–५–१४
२–१०–३२	प्रत्यापत्तिः	१–१७–१३
९–३–२४	प्रत्यातापः	१०–५–२६
१०–६–१३	प्रत्यावृतः	७–४–८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
प्रत्यासारः	१०–४–७	प्रवहणं	१–३०–१
प्रथगनीकवृत्तिः	१०–६–७	प्रविष्टं	२–६–१५
प्रदरः	१०–६–९	प्रवृत्तिः	१३–१–२
प्रदानम्	३–५–२१	प्रव्रजितः	३–१–१२
प्रदेशः	१५–१–२५	प्रशंसा	२–१०–२६
प्रदेशनम्	३–१–४७	प्रशास्ताः	१०–१–८
प्रदेशिनी	४–१२–३	प्रशोधनम्	२–९–१६
प्रदेष्टारः	४–१–१	प्रसङ्गः	१०–५–२०
प्रधानायत्तसिद्धिः	९–२–७	प्रसन्ना	२–२५–१८
प्रधारणम्	४–८–२४	प्रसन्नायोगः	२–२५–१८
प्रधावितिकां	२–३–१४	स्रवणप्रपातः	३–८–९
प्रधानष्टम्	४–१६–१३	प्रसाधकः	१–१२–९
प्रपा	२–३५–३	प्रसाधनम्	२–४–३४
प्रभञ्जनम्	१०–५–५४	प्रसाधनकारवः	२–४–९
प्रभवनम्	१–४–१५	प्रसादकः	९–४–१०
भिन्नः	२–३२–८	प्रसारः	१०–२–४
भिन्नविनिश्चयः	२–३२–८	प्रसेवः	१४–३–१४
प्रभुशक्तिः	६–२–३३	प्रसृष्टस्त्रीकाः	३–४–२२
प्रभुसिद्धि	६–२–३४	प्रस्खलनम्	८–३–४०
प्रमत्तः	१२–५–४७	प्रस्थः	२–१९–३०
प्रमर्दनम्	१२–३–१६	प्रस्वापनम्	१४–३–३१
प्रमाणं	३–१–१५	प्रहतम्	३–१९–१
प्रमादव्यसनार्दनम्	७–६–४०	प्रहरणम्	१०–४–१७
प्रमृष्टस्वेतं	४–१–१८	प्रहरणविद्या	९–२–२४
प्रयामः	२–७–२	(प्रहर्तव्यसम्पत्)	७–५–२०
प्रयासवधः	८–२–५५	प्रहवणम्	७–१७–४४
प्रयासः	३–९–२०	प्रकारः	१–२०–१
प्रयोगः	२–८–७	प्राकारलोष्टः	७–१७–७
प्ररुपणम्	११–१–२५	प्राकारमानम्	२–२०–११
प्रवहणम्	१–१०–९	प्राक्षिप्तकम्	३–८–१३
प्रवातः	१४–१–९	प्राग्घूणकाः	३–१८–८
प्रवालकम्	२–११–४२	प्राजनम्	१३–३–३६
प्रवासनम्	११–१–३३	प्राजापत्यहस्तः	२–२०–१२
प्रवासाप्रतिविधानम्	२–३–१६	प्राजापत्यः विवाहः	३–३–३
		प्राज्ञः	७–१०–२३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
प्रातिवेशिकः	३–४–३
प्रात्ययिकाः	३–११–२६
प्रादानिकम्	३–५–२१
प्रापविक	४–८–१५
प्राप्तनीवी	२–६–२७
प्राप्तव्यवहारः (रा)	३–३–१
प्राप्ता	२–६–२७
प्राभृतव्यम्	७–९–३६
प्रामित्यकम्	२–१५–६
प्रावृत्तिकम्	३–१०–४४
प्राश्यप्राशम्	१२–५–४३
प्रासः	२–८–७
प्रासादः	१–२०–३
प्रियालः	१३–४–१९
प्रेतभाण्डम्	४–१०–११
प्रेष्यः	१२–२–१५
प्रेमकः	२–११–७३
प्रीतिः	२–११–१००
प्रोष्ठपदः	२–२०–५५
प्लक्षः	१४–१–१६
प्लवकः	७–१७–३४
प्लवकः	१४–१–१३
प्लवकाः	११–१–३४
प्लवङ्गमः	१४–२–३७
प्लवाः	२–१–२४
फ	
फणिजः	१४–१–१३
फलकहारः	२–११–२०
फलम्	२–१७–११
फलाम्लवर्गः	२–१५–१८
फल्गु	२–११–१
फाणितम्	२–१५–१४
फल्गुनं	२–२०–५८
फेनकः	१४–२–२४
फेना	७–१७–३९

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
ब	
बकः	१४–१–१५
बलं	१–१–१०
बल समुद्धानं	९–२–२५
बलस्य विशुद्धिः	१०–४–१३
बलस्यस्थापना	१०–४–१३
बलाग्रं	१०–४–१
बलावापः	९–५–१९
बलोपदानकालः	९–२–१
बस्त शोणितं	१३–२–६
बस्तः	१३–२–४
बदरम्	२–१५–१८
बन्धनागारम्	२–५–१
बलाका	१४–१–१५
बलिः	१४–३–१९
बलीवर्दः	२–१–२२
बाणः	१४–१–३०
बाह्यप्रकृतयः	१–१–११
बार्हस्पत्याः	१–२–४
बालकम्	२–१७–१२
बाहुदन्तीपुत्रः	१–२–२४
बाह्लवमाः	२–११–८
बाह्लवेयः	२–११–८८
बाह्लीकः	२–३०–२९
बिडालः	१३–४–१६
बिम्बः	४–१०–५
बिलेखः	१४–३–३८
बिसम्	१४–२–२
बृहस्पतिः	२–२४–७
ब्रह्मा	१४–३–३४
भ	
भग्नानुपातः	१०–५–५
भग्नोत्सृष्टाः	३–९–३३
भग्नोत्सृष्टकं	२–२९–६

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्कः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
भङ्गः	१०–३–६	भारवाह्यः	२–३०–४०
भङ्गुरः	१०–४–३	भार्गी (मार्ग)	१४–१–३५
भण्डिका	२–१४–५३	भाल्लूकः	२–१७–१
भण्डीरपाकः	१४–३–१९	भावनम्	४–२–३०
भद्रः	२–३१–१८	भाषणम्	७–३–३६
भद्रश्वासः	२–३–४०	भासः	१४–१–२५
भद्रश्रीयम्	२–११–६८	भिक्षुकः	३–४–४
भद्रसेनः	१–२०–१५	भिक्षुकी	३–३–१३
भयोपधा	१–१०–१२	भिङ्गिसी	१–११–१००
भरण्यः	१४–१–३४	भिण्डिलः	२–१८–७
भसजम्	२–१५–३७	भितिप्रणिहितं	१२–५–४
भर्त्सनम्	४–९–१३	भिन्नगर्भ	८–५–१
भन्नरक्षा	१०–५–५३	भिन्नसन्धानं	१०–४–१४
भर्म	१–१७–२५	भिन्नसंघातनं	१०–५–५८
भर्मण्याः	३–३–३	भिन्नाः	७–११–१८
भल्लातकः	१४–१–७	भिन्न कूटम	८–५–१
भल्लातकः	१४–१–३०	भिन्नमस्तकम	२–१९–१९
भव्यारम्भी	७–८–११	भिषक्	४–१–५६
भस्त्रा	४–४–२०	भीतमनुष्यता	८–३–९
कोसंतः भस्त्रा	१४–३–६८	(भीतवर्गः)	१–१४–३
भागः	२–६–१०	भीमघोषः	१०–४–१५
भागदेयम्	१–१३–६	भीमः	१०–४–१५
भागभोगः	३–९–३६	भुक्तकांस्यम्	३–६–६
भागानुप्रविष्टकम्	२–२९–६	भूमि	६–२–१९
भाजनीयं	२–१९–२९	भूमिगृहम्	२–५–३
भाण्डफेला	७–१७–४०	भूमिच्छिद्रं	१–१–४
भाण्डम्	२–१७–१५	भूमिच्छिद्रविधानं	२–२–१
भाण्डगूढलेख्यम्	१–१२–१३	भूमिभोगं	७–९–३१
भाण्डभारः	७–१७–४९	भूमि विचयः	१०–४–१३
भाण्ड वाहिनी	२–५–३	भूम्य कान्तराः	७–१८–३०
भाण्डागारम्	२–४–१०	भूः भुवः	१४–१–४०
भाण्डी	१४–१–१२	भूमि सन्धिः	७–१०–१
भारः	२–१९–१९	भृगवः	१–६–६
भारद्वाजः	१–१७–६	भृङ्गः	१४–२–१९
भारद्वाजः	१४–१–४०	भृङ्गराजः	२–२६–५

	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
	१-१२-७	मण्डलं	१०-६-२९
	८-५-१	मण्डलचित्रं	२-११-५७
	७-१८-२९	मण्डलप्रोत्साहनं	१२-३-१
	२-१-३	मण्डलयोनिः	६-१-१
	२-३०-३६	मण्डलाग्रम्	२-१८-१२
	२-१०-५५	मण्डलव्यूहव्यूहनं	१०-६-१
	७-५-४२	मण्डः	१४-२-२
	११-१-१	मण्डलिकानि	१४-३-८०
	१-३-१०	मत्तः	३-१-१३
	२-२-१४	मत्तकोकिलः	१-२०-८
	१०-३-४५	मत्स्यः	१४-२-९
	१०-६-१	मत्स्यग्राहः	१-२१-२१
	१०-३-५३	मत्स्यण्डिका	२-१२-६
	३-८-४	मत्स्यबन्धकः	३-४-२२
	३-८-२८	मदनरसयोगः	१-१८-९
	७-५-३६	मदनः	१४-१-९
	१-६-५	मदनयोगव्यवहारी	४-४-१९
	५-२-३९	मदिरा	२-४-१७
	३-८-६	मदिरागृहम्	२-४-१७
	३-१८-२३	मदहेतुनिनिश्चयः	२-३२-८
	३-२०-१८	मद्रकः	११-१-५
		मधु	१४-१-२१
म		मधुकम्	२-२५-२८
	१०-४-२७	मधुरसा	२-२५-२७
	२-३१-१०	मधुरा	२-११-११५
	२-१९-१०	मधुवर्गः	२-१५-२६
	२-३-५	मधूकः	२-१७-४
	२-१५-१३	मधूच्छिष्टं	१३-४-२०
	१४-४-९	मद्यभेदी	१०-५-३२
	४-१-१९	मध्यमः	६-२-२१
	२-११-२६	मध्यमसाहसः	२-३६-३७
	२-११-३७	मध्यमा	४-१२-३
	२-११-२६	मध्यमस्थायी	९-६-१८
	१४-२-२०	मनःशिलाः	१४-२-१७
	१-१-८	मतुः	१-१३-५

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
मन्थक २-१९-२
मन्दग्रासाः ८-४-४४
मन्दं २-३१-१८
मन्त्रभूमिः १-३०-१२
मन्त्रशक्तिः ६-२-३४
मन्त्रसिद्धिः ६-२-३४
मन्त्राङ्गानि १-१५-४२
मन्त्राधिकारः १-१५-१
मन्त्रिपरिषद् ५-३-८
मन्त्रिपुरोहितोत्पत्तिः १-१-३
मन्त्रिसाध्यानि १-१५-२०
मन्त्री ५-३-३;५
मन्त्र्यावासः २-४-८
मयूरः २-३०-३७
मयूरः १४-२-३०
मयूरपदी १४-१-५
मरकः ८-४-१
मरिचः २-२५-२७
मरुः ९-२-५०
मरुवकः २-१५-२०
मर्कतः १४-३-६८
मर्यादा १-७-८
मर्षणम् ८-२-१७
मलमासः २-२८-५१
मलयः २-११-५९
मन्त्रकः ११-१-५
मल्लकः ११-१-५
मषी १३-४-१९
मसूरः २-११-४
महाकच्छः ४-३-१२
महान् ९-४-४
महानसः २-४-८
महानीलः २-१०-३
महामात्रः २-५-५

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
महामात्रीयम् २-५-५
महाविषम् २-२७-१२
महाविसी २-११-७७
महाशकुनयः १४-२-३०
महिषः १२-४-१४
महेन्द्रः २-११-२
मागधः ५-३-११
माघः २-२०-५८
माणवकः ५-३-१७
माणवाः ४-५-१
माणवविद्या ४-५-१
माण्डव्यः ४-८-११
माण्डोलूकः १४-३-४१
मातुलुङ्गः २-११-६१
मातृवाहकः १४-१-२१
माधुर्यम् २-१०-६६
मानं २-७-२
मानभाण्डम् २-१६-६२
मानवाः १-२-२
मानव्याजी १-१९-१०
(मानिवर्गः) १-१४-५
मानुषहीनः ३-६-१
मानोन्मानविशेषः २-६-२२
मापकः २-१४-६३
मापकः २-१४-६३
माया (विद्या) १०-६-४८
मायागतम् (विद्या) १-१२-१
मायोयोगविदः ४-३-११
माकंटम् २-२७-१२
मार्गशीर्षः २-२०-४३
मार्गानुसार विनिमयः १०-५-१३
मार्गायुकः २-१२-६
मार्गायुकाः २-२-२
मार्जकः २-१४-६१

तीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्का
र्वारिः	४–३–२१	मुण्डाः	१–१२–५
ळं	३–१०–२१	मुद्राध्यक्षः	२–६–२
व्या	२–११–२८	मुरजः	२–३–७
ळी	२–१७–७	मुष्कक:	१४–४–१२
व्याहक:	१४–१–२३	मुष्टिः	१३–४–६
ाकारः	१–२१–१३	मुष्टिका	४–४–२०
येकः	२–१–२८	मुष्टिपाषाणः	२–८–१५
पण्यस्थानम्	२–४–९	मुष्टिवधः	८–२–२५
त्यसंपादनम् (कला)	२–२७–२८	मुसलः	२–१६–६२
ः	२–१५–५	मुसलमष्टिः	२–१८–६
तः	२–२०–४६	मुस्ता	२–१७–१२
सः	१४–१–३	मुहूर्तः	२–२०–२९
ानसिकः	१–२१–४	मूकः	१४–१–१६
ामाण्यं	१३–५–९	मूकः	१–१२–९
हिषः	२–११–११५	मूकसूषा	१–१४–१३
गतः	१३–३–२८	मूढं	३–१–७
म्	६–२–१८	मूढः	१–३१–१०
विक्षिप्तं	८–५–१	मूताः	२–१५–६४
भावि	७–७–४३	मूतः	२–१५–५४
निश्रम्	६–२–१८	मूत्रम्	१४–२–६
ाणि	१–१–१०	मूर्वा	२–१८–९
ः समवायः	३–१–११	मूलरक्षणं	९–२–२
ावृत्ताः	३–५–१८	मूलं	२–२७–११
ासंहृतः	८–४–४९	मूलहरः	२–९–२०
ावदातं	४–१–१८	मूशात वर्णः	१–१०–३२
म्	२–१२–३६	मूल्यं	२–६–१०
म्	१४–३–६७	मूषा	४–४–२०
पालः	९–३–२२	मृगमारणी	१४–१–१७
ः	३–१२–४	मृगया	६–२–३८
रः	४–५–१६	मृगवनं	२–२–३
ः	२–१२–८	मृगाः	१४–३–१६
कारं	३–३–३२	मृगारण्यम्	१–२१–२३
म्	१०–३–३९	मृगाश्मकः	२–११–३५
र्थ्यं	२–३–३२	मृत्युकोतः	१३–३–१६
ः	१–१२–५		

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
मृदङ्गः (कला)	२–२७–२८
मृद्वीकः	२–२४–२२
मेकलः	२–१९–१८
मेण्ढक	२–३–१६
मेदः	८–३–४६
मेदकः	२–२४–३
मेदकः	२–२५–१६१
मेदकयोगः	२–२५–१७
मेषी	१०–१–५
मेषशृङ्गी	२–२५–३३
मैथी प्रतीतपरिक्षेपः	१०–१–५
मैरेयः	२–२४–२२
मैलेयकः	२–११-३५
मोखः	२–१०–५
मोरता	१–२४–३३
मोहन गृहम्	१–२०–२
मोह स्थानम्	१४–३–१२
मौक्तिकम्	२–११–२
मौलमृताः	१०–१–७
मौलवलम्	९–२–१
मौहूर्तिकः	५–३–१३
म्लेच्छः	१–१२–२
य	
यकृत्	२–१२–५
यजनस्थानम्	३–९–२३
यजुर्वेदः	१–३–१
यन्त्रः	२–३२–१३
यन्त्रम्	९–२–२६
यन्त्राः	१४–३–६६
यन्त्रविश्लेषणं	१२–५–४५
यमः	१–८–२३
यमकः	२–३०–३३
यमो	३–६–१३
यवः	१४–१–१३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
यवकः	१४–१–११
यवमध्यः	२–२०–६
यवसम्	२–४–२७
यवागापीतं	४–८–२२
यष्टिः	२–११–२२
यष्ट्युपवाहयः	२–३२–६
यज्ञं	१–१९–३३
माचितकम्	४–६–११
यातुधानः	१४–१–६
यात्रा	४–१–४४
यानं	१–१२–७
यानकम्	२–४–१२
यानशाला	२–४–१२
यापनम्	७–१४–१०
युक्तः	२–५–१६
युक्तजनः	११–१–५६
युक्तारोहकः	५–३–१७
मुर्ग	२–२०–६४
युम्यः	७–५–३३
युग्मोरस्यः	१०–६–२६
युद्धप्रतिग्रहभूमिः	१–१६–८
युवराजः	१–१२–६
यूकामध्यः	२–२०–४
यूथचरः	२–२–११
यूथपतिः	२–२–११
योगः	१–१७–३६
योगः (विद्या)	१–२–१०
योगः	१–४–१६
योगधूमः	१२–४–२७
योगप्रणिधानम्	७–१–३२
योगपुरुषः	९–३–३६
योगस्त्रियः	११–१–४२
योगाग्नि	१२–४–२७
योगापसर्यः	१३–३–१२
योग्याभाण्डभ्	२–१८–१८

तीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
ौवनं	२-२०-२६	रसः	७-१७-४३
ौनि:	१४-३-११	रसदा	१-१३-९
ौनियोषका:	५-२-२९	रसविद्धम्	२-१३-३
ौनम्	४-७-२८	रससिद्धं	१२-४-५
र		राक्षसविवाहः	३-२-८
स:	१३-२-२४	राङ्कव	२-२३-८
सावेषणं	१३-१-१०	राङ्कवं	२-२३-८
सोघ्नरक्षा	३-१-९	रागा पहर्ता	४-४-२२
लं	२-११-१३	राजः	१४-४-३
कार्पास:	१४-१-११	राजकिल्विषी	३-२-४८
कालं	२-११-४६	राजविहारः	८-४-२३
पीतं	२-११-६२	राजवृक्षः	१४-१-२४
ोपजीविन्य:	२-२७-२९	राजशब्दोपजीविनः	११-१-५
क:	१-२१-१३	राजसारथिः	५-३-२१
ुका	१४-३-६४	राजहारः	२-६-१५
ुभाण्डम	२-१७-१८	राजा	१-१३-१०
ुमानं	२-२०-१७	राजादनः	२-१७-४
ुवर्तक:	२-२४-३	राजिः	१४-४-३
ु:	२-६-३	राजी	१-२१-७
ू:	२-२३-१९	राज्यं	१-१-१०
लं	२-११-१	राढ़ा	४-२-१६
ावली	२-११-२३	रात्रिः	२-२०-२९
कर्माणि	१०-४-१५	रात्रिचारिणः	१४-१-३
कार:	३-७-३५	रात्रिप्रेक्षाः	१४-३-८२
वक्रविप्रट्	२-२०-२	रात्रियोधिनः	१०-४-२
बलं	९-२-२७	रावणः	१-६-८
भूमि:	१०-४-३	राशिमूलं	५-२-११
मुहः	५-३-९	राष्ट्रम्	२-१५-१
मुखानि	१०-५-५५	राष्ट्रपालः	९-३-२२
विद्या	१-५-१२	राष्ट्रमुख्यः	१-१६-७
ाध्यक्ष:	५-३-११	रिक्थम्	३-५-१०
ंक:	५-३-१२	रुक्मं	१४-४-११
कलाप:	२-११-१०	रूपम्	४-६-३
ग्रहणं	१०-४-१७	रूपदर्शकः	४-१-४४
		रूपाजीवाः	७-१७-३८

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
रूपिकम्	२-१२-३०
रूप्यं	२-१३-१०
रूप्यमाषकः	२-१९-५
रेतः	१४-२-४३
रोचकयन्त्रः	२-१५-६२
रोचनी	३-८-१०
रोम	१४-२-९

ल

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
लकुटः	१३-१-१६
लक्षणम्	३-१-१५
लक्षणम् (विद्या)	१-१२-१
लक्षणाध्यक्षः	२-६-२
लक्षम्	८-३-४६
लक्ष लम्भाधिकारः	७-१७-२५
लक्ष्य लम्भ	७-१७-२५
लगुडः	९-३-२७
लग्नकः	१४-३-८५
लङ्घयत	३-२०-१५
लङ्घनः	२-३०-३६
लब्धप्रत्ययः	१३-३-४०
(लब्ध वर्गः)	१-१४-४
लम्बरा	२-११-१०१
लम्भ पालनः	८-१-५१
लयनम्	२-१२-२
लवः	२-२०-२९
लवणवर्गः	२-१५-१६
लवणाध्यक्षः	२-१२-२८
लाक्षा	१४-४-९
लाङ्गली	१४-१-१७
लाजः	२-१५-३७
लाभ (व्यय)	२-६-२५
लाभोत्पादिक (व्ययः)	२-६-२६
लिकुचः	२-११-१०८
लिक्षा	२-२०-३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
लिङ्गम्	४-१३-३०
लिच्छविकः	११-१-१५
लुब्धकः	१०-१-११
लुब्धकव्यञ्जन	१३-३-४०
लेखदोषाः	२-१०-५७
लेखसम्पत्	२-१०१६
लेखकः	५-३-१४
लेखदोषाः	२-१०-५७
लेखार्थाः	२-१०-२४
लेण्डः	२-२-१०
लोकायतम् (विद्या)	१-२-१०
लोण्त्रम्	१३-३-५३
लोध्रः	२-२५-२७
लोभः	७-५-२६
लोह कवचः	२-१८-१६
लोह जालः	२-१८-१६
लोह जालिका	२-१८-१६
लोह पट्टः	२-१८-१६
लोहमणिक रु स्थानम्	२-४-१५
लोहाध्यक्षः	२-१२-२३
लोहानि	२-१७-१४
लोहतिकः	२-११-३५
लोहितम्	१४-४-२
लोहिताक्षः	२-११-३५
लौहित्यम्	२-११-६६

व

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
वकचारी	२-३०-३६
वकुलः	२-११-१०८
वक्तव्यं	३-१-४७
वक्तृ प्रयोत्तार	१-५-८
वङ्गाः	२-११-१०२
वज्रः	२-१२-९
वज्रः	१०-६-३४
वज्रं	२-११-३९

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
१–१९–७	वराहः	७–१–३४
१४–२–२७	वराहः	१४–३–१
१४–२–१६	वराह कर्णः	२–१८–७
६–३०–७	वर्गः	३–१–१५
२–६–८	वर्गाः	२–१०–१३
२–१–१९	वर्णोत्तमवासः	२–४–२१
१–४–१	वर्तनी	२–३६–१२
२–११–११५	वर्तमानः	२–६–१६
२–२९–४	वर्तनकालः	२–२९–३४
१४–१–२९	वर्तमानायः	२–६–१८
२–३२–४	वर्धकिः	१०–१–१
१–१२–९	वर्धनम्	४–३–१५
१२–४–२०	वर्धमानकः	२–३०–३३
२–२–१०	वर्म	२–३२–१५
१–१२–२३	वर्म	१०–५–३५
४–५–१५	वर्मकारु स्थानम्	५–४–१३
१०–२–२०	वर्मिणः	११–५–३५
२–६–६	वलयः	१०–६–२१
१०–३–२४	वलयं	१–१०–२९
१०–३–२	वल व्यसनानि	८–५–१
१०–४–१३	वला	१४–४–३
२–३०–२९	वलात्कृतम्	२–६–१६
१४–४–१२	बलाध्यक्षावासः	२–४–११
३–२–३८	वलाह कान्तम्	२–१८–१७
३–१–२०	वलिः	१४–३–१९
५–३–१७	वलिप्रग्रहः	२–३५–७
११–१–३४	वली	७–१–३२
११–१–३४	वल्कः	२–२३–२
१०–१–१	वल्कवनं	२–१७–७
२–३–७	वल्गनः	२–३०–३२
१०–१–१	वल्ली	१४–२–३
११–४–७	वल्लीफलानि	२–२४–२२
१३–२–३	वल्लूरम्	२–४–२७
२–१५–२५	वल्वजम्	४–८–२२
१४–४–२	वंशः	२–२७–५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
वंशरागः	२-११-३०
वश्यंमित्रम्	७-९-४०
वश्यानित्यंमित्रं	७-९-४२
वर्षवरः	१-२०-२१
वर्षवराम्थागारिकाः	१-२१-१
वर्षाः	२-२०-५
वर्ण्य	१०-५-४२
वसन्तः	२-२०-५९
वसा	२-१५-१३
वहः	२-१९-११
बहुमुल्यम्	२-१८-५
वहुलः (पक्षः)	२-२०-४५
वाक्च्छस्यं	८-३-३९
वातग्रहणं	१०-४-२३
वाक्यशेषः	१४-९-८६
वाक्पारुष्यम्	३-१८-१
वाक्यम्	२-१०-२०
वाग्जीवनाः	७-१७-३४
वागुरिकाः	२-१-६
वाङ्कुकम्	२-११-१०२
वातः	२-४-२५
वातः	३-१०-३९
वाणः	१४-१-२९
वाणिजकः	१-११-११
वातापिः	१-६-१०
वातव्याधिः	१-१७-१८
वातव्याधिः	८-१-५३
वातायनम्	३-८-१६
वादकः	१-१२-९
वाद्यम्	२-२७-२८
वानचित्रम्	२-११-९७
वानप्रस्थः	१-४-११
वानरः	१३-४-१६
वानलटी	३-८-१९
वामनः	१-१२-९
वामनम्	३-९-३१
वापसः	१३-१-९
वायसोपहारः	१३-४-१७
वारकः	२-११-४६
वारणः	२-१८-१३
वारणवल्ली	१४-४-७
वारवाणः	२-१८-१७
वारवारणः	२-११-९८
वाराहः	२-३०-३७
वारिकांकः	२-३०-३७
वारिपथभोगः	७-११-२५
वारुणः	७-१७-४२
वारुणी	१४-४-३
वार्णकम्	२-११-९८
वार्ता (विद्या)	१-४-१
वार्तोपजीविनः	११-१-४
वालकुं	२-२५-२७
वालसूर्यकः	२-११-२९
वालिशः	७-१०-२३
वाशी	२-१७-९
वासितिकम्	२-१४-१७
वास्तु	१०-१-१
वास्तुकः	१०-१-४
वास्तुकं	१-१-५
वास्तुदेवता	२-४-१८
वाहनम्	१०-४-१४
वाहनम्	८-१-२७
वाहनकोष्ठः	३-९-२५
वाहिरिकाः	२-४-३२
वातुः	२-२०-२४
वाहूत्सारः	१०-२-४
वाह्यानुवृत्तः	३-३०-२५
विकल्पः	९-७-७५
विक्रमः	६-२-६

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
२–३०–४०;४१	विनयः	१–५–२
७–१७–२४	विनाशः	३–११–४
७–१७–२३	विपरिकल्पनाः	७–५–४
१३–४–१३	विपरिमर्शः	१०–४–१
७–१८–२	विपर्ययः	१५–१–३६
७–९–२२	विपुलारम्भः	७–१३–३
२–६–२१	विप्रलम्भः	१–१४–२
५–३–२५	विप्रस्थानम्	१३–२–४८
१३–२–२६	विप्रेक्षणम्	१–२१–८
९–१–४१	विभक्तमुख्या	१०–५–२
७–४–१	विभवः	१–५–७
७–६–३०	विभाषितम्	७–१–३१
३–२६–२८	विभीषिका	१०–४–१४
२–११–८	विमलकवर्णः	२–१२–६
११–१०–६	विभूमिः	७–७–१०
१०–६–१५	वियलकः	२–११–३५
१–२१–८	विमानितं	८–५–१
१–५–५	बिम्बः	१३–२–१९
६–१–४	वियतनम्	१–११–२०
२–१५–१५	विरोचनः	१४–३–४३
३–२०–१६	विलम्बावलेखनं	१४–३–२८
९–६–७३	विलोप	८–४–१५
२–२०–१०	विलोपः	९–२–९;१०
२–२७–१५	विलोपभृतं	९–२–१०
१४–१–२९	विवधः	१–१–१४
१३–१–१६	विवर्ण	२–११–४२
१–६–५	विवादः	१०–१–१५
१–२–१	विवाह संयुक्तः	३–१–७
१–२–९	विवीतं	३–२–१
७–६–३०	विवीताध्यक्षः	२–३४–५
२–७–३२	विशाल विजयः	१०–६–१४
२–३२–१६	विशालाक्षः	१–८–३
१–१–३	विशिखा	२–१३–२
१–५–१६	विशिष्टच्छन्दिकाः	११–१–९
१–१२–१६	विश्वास घाती	२–१८–५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
विषमः	२-३२-१०	वृतपुच्छा	२-११-१२
विषमग्रहणं	१०-४-१३	वृत्तम्	१०-१-१
विषमव्यूहाः	१०-३-५३	वृत्तं	२-१२-२३
विषम सन्धिः	७-९-४	वृत्तिः	३-१८-२
विषमस्थः	७-१-३२	वृत्तिः	१-११-७
विषमूलिका	१४-१-१७	(वृत्युपकरणानि)	३-१-३१
विषयः	७-१-३३	वृद्धिः	२-७-२
विषयः	७-११-१२	वृद्ध्युदयः	९-४-२०
विषवर्ग	२-१७-१२	वृश्चिकः	१४-३-७८
विषहनम्	७-१८-३१	वृश्चिकबन्धः	४-८-२२
विषाणम्	२-४-२७	वृषः	२-३०-७
विषूचिका	१४-१-२३	वृषज्ञा	३-२०-१६
विष्टिः	८-१-२०	वृषल्यः	१-१२-५
विष्टिः	२-७-२	वृष्णयः	१-६-१०
विष्ठा	१४-३-७	वृष्णिसङ्घः	१-६-१०
विष्णुगुप्त	१५-१-१३	बृंहितः	२-३०-३५
विसरः	२८-१-१	वेतसवर्मा	१२-१-१
विस्रः	२-१२-६	वेणिका	४-३-८
विस्रावणम्	२-१४-२५	वेणिका	१०-२-१४
विसी	२-११-७७	वेणुः	९-७-२०
विहननम्	४-१-१३	वेणुः	२-१३-३
विहननं	४-१-१३	वेणुः (कला)	२-२७-२८
विहारः	१-१०-१३	वेणुकारुस्थानम्	२-४-१३
विहारशालाः	२-१-१९	वेणुवर्गः	२-१७-५
बुद्धिमान्	१-१७-४४	वेतनम्	२-७-२
बुद्धिवृद्धाः	१-१५-२१	वेतनोपग्राहिकम्	२-२९-४
वीचिरल्लः	१४-२-४३	वेतसः	१२-१-२
वीणा	२-२७-३८	वेत्रम्	२-१७-६
वीणा (कला)	२-२७-२८	वेदकः	३-१-१७
वीवधः	१०-३-६	वेदनम्	३-४-४२
वृकः	१४-३-१	वेदविदः	४-३-११
वृक्षः	१४-१-१७	वेदाः	१-३-२
वृक्षाम्लं	२-१५-१८	वेधनम्	२-३-३४
वृक्षाम्लम्	२-१५-१८	वेल्लकम्	२-१४-२२
वृक्षायुर्वेदः	२-२४-१	वेल्लितकम्	२-१७-२०

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
४-४-३	वैहारिकम्	११-१-७
११-१-८	व्यङ्गवल विभागः	१०-५-३५
११-१-८	व्यङ्गाः	१-३१-२६
४-१-३५	व्यजनम्	१-१२-७
२-१२-१६	व्यञ्जनम्	१०-५-४२
२-४-१७	व्यञ्जनम्	४-७-२
२-४-१७	व्यतिकीर्णः	१०-६-२८
२-३२-१४	व्यतिकीर्णः	१३-२-२०
२-११-३०	व्यन्तरम्	३-४-२१
३-७-३२	व्यपनयः	३-१-५
२-१३-३	व्यपादनम्:	४-८-२०
१-६-५	व्ययः	९-४-२
३-३-२७	व्यय प्रत्यायः	२-१५-१०
३-४-४	व्यवरोपणम्	४-९-१६
१-११-११	व्यवहारः	२-७-२
१-१८-४०	व्यसनम्	८-१-१-२
२-१२-३१	व्यसन दोषाः	८-३-२
२-३५-५	व्यसन हेतुः	८-३-१
२-५-१८	व्यसनाधिकारिक	८-१-१
३-१२-२५	व्यसनभियानं	९-१-४१
४-६-११	व्यसनिनः	३-१-१२
११-१-६	व्याकरणम् (वेदाङ्गं)	१-४-३
१-२०-१६	व्याख्यानम्	१५-१-४३
७-५-२६	व्याघातः	२-१०-५७
८-२-५	व्याघातिकः	१४-१०-७
२-११-४२	व्याघ्रचर्मा	१३-१-१६
१-१३-५	व्याजी	२-६-२२
१-३-९	व्याधाः	३-१-९
२-२०-५९	व्याधितं	८-५-१
२-२७-२८	व्याधित शेषः	२-६-२१
३-४-२४	व्यापत्	५-१-३४
२-४-११	व्यामः	२-२०-१७
२-४-५	व्यायामः	६-२१-१
२-४-१७	व्यायामः	१०-४-१६
२८-८-२७	व्यायामयुद्धं	७-१३-३०

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
व्यायाम	२-१-३०
व्यायोग:	१०-५-१८
व्याल:	१०-५-३४
व्यालग्राह:	१-२१-२२
व्यावर्तनम्	१०-४-१०
व्यावहारिकं कर्म	४-८-२१
व्यायेधनम्	१०-५-१३
व्यावेशनम्:	१०-५-१३
व्युष्टं	२-६-१२
व्यूहनम्	१०-५-२
व्यूहपथ:	२-४-४
व्यविभाग:	१०-५-१
व्यूह सम्पद	१०-३-३२
व्यूहाधिष्ठानं	१०-३-४२
व्रज:	१०-३-१६
व्रजकुली	१४-२-३२
व्रज:	२-६-७
व्रजप्रचार:	२-१-१९
व्रजपर्यग्रं	२-२९-११
व्रजवासिन:	१-१२-२२
व्रजा:	३-१-९
व्रजिक:	११-१-५
व्रजिक:	११-१-५
व्रतदीक्षणम्	२-२१-१८
ब्रह्मचारी	१-३-१०
ब्रह्मदेयका:	३-१०-९
ब्रह्मदेयम्	३-१०-९
ब्रह्मदेयातिथ्यमानम्	२-२०-२०
ब्रह्मारण्यम.	३-९-२६
ब्राह्मा:	३-७-२४
व्रीहि:	२-१५-२५
ब्राह्मणा:	३-४-२४
ब्राह्मणाधिवास:	२-४-१५
ब्राह्मविवाह:	३-२-२

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
श	
शकट:	१०-६-२६
शकटगर्भ:	९-२-२७
शकटपरिक्षेप:	१०-१-५
शकुन:	१४-३-१७
शक्ति:	६-२-३०
शक्ति:	२-१८-७
शक्तिहानि:	७-६-३०
शक्यारम्भी	७-८-१२
शङ्ख:	२-११-३
शङ्ख:	२-३४-१०
शचीनाथ:	४-३-१२
शण:	१३-४-२१
शतं	१४-१-४१
शतघ्नी	२-३-३४
शतक:	६-१-६
शतपर्व	१४-४-३
शतपदी	१४-१७-४
शतपाक्यं	१३-१-३
शतपुष्पा	२-२५-३३
शतावरी	१४-१-१४
शत्रु:	६-२-१६
शत्रुबलं	९-२-६
शत्रुवेदनं	८-३-१४
शपथ:	७-१७-३
शफरी	१४-१७-१३
शबर:	२-१-६
शम:	२-२०-११
शमी	१४-२-१
शम्बर:	१४-३-१९
शस्या	४-५-१४
शय्याप्रस्तार:	१०-२-१८
शर:	१०-४-९

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
२-२०-५६	शालिः	१४-१-१६
२-३०-३५	शाल्मली	२-१-३
२-३०-३५	शासकः	२-२८-१३
२-३२-१५	शासनम्	२-१०-१
८-४-४१	शासनकरणम्	१०-१-४
२-६-१४	शासनमुक्तम्	२-६-१५
२-६-१४	शासनमुद्राहस्तः	११-४-४१
१०-४-८	शिक्मं	२-१९-११
२-२०-११	शिक्षा (वेदाङ्ग)	१-३-३
४-३-२७	शिग्रुः	१४-१-१३
३-२०-१०	शिफा	३-३-१८
२-१५-६३	शिम्बिः	२-१९-६
९-२-२७	शिरः	१४-३-४
१४-३-३२	शिरस्त्राणम्	२-१८-७
१४-३-४५	शिरीषः	१४-२-१
१३-४-५२	शिरीषपुष्पकः	२-१०-३०
१४-३-४	शिलाजतु	२-११-४
१-११-२४	शिलापदृशुद्धं	४-१-१८
१२-४-१	शिलाप्रवालकः	२-११-३५
१-७-६	शिलाशिक्यं	१३-१-३
१-४-१३	शिल्पकारिकाः	१-१२-१३
११-१-४	शिल्पवन्तः	५-३-१४
५-२-१०	शिल्पिनः	५-३-१६
१-४-२७	शिवः	२-४-१७
२-१०-५५	शिवगृहम्	२-४-१७
२-१५-२१	शिविका	२-२७-४
२-११-८७	शिविरम्	१०-४-१७
३-२०-१६	शिंशुपा	२-२-१७
१३-१-१६	शिंशुमारः	१३-१-३
२-१८-८	शिशिरः	२-२०-५८
२-१३-३	शिष्टाः	१-५-८
२-१३-३	शीकवल्ली	२-१७-६
१-२१-७	शीतवृष्टिः	२-११-३२
३-३२-७	शीतोदकः	२-११-५३
१३-४-१४		

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
शीषकम्	२–११–६	शैलः	१०–२–२४
शुक्रः	२–२४–७,८	शैलरवनकः	४–३–१७
शुकपत्रवर्णः	२–११–३०	शैवलः	२–११–५४
शुक्तवर्गः	२–१५–१७	शैवलं	१४–२–२६
शुक्तिः	२–११–३	शोकवल्ली	२–१७–६
शुक्लपक्षः	२–२०–४४	शोभाः	२–३१–१७
शुतकपुलकः	२–११–३५	शोषः	१४–१–२१
शुद्धव्यूहः	१०–५–३४	शोण्डिकाबासः	२–३६–१४
शुद्धस्फाटिकः	२–११–३२	श्रद्धेयः	३–१–५
शुद्धोपवाह्यः	२–३२–६	श्रमणाः	१–१२–२३
शुल्कं	२–१२–३१	श्राद्धं	१–१५–६१
शुल्वशास्त्रम्	२–१२–१	श्रावणः	२–२०–५५
शुल्बशास्त्रम्	२–२४–१	श्रीः	२–४–१७
शुल्काध्यक्षः	२–२१–१	श्री कटनकः	२–११–३७
शुष्कचर्मवृतशर्कराकोशकः	१०–३–२२	श्रीगृहम्	२–४–१७
शुष्कतुत्थं	२–१३–४९	श्रीवेष्टकः	१३–४–२०
शुश्रूषा	१–५–५	श्रुतम्	१–५–१६
शूद्रः	३–७–२१	श्रेणी	२–४–१६
शूद्रावासः	२–४–१३	श्रेणी मुख्यः	५–३–९
शूनम्	४–७–२	श्रेण्यावासः	२–४–१६
शून्यपालः	९–३–१०	श्रेयः	७–५–४३
शून्यमूलं	८–५–१	श्रोत्रियः	३–५–२८
शून्यनिवेशः	२–३६–१४	श्मशानम्	१४–२–४४
शूर्पम्	२–३६–१८	श्मशानवाटः	२–४–१३
शूलः	२–३–३५	श्यामः	२–२१–७
शूलकूपः	१२–५–८	श्यामलता	२–१७–६
शृङ्गः	२–१७–१३	श्वामिकाः	२–११–८१
शृङ्गाटकम्	२–३–१५	श्यवः	४–७–८
शृङ्गिगौतमः	१४–१–१७	श्येनः	१३–४–१४
शृङ्गिबेरः	२–१५–१७	श्लेश्म	८–३–४६
शृङ्गिशुक्तिज	२–१३–३	श्लेष्मातकः	१४–४–२
शृङ्गी	१४–१–१७	श्वगणिनः	१०–१–११
शेषं	२–६–१६	श्वदंष्ट्र	१०–४–९
		श्वभ्रम्	१०–४–३
		श्वपाकः	३–७–१३

अधि० अ० अङ्काः
१३–२–२४
१०–३–१८
१४–३–१
१–२१–७
१४–२–२
१–२०–६
१–२०–५
२–१३–५०
१४–३–२८
१०–४–३

ष

७–१–१
३–१९–२

स

२–१४–१९
७–१३–४
१४–१–३१
३–१९–१४
७–११–२७
२–१४–१७
१२–४–२८
१०–२–१४
१–३–१५
१३–३–५४
१३–४–२२
७–६–६८
१३–४–२६
१–३–१२
१३–१४–१२
११–१–४४
११–१–१
२–१–३२
७–१८–३८
१–१२–५

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
सञ्जातम्	२–६–४
सञ्जयः	१०–६–१४
सत्तिलका	२–११–१०१
सत्यं	६–१–३
सत्यं	७–१५–२२
सत्रस्थानं	८–५–१९
सत्यहेतुः	१३–२–५०
सत्राजीविनः	१४–१–३
सत्रापश्रयः	१३–४–२३
सत्री	९–३–२६
सत्त्राणि	१०–३–२४
सत्त्रिणः	१–१०–३
सन्त्रिकः	१०–३–४४
सन्त्रिच्छन्नः	१३–२–४३
सदुन्दुभिः	१३–१–१७
सन्दंशः	४–४–२०
सन्दंशः	४–११–२५
सन्दोहः	७–३–७
सन्धि	७–१७–१
सन्धिच्छेदः	७–१७–४८
सन्नः	३–१४–१९
सन्नाहः	१०–२–१७
सन्नाहगुणाः	९–२–१
सन्नामिनी	२–१४–१९
सन्निपातनिचयः	१–१०–१३
सन्निधानसत्रा	३–११–५
सन्निक्षेप्ता	४–१–३
सन्निविष्ट	३–५–२१
सप्तपर्णः	२–२५–३३
संप्लवः	२–१०–६२
सब्रह्मचारी	१–३–१८
सप्रत्लाः	७–१३–४३
समाराष्ट्रं	२–११–३७
सभासदः	३–१५–१९

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
समः ६–२–३५
समन्तभद्रकम् २–११–७८
समम्यङ्गः १४–३–२
समयः २–१–३२
समयकर्म ११–१–२५
समयकर्म निक्षेपः ११–१–२५
समर्घतरम् १२–४–८
समर्थावस्था ३–१–१७
समव्यूहः १०–५–१४
समब्यूहप्रकृतयः १०–५–१६
समसन्वि ७–९–४
समाजः १०–१–१५
समाजकर्म १०–४–१३
समाधिः १–१६–३४
समाधिमोक्षः १–१६–३४
समानतीर्थ्यः ३–१६–३७
समाप्तम् ८–५–१
समाप्तिः ४–८–१३
समारुढ़कम् ३–८–१३
समार्जनम् ७–१४–२६
समाहर्ता ५–३–५
समाहर्तुं समुदयप्रस्थापनं २–६–१
समाह्वानम् १–१४–२
समिद्धम् १–११–१५
समुच्चयः ९–७–७६
समुदयः ५–३–१
समुद्दान कालाः ९–२–१
समुद्रं १३–१–३
समुद्रः ४–२–१६
समुद्रजन्तुः १४–२–१९
समुद्दानम् ९–२–१२
समुद्देशः १–१–३
समेषा १–११–१७

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्काः
समेघःशास्तिः १–११–१६
सम्पन्नघाती १०–२–१४
सम्प्रतिपत्तिः ३–११–२५
सम्प्रत्ययः १–१२–१५
सम्प्रधारणम् ८–१–६०
सम्पातः १४–१–४१
सम्पातनिच्चार १–१२–१७
सम्पाताः १–१२–१७
सम्प्रियः ७–१३–१२
सम्पुटिका २–११–१०१
सम्वन्धः २–१०–८
सम्बन्विक्रिया ४–७–३१
सम्वन्धोपाख्यानम् २–१०–५०
सम्बाघ १–२१–२७
सम्वाधं १०–५–५
सम्भूययात्रिकः ७–१८–२१
सम्भूय समुत्थातारः ३–१४–१८
सरकपांसुघावकाः ४–१–५०
सरणम् १–६–६
सरलः १३–४–१८
सरस्वती १४–१–३१
सरुपम् ४:१:२६
सर्जः २–१७–४
सर्जरस १४–२–२४
सर्पः १४–१–१२
सर्पग्राहः १२–४–१६
सर्पनिर्मोक १४–१–१२
सर्पसारी १०–६–२५
सर्पिः १४–२–१
सर्वतोभद्रः १०–६–३१
सर्वतोभद्रः १०–२–९
सर्वतोभद्रकम् २–१८–५
सर्वतोभोगि ७–१६–१५
सर्वतोमुखः १०–६–३१
सर्वतोवृत्तिः १०–६–६

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
सर्वगोः	२–१०–४६	साध्वसं	१–४–२५
सर्वदेश काल प्रहरणं	१०–५–५६	सान्त्वं	२–१०–३४
सर्वभोगं	७–१६–१२	सामन्तः	३–८–१
सर्वश्वेतः	१३–२–१६	सामन्तदूतः	१–२१–२४
सर्वसमुद्रयपिण्डः	२–६–१४	सामयाचारिकं	१–१–७
सर्वार्थसिद्धिः	९–७–८१	सामवायिकः	७–४–१९
सर्वोपस्थायिनः	५–३–१०	सामवेदः	२–१७–८,१–३–१
सर्षपः	२–२४–१४	साम	२–१०–४८
सवर्णाः	३–७–१९	सामान्तः	१–१०–३
सवर्णा	३–३–१४	सामान्ये	१–१०–१
सविता	१४–१–३९	सामुत्थायिकः	२–१–३२
सस्यवधः	८–२–२५	सामुद्रं	२–१५–१५
सस्यवापः	८–४–४०	सामुद्राः	३–११–१
सस्यकः	२–१२–६	सामूली	२–११–८८
सहचरः	१४–२–१६	सामेधिकः	१–१–१६
सहप्रस्थायिनः	१२–५–२३	साम्परायिकं	२–३–१
सहस्राक्षः	१–१५–५७	सामूरम्	२–११–८८
सहस्रैकीयः	९–३–४	सारं	१०–५–४६
सहोढः	३–७–११	सारः	१–१६–९
सहोदकः	७–१२–४	सारबलं	१–१–१२
साक्षी	३–११–३१	सारदारुवर्गः	२–१७–४
साङ्ख्यम्	१–२–१०	सारसः	१०–४–२
साङ्ग्रामिकं	१०–१–१	सारिण्ठं	१०–५–५०
सांग्रामिकरथः	२–३३–५	सार्थः	१०–३–१६
साचिव्यम्	१३–१–२१	सार्थगण	१३–३–४८
सातत्यं	७–९–३६	साल	५–१२–१७
सावनः	२–११–३३	सालः	१४–२–३
सातिनः	२–१७–५	सालपरिक्षेपः	१०–१–५
सातिना	२–११–९२	सालावृकी	१४–४–२
साद्गुण्यम्	८–१–६२	सावर्णिगालवः	१४–३–२०
साधनम्	१–१४–२	साहसम्	३–१७–१
साधनयः	७–५–२१	सिक्तकं	२–२–४
साधकः	३–१६–३९	सिद्धम्	२–६–१५
साधारणगर्दभः	३–१–१६		

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
सिद्धयात्रं	१३-३-४१	सुवर्णपाकः	१-१८-८
सिद्धव्यञ्जनाः	१-४-६	सुवर्णमाषकः	२-१९-२
सिद्धाः	१३-२-४४	सुवर्णभूमिः	२-११-६१
सिद्धारम्भाः	९-७-८४	सुवर्णभृत्	३-१४-३४
सिद्धार्थकः	१४-२-४	सुवर्ण-ालुका	२-१४-३४
सिद्धिः	९-७-६७	सुवर्णसन्धि	७-३-२१
सिद्धतापसाः	४-३-१३	सुवर्णाध्यक्षः	२-१३-२
सिद्धिप्रकर्मयोगः	२-६-१६	सुव्रत	२-३२-१०
सिन्दुवारः	२-१२-१५	सुव्यञ्जना चारता	१०-५-४२
सिन्दुवारितः	१४-४-३	सुषमारुपं	२-२४-६
सिन्धुः	२-३०-२९	सुषिरं	२-४-३४
सीता	८-१-८	सूचकः	२-८-३२
सीतात्ययः	५-२-१३	सूची	१०-६-२०
सीताध्यक्षः	२-२४-१	सूची मुखाः	९-३-५
सीमन्तः	१-२१-७	सूत	५-३-१३
सीमागृहम्	२-३-१९	सूत	१०-३-४१
सीसं	४-१-३९	सूतिकाकूपः	३-२-६
सीसधातुः	२-१२-१३	सूत्रम्	२-११-२१
सुखावस्थः	३-४-९	सूत्रकङ्कतः	२-१८-१६
सुगन्धिकूर्पः	२-११-३५	सूत्रकारुस्थानम्	२-४-२३
सुप्रतिविलिनम्	१-१६-५	सूत्राध्यक्षः	२-२३-१
सुभगा	१२-२-१५	सूत्रशाला	२-२३-१२
सुयात्रः	९-७-३६	सूदः	७-१७-४०
सुरुङ्गा	७-१७-३३	सूनाध्यक्षऽ	२-२६-१
सुरा	२-२५-७	सूर्य	२-२४-७
सुराकिण्वविचयः	२-५-३८	सूर्यकान्तः	२-११-३२
सुराध्यक्षः	२-२५-१	सृगालः	१३-२-२४
सुराष्ट्रः	११-१-४	सृगालविन्ना	१४-४-४
सुराष्ट्राणि	११-१-४	सृमरः	२-१७-१३
सुलमकः	२-११-३५	सेतुबन्धः	१०-२-१४
सुवर्चला	१४-२-३७	सेनापति	१०-४-२
सुवर्चिका	२-१४-२३	सरेकः	२-१७-११
सुवर्णं	२-१३-३	सैन्धवं	२-१५-१५
सुवर्णकाराः	४-१-२६	सैन्धविका	२-१३-४७
सुवर्णकुड्मः	२-११-६४	सैमिकः	२-२-१०

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
३-४-११	संनिपातः	४-६-२
२-११-२५	संव्यवहारिकः	६-१२-२९
१४-१-४०	संमार्जनी	२-१५-६२
२-१७-४	संमोष	७-१७-२६
३-९-२६	संयमपणः	६-१-६
१३-४-२६	संयानम्	१-३२-४
२-११-२९	संयानपथः	७-१३-२१
१०-५-५४	संयानीयपथः	२-४-४
१०-५-५४	संयानीयम्	२-४-४
७-१७-३४	संपूह्यं	२-१४-१८
२-११-९८	संरोधनं	९-३-१४
२-२०-४८	संवरणमात्रं	१-२-५
२-२-१६	संवर्तनम.	२-३२-४
१०-१-१५	संवासनम्	११-१-४०
२-१५-१५	संवासिनः	१-९-३
२-११-१०४	संवाहकः	१-१२-९
२-१३-२	संवाहनम् (कला)	२-२७-२०
२-१५-१८	संशयत्रिवर्गः	९-७-६४
२-३०-२९	संश्रयः	९-३-३०
३-१०-४६	संश्रयः	७-१-१०
२-८-२१	संश्रवणम्	१-१४-२
१-५-७	संसर्ण	४-४-२०
५-३-१४	संसर्गं विद्या	१-१२-१
२-१-७	संसृष्ट	१२-४-१४
३-१-१	संस्कारः	८-१-३४
१०-३-२६	संस्कृता	३-६-१३
१-६-४६	संस्तम्भ	३-११-६
८-३-६१	संस्थाः	२-११-२२
२-३०-३८	संस्थाध्यक्षः	४-२-१
१-१२-११	नंस्थानवान्	२-११-३३
२-१८-१७	संहितप्रयाणिक	७-६-१
२-१४-१६	संहितप्रयाणिकः	७-१८-२९
१३-३-५४	संविदत्तनिक्ती	११-१-४१
५-३-५	सांवदननिकी	११-१-४०
२-९-२५	सांनाह्यः	२-३२-१

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
सिंहनिक	२-१५-८
सिंहायतः	२-३०-३५
स्कन्धः	७-३-२८
स्कन्ध प्रावर्तिमं	२-२४-१८
स्कन्धावारः	१०-२-१६
स्कन्धावार निवेशः	१०-१-१
स्कन्धावार प्रयाण	१०-२-१
स्कन्धावारादिमानं	२-२०-१५
स्कन्धावाराटवीभेदः	११-१-३०
स्कन्धोपनेयः	७-३-२८
स्तनः	१४-३-८२
स्तम्बः	२-३-२१
स्तम्भः	१०-४-३
स्तम्भपरिक्षेपः	१०-१-५
स्तम्भायुक्तः	८-४-३०
स्तम्भवाटः	१२-४-२५
स्तम्भवाटापाश्रयः	१२-४-२३
स्तम्भासङ्क्रमः	१०-२-१४
स्तुतिनिन्दा	३-१८-४
स्तूपः	१३-२-४४
स्तेयं	३-१७-२
स्त्रीधनं	३-२-१४
स्त्रीपुष्पम्	१४-२-३२
स्त्री व्यसन	८-३-५३
स्त्रोतसीपं	२-११-२
स्त्रोतोयन्त्रप्रावर्तिमं	२-१४-१८
स्त्रीवः	२-१०-५०
स्थलपथभोगः	७-११-१७
स्थलम्	३-९-२५
स्थलयोधिनः	७-१०-३५
स्थविरः	१-२०-२१
स्थानिकः	२-१-७
स्थानिकव्यञ्जनः	१३-२-६
स्थानीयम्	३-१-१
स्थापनम्	१०-४-१३

प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
स्थाप्यम्	३-३-१२
स्थाल्याः	७-११-७
स्थावर (सन्धि)	७-१७-३
स्थितयन्त्रं	२-१८-५
स्थितयन्त्राणि	२-१८-५
स्थितशत्रुः	९-६-५३
स्थितामित्रं	७-१३-८
स्थिरकर्मा	७-८-११
स्थिरा	१०-४-३
स्थूलकर्णः	१०-६-१६
स्थूलकर्णः	१-६-१६
स्थूलकन्दव्यानि	३-३-३०
स्थूललक्षः	६-१-३
स्थैर्यं	१०-५-४२
स्नानम्	१-२१-१२
स्नानगृहम्	२-५-१
स्नापकः	७-१७-४०
स्नायुः	२-४-२७
स्नुहि	२-१४-२५
स्नेहाः	२-१५-१२
स्पृक्तला	२-१८-६
स्पर्शन	३-१९-१
स्पष्टत्वम्	२-१०-१२
स्फाती	३-२-३०
स्योनाः	१४-४-२
स्वदेशाभिष्यन्दवमनं	२-१-१
स्वद्रव्यदानं	९-६-२५
स्वप्रत्ययः	८-४-३१
स्वभूमि प्राप्तः	१०-३-४६
स्वयंगुप्ता	१४-३-३९
स्वयंग्राहः	१०-३-४५
स्वयंग्राहदानम्	९-६-२४
स्वर्णनालिका	१३-२-६
स्वर्णभूगिजः	२-११-६९
स्ववग्रहः	६-१-६

अधि० अ० अङ्काः	प्रतीकानि	अधि० अ० अङ्काः
८–५–१	हस्ति परिद्याः	२–३–२८
१५–१–५१	हस्तिबन्धकी	२–२–१०
२–१२–५	हस्तिवनम	२–१–१९
७–१५–२८	हस्ति वनपालः	५–३–११
१–१९–२३	हस्तिभूमिः	१०–४–६
६–१–८	हस्ति भीषणैः	१०–६–४८
२–३०–२५	हस्ति मुख्याः	५–३–९
१–३–१०	हस्तियुद्धम	२–३२–५
२–११–३१	हास्तियुद्धानि	१०–५–५४
२–२४–१८	हस्तिवारकः	२–१८–६
२–११–३	हस्तिवाहाभासः	२–२०–५३
ह	हस्तिविद्या	१–५–१२
	हास्तिव्यूहः	१०–५–३०
८–५–१	हस्ति शाला	२–३१–२
२–२४–२२	हास्तिस्कन्धः	७–१७–७
२–८–२०	हस्ती	१४–१–८
२–११–४५	हस्त्यध्यक्षः	५–३–११
२–१२–१२	ह्रस्व	१०–४–४
२–१–२४	हाटकम्	९–२–२६
१४–१–११	हाटकम्	१–१३–३
२–१२–२	हाटकं	२–१३–३
२–१२–५	हारहूरकम्	२–२५–२५
१–६–१	हारहूरं	२–२५–२५
१–१८–७	हालाहलं	२–१७–१२
१०–२–३०	हिङ्गुः	१४–१–१३
१४–३–२८	हिङ्गुलक	२–१२–२
४–३–४१	हिमवान्	२–११–३
२–२४–१८	हिरण्यप्रतिग्राहिणः	१२–५–३४
१४–१–९	हिरण्यभोगं	७–९–२६
१०–४–१४	हीनः	६–२–३५
१२–४–१६	हीनच्छन्दिकाः	११–१–९
२–३–२९	हीनम्	११–१–९
२–२–३	हीनकर्म	२–३२–७
२–२–१०	हीन सन्धिः	७–३–३६
२–३–२८	हीनातुणारणं	१०–४–१३

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्कः
हेडः ५-६-६
हेत्वर्थः १५-१-१३
हेमः १०-१-१०
हेमन्तः २-२०-५७
हेमवतः ७-१२-२२
हैमनम् ९-१-३४
हैहयः १-६-९
ह्लदः २-११-२
ह्रस्वकालः ९-४-४
ह्लादीयं २-११-२
ह्रीः १४-४-१७
ह्रीवेरः २-२४-२३

क्ष

क्षत्तः ३-७-२९
क्षत्रियः ३-४-२४
क्षत्रियाधिवासः २-४-९
क्षयः ७-१-२५

प्रतीकानि अधि० अ० अङ्कः
क्षारं २-१५-१
क्षारवर्गः २-१५-१
क्षियन् १३-५-१
क्षीरवकः २-१-२
क्षीरवृक्षाः २-१-
क्षुद्रकं २-१३-३
क्षुद्रकद्राव्यायांग ३-३-३
क्षुद्रा १४-१-१०
क्षुरकल्पाः २-१८-१
क्षुरप्रमाला २-३२-१
क्षेत्रजः ३-७-
क्षेपः ४-९-१
क्षेपणः २-१३-३
क्षेपणं ३-१६-३
क्षौद्रम् १४-१-३
क्षौद्रम् १४-४-
क्षौमम् २-१२-

शब्दार्थानुक्रमणिका

पारिभाषिक शब्दावली

व्याकरण	अर्थ	सं०
पुं०	गोद, अदद, चिन्ह ।	७-५-४८
पुं०	स्थल मार्ग ।	७-१२-२८; २-३-३
स्त्री०	अंग स्पर्श कर शुभाशुभ का ज्ञान करना ।	१-१२-१; १-११-१७; ३-१-९
पुं०	इक्ष्वाकु वंश की २८वीं पीढ़ी में अयोध्या के राजा थे ।	१-६-१२
पुं०	कन्धाभर बोझा लिये आदमी ।	२-२१-२४
वि०	कःमुक्त ।	२-३५-३; ३-१०-११
वि०	कार्य करने में असमर्थ ।	८-५-३
वि०	अविकसित ।	२-१-९; १३-५-२४
वि०	कृषि के लिए अनुपयुक्त भूमि ।	[illegible]-१-२
वि०	बिना आज्ञा प्रवेश ।	४-१०-७
वि०	लोभ वश शत्रु पक्ष की सहायता देने से विमुख ।	१-१२-२५; १-१३-२६, १-१६-२४; १-१३-३, १-१४-१
वि०	अस्वीकार न करने योग्य ।	४-१-४४
सं०	क्रोध या विद्रोह न करने वाला ।	५-३-४
पु०	संख्या पांच तथा उसका गणित ।	२-१९-१६; १४-४-१७
पु०	रात्रि के निषिद्ध या असमय में घूमने पर कर लगाया जुर्माना ।	२-३६-३५; ३-१२-४६ ४-९-२६; २-३६-४०
सं०	आय-व्यय तथा लेखा जोखा आदि के लिखने के लिए राजकीय कार्यालय ।	२-४-१०; २-७-१
स्त्री०	सुवर्ण आदि से सम्बन्धित कर्मशाला ।	२-१३-१; ३०
सं०	बहेड़ा ।	३-२-१६
सं०	बहेड़ा का पेड़ ।	१४-१-१३; ४-१५-१७
सं०	अग्नि स्थान, भट्टी ।	२-१४-२४; ५-३३-८-११
सं०	निश्चित माप या परिमाण ।	२-७-१८; १९-२-२९
		१५-१-३५, १-३-८, २-३६-३
पु०	एक विशिष्ट यज्ञ ।	३-१४-२९
पु०	मित्रावरुणों के पुत्र हैं ।	१-६-१०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
अग्राह्य	वि०	शत्रुओं द्वारा अप्राप्य।	सं० ३-११-२२; ७-५-२५; २-३४-१०; १२-१-१६; २-३-१४; १३-३-३१
अगृहीत	वि०	जो पदार्थ एक पदार्थ सुनने से बुद्धिस्थ न हो।	१-४-१५
अघात	पु०	प्राणि-वध का निषेध।	१३-५-१२
अंगुष्ठ संदंश	पु०	दायें हाथ का अंगूठा तथा दाहिने हाथ की मध्यमा अंगुली।	२-२३-१५;
अगूढ़	वि०	अच्छन्न।	१-१२-२४
अग्निजीवी	पु०	अग्निद्वारा जीविका उपार्जन करने वाले लोग।	१४-१-४०
अग्राह्य	वि०	शत्रुओं द्वारा अप्राप्य।	२-३-१४; ३-११-२२
अजस्र	वि०	अनवरत, लगातार।	२-१६-७
अजविन्द	सं०	सौवीर देश का राजा।	१-६-७
अजात्य	वि०	नकली को असली बताना।	७-१७-२०; ४-२-१५
अञ्चन	सं०	झुकाना।	३-१९-६
अञ्जनी	स्त्री०	सुरमादानी।	१४-३-८; १०-१२
अट्टालक	पु०	अटारी।	२-३-१०; १०-१-१; १३-३-४०
आणि	सं०	छोटा द्वार।	२-३-२०
अतज्जात	वि०	किसी विशेष वर्ग या जाति का न हो।	४-२-१६
अतिकर्षण	सं०	परिमाण या आकार कम करना।	३-१०-६
अतिक्रम		मर्यादा या सीमा का उल्लंघन।	२-१०-३७
अतिक्रान्त	वि०	उचित समय बीत जाने पर।	१-१९-३०; ८-५-११ १०-६-९-११
अतिगत	वि०	गयी हुई।	३-४-३-६
अतिचार	पु०	मर्यादा का उल्लंघन या अतिक्रम।	४-१३-१
अतिथि	पु०	मनु ने मनुष्यों का एक यज्ञ अतिथि पूजन माना है।	१-३-९
अतिनयन	सं०	गुप्त रूप या चोरी से।	७-१४-२४ १३-३-४८
अतिनी	पुं०	सामान को चोरी से मंगाना या भेजना।	५-२-६५, १२-५-९, २५-२७, १३-२-४० १३-४-५१; १२-५-८७
अतिपत्ति	स्त्री०	समय का व्यतीत होना।	३-१६-११; ७-१८-११
अतिपातन	सं०	विलम्ब, समय का नाश, खो जाना, बीत जाना।	३-१४-१०; ३-२-१४ ८-३-४४
अतियाञ्चा	वि०	अत्यधिक मांग।	३-१३-३७
अतिलब्ध	वि०	वाक्य पारुष्य और दण्ड पारुष्य से पीड़ित।	४-७-१४
अति वह्	हे०	झगड़े का निपटारा करना।	४-९-१५
अतिवाद	पु०	अत्यधिक प्रशंसा।	४-१-५९; ७-१६-२२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
अतिशय	पु०	विशेष कृपा ।	५-४-१०
अनिश्रावी	पु०	प्रतिध्वनि से रहित गुप्त स्थान ।	१-१५-३
अतिसंधा	पु०	अत्यधिक ठगना ।	१-१६-६; १-१८-९
अति सन्धि	पु०	जो सन्धि किसी के लिए विशेष लाभप्रद होती हैं ।	७-७-६; ७-९-६, ७-१३-३५
अतिसर्ग	पु०	किसी वस्तु को छोड़ देना, आत्मसमर्पण ।	३-१६-१३; ४-६-५; ५-१-६
अतिसारण	सं०	प्रतिकूल कर देना, दूसरे देश ले जाना ।	१-१६-३३
अतिहृ	प०	धन का अपहरण करना, खारिज करना ।	३-२०-२२
अत्यय	पु०	जुर्माना या भेंट ।	७-३-२८
अत्यराल	पु०	सात या आठ हाथ से ऊँचे हाथी ।	२-३१-१४, २-२२-२४
अत्यावाप	पु०	विश्वास घातियों का निवेश या प्रवेश ।	१०-५-२८; ९-२-२५
अत्यासद्	हे०	युद्ध करना, आक्रमण करना ।	१-६-१०
अत्याहित	वि०	जो अपने जीवन से भी निरपेक्ष हो, साहसी ।	१-१४-४; २-३६-९
अत्याहृ	हे०	पीड़न पूर्वक धन अपहृत करना, ज्यादा कर लगाना या रुपया चूसना ।	१-६-७; ८-५-२६
अत्युष्णोपक्षीण	वि०	जब ग्रीष्म ऋतु की कड़ी गर्मी समाप्त हो जाती है ।	९-१-४५
अदायाद	स्त्री०	दाय भाग न प्राप्त करने वाले ।	३-६-८
अदिति	स्त्री०	भिखारियों का एक धार्मिक सम्प्रदाय ।	११-१-४२
कौशिक	सं०	प्रदर्शन द्वारा भिक्षा मांगने वाली स्त्रियाँ ।	१-१-१९; ११-१-४२
अदृष्ट कर्मा	वि०	जिसे कार्य करने का अनुभव न हो, अभ्यास न हो ।	१-८-२५
अदृष्टपुरुषः	पु०	राजा एक स्थान पर तथा दूसरे स्थान पर शत्रु के दृष्टिगत न होकर कार्य करता हैं ।	७-३-२५
अदेव मातृक	वि०	वर्षा जलपर ही न निर्भर रहने वाला ।	५-२-२४, ६-१-८
अदेशिक	वि०	विना निर्देश, विना मार्ग दर्शक ।	८-५-१८
अद्वारासंग	पु०	द्वार पर न रोका जाना, मुक्त प्रवेश ।	१-१९-२६
अद्वैध्य	वि०	अपना कोई अलग स्वार्थ न होने पर ।	६-१-११-१२, ७-९-३८-४३
अधमर्ण	पु०	कर्जदार ।	१५-१-६५
अधिकरण	पु०	अधिकारस्थान, राजकीय विभाग	१-१०-१, १-१४-३
अधिकरणी	वि०	लोहे का वर्तन ।	२-१४-५३, ४-४-२०
अधिचर	पर०	कामुक या इन्द्रिय भोग की भावना से जाना ।	३-२०-१६, ४-९-१४, ४-१३०३०; ३९
अधिविन्ना	स्त्री०	प्रथम विवाहिता पत्नी ।	२-७-८
अधिमास		मलमास ।	३-७-८
अधिमिह	पर०	बलात्कार पूर्वक सम्भोग करनेवाला ।	२-३६-४१, ४-१३-४०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
अधिश्रयण	सं०	खाना बनाना ।	२–३६–१७, ४–३–३
अधिष्ठान	सं०	नगरी, राजधानी ।	१–१०–२०, १–१६–१–, १०–३–४२
अध्यक्ष	पु०	विभागीय प्रमुख अधिकारी	१–५–८, १–१९–१२
अननुबन्ध	वि०	विना साथियों के या विना अनुकरण वालों से सम्बन्धहीन ।	६–१–१३
अनन्यदोही	वि०	एक ही व्यक्ति द्वारा दुही जाने वाली गाय ।	२–२९–६
अनपसार	वि०	निष्कृत ।	२–१४–१३
अनपाकर्मन्	सं०	कार्य करने में असमर्थ, कार्य पूरा न करना ।	३–१०–३५
अनभिसार	वि०	अस्वामिक या लावारिस ।	२–१६–२२; ८–५–१४
अपनय	पु०	दुर्नीति, ।	६–२–६
अनर्घ्य	वि०	स्त्री, द्यत तथा मद्य ।	१–१७–३३; १–७–२, २–३५–१०; ७–५–२३
अनवग्रह	वि०	अनियन्त्रित ।	१–१५–३६; ७–१८–४१, ८–२–१६, ८–४–२७
अनवतारण	सं०	उत्पत्ति की फल प्राप्ति न करना ।	२–८–५
अनवद्य	वि०	कुंकमवर्ण या केशर वर्ण ।	२–११–२९, ५१–२१२–५
अनवसित	वि०	खाली जमीन या ऐसी भूमि जिसका कोई मालिक न हो ।	२–२४–१७, ७–११–१; ३–१६–३१
अनवस्था	स्त्री०	अस्थिरता,स्थैर्य का अभाव ।	१–१५–३३
अनवस्थित	वि०	अधिकता ।	४–६–१८
अनात्मन्	वि०	दुष्ट, विद्रोही ।	२–२७–३०
अनाथ	पु०	असहाय ।	४–७–२३
अनापत्सहा	वि०	आपत्ति सहने में असमर्थ ।	७–११–१९; ७–५–३६
अनायति	वि०	आय का न होना या धन का व्यय होना ।	६–१–१०
अनायति व्यय	वि०	विना आय का व्यय करना ।	२–२५–२६
अनायुक्त	पु०	अनधिकृत या अनियुक्त ।	१–१५–५; २–१३–३०
अनाश्वविनाशकरण	सं०	खोई वस्तु के कार्यालय के समान कोई कर्म स्थान या कार्यालय ।	३–१२–१३
अनासार	वि०	सुहृद बल का अभाव ।	७–१६–१
अनापत्सहा	सं०	आपद् सहने में असमर्थ ।	७–११–१९
अनिगृहीत	वि०	अदण्डित ।	११–१–४७
अनिग्रहेण	अव्य०	विना दबाव के ।	३–११–३२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
अनित्य	वि०	अस्थाई ।	७–१०–१६
अनिभृत सन्धि	वि०	खुली सन्धि ।	७–११–४२
अनिर्बन्धगामिन्	वि०	पूर्व अर्घरचित लाभ ।	९–४–२३
अनिर्वाह्य	वि०	निर्यात बन्द वस्तु ।	२–२१–२२
अनिश्राविन्	बि०	बाहर न सुनाई देना ।	१–१५–३
अनिष्कासिनी	स्त्री०	अत्यागी हुई या घर से बाहर न निकलने वाली ।	२–२३–११; ३–१–७
अनिःस्रावि शत्रु	वि०	शत्रुओं को न निकलने देना ।	७–१०–२९
अनिसृष्ट	वि०	अनधिकृत ।	२–१२–२१, ३२; २–२८–१६; ३–१२–१६; ५–२–१५;
अनीकस्थ	वि०	निपुण ।	२–१–१७
अनीक संधि	पुं०	दो सेना को मध्यवर्ती स्थान ।	१०–५–८
अनीश्वर	वि०	स्वामित्व रहित ।	३–६–१६
अनिश्रावी	सं०	बाहर समाचार न जाने देना ।	१–१५–३
अनु	अ०	पश्चात् ।	२–१–१४;
अनुक्षि	पर०	उत्तरजीवी या पश्चात् जीवी ।	५–१–१५; १३–५–१०
अनुगुण	वि०	अनुकूल, समाप्ति या विसर्जन ।	७–१६–३३; ११–१–३
अनुज्ञाता	उं०	अनुमति प्राप्त कर कार्य करना ।	७–१५–२३; ७–१६–१
अनुग्रह	पु०	धान दान, ऋण देना, रियायत देना अल्पकाल के लिए कर से छूट ।	२–१–१५, २–३५–३; १३–४–३ २–१–२१; २–१६–११; २–८–६
अनुलब्ध	वि०	समर्थनहीन ।	४–१३–१३
अनुत्थान	सं०	उद्योग का अभाव ।	१–१९–३६
अनुनय	वि०	विनम्रता पूर्वक ।	२–१०–२४, ३७
अनुपात	वि०	पीछा करना ।	२–२९–२२; १०–५–३३, ७–१७–४७; ५६,५९
अनुपृष्ठम्	वि०	एक दूसरे के पीछे खड़े रहना ।	१०–६०–४१
अनुप्रविश्	पर०	विश्वास प्राप्ति हेतु प्रयास रत होना ।	१–१७–३९; १–१८–६; २–६–२६; ४–४–२०; ४–५–९२; १५–९–५–१५ ३–१–८; ३–१९–१७
अनुबन्ध	पु०	क्रमागत फल ।	१–१६–२९; ४–१०–१७; ७–६–१९ ९–४–२४; ९–७–१४
अनुमेय		अनुमान के योग्य ।	१–९–४
अनुयान	पु०	पीछे चलना ।	१०–४–१३
अनुयोग	पु०	परिप्रश्न, प्रतिपृच्छा, जांच, जिरह में जवाब का देना ।	२–८–२७; ३–१–४६; ५–४–४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
अनुरक्त वृत्ति	वि०	निष्ठावान ।	७–८–१४
अनुराग	पु०	प्रेम, भक्ति ।	७–५–१४; ७–९–३५; ८–२–२४
अनुवंशम्	क्रि० वि०	केन्द्रीय पंक्ति के साथ ।	१०–५–५३
अनुलेपन	पु०	चन्दन-कुंकुम आदि ।	१–२१–१४
अनुलोम	वि०	अनुकूल उपन्यस्त या आगे लाना ।	७–४८–४
अनुवर्तन	सं०	आगे लाना ।	२–७–३३
अनुवासन	सं०	बस्ति चिकित्सा या मल शुद्धि करना ।	२–३०–१९
अनुवासित	वि०	कुछ दिन तक रखने पर या बसाया हुआ ।	१४–१–३४
अनुप्रवेश	पु०	अपराध के विचार से अनधिकार प्रवेश ।	३–१–८; ३–१९–१७
अनुवृत्त	वि०	आगे लाना ।	२–६–१५, २७; २–६–१८, २४ २–२८–४; ३–१०–२
अनुवृत्ति	वि०	पिछले हिसाब से आगे लाना ।	२–७–३१; ३–१६–२९
अनुवेश	पु०	निकट का पड़ोसी या एक पड़ोसी के बाद का दूसरा पड़ोसी ।	३–२०–१४
अनुशय	पु०	प्रत्याख्यान या खण्डन प्रति संहरण या वातिल करना ।	३–१३–३६; ३–१४–२; ३–१६–२
अनुशाल	पु०	घिरा हुआ स्थान या शाला, गैर आबाद क्षेत्र, समीप का घेरा, शहर पनाह के पास का क्षेत्र ।	२–४–१६
अनुशास्	पर	निर्णय या फैसला देना ।	३–१–४३
अनुशासन	पु०	प्रजा के करने योग्य शिक्षा देना ।	१–१९–३५
अनुशास्	पर	फैसला या निर्णय ।	१–७–१
अनुशिष्ट	वि०	फैसला हुआ या जिसमें निर्णय दिया जा चुका है । इसका अर्थ शिक्षा, अध्यापन आदेश एवं आज्ञा भी होता हैं ।	४–८–१५
अनुशयी	आ०	इजाजत देना ।	३–३–१२,१३; १०–३–३४
अनुसार	वि०	पीछे जाना, दूसरा अच्छा ।	१०–५–४३; ४६
अनूप	वि०	जल प्राय देश ।	२–२४–५, ४–३–६
अनेक मुख	वि०	अनेक स्थान पर क्रय-विक्रय ।	२–१६–४; २–२५–१
अन्तःकोप	पु०	आभ्यन्तरीय स्वामी द्रोह राजधानी के अन्दर जनता का द्रोह ।	१–१६–२९; ७–२–१० ८–२–३
अन्तपाल	सं०	सीमा का अधिकारी ।	५–३–७, ८–४–३६
अन्तःपुर	सं०	राजकीय निवास, जहाँ स्त्रियां रहती हैं ।	१–२०–१, ४, १–२१–३ २–४–७, १०–१–२
अन्तःपुर भाजनी	वि०	राज प्रासाद में सामान पूर्ति के लिये एक बाट नपुआ ।	२–१९–२२, २९
अन्तर्भेदिन	वि०	सेना के व्यूह का नाम है । या शत्रु के पक्ष या पार्श्व सेना के भेदने योग्य ।	१०–५–३३

ब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
न्तर्	पु०	वफर राजा या राज्य या मध्यवर्ती राजा या राज्य।	९–७–१७
न्तरचक्र	पु०	पक्षि, शकुन शास्त्र।	१–१२–१
न्तर पतित	वि०	छोड़ा हुआ।	४–२–२४
न्तरपर्ण	सं०	बही का पन्ना, पर्ण का अर्थ ताल पत्र होता था, जिस पर लिखा जाना था।	२–७–११
न्तरमात्य कोप	पु०	मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, युवराज दौवारिक आदि के अतिरिक्त अन्यों द्वारा किया गया विद्रोह या कोप।	९–३–२०; ८–२–३
न्तरक्षार	पुं०	अन्तरदाह, भीतर की गर्मी।	९–१–४७
न्तरिका	स्त्री०	दो मकानों के बीच का अन्तर या फासला या गली।	३–८–१३, १५
न्तर्धि	पुं०	दो राज्यों के बीच दुर्बल राज्य।	७–१३–२५; ७–२–१३; ७–९–४५; ७–१८–२९
न्तर्गृह	क्रि० वि०	रानी का शयन कक्ष।	१–२०–१५
न्तर्यामिकम्	क्रि० वि०	पहरा पड़ने के समय जब लोगों का चलना फिरना बन्द रहता है।	४–९–१०
न्तर्वंशिक	पु०	अन्तः पुराधिकृत, अन्तःपुर का रक्षक अधिकारी।	१–१२–६; १–२१–१२ ५–३–५, ५–५–५
न्तर्वंशिक सैन्य	पु०	राजप्रासाद रक्षक अथवा अन्तःपुर में नियुक्त अधिकारी की सेना।	१–२०–१३, १–२१–३, १०–१–३
न्त्यावसायी	वि०	चाण्डाल या नीच जाति का व्यक्ति।	१–१६–१५
न्तः शिख	वि०	अन्न रखने का पात्र जिसमें केवल ऊपर की ओर खुला रहता है।	२–१९–३ख
कांग	पु०	सेना की शक्ति सम्पन्नता।	१०–६–खख
न्तेवासिन	पु०	सभीपस्थ सहायक छात्र, शिष्य, आश्रम या गुरुकुलवासी छात्र।	१–११–५, १०–१२–१, १–१६–२ख, २–३५–१ख
न:	वि०	विना निर्देश, विना मार्ग दर्शक।	८–५–१, ८–५–१८
हिक	पु०	एक विषहीन सर्प, एक प्रकार की मछली।	१४–१–४४
हित	सं०	अति करने वाले, मद्य पानादि कर्म।	१–१४–४
[illegible]	पु०	द्वार पर न रोका जाना, खुलाद्वार, मुक्त प्रवेश, प्रवेश निषेध का अभाव।	१–१९–२६
जात	वि०	नष्ट, विस्तृत, खोयी वस्तु कोष्ठागार में आकर जमा हो गयी हो, तो उसे अन्य जात कहते हैं।	२–१५–१–९
केन	वि०	किसी एक के द्वारा।	१४–३–९
भाव	विर	विरोधी भावना वाला।	७–६–८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
अन्यात्तस्व	पु०	जिसकी धन सम्पत्ति राज दण्ड रूप में ले ली गई है। वह व्यक्ति।	१-१४-४
अन्यायवृत्तिः	स्त्री	कुत्सित जीविका वृत्ति से तात्पर्य है।	३-६-९, ७-११-२६, ३१
अन्वय	पु०	लिये या जमा किये हुए वस्तु के समय स्वामी का उपस्थित रहना।	३-१७-१३
अन्वर्थिन्	पु०	वादी का सेवक या आश्रित।	३-११-२८
अन्वधि	पु०	स्त्री धन रक्षक, अभिभावक बन्धक रखने की ओर से लिखे गए पत्र को अन्वधिपत्र कहते हैं।	३-३-१३, ३-४-१ ३-१२-१८, ११
अन्वायति	स्त्री०	आदमियों तथा सामानों की पूर्ति।	१०-२-६
अन्वायन	सं०	वधू के संग भेंट, जो उसके पति के घर जाते समय किया जाता है।	३-२१-१८
अन्वावाप	पु०	अन्तर्निवेश या हाथी, अश्व, रथ या पैदल सेना में किसी एक की वृद्धि।	१०-५-२७
अन्वावृत्ति	स्त्री०	एक के पीछे दूसरी का चलना।	१०-६-५
अपकार	पु०	हानि करना।	६-३-७
अवक्षेप	पु०	जुवे में पाशा गलत ढंग से फेंकना।	१२-५-२१
अपचय	पु०	ह्रास, अवनति, घटती, छीजन।	९-४-१
अपचर	प०	कदाचार करती हुई।	१-८-१७; ४-१२-३०; १२-४-८
अपचरण	सं०	दुष्कृत्य यहाँ धोखा देने से तात्पर्य है या अग्नि प्रक्षेप करने पर।	४-१-३१
अपचरित	वि०	दोष, दुष्कृत्य, दुष्कर्म, विद्रोही, चरित्रहीन।	७-३-१३-१४, ७-४-७, ७-४-१२; १५; १५-१-३३
अपचार	पु०	दुराचार।	४-२-२
अपचारक	पु०	दुष्कर्मी।	४-२-२
अपचित	वि०	हानि, धोखा, प्रायश्चित्त भी इसका अर्थ होता है।	६-२-३५
अपच्छिन्न	वि०	छीन लेना, सहसा ग्रहण।	७-१६-१६
अपजिह्विका	स्त्री०	कीट विशेष या दीमक या चोंटी।	१४-१-२२
अपत्य	पु०	सन्तान-बच्चे-सन्तति।	७-१७-१५
अपदान	सं०	कुछ व्यवहार, आक्रमण।	२-३६-२६; ३-१२-३५; ४-५-११; ४-६-२; ४-८-२६
अपदिष्टक	वि०	जिसके विषय में कथन किया गया हो या जिस पर चार्ज शीट लगाई गई हो या जो फंसाया गया हो।	४-८-७
अपदेश	पु०	घोषणा या कथन या बयान।	४-८-२, १५-१-२१, ७-८-२८
अपनय	पु०	दुर्नीति।	६-२-६; ११; १-२-११; ८-१-२; ९-५-१

	व्याकरण	अर्थ	सं०
द्ध	क्रि०	हटाना।	७-१८-३९
नीय	पु०	अपनय, द्रव्य क्षय।	२-१३-५९
र्नीविमन्		दूर जाना, वापिस मुड़ना, भागना।	१४-३-५१
यान	वि०	असन्तुष्ट।	१३-३-१२
रक रान्त	पु०	महाराष्ट्र समुद्रतट और दण्डक के पश्चिम का क्षेत्र।	२-११-११५; २-२-१५
रिगृहीत	वि०	घेरा विहीन, बिना स्वामी के।	२-२६-३
रिपणित	वि०	बिना शर्त के, देशकाल कार्य के अनुसार सन्धि।	७-६-४; १३
रुद्ध	पु०	स्नेह विहीन या नजरबन्द राजपुत्र।	१-१८-१३; १-१०-३; १-१३-१८
वर्ग	पु०	विषय को संकुचित बनाना।	१५-१-४
वह्,	हे०	ले जाना।	७-१-३३; ८-२-८; ९-४-८; ११-१-१६; ५३
वाहन	स०	बुलाकर आबाद करने के लिए प्रलोभित करना।	२-१-१; ८-४-१५
वाहित	वि०	विलोभन, बलात् अपहरण।	७-१६-१६
वृत	वि०	बाहर कर देना।	१३-५-२२
व्यय	पु०	अस्वीकार करना।	२-८-२६; ३-१-१९; २-१२-३८; ३-१३-३४
व्ययन्	स०	अस्वीकृत।	३-१२-६; ३-१७-२; ३-२०-१६
सृ	क्रि०	राज सम्पत्ति को हड़पना।	७-५-१
संधेय	वि०	ऐसा व्यक्ति जो इसका पात्र हो जिसके साथ सन्धि तोड़ दी जाय।	७-६-२१
सर्प	पु०	गूढ पुरुष, गुप्तचर, जासूस, भेदिया।	१-१२-१७; २५
सर्पय	वा० धा०	एक कमरे में रखना।	११-१२-६; १-१३-१; ४-४-५
सव्यम्	क्रि० वि०	वाँई तरफ।	१-२०-४; ५-५-११; १३-२-२४ १४-२-३८
सार	पु०	निकलने का मार्ग।	२-५-५; ८-४-१३; ७-१८-१५; १-२०-२; २-३-२; ७-७-२; ७-१३-२५; ७-१५-१०; १२; १८; ७-१६-१; १०-२-८; २०; २-१४-१२; १३; ३-१६-१५ ४-६-११; १२; ४-८-४;
सारण	पु०	हटाकर दूर करना या निकाल देना।	२-१४-१८
सृ	प०	चला जाय या आ गया।	१-१६-३०; ७-५-४६; ३-१६-१५; ४-९-१३
सृत	वि०	त्यागना, भागना, पलायित, भगोड़ा।	७-६-२२; ७-८-२३; ७-१६-५ ८-५-८
सृ,	प०	चुपचाप चले जाना।	७-५-६३, ७-८-३१
सृ	प०	पलायन।	४-८-२६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
अपहान	पु०	छोड़ना ।	
अपहार	पु०	छिपाना या अस्वीकार करना, दोष ।	४-१-७९
अपहीन	वि०	कम काम कम वेतन देना ।	ः-३-१४
अपातनीय	वि०	ऐसा धन जो खजाने में नहीं जमा हुआ है या जिस पर राजा की आज्ञा न मिली हो ।	४-१-११ २-६-१५
अपाय	पु०	कामादि विषयों में प्रवृत्ति	
अपार्ष्णि	वि०	शत्रु रहित, पृष्ठ भाग ।	१-१७-४७
अपाश्रय	पु०	सहारा, आश्रय, आलंबन ।	७-१६-१ २-७-१०-; ४-१३-१३; २-३१-४
अपाश्रयवत्	वि०	आश्रय की तरह, आलम्बन की तरह, आश्रित ।	३-१-१२
अपुरुषः	वि०	पुसंत्वाविहीन	१४-३-७८
अपुरोग	वि०	जो नेता नहीं हैं, प्रधान रहित नेता या निदेशक ।	९-७-५९
अप्रतिविद्ध	वि०	बिना मुहर लगे ।	२-१९-४१
अप्रतिश्राविणो	क्रि०वि०	अनुमति न देने से तात्पर्य है ।	३-११-२३
अप्रवासित	वि०	जो देश को छोड़कर न गया हो, न मारा हुआ ।	१२-३-४;
अप्रवेशन	सं०	खजाने का कोश में जमा न करना ।	२-८-५;
अप्रसार	वि०	जो समीप होने पर न जाये या सामने न आये ।	३-११-५०;
अप्राप्तक	वि०	यह अपद्रव्यमिश्रित होता है; जिसमें ४ भाग सीसा होता है ।	२-१३-५,६;२७
अप्राप्तफला	वि०	जो वयस्क काल को न प्राप्त हो । अवयस्क, अप्राप्त रजस्वला, अप्राप्त यौवन ।	४-१२-१;
अप्रार्थनीय	वि०	द्वेष न करने योग्य ।	१-१७-३९
अभयवन	सं०	जहाँ पशुओं को किसी प्रकार अपने प्राण या शरीर का भय नहीं रहता ।	२-२६-१; ३-१०-३१;
अभिकाश	क्रि० वि०	स्पष्ट या साफ दिखाई पड़ने वाला घास आदि रहित ।	१०-४-३;
अभिगम	पु०	निकट या पास आना ।	३-१०-१९; ४-३-३,
अभिगृहीत	क्रि० वि०	गिरफ्तार, पकड़ना, आबद्ध करना ।	५-१-२५;
अभिप्रस	आ०	भय दिखाना, आँख दिखाना, अनुचित व्यहार करना ।	४-९-१३;
अभिग्रह	हे०	आह्वान करना, कब्जा करना या हड़प लेना, या गिरफ्तार करना ।	३-१-१९;
अभिग्रह	पु०	चुनौती देना ।	१०-२-१५;
अभिघात	पु०	प्रहार, आघात, विनाश ।	१०-४-१४;
अभिचर	प०	मन्त्रादि प्रयोग ।	४३-११; ३७;
अभिचार	पु०	मनुष्य की मृत्यु के कारणों में से एक ।	४-१३-२७;

	व्याकरण	अर्थ	सं०
द्ध			
अभिजात	वि०	कुलीन की संज्ञा अभिजात से की गयी है।	१–९–१
अभिज्ञात	वि०	अच्छी तरह परिचित या जाने हुए।	९–६–६५
अभिज्ञान	सं०	वापसी का परिचय पत्र, मुद्रा पहचान की सीलमोहर।	२–२१–२; २६;
अभित्यक्त	वि०	वध योग्य अपराधी।	२–५–४: ५–२–४४; ५५; ६५; १२–४–४; ७;
अभिधेयक	वि०	नियन्त्रण, हीन, आक्रमण अनुपयुक्त।	८–१–६२
अभिनिविष्ट	वि०	अभिनिवेश युक्त।	१–५–५
अभिनिवेश	पु०	हलफ नामा या सपथ पत्र, या बयान।	२–१०–७; ३–११–४३
अभिनी	प०	प्रतिनिधित्व करना, अपनी वस्तु दूसरे की कह कर देखना या सूचित करना।	५–२–२५; १२–२–२२
अभिनीत	वि०	अप्रदर्शनात्मक, भड़कीला नहीं, साफ सुथरा।	२–१३–६१
अभिपन्न	वि०	आश्रित, आत्म समर्पक।	१–१४–६; १३–४–५२
अभिप्रजात	वि०	सन्तान के जन्म लेने से तात्पर्य है।	३–१३–१०; ३–१५–१३
अभिप्रधर्षण	वि०	दीवाल काटकर या सेंध लगाकर धन चुराना।	२–५–२०; ४–९–७
अभिप्रेत	वि०	इष्ट पुरुष; जिन्हें व्यक्ति पसन्द करे।	१–१४–३०
अभिप्लुत	वि०	सर्वत्र लागू होना।	१५–१–४९
अभिभर्त्स	पर	धमकाना, घुड़कना।	३–१८–९
अभिभर्त्सन	स	धमकी या वाक्य पारुष्य अथवा भय प्रदर्शन करना।	२–१०–३६; ३–१०–८
अभिभावक	वि०	रक्षक।	
अभिमन्	प०	अभिलाषा, इच्छा, लालसा।	१–६–५; ५–१–५१; ७–१६–२६; ३०; ३२;
अभिमन्तु	पु०	अभिलाषी, इच्छुक, आतुर।	४–७–१४
अभिपन्न	वि०	आश्रित, आत्म समर्पक।	१–१८–६
अभियायात्	पु०	अभियान, प्रयाण या मार्च करना।	७–५–१
अभिमृष्ट	वि०	जबर्दस्ती छीनना, फुसलाना, भागना।	३–२–२४; १–१४–२
अभियुक्त	पु०	आक्रान्त, आक्रमण करने पर।	७–५–६
अभियोग	पु०	उद्यम, प्रयत्न।	८–१–४९; ७–५–३१
अभियोक्ता	वि०	आक्रामक।	७–१३–३७
अभिरूप	वि०	उचित, यथायोग्य, यथा–क्रम, नियम बद्ध, सुसदृश।	१–१८–४; २–१–७
अभिवद्	आ०	मुकदमा चलना।	३–११–१९; ४–१–६३
अभिषूय	क्रि०	निचोड़ या चुआकर।	१४–२–४४
अभिषुत	वि०	निष्यन्दनीय या अभिश्रावित	२–१५–१७; २–२५–२२
अभिष्यन्द	पु०	अभिवृद्धि।	२–१–१
अभिसंवस्	हे०	आत्मीय होना या हावी होना।	१३–२–१५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
अभिसंवास्य	क्रि०	वश में करना, जीत लेना ।	
अभिसार-अभिसारिन्	वि०	बचाने जाना ।	१३–२–१५
अभिसारक	वि०	दौड़कर मारने वाला ।	७–१३–२३; ३८, ३९
अभिसेचन	ऋं	अवभृथ स्नान, जल-छिड़कना, राजतिलक, या राज्य प्रतिष्ठान ।	४–११–७ १–१९–३३
अभिसृ	वि०	बचाने का यत्न करना ।	४–३–९; ३१; ७–५–८, ७–१०–१८;
अभिसृत	वि०	सहायता करने के लिए आना ।	९–६–७१
अभिहास्य	क्रि०	हंसना, मजाक ।	५–४–१४
अभिहित	वि०	कहा गया, बोला गया, घोषित किया गया बिना लिखा पढ़ी की सन्धि ।	७–११–४०
अभिहूलिक	पु०	पराजित करना ।	१०–५–४५
अभिहृ	पर	व्यभिचार को छिपाने के लिए जार को चोर कहना ।	४–१२–३४; ९–२–२३; १२–५–१६
अभूतपूर्व	वि०	जिसका पूर्व काल में बन्दोबस्त नहीं हुआ है । भूत पूर्व का विपरीतार्थक अभूत पूर्व है ।	१–१; २–१२–१
अभृत	वि०	अदत्त वेतन या जिसका वेतन न दिया गया हो ।	८–५–३
अभ्यंग	पु०	मालिश	१४–२–१३
अभ्यक्त	वि०	प्रलिप्त ।	१४–३–७; १३
अभ्यधिगन्तृ	पु०	जब कोई व्यक्ति चुप चाप घर चोरी से आता है ।	४–६–२
अभ्यन्तर	पु०	भीतर या भीतरी ।	९–३–९
अभ्यन्तरकोप	पु०	अमात्यादि द्वारा जनित विद्रोह ।	९–३–१२; ८–१–५८; ८–२–२; ९–२–६
अभ्यर्हित	वि०	पूजित, जिसकी अभ्यर्थना की गई हो ।	१३–२–१५; २७
अभ्यवपत्ति	स्त्री०	समर्पण ।	१२–१–११
अभ्यवपद्	आ०	आवर्जित करना ।	१२–१–१२; १४
अभ्यागारिक	पु०	प्रासाद के भीतर का विभागीय सेवक ।	१–२०–२१, १–२१–१
अभ्याभू	पर	अधिकार प्राप्त करना ।	३–९–१
अभ्यावह	पर	जिम्मेदारी, उत्तरदायी ।	३–१२–२
अभ्युद्धार्य	वि०	जो सरलता से उखड़ सकने योग्य हो, हटाना ।	२–१४–२६
अभ्युच्चीय	क्रि०	शक्ति संचय या उन्नति, या वृद्धि या उत्कर्ष होने पर विग्रह करना ।	७–१–१४; ७–४–१४; ७–१३–२९
अभ्युपपत्ति	स्त्री०	सहयोग करना ।	२–१०–२४, ३५
अभ्युपपद्	स्त्री०	सहायता करना ।	५–५–७; १२–३–२०
अभ्रपटल	सं०	अभरक या अवरक या अभ्रक या उसका परत ।	२–१४–३९; १३–२–२५

ब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
मूढ़ संज्ञा	वि०	सचेतन, स्वस्थ मन।	३–१–७
मर्ष	पु०	असहन शीलता, असहिष्णुता, अक्षमता।	१–१४–७
म्बरीष	पु०	भ्राष्ट्र यन्त्र।	२–३–१५
मात्य	पु०	राज्य के सप्तांग में दूसरा अंग है, अमात्य।	१–८–१
मात्यकोप	पु०	मन्त्री, पुरोहित सेनापति, युवराज आदि के अतिरिक्त अन्यों द्वारा किया गया विद्रोह या कोप।	९–३–२०
मात्यसम्पत्	स्त्री०	अमात्य के गुण।	१–९–१
म्लशीधु	पु०	खट्टी सुरा या गुड़ से बनी मदिरा या रसोत्तरा।	२–२५–३९
य	पु०	उत्तम भाग्य वाञ्छनीय फल प्राप्ति।	६–२–६; ९
यस्	पु०	लोहा या फौलाद; चुम्बक।	१४–२–४०
युक्त	वि०	अनिष्ठावान, गुणहीन।	६–१–१३
योग	पु०	अप्राप्ति, अक्षमता।	९–३–४
रत्नि	पु०	एक हाथ, केहुनी से उगली छोर तक की नाप या हाथ से नापने का पैमाना।	३–८–९; १०–५–६
राज्य वाच्य	वि०	राजकीय मान्य।	३–१२–२९
रि	पु०	शत्रु।	६–२–२२
राला	स्त्री०	चर्म निर्मित चर्म पट्टिका।	३–२०–२०, ४–१०–९
रिप्रकृति	स्त्री०	देश की सीमा पर अधिमित्रों का संध।	६–२–१०
रिभाविन्	वि०	शत्रु बनने वाला व्यक्ति।	७–१८–२०
रिमित्र	पु०	शत्रु का मित्र।	६–२–१८
रिवंश	वि०	विरक्त शत्रु होते हैं जो स्वामी को मार डालते हैं।	१–१९–२८
रिष्ट	पु०	भैषजीय आसव!	२–२५–२१; ३५; ३९
रूपवेला	स्त्री	बेला, समय, अवसर, जब शरीर का रूप या आकार ठीक से न दिखाई दे।	५–६–३; ७–१७–४१
र्घ	पु०	मूल्य।	३–९–३; ३–१२–२६ ७–१२–१४;
र्थचर	पु०	एक अधिकारी जो हिसाब किताब लिखता है।	२–९–३२; ४–९–२८
र्थ	पु०	मनुष्य प्रवर्ती भूमि	१५–१–१
र्थ त्रिवर्ग	पु०	धर्म, अर्थ, काम	
र्थ युक्ति	स्त्री०	अपने काम के लाभ पर साधन, के प्रयोजन से।	७–१८–३५; ८–१–५९
र्थ क्रम	पु०	विषयक्रम, रचना विन्यास	२–१०–६
र्थानुशासन	सं०	प्रजा के करने योग्य शिक्षा देना।	१–१९–३५
र्थ्य	वि०	न्याय से अर्थोपार्जन करना।	१–१७–३३; ७–५–२३
र्थोपधा	स्त्री०	धन का प्रलोभन देकर मनुष्य की चित्तवृत्ति का ज्ञान प्राप्त करना अर्थोपधा है।	१–१०–६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
अर्घ्य प्रतिकार	वि०	इस योग्य जो खोई हुई वस्तु की पूर्ति कर सके।	सं०
अर्धचन्द्रक	वि०	आधे चाँद के समान।	४-१-२
अर्धसीतिक	वि०	अधिया पर खेत उठांना या देना।	१०-६-३७ २-२४-१६; ३-११-२३-३-१३-९
अर्हता	स्त्री०	योग्यता।	
अलंकारभूमि		चित्रित शोभा युक्त प्रासाद, राजा का शृंगार गृह, प्रसाधन संस्थान।	३-२-९ १-२०-१२
अन्त्यावाप	वि०	कुछ विश्वासघातियों से युक्त।	
अवकाश	पु०	स्थान या आश्रय या शरण देना।	९-२-३
अवक्लृप्तक	वि०	उपयुक्त।	३-४-४
अवकेशिन	वि०	जो फलदायक न हो।	२-७-४
अवक्तव्यकर	वि०	जिस पर कोई आक्षेप न किया जा सके।	१३०१-१६
अवक्रय	पु०	किराये पर देना।	३-१-६ ४-१-१७, ७-३-३४, ३-८-२५, ३-९-३६, ३-२०-१०
अवक्रयिन्	पु०	किरायेदार।	२-३६-२३, २-८-२४
अवक्रीतक	पु०	किराये पर ली गयी।	३-१२-२२, ४-६-११, ५-२-४१
अवक्षिप्	पर०	फेंकना, त्यागना, विसर्जन, अपदस्थ करना।	१-१०-२ १३-३-८
अवक्षिप्त	वि०	गिराया हुआ।	१-१०-५ ५४-१० ११-१-२० १-१०-११, ४-७-७
अवक्षेप	पु०	तिरस्कृत।	७-५-१९, ५-५-२, २-१४-५३
अवक्षेपसोपान	सं०	सीढ़ी की चढ़ान।	२-३-१०
अवगूर्ण	स०	किसी पर प्रहार करने के लिए लाठो से धमकाना।	३-१९-१, ९-११,
अवगृहीत	वि०	दबाना, रोकना।	३-१-१३ ५-६-४, ८-२-१
अवग्रह	पु०	दबाना या आधीन करना।	१-८-२१, १-१५-३७, ५-१-३, २१, ७-१८-१०, ८-३-१०, ५-६-१०, ९-३-२३, २४
अवघट्टन	पु०	दूसरे को युद्ध में लड़ाना।	७-१३-४०
अवघुष	पर०	घोषणा।	२-८-२४, २-२१-२२, १२-४-८,
अवतरण	पु०	उतारना।	१०-४-१४,
अवतारित	वि०	उतारा हुआ।	२-८-२१
अवदान	सं०	शुद्ध या पवित्र आचरण।	१-८-१६
अवधान	सं०	एक साथ रखना।	१०-५-१५, १२-१-१६
अवधारण	सं०	निश्चित सीमा।	४-८-२४
अवधृत	वि०	दृढ़ीकृत, स्थिरीकृत, निश्चित प्रज्ञान।	३-१-१९, ७-१४-१२, ७-१४-१०

	व्याकरण	अर्थ	सं०
पातन	सं०	गड्ढा या गड्ढे में फँसना।	१२–५–८
मर्द	पु०	तूफानी आक्रमण, रौंदना, कुचलना।	७–१०–२९–१३–४–२९
रोपित	वि०	शूल पर आरोपित करने की अनेक घटनाओं का उल्लेख पुराणों एवं राजतरंगिणी में मिलता है।	४–७–४
लिप्त	हे० वि०	ढकना।	२–१३–४५
लीन	वि०	जंगल में अपने समूह से बिछुड़ जाना।	२–२९–१२
लेप	सं०	मुलम्मा।	२–१४–१
ल्गुज	पु०	सोम राजा नामक पौधा, बकुची।	१३–४–१९
शीर्ण क्रिया	वि०	विरक्त मित्र, या राज्य का कोई अपराध करने के कारण निकाले गये या पलायनकारी व्यक्ति के साथ पुनः सम्बन्ध स्थापित करना।	७–६–१६
सित	वि०	दखल किया हुआ।	३–८–१७
रुद्ध	वि०	बन्दी किया हुआ।	१–१२–१०, ४–२–१०, १२–१–२१
रोध	पु०	हवालात में रखना, एकान्त स्थान, गमनावरोध।	२–१९–३०
सुत	वि०	मिश्रित या मिलाया हुआ।	२–१५–१७
स्कन्द	पु०	अकस्मात् आक्रमण करना।	७–६–४०, ७–१०–२९
स्कन्दित	वि०	छिपाकर या लेकर भाग जाना।	२–२३–१५
स्कर	पु०	मलमूत्र विसर्जन करने या शौच स्थान या कूड़ा कर्कट, घूर या गोहरी रखने का स्थान।	३–८६–२१
स्तार	पु०	अप्राप्ति की प्राप्ति, प्राप्ति की अप्राप्ति दिखाकर छिपाना।	२–८–४, १०
स्तृ	पर	ढकना, छिपाना।	४–१०–१३
स्थ	पु०	जामिनदार।	३–१–१७, ३–१८–११
स्था	स्त्री०	प्रतिभूत, जामिन होना।	२–८–२९, ८–४–३३
स्थाय	क्रि०	प्रतिभूत।	४–१२–१६
स्थापना	स्त्री०	जमानत के सम्बन्ध में प्रयुक्त हुआ है।	९–६–२३
स्थाय	क्रि०	प्रत्याभूत या भरण पोषण, या सुरक्षित या कायम रखकर।	४–१२–१६
श्रावण	सं०	निर्वासित करना।	९–३–१४
स्राव्युदक	वि०	जहाँ से पानी बाहर बहने दिया जा सके।	७–१०–३२
सृजु	हे०	बहने देना।	१२–४–१४
हास	पु०	हास्य करना।	४–१–६१
हीन	वि०	अति निम्न व्यक्ति।	४–१–१, ११–१–१२, २–७–३५, २–१–१२, ४–१२–४, ८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
अवार	पु०	विना वारी, पारी या अवसर।	सं०
अवधेयक	वि०	नियन्त्रण न होना, असफल, काम में अनुपयुक्त।	३-९-३१
अविनिपातिन्	वि०	नष्ट न होने वाला।	८-१-६२
अविनीत	वि०	अशिक्षित, उद्धत, विनय शून्य।	७-९-५२
अविप्रतिपत्ति	स्त्री०	विषयों में प्रवृत्त न होना।	१-१७-५१, ८-३-२
अविषम	पु०	समथल।	१-६-२
अविषममन्त्र	वि०	समान मन्त्रणत।	१०-४-१३
अविषह्य	वि०	अनाक्रमणीय, अनुपयुक्त।	२-७-२४ ७-७-२, ७-१२-२, १२-१-९, १३-३-२०, ३-१०-८, ३-१५-१, ४, ९
अविसंवादक	वि०	अवंचक, अपने वचन का पालन न करना।	१-१८-६, ६-१-३
अविसंवादित	वि०	अनुकूल बनाया हुआ व्यक्ति, धोखा न खाया।	१०-३-२८
अवेक्षण	पु०	निरीक्षण, देख रेख।	३-१-१८
अवेदक	पु०	प्रतिवादी, मुद्दालेह।	३-१-१७
अशीतिका	वि०	अस्सी वर्ष का पुरुष।	१-२०-२१
अशुश्रूषा	स्त्री०	सैनिक सेवा न करने पर।	३-३-२
अश्म	पु०	पत्थर।	१०-४-४
अश्रान्तपदता	स्त्री०	वाक्य रचना में ढीले शब्दों का प्रयोग न करना।	२-१०-९
अश्रोत्रियः	पु०	वेद विद्या रहित, वेद से अनभिज्ञ।	१-१५-६१
अश्ववाह	पु०	सईस।	२-३०-३
अश्वाध्यक्ष	पु०	घुड़सवार सेना का नायक।	२-३०-१८
अश्ववाहा	स्त्री०	अश्वकार्य में नियुक्त व्यक्ति।	२-२०-५२
अश्वव्यूह	पु०	अश्वों द्वारा निर्मित व्यूह।	१०-५-३४
अष्टक	सं०	लाख आदि जोड़ने वाले पदार्थ।	२-१४-२७
असंकीर्ण	वि०	विस्तृत, खुला।	१४-३-२९
असम्बद्ध	वि०	सम्बन्ध से सम्बन्धित नहीं।	१-८-१९, ७-११-२८
असंख्यात	वि०	अनिश्चित, अस्पष्ट।	३-११-१७, १८
असंग	पु०	सम्पर्क का अभाव या बाधा भाव।	२-२४-३
असंचारिन्	वि०	इधर-उधर न घूमना।	२-२५-५
असत्प्रग्रह	पु०	बुरे लोगों का समर्थन।	१-१०-५, ८-३-६४
असमन्त्र	वि०	परामर्श रहित, सम्मति रहित।	४-११-१०
असमानर्षि	वि०	भिन्न गोत्र।	१-३-९
असमित	वि०	असमीकृत।	१५-१-५५
असंपात	प०	जहाँ भीड़ एकत्रित न हो।	२-१५-३, ३-८-१५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
असंपातिन्	वि०	सञ्चार शून्य स्थान ।	१-११-१७, २-३६-२१
असंपीत	वि०	जड़वाना ।	२-१३-६०
असंह्य तद्धूमं	वि०	इसके धुयें से जी नहीं घबड़ाता ।	२-११-६०
असंबन्धिन्	वि०	बिना सम्बन्धी के अथवा अनाथ ।	१-१२-१
असंभाषा	स्त्री०	सम्भाषण की सुविधा न होने पर ।	२-७-१७, १-१६-२५
असंहत	वि०	बिखरा हुआ ।	१०-६-३
असंमोष	पु०	सावधान ।	७-१७-२५
असार	वि०	सारहीन या तत्वहीन ।	३-१-३४, ३-११-१६, ३-११-१०
असुर विजयी	पु०	असुर, दैत्य, दानव विजयी राजा ।	१२-१-१०
अस्वकरण	वि०	अपने वस्तु. पर जिसे अधिकार नहीं होता है ।	२-३६-९
अहित	पु०	अहितकर ।	१५-१-३१
अहंवादिन्	वि०	दलाल या भाड़े पर गवाही देनेवाला ।	३-११-२९
अहि	सं०	सर्प ।	१४-३-१७
अहितक	वि०	बन्धकीकृत जन ।	२-१-२५
अहित		अहितकर, अनुचित ।	५-१-३१
अहिपृष्ठ	सं०	सेना की कमी, सैनिक शून्यत्व ।	२-३-१५
अहिभय	सं०	सर्प के समान छिद्रान्वेषी पुत्र से भय होता है ।	१-१७-९, ८-२-३, ९-२-२०, ९-५-३१
अहर्गण	पु०	मास, परिगणित दिन समूह, यज्ञीय दिनों का क्रम ।	३-१४-३३
अह्नोरूप	सं०	दैनिक हिसाब ।	२-७-२६, २९
आकरिक	पुं०	खान का श्रमिक ।	२-१२-२०
आकार	पु०	आकृति की संज्ञा ।	१-१५-७, ९, ५-५-५, ६
आकाशयोद्धा	पु०	शून्य या खुले स्थान का योद्धा ।	१०-४-२,
आक्रन्द	पु०	चिल्लाना ।	६-२-१८, १-१६-२९
आक्रन्दासार	पु०	पृष्ठ भाग का मित्र ।	६-२-१८, ७-४-१६
आक्रोश	पु०	दुर्वचन, भर्त्सना, कोसना ।	३-१६-६, ३-१८-१२, ४-११-१४,
आकृति	वि०	अंग सधाना ।	१-१५-९
आक्षिक	पु०	कपटी, जुआड़ी ।	१२-५-२१, ३-१६-१९
आक्षिप	पर	लेना ।	३-१०-८
आख्यात	क्रि०	क्रियावाचक, कहा हुआ ।	२-१०-१७, २-१०-२३, २८
आख्यापन	वि०	घोषणा ।	१-१०-८
आख्यायिक	वि०	कहानी वृत्तान्त ।	१-५-१४
आगन्तु	वि०	परदेश से आया हुआ, या विदेशों से भगाया गया ।	२-३, ४, २-१२-२९, २१, १६-१३, २-२५-१२-१५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
आगन्तुक	वि०	विदेशी।	सं०
आगम	हे०	शास्त्र का अध्ययन करना।	२-२७-२६।
आगम	पु०	अभिग्रहण, अवाप्ति, प्राप्ति, उपलब्धि।	४-८-२४
आग्न्यगार	पु०	हवन शाला, होम शाला।	४-६-८, २-३०-१
आंगरज	वि०	एक प्रदेश, विदिशा।	१-१०-३१,
आचामोदक	सं०	आचमन या कुल्ला करने का स्थान।	२-२-१५
आचार्य :	पु०	विद्या उपदेश कर्ता, आचार का आचरण कर्ता, शास्त्रों का आकलन कर्ता।	३-८-८ १-१९-२३
आचार्यञ्जना	वि०	आचार्य वेशधारी व्यक्ति।	
आजात	वि०	घरेलू घोड़ी से उत्पन्न।	११-१-७, २-३०-१
आजीव	पु०	जीविकार्जन।	२-१७-१७, २-३५-५, ३-१-२०, ३-१२-१५, १६ ४-२-१८, २-१२-२४,
आजीवक	पु०	यह सम्प्रदाय रूप में प्रसिद्ध था। एक सम्प्रदाय, बौद्ध भिक्षुक।	३-२०-१६
आटविक	पु०	जंगल का स्वामी।	१-१०-३-८४-४१-४३
आढ्य	वि०	धनी, सम्पन्न।	७-११-२१
आणिद्वार	सं०	खिड़की।	२-३-२७, ३-८-१५
आणिहर्म्यं	सं०	छोटा महल।	२-३-२०
आतिथ्य	सं०	विदेश से आगत पण्य सम्बन्ध में जो कर लगाया जाता है।	२-२२-१
आतिपातिक	वि०	शीघ्र बेचने योग्य वस्तु।	३-१५-७
आतिवाहिक	पु०	व्यापारियों के रक्षक वर्ग या रक्षक।	१३-३-४८, २-१६-१८ २-२८-२५, २-३५-१२
आतिष्ठेत	आ०	आश्रय लेना।	१-१८-१०
आत्मात्मिष सन्धि	स्त्री०	आत्मसमर्पण करना।	७-३-२३
आत्मविक्रयी	स्त्री०	अपने आप को बेचने वाली	३-१३-१३
आत्म संपद्	स्त्री०	व्यक्तिगत गुण सम्पन्न।	६-१-६
आत्माघातृ	पु०	स्वयं अपने को धनी के पास बन्धक रखने वाला।	३-१३-६
आत्मवान्	पु०	अपने पुत्र तथा दारा की रक्षा करने वाला।	१-२१-२९
आत्मसंभावित	वि०	जो अपने को बहुत बड़ा विद्वान् या कलाविद् जानता हो वह व्यक्ति।	१-१४-५
आत्ययिक	वि०	अपरिहार्यं, आवश्यक।	१-१५-५८, १-१९-२९-३०, ५-५-२,
आतोद्य	वि०	एक प्रकार का बाजा।	१-२१-१
आदहन	सं०	श्मसान।	१४-३-२९, १४-३-४९

	व्याकरण	अर्थ	सं०
ब्ध	वि०	लेना, प्राप्त करना।	९-४-५
देय	पु०	आज्ञा, आदान, प्रतिग्रह।	१-१८-३, ३-१-१६, ३-१२-१८,
देश	पु०	रेहन या बन्धक।	३-१२-८, ३-१२-६
धान	पु०	जलाखात, जलाधार, जलाशय बांध।	३-९-१७
धार	पु०	बन्धक; न्यास, निक्षेप।	३-१२-८, ३-१४-१३, २-१०-४१
धि	पु०		
धिकर्णग्रहण	सं०	रेहन या गिरवी रखना, वस्तुओं को लेना।	३-१-६
धिपाल	पु०	गिरवी रखी वस्तु का निगरानी करने वाला राज कर्मचारी।	२-१२-१४
धिवेदनिक	पु०	स्वामी के दूसरा विवाह करते समय स्त्री को दिया जांने वाला धन आदि।	३-२-४१
नाह	पु०	मल को रोकना या मलावरोध।	१४-३-६८, ७१
नन्त्य	पु०	मोक्ष, असमापकता, असीमता, अनश्वरता, ऊर्ध्वलोक इत्यादि।	१-३-१४
नीत	सं०	लाई हुई।	१-२-१२, १३
नुग्राहिक	वि०	उपकार, रियायत या कन्शेसन देना।	२-२१-१५, २-२२-८
नुपूर्वं	वि०	क्रमशः।	१५-१-६
नूप	वि०	जल प्राय देश।	२-२४-५, २-२,७, २-२८-१७, २४, ४-३-६
नूप्य	वि०	जलीय प्रदेश या क्षेत्र से उत्पन्न होने वाली वस्तु।	२-२४-२३, ७-११-७
न्वीक्षिकी	स्त्री०	तर्क, आत्मविद्या अर्थ होता है।	१-२-१
वरण	पु०	कवच।	२-१८-१७
पद्	स्त्री०	आपत्ति, खतरा, षड्यन्त्र।	९-७-४
पदमर्थ	पु०	अर्थरूप आपत्तियां या लाभ जो खतरनाक हो।	९-७-४
मित्यक	सं०	दूसरे से अन्न याचना जो लौटाया या वापस किया जाय।	२-१५-१-७
पात	पु०	मार्च या बढ़ने या यान को मार्ग में गिराने वाला गड्ढा।	१०-१-१२
पातनीय	नि०	अतीत वर्ष का अवशिष्ट धन।	२-६-१५
पण	पु०	दूकान।	१४-३-७१
पूपिक	पु०	मालपूआ, शर्करा डालकर बनाई गयी मोठी रोटी बनाने वाला।	२-१५-६१, १२-४-८
पृच्छ	पु०	जिज्ञासा	१-१८-५
प्यप्रयोग	पु०	द्रोही को उसके सम्बन्धी द्वारा समाप्त करना, वंचन कार्य को आप्यप्रयोग कहते हैं।	५-१-२९
प्यायन	सं०	विजिगीषु, बढ़ोत्तरी।	७-१०-१०
मात्योत्पत्ति	स्त्री०	आमात्य की नियुक्ति।	१५-१-७

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
आबन्ध्य	सं०	आभूषण, जवाहिरात आदि।	३-२-१४, १५, ४-१२-२७, २८
आवलीयस	सं०	शक्तिशाली आक्रामक के प्रति दुर्बल राजा का व्यवहार।	७-३-६-३५, ७-१४-२८
आवाध	पु०	हिंसादि, कष्ट चोट, तकलीफ सताना आदि अर्थ होता है।	१-८-१०,१-१६-११,३-९-२५
आमकाशित	वि०	अजीर्णयुक्त	४-८-१४
आमात्य	वि०	राज्य के सप्तांग में दूसरा अंग है अमात्य।	१-८-१
आमिश्रा	वि०	एक साथ मिलाया हुआ, मिली जुली।	९-६-८, ९
आम्भीयाः	हे०	एक आचार्य का नाम है।	१-१७-२१
आयति	स्त्री०	आमदनी, आय, इनकम।	२-९-१०, ११, २-२५-६, २-२७-१०; २४, ५-१-४७ ५-४-६, ७-६-३७, ९-७-५२
आयतिक्षम्	वि०	उत्तर काल में बाधा न उत्पन्न करने वाला।	२-१६-१२
आयति प्रदर्शन	सं०	भविष्य प्रदर्शन।	२-६-१०, ३६, ४८, ५२
आयत्त	वि०	आधीन, आश्रित, स्वामी के सामर्थ्य द्वारा अनुकूल शत्रु।	७-१६-३१, ९-६-७, ७-१५-२, ९-६-७
आयमान	वि०	एक प्रकार की तुला।	२-१९-२१; २९
आयमुख	सं०	आय का साधन।	२-६-१०
आयशरीर	सं०	राजा का आय योग स्थान।	२-६-९
आयस्कान्ता	स्त्री०	चुम्बक।	२-१४-१९
आयुक्त	पु०	अधिकार या कार्य में रता एक अधिकारी पुरुष।	१-१५-१०, १३, २-६, २०
आयुध	पु०	राजकीय शस्त्रास्त्र।	२-१८-१
आयुधागार	पु०	शस्त्रागार।	४-९-५
आयुधीय	वि०	सैनिकों की पूर्ति करना।	२-३५-१, १-१९-१५
आयोग	पु०	उपयोगी साधन में नियुक्त।	२-३१-१; २-३३-६-८, ९-५-११, ९-३-४, ९-४-८
आयोधन	सं०	युद्ध मैदान।	१०-४-१७
आरक्ष	पु०	सुरक्षा का प्रबन्ध।	१-२१-२६, २-१-२, २-२-६
आरक्षक	पु०	संतरी; रक्षक, प्रहरी, पहरेदार।	७-१७-४४, १०-१-१३
आरक्षी	पु०	पहरेदार, रक्षक।	४-५-७
आरक्षण	पु०	पृथक् संग्रह करना।	२-१-२
आंरण्यक	पु०	अरण्य से सम्बन्वित।	२-३०-२९
आरण्यचर	पु०	वनचर।	२-१-६
आराज्य	सं०	राज्य में स्थिरता कायम करना।	१४-२-४५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
आराधना	स्त्री०	प्रसन्न करना ।	९-४-८
आराम	पु०	उद्यान, बगीचा, उपवन ।	२-१-२१, ३३-३-८२
आरालिक	पु०	पका भक्ष्य अथवा पका मांसादि विक्रेता ।	१-१२-९
आर्तवादिन्	वि०	दु:खित वचन बोलने वाला ।	१२-२-३३
आर्यप्राण	पु०	आर्य व्यक्ति ।	३-१३-१, १९, ३-१६-२८
आर्य व्यञ्जना	स्त्री०	आर्य वेशधारिणी अशुचि स्त्रियाँ ।	१-१७-३५
आलक्षित	वि०	विश्रुत ।	३-१९-३०
आलान	पु०	जंजीर, सिक्कड़ ।	२-३१-३
आवरण	पु०	कवच ।	७-१५-८
आवलीयस	वि०	शक्तिशाली आक्रमक के प्रति दुर्बल राजा का व्यवहार ।	७-३-६, ३४, ३५ ८-१४-२७
आवह	पु०	भीतर लाना ।	३-२८-२७, ८-४-१६, १-१०-९, ५-६-१६ ९-७-१०, १२-५-२६, १३-२-१९, ७-७-१३, ९-३-३२, ३९, ८-५-१५; २-१६-११
आबाधः	पु०	प्रजापीड़न, बाधा, व्यवधान ।	१-१७-५३
आवाप	पु०	निवेशन, वर्धन ।	१०-५-२०
आवाह विवाह	पु०	कन्या लेना और देना ।	७-१५-२२, ९-६-७०
अवि	पु०	भेड़ या बकरा ।	१३-४-१८
आवेदक	पु०	आवेदन कर्ता ।	३-१-१
आवेशन	सं०	शिल्प शाला ।	२-१३-१, २-३६-१४
आवेशनिक	पु०	अतिथि जो निवासी के मकान में रहता है ।	५-१-४७
आवेशनिन्	पु०	कारखाना या वर्कशाप ।	२-१४-१, ७
आवसथ	पु०	रहने का स्थान ।	६-११-६
आविस पत्र	नपु०	मृणाल या कमल पत्र ।	१४-२-२
आशाकारिक	पु०	आशा विशेष से कर्म करने वाले ।	३-१३-३०
आशानिर्वेदिन	वि०	आशा से खिन्न ।	८-५-१, ८
आशास्ति	स्त्री०	आशा देखने की इच्छा ।	१-११-१७
आशुग्रन्थ	पु०	शीघ्रतापूर्वक ग्रन्थ लिखना ।	२-१०-३
आशीतिक	वि०	अस्सी वर्ष का पुरुष ।	१-२०-२१
आशुमृतक	पु०	आकस्मिक या अचानक मृत्यु ।	४-७-२१
आश्रम	पु०	आश्रम धर्म. स्मार्त धर्म कहा जाता है ।	१-१९-२९
आश्रय	पु०	आचरण, वृत्ति, व्यवहार व्यावहारिक प्रयोग ।	१-१६-३४
आसंग	पु०	रोका जाना ।	८-३-२१; १-१९-२६, १-१६-१२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
आसन	सं०	उपेक्षा या अनास्था चुपचाप रहने का नाम आसन है।	७–१–८, ९–७–१०
आसार	सं०	मित्र आगे जाता है सहायता या बचाने के लिए।	६–२–१८, १–१६–२९, १८–१–५४, ९–६–४४, ८–१–३८. १०–२–७, ७–६–८, ७–७–२
आसुरी वृत्ति	वि०	कामादि अपनय।	९–७–२
आसुरी सृष्टि	स्त्री०	चूहा, सांप, भूत आदि।	७–७–२३
आस्तरक	सं०	शैया तथा आसन रचनाकारी।	१–२१–१३, १–१२–१
आस्तार	पु०	नीचे बिछाने वाला तख्ता।	२–२०–५
आस्तरण	पु०	हाथी के हौदे में नीचे रखने का नमदा या कम्बल।	२–३२–१४
आश्रु	हे०	छोड़ देना।	२–९–३५, ७–१–३२
आहरणीय	वि०	संग्रहीत होना।	२–६–१६
आहार्य बुद्धि	वि०	ग्रहण करने योग्य बुद्धि।	१–१७–४४
आहार्योदक	वि०	व्यवहार योग्य जल, जो बाहर से लाया जाता हो।	२–१–२०, ७०१२–४
आहितक	पु०	दूसरे स्वामी का धन लेकर आने वाला अथवा बन्धकी कृत जन।	२–१–२५, ३–१३=११ ४–७–७४
आहूय	वि०	आमन्त्रित या आवाहन या बुलाकर।	९–५–१६
आह्निक	सं०	दैनिक आय।	२–७–२७, २८

इ

इक्षुमूल	पु०	गन्ना या ईख की जड़।	१४–२–२
इङ्गित	पु०	संकेत करना, इशारा करना।	१५–७–८, ५–५–५, ६
इंगुदी	स्त्री०	मालकाग्नि।	१४–१–१७
इति वृत्ति	पु०	पौराणिक कथा या घटना का वर्णन।	१–५–१४
इन्द्रकील	पु०	इन्द्र के द्वारा विजित करना।	२–३–२६
इन्द्रः	पु०	सुरपति।	१–१७–१४, १–१३–१०
इन्द्रकोश	पु०	खट्वाकार पेटिका विशेष।	२–३–१२
इन्द्रगोप	पु०	एक प्रकार का कीड़ा जो सफेद और लाल रंग होता है।	१४–१–१०
इन्द्रियजय	पु०	शास्त्र प्रतिपादित विषय के अनुष्ठानों को इन्द्रिय जय कहते हैं।	१–६–२
इला	स्त्री०	भूमि, वृध की स्त्री।	१–६–७६
इन्द्रजाल	पु०	जादू।	२–२२–२

ई

ईक्षणिक	पु०	प्रश्न द्वारा शुभाशुभ या भविष्य भाग्यवेत्ता।	१३–१–७

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
ईशान	सं०	बिजली गिरना।	२-२९-१३
ईश्वर	पु०	राजा।	२-१०-४, ४६

उ

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
उक्षाण	पु०	बैल या अभिजन के सांड़।	३-१०-२४
उच्चार	पु०	मल-मूत्र।	४-९-२१
उच्चदिङ्ग		एक प्रकार का कीड़ा होता है जिसमें अल्प बिष होता है।	१४-१-४, १३-१-९
उच्छिन्न	वि०	सार को लेकर।	७-३-३३
उच्छिन्न सन्धि	वि०	सार भूमि को लेकर जो सन्धि की जाय।	१३-४-१५
उच्छुल्क	वि०	बिना चुंगी का माल।	२-२१-१८, २३, ३१
उच्छेदनीय	वि०	नष्ट करने योग्य, तंग करने योग्य।	६-२-१६, ७-१०-२७, ७-१८-१४
उदक प्लावन	वि०	जल में तैरने वाले।	१४-२-३०
उत्कर	पु०	अन्न नापने या तौलने के बाद बचा अन्न।	२-१५-११, ४-६-१६
उत्कीर्णिका	वि०	छिद्र युक्त वह तुला जिसके अन्दर लौह चूर्ण या पारा आदि भरा हो।	२-१४-१९
उत्कुट	हे०	पंगु, विकलांग या हीनांग करना।	४-९-२३
उत्कृष	पर०	ले जाना।	३-१६-२०
उत्कोच	पु०	घूस या धन चूसने वाला।	४-४-१०
उत्कोचक	पु०	प्रजा को कष्ट देकर माल लेने वाले।	४-४-१४
उत्क्रम	वि०	गलत या दोषपूर्ण आज्ञा।	२-७-३५
उत्तर	सं०	शृंङ्गार के लिए कण्ठ में बांधी जाने वाली ऊपरी रस्सी।	२-३२-१२
उत्तरपक्ष	पु०	बली या श्रेष्ठ।	८-५-१९
उत्तराध्यक्ष	पु०	सैनिक शिक्षा प्राप्त निरीक्षक।	२-९-२८, २९
उत्थान	नपुं०	उत्साहपूर्वक, उद्यमशील।	१-१९-५
उत्थान	पु०	कार्य का उद्योग, कार्य तत्परता।	१-७-२, १-१९-५
उत्पक्वभाव	पु०	अधिक पका	१-२१-१७, १६
उत्पथिक	पु०	पशुपालक, लकड़हारा आदि के वेश में गुप्तचर।	२-२१-१७, २-३६-१३
उत्पाट्य	क्रि०	उखाड़कर।	९-७-१५
उत्पल	पु०	नीलकमल।	१४-२-२
उत्संग	पु०	उत्सव के समय दिया गया भेंट।	२-१५-३
उत्सव	पु०	कोई भी मेला या उत्सव कार्य, पर्व, हर्ष जयन्ती।	१-२१-२८
उत्सह	हे०	उभाड़ना।	९-७-१९, १३-३-२९

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
उत्साह	पु०	व्यक्तिगत शक्ति ।	६-१-५, ६-२-३३ ९-६-४२, ९-७-९
उत्साहवत	स्त्री०	उत्साह शक्ति युक्त ।	७-१६-९
उत्सेक	पु०	बुद्धि आधिक्य, अतिक्रम अतिरेक एवं प्राचुर्य अर्थ होता है ।	१-१५-११, ९-७-१, १-१७-३५
उत्सेचक	पु०	नौका से नदी में पानी निकालने वाला व्यक्ति ।	२-२८-१३
उदकअहि	स०	डेड़हा जल का सांप ।	१४-३-६
उदक चरण	सं०	पानी पर तैरना या जाना ।	१२-१-५, १२-४-२८
उदकनालिका	स्त्री	पानी की नली, नासिका में यातना देकर, नलिका या नली से जल देना ।	४-८-२१
उदकस्थान	नपुं०	तड़ागादि ।	१-२०-१०
उदकभाग	पु०	जलकर ।	२-२४-१८
उदकान्त	पु०	जल के दोनों तट ।	१-२१-२०
उदप्रता		उमड़ा, उन्नत, विशाल	१०-५-३-४२
उदङ्मुख	वि०	उत्तर की ओर ।	२-७-१
उदञ्जर	पु०	पानी रखने का बड़ा पात्र ।	३-८-११
उदपान	नपुं०	कूप ।	१-१४-१०
उदय	पु०	फल या परिणाम या लाभ ।	६-२-५, २-९-४, २-१६-१८, १९, ३-१२-२५, २६, २७, ३०
उदरदास	पु०	उदर पूर्ति के लिए कार्य करने वाला ।	३-१३-१, १६
उदवृत	वि०	कर्तव्य निर्धारण के पश्चात् कर्तव्य का निर्णय ।	१-१६-१
उदश्वित	सं०	तक्र, मट्ठा ।	२-२९-२७
उदारक	पु०	मोटा चावल या मोटा अन्न ।	२-१५-२७, ३४, २-२४-१२
उदासीन	वि०	अनिच्छुक ।	४-१३-१७, ६-२-२२
उदास्थित	पु०	उदासीन या सन्यासी के वेष में कार्यरत गुप्तचर विशेष ।	१-११-१४, १-१२-२२
उदाहरण	सं०	वर्णन, दृष्टान्त समालाप आरम्भ करना ।	१-५-१४
उदिलोदित	वि०	शास्त्रानुभवी एवं विद्या वंशादि सम्पन्न व्यक्ति ।	१-९-९
उदुम्बर	पु०	गूलर ।	१४-२-१
उद्गतार्घ	वि०	अधिक से अधिक मूल्य प्राप्ति पर ।	३-१२-१४
उद्घाट	पु०	पानी उठाना या निकालना ।	[illegible]-२४-१८
उद्दय	पु०	लाभ ।	२-१८-२०
उदपान	पु०	कूप या ग्रहण योग्य पानी ।	३-८-६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
उद्दूषयेयुः	क्रि०	प्रधान के विरुद्ध दिमाग खराब करना या परस्पर द्वेष उत्पन्न करना, शत्रुता करा देना।	७–१४–६
उद्घत वेष	वि०	अविनीत या भड़कीला वेश भूषा।	१–७–२
उद्धर्षणीय	वि०	प्रसन्न करने वाली स्त्रियां।	१०–३–४७
उद्बन्ध	पु०	फांसी।	४–७–३,११
उद्भाण्डीकृत	वि०	वह व्यक्ति जो एक कड़े बोझ में रहता है।	२–२८–२०, २–३६–१३
उद्वाप	वि०	बोने के लिए खेत तैयार करना।	५–२–८
उद्विज	हे०	भयभीत, घृणा, विमुखता पीड़न।	१–१७–३५, ३६, ३१
उद्वृत	वि०	निर्धारण।	१–१६–१
उद्वेग	पु०	असहृन, अप्रसन्नता, अक्षम, त्रास भय, आतंक आदि।	१–१०–१०, १०–६–५०, ७–१६–१
उद्वेजन	नपुं०	क्षोभ, चिन्ता, कष्ट देना।	१–६–८
उद्वेजनीय	वि०	त्रास का कारण।	१–४८८
उत्मथ्य	क्रि०	सेना को पुनः एकत्रित करना।	१०–५–५३
उत्मान	सं०	बाँटों।	२–७–२, २–६–२२
उपकण्ठी	वि०	ग्रन्थिबहुल तुला।	२१–१४–१९
उपकरण	सं०	हाथी घोड़े को शिक्षित करने के साधन।	२–९८–१८, २–३०–४,७ २–३१–१, २–३२–१२
उपकारिन	पु०	सहयोगी या सहायक।	२–१६–१३
उपकृष्ट	वि०	अवज्ञापित निवन्ध या अवज्ञापित।	१३–५–२१
उपकृष्ट	वि०	राजा के समीप, निकट।	५–५–१४, ९–३–२८
उपगृहीत	वि०	तिरस्कृत व्यक्ति जो फिर से सेवा में लिया गया हो।	१–२१–२
उपग्रह	पर०	अपनी तरफ मिला लेना, समर्थन प्राप्त करना।	६–७–१, ५–१–११, ७–१–३२, १२–१–१६, १–३–७, १-१८–१५, १३–५–५, ५–६–८, १३, ७–१६–१६, ९–३–२५, २–२८–२०
उपग्रह	पु०	प्रेमपूर्वक, सम्मान के साथ सहायता देना।	२–२३–११, ७–३–२८, १–१४–१, १–१५–१, १–१८–७, ५–१–३, २–१०–३४, ८–४–१५, २९, १–१८–११, ५–६–२, १४, ९–७–२५, २८, ८–४–२३, २४
उपग्राह	पु०	पकड़ना, गिरफ्तार करना।	७–५–२३
उपग्राहिन	पु०	वाहन का सेवक।	१–१२–७
उपचर	हे०	प्रयोग करना।	५–२–४४, ७–१७–४३
उपचय	पु०	एकत्रित, चयन करना या बढ़ाना।	१३–३–३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
उपचारक	सं०	खिदमतगार, निजी।	३-१३-९, १०
उपच्छिन्न	वि०	शत्रु से छीनी हुई वस्तु।	७-१६-२३
उपजप्	पर०	बहकाना।	१-१०-७, ११, १-१०-३, ५१-१४-६
उपजा	स्त्री०	वृद्धि।	२-६-२२, २-२९-८, ११
उपजाप	पु०	कुत्सित मन्त्रणा द्वारा भेद।	१-१३-२६, १-१६-२९, २-८-३२
उपताप	पु०	प्रजा के प्रति द्रोहाचरण या प्रजा को तंग करना।	६-१-६
उपतोदन	सं०	वेधना, अंकुश लगाना।	५-५-९
उपदा	स्त्री०	उपहार, घूस।	४-४-७
उपदेश	पु०	शिक्षण, अध्यापन निदेश।	१५-१-११
उपद्रष्टृ	पु०	प्रत्यक्ष देखने वाला या साक्षी।	३-११-३१, ४-६-१२
उपधा	स्त्री०	गुप्तरूप से या छल पूर्वक परीक्षा लेना।	१-१०-१, १३-४-२५
उपधान	सं०	मिलाना।	२-७-१०, ४-२-२२
उपनत	वि०	बशवर्ती करना।	१-१४-३
उपनयन	पु०	यज्ञोपवीत संस्कार।	१-५-८
उपनिधि	पु०	धरोहर, न्यास, निक्षिप जमा किया हुआ धन।	३-१२-१
उपनिपात	पु०	आपत्तिया, दैवी विपत्ति।	३-१०-८, ३-१२-२९, ३-१५-१, ३, ९, ४-३
उपनिवेश	पु०	रात्रि में या कुछ समय ठहरने का स्थान।	२-२९-४०
उपनिषद्	स्त्री०	गुप्त दबाव, प्रतिकार, गुप्तरहस्य।	५-१-३७, ७-१-३२; ९-१-१५
उपनिषद्योग	पु०	युक्तियाँ या गुप्त मिश्रण।	४-३-२३, १०-६-४०
उपनिष्क्रष्	क्रि०	बाहर निकालना या बाहर आने के लिए प्रोत्साहित करना।	१३-४-१२, १२-४-२०
उपपद्	पु०	किसी काम का सम्पन्न होना।	१-१५-३८
उपपन्न	वि०	काम पूरा होना।	१-१५-३९
उपमान	पु०	समान गुणी, अधिक गुणी	१५-१-२७
उपभोग	पु०	उपभोग करता।	२-८-४
उपयुक्त	वि०	उपप्रधान, उप अधिकारी।	२-१-१६, २-८-२२, २-९
उपरिनिबन्ध	पु०	ऊपर बाँधकर लटकाना।	४-८-२१
उपरुद्ध	वि०	बाधित, घेरी हुई या नाकेबन्दी।	८-५-१३, ७-१०-३५, १-१४-२ २-३०-४७, ३-११-१०, ३-२०-१५, ८-४-३७, ४०
उपरुध्य	क्रि०	रोक लेना, देश में जाने की आज्ञा न देना।	१-१६-१९
उपरूढ	वि०	अन्तर्गत समाप्तिकरण।	३-१२-२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
उपरोध	पु०	रुकावट डालना ।	७-१५-९, ८-४-४०, ३-४-३६, १२-५-१२
उपलब्ध	वि०	परिचित, ज्ञात, मिला हुआ, प्राप्त ।	७-८-२७
उपलाभ	पु०	ज्ञातार्थ, अर्थ जानने नाला ।	१-१७-४६
उपलिख	पु०	ठीक लिखना ।	४-९-१७
उपलिङ्गन	सं०	चिह्न का अभिज्ञापन ।	३-१२-५१, ३-१३-३७, ३-१९-२१, ४-६-१२, ४-१२-३९, ४-४-१३
उपवर्णना	स्त्री०	निरूपण करना ।	२-१०-९
उपवाद	पु०	अपभाव्य, निन्दा, शरीर के किसी विकृत अंग को कहना ।	३-१८-१, २-७-८
उपवास	पु०	ग्राभोपजीवी कृषक हलवाहे आदि ।	६-१०-८, १६, ४-८-१२
उपविचार	पु०	आचरण या व्यबहार ।	२-३२-३
उपबृंह	पु०	वृद्धि, उपचय, वर्धन, सशक्त करना :	७-१८-७
उपश्रोत	पु०	जिसने वास्तव में सुना है ।	३-११-३१, ४-६-१२
उपसर्ग	पु०	परिभाषा ।	२-१०-१५
उपसाल	पु०	घेरा, प्रकार, वप्र बाड़ा या छोटो दिवाल से घिरा स्थान ।	३-१०-२०
उपसृष्ट	वि०	दुःखग्रस्त, काम के अयोग्य ।	८-४-';
उपस्कन्दनपादुका	स्त्री०	फटी भूमि जिसे काँटे से भरकर ऊपर गहरी मिट्टी दी जाती हो ।	२-३-१५
उपस्कर	पु०	घर के काम की कला ।	२-२८-१७, २-११-११७, ४-९-३, ५, ९
उपस्थान	सं०	हाल ।	२-७-३, १-१९-२४, २६, १-२०-१२, १०-१-४, २-७-३, २-३२-२, २-३२-४, २-१५-१, ११
उपस्थामिन्	वि०	कर्मचारी या उपचारक ।	५-३-१७
उपस्नेह	पु०	भोलापन ।	२-५-२, २-१८-२
उपहत	वि०	दूषित, दण्डित, विफल भयभीत व्यक्ति ।	२-४-२४, ४-३-४३ ७-२-२१, १-१४-३
उपहन्	पु०	नष्ट करना ।	२-७-४, ५-४-७, ८-२-१२ ९-१-१२, ३-८-२२
उपहन्तृ	पु०	नुकसान क्षति या हानि पहुंचाने वाला ।	३-१०-४२
उपहित	वि०	गुप्त परीक्षण ।	१३-१-१६, २-३-४, १-१४-४, ६-२-४०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
उपह्वर	पु०	एकान्त स्थान में किया गया।	३-१-२, ११,
उपाय	पु०	साम, दान, भेद, एवं दण्ड आदि रुप उपाय।	२-१०-४७, ९-६-२
उपायन	पु०	भेट, उपहार।	१३-३-५६
उपांशु दण्ड	पु०	चुपचाप वध करा देना या गुप्त हत्या।	१-१३-२०, १-१७-६
उपार्घा	वि०	आधा अन्न जो व्याज रुप में दिया जाता है।	३-११-४
उपालम्भ	यु०	उलाहना।	२-१०-२३, ३१
उपावर्तन	सं०	लौटने का स्थान।	२-३०-४, ३-१५-११, १२, १७
उपावृत्त	वि०	स्वहस्तगत करना।	१३-५-२२
उपांशुवध	पु०	चुपचाप मार देना।	
उपेक्षा	स्त्री०	उपेक्षा कर्त्ता।	७-५-१०
उपोश	क्रिया	जलाना नष्ट करना।	१-१-४०
उपोदक	वि०	पुदीना।	१४-२-२८
उब्ज	हे०	रखना।	१२-५-१५
उभयलोभोगि	पु०	दोनों ओर उपकार करना या दोनों तरफ से उपयोगी।	७-१६-१४
उभयतोरात्रम्	क्रि० वि०	रात्रि का पहला प्रहर या अन्तिम प्रहर।	२-३६-३४
उभयभाविन्	वि०	दोनों के प्रति मित्र भावना।	७-९-४८
उभययोग	पु०	अभ्यन्तर या वाह्य।	९-५-४
उभयवेतन	पु०	राजा तथा उसके शत्रु से वेतन प्राप्त कर्त्ता गुप्तचर।	१-१२-१८, १९ १-१६-१४, ७-१४-६, ८,
उरस्य	सं०	सेना का मध्यभाग।	१०-५-८
उरु	वि०	जांघ।	१४-३-१७
उर्ध्वकर	पु०	छत काटकर चोरी करने वाला।	४-१०-१
उर्ध्वचय	वि०	ऊचाई, पहाड़ी की तरह नीचे पतला ऊपर मोटा।	२-३-५
उल्का		उलका, लुक।	१३-१-१०
उर्वी	स्त्री	भूमि।	१४-२-४
उल्लयवन	सं०	हाथ वांधकर लटका देना, तथा दोनों पैर बांधकर उलटे लटका देना।	४-८-२१
उल्लिख	पर०	लिखना।	४-९-१७
उल्लोपिका	स्त्री०	एक प्रकार का खाद्य विशेष पूआ आदि।	४-३-११
उशनश	सं०	शुक्राचार्य।	१-९-११
उष्ट्र	पु०	ऊँट।	१४-३-१
उष्ट्रग्रीवी	स्त्री०	ऊँट की गर्दन के आकार की हथियार विशेष।	२-३-३५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
उष्ट्रपथ	पु०	ऊँट का मार्ग या रेगिस्तान।	७-१२-२७
उष्ट्रिका	स्त्री०	ऊँटनी।	१४-१-३३, १४-२-४४
		ऊ	
ऊष्मा	सं०	थूप या गर्मी।	२-१८-३
ऊरुवेष्ट	पु०	उरुवेष्टन या रस्सियों से अलग-अलग लपेटना।	४-८-२२
ऊर्ध्वं	वि०	ऊपर की ओर।	४-७-२
ऊर्ध्वंकर	पु०	छत काटकर चोरी करने वाला।	४-१०-१
ऊर्ध्वंचय	वि०	ऊँचाई, पहाड़ी की तरह नीचे मोटा ऊपर पतला।	१-२१-७, २-१८-३
ऊष्मन्	पु०	गरमी।	१-२१-७, २-१८-३
ऊह	पु०	तर्क करना।	१-५-५
ऊदयम्	वि०	उदय करन।	१५-१-६९
		ऋ	
ऋतु विभक्त	वि०	ऋतु के अनुसार वन।	२-२९-२१, २-३०-४३
ऋतु सुख	वि०	ऋतु में सुखकर।	२-२५-११
ऋघ्	हे०	उन्नीत, तरक्की।	५-४-१७
		ए	
एक्षणिक	ए०	प्रश्न द्वारा शुभ-शुभ या भविष्य भाग्य वेत्ता।	१३-१-७
एकचर	वि०	अकेला चलनेवाला।	२-२-११, १-१८-८
एकतो भोगी मित्र	पु०	एकतरफ से उपयोगी।	७-१६-१३
एक पात्र	सं०	एक साथ भोजन करना अन्तर्जातीय भोजन।	११-१-१०
एकपुत्र	वि०	एकलौता बेटा	१-१७-४१, ५१;३६-२१-, ७-१७-२७
एक प्रग्रह	पु०	एक ही निमित्त समर्थन।	१-१०-३, ५-६-२८
कमुख	वि०	एक स्थान।	२-१२-१९, २-१६-४, २-२५-१, ३-२०-१-; ४-२-४३
एकराज	पु०	एक ही व्यक्ति राजा हो, राजतन्त्र।	११-१-५४,-५५
एकलोष्टवध	पु०	प्रत्येक व्यक्ति का एक-एक शिला लेकर घात करना पठराव या संगसार।	१-१७-३९
एकविजय	पु०	अकेला ही राजा या व्यक्ति शत्रु को जीते।	१२-५,
एकस्य	क्रि० वि०	एक स्थान पर रखा गया भ्रातृशून्य एवं दुर्भागं।	१-१८-१६
एकयोग	पु०	अधिकारियों की संख्या एब तरफ।	९-५-१७
एकान्तसिद्धि	स्त्री०	पूर्ण सफलता, जहाँ सफलता निश्चित होती है।	७-३-५. ७-७-११;२२
एकायन	वि०	जहाँ अभियान में केवल एकही व्यक्ति का आना जाना हो।	१०-२-९,१८; १२-४-२०, २५-१३-२-४०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
एकार्थ	पु०	एक ही उद्देश्य से तात्पर्य ।	५-४-१०, ७-८-२३, ७-१८-२९, ९-२-१६, १७
एकैश्वर्यं	सं०	एक राजवंश का आधिपत्य एकाधिकार ।	५-६-२३
एधनं		अभिवृद्धि ।	८-१-१३
एलक	पु०	इलायची ।	१४-१-३०
		ऐ	
ऐकदेशिक	वि०	एक भाग तक ।	७-५-३४
ऐकपुरुषिक	वि०	एक जीवन तक उपयोग ।	२-१-८
ऐन्द्रजालिक	सं०	माया निर्मित कर्म ।	२-१८-११
ऐश्वर्य	सं०	प्रभविष्णुता या पेशे में कार्य की निपुणता ।	३-६-१४
ऐश्वर्य प्रकृतिक	स्त्री०	स्वभाविक प्रशासकीय प्रकृति ।	७-१७-२१
ऐष्टक	वि०	ईंट का	२-३-७,२-५३
		ओ	
ओज	वि०	विषम संख्या ।	२-३-७, १०-५-१६, १९, ५६
		औ	
औत्पत्तिक	वि०	नैमित्तिक, संयोगिक ।	२-३५-१२
औत्पातिक	वि०	उत्पात सम्बन्धी ।	२-७-२
औत्सहिक	वि०	स्वयं सेवक सेना ।	९-२-९
औदनिक	पु०	सामन्य भात ठेलने वाला ।	२-१५-६१, २-३६-८-१४, १२-४-८
औदर्म	सं०	अतनी देना ।	४-३-५८
औदर्य	सं०	चमत्कारिक या वस प्रदर्शन करना ।	१०-४-१४,१५,
औद्र	पु०	प्ररिका यन्त्र से तेल पेरना, घानी या लकड़ी के कोल्हू से तेल पेरना ।	२-१५-८
औपग्राहिक	सं०	अनुकूल सम्पत्ति द्वारा ।	२-२३-८
औपचारिक	पु०	हाथी का उपचार करने या सजाने वाला ।	२-२३-१६
औपनिषदिक	वि०	शत्रु पर विजय प्राप्ति हेतु, रहस्यमय युक्तियां ।	२-१७-१९, ७-१५-१२, १४-१-१
औपावादिक	पु०	अनभिज्ञात, अथवा सहसा उन्नति प्राप्त व्यक्ति ।	१-१०-३, ५-२-३९
अपवाह्य	वि०	सवारी या चढ़ने के काम आने वाले ।	२-१५-४२, २-३०-६०, ३२, २-३१-४, २-३१-१, १०-५-३४
औपशायिक	वि०	शयनशालाधिकारी या रात्रि का परिचायक ।	३-१५-१२, १४, २-२३-१६
औपस्थायिक	पु०	परिचर्या परायण सेवक या कर्मकर ।	२-६१-१, २-३२-१६, ५-३-१७
औपहारिक	सं०	देवता पर चढ़ाने की भेंट ।	५-२-६२, ६३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
औपायनिक	वि०	भेंट ।	१–१८–४, २–६–२०, २–१५–३, २–२१–१८
औरभ्रक	वि०	मेढ़े के समान ।	१–१७–३
औरभ्र	वि०	भेंड़ो का बाल बेचने वाला ।	१–१७–१२
क			
कंक	पु०	वक, वगुला ।	१४–२–४३
कक्ष	पु०	पाश्र्व, सेना की टुकड़ी का दायाँ या बाँया पक्ष ।	१०–५–८, १७, १०–६–२
कक्ष्या	स्त्री	महल के ड्योढ़ी के भीतर के कमरे या हाता ।	१–२०–१, १–२१–१, २–५–५, २–२५–११, ५–१–२४, २–२३–५, १२
कङ्कट	पु०	आवरण विशेष ।	२–१८–१६, २–२२–६, २–२३–१०
कंगु		कांगनी या प्रियङ्गु ।	१४–२–१७
कचग्रहणी	स्त्री	एक लम्बा बाँस जिसके उपर लोहे का हुक लगा रहता है ।	२–३६–१८, ९–२–२७
कंचुक	पु०	रक्षक ।	१–२१–१
कंचुकी	वि०	अन्तःपुर का रक्षक ।	१–२१–१
कंचुकितं	वि०	मुक्तापटल का छाल जैसा ऊपर लगा हो ।	२–११–४
कंट	वि०	तृणविशेष ।	३–८–१९
कंटकशोधन	पु०	अपराधियों का दमन ।	३–१९–१५
कंटकार	पु०	भटकटैया ।	१४–१–१७
कटभंग	पु०	हाथ से फसल काट कर दवांई करनो, पुआल ।	५–२–१०
कटुमान	सं०	मणि की भराईं तथा पट्टी लगाना ।	२–१३–४१
कटवानक	सं०	मोटे सूत्र द्वारा निर्मित ।	२–११–१०१
कंटशर्करा	स्त्री०	यह एक प्रकार की वनस्पति है ।	२–२५–२८
कटुकवर्ग	पु०	कड़ुवे पदार्थ या मसाला-समूह ।	२–१५–३०
कटुकालाबौं	सं०	तीती लौकी या कटुतुम्बी ।	१४–२–९
कटुशर्करा	स्त्री०	नरम पत्थर या अश्मि गुट का ।	२–१४–३७
कडङ्कर	पु०	पेड़ की शाखा या डाली ।	२–३१–१३
कणकुण्डक	सं०	कूटे गये चावल की खुद्दी सहित अन्न की भूसी या कराई ।	२–१५–५२ ५६,–२–२९–४३
कण्टक	पु०	इसमें फल लगते हैं, कंटवासो भी इसे कहते हैं ।	२–१–५
कण्टकप्रतिसर	पु०	लोहे की शलाकाओं तथा तिनकों से ढ़के गढ्ड़े ।	२–३–१५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
कण्टकिनी	स्त्री०	कण्टक युक्तफलक या काँटा जड़ा तख्ता ।	१०-१-१२, १२-५-१५
कर्णिकार	पु०	कनैल ।	१४-२-१९
कण्डोली(कण्डोलिका)	स्त्री०	छोटी टोकरी, आनाज रखने की दौरी ।	२-१५-६२, १४-२-२१
कथायोग	पु०	वार्तालाप, बात चीत एवं कार्य कथन का समय ।	१-९-३
कदर्य	वि०	कृपण, जो कुटुम्बियों को कष्ट देकर धन संचय करे ।	१-१४-४
कन्धरावध	पु०	पैर का नस काटना ।	४-१०-७
कन्यापुर	पु०	कन्याओं के रहने का स्थान ।	१-२०-११
कन्यावाहिक	पु०	दुल्हन के साथ आने वाले लोग ।	३-३-४८
कपाट	पु०	दरवाजे का पल्ला ।	१४-३-५६
कपालसन्धि	पु०	धन देकर, सन्धि के लिए भिक्षा मागने से तात्पर्य है ।	७-३-३०, ७-२-१४
कपित्थ	पु०	कैंथ या कैत ।	१-७-४२
कपिरोम	सं०	बन्दर का बाल ।	१४-३-७३
कपिशीर्षक	सं०	बन्दर के सिर के समान वाला पदार्थ या व्यक्ति ।	२-३-७
कमिला	स्त्री०	देवी का नाम विशेष ।	१४-३-३६
कम्वली	स्त्री०	कीट विशेष ।	१४-१-४
कम्बोज	पु०	काश्मीर के राजौरी क्षेत्र से हिन्दूकुश तक का क्षेत्र है ।	११-१-४
कर	पु०	टैक्स ।	८-४-१३
करन्	वि०	कीड़े द्वारा खाया गया ।	२-११-४२
करक	पु०	ओला या उपल वृष्टि ।	१-२०-४
करंज	पु०	कञ्जा ।	२-२५-३३
करटुकमुख	सं०	सुनार जिस मुख से नली द्वारा आग फुँकते हैं ।	१-१४-२३
करण	सं०	कार्यालप, विभाग, साधन ।	२-५-८, २-७-८, २-९-४, २-११-१, ८-४-३१, ३-१-१५, १६, ३-१-१७ ३-१२-३७, ३८, ४-८-१३, ८-४-३१
करणीय	वि०	आय-व्यय या बजट ।	२-६-१३, १४; २-७-३
करद	पु०	कर या लगान देने वाला ।	२-३-५-३, ३-१०-९
करप्रतिकर	पु०	कर के रूप में उत्पादन देना ।	२-२९-१, ४-५
कराल	वि०	विदेह का राजा था ।	१-६-५
करीष	पु०	सूखे गोबर कण्डो की अग्नि ।	२-२४-१०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
करूष	पु०	जनपद विशेष का नाम है। करमनाशा एवं सोन नदी का मध्यवर्तीय क्षेत्र।	२–२–१५
कर्ण	पु०	कान।	१–६–२
कर्णक्रीलायस	सं०	लोहे का छड़ गाड़कर सीमा निर्धारण।	३–८–३
कर्तक	वि०	कटा या छिन्न।	२–११–४
कर्मकर	पु०	भृत्य।	२–१–२२
कर्मक्षान्त	वि०	जो हाथी किसी विशेष प्रकार की शिक्षा प्राप्त किये हो।	२–३१–१
कर्मण्य	वि०	करने योग्य।	५–२–२४, ५–३–६, २–३०–१३
कर्मच्छेद	पु०	अदत्तदेय कर्तव्यादि।	२–७–५
कर्मन	सं०	उचित शिक्षा या ट्रेनिंग।	२–२–१६, २–८–४–१४, १७–२३, ४–९–२३
कर्मनिषद्या	स्त्री०	सुवर्ण रजत आदि शिल्प कर्म का आपण या दुकान।	२–४–१०
कर्मनिष्पाक	पु०	काम को करते रहना या काम कराकर मजदूरी देना।	३–१४–१४
कर्ममास	पु०	कर्मचारियों को वेतन देने का महीना।	२–२०–४७
कर्मव्यापद्	स्त्री०	असफलता से मृत्यु होना।	५–१–३४
कर्मसंन्धि	स्त्री०	निश्चय रूप से किया गया कार्य, कर्म सन्धि कहलाता है।	७–१२–९–१
कर्मान्त	पु०	कारखाना।	२–१२–१८, २३–२७, २–१७ १७, २–१९–१, २–२३–१०
कर्मार	पू०	लोहार	१४–१–३५
कर्माभिग्रह	पु०	अपराध में गिरफ्तारी।	४–६–१६
कर्मोपजीवी	वि०	कर्म द्वारा जीविकोपार्जन कर्ता।	२–७–५
कल्पक	वि०	नाई क्षौर कर्मकर्ता।	१–१२–१९
कल्याणबुद्धि	पु०	उदारबुद्धि या उत्तम बुद्धि युक्त।	७–६–२७, ७–७–१४
कर्शन	सं०	कमजोर या क्षीण करना।	७–३–१६, ७–४–१०, ७–१०–४४, १३–४–१–७–८–८
कल्याणरम्भी	वि०	जो दोष रहित कार्य आरम्भ करता है।	७–८–१२
कल्क	पु०	काढ़ा या मिट्टी।	१४–२–१४
कर्शनीय	वि०	कमजोर करना।	६–२–१६, ७–१८–१२
कर्ष	पु०		
कर्षणयन्त्र	नपुं०	हल जोतना तथा कृषि सम्बन्धी रज्जु आदि।	२–२४–३
कर्षक	वि०	किसान, कृषक, हल चलाने वाला।	३–१३–२८, ३–११–२२
कलत्रगामिज	वि०	स्त्री के साथ जाना।	८–२–१–१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
कलनी	स्त्री०	गूदा पिसा हुआ पदार्थ ।	२-२५-२६
कलह	पु०	ईर्ष्या, झगड़ा ।	७-१-३४
कलहस्थान	पुं०	झगड़े का स्थान ।	११-१-१५
कल्पक	वि०	नाई, क्षौर कर्म कर्ता ।	९-१२-९
कल्पना	स्त्री०	निर्माण ।	२-३-३४,२-३३-६
कल्माश	पु०	चितकबरा ।	१४-२-३७
कल्याणकृत्य	सं०	विवाह आदि उत्सव ।	३-८-८
कल्याणबुद्धि	वि०	उदार बुद्धि या उत्तमबुद्धि युक्त ।	७-६-२७,७-७-१०, ९-३-४०, ९-६-२२,
कशेरु	पु०	इसे रोमराजल कन्द कहते हैं ।	१४-२-२
कवच	पु०	वक्षस्थल या पीठ को ढंकने का विशेष साधन ।	२-१८-१६
काकणी	स्त्री०	सोरही कौड़ी	३-२०-८, ४-१०-९ २-१२-२४,
काक	पु०	कौआ ।	९-१-३१, १४-२-४३, १४-३-११,
काच	पु०	शीशा ।	३-१४-८, २-१४-५३-७-१७-४९,
क्वाथ	पु०	काढ़ा ।	१४-१-१७
काचक	सं०	स्वर्ण में अन्य धातु का मिलाना ।	२-१४-४०
काचकर्मन्	सं०	स्वर्ण में जड़ना या लगाना ।	२-१३-४१, ४३
काचमणि	पु०	कृत्रिममणि, अधममणि ।	२-११-३६
काचव्यवहारिन्	पु०	कांच का सामान बेचने वाले ।	५-२-२०
काचार्पण	सं०	स्वर्णाभूषणों में मणि आदि का जड़ना ।	२-१३-३८
काञ्चन	सं०	सुवर्ण आधार ।	२-१३-४१
काचनकारु	पु०	सोना या चांदी लगाने वाला कारीगर ।	२-१३-३३
काण्डक	पु०	हाथ या पैर की हड्डी ।	१-४-३८
काण्डबीज	सं०	जिसका डंठल या एक पोर से दूसरे पोर की शाखा बीज होता है ।	२-२४-२४
काण्डरा	स्त्री०	मांस, रज्जु, स्नायु, पेशी, बन्धनी, शिरा नास आदि अर्थ होता है ।	४-१०-७
कानीन	पु०	बिना व्याही स्त्री का बेटा ।	३-३-१०-१
कान्तार	पु०	वियावान या गहन या दुर्गम पथ ।	१०-२-१७
कापटिक	पु०	एक प्रकार का गुप्तचर ।	१-१०-११, १-११-१, २, ५-१-१४
कामोपघा	स्त्री०	काम विषयक कथा वार्त्ता ।	१-१०-१-६-१-, ८
कामण्डलुक	वि०	कमण्डल के आकार का ।	२-११-४।
कायभार	पु०	पीठ पर उठाये या उठाये जाने वाला बोझा ।	२-२८-२१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
कामाचार	पु०	स्वेच्छाचारी या चरित्रहीन या भ्रष्ट ।	३-६-१०
कारणिक	पु०	गणक ।	२-७-२२-९; ३४
कारुक	पु०	कलाकार, शिल्पी ।	४-१-१ ।
कारुष	पु०	वैपश्वत् मनु के नवपुत्रों में एक था ।	१-२०-९-१५
कारु	पु०	चित्रकार ।	१-१८-१२
कार्तकीन्तक	पु०	ज्योतिषी या सामुद्रिक ।	११-१-२१
कारा	पु०	कारागार ।	१-९-१४-२
कार्मिकर	पु०	राजकीय प्रतिष्ठान का अधिकारी ।	२-१-९-३८ ।
कार्मान्तिक	पु०	कारखाने आदि का निदेशक ।	१-१२-६ २-४-११, ५-३-७
कार्मारिक	वि०	लुहारों के काम में आने वाला सामान ।	२-३-३५
कार्मिक	पु०	राजकीय प्रतिष्ठान का व्यवस्थापक ।	२१-३८, २-७-२२-२३, २-२८-२७
कार्यं	पु०	चारो उपधाये ।	१-१०-२०
कार्वटिक(खार्वटिक)	सं०	दो सौ ग्रामों के मध्य छोटा उपनगर या उसका केन्द्रिय कार्यालय ।	२-१-४
कार्यानुशासन	नपु०	अन्याय निवारण कार्यारम्भ	१-१९-३३
काल	पु०	समय ।	७-६-६
कालपत्रकम	नपुं०	कुछ लिखे हुए पत्र या धूमिल कागज पर लिखना ।	२-१०-५८
कालवरिवा	सं०	भद्रा ।	१४-३-३
कालायश	सं०	लोहा ।	३-१७-७, ४-१-४१, १४-३-१०, ८५,
कालिक	वि०	निश्चित समय के लिए उधार लेना ।	११-१-२८, २-२५-७, १२-४-८
काली	स्त्री	चकोतरा नीबू ।	१४-१-१४
कालेयक	सं०	एक प्रकार का लकड़ी जो चन्दन की तरह होता है ।	२-११-६९
काक्षीव	पु०	सहजन विशेष ।	१४-१-१३
काष्ठ	पु०	लाठी या लकड़ी ।	२-११-१२, २६
काष्ठतुला	स्त्री०	काठ की बनी तराजू ।	२-१९-२५
किठिका	स्त्री०	चर्य, वाँस यथा विदलमयी ढाल ।	२-१८-१७
किट्ट	सं०	लोहमल ।	२-१२-१
काम	पु०	इच्छा, कामना, स्नेह, अमुराग, प्रेम, विषय भोग की इच्छा ।	१-६-१
कार्यानुशासन		अन्याय निवारण, कार्यारम्भ ।	१-१०-३३
किण्व	सं०	मदिरा के निर्माण में खमीर उठाने वाला वीज या औषधि ।	२थ२५-१, ३८, २-१२-१०, १४-३४७८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
किण्वबन्ध	पु०	सुराबीज ।	२-२५-२६
किरात	पु०	पर्वतीय एक जाति, शिकार पर जीवन निर्वाह करने वाली जाति	१-१२-९, १-२१-१
किलाट	पु०	नष्ट या फटा या बिगड़ा या दुग्ध विकार ।	२-२९-११
किल्विष	पु०	पाप, अपराध, दोष ।	१-१३-८
किष्कु	पु०	डेढ़ फिट के बीच के मकानों की गली ।	३-८-१३
कीटयोग	पु०	कीड़ों का मिश्रण ।	१४-१-७
कुक्षिप्रदर	वि०	प्राकार या परकोटा की दीवार के एक तरफ तोड़कर विदीर्ण करना ।	१२-५-३६
कुकुर	पु०	अन्ध ऋणी का एक सदस्य ।	११-१-५
कुक्कुट	पु०	मुर्गा या जंगली मुर्गा ।	१४-२-७, १४-२-१५
कुटज	वि०	कुटकी ।	१४-१-१३
कुडुव	सं०	अन्न की एक माप जो मुट्ठी के बराबर होती है ।	१-१५-४७
कुटुम्ब	सं०	परिवार ।	२-२७-१, २
कुटव्रजा	पु०	जलपूर्ण घट पंक्ति ।	२-३६-२२
कुट्ट	पा०	कूटना ।	२-१३-९
कुट्टक	पु०	धान कुटाई का काम करने वाले ।	२-१५-८
कुट्टकयन्त्र	सं०	कूटने की मशीन ।	२-१५-६२
कुट्टनशाला	स्त्री०	कूटने का स्थान ।	३-८-२८
कुट्टनी	स्त्री०	धान कूटने का उपकरण ।	३-८-११
कुट्टाक	पु०	तक्ष या बढ़ई ।	२-२४-३
कुड्य	पु०	दीवाल ।	३-८-२२
कुण्ठ	वि०	जड़, आलसी, मूर्ख, प्रभावहीन ।	३-१५-१६, ७-१२-९, ११, १२, १२-१-२५, ८-४-४३
कुत्सा	स्त्री०	दुर्वचन, भर्त्सना ।	७-१६-२२
कुत्सित	वि०	नीच, घृणित, तिरस्करणीय ।	३-१४-२
कुन्त	पु०	भारतीय अश्वारोही दल का मुख्य हथियार बर्छा या भाला ।	२-१८-७
कुप्	हे०	अस्वीकार करना विद्रोह के लिए याचना ।	४-१-४४, १-४मु१२, ९-७-१
कुपित	वि०	विद्रोह या विरोधी ।	१-१३-१५, ५-१-२१
कुप्य	सं०	काष्ठ, तृण, लौह आदि वन सम्पदा ।	१-१६-२९, २-१७-१
कुप्यगृह	सं०	सारदारु, वेणु आदि काष्ठों का संग्रह स्थान ।	२-५-१
कुप्योपजीविन	पु०	वनसम्पदा आदि से जीविका को चलाने वाले ।	२-१७-१७
कुब्जा	स्त्री०	कुबड़ा ।	१-१२-९

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
कुमार	पु०	राजकुमार ।	१०-४-१३
कुमारपुर	सं०	कुमारों का निवास स्थान ।	१-२०-११
कुमाराध्यक्ष	पु०	कुमारों के देखभाल करने वाला अधिकारी ।	१-२०-१२
कुमारीपुर	सं०	कुमारियों के रहने का स्थान ।	२-३-३२
कुमारी संग्रहा	वि०	हाथी के बाँधने के खूंटे पर लकड़ियों का संग्रह।	२-३१-२
कुम्भ	सं०	प्रहलाद का द्वितीय पुत्र ।	१२-३-१९, ४३
कुम्भ कुक्षिक	वि०	घड़ा के समान चौड़ा या मोटा ।	२-३-५
कुम्भी	पु०	छोटा कलश या घड़ा ।	१४-३-६२
कुम्भीपाक	पु०	कुम्भ में जीवित जला देना या घड़ा में पकाना ।	४-१०-३३
कुरुबिन्द	पु०	प्रस्तर विशेष ।	२-१४-४८
कुलत्थ	नपु०	कुलथी ।	१४-२-३
कुलनीवी	स्त्री०	वंश परंपरा से चला आया धन ।	३-२०-१६
कुलबन्धन	सं०	सम्पूर्ण कुल का बन्धन में पड़ना ।	३-१३-५
कुलमितिका	स्त्री०	हाथी का झूल या उसकी पीठ पर बिछाने का कम्बल ।	२-११-९८
कुलसंघ	पु०	कुल समुदाय ।	१-१७-५३
कुलीन	वि०	राजकुल से सम्बन्धित व्यक्ति या श्रेष्ठ परिवार का व्यक्ति ।	१-१३-१८
कुलैडक	पु०	अपने गोल के अलग हुए या यूथ भ्रष्ट ।	१२-१-७; १३-१-१६
कुल्य	पु०	राजकुल में उत्पन्न व्यक्ति ।	१-२०-१९, ५-६-७, १४-२५,
कुल्या	स्त्री०	नाली या नहर ।	२-३-३३ ।
कुल्यावाप	वि०	नहर द्वारा सिचाई योग्य प्रदेश ।	२-२४५
कुशल	पु०	अनुभवी विशेषज्ञ ।	३-१३-३०-३५, ३-१६-५, ४-१-२२
कुशाम्र	सं०	एक फल, कुसुम ।	१४-२-२४, १४-२-२५
कुशीलव	पु०	नट, गवैया, चारण स्तुति पाठक ।	१-१२-९, २-१-३४, २-३७-७, २५, १-१२-१३, १-१८-१२, १०-५१-१६ ३-१३-३०, ३-१८-८ ४-१-५८, ६५, ४-४-३
कुष्ठ	पु०	कूट ।	१४-१-१४-१४-४-७
कुसीद	पु०	सूद, ऋण, कर्ज ।	३-११-१४
कूट	पु०	टूटी सींग का वैल ।	५-१-३३, ८-१-१८,
कुहक	पु०	मामा योगविद्, इन्द्र जालिक जादूगर ।	१-२०-१०, ४-१-६५, ४-४-३, ५-४-१०,
कूटसुवर्ण		नक़ली सोना ।	४-४-२२, १०-१०-१२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
कूटशासन	स्त्री०	कपट लेख, जाली राजाज्ञा पत्र ।	४-९-१२
कूटयुद्ध	सं०	चातुर्यंयुद्ध, गुप्तयुद्ध ।	१०-३-२-, ७-६-१७, ४१-१२-१-१७,
कूटसाक्षी	पु०	झूठी गवाटी देना ।	४-४-११, ३-११-४५
कूटापवात	पु०	घास फूस से ढंका हुआ गड्ढा ।	·-३-१५, ४-१०-३, ४-१२-१३, १०-१-१२, १२-५-१५,
कूर्चिका	स्त्री०	घनीकृत तक्र विकार या छेना ।	२-२९-२८
कूटयुद्ध	सं०	गुप्त रीति से युद्ध	१२-१-१७
कूर्मक	वि०	कछुए की आकृति का चिपटा ।	२-११-४,
कूलपथ	पु०	किनारे का मार्ग ।	७-१२-२१
कृकण	पु०	जंगली तीतर, बन तीतर ।	१४-१-४
कृतकः	वि०	निर्मित, सज्जित, किया हुआ ।	१-५-३
कृतककर्मा	वि०	युद्ध में अनेक प्रकार से अद्भुत कार्य कर्ता ।	१-२१-२
कृतकर्णिका	वि०	धव्वा युक्त ।	२-११-८७,
कृतक्रिया	वि०	विधिवत् विवाहित ।	३-७-४
कृतक्षेत्र	सं०	कृषि योग्य भूमि ।	२-१-८
कृतप्रतिधातावस्थ	वि०	जिसके घात पर विश्वास किया जायेगा ।	२-८-२९
कृतप्रवेश	वि०	जिन्होंने देश में आने की अनुमति प्राप्त कर ली है ।	२-२८-१९, ४-१०-२
कृतश्लेषण	वि०	मिलाप ।	७-१-११-१
कृतावरोधा	स्त्री०	किसी के द्वारा गृहिणी के रुप में गृहीत स्त्री ।	२-३६-४-१
कृतो नः सन्धि	पु०	हमने सन्धि कर ली ।	९-६-६७
कृतावस्थ	वि०	प्रतिभू, गारण्टी, दायित्व ।	८-४-३३
कृत्रिका नक्षत्र	स्त्री	सत्ताइस नक्षत्रों में तीसरा नक्षत्र ।	१४-१-३४।
कृत्य	वि०	शत्रु के पक्ष द्रोही होने योग्य व्यक्ति ।	१-१२-२५, १-१३-२२, १-१४-१, १--८-७, ११-१-८, १२-३-११-२-२५-३५, ३-८-८, ५-१-२४, ५-३-३०,
कृत्यकर	पु०	प्रशासक, यह राज्य कर्मचारी थे ।	५-२-३७
कृत्यपक्षीय	वि०	ऐसा वर्ग जो शत्रु के साथ मिल जाय ।	१-१४-६, १-१२-२५,
कृषिकर्म	पु०	कृति काम ।	१-२५-१-१५-१-३५
कृत्या	स्त्री	एक राक्षसी ।	४-१३-२७
कृत्रिम मित्र	पु०	परिस्थितियों द्वारा विरोधी बना अभित्र ।	६-२-२०
कृत्रिम शत्रु	पु०	बनावटी शत्रु ।	६-२-१९
कृत्स्ना	स्त्री	सम्पूर्ण ।	६-१-१८
कृष्य	वि०	कृषि योग्य ।	७-११-२१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
कृसर	पु०	तिल तथा चावल का बना सामान	२–१२–५
क्लृप्त	सं०	निश्चत धन ।	२–६–१०, २–२८–२. २४
कैडर्य	सं०	कायफल ।	१–४–५
केदार	वु०	पालि क्षेत्रादि, नम भूमि ।	२–६–५, ३–९–२५
कैतवक	पु०	धोखा ।	१३–१–१६, १
कैलास	पु०	शिव एवं कुबेर का निवास स्थान ।	१४–३–२४
कोडमण्डल	सं०	लाल धब्बों से युक्त चमड़ा या गाठ ।	२–११–८७
कोद्रव	पु०	कोदो ।	४–२–२८, १४–१–१९ १४–१–१३, १७
कोष्ठक	पु०	कोष ।	३–८–२८
कोप	पु०	विद्रोह ।	१–१३–२०, १–१६–२९, १४–२–४५
कोपक	वि०	विद्रोह को प्रजा देना ।	५–६–३२, ७–६१०
कोपम्	पु०	सही वस्तु ।	४३–४४
कोप कारणात्		कोप के कारण मूर्ख तप स्त्री शाप देता है ।	१–१९–३२
कोप्य	वि०	अस्वीकार करने योग्य ।	४–१–४४
कोश	पु०	खजाना ।	८–१–५
कोशगृह	पु०	धनागार या भण्डार ।	१–२०–२
कोश संग	पु०	किसी कारण राजकीय कोष में पहुँचने योग्य धन का न प्राप्त होना ।	८–४–४९
कोशसंपत्	स्त्री	राजकोष के गुण ।	१–६–१–१०
कोशीधान्य	पु०	फली में बीज जैसे दालदि जो कोश में होते हैं ।	२–२४–२४
कोष्ठ	पु०	मन्दिर या कक्ष देवस्थान ।	२४–१७, ३–९–२५
कोष्ठक	पु०	मकान का ओसारा या कोठा ।	३–८–२८
कोचपक	पु०	एक प्रकार का कम्बल ।	२–११–९८
कोडिन्यक	पु०	एक प्रकार का कीड़ा इसके मल मूत्र में विष होता है ।	१४–१–४
कोपीन	सं०	गुह्य भाग ।	८–३–६१
कौमार भृत्य	पु०	शिशु चिकित्सक ।	१–१७–२५
कौष्ठेयक	सं०	राजकीय खेत से अन्न ।	२–१५–३
क्रकण्टक	सं०	कूकर पक्षी या तीतर ।	१४–१–४
क्रमाभिनीत	वि०	जो क्रमशः विश्वास करने के लिए उठान कर लिया जाता है ।	११–१–६, १२–२–१९, १३–२–११, १६
क्रिमिजात	सं०	रेशम ।	२–२२–६
क्रिमितान	सं०	क्रिमि कोश से प्राप्त होने वाला रेशम या रेशम का वस्त्र ।	२–२२–६, २–२३–८
क्रिया	स्त्री०	शिक्षा, शिक्षित, अध्यापन अर्थ होता है ।	१–५–४, २–३०–४७
क्रियाविपन्न	वि०	काम बिगाड़ने वाला हाथी ।	२–३२–१०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
क्लिष्ट	वि०	हाथ से मर्दितक नष्ट किया हुआ नीरस ।	१-२१-७
क्षपण	सं०	उपवास ।	३-१६-३८
क्षय	पु०	क्रमशः कर्म का नाश ।	७-२-२
क्षार	पु०	राव गुड़ इत्यादि ।	२-१५-१४, २-२९-४३, २-३०-१८ २-३१५१३
क्षारकर्मन्	सं०	ईख से रस निकालना ।	२-१५-८
क्षिप्र	वि०	तेज, शीघ्रडामी, तुरन्त लचीला ।	७-९-५०, ७-१०-१०
क्षुद्योग	पु०	भूख न लगने की उपाय ।	१४-२-१
क्षुद्रक	पु०	साधारण या सामान्य लोग ।	२-१३-१३, २६, ८-४-९, २-१३-३७, ४०
क्षेत्रज	सं०	नियोग द्वारा सवर्ण स्त्री से पुत्र उत्पन्न करना ।	२-६-२४
क्षेपण	पु०	आभूषणों पर खुदाई का काम ।	२-३३-३७, ३८
क्षेम	पु०	प्राप्त वस्तु का यथावत उपयोग कल्याण, कुशल ।	६-२-१
क्षौम	बि०	सूत का बना हुआ वस्त्र ।	२-२४-१
क्षीरवृक्ष	पु०	जिस बृक्ष की टहनी या पत्ता तोड़ने पर दूध निजलता है ।	२-१-६
क्षौद्र	पु०	शहद ।	१४-१-३५

ख

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
खचित	वि०	कशीदा अर्थात् सूई के कार्य में निष्पादित ।	२-११-१४
खञ्जन	सं०	जलीय या पंकिल भूमि ।	१०-४-८, १२-४-२५
खञ्जनोवक	वि०	पंकिल या दलदलीय जलावृत दुर्ग	२-३-१
खञ्जरीट	प्र०	खञ्जन ।	१४-२-३९
खण्ड	वि०	खण्डित टूटा या फटा हुआ ।	२-११-३४
खण्डफुल्ल	सं०	ऐसा दरवाजा जो संकट के समय खोला जा सके ।	३-८-१५
खण्टसंघात्य	वि०	अनेक खण्डों या पहियों को एक में मिलाकर बनाना ।	२-११-९३
खद्योत	सं०	जुगनू, सन किरवा ।	१४-३-१८, १३-१३
खनकमोघी	वि०	खान या ट्रेन्च युद्ध ।	७-१०-३६
खनिसार	पु०	खान, रत्नादि ।	४-९-२
खरक	वि०	खुरदुरा या खरखरा ।	२-११-४
खरपथ	पु०	गदहे के चलने का मार्ग ।	७-१२-२७
खरपह	वि०	ग्रन्थकर्ता का नाम ।	४-८-२४
खल (खलिहान)	पु०	खलिहान ।	४-११-२०
खात	सं०	परिखा ।	२-२-३, १०-११, २५-६-२-१२-२, ३-८-२१, ७-१७-४८, ७-१०-३७, ७-१५-१२-२-३-५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
खात प्रावृत्तिम	वि०	आयताकार तालाब या खोदी गयी जल की नाली का वट या घेरा हुआ ।	३-९-३५
खारकीट	सं०	खारी भूमि से उत्पन्न कीड़ा ।	१४-२-३९-४०
खुरुम्ब	वि०	मुलायम पत्थर बनाता हुआ ।	२-१२-१५
		ग	
गणित	वि०	हिसाब किताब या गणना ।	२-२१-१५, २-७-१०
गण्डिका	स्त्री०	वृक्ष का तना या वृक्ष के स्तम्भ से बनी नाव ।	२-३-९, २-१४-५३
गन्ध	स्त्री०	पृथवी का गुण ।	१-६-२
गर्भधान्य	नपु०	खेत या भूमि में लगा धान्य ।	१-१-१२
गण्डूपद	सं०	केचुआ छोटा, गेडए ।	१४-२-१९
गन्धोदक	प्र०	सुगन्धित जल ।	१२-५-६
गर	पु०	विष ।	१-२-१-२५
गर्भभर्मन	सं०	पोषण, गर्भरक्षा ।	१-१७-२५, ३-१३-२०
गर्भसंस्था	स्त्री०	गर्भिणियों के निवास योग्य स्थान ।	१-२०-१०, १९
गर्भिणिका	वि०	जिसका मध्यभाग स्थूल हो ।	२-११-४
गवाश्व	सं०	गाय और घोड़ों और वैलों को रथ में जोतना ।	१०-४-१८
गव्य	वि०	गौ के उपयोगी ।	६-१-८
गाढ़	वि०	अपगाहन किया हुआ ।	२-१४-२६
गाणनिक्य	सं०	हिसाब दिखाने वाले अध्यक्ष ।	२-७-१६
गान	पु०	गीत गायन विधा से अपनी जीविका चलाने वाले या गवैया ।	१-१२-१, २-१-३४ ७-१७-३४, ८-३-१५
गान्धर्व विवाह	वि०	यह पति पत्नी के परिस्पवरिक प्रेम या अनुराग के कारण विवाह करने है ।	३-२-६
गीत	वि०	भजन, गाने योग्य पद्य	१-१२-१३
गुञ्जा	पु०	घुमची, चोडली, रत्ती ।	१४-१-११, १४-२-१२, १४-३-७०,
गुग्गुल	पु०	गुगुल ।	१४-१-३०
गुड़	सं०	हाथी का कवच या चमड़ा ।	१३-४-९
गुण	पु०	पूत्रादि द्वारा अलंकार गूंथना ।	२-१३-३७, ३९, २-१४-४५
गुप्ति	स्त्री	रक्षा के साधन ।	१-१६-९
गुरुसमुत्थ	वि०	सेना सज्जीकृत करने में अधिक समय लगना ।	७-९-१८
गुर्वी	स्त्री	बहुत बड़ी ।	९-५-३२
गुल्म	सं०	रक्षक पुलिस, थाना ।	२-१६-१८, २-२४-१२, ३-२०-१४
गुह्य	वि०	गोपनीय, युद्ध छिपाने वाला ।	१-८-९, १-१५-६०
गुह्यसधर्म	वि०	समान गोपनीय आचरण ।	१-८-५,

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
गूढ़स्तेन	सं०	गूढ़पुरुष तथा चोर।	७–३–३२
गूढ़ गूढ़पुरुष	पु०	गूढ़पुरुष, गुप्तचर।	१–१६–२४, ३३, १–११–१,
गूढ़ाजोव	पु०	गुप्त रूप से धन प्राप्त करना।	२–२७–२५–; ३–१–१०, २–२०–२ ४–४–५, २३, ४–६–२
गूह	पु०	छिपाना।	१०–२–१९
गूढ़युद्ध	पु०	छिपा हुआ युद्ध।	१२–४–२५
गृहगोलिका	स्त्री	पतली छिपकली।	१४–१–४
गृहेजात	पु०	घर में उत्पन्न।	३–१३–२०
गृहपरिवाप	पु०	गृह कार्योंपयोगी सामान।	३–६–६
गृस्या	वि०	गृह से सम्बन्धित।	३–१३–२४
गृक्त	सं०	गीघ।	१४–२–४३
गृहयोतिका	स्त्री	छिपकली या पल्ली।	१४–१–१९
गोअध्यक्ष	पु०	इसके नियन्त्रण में केवल राजकीय पशु होतै थे।	२–२९–१
गोदानम्	नपु०	केशान्त संस्कार।	१–५–१०
गोधा	स्त्री	गोह।	१०–६–३५; १४–४–३
गोप	पु०	मालगुजारी एकत्रित करने वाला कर्मचारी।	२–३५–२, २–१–७, २–३६–२
गोपुर	सं०	नगर या मन्दिर का मुख्यद्वार।	२–३–३१
गोमूत्रिका	स्त्री०	वक्रगति या टेढ़ी-मेढ़ी चाल।	१०–५–५३
गोरक्षवती	स्त्री०	आभीर, गोपाल।	७–११–२१
गोलिङ्ग	वि०	यान सवारी।	२–२८–२१
गोष्पण	पु०	गोष्फण यन्त्र।	२–१८–१५
गोतमवृक्ष	सं०	एक विशेष वृक्ष।	१४–१–१७
गौरसर्षप	पु०	सफेस सरसो।	१४–२–५
ग्रहण	पु०	पकड़ना या बन्दी बनाना।	१०–४–ज३
ग्रन्थिभेद	पु०	पाकेटमार या गाट काटने वाला गिरहकट।	४–ज०–१
ग्रन्थिका	स्त्री०	पिप्पलीमूल।	१४–१–१५
ग्रामघात	पु०	ग्राम, गांव या नगरका नाश करना।	१३–१–४१, १३–३–५८
ग्रस्	पु०	ग्रास करना, पराजित करना।	९–३–३, २–१–१६, १–४–१४, ७–४–८, ७–१२–१४
ग्राम	पु०	पूरा गाँव।	८–४–४
ग्रामदेव	पु०	ग्राम देवता, ग्राम का रक्षक देवता।	३–१०–२४
ग्रामकूट	पु०	गाँव में तुलामानादि का कूट करने वाला।	४–४–९

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
ग्रामभृतक	पु०	नापित, रजक आदिग्राम या राज्य के कार्यंकर।	२–१–११; ३–११–२९ ५–१–११, ५–३–३२
ग्रामस्वामिन्	पु०	गाँव का जमींदार, जागीरदार या गाँव का मालिक।	४–१३–८
ग्रामिक	पु०	ग्राम प्रमुख या ग्राम प्रधान।	३–४–९, ३–१०–१६, १८
ग्रामस्वामी	पु०	ग्राम का जागीरदार।	४–१६–१८, ४–१३–८
ग्राम्यसुख	सं०	गंवारु या ग्रामीण सुख।	१–१७–२०
ग्रास	पु०	अल्पकोश होने पर राजा कर लगाकर जनता के अर्थं का ग्रास करता है।	२–१–१६
ग्राह	पु०	जलचर, घड़ियाल, मगरमच्छ।	१–२१–२१
ग्राह्य	वि०	पकड़मे या गिरफ्तार करने योग्य।	३–११–२४, ७–५–२२
ग्रैवेय	सं०	ग्रीवा बन्धन की सिकड़ी।	२–३२–५, १२
गृहपतिकव्यञ्जन	पु०	गृहस्वामी बना गुप्तचर।	१–११–१
गृहेजात	वि०	घर में उत्पन्न।	३–१३–२०

घ

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
घटिकास्थान	सं०	स्थान अर्थात् ऐस स्थान जहाँ पर सबकी निगाह पड़े।	२–२१–५
घटोवल	वि०	एक असुर।	१४–३–४४
घाणपिण्याक	पु०	घानी या कोल्हू की खली।	२–१५–५२, २–२९–२९–४२
घात	पु०	चोट।	३–१९–२१; ९–५–१६, १०–४–१३, १३–४–४२
घोर	वि०	डरावना, राजा द्वारा घोर बचन का कहना, उग्रकर्म।	५–४–१५
घोष	पु०	ध्वनि घोषणा।	१०–६–४६
घ्राण	पु०	गन्ध।	१५–१–१८

च

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
चक्षुषमान	वि०	क्षर्थशास्त्रभिज्ञ।	१–९–१
चक्र	सं०	सेना।	७–४–१५
चक्रचर	पु०	गाड़ी वाला।	४–४–३, ७–१७–५५
चक्रपथ	पु०	गाड़ी वाला रास्ता।	१–१२–२७
चक्रयुक्त	सं०	गाड़ी या कपट।	३–१२–२, ४–१०–८, ८–१३–२२
चक्रवर्तीक्षेत्र	सं०	जिस राजा के रथ का चक्र समुद्र पर्यन्त तक चलता था उसको चक्रवर्ती कहते थे।	९–१–१८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
चक्रि	सं०	गाड़ी आदि ।	१०–२–१६
चक्रिन्	सं०	शकट, गाड़ी पहिए से चलने वाला यान ।	३–८–११, १०–२–१६
चक्षुरअन्ध	पु०	शास्त्र रुप चक्षुरहित, शास्त्र ज्ञान विहीन ।	८–२–९
चतुरंगबल	स्त्री०	चतुरङ्गिणी सेना ।	९–१–५०
चतुष्पद	पु०	चौपाया या चार पैर वाला जानवर ।	३–६–३
चतुर्विघं..	वि०	चारप्रकार का ।	२–१०–१५
चमसी	स्त्री०	श्लक्ष्ण चूर्ण, पीठी, वेसन या मटर का वेसन ।	२–१५–२९
चमूखला	पु०	सेना के दुष्ठ या खल सैनिक ।	१४–३–२१
चमूमुखव्यूह	पु०	एक प्रकार का व्यूह ।	१०–६–१८
चर	हे०	गति स्वतन्त्र करना ।	४–९–२३, ९–६–२८
चरक	पु०	भृत्य या नौकर ।	२–१३–३१, ४–१–४९
चरित्र	सं०	आचार-व्यवहार ।	२–७–२०, ३, १० २–८–३, २–१६–२५, २–२२–१५, २–३५–५; ३–१–३९, ४०, ३–११–३, १३–५–१४,१४
चरु	सं०	एक प्रकार की आहुति ।	४–३–४२
चर्मकरण	पु०	दौरीजिस पर चमड़ा मढ़ा रहता है ।	१०–२–१४
चर्या	स्त्री०	आरोहावरोहकामार्ग सम्भवत सीढ़ी ।	२–३–१४
चललक्ष्य		पक्षी, हरिण आदि ।	१–२१–२३
चलसन्धि	पु०	अस्थिरसन्धि ।	७–१७–३
चलामित्र	पु०	अस्थिर अमित्र जिसके पास दुर्ग नहीं होता या घुमन्तु शत्रु ।	७–१०, ७–१–३–७–८ ७–१४–१०, ७–१०–३५, ९–७–२८
चलितशास्त्र	पु०	शास्त्रज्ञ होकर जो अनुकूल आचरण नहीं करते ।	८–२–९
चाक्रिक	पु०	चक्रयन्त्र (कोल्हू) से तेल पेरने वाला तैलिक ।	२–१५–८
चारितग्नि	पु०	डोम के घर की अग्नि ।	१४–१–३७
चाण्डाल	सं०	पतित किंवा अघम ।	१४–१०
चातुरन्त	वि०	चारों सागर पर्यन्त भूमि ।	१–९–४, ४–११–१७
चातुर्मास्य	सं०	चार महीनो या चोमाला का दिन ।	१–६–५–१२
चातुर्वर्ण्यं	वि०	व्राह्मण, क्षत्रिभ; वैश्य, शूद्र ।	७–११–२१
चातूरत्रिक	वि०	चार रात्रि ।	१३–५–१२
चाप	पु०	एक प्रकार का व्यूह ।	१०–६–११
चार	पु०	गुप्तचर का कार्य ।	१–७–१, १–१२–७, १०–१६ २५–३४–१, १२–२३–३, १–१–४७

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
चारण	पु०	भ्रमणशील, भाट, गायक।	४–१–६२
चारक	पु०	हवालात या संरोधगृह।	४–९–२२
चार रात्रि	स्त्रि०	सचार के निमित्त, किसी महोत्सव पर घूमने की छूट।	२–३६–२९
चारित्र	सं०	रिवाज, नियम।	२–१६–२४, २२–८–६–१२
चोर्या	पु०	आरोह एवं अवरोह का मार्ग	२–३–४
चिक्कण	वि०	चिकना या स्निग्ध।	२–१२–२, २–१३–२५
चिटचिटायत्	वि०	चिट्-चिट् की तरह शब्द करना।	४–१७–१३
चित्राग्नि	पु०	चिता से लाई गयी अग्नि।	१४–१–४७
चित्र	वि०	मातना।	२५–२०–४, ९–७–४, ११–१
चित्रलेख	पु०	पहचान।	१–१६–२५
चित्रभोग	पु०	अनेक प्रकार से सहायता या उपकार।	७–१६–१०
चित्रघात	पु०	कष्ट देकर मारना।	२–५–२०
चिमिचिभायित	वि०	अत्यन्त भास्वर चमकदार।	२–१३–३८
चीनपट्ट	पु०	रेशम।	२–११–४, २५–४–४
चुच्छन्दरी	सं०	छछुंदर।	१४–२–३९
चुञ्चुवालुका	स्त्री०	सूक्ष्म वालू के कण।	२–१२–५
चुल्ल्यां	स्त्री०	चूल्हा।	१४–२–३२
चुलिका	स्त्री०	स्तम्भ मूर्धा।	२–३–१८, २–१३–१४
चेल्ल	सं०	पहनने का वस्त्र।	२–१४–५३
चैत्य	पु०	यज्ञशाला, पवित्रस्थान देवमन्दिर।	१–२०–२, २–४–२०–२, ३५–३–१३, २–२५–२९, १३–२–२१
चोदना	स्त्रि०	प्रेरणा।	२–१०–२३, ३३
चोरप्रकृति	स्त्रि०	जरायमपेशा।	१३–५–१५
चारेरज्जु	पु०	चोर को पकड़ने वाला राज पुरुष या अधिकारी।	४–१३–१०
चौलकर्म	पु०	मुण्डन या चूडाकरण संस्कार।	१–५–६
च्छिद्र	पु०	राजगृह सम्बन्धी भूभाग का निचला भाग।	२–९–६
		छ	
छन्दः	पु०	आकर्षक मन्त्र, स्तुति,।	१–२–३
छन्दिका	स्त्रि०	सुख, इच्छा, अभिलाषा कामना, भोग।	११–१–२
छन्नपथ	पु०	ढँका हुआ मार्ग।	२–४–२, २–३६–४३
छन्नसारवल	पु०	मजबूत या सक्ति शाली सेना।	१०–३–१७
छर्दि	स्त्री०	वमम।	३–१९–२
छल	पु०	कपट, वंचना।	३–४–११
छात्र	पु०	शिष्य विद्यार्थी।	१–११–२, २६–२४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
छाया	स्त्री०	छाया प्रमाण। यह केवल सूर्य के प्रकाश में देखा जा सकता है।	१-७-८, १-१९-६
छायप्रमाण	पु०	पुरुष की छाया से समय का विभाग।	२-२३१
छिद्र	वि०	अयोग्य भूमि।	२-२-३-६
छिन्नधान्य	पु०	पूर्ति स्रोत का भंग होना।	८-५-१४
छिन्नपक्ष	पु०	टूटा या भग्न या परकटे पक्षी के समान।	९-१-९
च्छेदनीय	वि०	उत्मूलन, उत्पादन नष्ट करने योग्य।	७-१०-२६

ज

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
जंघा	स्त्री०	प्राणो, व्यक्ति, धावक, सन्देशहर।	२-३५-९, २-३६-३
जंघाकारिक	पु०	दूर देश पैदल जाकर समाचार आदि देनेवाला व्यक्ति।	२-१-६
जंघाग्र	पु०	स्थिर होकर न रहने वाले व्यक्ति।	२-३५-९
जटिल	पु०	जठाधारी, मुण्ड आदि का उपलक्षण है।	१..११-१३, १४-१-१३-१५
जड़	स्त्री०	मूर्ख।	१-१२-९
जनपद	पु०	जनपद या विजयकी इच्छावाले राष्ट्रों में उत्पन्न व्यक्ति।	१-२-१
जनपदसन्धि	पु०	सीमावर्ती नगर या दुर्ग।	३-१०-१, १२-४-१
जनपद सम्पत्	स्त्री०	जनपद की सम्पन्नता।	६-१-८
जनमेजय	पु०	राजा परिक्षित के पुत्र।	१-६-६
जमदग्नि	पु०	भगवान परशुराम के पिता थे।	१-६-१२
जम्भकविद्या	स्त्री०	वशीकरण एवं अंतर्धानादि होने की विद्या।	१३-२-१३
जाङ्गल	पु०	मरुप्रांय देश।	२-२४-५
जाङ्गुलीविद्	पु०	विष विद्या में निपुण वैद्य।	१-२१-९; २-३०-४४
जातकामा	वि०	जब कामोद्वेग का उद्दीपन हो जाय।	११-१-३५
जात नक्षत्र	नपुं०	राजा के जन्म नक्षत्र में या जिस नक्षत्र में जो पैदा होंता है।	२-२६-४४
जातरुप	वि०	खान से प्राप्त, शुद्ध सुवर्ण।	२-१३-७
खात व्यसन	वि०	उत्पन्न, आपत्ति या आपदा।	७-७-११
जाति संघ	वि०	जातियों का संघ।	९-६-७२
जात्य	वि०	कुलीन।	७-१७-१८; २० ४-२-१५; ४-१-१९
जानपद	वि०	स्वदेश में उत्पन्न।	१-९-१
जानु	पु०	घुटना।	१४-३-१७
जानुभञ्जनी	स्त्री०	ठेहुनी तोड़ना या शत्रु के कर्मों की एक-क्रूर यन्त्रणा।	२-३-१५
जार	पु०	उपपति, प्रेमी, यार, आशिक।	४-१२-३३, ३४

जांलूथ-जारुथ	वि०	अयोध्या का एक राजा था ।	१-२०-१६
जिह्वामुत्पाटन	क्रि०	जीभ खींच लेना या उखाड़ लेना ।	४-११-२१
जीव	वि०	जीवित ।	५-५-१५
जीवं जीवकः	पृ०	चकोर पक्षी कुछ आचार्यों के मत से ।	१-२०-१८
जीवग्राह	पु०	जीवित पकड़ना ।	१३-३-३०; १३-४-३१
जीवन्ती	स्त्री०	गुरुच, गुड्ची अमृता, सोमवल्ली, विशल्या मधुपर्वी इत्यादि नाम हैं ।	१-२०-५; १४-४-१७;
जोङ्गनी	स्त्री०	चिमटा, अग्नी खुरेदने का लोहे का छड़ ।	२-१४-२४;
ज्यायसा	बि०	श्रेष्ठतर, योग्यतर अधिक शक्तिशाली ।	७-५-४१
ज्मायान्	वि०	श्रेष्ठ ।	६-२-३५; ७-७-२०
ज्येष्ठभागिन्	वि०	ज्येष्ठ भाग वाला ।	१-१७-५२
ज्येष्ठांश	पु०	ज्येष्ठ पुत्र को अन्य पुत्रों की अपेक्षा अधिक भाग ।	३-६-९
ज्वारल्न	पु०	लपट ।	१४-१-२४
ज्मा	स्त्री०	घनुष की डोरी, प्रत्यञ्चा ।	१४-३-६६

ड

डामर	पु०	दंगा, विद्रोह राजतरङ्गिणी के अनुसार जमींदार या भूस्वामी के रूप में अर्थ किया गया है ।	२-६-२०
डामरिक	पु०	विप्लवकारी, उपद्रवी ।	४-९-२४
डिम्ब	पु०	प्रजाविप्लव, कोलाहल दंगा, मुठभेड़ भय के कारण चीत्कार ।	१-१७-१२; १-१७-४२

त

तक्र	पृ०	मट्ठा, घोल या छाछ ।	१०-२-५
तगर	स्त्री०	ह्रीवेर, वर्हिष्ठ, जल, वक्त्र ।	
तज्जात	वि०	उससे उत्पन्न ।	२-१२-२१; २-१८-१, २-२२-५ २-२३-१, ४-७-१६, ४-६-३ २-५-८, २-२५-१, २-१२-१८, २-११-१, ४-१२-३५, ४-१२-१६
तज्जातिक	वि०	वर्ग या वर्ग के समान या अनुरूप ।	२-७-४, २-२९-७,
तण्डुलीयक	पु०	वायुविडंग या चौराई का साग ।	१३-४-९
तत्कुलीन	पृ०	उसी के वंश में उत्पन्न ।	१-१०-३, १-१३-१८, १-१४-३
तनुक्षय	पु०	शरीर को नष्ट करना ।	९-४-६
तन्तुवाप	पु०	बुनकर ।	४-१-८
तन्तुकक्ष	पु॰	एक महासुर ।	१४-३-४३
तन्तुविच्छिन्न	वि०	बुनते समय कुछ सूत्रों को छोड़कर जालीदार बनावट ।	२-१ -९७

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
तन्त्र	सं०	प्रशासन ।	४-३-५४, ६४
तन्त्रायुक्ति	स्त्रि०	विषय वस्तु का निरूपण, प्रकार ।	१५-१-४१
तपनीय	सं०	सुवर्ण बनाना ।	२-१३-६१
तपनीयकारु	पु०	अग्नि ताप के योग से नाना प्रकार के भूषण बनाने वाला शिल्पी ।	२-१३-३३
तपस्वी	वि०	तपस्वी लोग ।	७-१७-८, ९-३-२३
तप्त	सं०	तपनीय, गर्म करने योग्य ।	२-१४-८
तप्तव्याजी	स्त्री०	गरम करके घी खरीदना ।	२-१९-४३
तत्वजा	पु०	वास्तविक घटना पर आधारित ।	२-१०-४४
तरण	पु०	पार करना ।	१०-४-१४
तर्क	पु०	मूल का निर्धारण ।	२-७-१०, २-२१-१५
तर्कुभ्रामिन्	वि०	तकुआ घुमाना ।	२-११-४०
तल	सं०	मंजिल का विचला भाग ।	१-२०-[illegible], २-३-११, २-५-२, ५, ४-८-२२
तलिच्छक	सं०	नीचे बिछाने का कम्बल ।	२-११-९८
ताड़न	सं०	दण्ड ।	२-३६-३५
तादात्विक	वि०	तत्काल यथोचित धन का खर्च करने वाला ।	२-९-२०, २२, ७-१३-१३
ताम्रवर्णी	पु०	दक्षिण भारत का एक भाग एक मत से लंका ।	
तार	सं०	उज्वल या अत्यन्त शुद्ध चांदी ।	२-१३-४९, २-१४-३०
तारित	वि०	पूरा या निपटा हुआ या समाप्त किया ।	४-९-१५
तार्यावाघ	वि०	नौका आदि साधनों से आपत्ति से सुरक्षा ।	८-४-२
तालजंघ	सं०	हैहयवंशीय राजा अवंति नरेश जयघ्वज का पुत्र ।	१-६-६
तालमूल	सं०	तालवृक्ष के मूल की तरह मूल वाला या एक प्रकार का छाता ।	२-३-७, २-१८-१७
तालावचर	पु०	नाचने वाला, नर्तक नट विशेष ।	२-४-११, २-१७-२९ ३-४-२२
तालोद्घाटन	सं०	ताला खोलना ।	१४-३-६३
तितिक्षा	स्त्री०	सहिष्णुता, सहनशीलता, सहनशक्ति ।	५-४-१५
तिथि	स्त्री०	उत्सव या पार्वण का दिन ।	२-२३-५
तिन्दुक	सं०	तिन्द का वृक्ष ।	१४-२-११
तिरोजनपद	पु०	दूसरे जनपद का निवासी या विदेशी ।	२-३४-४, ३-२०-२१
तिरोहित	वि०	छिपकर अनुपस्थित में प्रवेश करना ।	३-१-२, ६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
तीक्ष्ण	वि०	अपने जीवन की पर्वाह न करने वाला वधिक या साहसी व्यक्ति।	१–१४–५, ९–५–१५, ९–६–३५, ९–७–४९, २–३०–३०, १२–५–७, १–११–१, १–१२–२, २–१२–१५, २४, २–१३–४८, ५८
तीर्थ	सं०	निर्दिष्ट घाट या नावों के ठहरने का सुरक्षित स्थान।	२–२८–१८, १६, २–२९–२३, १०–२–१५, १०–४–१३, १–१३–२, ४–३–१५, १–४–३, १–१२–२०, ३–२–४३, ४४, ३–४–१७, ३
तीर्थंकर	पु०	धर्मगुरु, पुरोहित धार्मिकपंथ या सम्प्रदाय।	३–२०–२१
तीर्थघात	पु०	तीर्थ स्थानों पर या पर्वादि के अवसरों पर वस्तुओं की चोरी करने वाले।	४–१०–१
तीर्थाभिग्रह	पु०	शत्रु द्वारा घात के अवरुद्ध या प्रतिरोध होने पर।	१०–२–१५
तुत्य	सं०	अस्थि चूर्ण युक्त मिट्टी।	२–१३–४९
तुलामान	सं०	तोलनीय द्रव्य।	२–१६–१०
तुल्य	वि०	समवर्ण।	१–३–९, ३–४–१८, ३–१८–४, ४–१२–१०, १४
तुल्य कारिणी	वि०	शिल्प किंवा उपकार योग्य कार्य करने में समान दो व्यक्ति में एक व्यक्ति का पक्षपात कर दूसरे को अपमानित किया व्यक्ति।	१–१४–२९
तुल्यदोष	वि०	अपने समान दोष।	१–१४–३
तुल्ययोग	पु०	समान वृद्धि।	८–२–७
तुवरी	स्त्री०, सं०	अरहर।	१४–३–६४
तूर्य	सं०	तूर्य, तुरही, मृदङ्ग, मुरज, ढोल इत्यादि।	१४–४–१३
तूर्यकर	पु०	तूर्य बनाने वाला।	५–३–१५
तुष्टिदान	पु०	सन्तोष उत्पन्न करने के लिए किया गया दान।	१–११–१७
तुष्णींदण्ड	पु०	चुपचाप गुप्तरूप से दण्ड।	१–११–२१, १–१२–१६
तुष्णीयुद्ध	सं०	शान्ति युद्ध या उपजाप द्वारा युद्ध।	७–६–४१
तूर्य	पु०	तुरही।	१०–६–४६
तृतीयसार	वि०	तीसरा अच्छा।	१०–५–४३, ४६
तेज	नपु०	गर्मी, अग्नि, प्रकाश।	७–३–८
तेजनचूर्ण	सं०	ऐसा चूर्ण जिससे शरीर में चमक या प्रकाश आ जाये।	१४–२–१९
तेजनतैल	सं०	तेज से मनुष्य में प्रकाश आ जाता है।	१३–२–२३, २५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
तेजनागिन	पु०	अग्नि जो प्रकाश युक्त प्रतीत हो, प्रज्वलित कर अद्‌भुत रूप दिखाना।	१३-२-११
तेजनोदक	नपु०	आँखों की सुरक्षा के लिए तेज जल।	१४-१-१४, १४-४-२
तैलपर्णिक	सं०	एक प्रकार का चन्दन या सुगन्धि।	२-११-६१
तोमर	पु०	चार हाथ लम्बा भाला।	२-३२-१५
तोयान्तिकी	वि०	गहरी खांई जिसमें से जल स्वयं निकले।	२-३-४
तोयाशय	पु०	स्नान योग्य जलाशय।	१०-४-१०
तोष	पु०	संतुष्ट।	७-१६-११
त्यक्त	वि०	अशोधभानीय जानकर त्याग देना।	१-१८-१४
त्यक्तात्मान	वि०	आत्मरक्षण के अयोग्य।	१-१२-२
त्याग	पु०	अपराघो के वध और त्याग को समान माना गया है।	१-३-९, १-१३-१७
त्रयंग वल़ विभाग	पु०	सेना के तीनों भाग।	१०-५-४०
त्रस्नु	वि०	शब्द होने से भयभीत या त्रस्त, भीरु, कातर, डरने वाला जानवर।	२-२९-२२
त्रातुम्	पु०	रक्षा करना।	१३-३-३२
त्रासन्	पु०	भय का कारण, त्रस्त करना।	१०-४-१४
त्रिपुटक	वि०	तिकोना।	२-११-४
त्रिपौरुषी	वि०	तीन पुरुष लम्बी छाया।	१-१९-७, २-२०-३९
त्रैकाल्य	सं०	भूत, भविष्य, वर्तमानकाल या प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल।	७-४-२१
त्रैविद्या	पु०	तीनों वेद का ज्ञाता।	१-१९-३२
त्वष्टृ	पु०	सोने या चाँदी पर रत्न जड़ना या मुलम्मा करना।	२-१३-३३
त्वष्टृकर्मन्	सं०	सोना चढ़ाना यथा अनन्त कड़ा आदि।	२-१३-४४
त्रयी	स्त्री०	ऋक्, यजु, सामवेदात्मक।	१-२-३
त्रिपौरुसी	सं०	तीन पुरुषों के बराबर लम्बी छाया।	१-१९-७
त्रिवर्गः	पु०	धर्म, अर्थ, काम।	१-१०-१६
त्रैविव	पु०	त्रयी विद्या विद् अर्थात् तीनों वेदों में निष्णात्।	१-१९-३२

द

दंशयोग	पु०	एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के काटने के काम आना।	१४-१-३०
दक्षिणापथ	पु०	दक्षिण या दक्षिण का मार्ग।	७-१२-२२
दण्ड	पु०	तीनों विद्याओं का मूल दण्ड है।	११-५-१
डण्डकर साधन	वि०	जुर्माना तथा कर वसूल करना।	१-१३-१९
दण्डखेदिन्	वि०	दण्ड तथा जुर्माना से कराहता हुआ।	३-२०-२१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
दण्डधर	पु०	दण्ड देने वाला, राजा ।	१–८–२३
दण्डनयिन्	वि०	नेता होने योग्य ।	६–१–६
दण्ड पारूष्य	पु०	कठिन आघोत ।	४–१–५७, ३–१९–१
दण्डपाल	पु०	सेना का रक्षक ।	
दण्ड प्रणीत	वि०	जिस पर जुर्माना लगाया जाता है ।	३–१३–१८
दण्डप्रतिकर	वि०	जुर्माना के एवज में काम करके जुर्माना अदा करना ।	२–२४ल्ह२, २–३३–२
दण्ड प्रेषण	सं०	शारीरिक दण्ड देना ।	३–१३–१९
दण्ड वल व्यवहार	पु०	सैनिक शक्ति का उपयोग ।	८–१–३४, ३८, ९–२–४, १३,३१५
दण्ड व्यूह	पु०	दण्डाकार सेना की स्थापना ।	१०–३–५३
दण्ड सम्पन्न	स्त्री०	श्रेष्ठ सेना ।	१०–५–४१
दण्ड स्थान	पु०	स्कन्धावार की भूमि ।	२–१०–२२
दण्ड प्रतिकारिणी	स्त्री०	दण्ड के बदले काम करने के लिए	
दण्डोप कारिन्	वि०	जो जुर्माना वसूल के कार्य करता है ।	२–१२–२१, ७–१६–२९,
दण्डोपघातक	पु०	सेना के लिए विनाश या हानि कारक ।	१३–५–१४
दण्डो पनत	पु०	किसी की सेना का आत्म समर्पण ।	५–१–५३–, ७–२–९, ७–३–६, ७–१–५–३०, ७–१६–२९
दण्डोपनायिन्	वि०	शत्रु की सैन्य शक्ति द्वारा दबाने वाला ।	७–१६,
दत्तः		दान देना ।	१५–१–२४
दत्तक	पु०	अन्य व्यक्ति को दिया हुआ ।	
दण्ड	पु०	सेना ।	१२–१–२५
दन्तशठ	पु०	जम्वीर ।	१४–१०–२५
दन्तिः	पु०	ताँवा, उदुम्बर, निकुम्भ, दांती ।	१४–४–२
दम्भोद्भव	पु०	एक सर्व भौम सम्राट ।	१–६–९,
दम्य	वि०	प्रशिक्षण में ।	२–३१–१–४, २–३२–१, २२–२९–८, २–२९–२४
दर्प दान	पु०	घमण्ड, अहंकार, गर्व अभिमान पूर्वक दान ।	३–१६–७
दर्भमूल	पु०	कुश की जड़ ।	१४–२–३
दरण	सं०	दरार ।	१०–४–३
दरी	सं०	गुफा कन्दरा, खोट	२–१–३
दर्भ	पु०	कुशा ।	१०–३–३१
दर्दुर	पु०	मेढ़क ।	१४–२–४०
दशग्रामी	पु०	गोपों की सीमा या दश ग्रामों का समुदाय ।	४–१३–१२
दर्शन	सं०	सिद्धान्त ।	१–१०–१७

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
दशती	स्त्री०	दशा वर्गों का एक समूह ।	२–२९–३१
दशबन्ध	सं०	देय धन का दशवाँ हिस्सा या दश गुना ।	२–७–२१, ३–१–२१, ३–११–३३, ३–१३–३३
दशमूली	स्त्री०	आग बुझाने का उपकरण या दश कुलों का समूह, दशघरों का रक्षक ।	४–३–३–४–२३
दशवर्गाधिपति	पु०	दशवर्गों या सैनिकों के नायक, अधिपति या प्रधान ।	१०–४–४६, १–२१–२८
दशवर्गिका	स्त्री०	दश सैनिकों का बल ।	
दशार्ण	पु०	एक जाति एवं एक जनपद का नाम ।	२–२–१५
दाण्ड कर्मिक	सं०	गुप्त दंड देना ।	५–१, ५–६–१५, ५८, ७१६–१५, ९–५–२९, ९६५
दांडक्य	पु०	भोजवंशीय राजा ।	१–६–५
दात्र	सं०	चाकू या काटने का उपकरण	२–२८–१३
दान	पु०	देने की कृपा ।	९–४–२६
दापक	पु०	जो देने के लिए कहे या दिलावे ।	४–६–१२
दाय विभाग	पु०	पिता की सम्पत्ति का पुत्रों में बँटवारा या विभाजन ।	३–५–२
दायागत	पु०	उत्तराधिकार द्वारा प्राप्त ।	३–१३–२०
दायाद	पु०	पिता की सम्पत्ति का अधिकारी ।	
दार	पृ०	दरार ।	१३–४–९
दार कर्म	पु०	विवाह कर्म ।	१–५–१०
दास्य	पु०	राजा की सेविका, दासियां ।	१–२१–१३
दिवा	पु०	दिन ।	१०–४–२
दुकूल	पु०	अत्यन्त महीन रेशमी वस्त्र ।	२–११–१०२
दुरूपरोधिन	वि०	घेरा डालने में कठिन जिसको सरलता से जीता न जा सके ।	७–१०–३३
दुर्गः	पु०	दुर्ग कई प्रकार के होते हैं । स्थल, उदक, धान्वन, पार्वत्य, एवं वन दुर्गादि ।	७–१२–३
दुर्जय	पु०	एक प्रकार का व्यूह ।	१०–६–२२
दुर्दर्श	पु०	कार्यों का सरलता पूर्वक दर्शन या साक्षात्कार पाने में असमर्थ ।	१–१९–२७
दुर्भगा	स्त्री०	जिस स्त्री का पति उसे नहीं चाहता, अभागिन ।	१३–१–१६
दुर्भिक्ष	पु०	अकाल ।	८–४–१
दुर्योधन	सं०	धृत राष्ट्र एवं गान्धारी के १०० पुत्रों में सबसे ज्येष्ठ था ।	१–६–८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
दुहितृका	स्त्री०	गणिका कन्या जो अभी नियुक्त न की गयी हो।	२–२७–१७
दुहिलितिका	वि०	वाल युक्त।	२–११–८
दूतमुख	पु०	दूत मुख से राजा अपनी वात दूसरे राजा को सुनाता है।	१–१६–१३
दूतव्यञ्जना	वि०	दूत वना व्यक्ति, कैदी।	१०–६–४९
दूषण	पु०	धन क्षति, अर्थ की क्षति या जीविका मारना।	८–४–२४
दूषीविष	सं०	स्थावर, जंगम या क्रित्रिम अंश जो शरीर में विष को उत्पन्न कर देता है।	१४–१–२२, १४–४१
दूष्य संघ	पु०	राज द्रोही संघ।	११–१–४५
दूष्य व्यञ्जन	वि०	द्रोही या विश्वास घाती के रूप में।	९–५–१३, ९–५–१०
दूष्य	वि०	द्रोही, गर्हणीय, दण्डनीय दूषणीय, गद्दार।	१–११–१७, ३–१४–२७ ९–६–८, ५–१४
दृढ़कव्यूह	सं०	एक प्रकार का व्यूह।	१०–६–१०
दृष्टान्त	पु०	वास्तविक घटना का जीवन इतिवृत्त है।	२–१० ९
देवदारू	सं०	देवदार का पेड़।	१३–४-१८
देवपथ	पु०	अन्तरिक्ष, छायापथ आदि।	२–३–१३
देवसंयोग	पु०	देवता से सम्बन्ध।	१०–६–४८
देवरात्रि	स्त्री०	देव पूजा, रात्रि जागरण।	४–३–१५
देवल	पु०	कश्यप गोत्रीय एक ऋषि तथा स्मृति कार थे।	१३–३–२०
देवसरस्	सं०	जहां सर्वदा जल रहता है, प्राकृतिक किला।	२–२८–१
देवायतन	पु०	मन्दिर।	३–१०–१
देवीगृह	पु०	राज महिषी का निवास स्थान।	१–२०–१५
देश	पु०	प्रमाण, सामान्य साक्षी।	३–१–१५, १९, ३–९–१५, ३–१६–२९, ४–६–९
देशदैवत	सं०	देश के देवता।	१३–५–८
देश वन्ध	पु०	सीमा का निश्चय करना या मकान की नीव।	३–८–५
देश वाप	वि०	जहाँ की बुआई क्षेत्र के प्रकृति के अनुरूप होती है।	२–२४–५
देशिक	वि०	एक निर्देशक रूप से कार्य करने वाला मार्ग दर्शक।	७–७–१६
देशोपनत	वि०	उत्पादन लेकर जो सन्धि की जाती है।	७–३–३०
दैव विवाह	पु०	यज्ञ मध्य में स्थित ऋत्विज को जो कन्यादान किया जाता है उसे दैव विवाह कहते है।	३–२–५
दैव	सं०	देवता,।	१–९–९
दैव प्रमाण	वि०	भाग्य वादी या दैव पर निर्भर।	७–११–२६, ३४
दैव संयुक्त	वि०	दैवी आपदा या प्रकोप।	२–१०–४४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
दौरात्मिक	वि०	घातक, दुराचार से उत्पन्न दुः साध्य या मारक बिमारी।	५-१-३५
दौर्ग कर्मिक	वि०	दुर्ग की रक्षा करने में उपयोगी।	२-१८-१
दौवारिक	पु०	द्वारपाल, द्वार रक्षक।	१-१२-६-५-३-५-५-६-५
दौहृद	स०	अभिलाषा का होना।	२-२४-२४
दृति	स्त्री०	मशक।	१०-२-१४
द्यूत	पु०	अक्षादि क्रीडा, जूआ।	३-२०-१
द्रव	पु०	तैलादि।	३-७-३१
द्रवन्ती	सं०	जमालगोटा।	१४-४-८
द्रवाम्ल	स०	दधि, धान्याम्ल, तक्र, खट्टा तरल पदार्थ खट्टी चीजे आदि।	
द्रव्य	पु०	तैलादि।	१-१७-३१
द्रव्यवन कर्म	पु०	बन सम्पत्ति।	७-१-२०
द्रव्य प्रकृति	स्त्री०	वस्तु-सामग्री।	५-४-१, २, ६-८२८, -९-७-४१, २-५१५-१-३०
द्रव्यव्यपनय	पु०	किसी लेन देन को निरर्थी कृत करना।	३-१-५
द्रूण	पु०	लकड़ी का बना।	२-१८-८
द्रोण मुख	सं०	चार सौ गावों के समूह पर एक राजकीय चौकी।	२-१-४, २-४-४ ३-१-१,
द्वन्द	पु०	सुख दुःख द्वन्द्वो के कारण विचलित भाव।	५-५-६
द्वन्दिन	वि०	परस्पर कलह, विवाद या युद्ध करने वाला।	१-१३-२
द्वादशान्तर	वि०	बारह बीता लम्बा।	२-३३-३
द्वार	पु०	दरवाजे पर या बाहर।	३-३-११
द्वा स्थ	पु०	द्वार पाल।	१-१२-१३
द्विज	पु०	अण्डज, पक्षी, मोर, गरुण ब्राह्मण, क्षत्रिय।	१-३-८
द्विपट वान	पु०	दो सुत्ती या दो सूत से बीना।	४-१-१२
द्विप	सं०	हाथी।	१०-५-११
द्विपान	स०	हाथी।	१०-४-१
द्वीपि	स०	चीता।	१४-२-४३
द्वैपायन	पु०	कौरव पान्डव के पितामह वेद व्यास।	१-६-१०
द्वेष	पु०	घृघृ, अरुचि, अनिच्छा जुगुप्सादि।	३-३-१६
द्वैधी भाव	पु०	सन्धि एवं विग्रह का एक साथ प्रयोग।	७-१-११
द्वैधी भाविक	वि०	एक राजा के साथ सन्धि दूसरे के साथ मित्रता रखने वाला।	७-१८-२९
द्वैधीभूत	वि०	अपने शत्रु के साथ सन्धि करना ताकि दूसरे राजा पर आक्रमण किया जा सके।	३-१९, ७-७-३
द्वै राज्य	स०	दोराजाओं का संयुक्त राज्य।	८-२-५, ७
द्यूत	पु०	जूआ।	८-३-३६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
		ध	
धनिक	पु०	उत्तम वर्ण या लेनदार या ऋणदाता ।	३-११-३
धन्विनी	वि०	धनुष को धारण करने वाली स्त्रियाँ ।	१-२१-१
धनु	नपु०	चार हाथ लम्बा ।	१४-१-३१
धरक	पु०	तौलने वाला या तराजू उठाने वाला ।	२-१५-६३, ४-२-२०
धरण	पु०	तोला या दसपल या सोलह माषा की रजत मुद्रा ।	२-१५-४७, २-१९-२०
धर्म	पु०	विधि के अनुसार निर्णय, धर्मशास्त्र ।	३-१-३९, ४०, ३-१-३८, ४३, ४४, ४५
धर्म वध	पु०	धर्म का नाश या पवित्र कर्तव्य का अतिक्रमण ।	३-४-३६
धर्म विजयी	पु०	दुर्बल राजा पर आक्रमण कर आत्म सम्मान कराने पर प्रसन्न होने वाला राजा ।	१२-१-११
धर्म विवाह	पु०	ब्राह्म, प्राजापत्य, आर्ष एवं दैव विवाह	३-३-१९, ३-४-३१
धर्मसेतु	पु०	धार्मिक या सार्वजनिक जल कार्य ।	३-१०-२
धर्मस्थ	पु०	न्यायाधीश ।	३-१-१
धर्मस्थीय	वि०	न्यायालय ।	१-१०-१३, २-५-५, ४-९-२१
धर्मावसथिन	पु०	धर्मार्थशालाओं के अधिकृत पुरुष ।	२-३६-५
धर्मोपधा	स्त्री०	धर्म विषयक कथा ।	१-१०-४
धान्यकान्त	वि०	धान्यादि अन्न की उपज के लिए उपयोगी ।	७-११-६
धान्य	पु०	अनाज ।	१४-२-८
धान्यवाप	वि०	धान्य या अन्न या अनाज बोना ।	७-११-५
धान्याम्ल	सं०	चावल या भात के पानी या माड़ के खमीर या जोश से बनी काँजी ।	२-१५-१९
धामार्गव	पु०	चिचिड़ा या पोशातकी ।	१४-१-६
धारयिष्णु	वि०	स्मरण शक्ति सम्पन्न ।	१-९-१, १-९-३
धारक	वि०	तौलने वाला या तराजू आदि उठाने वाला ।	२-१५-६३
धारण	पु०	सुनी बात को स्मरण रखना ।	६-१-४
धारणिक	पु०	अधमर्ण या ऋण लेने वाला ।	३-११-३
धारा	स्त्री०	घोड़े की गति या चाल ।	२-३०-४१
धात्री	स्त्री०	दाई ।	२-९-६३
धृ	वि०	धारण करने वाला ।	३-५-११
धृक	वि०	रहना । भाषा आख्यान में तौल अर्थ किया गया है ।	२-१३-३५
धृतिः	स्त्री०	विराम का स्थिति, इच्छा ।	१-१०-१९

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
धेनुका	स्त्री०	दूध पिलाने वाली हथिनी ।	२-३१-१०
घोरणा	वि०	विविध चालों से दौड़ना ।	२-३०-३१, ३२
ध्याम	वि०	घास ।	१-२१-७
ध्रुव	वि०	स्थिर ।	७-९-४२
ध्वज	पु०	चुंगी का चिह्न या सीमा, झण्डा, पताका, बैजयन्ती ।	१-१७-१८ २-२१-१
ध्वजदल	नपुं०	झण्डे का डण्डा ।	१४-४-१३
ध्वजमूल	सं०	कस्टम हाउस ।	२-२१-७
ध्वजाहृत	पु०	युद्ध का कैदी ।	३-१३-१९
ध्वस्त	वि०	गया हुआ ।	७-९-४९
		न	
नगर	पु०	राजधानी ।	१३-४-३२
नक्र	पु०	घड़ियाल, मगर, ग्राह ।	९-१-२९
नकुल	पु०	नेवला ।	१३-४-१६, १४-३-७७, ७८ १४-४-३
नक्तमाल	पु०	करंजुआ ।	१४-४-६
नदीपथ	पु०	नदी मार्ग ।	२-१६-२५
नरक	पु०	एक दानव था, कश्यप तथा दनु का पुत्र था ।	१४-३-१९, ४३
नर्तक	पु०	नाचने वाला ।	१९-१-९
नतृ	पु०	तीतर ।	१४-३-१
नल	पु०	नरसल या वेंत ।	८-३-४३
नलदीपिका	स्त्री०	नर या वेग ।	१४-२-३०
नदीदुर्ग	पु०	नदी दुर्ग युक्त ।	७-१०-२८
नदीपथ	पु०	नदी मार्ग से व्यापार ।	२-१६-२५, ७-१२-२१
नदीपाल	वि०	घाट रक्षक ।	२-६-३
नदीमातृक	वि०	जो नदी-जल से सींची जाय ।	७-११-६, ७
नय	पु०	निर्देशन, मार्गदर्शन, व्यवहार, नित्यचर्या, आचरण, राज्य की नीति आदि होता है ।	१-२-११, ६-१-१८, ६-७-६, ११
नमंय	पु०	मनोरंजन करें, विनोद विलास ।	१-२१-१६, ४-१-६१
नलिका	स्त्री०	चालीस कला की एक नालिका होती है ।	२-२०-३४, ३५, १-७-८
नव शराव	नपुं०	नवीन मृत्पात्र ।	१०-३-३१
नवबुद्धि	वि०	अपरिपक्व बुद्धि से तात्पर्य है ।	१-१७-३२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
नस्तस्	अ०	नाक में लगाना।	१३-१-३
नस्तःकर्म	सं०	नाक से प्रयोग करें।	१४-४-५, ८
नस्य	सं०	नाथ में पगहा लगाना या नथे हुए बैल।	२-२९-३४, २-२९-४३
नस्यकर्मन्	सं०	नासिका सेचन या नासिका में तेल देना।	२-३०-१९
नागकन्या	स्त्री०	नाग एक प्राचीन जाति थी।	१३-१-६
नागवन	स्त्री०	हाथी का वन।	२-२-१०
नागरक	पु०	साहसी, वीर, बहादुर, नगर रक्षक।	७-१७-४५
नागराज	पु०	प्राचीन समय में क्षत्रियों की एक जाति थी।	१३-२-१६
नागरायण	सं०	नगर, दुर्ग, परिघ, अट्टालक आदि को ध्वस्त करने में शिक्षित होना।	२-३२-४
नागरिक	पु०	नगर का प्रबन्धक, नगर का रक्षक।	२-३६-१
नागोदरिका	स्त्री०	उरस्त्राण, उंगलियों का कवच भी अर्थ किया गया है।	२-१८-१७
नादेय	वि०	नदीचर या नदी के समीप रहने वाले व्यक्ति।	२-२६-५, २-२-७, १०-४-२
नान्दी	स्त्री०	स्वस्तिक नामक विशेष चिह्न।	२-१९-१६
नाभाग	स्त्री०	इक्ष्वाकुवंश में अयोध्या के राजा, अम्बरीष के पिता।	१-६-१२
नाम	पु०	वाचक या नाम।	२-१०-१६
नायक	पु०	युद्ध सेना का कमाण्डर एक सहस्र युनिट का अधिकारी।	१०-६-४५
नारक	पु०	बछड़ा।	१४-२-४१
नारद	पु०	वृहस्पति का शिष्य, ब्रह्मा का मानस पुत्र।	१४-३-२०
नारोष्ट्र	वि०	संकेत से चलने वाला अश्व।	२-३०-३२, ३८, २-३२-७
नालीन	पु०	धान्य काण्ड, ध्वनि नलिका कमल का दण्ड।	१३-२-२१
नालिका	स्त्री०	जल घटिका या चालीस कला की एक नालिका या नाड़िका होती है।	१-७-८, २-२०-३४, ३५
नाली	स्त्री०	नली या नल।	२-१४-२३, १३-२-२१
नावध्यक्ष	पु०	नावों का अध्यक्ष।	२-२८-१
नाष्टिक	पु०	खोई वस्तु वाला।	३-१६-१७, ४-६-९
निकाय	पु०	समूह, संघटन, संघ, एक हाल या कमरा, विदेश से आये व्यापारी भी अर्थ किया गया है।	२-४-१६
निकुम्भ	पु०	प्रह्लाद का पुत्र था, एक निकुम्भ का और वर्णन मिलता है जो कंस के द्वारा मारा गया था।	१४-३-४३, १४-३-१९

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
निक्षिप	वि०	रखा हुआ, फेंका हुआ, डाला हुआ, कर्ज जुर्म लगाया हुआ।	२-८-३२
निक्षेप	पु०	फेंकना, रखना, अमानत, धरोहर रखना, मरम्मत या सफाई करने के लिए किसी कारीगर को कोई वस्तु देना।	४-३-१७, ५-२-४७, ५५, २-१४-५, ३-१२-३३, ४-१-२, २-१८-४
निगल	पु०	सिक्कड़, जंजीर श्रृंखला।	१४-२-३१
निग्रह	पु०	मृत्यु, प्राण दण्ड।	९-३-१४
निग्रहेण	वि०	अनिवार्य, वाध्यतामूलक, आवश्यक।	३-१०-३८
नित्य	वि०	निरन्तर, चिरस्थायी, शाश्वत।	७-९-९, ४१
निचय	पु०	संग्रह, समुच्चय, ढेर, स्टोर।	७-१५-१०
निदर्शन	पु०	उदाहरण, स्पष्टीकरण।	१५-१-४७
निधान	सं०	रहने का स्थान।	१४-१-३, १२-४-२८
निन्दु	स्त्री०	मृत सन्तान जन्म देने वाली।	२-२-३८,४१
निपात	पु०	वे शब्द जिनका और रूप न बने। यथा—च, वा, ह अव्यय।	२-१०-१९
निबद्ध	वि०	लिखित।	१-२०-२३, २-८-१८
निबन्ध	हे०	निबद्ध करना या एकत्रित करना।	२-२७-१०, २-३५-१
निबन्ध	पु०	गणना पुस्तक।	२-२५-३
निबन्धक	पु०	अभिलेखक, मुनीम, हिसाब लिखनेवाला।	२-७-३१
निबन्धन	सं०	शर्त का बन्धन।	७-६-२०
निबन्धपुस्तक	सं०	बहीखाता, आय-व्यय का रजिस्टर।	२-७-१-२
निबन्धन	सं०	शर्त का बन्धन।	७-६-२०
निन्दा	स्त्री०	छिद्रान्वेषण, भला-बुरा कहना, दोष देखना, दिखावटी कारण, बहाना।	२-१०-२३
निमित्त	सं०	कारण, चिह्न, लक्षण, लक्ष्य, उद्देश्य, फल, शकुन।	१-९-९, १-१२-१, १३-१-९
निम्न	सं०	गम्भीर या न्यून स्तर, तराई का स्थान।	२-३-१, २-३३-८, ९-१-२७
नियम	पु०	बँध जाने की सम्भावना, नियन्त्रण, रोकना।	१-१६-३२, २-१-३१, २-१-४२
नियन्त्रणा	पु०	बन्धन में पड़ जाना।	१०-१८-४०
नियामक	पु०	पोतवह या नौकाचालक या नौका सम्बन्धी नियमों का पालन करने वाला।	२-२८-१३
नियोग	पु०	नियुक्त करने की क्रिया।	१५-१-६३
नियोगसम्पद्	स्त्री०	अधिकार वर्ग की गुण-वृद्धि एवं संख्या वृद्धि।	१-१५-५२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
निरन्तरयोगि	पु०	तुरन्त सम्बन्धित ।	९-७-५५
निरन्वय	वि०	मालिक की अनुपस्थिति जिसका सामान ले लिया गया हो ।	३-१७-२
निरस्यत	पु०	बेदखल किया हुआ ।	३-१०-१८
निरुत्खातिनी	वि०	उन्नतावनत भूमि ।	१०-४-३,१०
निरुदकस्तम्ब	बि०	बिना जल या बिना खाईं से घिरा दुर्ग ।	२-३-१
निर्घात	पु०	दोष का निराकरण करने से तात्पर्य है ।	५-५-१५
निर्णपन	पु०	निर्यात, बाहर ले जाना ।	७-१४-२४
निर्दिष्ट	वि०	निश्चित या निर्धारित समय पर ।	३-३-३,४, ७-४-१९,२१
निरुद्ध	वि०	प्रवेश रहित स्थान ।	१२-५-४८, १३-२-१९
निर्वचन	वि०	किसी शब्द को सिद्ध करना ।	१५-१-४५
निविष्ट	वि०	उपभुक्त, अवाप्त दिया हुआ, निश्चल या व्यवस्थित या जिसका पुनर्विवाह हो गया हो ।	३-२-२३, ७-४-२०
निर्देश	पु०	उल्लेख, संकेत ।	२-७-२
निर्घात	पु०	सफाई से तात्पर्य है ।	५-५-१५
निवेश	पु०	द्वितीय बार पतिग्रहण या दूसरी बार विवाह या पुनर्विवाह ।	३-२-२१,२२,१०-३-१
निर्भोग	पु०	टेढ़ा करना ।	५-४-१०
निर्या	स्त्री०	भेजने या परिचालित करने से तात्पर्य है ।	४-१-४८
निर्यूह	पु०	क्वाथ ।	२-२५-२८
निर्वह	हे०	निर्यात करना ।	२-२१-२०,३०
निर्वहण	सं०	निर्णय ।	२-१६-१९
निर्वाद	पु०	निन्दनीय आचरण ।	१४-३-४५
निर्विभज्	क्रि०	उत्तराधिकार से वंचित करना ।	३-५-१७
निर्विश	वि०	भाड़े पर उठाना ।	७-४-२१
निर्वेश	पु०	मजदूरी, वेतन लाभ ।	४-६-२
निशाचर	वि०	रात्रि में चलने वाले ।	१४-३=१, ८-३-११
निशान्त	पु०	राजभवन ।	४-३-४
निश्वाभय	पु०	अकार्यक्षम, अकिञ्चितकर ।	११-१-१३
निश्चार	षु०	सेना का निकालना ।	१०-२-१८
निषधा	स्त्री०	मकान या रहने का स्थान ।	२-४-१०
निषिच्	क्रि०	डालना ।	२-१३-८,९
निषेक	पु०	भावित ।	२-१२-१०
निष्कस्	पु०	छोड़ना या बाहर जाना ।	२-१३-२२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
निष्कसन	सं०	बाहर जाता हुआ, निकास।	३–३–२४, ४–६–१६,१८
निष्कास	पु०	निकास।	२–२–७
निष्किर	सं०	बाहर जाने का दरवाजा।	२–३–१४, १३–४–१२
निष्कुट	पु०	घर से सम्बन्धित बगीचा।	४–६–२
निष्क्रय	पु०	मुक्ति मूल्य या हर्जाना।	२–२७–६, ३–१२–१२, ३–१३–५, १०, ४, १२, ३७, ४०, ७–१६–२३, २७, २–३६–४५, ४–१०, ४–४–२३
निर्हारिन	वि०	फैलाना, दूर तक फैलाना।	२–११–६०
निर्हार	पु०	कोष के रुपये से धान्य को खरीदना।	२–१५–४
निविष्ट	वि०	स्थापित, दूसरी बार विवाहिता।	३–२–२३
निष्क्राम्य	सं०	निर्यात शुल्क।	२–२२–२
निष्क्रान्त	वि०	निष्क्रमण, निकलते हुए।	१३–४–२७
निष्ठ्यत	वि०	फैला हुआ।	२–१२–३
निष्पत्	क्रि०	भाग जाना।	३–१–३२, २–२७–१४, ४–९–२२, २७ ९–६–३५, १३–३–१, ११, ७–५–१७
निष्पतन	क्रि०	भागते हुए।	३–४–१६, ७–५–३०, ३–१२–४
निष्पतित	वि०	भगोड़ा।	२–२७–२, ३–४–१, ३–१–३, ६, ८
निष्पत्ति	स्त्री०	उत्पत्ति या नुकसान के अनुसार।	३–१०–२५, ३–११–४, २–८–३२
निष्पाक	पु०	पूर्ण।	३–१४–१४
निष्पात	पु०	भागना।	३–१–३३, ४७
निष्पातन	सं०	भाग जाना, झटपट बाहर निकल जाना।	३–१२–७
निसर्ग	पु०	समर्पण।	७–४–१०, ७–१५–२१
निसृष्ट	वि०	अधिकृत किया हुआ।	९–६–२७
निसृष्टार्थ	वि०	सौंपा गया कार्य।	१–१६–२
निसृष्टव्यवहार	वि०	कार्य करने के लिए अधिकृत।	३–१–१२
निसृष्टि	स्त्री०	अनुज्ञात या अनुमत।	२–१०–३८, ४३
निस्तब्ध	वि०	पंगु या बन्द किया हुआ।	४–७–५
निस्तल	वि०	तलरहित।	२–११–५
निस्तृ	हे०	बचाना या देना।	४–१२–३६,३८
निहार	वि०	कुहरा।	१३–४–२६
नीचैर्गत	वि०	गति में बिना विकार आये घूमना।	२–३०–३२,३४
नीचैःरुप	नपुं०	नीच पुरुषों द्वारा प्रोत्साहित होने वाला।	१–१४–५
नीतिविद्	पु०	राजनीति विज्ञानविद्।	१–८–२२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
नीध्र	सं०	ओलती।	४–६–१६
नीध्रान्तर	सं०	दो ओलतियों के बीच का स्थान	३–८–१४
नीराजन	सं०	अश्व की आरती।	२–३०–४६,५१, २–३२–२१, ४–३–१६
नीवी	स्त्री०	बचत।	[illegible]–६–१३,२७, २–७–३,३३, १४–१–१४, १४–४–२
नेजनोदक	सं०	धोने के लिए पानी।	६–२–३९,४०, ७–५–४९
नेतृ	पु०	नेता।	७–१२–२९
नेत्र	सं०	नेतृत्व।	७–१३–३७
नेत्रमोहन	वि०	दर्शन शक्ति मूढ होना।	१४–१–३८
नैपाल	सं०	नैपाल-राज्य।	१–१३–२३
नैमित्तिक	वि०	ज्योतिषी-भविष्यवक्ता।	१–१३–२३
नैवेशनिक	सं०	ब्याह का खर्च।	३–५–२१
नैसृष्टिक	वि०	अविकृत करना।	२–१०–४३
न्यङ्ग	वि०	पंगु, विकलांग।	२–२३–२,११, २–२९–६, २–३०–२, ३–१–१२, ३–३–६, ११–१–६
न्यस्त	वि०	रखा हुआ, धरा हुआ, छोड़ा हुआ।	११–१–३१
न्याय	पु०	राजाज्ञा।	४–१–४३,४५
न्यायवृत्ति	पु०	न्यायानुसार, न्यायानुकूल।	७–२–२३, ७–१५–२४
		प	
पंचकुली	स्त्री०	पाँच कुल का कुटुम्ब।	११–१–१७
पंचकुष्ठ	सं०	कुट एक प्रकार का विष। पंचकुष्ठ में कुट के पत्ते, फल, छाल, फूल एवं जड़ आते हैं।	१४–१–४, १४–१–१४
पंचनद	पु०	पंजाब। सतलज, व्यास, रावी, चिनाब एवं झेलम द्वारा सिंचित भूमि।	२–२–१६
पक्ष	पु०	सेना का दायाँ-बाँया भाग या विंग।	१०–५–८,१७, १०–६–१ १५–१–४२
पक्षान्तर	सं०	पीठ पर या दोनों बगल के बीच।	३–३–२८
पक्ष्मन्	सं०	बाल।	१–२१–७
पंचग्राम	पु०	पाँच गाँवों के समूह से तात्पर्य है।	१४–१३–१२
पंचघटी	स्त्री०	पाँच घड़ों का समूह।	२–३६–१८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
पंचबन्ध	वि०	एक बटे पाँच ।	२-७-३८, २-८-११, ३-१-२०, ३-११-३३, ३-११-६, ३-१३-३४, ३-१६-१८
पंच संस्था	स्त्री०	कापटिक, उदास्थित, गृहपतिक, वैदेहक एवं सत्री पाँच प्रकार के गुप्तचर अथवा गूढ़ पुरुष की समवेत संज्ञा ।	१-११-२२
पञ्चाशतक	वि०	पचास वर्षीय ।	१-२०-११
पटल	सं०	सूखे हुए जंगली गोबर ।	२-१३-७, २-१४-३१, १३-२-२५, २११४-२८,४०
पण	पु०	प्रतिज्ञाबद्ध करना ।	५-४१७, ७-७-७
पण	पु०	एक प्रकार का चाँदी का सिक्का, हाथों की अगुलियाँ ।	२-१२-२४, २-१४-१४, ४-१०-१, २-३०-१, ७-१६-१
पणभाव	पु०	प्रतिज्ञा का भाव ।	७-७-३१
पणित	पु०	शर्त के साथ सन्धि ।	७-७-८
पणकर्मण	पु०	शपथ आदि के द्वारा सिद्ध करना ।	१-१४-११
पणन	सं०	विनिमय, व्यापार ।	२-१२-२७
पणबन्ध	पु०	निश्चित शर्तों के साथ सन्धि को औपचारिक रूप देना ।	७-१-६
पणयात्रा	स्त्री०	मुद्रा का प्रसार ।	२-१२-२५, ४-१-४४,४५
पण्डक	पु०	हिजड़ा, नपुंसक ।	१-१२-२१
पण्य	वि०	भोग्य वस्तु, विक्रय वस्तु ।	१-१७-४२, ७-६-३६, ८-४-३४, ९-३-२७
पण्यगृह	नपुं०	व्यापारिक सामान रखने का स्थान ।	२-४-१४
पण्यपत्तन	सं०	पत्तन शब्द बन्दरगाह हेतु विशेष तौर से प्रयुक्त होता है । प्राचीन काल में नगर के लिए नेपाल, कश्मीर और गुजरात में प्रयुक्त होता था ।	२-१-१९, २-१६-२४, २-१८-७,१०,१२, ७-१२-२१, ७-१६-१०
पण्यपुट	सं०	सामान का बण्डल ।	२-२१-२०
पण्यपुट	सं०	बाजार जहाँ चारों ओर से विक्रयार्थ सामान आता है ।	२-३-३
पण्यसंस्था	स्त्री०	बाजार का स्थान ।	४-२-७, ४-७-१७, ७-१८-४६

शब्द	व्याकरण	अर्थं	सं०
पण्यागार	सं०	मालगोदाम ।	२-३५-१२; ७-१५-२०, ८-४-२३, २४, ९-६-२८, २९
पण्यागारिक	बि०	भेंट में प्राप्त ।	२-३०-१
पण्याध्यक्ष	पु०	व्यापार का निरीक्षक ।	४-२-१
पण्याधिष्ठातृ	पु०	सरकारी माल को बेचने वाला एज़ेन्ट ।	२-१६-१४
पताका	स्त्री०	छोटा झण्डा ।	१०-६-४६, १४-४-१३
पतंग	पु०	पारस पीपल, शाली भी अर्थ होता है । इसका उल्लेख सुश्रुत संहिता तथा ष्टाङ्ग हृदय में मिलता है ।	१४-२-६
पतिक	पु०	अधीनस्थ सैनिक अधिकारी, लेफ्टीनेण्ट ।	१०-६-४५
पत्तन	सं०	बन्दरगाह ।	२-६-३, २-२८-४
पत्तनपति	पु०	बन्दरगाह का अध्यक्ष ।	
पत्तिव्यूह	पु०	पैदल सेना का व्यूह ।	१०-५-३६
पत्तियुद्ध	नपुं०	पैदल सेना का युद्ध ।	१०-५-५६
पत्तनाध्यक्ष	पु०	बन्दरगाह का कमीश्नर ।	२-२८-७
पत्र	सं०	यान, वाहन या सवारी में प्रयुक्त पशु ।	२-३०-४८, १-१९-१३
पत्रक	सं०	चँगेरी, टोकरी ।	२-१५-६२
पत्रसम्प्रेषण	सं०	पत्र का अर्थ वाहन का पशु होता है ।	१-१९-१३
पत्रोर्ण	स्त्री०	एक प्रकार का सिल्क ।	२-११-१०७, ४-१-२०
पथिप्रमाण	पु०	मार्ग की चौड़ाई, विस्तार अथवा आकार आदि ।	३-१०-४
पथिक	पु०	मार्ग पर चलने वाला गुप्तचर ।	२-२१-१७, २-३६-१३
पथिकार्थं	वि०	यात्री, पर्यटक, या दूत के लिए ।	२-१०-४६
पथ्यदन	सं०	मार्ग के भोजनादि का खर्च ।	२-१६-२४, ४-५-१६, ७-१७-५९
पथ्यनुसरण	सं०	मार्ग में (पुरुष के साथ) जाना या अनुसरण करना ।	३-४-२१-२२
पद	पु०	भार नापने हेतु चिह्न अंकित कराना ।	२-१९-१४, १८, २५
पद्या	स्त्री०	पदचिह्न ।	२-२-१०
परकूड्य	वि०	दूसरे की दीवाल ।	३-८-२२
परमिश्रा	वि०	शत्रुमिश्रित ।	९-६-११-७३, ७-१४-२८, ९-७-२८
पद्मराग	पु०	रक्त कमल के समान रंग वाली ।	२-११-२९
पतिक	पु०	अधीनस्थ सैनिक अधिकारी ।	१०-६-४५
पदातिकर्म	नपुं०	पैदल सेना का कार्य ।	१०-४-१६
परमाकाश	पु०	अन्तिम आकाश या उच्चतम आकाश ।	१४-३-६०
परवक्तव्य	वि०	दूसरों से प्रण किया हुआ ।	३-२०-१५
परत्र	सं०	परलोक में या भावी जन्म में ।	७-१७-२
पराध्यं	वि०	अति उत्तम ।	४-४-२२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
परानीकवध	पु०	शत्रु या दूसरे की सेना ।	७–११–१६
पराबाध	पु०	परहिंसा ।	१–२१–२३
परावाप	पु०	शत्रु का निवेश ।	१०–५–२१
परशु	पु०	लौह निर्मित २४ अंगुल वाला शस्त्र या फरसा ।	२– ८–१४
परावग्रह	पु०	दूसरे का निग्रह या नियंत्रण करना ।	७–१७–९
पराशर	सं०	वृद्ध ऋषि के पुत्र ।	१–८–७
परिकुट्टन	नपुं०	कूटना ।	२–१०–४४
परिक्रय	पु०	क्रीत या क्रय की गयी सन्धि, जो धन आदि देकर की जाती है ।	७–३–२७
परिक्षिप्त	वि०	चारों ओर से घिरी हुई ।	८–४–१
परिक्षीण	वि०	खिन्न, नष्ट, शक्तिहीन ।	१–१४–४
परिक्षेप	पु०	खम्भे की मोटाई ।	२–३–१८, २–३०–१९, १०–१–५, २–३२–१२
परिखा	पु०	नगर या दुर्ग के चारों तरफ खोदी गयी खाईं ।	१–२–१
परिगृहीत	वि०	घेरा हुआ ।	३–१०–३१, ४–९–२४
परिग्रह्	पु०	स्टोर ।	१–२१–१, ३–११–३४, ७–५–१८
परिग्रह	पु०	घेरा हुआ या रक्षित ।	२–६–६, २–२६–१, १२–२–३३, २–३६–२३, २८, ३७, ३–९–१, १३–३–१७, ५–६–४६ ४–८–१९, १३–१–२१, २–६–११
परिघ	पु०	एकाधिकार कर या जिस माल का रक्षक कोई नहीं है ।	२–६–१०, ३–१२–३५
परिणम्	पु०	घूमना ।	७–१८–२७
पणिहित	वि०	रखा हुआ ।	१२–५–४, ९–३–३
परिदूषण	पु०	परिदूषणन्धि, कुछ अतिरिक्त धन देकर अपनी भूमि वापस लेना, या भूमि का उत्पादन पूर्णतया समर्पण कर देना ।	७–३–३४
परिपणित	वि०	शर्तयुक्त सन्धि ।	७–६–४
परिबन्ध	पु०	परिचारक गण, कण्टकशोधन के लिए नियुक्त अधिकारी या दण्डाधिकारी ।	५–३–८
परिमाणित	वि०	तुला विशेष । परिमाणी तुला संवृतातुला से दुगुना अर्थात् ७ पल लौह निर्मित तथा ९६ अंगुल लम्बी तुला होती है ।	२–१९–१७
पृच्छा	पु०	पूछने की इच्छा ।	२–१०–२७
परिभर्त्स	पु०	भय दिखाना ।	५–१–१२
परिभव	नपुं०	अपमान, तिरस्कार, निरादर ।	७–१६–२२, ८–७–१६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
परिभाण्ड	सं०	धातु पर परिवेष्टित करना ।	२-१३-४३, २-१४-३७
परिभाषण	पु०	उपालम्भ ।	२-५-१९, ४-११-९
परिभूत	वि०	अनादृत ।	८-३-१७
परिपतन्तक	पु०	एक प्रकार का व्यूह ।	१०-६-२८
परिमितार्थ	वि०	सीमित उद्देश्य युक्त ।	१-१६-३
परिमृदित	वि०	अच्छी तरह कसौटी पर कसा हुआ या घिसा हुआ ।	२-१३-१८
परिलीढ़	वि०	हल्की तरह से रगड़ा हुआ ।	२-१३-१८
परिवर्तक	पु०	धान आदि का अन्य अनाजों से विनिमय । अंग्रेजी 'बार्टर' शब्द में भाव आ जाता है ।	२-१५-१, ५
परिवस्	क्रि०	रात्रि में ठहरना या किसी स्थान पर रुकना ।	३-१०-२३, ४-८-८
परिवान	पु०	व्यक्तिगत सामान ।	३-६-६, ८, ५-६-४४, ३-६-६, १-१५-५, २-२४-२८, ३-३-३
परिवार्य	सं०	घेरा या प्राकार, घर की चहारदीवारी या बाड़ा ।	४-१३-६
परिव्राजक	सं०, पु०	संन्यासी ।	१-४-१२
परिमिता	पु०	निश्चित, स्वल्प ।	१-१६-३
परिवाह	पु०	जलानयन प्रणाली या पानी भरा क्षेत्र ।	३-९-२७, २-३-४
परिवेली	वि०	अधिक हिलने-डुलने वाली तुला ।	२-१४-१९
परिशून	वि०	फूला हुआ ।	२-२६-१२
परिश्रान्त	वि०	थकी हुई ।	८-५-५
परिस्तोम	पु०	गलीचा ।	२-११-९८
परिसृप्त	वि०	परित्यक्त ।	८-५-८
परिहार	पु०	कर मुक्ति ।	२-१-१५, २-७-२, २-१६-१२, २-३५-३, ३-९-३३, १३-४-३, १३-४-४, १०, १५-१-२८
परिहारक	वि०	कर से मुक्त किया हुआ ।	२-३५-१
परिहृ	वि०	कर मुक्त करना ।	२-१-३६
परिहारलेख	पु०	कर मुक्ति शासन या आज्ञा ।	२-१०-३८, ४२
परेषु	पु०	शत्रुओं में ।	१-१६-१९
परोक्त	वि०	बिना विचार किये दूसरों के कहने पर जिसे दंडित किया गया हो या प्रकरणशास्त्र ।	१-१४-२, २-८-२६, ३-१-१९, ३-७-१७
परोक्ष	वि०	अगोचर, दृष्टि से परे ।	१-१५-१९
पर्यग्र	सं०	संख्या का योग ।	२-२९-१, ११, २-३०-१
पर्यवस्था	स्त्री०	विरोध, या विरोध में कही गयी बात, या प्रतिपक्षवाद ।	८-२-११

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
पर्यस्	क्रि०	घोलकर या मिश्रित कर ।	१-२०-१६
पर्यात्त	वि०	अपहृत, लिया हुआ ।	१-१४-३
पर्यादा	स्त्री०	सब सम्पत्ति जब्त करने से तात्पर्य है ।	२-९-२४, ५-२-५४, ५८
पर्युपासन	नपुं०	घेरा डालना ।	१३-४-१, २५
पर्युषित	वि०	अतीत वर्ष का प्राप्तव्य जो वर्तमान में प्राप्त हुआ हो, अथवा शत्रुदेश से प्राप्त आय 'पर्युषित आय' है ।	२-६-१७, १९, २-१५-११, ३-१९-१७, २-२९-१०
पर्येषे	क्रि०	आकांक्षा करना या खोजना ।	७-१-३८
पर्येषण	क्रि०	जाँचना या अन्वेषण करना ।	७-६-११
पलाल	पु०	पुआल ।	१४-१-९, १४-१-१३
पलाश	पु०	ढाक ।	१४-१-१४
पर्वतदुर्ग	पु०	पहाड़ी किला ।	७-१०-३१
पश्चात्कोष		पार्ष्णिग्राहादि द्वारा किये जाने वाले अनिष्ट ।	९-१-१, ९-७-६
पश्चात्कृत	वि०	अस्वीकार करना या भार्या का परित्याग करना ।	४-१२-१६
पश्चाह्न	पु०	मध्याह्नान्तर, दोपहर के बाद ।	२-३१-६
पांसुधावक	पु०	धूल साफ करने वाला ।	२-१३-३३, ४-१-४१
पाक	पु०	पका बाल, केश की श्वेतता ।	१४-४-७
पक्वमांसिक	पु०	पका मांस बेचने वाला ।	२-३६-८, १४, १२-४-८
पांचाल	पु०	कन्नोज के समीप का क्षेत्र, अर्थात् बरेली, बदायूँ आदि का क्षेत्र ।	११-१-५
पात्र	सं०	उचित स्थान से तात्पर्य है ।	७-१६-२७
पात्रचय	पु०	योग्य व्यक्ति को उपहार ।	१०-३-३०
पाटली	स्त्री०	एक विशिष्ट वनस्पति, या गोलिह अमोघ ।	१४-४-२
पाठ्य	वि०	गीत गाना ।	१-१२-१३
पाद	पु०	पैदल सैनिक या पैदल सेना ।	७-३-३
पादगोप	पु०	पैदल रक्षक ।	१०-५-११
पादपथ	पु०	पैदल मार्ग या पगडंडी ।	७-१२-२७
पादपाशिक	पु०	हाथी के पैरों में पाश वन्धन में कुशल व्यक्ति ।	२-२-१०
पादयुद्ध	नपुं०	पैदल युद्ध ।	७-३-३
पाद्य	वि०	एक चौथाई ।	१२-४-५
पापकर्मा	पु०	जिसका पाप कर्म निन्दार्थ विख्यात कर दिया गया हो ।	१-१४-३
पापीयस्	वि०	निम्न या हीन वर्ण ।	३-४-१८
पायनार्थी	वि०	दुधारू गाय ।	२-२९-४५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
पापराग	वि०	कुष्ठादि घृणा, पाप रोग से ग्रस्त जैसे-शीतला, चेचक।	८-२-१९
पारग्रामिक	वि०	शत्रुनगर को जीतने योग्य कपटोपाय, जिससे शत्रुनगर पर अधिकार किया जा सके।	१-१८-१०, ९-३-१८-५-१-३
पारञ्चिक	सं०	संधियों को अलगाना या तोड़ना।	३-१९-१३
पारतल्पिक	पु०	परस्त्रीगामी।	४-५-१
यातव्य	वि०	राजा जिसकी विरुद्ध अभियान करना आवश्यक होता है।	६-२-१६
पारशम	पु०	खच्चर।	२-३०-२३
पारसमुद्रकं	वि०	समुद्र के पार का।	२-११-५९
पारायण	सं०	हाथी पर चढ़ने के लिए लटकाने वाली रस्सी।	२-३२-१२
पारावत	पु०	कबूतर।	१४-१-१३
पाराशव	पु०	ब्राह्मण पिता शूद्र माता से उत्पन्न पुत्र।	३-६-२२
पारिकार्मिक	पु०	सेवक।	२-२-१०
पारिजात पुष्पक	पु०	पारिजात का फूल।	२-११-२९
पारिपाणिक	सं०	मार्ग संचरण में उपयोगी तथा भ्रमण के लिए उपयोग में लाया गया साधारण रथ।	२-३३-५
परिव्राजिका	स्त्री०	भिक्षुणी, संन्यासिनी।	१-१०-७
पारिहीणिक	सं०	हर्जाना, या हानि की पूर्ति।	२-६-२०,२-१५-३
पारिभद्रक	पु०	नीम।	१४-२-२०, १४-२-२७
पारीक्षिक	पु०	जाँच की फीस, या निरीक्षण की फीस।	२-१२-२६
पारुष दण्ड	पु०	कायिक आघात।	३-३-९,
पालित	वि०	क्षेत्रपाल, पशु पालक या रखवाली करने वाला।	३-१०-२७
पार्श्व	सं०	निश्चित बाकी पर लगाया गया अधिभार, प्रमुख के कारण प्राप्त धन।	२-६-२०, २-१५-३-१२-५-३७
पार्श्वायवृत्त	वि०	एक ओर अधिक निकले हुए कोनों वाला।	२-११-४१
पार्ष्णि	पु०	सेना के पीछे या पीठ का भाग।	७-५-८, ७-१३-१
पार्ष्णिग्राह	पु०	युद्ध काल में पीछे से आक्रमण करता है। या पृष्ठ स्थित शत्रु।	६-२-१८, ७-१३-२
पार्ष्णिग्राहसार	पु०	पार्ष्णिग्राह का साथी।	६-२-१८,९-७-४५
पाल्य	स्त्री०	खेत के बीच निर्मित सेतु को पाली कहते हैं।	२-२४-२२
पाश	पु०	नास्तिक, विधर्मी, धर्म विरुद्ध, ढोंगी, नास्तिक साधु।	१-१८-९,१२, १-१९-,२-४-३३, ३६-१४, ३-१६-३२,३३, ३९,
पाषण्डव्यञ्जन	वि०	पाखण्डी का वेश धारण करने वाला गुप्तचर।	१-१६-२४
पाषण्डिन्	वि०	पाशुपतादि पाखण्डी या बौद्धभिक्षु से तात्पर्य है।	२-३६-५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
पिंक	पु०	ठोस या पोले आभूषणों में काँच आदि जोड़ना या न्यस्त करना।	२-१४-१८, ४१, ४२
पिचु	पु०	रूई।	१४-२-३३
पिच्छिल	वि०	चिकना कम्बल या कपड़ा।	२-११-९९, ४-६-१८
पिच्छ	पु०	पर, मयूर वर्ण, मयूर पंख।	२-१४-५१
पिटक	पु०	पेटी, पीटने का यन्त्र, मुँगरी।	२-१५-६२
पिटका	स्त्री०	आभूषण की खोल।	२-१४-४५
पिण्ड	वि०	श्राद्ध।	३-५-५
पिण्डकर	पु०	सामूहिक रूप से दिया हुआ कर, ग्राम से या ग्रामों द्वारा।	२-१५-३
पिण्ड गोचरिक	वि०	पेट भरने मात्र के लिए, यत्किञ्चित् आहार योग्य।	२-३-२७
पिण्डवालुका	स्त्री०	पिण्डीभूत बालू, अथवा बालू का पिण्ड।	२-१४-२४, २५
पिशुन	पु०	नारद।	१-१५-२७, १-८-११
पिण्डारक	पु०	महिष पालक।	२-२९-२
पिण्डीतक	पु०	मैन, तगर या पिण्डारक।	१४-४-३
पिण्याक	पु०	खली, तेल की खली।	२-१५-५२, २-२९-२९, ४३
पीड़न	सं०	कष्ट।	८-४-१; ४९, ५०
पीड़नीय	वि०	तंग करना।	६-२-१६, ७-१०-२६
पीडित	वि०	दोष से उत्पन्न पीड़ा।	१-७-५
पीतचूर्ण	वि०	गर्म तथा चूर्ण किया हुआ।	२-१३-४८
पीलुक	पु०	एक प्रकार की वनस्पति। किंचित् तिक्त एवं स्निग्ध होती है। चरक संहिता में शिरो विरोचन ज्वरहर आदि इसके गुण कहे गये हैं।	१४-१-१३, १४-१-२७
पुञ्जीलग्रह	पु०	घास फूस का समूह।	२-३०-१९
पुट	सं०	बण्डल।	२-२१-२०
पुटभेदन	सं०	बाजार जहाँ चारों ओर से विक्रयार्थ सामान आता हैं।	२-३-३
पुत्रिका पुत्र	पु०	कन्या का पिता कन्या के पुत्र को अपना कह कर ग्रहण करता है।	१-१७-४९
पुण्य स्थान	पु०	पवित्र स्थान इसका अर्थ पवित्र स्थान तथा सार्वजनिक आमोद प्रमोद का स्थान भी किया गया है।	३-१०-१
पुद्गल	सं०	सुवर्णादि से बने आभूषणादिक।	२-१४-७, ४३
पुराणचोर	पु०	पुराने चोर या तस्कर।	४-५-१२
पुनर्नवा	स्त्री०	गदहपुरना।	१४-३-७३; १४-४-२
पुरस्तात्	अ०	पहले, आगे, सामने, प्रथम, पूर्व।	७-९-३३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
पुरश्चरण	क्रि०	आरम्भिक या दीक्षा विषयक कृत्य, किसी देवता के नाम का जप तथा हवन में आहुति।	४–५–७
पुरुष	पु०	एक प्रकार का माप जैसे छायापुरुष।	२–२३–३
पुरुष प्रकृति	स्त्री०	मानवीय प्रकृति, यथा आमात्य, सेना, मित्रादि।	८–१–१३, ९–७४९
पुरुषभोग	पु०	पुरुष या सैनिकों द्वारा सहायता या उपकार।	७–९–३५
पुरुष सन्धि	पु०	पैदल सेना को सन्धि के अनुसार लेना चाहिये।	१२–१–२६
पुरुषान्त		अन्य पुरुष द्वारा की गयी सन्धि।	७–१८–१६, २०
तुरोग	वि०	अग्रतम।	९–४–२३, ५–६–३५, ९–४–४
पुरस्तात्	अ०	सामने, आगे।	१४–३–६६
पुरोहित	नपुं०	हिन्दू राजनीति तन्त्र में पुरोहित दस मन्त्रियों में से एक मन्त्री होता था।	१–९–१
पुलाक	पु०	अधपका अन्न या चावल जो पशुओं को खाने के लिए दिया जाता है।	२–१५–३३, ५१, २–९–४३ २–३०–१८
पुंश्चली	स्त्री०	व्यभिचारिणी या आचारभ्रष्ट।	१४–१–३६
पुष्करिणद्वार	सं०	जलाशय का जलीय द्वार।	२–३–३२
पुष्पछिद्र	वि०	जिसमें छोटे-छोटे बिन्दु स्वरूप छिद्र होते हैं।	२–११–३४
पुष्पपायिता	पु०	रजोधर्म का रक्त।	१४–२–३२
पुष्यबन्दाक	पु०	बाँदा फूल, वन्दाक पुष्प।	१–२०–५
पुष्परथ	प०	विवाहादि मांगलिक कार्यों के लिए प्रयुक्त रथ। पुष्पों द्वारा यह रथ सुचारु रूप से सजाया जाता है।	२–३३–५
पुंस	पु०	पुरुष।	१४–३–४
पूग	पु०	कायश्रमजीवीसंघ अथवा श्रमिक एवं कर्मकर संघ।	१–१३–२
पूतिकिट्ट	पु०	लोहमल। जिसमें दुर्गन्ध होती है। सोना कतरने की कैंची, तरल पदार्थ निकालने के लिए मुड़ी हुई नली, जो सारस के चोंच की तरह होती है।	२–१४–२३
पूति	स्त्री०	दुर्गन्धित।	१४–१–४, १४–१–१०, १४–४–५
पूतीतृण	सं०	गुलबनफसा, एक प्रकार की घास।	१३–४–१८
पूरवेला	स्त्री०	जलप्रवाह, नदी, झरना आदि के निकट का वह स्थान जहाँ तक बाढ़ का पानी पहुँचता है।	४–३–६
पूरास्राव	पु०	पूर्ण करनेवाला जलप्रवाह।	३–९–३०
पूर्वकृतापदान	पु०	पूर्व अपराधी, दोबारा कैदी होना।	४–६–२, ४–८–२९
पूर्वपक्ष	पु०	धर्म, अर्थ, काम।	९–७–६५
पूर्वमुक्तिक	वि०	पहले से भोग करना या पहले कब्जा में रहने वाला व्यक्ति।	३–९–११
पूर्वसाहसदण्ड	पु०	प्रथम साहस दण्ड, दो सौ पचास पण दण्ड।	३–१३–११

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
पूर्णानुक्त	वि०	पूर्व या नवागत ।	३-१०-२
पूर्वापदान	सं०	पूर्व प्रसिद्ध, पहले से विख्यात ।	२-३६-३६, ३-१२-३५, ४-५-११
पृच्छा	स्त्री०	पूछने की इच्छा ।	२-१०-२३, २७
पृथग्भूत	वि०	प्रतिकूल या मिथ्यावसान जिसका बयान दूसरे से न मिले ।	२-७-२५
पृथ्वी	स्त्री०	पृथिवी, भूमि ।	९-१-१७
पृषत	सं०	दाना, बालुका ।	२-१३-४०, ४३, ६० २-१४-४५, १४-४-३
पृषतकारु	पु०	सुवर्ण का दाना बनाने वाला चतुर शिल्पी ।	२-१३-३३
पृष्ठवाहिन	वि०	पीठ पर ढोने वाले ।	२-३०-३९
पेटक	पु०	बक्स में रखना या ढकना, जेवरों को जोड़ना ।	२-१४-१८, २६, ४५
पेशल	वि०	सुन्दर एवं चतुर ।	२-२५-१५
पैशाचिक	वि०	सोती हुई या मदमत्त कन्या का अपहरण करना ।	३-२-९
पेष	पु०	पीसकर ।	१४-३-८३
पेषक	पु०	कूटने-छांटने वाला व्यक्ति ।	१-२१-१०
पोषित	वि०	उपवास ।	१४-३-४
पोट्टलिक	पु०	पोटली या थैली ।	१४-३-४९
पौतव	पु०	तुला या मानक भाण्ड को प्रामाणित करना ।	२-१९-१, ४-२-२
पौतवाध्यक्ष	पु०	तौल माप का संशोधन करनेवाला राजकीय अधिकारी ।	२-१२-२८, २-१९-१
पौत्री	स्त्री०	वस्त्र का छोटा टुकड़ा ।	१४-३-४९
पौर	पु०	पुरवासियों से उत्पन्न ।	९-६-१
पौनर्भव	वि०	सभी स्मृतिकारों एवं महाभारों ने पुत्र माना है, पुर्नविवाहिता का पुत्र ।	३-७-१२
पौरव्यावहारिक	पु०	पुर या नगर के कार्य में नियुक्त, पुरमुख्य या नगर मुख्य ।	१-१२-६, ५-३-७
पौरुष	वि०	ऊँचाई या लम्बाई ।	२-२०-१०, १७-१८-१९
पौरुषेय	वि०	पुरुषहितकर या शक्ति सम्पन्न होना ।	६-१-८
पोषित	वि०	उपवास ।	१४-३-४
प्रकट		जिसका प्रादुर्भाव हुआ हो, प्रादुर्भूत, जो गुप्त न हो, व्यक्त ।	१५-१-६४
प्रकर्मी	पु०	अतिक्रमण करनेवाली या जो कन्या को क्षतयोनि करे या उसके साथ बलात्कार करे ।	४-१२-२०
प्रकर्मन्	पु०	कन्या का क्षतयोनिदर्शन या प्रथम सम्भोग या सुहागरात्रि ।	३-१५-११, ४-१२-१५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रकुर्व	क्रि०	योनिक्षत (शील भंग) करना ।	४-१२-१, ३-८-२७
प्रकाशयुद्ध	पु०	कहकर या खुलेआम युद्ध करना ।	७-६-४०
प्रकीर्णकम्	नपुं०	विखरा हुआ या फैला हुआ ।	१०-५-५३
प्रकामिन्	पु०	इच्छापूर्वक भोग करने की स्वतन्त्रता या जिसे पिता की इच्छा के विरुद्ध विवाह की स्वतन्त्रता प्राप्त हो ।	४-१२-८
प्रकृता	स्त्री०	क्षतयोनि वा कौमार्य:-भंग ।	४-१२-२०, २२
प्रकृति	स्त्री०	जन समुदाय ।	६-१-१, ७-५-१२
प्रकृतिप्रग्रह	पु०	घटकों को अनुकूल या समर्थन करना ।	१०-३-३
प्रकृतिप्रकोप	पु०	जनता का विद्रोह ।	१-१८-१, ८-३-७
प्रकृतिव्यूह	पु०	दण्ड, भोग ।	१०-६-३
प्रकृष्ट	वि०	दूर, विस्तारयुक्त, विस्तृत ।	७-९-२१, ४७, ७-६-८, ७-७-२३, ७-१२-२०
प्रकोपक	पु०	क्रोध या गुस्सा उभाड़ना ।	९-४-११
प्रक्रय	पु०	आकर द्रव्य का राजदेय ।	२-१२-२२, ३-९-३६, २-१२-२८
प्रकर्म	नपुं०	कन्या का क्षतयोनिदर्शन या सम्भोग ।	३-१५-११
प्रक्षेप	पु०	मूलधन, धनविनियोग, पूँजी ।	२-९-४, ३-१३-१७, ४-२-३६, ७-४-२२
प्रक्षेपवृद्धि	स्त्री०	मूलधन का विनियोग ।	३-११-५, ३-१२-१५
प्रगल्भ	वि०	साहसी, निःशंक । गणपति शास्त्री ने इसका अर्थ प्रौढ़ किया है ।	१-११-२, १-१२-४
प्रग्रह	पु०	समर्थन या अनुकूल करना ।	७-५-१९, ३७, ८-३-६५, १-१०-३, ५-६-२८, १०-२-३, २-७-२, ४१, २-३५-७, ७-७-११
प्रग्रहण	पु०	अधिगृहीत कर ।	७-१-८
प्रग्रीव	पु०	प्रवेश का कमरा ।	२-५-३, ३-३०-४, ४-३१-२
प्रजाता	स्त्री०	वह महिला, जिसको सन्तान उत्पन्न न हो ।	१-१७-२६
प्रघर्ष	पु०	गात्रघर्षण ।	१-२१-१४
प्रचलाक	सं०	मोर की कलँगी या पूँछ ।	१४-१-१४
प्रचार	पु०	कार्यक्षेत्र मुख्यतः अध्यक्षों का ।	२-१-१९, २-६-१४, २-७-२, ३, ३४, २-८-३ २-२८-१, ३-१४-२८ ४-८-३, २-८-२४, २-१०-२१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रच्छन्दक	पु०	घूर्णशील, आवारा, पर्यटक, स्वच्छन्दचर, स्वेच्छाचारी, इसका अर्थ गुप्तचर या गुप्त प्रतिनिधि या मध्यस्थ भी होता है।	४-४-३
प्रजन	पु०	वेगवान् या तीव्रगति वाला।	१०-३-५०, ५१
प्रजासुख	पु०	मत्स्यन्याय को न मानना किं वा प्रतिरोध सुख इस लोक में सिद्धि का लक्षण है।	
प्रणय	पु०	प्रार्थना, राजा की ओर से करना, या याचना, या मांग या डिमांड।	५-२-१६, २९, २६, ८-२३-२४, ७-९-३१
प्रज्ञा	स्त्री०	मेधा, बुद्धि विवेक, तेज।	९-१-१५
प्रणाली	स्त्री०	जल निगमपथ, नाली।	३-८-२१-२३
प्रणिधान	पु०	नियुक्ति का कार्य।	१-१६-२४, ७-१५-१२
प्रणिधि	पु०	दैनिक कृत्य या नियमित या शासन या कर्तव्य।	१-१६-१, ७-१-३३, १२-४, १-१२, १-१९, १-२०, ५-६-५
प्रणीत	वि०	प्रयोग किया हुआ।	१-४-११, १२, १३
प्रत्यापत्ति	स्त्री०	दूर रखने के कारण पितृद्रोह बुद्धि आने पर।	१-१७-१३
प्रताप	पु०	शक्ति, बल, ऊर्जा, उत्साह।	७-४-७, ९-७-१८, २६, ७-१०-४, १-१६-३३, ७-७-९, ९-२-९
प्रतापन	पु०	तपाना।	४-८-२२
प्रति स्यात्	स्त्री०	प्रदान करना।	२-७-२०
प्रतिकर	पु०	राज्य को देय निश्चित कर या उसके स्थान पर दी जाने वाली वस्तु।	२-२९-१, २-३५-१
प्रतिकार	पु०	वैर निकालना या बदला चुकाना।	१-९-४-१
प्रतिकृत्य	वि०	प्रतिशोधित, प्रतिकार किया हुआ।	७-३-१५
प्रतिक्रुष्टु	वि०	दयनीय, रक्षा के लिए बुलाया गया। या जिसकी जायदाद नीलाम की जाती है।	४-१३-१८. ३-९,८-९
प्रतिकोश	पु०	नीलाम के समय बोली बोलने वाला।	३-९-७
प्रतिक्रोष्टा	पु०	जिसकी जायदाद नीलाम की जाती है।	३-९-६
प्रतिगणिका	स्त्री०	उपगणिका या राज्य परिवार का कार्य करने वाली गणिकायें।	२-२७-१, २
प्रतिग्रह	पु०	शरीर बन्धक रखना।	३-१४-३८, ३-३-५, ७-१७-३, ५, १२-४-१८, १३-३-४६, ८-१-४२, १-१६-८, १०-२-२०, १०-५-५८, १०-६-१,२, १५-१-४२
प्रतिग्रहीता	पु०	सामान पाने या ग्रहण करने वाला इसका दूसरा अर्थ शरण में आये हुए को आश्रय देना।	१-१८-६, ३-१५-१९, ३-१६-५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रतिघात	पु०	आघात के बदले किया गया आघात।	९–६–५५, २–८–२९, ७–६–२६ ९–६–२७, ७–१३–२५, ७–१८–२९
प्रतिजप	वि०	जिसमें भेद डाला जाता है।	९–५–३
प्रतिजाप	पु०	भेद, षड्यन्त्र, उपजाप के प्रकार को कहना।	९–३–३७, ९–५–३
प्रतिदूत	पु०	आया हुआ दूत या बदले में भेजा हुआ दूत।	१३–४–२९
प्रतिदेश	पु०	बदले में कहना।	३–१२–४०
प्रति निवृत्त	वि०	लौटना, घूमना, वापस होना।	७–१३–९
प्रतिपण्य	वि०	विदेशों में सामानों का क्रय विक्रय।	२–१६–१८–१९, २१, ८–४–३४
प्रतिपत्ति	स्त्री०	अपने तर्क से बात समझाकर उपलब्धि प्राप्त करना।	७–१७–२६, १–९–१
प्रतिपत्स्यामि	क्रि०	स्वीकार या ग्रहण करना।	११–१–५२
प्रतिपद	अ०	साम आदि के द्वारा समाधाना, प्रवेश मार्ग, आरंभ, उपक्रम आदि।	३–१–३१, ३–११–२०, ३–१–३७ १–१८–१३, ७–१५–१२, ३–११–५०, १०–१०–३, ९–३–३८, ९–४–८, १२–२–३२, २–२६–८, ५–२–१२
प्रतिपन्न	अ०	उपलब्ध, प्राप्त, अनुष्ठित, स्वीकार, निष्फल कार्यान्वित या निष्पक्ष किया गया।	७–८–३, ९–३–२७
प्रतिपान	पु०	पीना, पीने का पानी।	२–३०–९, १८, २–३१–६, १३
प्रतिवन्ध	पु०	बाँधने की क्रिया या भाव, बन्धन, रुकावट, बाधा, अवरोध प्रतिरोध आदि।	२–७–२२, ३४
प्रतिभाव्य	वि०	जामिन होना।	७–१७–८
प्रतिभू	पु०	जामिन या जमानत करने वाला।	७–१७–८
प्रतिमान	पु०	बाट, तुला।	२१–२, २–१४–१०, १५–२–१९–१०,२५, ३८;
प्रतियोग	पु०	विरोधी साधन या आचरण।	९–४–८
प्रतियोद्धा	पु०	मुकाबले में लड़ने वाला प्रतिद्वन्द्वी।	१०–५–९, १३
प्रतिरवण	पु०	प्रति शब्द या भूंकना।	५–५–११
प्रतिरागि	पु०	उत्तम रंग।	२–१३–२३, २४
प्रतिरूपक	पु०	प्रतिमूर्ति, प्रस्तुत कार्य, समान स्वरूप वाला दूसरा कार्य या नवल।	१–१५–२४
प्रतिरोधक	पु०	प्रतिरोध करने वाला, रोकने वाला घेराबन्दी करने वाला।	३–१२–२
प्रतिलेख	पु०	पूर्व पढ़कर उत्तर निकालना।	२–१०–४५
प्रतिलोम	वि०	प्रतिकूल या विरोधी।	७–१६–१८, ८–१–३. ९–७–५२. १० ५–४३, १५–१–३६
प्रतिवर्णिक	वि०	नमूना, दूसरे रंग या मूल्य का सामान।	२–२२–१२
प्रतिवेश	पु०	पड़ोसी।	३–४–३, ९–७–१८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
प्रतिबला	सं०	खरेठी, औषधि विशेष ।	सं०
प्रतिव्यूह	पु०	विरोधी मोर्चाबन्दी, प्रतिव्यूह रचना ।	१४-२-२७
प्रतिवाप	पु०	चूर्ण करके फेंकना या डालना ।	१२-१-१७
प्रतिभू	पु०	उगना ।	१४-२-६
प्रतिविहिता	वि०	प्रति प्रदत्त जीविका, जिसके भरण पोषण या आजीविका का प्रबन्ध किया गया हो ।	६-८-३०
प्रतिबिध	वि०	राज्योल्लंघन या राजाज्ञा को दबा देना ।	३-४-२५ १-१३-४, १-१७-२९, ३-१०-३१, १-१३-१३, १३-१५, ५-१-४, ५-१-४०, ३-१-२, २-७-३४, २-१०-२३, ३२
प्रतिषेध	पु०	दूर हटाना, निषेध कर निवारण करना, अस्वीकृत करना ।	१-१२-१३, ५-१-९, २-८-३, १-१२-१६, ५-१-३७,३८, ८-१-३८
प्रतिष्ठित	वि०	समाप्त होने पर, स्थिर, स्थापित, अवस्थित है ।	१-१९-१७
प्रतिष्ठ	स्त्री०	प्रसिद्ध ।	१०-६-१३
प्रतिस्तब्ध(प्रतिष्टब्ध)	वि.	रोका हुआ रुकावट डाला गया हुआ ।	२-६-१६, ७-७-११, ७-१०-२७, ७-१७-२७, ९-३-२४
प्रतिसंसर्ग	पु०	मित्रता, सम्पर्क स्थापित करना ।	१-१६-७, १-२०-१
प्रति संस्कार	पु०	नवीनीकरण या मरम्मत करना ।	२-१४-४४
प्रतिसंहृ	वि०	एकत्रित किया हुआ ।	७-९-२२, २५,
प्रति संध्या	अ०	समाधान प्रस्तुत करना ।	४-६-९
प्रतिसंधान	सं०	मित्र के साथ सन्धि करना ।	४-६-११, ४-८-४, ७-६-२२
प्रतिसम्मानी	पु०	समानता करना ।	४-८-३, १०, २-७-३०, १३-३-३९, ४-६-१२
प्रतिसुरुङ्गा	स्त्री०	दूसरी सुरंग ।	१२-५-१९
प्रतिस्वद्	हे०	आस्वाद लेना ।	१-२१-१०
प्रतिस्वादभाज	पु०	भोजन सम्बन्धी अन्य उपयोगी अंश ।	२-३०-२६, ५-१०-११
प्रतिहस्ति	पु०	प्रतिपक्षी शत्रु ।	१-१४-७
प्रतीवाय	पु०	चूर्ण करके फेंकना या मिलाना ।	१-१२-५, ८, ९, ११, २-२५-२२, १४-२-६
प्रतोली	स्त्री०	रथ्या, पथ, नगर के बीच की गली, मुख्यमार्ग ।	२-२-११
प्रत्यन्त	सं०	सीमावर्ती देश, सीमाप्रान्त, सीमा ।	१-१७-४२
प्रतिहत	वि०	परास्त हुआ, पछाड़ाया भगाया, या रोका, या अवरुद्ध किया हुआ ।	७-१३-९, १०-६-४१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रत्यंश	पु०	प्रतिव्यक्ति से संम्बन्ध्यमान अंश ।	३-५-२६, ३-१०-२६, ३-१२-३०, ३-१४-१९, २१, २५
प्रत्यक्ष	वि०	दृष्टिगोचर, प्रत्यक्षज्ञान, इन्द्रियों द्वारा बोध, स्वयं ज्ञानेन्द्रियों का साक्षी होना ।	१-१५-१९
प्रत्यनुभाष्य	पु०	राजा को पढ़कर सुनाना ।	२-१०-४५
प्रत्यन्तस्कन्ध	पु०	सीमा शिविर या सेना का एक भाग या डिवीजन ।	१२-३-१६, १२-४-२०
प्रत्यपसृत	पु०	शत्रु सेना का भागा या भगोड़ा ।	७-१६-१६, १३-४-५१
प्रत्यय	पु०	विश्वास करना या निश्चय करना ।	२-३६-५, ३-१४-१४, २-२८-२७, ३-१२-१४, ३-८-१, ३-११-४३
प्रत्यवाप	पु०	शत्रु के स्थान में प्रवेशकर उसका उपकार करना ।	७-८-२
प्रत्यवरोपित	वि०	कम या अधिक करना ।	२-८-२१
प्रत्यवसित	त्रि०	लौटा हुआ या गिरा हुआ, पुनः गृहस्थ जीवन व्यतीत करने वाला ।	१-११-४
प्रत्याख्यान	पु०	प्रत्युत्तर ।	२-१०-२३, ३०
प्रत्यादिश्	पु०	निवेदन, जानकारी, या सूचना देना ।	१-११-३, ४-५-१४
प्रत्यादेय	सं०	पुनः प्राय ।	८-३-५३, ७-१०-२४, ९-४-२४, ९-७-५, ५५
प्रत्यादेश	पु०	निराकरण, खण्डन, वह जो किसी को लज्जित करे या नीचा दिखावे या बताये ।	१३-१-२
प्रत्यापत्ति	स्त्री०	वापस, पुनरागमन ।	१-१७-१३
प्रत्यारुह	पु०	प्रतीकार, प्रतिक्रिया, प्रत्याक्रमण, तेजी से आक्रमण करना ।	८-३-२५
प्रत्यावाप	पु०	केवल पैदल सेना का निवेश या अधिकता ।	१०-५-२६
प्रत्यासन्न	वि०	समीप या अतिनिकट ।	७-१०-१७
प्रत्यासार	पु०	सेना के पीछे लौटने का स्थान, ऐसे मोर्चेबन्दी जिसमें एक व्यूह के बाद दूसरा व्यूह बनाया गया हो ।	१०-४-७, ८
प्रदिष्ट	पु०	कार्य हेतु निश्चित भूमि ।	१-११-५, १०, १२
प्रदेश	पु०	संकेत, निश्चय, संकल्प, निर्देश निर्धारण करना ।	१५-१-२५
प्रदेष्टृ	पु०	शासनाधिकारी या मजिस्ट्रेट या कण्टकशोधन के लिए नियुक्त महामात्र विशेष ।	४-१-१
प्रदोष	पु०	बड़ी त्रुटि या भारी दोष ।	८-१-३
प्रद्वार	सं०	लकड़ी का बैठने का आसन, या मुख्यद्वार ।	२-३०-४, २-३६-२१
प्रधान	पु०	मुख्य ।	१-१३-२६, ७-५-१२, २४, ७-५-३५, ३६, ७-१४-१, ३
प्रधारण	सं०	मनुष्य की सहनशीलता की जांच करना कि कितना वह सह सकता है ।	४-८-२४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रधावनिका	स्त्री०	शत्रुओं द्वारा छोड़े गए वाण रोकने के लिए निर्मित आवरण।	२-१-१४
प्रभंजन	पु०	तोड़-फाड़, वायु, हवा, प्रचण्ड वायु, जोर की हवा।	१०-५-५४
प्रपणिन्	पु०	विदेशी व्यापारी।	२-४-१६
प्रभाव	पु०	शक्ति-सामर्थ्य, प्रत्येक रत्न का ज्योतिष के अनुसार प्रभाव होता है।	१-१-९,१,३, १-२१-७, ७-६-३३, ७-१४-१९, २-२१-२१
प्रव्रजित	वि०	शत्रु के गुप्तचर, प्रतिनिधि या एजेण्ट।	१-२१-२६
प्रभाव शक्ति	स्त्री०	सामर्थ्य के अनुसार प्रभाव।	४-२३-७
प्रभार	पु०	मरक, महामारी।	९-७-८२
प्रभूत	वि०	प्रचुर, असंख्य, बड़ी सेना।	७-१५-९
प्रभुशक्ति	स्त्री०	कोश, बल, दण्ड, भौतिक बल का साधन।	६-२-३३
प्रभृष्टश्वेत	वि०	साफ, घुला या स्वच्छ या चमकीला या विरंजित करना।	४-१-१८
प्रयाम	पु०	अधिक या वजन में ज्यादती बढ़ावा।	२-७-२, २-१९-२४
प्रयोग	पु०	प्रयोग काल में दिया गया धान्य जो समय पूर्ण होने पर वृद्धि सहित वापस किया जाता है।	२-१५-४, ५-२-४७, ५५, २-२-५,६
प्रयोगे	पु०	कार्य सम्पन्न हो जाने पर।	१४-३-३५
प्रयोग्य	वि०	प्रशिक्षित, युद्धयोग्य।	२-३०-२८, २९
प्रयोजक	पु०	महाजन, कर्ज देनेवाला उत्तमर्ण	३-१२-१२
प्ररूप	पु०	खोलना, निर्दिष्ट करना या दिखाना।	४-५-१८, ५-१२-४१, ६६, ९-६-३७, ११-१-२५, ४९, १३-२-२९
प्रावृत्तिक	पु०	घटना की सूचना देना।	२-१०-३८, ४४
प्रलम्भन	पु०	धोखा देना, वञ्चना, भ्रान्त करना, प्रलोभन देना, छलना, मोहित करना।	१४-२-१
प्रवस्	हे०	निर्वासित करना।	४-४-७, १०, १२, २३, १-१८-१६, ४-१३-२०, ७-७-१३, ११-१-३३, ४७
प्रवहण	पु०	नौका शकटादि, आरोहण	१-२१-२८
प्रवास	पु०	निष्कासन।	१-१४-२, १-१८-१५
प्रवासन्	सं०	मारना या निर्वासित करना।	७-१७-५०, ३-१४-२६, ४-१३-२१
प्रवासित	वि०	मारा गया या निर्वासि किया गया।	१-१४-२, ४-१३-८, ९
प्रविष्ट	वि०	घुसा हुआ, अन्दर गया हुआ।	२-६-१५, २-८-२१
प्रवीरट	वि०	अग्रणी, श्रेष्ठ, योद्धा, भाषा व्याख्यांन में इसका अर्थपूर्ण किया है।	२-४-६
प्रवेश्य	सं०	आयात वस्तुओं पर, सम्भवतः नकद शिक्के में देय शुल्क लिया जाता था।	२-२२-२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रव्रजन	सं०	घर छोड़कर बाहर जाना।	३-३-२३
प्रव्रजिता	स्त्री०	गृह त्यागकर स्वतन्त्र रहने वाली भिक्षुकी।	२-२३-२, ४-१३-३६,
प्रव्राजन	पु०	देश निष्कासन।	४-९-९
प्रशास्तृ	पु०	छावनी का निरीक्षक या पर्यवेक्षक।	१०-१-८-१७, १-१२-६, ५-३-५
प्रशंसा	स्त्री०	गुणस्तुति, प्रशस्ति।	२-१०-२३, २६
प्रशोध्य	वि०	सरलता पूर्वक परिवर्त्य प्रयत्न से साध्य धन।	२-६१६
प्रसाधक	पु०	अलंकर्ता, शरीर की सुन्दरता बढ़ानेवाला।	१-२१-१२
प्रसंग	पु०	प्रकरण के अन्तर से समर्थ।	७-५-२०, ८-१-३, ८-३-६१
प्रसाद	पु०	निर्मलता, प्रसन्नता।	९-४-१०
प्रसन्ना	स्त्री०	प्रसन्ना संज्ञक शराब यहाँ शुद्ध या साफ के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। वाल्मीकि ने भी जल की निर्मलता की उपमा प्रसन्न मन से दिया है।	२-२५-१८, २७-३१
प्रसर्ग	पु०	छोड़ना।	७-३-४
प्रसृष्टस्त्रीक	पु०	जिसके साथ स्त्री अधिक स्वतन्त्रता का अनुभव करती है।	३-४-२२
प्रसाधक	पु०	अलंकर्ता या शरीर की सुन्दरता।	१-२१-१२
प्रसार	पु०	अग्रगामी रक्षक या सैनिक दस्ता।	९-२-३, ७, १२-४-२०, १०-२-५
प्रसारवृद्धि	स्त्री०	बड़े पैमाने पर अन्न अथवा चारा लेने के लिए अवस्कन्द या आक्रमण करना।	१०-२-४, १०-४-१३
प्रसेव	प०	चर्म का थैला।	१४-३-१४
प्रस्खलन	पु०	लड़खड़ाना, डगमगाना, गिर जाना।	१-२१-८
प्रस्तीन	वि०	बहुत कठोर या खोटा होने के कारण आभूषण का कठोर हो जाना।	२-१४-५४
प्रसृष्टस्तृक	वि०	जो स्त्रियों को अधिक स्वतन्त्रता दे।	३-४-२२
प्रहवण	पु०	उत्सव काल।	१-१०-९
प्रहरण	पु०	अच्छी तरह प्रयोग करना।	१२-५-५
प्रहवण	सं०	प्रीतिभोज, मेला।	१-१०-९, २-१-२७, ७-१७-४४
प्रहृत्य	स्त्री०	प्रहार, पिता की अथवा पितृपक्ष वालों की हत्या करके।	१-१८-१२, ७-५-४८
प्राकाम्य	वि०	स्वेच्छया या भरपेट या स्वतन्त्रता पूर्वक खाना या अधिकता या चुनने की स्वतन्त्रता।	३-२९-४६, ३-१०-१२ ३-१४-२४, ४-११-५, १३
प्रहरणकाल	पु०	आक्रमण या प्रहार या आघात काल।	१०-३-२५
प्राकामी	पु०	इच्छा पूर्वक भोग करने की स्वतन्त्रता जिसे पिता की इच्छा के विरुद्ध विवाह की स्वतन्त्रता प्राप्त हो।	४-१२-८
प्राङ् मुख	पु०	पूर्व की ओर गणनाधिकारी का कार्यालय।	२-७-१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रकार	पु०	चहार दिवारी।	२-३-७, १-२०-१-२-२४-३२,
प्राक्षिप्तक	वि०	छज्जा, बरामदा, प्रलम्ब भाग।	३-८-१३
प्राण	पु०	व्यक्ति से तात्पर्य है।	३-१३-१, १९, ३-१६-२८
प्रातिभाव्यबन्ध	पु०	जामिन होना।	७-१७-१८
प्रास	पु०	कुन्त, भाला। यूरोप में भी राज प्रासाद के रक्षक वर्छा या भाला हाथ में लिए पहरा देते थे।	१-२१-१
प्रातिवेधनिक	सं०	शोधन कर मुहर लगाना, तथा निरीक्षण करना।	२-१९-४०
प्रात्ययिक	सं०	विश्वास पात्र।	२-१३-२, ३-१२-२९
प्रादानिक	सं०	विवाहार्थ पर्याप्त द्रव्य या कन्या के विवाह के लिए दिया जाने वाला धन।	३-५-२१
प्रादीविक	वि०	अग्नि आदि से प्रदीप्त करने वाला, किसी की सम्पत्ति को जलाने वाला।	२-३१-१३, २-३६-२५, ४-११-११, १३
प्रापाविपक	पु०	प्याऊ, परिचारक या पानी पिलानेवाला।	४-८-१५
प्राप्तफला	वि०	युवती, वयस्क।	४-१२-३
प्राप्तव्यवहार	वि०	बारह वर्ष से ऊपर की स्त्री रजस्वला होने के पश्चात् प्राचीन काल में वालिग मानी जाती थी।	३-३१, ३-५-१९ ४-१३-२५,
प्रामित्यक	सं०	मित्र आदि से धान्य की प्राप्ति या मित्रादि अन्य व्यक्तियों से अन्न मांगना जिसे लौटाने की इच्छा न हो।	२-१५-१,६
प्राप्तव्यवहारा	वि०	वालिग हो गयी हो।	३-५-९-९-७-२५
प्रार्थ	वि०	आक्रमणकारी।	१-१७-३९, ३-१०-३४, ६-२-३८,
प्रावृत्तिक	वि०	जानकार, समाचार देने वाला।	२-१०-३८
प्राश	पु०	भोजन, स्वाद लेना, आहार।	१२-५-४३
प्रास्तर	वि०	पर्वत काट कर गुहा दुर्ग बनाया जाना।	२-३-१
प्रिय	वि०	शुभ चिन्तक।	१-१९-३४
प्रियंगु	स्त्री०	इसको फलनी, श्यामा, गन्धफला, गोवन्दिनी, कृष्णपुष्पी, फूलफेन, दहिगन या दाहिगना, या मधुरा भाला कहते है।	१४-१-५-१४-४,६९
प्रेक्षा	स्त्री०	एक प्रकार का लाइसेन्स या अनुज्ञप्ति शुल्क जो देखने के लिए लिया जाता है।	२-२७-२६, ३-३-२१ ३-१०-३७, ५-१-४३, १३-२-४, ४५, १४-३-८२
प्रेतकार्य	सं०	श्राद्धकर्म या कार्य।	१४-३-१५
प्रेताभिनिवेश	पु०	मृतव्यक्ति का हलफनामा या शपथ पत्र या बयान।	३-११-४१
प्रेमू	सं०	प्रेषण, पीड़ा शोक। सूचना देना।	२-२१-२७, १२-३-२०, १३-३ ३, ५, १७, १३-४-४२,
प्रेषण्	सं०	प्रेरणा करना, नियोग, भेजना।	१-३-११

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
प्रोज्झ	वि०	छोड़कर या छुट्टी लेकर या त्यागकर ।	२–३२–२२
प्रादानिक	वि०	विवाहार्थ पर्याप्त द्रव्य या कन्या के विवाह के लिए दिया जाने वाला दहेज ।	३–५–२१
प्राश	पु०	आहार योग्य ।	१२–५–४३
प्रयोजक	पु०	महाजन, उत्तमर्ण, ऋण देने वाला ।	३–१२–१२
प्रेत	वि०	भूत, मृत ।	२–१३–८, १४–३–७८
प्लव	पु०	कारण्डव नामक पक्षी, हंस, सारस, वक, क्रौञ्च आदि ।	२–१–२४, १४–२–३६
प्लवक	पु०	रस्सी पर खेलने वाला नट या बाँस पर खेल आदि दिखाने वाला व्यक्ति या मदारी ।	२–२७–२५, ७–१७–३४, ११–१–३४
प्रोति	स्त्री०	गूँथा हुआ, पिरोया हुआ, जड़ा हुआ, जोड़ा हुआ ।	२–११–१००
प्रोत्सह	हे०	प्रबल उत्साह, अत्यधिक उत्साह ।	१–११–३, ५–१–५, ९
प्रोषिता	स्त्री०	जिसका पति प्रवास पर हो, पति वियुक्त हो ।	२–२३–११, ३–११–२४
		फ	
फल	सं०	कर्मपरिणाम, नतीजा, कर्म से प्राप्त होने वाला सुख दुःख भोग ।	४–११–२४
फणित	पु०	राब (शीरा) ।	२–५–१४, २–२५–३४
फलवाह	पु०	फलयुक्त, फल देने या उत्पन्न करने वाला या फलदार वृक्ष ।	२–६–५
फलवाप्त	वि०	फल प्राप्तिका विषय ।	९–३–३७
फलाम्ल	सं०	खट्टा या फल का खट्टा रस ।	२–१५–१८, २–२५–३९
फल्गु	वि०	सार हीन वस्तुएँ, कम कीमती द्रव्य ।	२–५–८, २–७–२, २–११–१ २–२१–२९, ३०
फल्गुवल	सं०	कमजोर सेना ।	५–१–२१, ३९, ५४, १०–५–४३, ४५, ४६
फाणित	पु०	राब ।	२–१५–१४, २–२५–३४
फेलक	पु०	पिटारी, कुर्त्ता ।	१४–३–२३
फेला	स्त्री०	पेटी, सन्दूक, बक्स, छितनी, टोकरी ।	७–१७–३९, ४०, १३–२–४८, ४९
		ब	
बनाजीव	पु०	बन की उत्पत्ति पर यथा व्रीहि, तृणादि पर निर्वाह करने वाले ।	१०–२–५
वधिर	पु०	बहरा ।	१४–१–२
वक	पु०	बकुला ।	१४–१–१५
बन्ध	पु०	इसका अर्थ भाग, किस्त, हिस्सा होता है, तथा जमानत भी अर्थ किया गया है ।	३–३–४, ३–९–२०, ३–११–७, ४१, ३–१२–६,१६
बन्धक	पु०	ठीकेदार या संग्रहकारी ।	५–३–१७
बन्धकी पोषक	पु०	गणिका, पण्य स्त्री, कुलटा स्त्री को घर में रखने वाला ।	५–२–२१, २८, ११–१–३४ १२–२–११

कौ०–५७

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
बन्धन	सं०	वली राजा से विवाह सम्बन्ध ।	३-१३-५, ७-३-२६, २९, ४-३०-४२,
बन्धनागार	सं०	जेल ।	२-३२-१२
बन्धनपरिकृष्ट	वि०	जिसके कार्यों पर नियन्त्रण लगाकर, क्लेश दिया गया हो वह व्यक्ति।	२-५-१ १-१४-२
बन्धनीय	वि०	बाँधने योग्य ।	
बन्धु	पु०	सम्बन्धी, बन्धुबान्धव ।	२-२३-१९
बन्धुवाहन	वि०	बन्धुओं के नियन्तरित ।	७-१७-११
वर्ण	पु०	रंग, जाति, भेद, अक्षर, शब्द, स्वर, ख्याति, यश, अच्छा गुण ।	२-३७-२ २-१३-४
बर्ध्य	वि०	बढ़ई ।	१०-२-९
बल	पु०	सेना ।	९-१-२०, ९-७-२०
बलव्यसन	नपुं०	सेना की आपदायें ।	८-५-१
बलव्यवहृत	वि०	बल का व्यवहार ।	८-५-१
बलाका	स्त्री०	बकुली या वक पंक्ति।	१४-१-१५
बल्गुजर	पु०	बाकुची का पर्याय, इसे वंगला में सोमराजी नामक वृक्ष विशेष कहते हैं।	१४-१-४
बहुलीभूत	वि०	अफवाह या जनरव ।	१२-३-२
बलाघात	पु०	शत्रु सेना के नाश हेतु ।	१४-१-१
बाण	पु०	अर्जुन वृक्ष ।	१४-१-३०
बालिश्य	पु०	अबोध, मूर्ख, जड़ ।	३-१३-४६
बाधा	स्त्री०	अविक्रमण ।	३-८-२०
बाहिरिक	पु०	कितव, वञ्चक, नट, नर्तकादि ।	२-४-३२, २-६-२
बाहूत्सार	अ०	शत्रुको पीछे हटाने वाले या प्रतिवारक ।	१०-२-४, १०-४-१३
बाह्य	वि०	बाहरी या ग्रामीण क्षेत्र ।	२-५-२२, १-२०-१८, २२, ९-३-२२ ९-३-११, १२-५-२८, १३-४-३९, ८-४-४८
बाह्यकोप	पु०	बाहरी विद्रोह अन्तपाल, आटविक आदि द्वारा विद्रोह ।	९-३-२२, ८-३-२, ३, ९-३-९
बिम्ब	सं०	प्रतिमा या मूर्ति ।	१३-२-१९, ४-४-२०, ४-१०-५
बिलखावलेखन	सं०	चूहे आदि द्वारा किया गया खण्ड ।	१४-३-२८
विहार	पु०	साधारण प्रजाजन का क्रीडादि, मनोविनोद ।	८-४-२०, २१
बीज	सं०	फूलवाले पेड़ पौधे का गर्भाण्ड वह दाना या गुटली जिससे पेड़ पौधे का अंकुर उगे, बीया शुक, मूलकारण ।	२-२५-३२, २-१२-२४, २-६-१६
वैदेहक	पु०	व्यापारी ।	३-४-४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वैयावृत्यकर	पु०	विक्रय या सेल एजेण्ट या प्रतिनिधि या अभिकर्ता या फुटकर वेचनेवाले व्यापारी । सहायक या युद्ध अपराधी ।	२–१२–२५
बोलन	सं०	कहानी में फंसा कर ध्यान बटा देना ।	२–१४–५३
ब्रह्मचारी	पु०	ब्रह्मचर्य आश्रम २५ वर्षों के बाद समाप्त हो जाता है । ब्रह्मचारी को दण्ड और जिन धारण करने का विधान है ।	१–३–१०
ब्रह्मदेय	सं०	ब्राह्मणों को दान दी हुई वस्तु अथवा भूमि ।	३–१७, २–२०–२०
ब्रह्मदेयिक	पु०	ब्राह्मणों को देने योग्य अथवा ब्राह्मणों के भोगने योग्य भूमि ।	३–१०–९
ब्रूयुः	वि०	कहे ।	१–१५–५९
ब्राह्मविवाह	पु०	आठ प्रकार के विवाहों में ब्राह्म विवाह श्रेष्ठ माना गया है ।	३–२–२, ३–६–२१
		भ	
भक्ष	पु०	भोजन तथा नाश अर्थ होता है । यहाँ नाश से अभिप्राय है ।	१–१९–३
भक्त	वि०	भोजन सामग्री भक्ष्य पदार्थ कर्मचारियों का भत्ता ।	७–१५–९
भग्नरक्षा	स्त्री०	भग्नानुपात ।	१०–५–५३
भग्न	वि०	टूटे हुए ।	१४–३–५८
भग्नोत्सृष्ट	वि०	पूर्व से टूटा हुआ या मरम्मत रहित या परित्यक्त ।	४–११–१७
भग्नानुपात	पु०	भग्न रक्षा ।	१०–५–५३
भंग	स्त्री०	विद्राव या पराजय या छद्म या कपटरूप या स्वांग दिखाना ।	१०–३–१५
भंगप्रदान	पु०	सेना को इस प्रकार भंग कर दिखाना कि मालूम हो कि सेना विखर गयी या छिन्न भिन्न हो गयी ।	१०–३–६
भज	वि०	प्रत्यर्पण करना या भागानुसार देना ।	४–१–३, २–८–२६, २८, २–२९–२४, २, ३६–११–३–१३–८
भण्डक	पु०	पात्र, वर्तन ।	१४–३–२२
भण्डोरपाक	पु०	एक असुर था ।	१४–३–१९
भण्डिका	स्त्री०	द्रवित स्वर्ण इकटठा करने का पात्र ।	२–१४–५३
भर्त्सना	पु०	झिड़की देना, भला बुरा कहना ।	२–१०–२४, ३६,
भय विरूप	वि०	विकृत हो जाना ।	१३–४–५२
भयोपधा	स्त्री०	भय प्रदर्शन पूर्वक कपट या छल द्वारा चरित्र परीक्षण अथवा भीरु अर्थात् कायर पुरुष की छल कपट द्वारा परीक्षा ।	१–१०–१२
भद्र	वि०	उत्तम ।	२–३१–१८
भद्रश्रिय	सं०	तक्कोल या श्रीवासन या लालचन्दन कामरूप में लोहित नदी के परवर्ती देश में उत्पन्न होता है ।	२–११–६६
भद्रसेन	सं०	कलिंग का राजा था ।	१–२०–१५
भरद्वाज	पु०	अर्थ शास्त्रकार, श्रौतसूत्र एवं धर्मसूत्र की रचना करने वाले ।	१–८–१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
भर्मन(भर्मण्या)	स्त्री०	पत्नी के भरण पोषण या जीवन निर्वाह के लिए दिया गया गुजारा, जो अपने पति से अलग हो गयी है।	सं० ३-३-३, ३-२-१६, ३-४ १७, ३९, १-१७-२५, ३-१३-२०
भल्लातक	पु०	भिलावा।	
भव्यारम्भ	वि०	भविष्य के कल्याण फल उत्पादक कार्य आरम्भ करना।	१४-१-६
भस्त्रा	स्त्री०	भांथी।	७-८-१२
भयोपधा	स्त्री०	भय प्रदर्शन पूर्वक कपट या छल द्वारा चरित्र परीक्षण अथवा भीरु अर्थात् कायर पुरुष की छल कपट द्वारा परीक्षा।	१४-३-१५, १६, ६८ १-१०-१२
भाग	पु०	बटैया या धान्यादि का प्राप्त भाग।	
भाजनीय	वि०	एक प्रकार की तुला।	२-६-१०
भाटक	सं०	नाव का किराया भाड़ा।	२-१९-२२ २-२८-३, ५
भाण्ड	सं०	एक वर्तन।	२-३-३३, २-५-३, २-१४-१०, ४४, २-७-२, २-१७-१५, २-२१-१२, २-१४-१५, २-१५ ६२, १-१६-१६,
भाण्डक		पात्र, वर्तन।	१४-३-२२
भाण्डगूढ़लेख	पु०	सूर्य वर्तन, जलका घड़ा आदि में रखा गुप्त लेख।	१-१२-१३
भेदन	पु०	जहाँ चारों तरफ से विक्रयार्थ सामान आता हो।	२-३-३
भासन	पु०	गृद्ध।	१४-१-२५, १४-२-४३
भार	पु०	परिमाण।	७-१७-३८
भार्याव्यञ्जन	वि०	भार्या बनी हुई।	७-१७-३८
भिङ्गिसी	स्त्री०	आठ पट्टी का खण्ड जोड़कर बनाया गया कम्बल।	२-११-१००
भिक्षुकी	स्त्री०	बौद्ध भिक्षुकी, भिखारिन्, संन्यासिनी।	५-१-५०, ११-१-५२
भिन्नकूट	वि०	चोटी, शिखर, या नेता विहीन सेना से तात्पर्य है।	८-५-१, ८-५-१८
भृंगराज	पु०	बड़ा भौंरा।	१-२-७
भिन्नमनुष्या	स्त्री०	जिस भूमि के लोग परस्पर मिलते नहीं।	७-११-१८
भिन्नेषु	वि०	अलग या परस्पर भेद हो जाने पर।	७-१४-३
भुञ्जीत	वि०	उपयोग, स्वायत्तीकरण।	११-१-३
भूमि	स्त्री०	भूमि द्वारा सहायता या उपकार।	७-९-२, ७-९-३१, १५१
भूमिगृह	पु०	भूमिके अन्दर बना घर, तहखाना, भुईंघरा।	१-०-२, २-५-२,
भूतपूर्व	वि०	जहाँ लोग पहले रहते या स्थित हैं। जिसका बन्दवस्त पूर्वकाल में हो चुका है।	२-१-१, २ १२-१, १३-५-२, २२,
भूमिच्छिद्रापिधान	सं०	कृषिके अयोग्य भूमि, कृषि रहित भूमि, शर्करिल।	२-२-१

शब्द	याकरण	अर्थ	सं०
भृ	पु०	भाड़े पर उठाना या किराये पर देना।	१–१८–१२, २–२०–२, ९–१–७
भृंगार	पु०	मंगलकलश, सुवर्णकलश, झारी।	१–१२–७
भृगु	पु०	भृगु ऋषि थे।	१–६–६
भृतक	वि०	कर्मकर, श्रमिक, मजदूर।	३–१४–१
भृतकबल	पु०	वेतनभोगी सैनिक।	९–२–१
भृत्यभाविन्	वि०	सेवाभाव, पराश्रय।	७–१८–२९
भेक	पु०	मेढक।	१४–१–४
भृष्टि	स्त्री०	उजाड़ उपवन।	२–१–३
भ्रेष	हे०	क्षीण होना, गुण ह्रास हानि विकृति।	२–१२–२३
भोग	पु०	भोग से प्राप्त धन।	१–१४–५, २–७–१०, ३–१०–१५, ७–९–१३, २६, ७–११–१०, ३–८–४,
भोक्त	वि	प्रतिपालन, उपजीविका, वृत्ति परिपोषण।	१–१८–१२
भोग निग्रह	पु०	प्रयोग में प्रतिबन्ध या रुकावट।	३–८–२१, २६,
भोज	पु०	भोज शक राजा की उपाधि के लिए प्रयोग किया गया है।	१–६–५
भ्रम	पु०	जिससे नगर का जल निकाला जाय।	२–४–२, २–३६–४३, ३–८–६
भ्रेष	पु०	क्षय, खराब या क्षीण होना।	३–१२–२३, २९, ४–१–६
भ्रेष	हे०	भौतिक तथा शारीरिक हानि या क्षति।	३–२०–१८
भूम्युपकारिणः	पु०	भूमि के लिए सहायक, भूमि के लिए उपकारी।	७–१६–९
भू	स्त्री०	पृथ्वी, भूलोक।	१४–१–४०
भुवः	स्त्री०	अन्तरिक्षलोक।	१४–१–४०
भूमिभोग	पु०	भूमि द्वारा सहायता या उपकार।	७–९–३१
भूमिसन्धि	पु०	भूमि के द्वारा की गयी सन्धि।	७–१०–१
भृतबल	पु०	नौकर या पेशेवर रुपये लेकर काम करने वाले सैनिक।	७–८–२७
भेक	पु०	मेढ़क।	१४–१–४
भेद	पु०	उपाय, फूट डालना।	९–५–१२
भोग व्यूह	पु०	एक प्रकार का व्यूह।	१०–६–२४, १०–६–६५
भ्रम	पु०	जिससे नगर का जल निकाला जाय।	२–४, ३, ३–३६–४३, ३–८–६,
		म	
मकरव्यूह	पु०	मकर के समान रची हुई सेना।	१०–६–२७
मक्कड़	पु०	मकुनी हाथी जिसके दाँत न निकले हों।	२–३१–१०
मणि	पु०	गोली, गुटिका।	१४–४–११, १२
मण्डलव्यूह	पु०	गोलाकार में खड़ी हुई सेना।	१०–६–३०
मण्ड	पु०	मलाई या माड़	१४–२–२,
मण्डल	सं०	गोल, वृत्ताकार।	२–१९–१३
मणिराग	पु०	लाक्षादि रंजन पदार्थ।	१–१८–८, २–१२–१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
मण्डूक	पु०	मेढक ।	१४–२–२०
मण्डोलूक	पु०	यह भी एक प्रसिद्ध असुर प्रतीत होता है ।	१४–३–४४
मंगल्य	वि०	पवित्र, मंगलको देना ।	१२–३–२३
मगघ	पु०	काशी के पूर्व देश को मगघ कहा जाता है, जिसे आजकल विहार कहते हैं ।	२–११–१०
मञ्चपृष्ठ	वि०	ऊपरी भाग, समतल, या चबूतरे की तरह ।	२–३–५
मतिप्रविवेक	पु०	व्यक्तिगत मत या विचार ।	१–१५–४४
मत्स्य	स्त्री०	मछली और घड़ियाल ।	१–२१–२१
मत्स्य ग्राह	पु०	घीवर, मांझी, मछुआ ।	१–२१–२१
मत्स्यण्डिका	स्त्री०	गुड़, डलीदार शक्कर, खांड़ की मध्यावस्था, बिना साफ की हुई चीनी ।	२–१२–६, २–१५–१४
मत्स्यन्याय	पु०	न्याय-अन्याय का कुछ विचार न करना, बल ही न्याय ।	१–४–१३
मद	स्त्री०	अभिमान, मादकता, मस्ती, मदोन्मत्तता, गर्व, घमण्ड, अज्ञान अहंकार इत्यादि अर्थ होते हैं ।	१–६–१
मदन	पु०	धतूरा, तुवर ।	१४–१–९
मदनयोग	पु०	मदजनक औषधि ।	१४–१–१६, १७, ४–४–१९, ४–७–१०, ४–१७–४४
मदनरस	पु०	विष आदि मादक द्रव्य से बनाया गया रस ।	१–१८–९, ४–३–२८, ४–५–१६, ११–१–२४, १३–३–५४,५६
मदिरा	स्त्री०	दुर्गा का नामान्तर यह समुद्रमन्थन से निकले चौदह रत्नों में एक थी ।	३–४–१७
मधुरा	(मदुरा)	मदुरा में बना वस्त्र । मदुरा की साड़ी आज भी समस्त भारत में चलती है ।	२–११–११५
मध्यभेदी (मध्यभेदिन्)	वि०	केन्द्र या मध्य से अलग सेना ।	१०–५–३२
मधुक	पु०	महुआ ।	१४–४–९
मधूच्छिष्ट	पु०	मोम ।	१३–४–१९
मध्यम	वि०	बिजिगीषु तथा शत्रु की सटी भूमि का शासक होने के कारण जो दोनों पर अनुग्रह करे उसे मध्यम राजा कहते हैं ।	६–२–२१, १२–२–६
मध्यम साहस	पु०	दो सौ से ५०० पण तक का दण्ड ।	३–१७–९
मध्यमस्थायिन्	वि०	बीच में स्थित ।	९–६–१७, १९
मनःशिला	सं०	मैनसिल ।	१४–१–११
मनु	पु०	मनुस्मृति के रचयिता, मनुष्यों के जनक ।	१४–३–२३, २६
मन्द	वि०	मन्दगति, निकृष्ट गति, मध्यम गतिगामी ।	२–३०–३०, २–३१–१८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
मन्त्रभेद	पु०	मन्त्र के आदेश काल के पूर्व ही मन्त्र का प्रकाशित या प्रकट हो जाना।	१–१५–१३, ४–११–११
मन्त्र युद्ध	सं०	नीतियुद्ध, बुद्धिबल से शत्रु को पराजित करने का उपक्रम।	७–१३–२९, ९–२–५, १२–१–१७,
मन्त्र शक्ति		मन्त्रों की शक्ति या बल या उपयोगिता।	७–१४–१६
मन्त्रसिद्धि	स्त्री०	मन्त्र ज्ञान से प्राप्त होने वाली शक्ति।	१–१५–२५
मन्त्रबद्ध	वि०	मन्त्र कील आदि से बँधा।	१–२०–२
मन्त्रिपरिषद्	स्त्री०	इसमें १२ सदस्य होते हैं।	५–३–१
मन्त्री	पु०	मन्त्रणा देने वाला।	५–३–३
मन्द		मध्यम।	२–३१–१८
मयूरपद	सं०	मयूर के पैर के समान जिसका आधार अथवा अधिष्ठान होता है।	२–१९–२५
मर्कट	पु०	बन्दर।	१४–३–६८, ७७
मर्यादा	स्त्री०	औचित्य एवं सीमा या सदाचरण का औचित्य।	१–७–८
महिष	पु०	कुन्तल देश में महीसुर या मैसूर का बना वस्त्र।	२–११–१५
मद्र	पु०	पुराने प्रजा व मध्य में रहती थी। प्राचीन कहार जाति या सियालकोट तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र तथा चाना के बीच रहता था।	११–४–५
मलय	पु०	माल अर्थात् मलय देश में उत्पन्न।	२–११–४९
मल्ल	पु०	मल्लों का राज्य दो भागों में विभाजित था, कुसीनारा तथा पावा। राज्य की राजधानी पटना में थी।	११–१–५
मषी	स्त्री०	कज्जल, स्याही।	१३–४–१९, ३०, १४–२–२०
मसूरक	वि०	मसूरी के आकार का।	२–११–४
मदन	पु०	विष आदि मादक द्रव्य।	१–१८–९
महाकच्छ	पु०	समुद्र, वरुण।	४–३–१२
महाकच्छवर्धन	सं०	इस व्रत में जल में खड़े रहकर महाकच्छ की पूजा की जाती है।	३–१६–३८, ४–३–१३
महाजन	पु०	बहुसंख्यक या पुरवासी या जनता।	९–६–५
महाभोग	पु०	प्रचुर, अधिक सहायता, अधिक सेवा, उपयोग लाभ।	७–९–१३
महादोष	नपुं०	महा अनर्थ, महान् आपत्ति तथा महान् उत्पात।	१–१५–३९, १–१७–३०
महानस	पु०	रसोई।	४–११–२१
महामात्रीय	वि०	राज्य का बड़ा अधिकारी, मुख्यमन्त्री।	२–५–५
महापात्र	नपुं०	प्रधानमन्त्री।	५–६–३५
महाराजी	स्त्री०	एक प्रकार की वानस्पतिक औषधि।	१४–४–३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
महासार	पु०	बहुमूल्य वस्तु।	७-१२-१६
महापुर	सं०	एक प्रमुख स्थान।	१४-३-४३
मांस	सं०	गाय, बैल, वृषभ आदि शाकाहारी होते हैं।	२-२९-४३, २-३०-१८, २-३१-१३
मागध	वि०	वैश्य द्वारा क्षत्राणि से उत्पन्न पुत्र।	३-६-१४
माणव	पु०	दुष्ट युवक, अपराधी, परस्त्रीगामी।	४-५-१
माणवविद्या	स्त्री०	सम्मोहन विद्या, (पाणिनि पर पतञ्जलि भाष्य)।	४-५-१
मातृका	स्त्री०	श्रोत, गर्भ।	७-६-४१, २-२३-२, २-२७-५, १७
मात्स्यन्याय	पु०	बड़ी मछलियाँ छोटी मछलियों को बिना उनके कोई अपराध किये खा जाती है।	१-४-१३, १-१३-५
माधुर्य	पु०	भाषा मधुर, नीरस भाषा, एवं कर्कश शब्दों का अभाव हो।	२-१०-६
मान	पु०	अपनी बुद्धिमत्ता का अभिमान करना, इसका अन्य अर्थ-आदर, प्रतिष्ठा, आत्मसम्मान, अभिमान, स्वाभिमान है।	१-६-१
मानकामः	पु०	जो दूसरे लोगों के मान की कामना रखता हो, वह व्यक्ति।	१-१४-५
मानव्याजी	स्त्री०	राजकर, वह कमीशन, जो तोलने पर दिया जाता है।	२-१६-१०
मानश्राव	पु०	द्रवों को खरीदते समय कुल वजन का पचासवाँ भाग अधिक ले, क्योंकि मापते समय कुछ द्रव बर्तन में लगा ही रहता है।	२-१९-४४
मानाध्यक्ष	पु०	देशकाल का अधीक्षक और ज्ञाता।	२-२०-१
मानुषाग्नि	पु०	मनुष्य की हड्डी के खर्पण से उत्पन्न अग्नि	१-२०-४
मानुषहीन	वि०	नपुंसक, पौरुषहीन, प्रजनन शक्ति रहित।	३-६-९
मानुषोपेत	वि०	पुंसत्वधर्म से युक्त या नपुंसक न हो, प्रजनन शक्ति युक्त।	३-६-१२
मापक	पु०	माप अधिकारी, नापने वाला, या दिलाने वाला।	२-१५-६३
मायक	पु०	नापने वाला या तोलने वाला।	१५-६३, ४-२-२०
माया	स्त्री०	इन्द्रजाल, मायायोग, जादू टोना।	१०-६-४७
मायागत	सं०	अवास्तविकता, भ्रम है। माया को भय की पत्नी तथा मृत्यु की माता कहा गया है।	१-१२-१
मायायोगविद्	पु०	मोहादि प्रयोग तथा मन्त्रौषधि प्रयोग को जाननेवाला।	१-१९-३२, ४-३-११, ४०, ४४
मार्ग	पु०	पद्धति, रीति, प्रणाली, सड़क, रास्ता, पथ।	२-३०-४०
मार्गण	सं०	याचना करना, प्रार्थना करना, निवेदन करना, खोजना, तलाश करना, गवेषणा करना।	२-६-२०, ४-७-२४
मार्गयुक्	वि०	शिकार योग्य।	२-२-३, २-३२-६
मार्गदेशिक	वि०	मार्ग दर्शन के लिए उपयोगी।	९-२-८
मार्गपत्र	वि०	क्रम से या उचित प्रकार से।	४-९-१५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
मार्गानुसार	पु०	शत्रु को पीछा करने से मार्ग विरत करना या बदलना पीछे पहुँचकर उसका पीछा करना।	१०-४-१३
माला	स्त्री०	ऊँची या उठी भूमि, पठार, पहाड़ी।	३-१०-२१
मालाकार	पु०	मालाकार, माली; पुष्प विक्रेता।	१-२१-१३
मालेयक	पु०	मलय पर्वत अथवा मलय के एक भाग या करजीवन से उत्पन्न।	२-११-२८
माष	पु०	उर्द।	१४-२-३
माषक	पु०	सुवर्ण मुद्रा का सोलहवाँ भाग एक माषा होता है।	१९-२, ५, २-१२-२४
माहानसिक	पु०	पाकशाला का अधिकृत पुरुष, समय एवं शरीर के अनुसार उचित आहार का प्रबन्धक।	१९-२३, २-२१-४
मित्राभियोगिनः	पु०	मित्र पर आक्रमण करने वाला।	७-१३-१४
मिथ्याचार	पु०	मिथ्या उक्तियों से सदाचार से वंचित व्यक्ति।	१-१४-२
मित्र व्यञ्जना	स्त्री०	मित्रबना कपटी।	९-५-२१, ९-५-२७
मित्रभाविन्	वि०	सम्बन्धियों से मिला या सम्बन्धियों से सिद्ध करने योग्य।	७-१८-२९, ७-४-७, ७-९-४३
मित्रसन्धि	पु०	मित्रों के साथ की जाने वाली सन्धि।	७-९-१
मित्रबल	पु०	मित्रों का बल।	९-२-५
मित्रसम्पद	स्त्री०	मित्र सम्पद् से सम्पन्न।	६-१-१२
मिथः	अ०	परस्पर।	५-४-१२
मुखलवण	सं०	सैन्धव (सेन्धा) नमक	३-२९-४३
मुक्तायष्टि	सं०	मुक्तामाला या मोतियों की लड़ी।	२-११-६
मुख	स०	आयमुख या आयशरीर।	६-६-१०, २-७-३१, २-८-३१, २-१२-३६
मुख्य	पु०	प्रधान नागरिक या प्रधान व्यक्ति।	१-१२-२५, १-१६-७, १-१८-१३, ५-६-७
मुण्ड	पु०	फाटक जिसका शिखर खुला रहता है।	२-३-३२, १०-३-३९
मुण्डन	पु०	चूड़ाकरण	१-५-७
मुण्डानीक	पु०	बिना किसी शिविर की सेना।	१०-३-३९
मुद्रिका	स्त्री०	अंगुठी।	१४-३-८५
मुद्रा	स्त्री०	शीलमोहर, अधिकार पत्र।	१-२०-२३, २-३१-२, २६, ५-३-४१. ११-१-२५, २-३४-१, २-३६-३८, ५-३-३८,
मुद्राध्यक्ष	पु०	पासपोर्ट का विभागाध्यक्ष। राजकीय मुद्राङ्कित कागज पत्र का प्रधान अधिकारी।	२-३४-१
मुरजक	सं०	मृदंग या कपि शीर्ष की तरह।	२-३-७
मुशुण्ढी	स्त्री०	गदा जिसमें कांटे गड़े रहते है।	२-३-३४
मुष्टि	पु०	अन्न या अनाज बोना।	९-१-३४, १३-४-६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
मुष्टिका	स्त्री०	हथौड़ी ।	
मूकमूषा	स्त्री०	स्वर्ण घरिया में पहले से कोई वस्तु रखी रहती है । घरिया के तल से सोने का नीचे टपक जाना ।	४-४-२० २-१४-२३
मूढ़गर्भ	वि०	जब धातु का परिमाण ज्ञात नहीं होता	२-१२-८
मूत	वि०	तृण आदि का बन्धन, घास का बीना या बना या बोरा, बोरी का थैला ।	२-१५-६४
मूक	वि०	गूँगा ।	१४-१-२
मूर्च्छित	वि०	संज्ञाहीन, चेतनारहित, जड़, प्रचंड किया हुआ, तीव्र किया हुआ, उद्विग्न, व्याकुल ।	२-१३-५१
मूलअर्थ	पु०	धार्मिक कृत्यअर्थ से होता है । धार्मिक कृत्य अर्थहीन व्यक्ति नहीं कर सकता ।	१-७-७
मूलकर्म(मूलकर्मन्)	सं०	जड़ या किसी वस्तु का सबसे नीचे का किनारा या छोर ।	४-४-१४
मूलवाप	पु०	जड़ से बोना, या जड़ लगाकर पौधा उगाना या रोपना ।	२-६-५
मूलहर	वि०	मूलधन का हरण करने वाला, पैतृक सम्पत्ति का अपव्यय या नष्टकर्ता ।	२-९-२०, २१, ७-१३-१३, ५-१-११
मूलाट	पु०	मट्ठा के समान रंग वाला अथवा मूलाटी पुष्पवर्ण सदृश ।	२-११-३२
मूलाटी	स्त्री०	तैल और दही रंग का; मुलेठी के पुष्प वर्ण जैसा ।	२-११-३९
मूषिककर	पु०	चूहों पर कर ।	४-३-२४
मूत्रपुरीष	पु०	पेशाब एवं टट्टी ।	१४-१-१३
मृतकल्प	वि०	मरे हुए के समान ।	३-१९-१३
मृतकवासवा	स्त्री०	मृतक का वस्त्र ।	१४-३-७३
मृत्युकूट	सं०	मृत्यु का जाल या फन्दा ।	१३-१-१६
मृगचर्म	पु०	कृष्ण मृगचर्म की महत्ता है कृष्ण मृग चर्म के आसन पर पूजा किया जाता है ।	१-३-११
मेकल	पु०	यह पर्वत श्रेणी मध्यप्रदेश में है ।	२-१९-१०
मेण्ढक	सं०	मेष ।	२-३-१६
मेथीप्रतीत	स्त्री०	दीवार, घेरा या पंक्ति, कँटीले शाखाओं की अवलि ।	१०-१-५
मेदक	पु०	इसका अर्थ टोकरी या खुदाई करने वाला श्रमिक भी किया गया है ।	२-२४-३, २-२५-१७
मैरेय	पु०	एक प्रकार की शराब, सुरासार गुण विशिष्ट शराब का नाम है ।	२-२५-२२
मोक्ष	पु०	तलाक, विवाह निराकरण	३-३-१६
मोक्षणदा	वि०	मुक्त करना ।	१०-४-१३
मोढ़	पु०	हथिनी जैसे छोटे दाँत वाले ।	२-३१-१०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
मोहनगृह	सं०	भूल भूलैया, भ्रम में डालने वाला गृह ।	१-२०-२
मौल	वि०	पारम्परिक सेना ।	९-२-२, १४, १२-१-१०
मौहूर्तिक	वि०	त्रिकालज्ञ, अथवा कालत्रय वृत्तज्ञ ।	१-१३-२३, १-१९-२३, १३-३-२३
म्लेच्छ	पु०	किरात, शवर आदि । म्लेच्छ का शाब्दिक अर्थ असभ्य, अनार्य, संस्कृत भाषा न बोलने वाले या हिन्दू पद्धति न मानने वाले ।	१-१२-२१, ३-१३-३ ७-१०-१६, ७-१४-२७
		य	
यज्ञ	पु०	याग या मख, यज्ञ सम्बन्धी कृत्य, पूजा का कार्य	१३-२-४६
यव	सं०	जौ ।	१४-२-३
यवक	सं०	खाद्योपयोगी धान्य ।	१४-१-१६
यवस्	सं०	घास, चारा, यवसशब्द का प्रयोग हरे गन्ने, टहनी घास फूस के लिए किया जाता है ।	२-२१-१, ९-१-३७, १०-२-१७, १३-४-१३
यत्किचन	अ०	अपनी इच्छानुसार या बिना-विचारे काम करने वाला ।	७-११-३५
यत्नोपचार्यं	वि०	प्रयत्न से उपचार करना ।	४-१-१९
यन्त्र	सं०	कूटने की मशीन या काठ का पिटना ।	२-१५-६२, २-१८-१, १०-६-४८ १-२०-२, २-३-३४, ३-५-२
यन्त्रिक	पु०	कर्मकार, शिल्पकार, जो युद्ध यन्त्र बनाता है ।	१०-३-४४
यम	पु०	यम नाम के अनेक पुरुषों का उल्लेख मिलता है, ऋग्वेद में उसको मृतकों पर शासन करने वाला राजा कहा गया है ।	१-१३-१०
यमक	वि०	दो दाने मिले हुए, जुड़वा ।	२-११-४, २-१४-२९
यमुपवहृत्य	वि०	जो राजस्व का दूसरों के साथ उपयोग करते हैं ।	२-७-४
यातव्य	पु०	राजा जिसके विरुद्ध अभियान करना आवश्यक है ।	६-२-१६, ७-५-१, ७-१३-२१
यातव्या	स्त्री०	सैनिक अभियान ।	९-१-५२
यातुधान	पु०	राक्षस शब्द वाचक, औषधि का एक भेद है ।	१४-१-६
यातु	पु०	चालक, सारथी, महावत ।	४-१३-१७, २२, २५
यात्रा	स्त्री०	मंदिरस्थ देवताओं के लिए समाज में किया गया मेला या पर्व ।	१-१६-२९, ९-१-३४, १-२१-२८, ७-१५-२२, १२-५-१, १३-२-४५
यात्रा (यातव्या)	पु०	सैनिक अभियान ।	९-१-५२
यान	सं०	अभियान ।	७-१-९
यान	सं०	शिविका, शकटादि । शत्रु पर आक्रमण भी अर्थ किया गया है ।	१-२१-१८
यानपात्र	सं०	व्यापारिक जहाज या नाव ।	१-१८-९

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
यापन	सं०	प्राप्त करने अर्थ में है।	
यामतूर्य	सं०	मार्ग में जन संचार निषेध सूचक रात्रि का तूर्य घोष।	७-१४-१०
यायात्	वि०	आक्रमण, अभियान मार्च।	२-३६-३४
यावज्जीविक	वि०	जब तक जीवित रहे या जीवन पर्यन्त।	७-[illegible]-१६
यावत्कालिक	वि०	स्वल्पकाल के लिए प्राप्त अश्व।	३-१८-११
युग्म	पु०	सम या जूस।	१-३०-१
युक्त	पु०	प्रधान अधिकारी।	१०-५-५७ २-५-१६, २-८-३-२३, २-९-३३ ३४, ३-१०-१७, ५-३-१७
युगपिञ्जन	सं०	अशिक्षित पशुओं के साथ शिक्षित पशुओं को रखना बाँधना।	२-१९-३४।
युग्य	पु०	जोड़ी या वह वाहन जिसमें घोड़े या वैल दो पशु एक साथ साथ जुड़े हो।	७-४-१५, ७-५-३३, ७-१५-८,
युवराज	पु०	प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी, राज्याधिकारी, राजकुमार, राजा का उत्तराधिकारी पुत्र।	१-१२-६
योग	पु०	अभिचार वृथा करना, कपट उपाय का प्रयोग, व्यावहारिक प्रयोग।	१-१८-९, १३-३-५४, ५६, १-५-१६, १-१६-३४, ५-१ ५४, ५-६-४८, ७-६-४१, ९-१-१५, १२-४-२९
योग क्षेम	पु०	अलब्ध का लाभ योग, लब्ध का परिरक्षण क्षेम।	१-४-३, १-५-२,
योगक्षेमावह	ि०	पुरुषार्थ से लाभ की प्राप्ति और उसकी रक्षा।	१-५-२, १-१३-७
योगदर्शन	सं०	अलौकिक या दुर्वोध या प्रच्छन्न प्रदर्शन।	५-२-४५, १३-२-३८
योगपान	सं०	विरस द्रव्य युक्त, मद्यपान, विरेचनीय औषधियुक्त पेय, औषधिरस के नाम पर विष मिश्रित मदिरापान।	१-१७-३६
योगपुरुष	पु०	तीक्ष्ण, रसादि।	१-२१-२९, ५-२-३२
योगवामन	सं०	किसी कपटी द्वारा शत्रु को वाध्य करना।	१२-२-८, १२-४-९ १३-२,
योगविक्रय	पु०	चालाकी से बेचना, गुप्त रूप से वेचना, प्रतारणा, वंचना।	५-३-४४
योगविद	पु०	मन्त्रौषधि योग का अर्थ के लिये विक्रय करना।	१-९१-३२
योगसुरा	स्त्री०	मिश्रित शराब या मादक द्रव्य।	४-५-१०, १७
योगस्त्री	स्त्री०	गुप्त सेवा में रत स्त्री।	११-१-४२,
योगाग्नि	पु०	विषैली आग।	१२-४-२७
योगाञ्जन	सं०	विषयुक्त सुरमा या अञ्जन।	४-१०-१३
योगानुविधायिन्	वि०	किसी वस्तु को मिश्रित कर उसकी सुगन्धि रक्षित की जाती है।	२-११-७१
योग्या	स्त्री०	व्यायाम, ड्रिल।	२-१८-१८, २-३३-६, ५-३-३५
योगाचार्य	पु०	कुशल शिक्षक।	२-३०-४२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
योजन	नपुं०	चार कोस या आठ मील ।	९–१–१८, १०–२–१२, १२–५–१३
योनिपोषक	पु०	पशु तथा पक्षी आदि के गर्भाधान करानेवाले जिनको कुलधारक कहा जाता है ।	५–२–२९, ५–३–१२
यौन	वि०	वैवाहिक, विवाह सम्बन्धी ।	२–१०–५०, ४–७–२८
यौनानुबन्ध	पु०	विवाहादि सम्बन्ध ।	२–१०–५
योनि	स्त्री०	मूल कारण, स्रोत ।	७–१–१
योनिबंध	पु०	स्त्री, मादा प्राणी का वध ।	१३–५–१३
योजना	स्त्री०	मिलाना, जोड़ना, व्यवस्था, आयोजन, कोई काम करने का विचार ।	१५–१–८

र

रक्ष	पर०	दृश्य रक्षक एवं किले में रहने वाले अदृश्य गुप्तचर ।	१–१६–३५, ११–१–५५
रक्षण	सं०	रक्षा करना ।	१–१७–२, ३, ४
रक्षा	स्त्री०	यहाँ दुर्ग के बुर्ज, खाई आदि की सुरक्षा व्यवस्था से तात्पर्य है ।	२–३६–४३
रक्षी	पु०	रक्षक आदि पार्टी ।	१–१२–२५
रक्षाविधान	सं०	प्रजा की रक्षा का विधान ।	१–१९–९, ९–४-८, १२–५–३२, १३–४–१६
रक्षिन्	पु०	रक्षा करने वाला अर्थात् गार्ड या रक्षक ।	१–१६–३५, २–३६–४०
रङ्गोपजीवी	पु०	रंगशाला या रंगमंच द्वारा जीविका अर्जन करने वाला ।	२–२७–२८, २९
रजक	पु०	धोबी ।	१–२१–१३
रज्जु	पु०	ग्राम या क्षेत्र को रस्सी से नापकर सीमा निश्चित करने का कर, भूमि सर्वेक्षण कर ।	२–६–३
रज्जुभाण्ड	सं०	रज्जुनिर्माणोपयोगो ।	२–१७–८
रज्जुवर्तक	पु०	रज्जु या डोरी बनाने या बटने वालों की एक जाति है ।	२–२३–१७, २–२४–३
रत्न	पु०	रत्न में सार एवं फल्गु दोनों आते हैं ।	२–११–१
रथबल	पु०	रथ सेना ।	९–२–२७
रथव्यूह	पु०	घेराबन्दी के साथ सेना या सेना की रचना ।	१०–५–१३
रथकर्म	नपुं०	रथ कार्य ।	१०–४–१५
रथकार	पु०	रथ बनाने वाला, बढ़ई ।	३–६–१४
रथिक	पु०	रथ पर सवारी करने वाला, रथ का स्वामी, रथचर्या शिक्षक ।	२–३२–६, ५–३–१२
रथाध्यक्ष	पु०	युद्ध के लिये साज-सज्जा तथा उपकरणों का संग्रह करने वाला ।	२–५–३३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
रथ्य	वि०	रथ वहन करने वाले अश्वादि ।	२–३३–६
रन्ध	पु०	द्वेष का कारणभूत अंश ।	१–१६–२४, ८–५–२०
रविसगन्ध	पु०	सूर्य के समान ।	१४–३–६१
रस	पु०	विष ।	५–१–७, ३१, ९–५–१५, ११–१–३८, २–१२–२
रसद	पु०	विष प्रदायी व्यक्ति, विष देने वाला निर्दयी गुप्तचर ।	१–११–१, १–१२–३, ९
रसपाक	पु०	रसायन शास्त्र, रस विद्या, कीमियागिरी ।	२–१२–१
रसविद्ध	वि०	पारदयोग से काञ्चन रूप में प्राप्त सुवर्ण ।	२–१३–३, ७–१७–५१
राग	पु०	लाक्षादि रंजन पदार्थ ।	१–१८–८, १–२१–७
राङ्कव	सं०	रङ्कु नामक मृग का लोम ।	२–२३–८
राजकिल्विषिन्	पु०	विद्रोही, राजविरोधी कार्य का अपराधी ।	३–२–४८
राजवीजी		राजवंशी या राजवंश	५–११–२७
राजदायिक	सं०	राजकीय पुलिस ।	३–१२–४६
राजद्वारिक	वि०	राजा का द्वार खोलने वाला ।	५–२–५९
राजद्विष्ट	सं०	राजविद्रोह ।	३–३–३२
राजनिवेश	पु०	राजप्रासाद, राजवाड़ी, राजभवन ।	२–४–६
राजप्रकृति	स्त्री०	राज्य के मूलभूत १२ अंगों को बारह प्रकृति कहेंगे ।	६–२–२८
राजपरिग्रह	पु०	राजगृह सम्बन्धी कोषागार, अश्वशालादि ।	२–३६–२२, २८, ३६, ४–३–४, ४–९–८, ५–३–३६
राजप्रणिधि	पु०	राजा का दैनिक कृत्य या शासन या कर्तव्य ।	१–२–९, ५–६–५, ८–२–१५
राजभाग्य	सं०	राजा के पास से प्राप्त अर्थ विशेष ।	१–११–१९
राजमण्डल	सं०	राजाओं के कोश से या नगर एवं ग्रामों से प्राप्त आश्रय है ।	२–२७–२८
राजवर्ष	सं०	राजा के अभिषेक के दिन से प्रारम्भ होने वाला वर्ष ।	२–६–१२
राजर्षि	पु०	राजा होते हुए भी जिसका ऋषि तुल्य आचरण तथा व्यवहार होता है ।	१–७–१
राजमण्डल	पु०	नगर एवं ग्रामों से प्राप्त आय ।	२–२७–२८
राजबीजिन	वि०	राजवंशी या राजवंश ।	७–११–२६, २७
राजवास्तुक	सं०	राजा का निवास ।	१०–१–२
राजवृत्ति	स्त्री०	राजाओं से प्राप्त व्यवहार को राजवृत्ति कहा गया है ।	१–९–४
राजवृत्तिय	वि०	दण्ड-नीति के द्वारा प्रतिपाद्य राजव्यवहार ।	१–७–१
राजव्यञ्जन	पु०	राजा के समान वेषभूषा ।	१०–३–४२
राजवर्ष		राजा के अभिषेक से प्रारम्भ होने वाला वर्ष ।	२–६–१२
राजवृक्ष	पु०	अमिलताश, भद्र-चूड़ ।	१–४–१, २४
राजव्यसन	नपुं०	राजा के जीवन सम्बन्धी आपदाओं के विषय ।	१–१७–५१
राजधब्विन्	वि०	राजा की उपाधि धारण करने वाला ।	११–१–२०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
राजशब्दोपजीविन्	वि०	राज पदवीधारी ।	११-१-५
राजर्षि	पु०	राजकीय ऋषि के समान राजा ।	१-७-९
राजहार	पु०	राजा अपनी आय के लिए जिसे लेता है ।	२-६-१५
रात्रिचर	वि०	रात्रि में घूमनेवाला ।	१४-१-३
रात्रिदोष	पु०	रात्रि में होनेवाले अपराध, चोरी आदि ।	२-३६-११, ४२
रात्रिसत्त्र	पु०	रात्रि में घात करने का स्थान ।	८-४-४१, २-१-२५
रात्रि	स्त्री०	रात ।	१०-४-२
रात्रिचारिण	वि०	रात्रि में घूमने वाला ।	१४-१-३
राघा	स्त्री०	कृत्रिम सौन्दर्य, कृत्रिम चमक दमक ।	४-२-१६
राशिमूल	सं०	धान्य राशि का बचा अन्न ।	२-२४-३०, ५-२-११
रावण	पु०	रावण का अर्थ क्रन्दन शोक के कारण रोने वाला है ।	१-६-८
राष्ट्र	सं०	जनपद ।	१-१२-२२, १-१३-१५, १-१६-९, २-६-३, २-१५-३
राष्ट्रप्रमाण	पु०	शत्रु के अनुरूप कोशः विभाजन तथा लाभ में उत्तम का ग्रहण ।	१-१६-९
राष्ट्रमुख्य	वि०	राष्ट्र या जनपद का प्रधान व्यक्ति ।	१-१६-७
रिक्थ	पु०	उत्तराधिकार में प्राप्त सम्पत्ति, विरासत में मरणोपरान्त छोड़ी गयी सम्पत्ति ।	३-५-२२,३-५-१०
रूप	सं०	वस्तु, पशु, जीव ।	२-१३-५९, २-१४-२५, ४-६-३, २-२९-४, ६, ३-१०-२२, ३-१६-२३, ३-१७-१५, १६, २-१२-२८, ३०, ३५, २-१२-२४, ५-२-६१
रूपदर्शक	पु०	मुद्रा परीक्षक ।	२-५-१०. २-९-२८, २-१२-२५, ४-१-४४
रूपदासी	स्त्री०	रूपद्वारा आजीविका ग्रहण करने वाली अर्थात् कुमारी, लड़की, पुत्री ।	२-२७-१७
रूपाजीवा	स्त्री०	वेश्या, अभिनेत्री. यहाँ अन्तःपुर की सेविका के रूप में शब्द का प्रयोग किया गया है।	१-२०-२०, २-४-११, २-२२-२, २-२७-२७, २-३६-८, ३-२०-१५, १०-१-१०
रूपाभिग्रह	पु०	चोरी के सामान के कारण पकड़ा गया ।	४-६-३
रूपिक	सं०	सौ पण में से आठ का ग्रहण रूपिक अर्थात् मुद्रा बनाने का पारिश्रमिक ।	२-१२-२६, ३०, ३५, २-६-१०
रूप्य	सं०	सुन्दर ललित । चांदी या सोने का सिक्का ।	२-१२-५, ६
रोचक	पु०	दाल बनाना, दाल बनाने वाले, आज भी दाल बनाना व्यवसाय है ।	२-१५-८
रोचकयन्त्र	वि०	दाल कूटने की मशीन या काठ का पिटना ।	२-१५-६२
रोचनी	स्त्री०	आटा पीसने की चक्की या जाँता ।	३-८-११

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
रोचनी दृषद्	स्त्री०	पीसने की चक्की या सिल ।	सं०
रोध	पु०	आसानी से रोका जा सके ।	२–१५–६२, २–१८–११
रौम	सं०	जानवरों के ऊन का कपड़ा ।	४–९–२१, ७–१०–२१
रोमण	नपु०	मनुष्य और अन्य जीव जन्तुओं के शरीर पर होने वाले बाल ।	५–२–१४
रोषदान	नपुं०	गुस्सा या क्रोध करके दान देना ।	१४-३–७
			३–१६–७

ल

लक्षण	सं०	हस्त या सामुद्रिक शास्त्र ।	१–१२–१
लक्षणाध्यक्ष	पु०	टकसाल का प्रमुख अधिकारी ।	२–१२–३४
लक्षण्य	वि०	सन्देहात्मक चिह्नयुक्त ।	५–६–४१
लक्षित	वि०	मुद्राङ्कित करना ।	२–१३–३६, २–२५–४
लक्ष्य	पु०	कौटिल्य राजा एवं राज महिषी को किसी प्रकार की परीक्षा में सम्मिलित न कर उन्हें निरपेक्ष रखता है ।	१–१०–१७
लगुड	पु०	लगुड़, दण्ड या छोटी गदा ।	९–२–२७
लग्नक	वि०	क्राममत ।	१४–३–८५
लाँगली	स्त्री०	जल पीपल पृथक्पर्णी तथा नारिकेल भी कहते है ।	१४–१–१७
लघिष्ठः	वि०	हल्का या छोटा, लघु ।	९–६–५७
लघुसमुत्थ, लघूत्थान	वि०	कम समय में सेना का सज्जीकरण करना ।	६–१–१२, ७–९–१८, ३८,
लङ्घन	नपुं०	छलांग मारना ।	२–३०–३२, ३६
लब्धावकाश	पु०	जिसे किसी बात का अवसर मिल गया हो ।	५–४–४
लम्बरा	स्त्री०	लोई या अलवान, इसका अर्थ परदा भी किया गया है ।	२–११–१०१
लम्भ	पु०	प्राप्ति, लाभ या विजय ।	८–१–५१, १३–५–२, ७–१०–२५, २६,
लयन	सं०	टंकन कर्म द्वारा शिला निर्मित भाग ।	३–१२–२
लव	पु०	एक पौधा, जो काटने पर बढ़ता जाता है । इसका अर्थ काटने योग्य भी किया गया है ।	२–२४–२२
लवणाध्यक्ष	पु०	नमक तैयार करने का प्रमुख ।	२–१२–२८
लावु	पु०	तुम्बी, लौकी ।	१४–२–४
लाक्ष	पु०	लाख, बालक ।	१४–४–९
लाभ	पु०	निश्चित समय यथा पक्ष मास आदि के पश्चात् मिलने वाला लाभ ।	२–६–२५, २–७–३२ ७–४–३, १२
लिंग	पु०	स्त्रीलिङ्ग-पुलिङ्गादि से रहित ।	२–१०–१७, २–२९–३६, ३–३–१४
लिच्छवी	पु०	पटना के उत्तर वैशाली उनकी राजधानी थी ।	११–१–५
लुब्धक	पु०	व्याघ, शिकारी, बहेलिया ।	१–१४–४, ३–४–२२
लेखक	पु०	लिखने वाला ।	३–१०–३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
लेखजः	पु०	लेख का विषय ।	२-१०-२४, ३८
लेण्ढ	सं०	मोहर ।	२-२-१०, २-१२-८, १४-३-५
लोकयात्रा	स्त्री०	लौकिक व्यवहार में निपुण ।	१-२-५, ५-४-१, १-४-४५, १५-१-३०
लोकयात्राविद्	स्त्री०	लोक व्यवहार आदि में चतुर ।	५-१-३०
लोकायत	सं०	सांख्य एवं योग आस्तिक दर्शनों का उदाहरण देने के पश्चात् ईश्वर विरोधी अर्थात् नास्तिक दर्शन का उल्लेख करना लेखक की न्याय एवं सन्तुलित विचारशैली का द्योतक है ।	१-२-१०
लोध्र	पु०	लोध ।	१४-४-७
लोप्त्र	सं०	चुरायी सम्पत्ति, या सामान या माल ।	४-५-१७, १३-३-५३
लोभ	पु०	लोलुपता, लालसा, लालच, अतितृष्णादि अर्थ होता है ।	१-६-१, १२-१-१०
लोभ विजयी	वि०	लोभ पर विजय प्राप्त करने वाला ।	१-६-१
लोहमुसलैः	वि०	लोहे का मूसर ।	१३-२-३१
लौल्य	पु०	चंचलता, अस्थिरता ।	७-६-३०
लोल	पु०	चंचलता अर्थात् चंचलमनस्कता ।	१-७-२

व

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वक	पु०	वकुला ।	१४-१-१५
वगुली	सं०,स्त्री०	चमगादड़ ।	१४-३-१, ६
वञ्जुल	पु०	वेत, नरकुल, तिनिस ।	१४-२-२७, २८
वज्जी	सं०	वज्जि, लिच्छिवी गणतन्त्र की राजधानी थी ।	११-८-५
वज्र	वि०	हीरा ।	७-१२-२४
वज्र व्यूह	पु०	सेना का वज्राकार की स्थापना वज्र व्युह कहलाता है ।	१०-६-३५
वट	पु०	बरगद ।	१४-२-१६
वत्स	पु०	गोवत्स अर्थात् गाय का बछड़ा ।	१-१७-१६
वत्सनाभ	पु०	एक प्रकार का विष ।	१४-१-२९
वक्तव्य	वि०	कहा हुआ या वादीका वक्तव्य ।	३-१-४७
वणिक्पथ	पु०	विदेशी तथा स्वदेशी सामान के परिवहन हेतु मार्ग का निर्माण ।	२-.-१९, ३८, २-६-८, ७-१२-१७, ७-१-१, ९-४-८
वत्स स्थान	पु०	बछड़े के बन्धन का स्थान ।	१-१७-१५, १६
वधावध	पु०	जो हाथी सूड़ या दाँत या पैर या शरीर के किसी भाग से मनुष्य या किसी पशु का वध करदे ।	२-३२-४
वनविचय	पु०	वन का अन्वेषण या परीक्षण या संशोधन, या वन का निराकरण करना ।	१०-४-१३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	
विषहर	वि०	विष हरण करने वाला ।	सं०
वद्धि	स्त्री०	मनुष्य युक्त ही ।	१४-४-१२
वप्र	पु०	खाई की मिट्टी, कच्ची भित्ति, टीला, नदी तट ।	७-११-२४ २-३-५, १२-१-१
वनचर	पु०	वन में चलने वाला ।	२-२-१०
वमन	सं०	दीर्घकाल के लिए ऐसे स्थान पर भेजना जहाँ अन्न सुलभ हो ।	२-१-१, ४-३-१८, १३-४-७
वयोः	स्त्री०	विहंगम, पक्षी ।	
वयःस्थता	स्त्री०	युवावस्था ।	१-२१-५
वपुचार	पु०	देवी का नाम है ।	१०-५-४२
वयूध्वा	पु०	यह भी देवी की संज्ञा है ।	१४-३-३६
वरकार	पु०	उत्तम कार्य, श्रेष्ठ कार्य ।	४-३-३६
वरण	सं०	चुनना या वरण नामक एक वृक्ष ।	२-१०-३९
वरत्रा	स्त्री०	पगही, मोटा रस्सा या नार या कूप से जल खींचने या चारपायी के उनचन की डोरी आदि ।	४-१२-८, १४-४-३४ २-२३-१८, १९
वरुण	पु०	समुद्र के जल देवता, पश्चिम के दिग्पाल ।	१३-१-६
वर्ग	पु०	समास, संश्लिष्ट, मिश्रण, संयुक्त ।	२०-१०-२१, २-१०-६२
वर्च	पु०	मलमूत्र त्याग स्थान ।	२-५-६, ३-८-२८
वर्ण	पु०	लिखित रूप को वर्ण कहते हैं, वर्ण ह्रस्व-दीर्घ दो प्रकार का होता है ।	१-२१-७, २-८-२१, २-१०-१३ २-२९-३९, २-१५-५, २-३२-६, ३-९-३५, ४-२-२२, २-१४-५, ३-१२-५३, ४-१-३०, १५-१-९
वर्णक	पु०	सुवर्ण की मुद्रा ।	२-१५-२, २-११-९८
वर्णिका	स्त्री०	स्वर्ण मुद्रा ।	२-१३-१७
वर्तन	सं०	कोल्हू में घूमने या घूमते चलना ।	२-२९-३४
वर्तनी	स्त्री०	पथकर ।	२-२१-२४, २-२८-२५, २-३४-१२
वर्धकि	पु०	बढ़ई, लोहार ।	५-३-१२, १०-१-१, १७
वर्धन(महाकच्छवर्धन)	सं०	यह व्रत जल में खड़े रहकर महाकच्छ की पूजा की जाती है ।	३-१६-३८, ४-३-१५
वर्षवर	पु०	नपुंसक, खोजा, हिजड़ा ।	१२-५-५१, १-२०-२१, १-२१-१
वर्षमान	सं०	वर्षामापक यन्त्र ।	२-५-७
वर्षवारण	वि०	वर्षा से रक्षा करने वाला कम्बल ।	२-११-१००
वलय	पु०	दो प्रकार सकरे मार्ग से जाना वलय कहलाता है ।	१०-६-२१
वल व्यसनकाल	पु०	सेना की आपदा या संकट ।	१० -३-३
वलावाप	पु०	नवीन सेना की टुकड़ियों का अनुप्रवेश ।	८-५-१९
वला	सं०	खरेटी ।	१४-४-२

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वलि	पु०	विरोचन का पुत्र तथा प्रह्लाद का पौत्र था।	१४–३–१९
वलित	वि०	एक देवी प्रतीत होती हैं।	१४–३–२६
वलीवर्द	वि०	शक्ति या ताकत युक्त बैल।	२–१–२२, २–३०–३२,३३
वल्गन	क्रि०	मण्डलाकार घूमना।	५–८–८७
वल्क	पु०	वृक्षत्वक्।	५–२–१४, १३–४–२१
वल्मीकि	वि०	बाँबी, दीमकों का बनाया गया मिट्टी का ढूहा या बिमोट।	३–२–६
वल्लभावरुद्ध	स्त्री०	राजवल्लभ द्वारा वर्जित अन्तः प्रवेश, राजप्रियजनों के कारण राजस्थान में प्रवेश अवरुद्ध किया गया व्यक्ति।	१–१४–२
वल्ली	स्त्री०	अजमोदा, अजवायन, देशी अजवायन की लता होती है।	१४–४–४
वशोपनयन	सं०	वश में करने का उपाय।	१–४–६
वश्य	वि०	नियन्त्रण या वश में किया जाने योग्य या वश में किया दास या आश्रित।	७–५–४४, ७–९–९,३८
वर्षधर	पु०	नपुंसक, खोजा, हिजड़ा।	१२–५–५१
वसतिभोग	पु०	गणिका से भोग करने या उसके यहाँ ठहरने के बदले दिया गया धन या वेतन।	२–२७–२१
वसा	स्त्री०	मेद, चर्बी, मज्जा, पशु मज्जा।	१४–२–२७
वाहिन	पु०	बोझा ढोने वाला बैल।	२–२९–८
वाक्य	नपुं०	विवरण या कथन।	१५–१–१७
वाक्ययोजना	नपुं०	विस्तृत उक्तियों को आयोजित कर कोई काम करने का विचार।	१५–१–८
वाक्पारुष	पु०	मानहानि अपशब्द या गाली-गलौज।	३–१८–१
वाक्य विप्रेक्षपण	सं०	किसी के कुछ कहने पर ध्यान देना।	१–२१–८
वाक्यानुयोग	पु०	परिप्रश्न या परिपृच्छा बयान लेने से तात्पर्य है।	४–८–१८
वाक्यशेष	पु०	जिससे वाक्यब की समाप्ति हो।	१५–१–३८
वाक्यावक्षेपण	क्रि०	बात को बीच में काटना।	५–४–१०
वाक्संग	पु०	वाक्स्खलन बोलने में संकोच।	१–२१–८
वागुरिक	पु०	मृगबन्धन, वागुर का अर्थ जाल या फन्दा होता है।	२–१–६
वागुली	स्त्री०	चमगादण।	१४–३–१
वाग्जीवन	पु०	कथा वर्णन का पटु व्यक्ति, पेशेवर कहानी कहने वाले या वाणी द्वारा जीविका चलाने वाले।	१–१२–९, १–१८–१२, २–१–३४, ८–४–२१
वाग्दंड	पु०	वाक्पारुष्य।	३–३–९
वाचिक	सं०	जिसमें वचन के प्रमाण का कथन किया जाय, मौखिक या शाब्दिक समाचार या वचन प्रमाण सम्बन्धी।	२–१०–२२,४३
वाजि	पु०	अश्व।	१०–५–११
वाट	पु०	रक्षणस्थान, घेरा।	२–४–२५,२६, २–६–५,११, ४–१३–६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वातव्याधि	पु०	उद्धव ।	१–८–२०, ७–१–३
वास्तु	पु०	अचल सम्पत्ति या मकान बनाने योग्य भूमि ।	२–८–३२, ३–९–१९
वाद्य	पु०	वादकयन्त्र ।	१–१२–१३
वानकर्मान्त	पु०	सूत बनाने का कारखाना ।	२–२३–८
वानचित्र	वि०	बुनने के समय चित्रादि द्वारा, निष्पादित ।	२–११–९७
वानलटी	स्त्री०	घर का बरामदा या अटारी मकान की ऊपरी छत भी अर्थ किया गया है ।	३–८–१९
वाप	पु०	बीज बोना ।	७–११–१५
वामन	वि०	अल्पतनु, नाटा, बौना ।	१–१२–९
वार	पु०	वारी, पारी या अवशर ।	२–२७–४, ३–९–३८
वारण	पु०	एक वृक्ष या शीशम ।	१४–४–२, १४–४–४
वारयेत	क्रि०	निवारण कर ।	९–७–३१
वारवाण	पु०	एड़ी या घुटने तक लम्बा चोगा या आवरण ।	२–११–९८, २–१८–१७, ७–१२–१७
वाराह	सं०	सूकर, सूअर ।	१४–३–१३,६८
वारिपथ	पु०	जलमार्ग ।	२–१६–१,२४, ७–११–१७, ७–१२–१८
वारुणयोग	पु०	डुबकी लगाकर, देर तक बहुत दूर निकल जाना और वहाँ स्नान के लिए निमज्जित हो जाना ।	७–१७–४२,६०
वारुणी	स्त्री०	मदिरा, कदम्ब की मदिरा ।	१४–४–१
वार्ता	स्त्री०	कृषि, पशुपालन एवं वाणिज्यवार्ता (इकोनामिक्स) के अन्तर्गत आते अथवा प्रतिपादित होते हैं ।	१–१०–५, १–४–१
वार्ताशास्त्रोपजीवी	वि०	वृत्त, कृषि, वाणिज्य या अस्त्र-शस्त्र से जीविका चलाने वाले।	११–१–४
वालिश	पु०	मूर्खता या लड़कपना ।	७–१०–२१
वाल्लिक्य	वि०	लता या वेल से उत्पन्न होने वाले फल—जैसे, कद्दू, कुष्माण्ड, सेम, करेला, लौकी, परवल आदि ।	२–२४–१, २–२३–२
वासगृह	सं०	निवास गृह, तल्पगृह, घर का आन्तरिक कक्ष ।	
वासय्	पु०	मुलम्मा करना ।	२–११–४६
वास विग्य	पु०	निवास स्थान या ठहरने के स्थान का अन्वेषण या परीक्षण या निवास स्थानों का उपद्रव दूर करना ।	१०–४–१३
वासस	सं०	वस्त्र ।	१४–३–१४
वासितक	सं०	रसादि द्वारा जो वासितक या भावित या उजला किया जाय ।	२–१४–१७
वास्तु	पु०	अचल सम्पत्ति, इमारत बनाने का स्थान ।	३–८–१, २, २–३–१, २–४–१, ६, १०–१–१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वास्तुक	पु०	निर्माण में प्रवीण व्यक्ति, शिल्पी, वास्तुविद्या में निपुण या उत्तम।	१–२०–१, २–३–३, १०–१–१, २–१३–४३, २–१४–३५, ३९, ४६
वास्तुकच्छिद्र	पु०	राजगृह सम्बन्धी भूभाग का निम्न भाग, असमतल भूमि भी कुछ लोगों ने अर्थ किया है।	२–३–६, २–४–१६,
वाहन	पु०	अश्व-हस्त्यादि।	२–१–१८
वाह्यकोप	पु०	वाहरी विद्रोह, अन्तपाल, आटविक आदि द्वारा विद्रोह।	९–३–९, ९–९–३, २२
वाह्यविहार	पु०	पत्नी का बाहर सुख, अर्थात् भोग्यार्थं जाना।	३–३–११
विकार	पु०	परिवर्तन।	९–७–३
विकाल	पु०	संध्याकाल या असमय।	४–६–२
विकल्प	पु०	अमुक उपाय करना उचित होगा, विचार करना।	७–१६–४
विक्क	पु०	मातृ स्तनपायी बच्चा।	२–३१–१०, १६, २–३२–३
विकृति	स्त्री०	अमित्र प्रकृति, परिवर्तित, युक्त विरूपित, कुरूप।	७–१८–२
विक्रम	पु०	प्रकाश, कूटयुक्त व्यूह रचनादि।	१–१७–२८, १–१९–१५, १२–३–१५ ५–६–२५, ७–३–११, ९–१–५, १४–३–६०
विक्षिप्त	वि०	बिखरी हुई।	७–९–२२, ७–१५–१२, ८–५–१५, ९–२–११, ७–१७–६१
विक्षेप	पु०	कर्तव्य निर्वाह में विघ्न या सेना की बर्खास्तगी।	२–६–२१, २–१५–१०, ५–२–३५, ३–८–२१, २–१६–१
विगुण	वि०	गुणहीन, विरोधी होने से तात्पर्य है।	७–८–२२, ११–१–३, ४६, ५३
विग्रह	पु०	शत्रु के प्रति अपकार या द्रोहाचरण का नाम विग्रह है।	७–१–७, २–१०–२
विज्ञान	पु०	शिल्प एवं शास्त्र में लगने वाली बुद्धि अथवा किसी विषय का विशेष ज्ञान का नाम विज्ञान है।	१–५–५
विघात	पु०	छिन्न-भिन्न या नाश या आघात करना।	७–१४–२
विचय	पु०	अन्वेषण।	२–३६–१४, ४–१३–११, ५–१–२४, १०–४–१३, २–२५–१८
विजयव्यूह	पु०	शत्रु की सेना में उरस्थ की तरफ से आक्रमण करना विजय व्यूह कहलाता है।	१०–६–१५
विजानता	स्त्री०	चतुर।	५–४–१६
विजिगीषु	वि०	जीतने की इच्छा रखने वाला राजा।	६–२–१३, ७–३–१
वित्तः	पु०	धन, सम्पत्ति।	३–१३–७
विद्	वि०	द्वितीय बार पति ग्रहण करना।	३–२–२०, ३–४–३०, ३५
विदारी	स्त्री०	वृष्य कन्दा, क्षीर शुक्ला, इक्षुगन्धा।	१४–१–१०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
विदुल	सं०	जलवेत ।	१३–४–१६
विदूरथ	पु०	हर्षचरित के अनुसार राजा वृष्णिवंशीय था ।	१–२०–१६
विदेह	वि०	राजा जनक तथा राजा निमि का नाम विदेह था ।	१–६–५
विद्या	स्त्री०	विद्या चार प्रकार की कौटिल्य ने माना है ।	१५–१–१६
विद्यावृद्ध	वि०	विद्वान्, विद्या में पारंगत, ज्ञान में बढ़ा हुआ ।	१–५–११
विद्युतपातभस्म	पु०	विद्युत् आदि से जले वृक्ष आदि से सम्बन्धित ।	१–२०–४
विद्रव	पु०	भय या घबड़ाकर भाग जाना, पलायन ।	९–७–८२
विधा	स्त्री०	विवरण ।	२–१५–५०, २–२९–४५, २–३०–२५, २६, २–३१–५–१२, २–८–८७
विधातृक	पु०	आदत समाप्त करना ।	२–७–३२
विधानम्	पु०	विषयानुक्रमणिका से कुछ अधिक ।	१५–१–६
विधेयत्व	पु०	आज्ञानुसार ।	१०–५–४२
विनय	पु०	अनुशासन, नैतिक प्रशिक्षण, शिक्षा औचित्य, शिष्टाचार, शालीनता, विनम्रता, सौजन्यता आदि मानवोचित गुण अर्थ होते हैं ।	१–५–२, ३
विनियोग	पु०	प्रयोग, नियुक्ति, लगाना, उपयोग, सेवक ।	७–१२–११
विनिमय	पु०	अदला बदली, प्रतिदान ।	१३–४–३१
विनिपात	पु०	वाक्यभेद, समाचारों में भिन्नता के कारण अविश्वास करना, त्याग देना अथवा निगाह से गिरा देना ।	१–१२–१६, १–१५–४२, ९–३–३७, २–२४-४
विन्दमाना	स्त्री०	द्वितीय पति की पत्नी ।	३–४–३०
विन्दु	पु०	मृत सन्तान जन्म देने वाली ।	३–२–४५
विपत्ति	स्त्री०	विपत्ति में । श्री गणपति शास्त्री ने विपत्ति का अर्थ मरण किया है ।	३–१९–१५, ४–१–३, ५६
विपरीतः	वि०	उलटा या वैपरीत्य ।	९–५–२५, १५–१–३७
विपर्यय	पु०	कथित विषय के वैपरीत्य द्वारा किसी विषय का निर्देश करना ।	७–७–५
विपुला	स्त्री०	पुष्कल द्रव्य, सामग्री लेकर जुटे या जिस राजा के पास अस्त्र तथा युद्ध सामग्री अधिक रहती है ।	७–१५–४
विप्रकार	पु०	असद् व्यवहार या अपमान, अपकार, तिरस्कारयुक्त व्यवहार ।	३–३–१६, ३–४–१, १२–५–२३
विप्रकृत	वि०	जिसपर किसी विषय के कारण अपमानादि द्वारा अत्याचार स्वरूप विरुद्ध क्रिया का आरम्भ किया गया हो वह व्यक्ति ।	१–१४–३
विप्रतिबत्ति	स्त्री०	अनिश्चितता, नियमों का परस्पर विरुद्ध होना, विकृति ।	८–३–४५
विप्रस्थान	सं०	गलत रास्ता से जाना या मार्ग भूल जाना ।	१३–२–४८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
विप्रेक्षण	नपुं०	किसी के कुछ कहने पर ध्यान देना।	१–२१–८
विभाषित	वि०	शब्दों में घोषणा करना।	३–१२–५३, ७–१–३१
विभीषण	वि०	अत्यन्त भयानक।	७–६–४०, ७–१२–११
विभ्रम	पु०	अव्यवस्था या विप्लव।	३–११–१३, ३–१६–३०, ४–१२–३८
विभृयात्	वि०	भरण पोषण करे।	३–६–२१
विमानित	वि०	तिरस्कृत।	८–५–२
विमांस	सं०	बिना मांस।	४–१०–१४
वियत	पु०	प्रयत्नशील होना।	१–१०–२०, १–१७–२५
विरक्त	वि०	अनुरक्त, तल्लीन लगा हुआ।	७–५–१०
विराग	वि०	जामान्तर वैर से निवृत्त।	१–१७–४०, ७–५–३५
विरज्य	वि०	अर्थ शुक्ल वर्ण भी लिया गया है। चकोर की आँखें रंगीन होंगी तो स्वाभाविक है कि वे श्वेत या शुक्लवर्ण हो जायेंगी।	१–२०–८
विरक्त	वि०	प्रकृति वर्ग से विरक्त राजा। विरक्त प्रकृति के तीन विरक्त होते हैं।	७–१–१९
विरात्र	सं०	रात्रि मे अनुचित समय।	४–६–२, ४–१३–६
विरूढ़	वि०	अंकुरित।	१४–३–५
विरूप	वि०	रंग-रूप बदल जाना।	४–६–३, ७–१७–१५, १३–४–५२, १४–२–४, ५, २–१४–५२, ४–१–२६, २७
विरोचन	वि०	प्रह्लाद का पुत्र था, सप्तपातालों में से पाँचवें पाताल पर इसका अधिकार था।	१४–३–१९
विलंग	सं०	वायुविडंग।	१४–४–८
विलखाव	सं०	मूषक।	१४–३–२८
विलवण	सं०	कृत्रिम या घटिया या मिलावटी नमक।	२–१२–३२
विलुप्	हे०	लूटना।	१२–२–२८
विलोप	पु०	नष्ट होना, ध्वस्त होना।	२–१२–२, ७–४–२२, ८–४–१५, ९–२–९, १०, १०–३–१६
विवादपद	सं०	अदालती मुकदमे।	३–१६–३८, ४–७–१७, ११–१–१४
विवाह	पु०	सगोत्र विवाह वर्जित है।	१–३–९
विवादार्थ	पु०	कानूनी फैसला।	३–१–१९
विवीत	सं०	चारागाह, गोचर या चरभूमि।	२–२–१, २–६–३, २–३४–६, ३–१०–२, ८–४–३७
विवीताध्यक्ष	पु०	नगर के बाहर का अधिकारी।	२–३४–५
विशालाक्ष	सं०	बड़ी-बड़ी आँखों वाला।	१–१५–१८

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
विशालविजय	वि०	सेना की दोनों पक्षों की अत्यधिकता को विशाल विजय कहते हैं।	१०-६-१७
बिशिखा	स्त्री०	वह मार्ग जिस पर सुनारों एवं जौहरियों की दुकानें होती है।	२-१३-२
विश्वासघाती	वि०	यह एक प्रकार का परिघ होता था, जो नगर की दीवाल के बाहर रखा रहता है। स्पर्श करते ही शत्रु के ऊपर गिरकर उसे नष्ट कर देता था।	२-१८-५, १३-४-२०
विशिष्ट	वि०	विलक्षण, विशेष, असामान्य।	७-१५-३, ९-३-१७, ९-४-१
विशुद्धि	स्त्री०	शुद्धता, परिशोध।	१०-४-११
विषणालिक	वि०	नालिका।	२-११-१४
विषम	वि०	विपर्यय।	२-८-२१
विषम संवाध प्रवेश	पु०	काठिन्य युक्त प्रवेश।	१०-४-१४
विषमव्यूह	पु०	असामान्य सैन्य रचना।	१०-५-१७
विषवर्ग	पु०	विष प्रयोग से सम्बन्धित प्रकरण।	१४-१-२
विषमसन्धि	पु०	अक्षम के साथ सन्धि।	७-७-४, ७-९-५
विषमूल	नपुं०	कालकूट विष।	१४-१-१७
विषय	पु०	जिला, क्षेत्र।	४-१-१९
विष्कम्भ	पु०	विस्तार।	२-१०-२
विष्टि	स्त्री०	कर्मकर, श्रमिक, विशेष मजदूर, कारीगर एवं बेगारश्रम करने वाले व्यक्ति होते हैं।	१-४-१, २-१-१५, २-२५-६३, ९-२-९, १०-१-९,१७
विष्टिबन्धक	पु०	मजदूरों को जुटाने वाले कर्मकर संग्रहकारी।	५-१-१७
विसंवाद	पु०	भेद उत्पन्न करना।	७-८-४, ७-१४-४, ८-२-२४
विसंवादक	पु०	अपनी बात का निर्वाह न करने या बात देकत्र मुकर जाने वाला।	१३-५-६
विसंवादित	वि०	निष्कलीकृत, अस्वीकृत, निराश।	११-१-१७
विसरस्	सं०	जहाँ जल सूख जाता है।	२-२८-१
वीवध	पु०	अपने देश में अबाध रूप से आने वाली या अविच्छिन्न आजीव द्रव्य के आगम को कहते हैं।	१०-२-६
वृक	वि०	भेड़िया।	१४-३-१
वृक्षस्थान	नपुं०	उद्यानादि।	१-२०-१०
वृक्षाम्ल	पु०	इमली।	२-१५-१८
वृत्तिकाम	स्त्री०	पूर्ति की इच्छा से राजकार्य करने वाली भोगार्थिनी।	१-१२-४, १-१०-७
वृत्ति	स्त्री०	लोकानुसार, जीविका, जीवनचर्या, आचरण, व्यवहार, कार्य पद्धति व्यवसाय आदि अर्थ होता है।	१-७-१, ७-१६-१
वृत्त्युपकरण	स्त्री०	अपजीविका या पेशा के औजार का सामान प्रसाधन यथा सज्जा, सन्नाह, अन्न वस्त्र या पात्रादि सामान।	३-१-३१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वृतिसाम्य	स्त्री०	शत्रु पुत्र को भी दण्ड देना ।	१–१९–३३
वृद्धि	स्त्री०	बढ़ना, उत्कर्ष, प्रगति ।	७–१–२१
वृद्धिसंयोग	पु०	वृद्धों के साथ ।	७–१५–२, १५–१–७
वृश्चिक	पु०	बिच्छू ।	१४–३–७८
वृष	पु०	बैल या सांड़ ।	१४–३–८३
वृष्णि	वि०	यदुवंशीय क्षत्रिय थे ।	१–६–१०
वेश	वि०	वेश्या, चकलाखाना, वेश्यालय ।	११–१–८
वेतन	पु०	इसका शाब्दिक अर्थ वेतन ग्रहण करने वाला होता है, किन्तु यहाँ पशुओं की देखभाल करना अथवा वेतन के बदले अनुग्रह प्राप्त करना है ।	२–९–१
वेदांग	वि०	शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द एवं ज्योतिष वेद के अंग हैं ।	१–३–३
वेला	स्त्री०	वेला, समय, अवसर ।	५–६–३
वैदेहक	पु०	व्यापारी, साहूकार, नैगम, वणिज, वणिजक, पण्यजीवी, वणिक्, आपणिक क्रय-विक्रयकर्ता—व्यापारी ।	१–११–१, ३–१०–१
वैदेहक व्यञ्जन	पु०	वणिक् वेशधारी गुप्तचर ।	१–१६–२४
वैरत्य	पु०	हर्ष चरित में रन्तिदेव नाम दिया गया है । वृहत संहिता के अनुसार काशीराज की हत्या विषैले नूपुर के कारण की गयी थी ।	१–२०–१६
व्रजवासी	पु०	गोपालक या पशुपालक ।	१–१२–२२
व्यंजन	पु०	वेश धारण करने वाला ।	४–४–३३
व्यय	पु०	धन, धान्यादि का व्यय ।	७–२–२
व्यसन	नपुं०	स्त्रीपानादि रूप व्यसन में आसक्त, दुर्व्यसन ग्रस्त, दुश्चरित्र व्यक्ति ।	१–१४–४, ३–१६–३० ७–१–३३
व्याधि संस्था	स्त्री०	गर्भिणियों के निवास योग्य स्थान, गर्भिणी की शुश्रूषा का स्थान रोगी या व्याधि अवस्था में रहने का स्थान ।	१–२०–१०
व्रतती	सं०	लता ।	१०–४–५
व्यालग्राह	पु०	सांप पकड़ने वाला सपेरा तथा सांप, चीता, जलचर, घड़ियाल, मगरमच्छ आदि जन्तु अर्थ किया गया है ।	१–२१–२२
वैषम्य	पु०	असमता, विजिगीषु के अनुपात से अधिक लाभ होने का तात्पर्य है ।	७–६–३
विष्टि	स्त्री०	कर्मकर श्रमिक विशेष मजदूर, कारीगर एवं वेगार श्रम करने वाले व्यक्ति हाते हैं ।	१–४–१, २–१–३५ ३–१८–६३, ९–२–९, १०–१–९, १७ १०–४–१७

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
विष्टिबन्धक	पु०	मजदूरों को जुटाने वाले कर्मकर संग्रहकारी ।	
विसंवद	हे०	भेद उत्पन्न करना ।	५-३-१७
विसंवादक	पु०	अपनी बात का निर्वाह न करने या बात देकर मुकर जाने वाला ।	७-८-४, ७-१४-४, ८-२-२४ १-३-१,६, ८-१८-६
विसंवादित	वि०	निष्कलीकृत, अस्वीकृत निराश ।	
विस	वि०	मृणाल या कमलनाल ।	११-१-३७
विसर	सं०	जहाँ जल सूख जाता है ।	१४-२-२
विस्रावण	सं०	बहना या चुआना ।	२-२८-१
विहार	पु०	भ्रमण करने योग्य स्थान ।	२-१४-१८,२५ १-१०-१३, ३-२-३
विहारपक्षिन्	पु०	क्रीडार्थ कुक्कुट तथा अन्य पाले हुए पक्षी—कोकिल, मयूर, शुक, सारिका आदि ।	२-२६-५
विहारमृग	पु०	कृष्णसारमृग, क्रीडामृग, जो दिखाने, आमोद-प्रमोद या विहार के लिए रखे जाते हैं ।	४-१०-५
वीचीरल्ल	सं०	एक जीव उसकी पीठ पर कम्बल की तरह रेखा होती है ।	१४-२-४३
वीत	वि०	रहित या शून्य ।	१०-५-४९, १३-३-३
वीतसंगिल	पु०	पक्षी के विश्वासार्थ पक्षी के चित्रयुक्त शरीराच्छादन वस्त्र, भक्षक या निगलने वाला ।	९-६-७३
वीवध	पु०	अन्न की पूर्ति ।	७-६-८, ७-७-२, ८-५-१४, ९-६-४४ १०-२-६
वृक	पु०	भेड़िया ।	१४-३-१
वृक्षाम्ल	सं०	इमली	२-१५-१८
वृक्षायुर्वेद	पु०	वृक्ष की आयु बताने वाला, वृक्ष विज्ञान—अग्निवेश प्रणीत माना जाता है ।	१-२४-१
वृत्त	पु०	धातु विशेष ।	५-२-१८
वृत्तिः	स्त्री०	जीविका ।	७-१६-१
वृत्तिकाम	पु०	वृत्ति की इच्छा से राजकार्य करने वाली भोगार्थिनी ।	१-१२-४, १-१०-७
वृत्तिसाम्य	पु०	शत्रु पुत्र को भी दण्ड देना ।	१-१९-३३
वृत्तिविक्रय	पु०	वृत्ति बेचना या अपनी आजीविका को बेचना ।	३-१५-६
वृद्धि	स्त्री०	अधिक आय—अल्प व्यय, उन्नति ।	७-१२-२९, ९-५-५
वृत्युपकरण	सं०	उपजीविका या पेशा के औजार का सामान, प्रसाधन यथा सज्जा सन्नाह, अन्न, वस्त्र या पात्रादि सामान ।	३-१-३१
वृश्चिक	पु०	बिच्छू ।	१४-३-७८
वृश्चिक बन्ध	पु०	बिच्छुओं से प्रतिबन्धित करवाना या डंक मरवाना ।	४-८-२२
वृष	पु०	बैल या साँड़ ।	१४-३-८३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वृषल	पु०	अविवाहित रजस्वला कन्या या वह स्त्री जिसे मरा हुआ बच्चा पैदा हो।	१-१२-५, ३-१४-३७, ३-२०-१६
वृष्णि	वि०	यदुवंशीय क्षत्रीय थे। मधु के शत पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था। उनके वंशज वृष्णि कहे जाते थे।	१-६-१०
वेगाभिहूलिक	वि०	पराजित करना।	१०-५-४५
वेणिका	स्त्री०	जल तरण का साधन विशेष या जल में तैरने वाली सरकण्डे से बनी नाव या नरकुल का बना तैरने वाला साधन या उपकरण।	४-३-८, १०-३-१४
वेणुमूल	नपुं०	बाँस की जड़।	१४-२-२६
वेतन	नपुं०	जीविकार्थ दी जाने वाली वस्तु, यहाँ गोपालकों के लिए दी जाने वाली हिरण्यादि वस्तु अर्थ किया गया है।	२-२९-१, ३
वेतनोपग्राहिक	सं०	इसका शाब्दिक अर्थ वेतन ग्रहण करने वाला होता है, किन्तु यहाँ पशुओं के देखभाल करना अथवा वेतन के बदले अनुग्रह प्राप्त करना।	२-२९-१३
वेतृ	पु०	पाणिग्रहण अर्थात् विवाह करने वाला।	३-४-४२
वेदक	पु०	अभियोक्ता या वादी।	३-१-१७
वेदन	वि०	पुर्नविवाह।	३-४-४२
वेश:	पु०	वेश्या, चकलाखाना, वेश्यालय।	११-१-८
वैदेहक	पु०	क्रय-विक्रयकर्ता या व्यापारी अथवा संकर जाति विशेष।	३-१३-२८, ८-४-३४
वेद्धार	पु०	रूपान्तर या द्रव्यान्तर।	२-१२-३, ५
वेला	स्त्री०	जलप्रवाह, नदी, झरना आदि से निकट का वह स्थान जहाँ तक बाढ़ का पानी पहुँचता है।	४-३-६
वेल्लक	सं०	रजत तथा लौह के समभाग धातु को मिलाकर, उतना ही सोना निकाल लेना।	२-१४-२२
वैकृन्तक	पु०	स्पाती धातु।	२-१२-१६, २३
वैगुण्य	सं०	विरोध, विग्रह गुण का अभाव, दोष।	५-६-८, ७-८-१९, ८-१-११, ९-४-८
वैणव	पु०	कर्णिकार पुष्प के रंग का होता है। वेणु पर्वत से उत्पन्न होता है। कुछ विद्वानों ने वेणु नदी अर्थ दिया है।	२-१३-३
वैध्धरण	सं०	राजक्षति या हर्जाने का कर या हानि के बदले प्राप्त कर।	२-१२-३१, ३५ २-१६-९, २-२५-४०
वैनयिक	वि०	अश्वों को सिखाने के लिए उपयोगी रथ।	२-३-३, ५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
वैयावृत्यकर	पु०	विक्रय या सेल एजेण्ट या प्रतिनिधि या अधिकर्ता या फुटकर बेचने वाले व्यापारो, सहायक या युद्ध अपराधी ।	२–५–१८, २–८–२२, २–८–९, ३–१२–२५
वैयावृत्यकर्मन्	पु०	अपराध में सहायता देना, सेवा करना ।	४–११–९, ४–६–११
वैयावृत्य विक्रय	पु०	एजेण्ट के द्वारा माल बेचना । फुटकर बिक्री अर्थ भी किया जाता है ।	३–१२–२५
वैराज्य	सं०	राजा हीन राज्य ।	८–२–५, ८
वैलोम्य	सं०	औषधि आदि के विपरीत प्रभाव होने पर, अश्वों की मृत्यु आदि से तात्पर्य है ।	२–३०–४८
वैहारिक	सं०	खेल, विनोद, विहार ।	११–१–७
व्यंजन	सं०	खाद्य सामग्री ।	१–२१–७, २–२–१२
व्यन्तर	सं०	मार्ग के मध्य से हटकर ।	३–४–२१
व्यय	पु०	धन धान्यादि का व्यय, धनादि का खर्च ।	७–२–२, ७–११–२७
व्ययकर्मणा	नपुं०	अपने खर्च या लागत से काम करना ।	३–१४–३
व्ययकर्षण	सं०	एकत्र किया बिकाऊ ।	१५–१–४९
व्ययदेश	पु०	निरूपण संदेश सूचना, नामकरण, नाम रखना, नाम, उपाधि एवं व्ययदेशभाज ।	२–२५–६
व्ययाश्रि	धा०	शरण लेना, सहारा लेना, भरोसा करना, निर्भर होना ।	४–३–१८
व्ययप्रव्याय	पु०	निश्चित व्यय से बचा हुआ धन, बिना खर्च किए हुए, धन का लौट आना, असम्भाव्य आय का अचानक आना दैव आय, अकस्मात् धन का मिल जाना ।	२–६–२१, २–१५–१०
व्ययशरीर	सं०	कुल खर्च ।	२–६–११
व्ययमलब्ध कार्य		बहुत उत्कोच भेंट आदि देकर भी कार्य सिद्धि न प्राप्त करना ।	१–१४–२
व्यवसाय	पु०	कार्य का निश्चय ।	५–५–६
व्ययस्थान	पु०	खर्च का मद ।	७–९–१३
व्यवहार	पु०	कचहरी में जब मुकदमा लड़ा जाता है और साक्षी दिये जाते हैं तो उसे व्यवहार कहते हैं ।	३–१–३९, ३–१–२, ३–२–१
व्यवहित	वि०	देश, काल, पुरुष आदि के व्यवधान से युक्त रूपान्तर से छिपा हुआ, अलग-अलग रखा हुआ ।	१–१५–२८, ७–१०–२०
व्यसन	नपुं०	स्त्री पानादि रूप व्यसन में आसक्त, दुर्व्यसनग्रस्त, दुश्चरित्र व्यक्ति ।	१–१४–४
व्याख्यान	सं०	वर्णन, भाषण, वक्तृता, स्पष्टीकरण, अर्थकरण इत्यादि ।	२–२५–२५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
व्याघातक	पु०	अमिलतास, सोनालू, किरमाला वृक्ष में चैत्र के अन्त में फूल आरम्भ होते हैं।	१४–१–७
व्याजी	स्त्री०	कमीशन, अधिभार।	२–६–१०, २२, २–१२–२६, २–१५–११, २–२६–१०, २–२५–४०, ३–१७–१५, १६
व्याधि	स्त्री०	रोग या रोगग्रस्त।	३–५–१३, ८–२–१३
व्याधिसंस्था	स्त्री०	व्याधिसंस्था का अर्थ रोगी या व्याधि अवस्था में रहने का स्थान।	१–२०–१०, १९
व्यामिश्र	वि०	एक साथ मिला हुआ, मिश्रित।	९–७–७०, १०–५–३१
व्यापद	स्त्री०	कर्म, दोष या विशिष्ट आपदा।	५–१–३४
व्यायाम	पु०	कर्मोद्योग, शारीरिक श्रम, शस्त्र क्रिया का उत्साह।	२–१–३०, १–१६–२९, ६–२–१, २, १०–४–१६
व्यायोग	पु०	जिस नाटक में स्वल्प स्त्री जनों से युक्त इतित्ति प्रसिद्ध हो उसे व्यायोग कहते हैं।	११–४–१८
व्याल	पु०	दुष्ट हाथी, शिकार का जानवर, बाघ इत्यादि।	२–१५–४२, २–३१–४, २–३२–१, ८, १०, १–२१–२२, २–१–३७
व्यव्यावर्तन	पु०	घेरना, लपेटना, घूमना, मुड़ना, चक्कर खाना।	१०–४–१०
व्यावहारिक	वि०	व्यवसाय सम्बन्धी, प्रयोगात्मक। मुद्रायें दो प्रकार की होती थीं। एक प्रकार की मुद्रा व्यापार में चलती थी और दूसरी मुद्रा में राजकर दिया जाता था।	२–१२–२५, २–१९–२२, २९, ३–११–१, ३–१–४४, ३–१–१, ४–८–२१
व्यावृत्त	स्त्री०	हटाया हुआ, वापिस लिया हुआ, वियुक्त किया गया,	३०–५–५३
व्यावेधन	सं०	शत्रु सेना को तोड़ना।	१०–४–१३
व्यावेशन	सं०	शत्रु सेना के प्रदेश।	१०–४–१३
व्यास	पु०	वितरण, विभाजन, अलगाव, पृथक्ता, प्रसार, फैलाव।	१५–१–१७
व्युष्ट	सं०	राजवर्षादि, प्रचलित संवत्सर की तिथि।	२–६–१२, २–७–३१, ३२, ३३
व्यूढ़	वि०	समतल, प्रशस्त, व्यवस्थित।	२–२९–२३
व्यूह	पु०	सैनिक विन्यास।	२–४–४, १०–३–३२
व्रज	पु०	पशुओं का समूह, गोशाला, समुच्चय, संग्रह।	७–१४–२५, ७–१६–५
व्रजकुली	पु०	कटहल।	१४–२–३२
ब्रह्मदेय	पु०	ब्राह्मणों को दान दी हुई वस्तु या भूमि।	२–१–७
ब्रह्महा	वि०, पु०	ब्राह्मण की हत्या करने वाला।	११–१–४८
ब्राह्मण	पु०	ब्राह्मण का, ब्राह्मण के योग्य, ब्राह्मण द्वारा दिया गया अथवा धर्म के माने हुए चार वर्णों में सर्वप्रथम।	९–२–२१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	स०
व्रात्य	पु०	बिना उपवीत विवाहित ब्राह्मण से सवर्ण में उत्पन्न। इसका एक अर्थ और होता है, शूद्र पिता और क्षत्रिय माता की सन्तान।	३-६-१४

श

शकटवाट	पु०	गाड़ी का छोर।	७-१७-५५
शकटव्यूह	पु०	गाड़ियों का बनाया गया व्यूह।	१०-२-२४
शंका	स्त्री०	शंकितो की गिरफ्तारी।	१५-१-५०
शकुन	पु०	गृद्ध।	१४-२-१७,३०
शंकाभिग्रह	पु०	शंकितों का घर पकड़, छीनना, लूटना, गिरफ्तारी करना।	४-६-१
शक्य	वि०	सरलता से वश में करने वाला।	६-१-३,८, ७-१०-९, १३-४-६०
शक्ति	स्त्री०	ज्ञान, बल, मन्त्र।	६-२-३०
शल्क	वि०	प्रियभाषी या प्रियवादी।	६-१-६
शङ्कानिष्पन्न	वि०	सशङ्कित, शंका से युक्त संदिग्धजन।	४-८-९
शतैकीय	वि०	सौ में एक।	९-३-४
शत्रुशुद्धा	वि०	आपदा दो प्रकार की होती है--अमिश्र तथा परमिश्र।	९-६-१,६
शत्रुषड् वर्ग	वि०	काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, मत्सर प्राणियों के ६ शत्रु हैं।	१-६-११
शतपर्वा	पु०	बाँस का अंकुर।	१४-४-३
शतावरी	स्त्री०	शतावर।	१४-२-१५
शंख	पु०	एक विशिष्ट वाद्ययन्त्र जो समुद्र से पाया जाता है।	७-१२-२४
शब्दस्फोटन	वि०	शब्द का विकाश होना, शब्द में आवाज होना।	१-२१-६
शल्य	पु०	काँटा, भीतर से कमजोर करने या निष्कासित करने या भीतर से शत्रुता रखने वाला।	८-५-९
शतघ्नी	स्त्री०	सौ को मार देने वाले आयुधास्त्र।	२-३-३४
शतपदी	स्त्री०	कनखजूरा, कनजलूका।	१४-१-४
शाल्मली	सं०	सेमल का वृक्ष, यह सब वृक्षों का अधिपति माना गया है।	७-६-३९
शतकुम्भ	पु०	एक पहाड़ जहाँ से सोना निकलती है।	१४-३-११
शक्यारम्भी	वि०	शक्ति के अनुरूप कार्य करने वाला।	७-८-१२
शराघान	वि०	घास या मूँज की बाड़ या झाड़ी या सेवार आदि।	१०-४-९
शर्करा	स्त्री०	छर्री, पत्थर के टुकड़े।	१०-४-८, १४-३-५४
शलक	पु०	मकड़ा सारिका।	१४-३-४५
शल्यक	सं०	शाही का काँटा।	१४-३-३२,५०
शमी	स्त्री०	सिरिस वृक्ष या शुकतरु।	१४-२-१

शब्द	व्याकरण	अर्थं	सं०
शबर	पु०	जनपद की भाषा से अनभिज्ञ बनचारी, दक्षिण भारत की एक पर्वतीय असभ्य जाति । यह जाति पन्नार नदी तक फैली थी ।	२-१-६
शव सारिका	स्त्री०	मरी हुई सारिका ।	१४-३-४९
शम	पु०	शान्ति, समृद्धि ।	७-१७-१,३, ६-२-१,३
शलाका	स्त्री०	अंजन शलाका ।	१४-३-८,१०, ३-२०-१०, ४-१०-९ २-१८-१०
शलाकाप्रतिग्राहक	पु०	वजन की गणना करने वाला ।	२-१५-६३
शाक्य	पु०	बौद्ध भिक्षु ।	३-२०-१६
शारदकर्म	सं०	चार प्रकार का होता है । हाथी स्थूल हो तो दुबला करना, कृश हो तो स्थूल करना, मन्दाग्नि को उद्दीप्त करना, स्वस्थ हाथी के स्वास्थ्य की रक्षा करना ।	२-३२-७
शासक	पु०	कैप्टन अथवा नाव या जहाज का निर्देशक या नौका संचालन का प्रमुख अधिकारी ।	२-२८-१३
शासन	सं०	पत्रार्पित विषय का नाम शासन है । लिखित आज्ञा, आदेश, अभिलेख, विश्वास जनकपत्र, उद्घोषणा राजशासन आदि ।	२-१०-१,२, १-१६-६,३३ २-९-२७, २-२८-२०, १२-३-१३
शासनमुक्त	वि०	जो सम्पत्ति राजशासन द्वारा प्रतिमुक्त है ।	२-६-१५
शासनमुद्राहस्ता	वि०	हाथ में सील मुहर युक्त ।	१३-४-४१
शासनस्थ	पु०	जिस शासन में नियुक्त या जिस अधिकार को प्राप्त किया हो ।	२-९-१९
शासनहर	त्रि०	जिस दूत में दोनों का अर्धांश हो उसे शासनहर कहते हैं ।	१-१६-४, २-२८-१८
शास्त्रचक्षु	नपुं०	शास्त्ररूपी नेत्र या शास्त्र नेत्रों से युक्त ।	१-१४-७
शास्त्रानुयोग	पु०	शास्त्र के अनुसार प्रतिप्रश्न या प्रतिपृच्छा ।	५-४-४
शिग्रु	पु०	सहिजन ।	१४-१-१३
शिखा	स्त्री०	पात्र में अटे अन्न का एक चौथाई पात्र के आकार के ऊपर गरदन या कण्ठ से ऊपर का होना चाहिए ।	२-१९-३४,३५
शिफादण्ड	स्त्री०	कोड़ा से मारना या कशा प्रहार ।	३-३-२७
शिल्पी	पु०	महीन काम करने वाले कारीगर ।	३-१३-३०
शुक्त	सं०	सिरका या खमीर उठा रस प्रभृति ।	२-१५-८,१७
शुक	पु०	सुग्गा, तोता आदि, शुक पक्षी से शुभाशुभ का ज्ञान होता है ।	१-१५-४
शुचि	वि०	शुद्ध या पवित्र ।	७-१५-५
शुन	पु०	कुत्ता ।	१४-३-४६
शुद्धदेश	वि०	शुद्ध प्रमाण या शुद्ध सामान्य साक्षी ।	३-१-१५
शुद्धबध	पु०	बिना क्लेश के मारना या वध करना ।	४-११-२,२६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
शुद्धा	स्त्री०	आपदा दो प्रकार की होती है अमिश्र तथा परमिश्र ।	९-६-१,२-६
शुध्	पु०	परीक्षा करना या शुद्ध करना ।	१-१०-१, २-१-३८, २-४-२८
शुल्क	सं०	सीमा शुल्क, चुंगी ड्यूटी शुल्क लेने वाले कामकर ।	२-२१-२, ३-२-७ ३-३-५,१२
शुल्काध्यक्ष	पु०	राजकीय शुल्क आय का अध्यक्ष ।	२-२१-१
शुल्व	सं०	ताम्र, सुवर्ण आदि धातुओं से सम्बन्धित ।	२-१३-१६,४४, २-१४-३०,३१, २-१२-१, २-२४-१
शुश्रूषां	स्त्री०	शुश्रूषा आदि प्रज्ञा गुण हैं । शुश्रूषा, श्रवण का तात्पर्य सुनने की इच्छा से है । इसका कर्तव्य परायणता आज्ञाकारिता एवं सम्मान भी अर्थ किया गया है ।	१-५-५
शूल	पु०	एक छड़ । एक फलक वाले को शूल कहते हैं ।	४-१-६३
शून्य	सं०	खाली या निर्जन या विजन भूमि ।	७-११-१. ५-३-३२, ९-३-३१
शून्यपद	सं०	शून्य स्थान ।	२-३५-१४
शून्यनिवेशकर्म	नपुं०	खाली जमीन पर नवीन आवादी बसाना ।	७-१-२०
शून्यपाल	पु०	राजप्रतिनिधि ।	९-३-१०, १०-१-१६, १२-२-२५
शून्यमूल	वि०	खाली या शून्य केन्द्र या आधार या मूलस्थान राजधानी या मूल राजधानी ।	७-१३-६
शूर	नपुं०	वीर, पराक्रमी, बहादुर ।	७-१२-९
शूरवादिक	वि०	अपने को शौर्य शाली या वीर कहने वाला या वीरता की डींग हाँकने वाला ।	१३-२-३१
शूल	वि०	एक लोहे के छड़ से तात्पर्य है ।	४-१-६३
शेष	सं०	बाकी, देय ६ प्रकार के होते हैं ।	२-६-१६
शैम्ब्य	सं०	सेम, कुरथी या ग्वार की फली, शिम्ब्र का अपभ्रंश छीमी है ।	२-१५-३१, २-१४-१३
शोभा	स्त्री०	हाथियों के रूप में समयों के कारण जो परिवर्तन होता रहता है, उस प्रत्येक काल को शोभा कहते हैं ।	२-३१-१७,१८
शोष	पु०	शुखण्डी, तपेदिक ।	१४-१-२१, १४-३-७१, १४-४-७
शौच	सं०	पवित्रता, शुद्धता बाह्य तथा आभ्यन्तर दो प्रकार की शुद्धि बतायी गयी है ।	१-८-१,२६
श्रद्धेय	वि०	विश्वसनीय, श्रद्धा या आदर के योग्य ।	१-१२-६, १४-१-२, ३-१-५, ४-१-२१
श्रमण	पु०	बौद्ध जैन आदि सम्प्रदाय के श्रमण एवं भिक्षु ।	१-१२-२३
श्रवण	नपुं०	सुनना से तात्पर्य है ।	१-५-५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
श्रावणा	स्त्री०	वह दावा, जो साक्षियों के आधार पर या सहायता पर किया जाता है ।	३-११-८
श्राद्ध	वि०	श्रद्धापूर्वक शास्त्र विधि से पितरों की तृप्ति के लिए धार्मिक कृत्य किया जाना ।	१-१५-६१
शृङ्गी	सं०	मछली या शृङ्गी मछली ।	१४-१-१७
श्रु	क्रि०	श्रवण करना या सत्य सिद्ध करना ।	३-११-४८, ४९, ३-११-७
श्रुत	वि०	ज्ञान । श्रुत का अर्थ सुना हुआ भी होता है ।	९-६-२१
श्रीवेष्टक	पु०	सभी वृक्ष का गोद, ताड़पीन या रजन ।	१३-४-१८
श्रेणी	स्त्री०	धोबी, जुलाहा, दर्जी आदि ।	२-४-१६, ४-१-२, ३, ९-४-२७, ६-१-८, ५-३-९, ७-१४-२७, १०-१-८
श्रेणीबल	सं०	सैनिकों की टुकड़ी जो अपने नेता के नेतृत्व में रहती है ।	९-२-४
श्रेणीमनुष्या	वि०	समूह में मनुष्य जो एक ही पेशा करते हैं। जहाँ मनुष्य आपस में श्रेणीबद्ध रहते हैं ।	७-११-१८,२०
श्रोतृ	पु०	साक्षी गण ।	३-१-४, १४, ३-१०-२०, ३-११-२, ३-१३-२
श्रोतृणां	पु०	साक्षियों ।	३-११-२
श्रोत्रिय	वि०	वेद विद्या युक्त या वेद को जानने वाला ।	१-१५-६१, २-३६-५
श्वगणिन्	पु०	कुत्तों को खिलाने वाले या शिकारी ।	१-१४-९, १-२१-२३, २-३४-९, १७-१-११
श्वदंष्ट्र	पु०	यह वनस्पति हाथी के किए खतरनाक होती है ।	२-३-१५, १२-४-९
श्वपाक	पु०	चाण्डाल ।	१४-३-७७
श्वपाकी	स्त्री०	चाण्डाली ।	१४-३-२८
श्वभ्रु	वि०	छिद्र, विवर ।	१०-४-४
शौर्य	पु०	पराक्रम, वीरता ।	७-१२-१२
श्येन	पु०	बाज ।	१४-२-४३
श्याव	वि०	कपिशवर्ण ।	१-२१-७
श्येन व्यूहन	पु०	उरस्थ भाग से शत्रु पर आक्रमण करना श्येन व्यूह कहलाता है ।	१०-६-१२
श्वा	पु०	कुत्ता ।	१४-३-६
श्वेता	वि०	शंखिनी, अतिविषा, अतीस, गिरिकर्णिका ।	१-२०-५, १४-३-२, १४-४-१२
श्वावित	पु०	शाही या शल्यक ।	१४-३-१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
		ष	
षण्ड	पु०	नारियल, कदली ।	२-६-५
षाड्गुण्य	सं०	सन्धि, विग्रह, यान, आसन, संश्रय, द्वैधीभाव ।	६-२-४, ७-१-२
ष्ठीवन	सं०	थूक, खखार, लार, थूकना, डकारना ।	५-४-९
ष्ठीविका	स्त्री०	थूकदानी, उगलदान ।	३-१९-२०
षड्अंग	वि०	शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष ।	२-९-९, १-३-३
षड्वर्ग	पु०	काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, हर्ष ।	१-६-१, १२-२-१
		स	
संकट	वि०		१०-३-२
संकर	पु०	वर्ण एवं कर्म दोनों से तात्पर्य है । मिश्रित या मिला हुआ ।	१-३-१५
संख्यापक	पु०	गणितज्ञ, हिसाब-किताब करने वाला, गणनाधिकारी ।	२-९-७
संज्ञालिपि	स्त्री०	संकेतलिपि, गुप्तलिपि । आजकल भी युद्ध एवं राजनीतिक महत्व के कार्यों में संज्ञालिपि का प्रयोग किया जाता है ।	१-१२-११
संघ	पु०	बौद्ध संघ ।	१-१८-९
संचार	पु०	गति, चेष्टा, व्यापार ।	२-९-२६
संदंश	पु०	संड़सी ।	४-११-२५, २-१४-३३
संधत्ते	वि०	आगे बढ़ना या लाभ में रहना ।	७-१३-१५
संधि	पु०	मिलना या मिलाना ।	७-१-६,७, २-२-१२
सकटुकक्ष्या	वि०	अप्रशस्त सूत्रों वाली ।	२-१४-१९
सकाम	वि०	इच्छुक, कामना से युक्त, प्रेम पूरित ।	४-१२-६
सक्त	वि०	आत्मसात् करना या हजम कर जाना या कोश में जमा म करना ।	८-४-४९, १२-३-२४
सक्तु	पु०	सत्तू ।	१४-३-३१
सक्तचक्र	वि०	सेना या सीमित या असमर्थ हो ।	७-१३-४
सगन्ध	वि०	सजातीयता, बन्धुता, सगोत्रता, परम्परा, प्रजा ।	७-११-२
समाधि	पु०	बन्धक रखने का मोचन या मुक्त या छुड़ा लेना ।	७-१७-३२
सम	वि०	बराबर या ऊँचाई-निचाई रहित स्थान ।	१०-४-३
समाधिमोक्ष	पु०	काल विशेष के कारण बद्ध पशु पक्षी या पुत्रादि उनकी प्राप्ति सन्धि आदि द्वारा करे ।	१-१६-३४
समाह्वय	पु०	मेष, कुक्कुट आदि को लड़ाकर और बाजी लगाकर जुआ खेलना या बाजी लगाना ।	३-२०-१३
समाहर्ता	वि०	राजा के लिए धन जुटाने वाला ।	५-३-५
समुदय	पु०	संग्रह, समुच्चय आदि ।	१-१-४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
संपन्न	वि०	जनपद के गुणों से युक्त या सम्पद् युक्त भूमि ।	७-१०-२
संप्रधारण	पु०	विचार, किसी विषय के औचित्य या अनौचित्य का निर्धारण या निर्णय करना ।	८-१०-६०
संप्रत्यय	पु०	विश्रंभ, प्रत्यय, विश्वास योग्य स्वीकार या विश्वास करना ।	१-१२-१५
संभूयसमुत्थान	पु०	सहकारिता के सहभागी या पार्टनर ।	३-१४-१८
संवेदन यन्त्र	पु०	जादू मन्त्र आदि द्वारा वश में करना ।	४-५-६
संवाघ	पु०	संकूल, भीड़, समूह ।	१-२१-२७
सन्धि	स्त्री०	मिलना या समान व्यवहार करना ।	१-१-९
सन्निधाता	पु०	कोषाधिकृत, राजकोष का अध्यक्ष, इसका अर्थ राजकोश में सामान रखने का अधिकारी या भण्डार अथवा कोश का निर्देशक होता है ।	८-४-३१, २-५-१
संया	स्त्री०	समुद्री जहाज या नाव ।	२-२८-११
संयान	सं०	यात्रा ।	२-२८-१, २-३-२३
संयानपथ	पु०	समुद्री मार्ग ।	७-१२-२१
संयानीय	सं०	क्रय-विक्रय एवं व्यवहार का प्रधान स्थान, बाजार, व्यापारिक मण्डी, बन्दरगाह, समुद्र यात्रा ।	२-४-४
संयूह	पु०	लेपन या सिकली या कोटिंग या प्लेटिंग करना ।	३-१३-४४, २-१४-४८
संयूहन	पु०	गन्धमाला, माला गूहना, संवादन ग्रंथन ।	२-२७-२८
संयूह्य	सं०	स्वर्णादि निर्मित स्थूल पत्रादि को योजना ।	२-१४-१७,२६,५०
संरब्ध	वि०	फूला या कड़ा या अनम्य होना ।	४-६-१८
संरुद्ध	पु०	कैदी, बन्दी ।	४-९-२५, १३-४-२८
संविष्ट	वि०	शय्या पर आरूढ़ होना, संविष्ट शब्द काम की भावना प्रकट करता है ।	१-१९-२०
संरुद्धक	पु०	दासी बन्दी के साथ व्यभिचार एवं दण्ड ।	४-९-२३,२४
संरोद्ध	पु०	अच्छी तरह से घिरा हुआ या रोका हुआ ।	१३-४-२८
संरोध (संरोधन)	पु०	बन्धन, कैद, निर्वासन, नजर बन्द ।	१-१७-५२, ३-१३-२१, ३-१४-१, ९-३-१४
संवदन	सं०	वशीकरण ।	४-४-१४,१५, ४-५-१, ४-१३-२८
संवरण	सं०	आवरण, आच्छादन, बहाना ।	१-२-५, १-१५-१०, ५-५-५
संवर्तन	सं०	जो हाथी भूमि पर सो या बैठ सके तथा रेखांकितगर्तादि लाँघ जाय ।	२-३२-४
संवस्	हे०	मिलकर रहना, विश्वास दिलाना, समाज, मण्डली ।	५-१-१९, ११-१-४
संवादन	सं०	प्रियवचन, वचन चातुरी से मुग्ध करना ।	२-२७-२८
संवासिन्	पु०	अच्छी तरह परिक्षणीय ।	१-९-३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
संवाह	पु०	परीवहण ।	१०–३–१६
संवाहक	पु०	अंग मर्दन करने वाला ।	१–२१–१३
संवृत	वि०	छिपा, एकान्त या गुप्त स्थान, उच्चारण का एक प्रकार ।	१–१५–३
संव्यवहार	पु०	अच्छी तरह किया गया व्यवहार या व्यवहार सम्पन्न ।	१–९–३, ४–४–२०
संशय	पु०	शंका, शक, सन्देह, संशय न्याय के २४ जातियों में से एक कोई अर्थ जो दोनों पक्षी के हेतु को करते हुए प्रयुक्त होता है ।	१५–१–३२
संश्रय	पु०	शरण, राजा के समीप समर्पण ।	७–१–१०
संश्रु	पु०	देता हूँ इत्यादि प्रतिज्ञा किया गया व्यक्ति ।	१–१४–२
संसर्ग विद्या	स्त्री०	काम, नृत्य, गोत आदि सम्बन्धी विद्या ।	१–१२–१, १३–१–२
संस्कार	पु०	दुर्ग विन्यास ।	२–४–३१, ८–१–३४
संस्कृतिक	वि०	द्रव्य युक्त, सुसज्जित करने वाला, अच्छी तरह बनाने वाला ।	२–१३–४२
संस्थान	सं०	पूर्व स्थिति ।	२–१६–१४, २–७–२,३,१०, १०–१–१, २–११–३३, २–१३–६१
संस्थिति	स्त्री०	साथ रहना ।	३–१२–१४
संहरण	पु०	वृद्धि, संग्रह करना या बटोरना या पूर्ण करना ।	१३–२–३८
संहित	वि०	मेल मिलाप ।	१–१४–११, ७–९–५३
संहित प्रयाण	सं०	मिलकर या साथ मार्च या अभियान करना ।	७–९–१
संकर	पु०	दोष, अपवित्र, मिश्र, अन्य तथा अन्तर्जातीय सम्बन्धों से उत्पन्न सन्तान ।	३–१४–३८
संकलन	पु०	हिसाब करना, हिसाब रखने की शैली ।	२–७–२९
संकेत	पु०	इशारा या संकेत युक्त ।	१२–४–२१
संक्रम	पु०	अनुपस्थ रथ्या या पुल या ठोस पुल या मार्ग ।	२–३–३०, ३–१०–४६, ७–१०–३२, १०–२–१४
संक्रोस	पु०	चिल्लाना ।	१–१७–३९, २–७–१०
संक्षेप	पु०	सामानों का एक स्थान पर केन्द्रीकरण ।	२–८–२१, २–१६–१ १–१९–३१
संख्य	पु०	मित्र, सखा, संशय दूर करने वाले ।	१–८–१३
संख्यातार्थ	वि०	निश्चित अर्थागम किया हुआ ।	१–५–७
संख्यायन	सं०	अंक गणना, गणित वैशेषिक के चौबीस गुणों में एक ।	२–१–७, २–९–२८
संख्यायक	पु०	गणितज्ञ, हिसाब-किताब करने वाला गणनाधिकारी ।	५–३–१४
संग	पु०	साथ अर्थात् दवा या चिकित्सा के साथ ।	२–३०–४७, ८–४–४९–५०
संगृहीता	वि०	व्यभिचारण, रक्षिता ।	४–१०–१०, ४–१२–३१
संग्रह	पु०	रक्षा करना ।	४–१२–३०

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
संग्रह	पु०	विचार या मत जो प्रायः लोगों द्वारा स्वीकार किया जाता है।	३-१-४०, ३-४-४२
संग्रहण	सं०	दस ग्राम या प्रधान केन्द्र या अधिष्ठान।	२-१-४, ३-१-१, ३-४-२१, ३-८-२४, ४-१३-३५
संघ	पु०	निगम, पौरसंघ, समूह।	२-१-३२, २-७-४०, ३-१०-४५, ९-६-७२, १३-५-९, ३-१४-१२, ९-६-१६, ११-१-१, ७-१५-३, ८-३-६४
संघात	पु०	अपना गोल बनाना।	५-४-१०, ७-१४-१०, ७-९-७२
संघात्य	सं०	टुकड़ों को जोड़कर बने आभूषण।	२-१४-१७,३६,३०, २-११-१००
संघत्वात्	पु०	परम्परा।	१-८-१७
संघुष्ठ	वि०	प्रसिद्ध, अच्छी तरह जाना आता हुआ।	२-३३-९
संचार	पु०	गति, चेष्टा, व्यापार, इसका अर्थ भ्रमणशील या गतिशील गुप्तचर है।	१-२०-२, २-३-७, १-१२-५, १-१२-११
संजात	वि०	इसका अर्थ चारों विद्याओं का ज्ञाता भी किया गया है, इसका अर्थ अपने राष्ट्र वालों के साथ उत्पन्न होना भी होता है।	२-१-३२
संजयव्यूह	पु०	अच्छी तरह विजय की इच्छा का व्यूह।	१०-६-१४
संञ्ज	पु०	कर्मवाच्य।	३-३-९
संजात	सं०	सब उपायों द्वारा प्राप्त धन के परिमाण का ज्ञान रखना।	२-२९-१, २-३५-८, २-६-१४,२७, २-७-२, ४-२-२३
सत्तलिका	स्त्री०	आस्तर (बिछौना विशेष)।	२-११-१०१
सत्र	सं०	छिपने का स्थान।	७-१७-५६, १०-२-१५, १०-३-१५,-८,२४ ८-४-४१, ८-५-१, १३-२-४३,५०, ६-५-४६, २-२५-३
सत्त्राजीवी	पु०	मिलकर या सत्त्रों का कार्य करने वाले।	१४-१-३
सत्त्रिन्	पु०	विविध शास्त्रों का अध्ययनकर्ता, छात्र रूप में परिचित गुप्तचर, एक प्रकार का गूढ़ पुरुष।	१-१०-३,५,२०, १-११-१,१८, ९-२-२६
सद्	पु०	सूद या ब्याज या स्वामित्व का जप्त या समहृत होना या मालिक का ले जाना।	३-१२-९,१०, ३-१३-६, १-३-१७, ३-१४-३५, ९-२-७, २-१४-३३
संदोह	पु०	सब सेना को एक जगह एकत्रित करना या युद्ध के लिए सेना एकत्रित करना।	५-२-५०, ६-२-३८, ७-४-७,१२,१४, ७-१३-५, ९-६-५५, १२-१-३, १३-३-२३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
संधा	पु०	सुलह मेल, हीन के साथ युद्ध करने का सुझाव दिया गया है।	१-३-१६, ७-७-८, ७-३-२
संधि	पु०	जोड़, विवर, दरार, सेंध।	७-१-६, ७-१७-१,२, ४-६-१६
संधान	पु०	मेल करना, सन्धि करना।	७-४-४
संधिच्छेदिका	स्त्री०	सेन्ध लगाना।	४-११-१९
संधिरात्रि	स्त्री०	पूर्णमासी तथा अमावस्या की रात्रि।	१३-२-२१
सन्न	वि०	कमजोर, दुर्बल, खिन्न, उदास, बीमार, व्याधिग्रस्त।	३-१४-१९, २१, २९, ३४
सन्नाह	हे०	सेना को सज्जित करना या युद्ध के लिए तैयार करना, सैन्य संग्रह।	९-२-१३, २१
सन्नामिनी	वि०	मुलायम लोहे से निर्मित, वह तुला जो इच्छानुसार झुकायी जा सके।	२-१४-१९
सन्निधातृ	पु०	कोषाधिकृत, राजकोष का अध्यक्ष, इसका अर्थ राजकोष में सामान रखने का अधिकारी या भण्डार अथवा कोष का निर्देशक होता है।	५-१-२१
सन्निधानसन्न	वि०	भण्डार में एकत्रित हुआ अन्न।	३-११-५
सन्ध्या	स्त्री०	स्मार्तधर्म, शिष्टाचार का प्रतिपालन, दिन एवं रात्रि की सन्धि बेला में प्रातः सायं तथा मध्याह्न की सन्ध्या बेला में होती है।	१-१९-१७
सनिविष्ट	वि०	विवाहित या अनुरूप कन्या के विवाह व्यय से अवशिष्ट भाग।	३-५-२१
सम्पत	वि०	सम्पन्न, योग्य, पुरुषार्थयुक्त।	१-९-१, ८-३-६
सभासद्	पु०	सभाचर।	३-१५-११
सभ्य	पु०	सभा से सम्बन्ध रखने वाला, समाज के योग्य, संस्कृत, परिष्कृत, विनीत, सुशील, विनम्र, शिष्ट।	२-१६-१३
सम	वि०	समान, समतल, निष्पक्ष न्याययुक्त, न्यायोचित, उपयुक्त, सुविधाजनक।	६-२-३५
समकरण	सं०	समतासूचक या समानवर्ण।	२-१९-१३
समन्तभद्रक	सं०	सन्नाहपट्ट या चारखाना का कम्बल।	२-११-९८
समन्तत	सं०	चारो तरफ से, चारो ओर।	९-७-२३,२४,२६,२७
समन्त्र	वि०	मन्त्रणा से सहयोग, सहकारिता, परामर्श या मन्त्रणा या सलाह में सम्मिलित होना।	४-११-१०
समय	पु०	लेखन तथा भिन्न-भिन्न वर्गों के मनुष्यों का व्यवहार या लोकाचार का लेखन।	२-१०-३

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
समयाचारिका	सं०	लोक प्रचलित चलन या प्रथा या व्यवहार।	५–५, ७–१५–२१
समयानुवद्ध	वि०	भविष्य में कभी न करने की प्रतिज्ञा करने वाले।	२–३६–४५
समयानुवन्ध	पु०	समय से अनुवन्धित या काम करने वाले।	२–१–३२
समर्घ	वि०	देय मूल्य, सस्ता।	१२–४–८
समव्यूह	वि०	सेना की समान रूप से रचना को समव्यूह कहते हैं।	२०–५–१४
समवृत्ता	स्त्री०	समान गोलाई का (पलड़ा) यह तुला सुवर्ण रजत के अतिरिक्त अन्य पदार्थों को तौलने के लिए बनायी जाती है।	२–१९–१२
समवाप	पु०	एकत्रित होना।	१०–१–१९
समविष्ठ	वि०	शय्या पर आरुढ़ होना।	१–१९–२०
समसन्धि	पु०	बराबरी की शर्त पर होने वाली सुलह।	७–७–४, ७–९–४
समाज	पु०	उत्सव या औत्सविक मिलन।	१–२१–२८, २–२५–३६, ५–२–३९,५०, १०–१–१५, १३–?–५६, १३–५–८
समाधि	पु०	संपुष्ट करना, पुष्टीकरण।	४–६–८, १–१६–३४, ७–१७–१,२,२३
समानतीर्थ	पु०	साथ पढ़ने वाला।	३–१६–३७
समाजकर्मन	सं०	व्यूहन या पुनः एकत्रित करना।	१०–४–१३
समानी	पु०	गणना करना या निरीक्षण करना।	२–७–३१,३३
समाप्त	वि०	पूर्णतया मिल जाना।	८–५–१,१२
समाप्तकरण	वि०	प्रमाण, साबूत, कार्यालय या न्यायालय में वादी प्रतिवादी का बयान लिखने वाला क्लर्क या पेशकार।	४–८–१३
समारुढ़क	वि०	मिला हुआ या सटा हुआ या संयुक्त।	३–८–१५
समारोपित	वि०	अच्छी तरह आरोपण किया हुआ।	२–८–२१
समाहर्तृ	पु०	माप या स्थानिक आय आदि का माल आयुक्त।	२–६–१, २–३५–१
समाह्वय	पु०	मेष कुक्कुट आदि को लड़ाकर वाजी लगाकर जूआ खेलना, वाजी लगाना।	३–२०–१३
समाहूय	क्रि० वि०	बुलाकर आह्वानकर, आमन्त्रण देकर।	
समिद्धयोग	पु०	तपस्याबल, प्रतिभा किंवा प्रभाव से दूसरों को धनादि से समृद्धि युक्त करना।	१–११–१५
समुच्चय	पु०	संग्रह, संघात, समष्टि उपायों का एक साथ किया गया प्रयोग।	१५–१–६, ७–७-७३, ७–१६–४
समुत्थान	सं०	सैनिक उद्योग या कार्यवाही।	२–१९–१४,२७, ४–११–२, १३–५–१
समुच्छ्रेय	सं०	शत्रु जब बलवान हो।	७–१५–१३
समुत्थानव्यय	पु०	घायल के अच्छा होने पर चिकित्सा में जो व्यय हुआ हो।	४–११–२
समुदय	पु०	धन की उत्पत्ति आय, आमदनी राजस्व।	२–३–३, २–६–२८, २–९–१३, ५–३–१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
समुद्गपरिर्वातम	वि०	माल गायब करना ।	४-२-१६
समुद्दान	सं०	संग्रह, एकत्रित ।	१-१[illegible]-२९, ९-२-१
समुद्रमण्डूकी	स्त्री०	समुद्र की मेढकी ।	१४-२-२४
समुपवेश	पु०	इसका अर्थ भवन, आवास निवास आदि भी होता है ।	३-२०-१४
समुपारुढ़	वि०	घासफूस आदि से जमीन भर गया है ।	३-९-३३
समेघ	हे०	आगे बढ़ाना या प्रवृद्ध करना ।	९-३-२
समेघा	स्त्री०	अभ्युदय, उत्कर्ष भावी सम्पत्ति को जानने की इच्छा ।	१-११-१७
संपत्	पु०	आवागमन या आगमन प्रत्यागमन ।	२-२८-४
संपात	पु०	इकट्ठा करना ।	४-६-२, ८-४-३६, ९-२-२, १३-४-३८
संयानोय	वि०	क्रय-विक्रय एवं व्यवहार का प्रधान स्थान, बाजार, व्यापारिक मण्डी, समुद्र यात्रा, बन्दरगाह ।	२-४-४
संपुटिका	स्त्री०	जाँघिया ।	२-११-१०१
संप्रत्यय	पु०	विश्रंभ, प्रत्यय, विश्वास योग्य स्वीकार या विश्वास करना ।	१-१२-१५
संरुद्ध	वि०	स्थिर हुआ ।	३-४-३५
संप्लव	पु०	बाढ़ या प्लावन ।	१३-४-२६
संभार	पु०	पाठालोध्र, पठानीलोध्र या लोधा ।	२-२५-१८, २२, २३, २७, २९
संशय	पु०	संदेह, अनिश्चित, चपलता, संकोच, सम्भावना ।	९-७-१०
संक्रम	पु०	लकड़ी के खम्भे पर बना पुल ।	२-३-३०, ७-१०-३२, १०-२-१४
संसर्गानुवन्ध	पु०	मौन सम्बन्ध को चाहने वाला ।	१-१६-२९, १-२१-२
सम्बन्ध	पु०	एक दूसरे से सम्बन्ध, वाक्यच्छिन्न न हो बल्कि एक दूसरे से पूर्वा पर के अनुसार जुटे हो ।	२-१०-६
संग्रहण	पु०	दश ग्राम में संग्रहण नामक विशेष गाँव, यह देश गाँवों का राजकीय कार्यालय था ।	२-१-४
सम्पन्न	वि०	सम्पदयुक्त, समृद्धिशाली उन्नतिशील, धनी ।	७-१०-१२
सन्निधातृ	पु०	राज संवादित धन रक्षण कर्ता अधिकारी, कोश के संग्रह तथा रक्षण कार्य पर नियुक्त महामात्र कोश अर्थात् माल खाने के निदेशक रूप में भी अर्थ किया गया है ।	१-१०-१३
समवाय	पु०	संयोग, मिला, समृद्ध एक संग्रह होना ।	७-४-२०
समसन्धि	पु०	बराबरी की शर्त पर होनेवाली सुलह ।	७-४-४, ७-९-४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
समुद्दानकर्तुकाम	पु०	सेना का संग्रह करना।	९-२-१
समाधि	पु०	काल विशेष के कारण बद्ध शत्रुपक्षीय पुत्रादि उनकी प्राप्ति सन्धि आदि द्वारा करना।	१-१६-३४, ४-६-८, १-१६-३४, ७-१७-१,२,२३
सरस्वती	सं०	वैदिक देवी।	१४-१-३९
सर्वभोग	पु०	धन आदि में सब प्रकार की सहायता करने वाला या उपयोगी, उपकार या लाभ या सहायता करना।	७-१६-१२
सुवर्चला	सं०	अलसी, हुरहुर, सूर्यमुखी का फूल, आदित्यभक्ता।	१४-२-३४
सवनात्	पु०	सवन का अर्थ सोमरस का निकालना या पीना होता है।	३-१४-३०
सवितः	वि०	वैदिक देवी।	१४-१-३९
सर्वतोभोगी	वि०	सब ओर या चारो तरफ से उपयोगी होना।	७-१६-१५
सर्वज्ञ	पु०	सर्वज्ञानत्व, सब कुछ जानने वाला।	१०-३-३३
सहसोपचितार्थ	पु०	सहसा धन प्राप्त व्यक्ति।	१-१४-३
संहतक	पु०	मिलाकर जोड़ा हुआ या लगाया हुआ।	२-१४-११
संभातिक	वि०	आघात।	५-४-१०
साधारण	वि०	मामुली, सदृश, समान।	८-१-५७, ८-१-२८
सातत्य	वि०	निरन्तर, अनवरत।	७-११-१, ७-१२-१६
सार्थ	पु०	व्यापारियों का जत्था, कारवाँ, वणिक् संघ।	१०-३-१५
सेना	स्त्री०	सेना के बाहर निकलना।	१०-२-१८
संभाषित	वि०	अच्छी तरह कहा हुआ, बातचीत द्वारा निश्चय किया हुआ।	३-१३-२७, ३-१४-११ ४-१२-३६,३९
सत्र	सं०	निभृत स्थान, शत्रु पर आक्रमण हेतु छिपने का स्थान, अचानक आक्रमण के लिए छिपना, शत्रु पर आक्रमण के लिए छिपना।	७-१७-५७
समा	स्त्री०	बराबर या ऊँचाई निचाई रहित स्थान।	१-१४-२
सर्ज	सं०	विरोजा, साल से चूनेवाला रस या राल।	१४-४-१८, १४-२-२४
सत्री	पु०	गुप्तचर, गोपनीय विभाग का आदमी, या कपटी।	५-३-२३
सरूप	वि०	हार, कुण्डल आदि रूपयुक्त, अर्थात् एक ही रूप आकार एवं लक्षण प्रकट करने वाले।	४-१-२६
समाधि	वि०	दृढ़ीकरण, प्रमाणीकृत, समर्थन, प्रतिभू, बंधक आदि।	७-१७-१,२
संवृत	वि०	घिरा हुआ।	१-११-३
संसर्ग	पु०	तत्सम्बन्धित ज्ञान।	१-१२-१
संसर्गविद्य	पु०	काम, नृत्य गीत आदि सम्बन्धी विद्या।	१-१२-१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
सस्तम्भविष्ट	वि०	औद्धत्य, दुराग्रह, मूढ़ता, जड़ता या जो अभिमानी गर्वीला हो गया हो ।	३-११-६
स्तम्भ	पु०	गर्व, औद्धत्य, कठोर, पुरुष, मिथ्याभिमान, अविनय आदि अर्थ पाटन की टिप्पणी में दिया है ।	१-९-१,३
समुत्थान	नपुं०	सैनिक उद्योग या कार्यवाही ।	१३-५-१
समेधा	स्त्री०	अभ्युदय, उत्कर्ष, भावी सम्पत्ति के जानने की इच्छा ।	१-११-७
सर्वतोमुख	वि०	एक प्रकार का मण्डल व्यूह होता है ।	१०-६-३१
सर्वतोभद्र	वि०	एक प्रकार का शस्त्र ।	१०-६-३१
सर्वाधिकरण	पु०	जो राजकार्य में सभी विभागों का अधिकारी हो वह व्यक्ति ।	१-१४-३
सर्पि, स्नेहलेपि	वि०	जो घृत के समान या चिकनाई के समान शरीर में लगने वाला होता है ।	२-११-५६
सर्पिषा	नपुं०	घृत ।	१४-२-१
सर्पसारी	पु०	सर्प के समान ।	१०-६-२५
सशर्कर	वि०	खुरदुरा, छोटे-छोटे दाने युक्त ।	२-११-३४
समुद्रमण्डूकी	स्त्री०	समुद्र की मेढ़की ।	१४-२-२४
संश्रय	पु०	शरण, राजा के समीप समर्पण ।	७-१-१०, ७-१-१७
सहप्रस्थायी	पु०	समूह के अन्य लोग, जो समूह के नेता के कार्यों का समर्थन करें या सहयोगी हो ।	३-२०-१८, ९-३-३२, १२-५-२३
सहग्राहिन्	पु०	प्रतिभुवों का यह विशेषण है किन्तु यह अर्थ होना है साथ ही ऋण लेने वाला ।	३-११-१४, २-७-५
सहज	वि०	जो रक्त सम्बन्धी हो ।	६-२-१९
सहस्रैकीय	वि०	हजारों में एक ।	९-३-४
सहस्रार्जुन	सं०	कृतवीर्य का पुत्र कार्तवीर्य था ।	१-६-९
सहाध्यायिन्	पु०	सहपाठी, अपने समान युक्तियों का जानने वाला शत्रु, सहयोगी मित्र साथी, राजा के अत्यन्त समीप या सान्निध्य में रहने वाला ।	१-२०-३
सहोदक	वि०	नित्य प्राप्त होने वाला जल, उस प्रकार का बाँध जिसमें नित्य जल वाले स्थान, नदी, सरोवर आदि सर्वदा भरे रहते हैं ।	२-१-२०, ७-१२-४,५
साद्गुण्य	सं०	सद्गुण की प्राप्ति ।	८-१-६२
संवादनिकी	वि०	किसी के प्रेम की अभिलाषा करना ।	५-१-१९, ११-१-४०, १२-२-१४,१६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
सांव्यवहारिक	पु०	दलाल, व्यवहारी, आढ़तिया या व्यापारी दूसरे का माल क्रय-विक्रय कर जीविकोपार्जन करनेवाला ।	३–१२–२९
सांग्रामिक	वि०	जो प्रकाश युद्ध में भाग लेता है ।	२-१८–१, २–३०–४२, २–३२–४
साचिव्य	पु०	सहायता ।	७–१८–१६
सान्त्वम्	नपुं०	सान्त्वना देना, शान्त या खुश करना ।	२–१०–२४,३४
सांनाह्य	वि०	युद्धक हाथी ।	२–१५–४२, २–३१–४, २–३२–१, १०–५–३४, २–२३–१९, २–३०–३०,३१
सान्त्वं	वि०	शान्त, खुश तथा आश्वस्त या सलाह या तुष्ट करना ।	९–६–५९ ९–७–७२
सापसार	वि०	बहाना, बचाव, भागना ।	२–१४–१२
सापेक्ष	वि०	जिसमें किसी की अपेक्षा हो, दूसरे पर अवलम्बित हो ।	७–१८–२१
सामन्त	वि०	घर की बगल का मकान मालिक या पड़ोसी गृहस्वामी ।	१–२१–२४, ३–९–३,१०, ३–२०–१५, ७–१३–२४, ३–८–१, ३–९–२४ ७–१८–२९, १०–१०–३, ९–३–२४, ९–७–६
सामवायिक	पु०	आक्रमण काल में बनाया गया संघ, समुच्चय, समिश्रण, मिलाप ।	७–४–१९, ७–५–३८,४९
समुद्र	सं०	मुद्राङ्कित, मुहरबन्द ।	१–२१–१२
समुत्थायिक	वि०	धर्मादि के निमित्त सम्मेलन कर काम करने वाले, इसका अर्थ दलबद्ध राजाओं का समुदाय किया गया है ।	२–१–३२, ७–८–२९ ८–२–७
सीता	सं०	राजकीय भूमि की उपज, इसका अर्थ अनुवादकों ने हल से जोती हुई रेखा कृषिभूमि तथा प्रत्येक प्रकार का धान्य किया है ।	२–१५–१,२
सामुत्थान	पु०	साथी, जो विप्लव या प्रयाण में साथी होते हैं ।	८–२–१७
सामुदायिक	वि०	राजस्व, लगान, आय, आमदनी ।	२–७–४
सामेधिक	वि०	सम्पदा आदि का भविष्य वक्ता, भावी सम्पदा की बात बताने में प्रवीण या जो कुछ दे या उत्कर्ष करा सके ।	१–११–१६, १३–२–११
सांपरायिक	वि०	युद्ध सम्बन्धी ।	२–३–१
सापसर्पन	वि०	गुप्तचर आदि सहित ।	१–१४–११
सार	वि०	बहुमूल्य सामान ।	५–६–४६, १०–५–४३,४६,४९, २–५–८, २–७–२, २–११–१, १–१६–९, ८–१–६१
सार्थ	वि०	व्यापारियों का जत्था ।	४–५–१५
सार्थक	वि०	कारवाँ, वणिक्संघ, सौदागरों की टोली ।	१०–३–१६
सारिका	स्त्री०	सारिका को मैना भी कहते हैं ।	१–१५–४

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
सार्थातिवाह्य	सं०	वणिक् संघ से प्राप्त कर, जो राज्य व्यापारियों की सुरक्षित यात्रा या उनके कारवाँ की रक्षा के लिए लेता है।	२-३४-१२, ५-१-२१
साहस	वि०	बलपूर्वक या हिंसा एवं डाका इत्यादि द्वारा लेना या बल प्रयोग करना।	३-८-१
साहसिक	वि०	सहसा या साहसी कार्य में प्रवृत्त होने वाला व्यवित।	१-१४-५
सार्थातिवाह्य	पु०	वणिक् संघ से प्राप्त कर।	२-३४-१२
सारसम्	वि०	तालाब, सरोवर।	२-२-७
सावर्णि	पु०	आठवें मन्वतर के अधिपति का नाम सावर्णि हैं, सवर्णा नाम की स्त्री के वंशज होने के कारण यह पैतृक नाम प्राप्त था।	१४-३-२०
सारिष्ठ	पु०	अतिबली या बलशाली।	१०-५-५०
सिवतक	वि०	मोम के समान विन्दु युक्त अथवा भात तथा मधुमक्खीके छत्त की मोम वर्ण।	२-११-४
सिद्ध	वि०	पकाकर तैयार किया हुआ।	२-१५-२४, २-८-१८,२१ २-६-१३,१५, १-११-१६, १३-२-७,११
सिद्धव्यञ्जना	वि०	अभय, सुरक्षित, दृढ़ या जिसकी निष्ठा में किसी प्रकार का सन्देह न हो।	११-१-५, ७-५-१
सीता	स्त्री०	राजकीय भूमि की उपज, सीता का अर्थ राजकीय खेतों से उत्पादित वस्तु है।	२-१५-१, ७-१७-७
सीताव्यय	पु०	कृषि जात सम्बन्धी।	२-२२-१४, ५-२-१३
सीताध्यक्ष	पु०	कृषि निर्देशक।	२-१५-२
सीमावरोध	पु०	सीमा का निर्देश या जैसी हदबन्दी सीमा निश्चित की गयी है।	२-२५-३, ४-१३-११,१२
सीतिक	पु०	कृषि द्वारा प्राप्त आधे फल का भागीदार अर्थात् अधिया पर खेत लेने वाला या आधी फसल भोक्ता कृषक।	३-११-२३
सुप्रतिष्ठित	वि०	व्यूहों के विपरीत आक्रमण को सुप्रतिष्ठि आक्रमण कहते हैं।	१०-६-१३
सुख	नपुं०	शारीरिक क्रिया या इन्द्रिय जन्य प्रसन्नता या खुशी को सुख एवं आन्तरिक किंवा मानसिक प्रसन्नता को आनन्द कहते हैं।	१-७-३ १५-१-२०
सुखावस्य	पु०	सुख के लिए प्रतिभूत अथवा सुख की जहाँ निश्चितता होती है।	३-४-९,२६, ३०
सुप्रभा	स्त्री०	काशीराज की रानी का नाम।	१-२०-१६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
सुरा	पु०	शराब, मदिरा ।	२–२५–२९
सुभगा	स्त्री०	देवी, भाग्यवान्, सुन्दर, नाजुक, राजा की प्रिय, शब्द का प्रयोग राजमहिषी के विशेषण के रूप में किया गया है । सौभाग्यवती राजरानी ।	८–४–२४,२६, १२–२–१५,१७
सुरंगा	स्त्री०	सुरंग, जमीन के अन्दर छिपा हुआ रास्ता या भूमिगत मार्ग ।	१–२०–२०, ५–२–४२, १–१७–३३
सुरका	स्त्री०	साधारण मदिरा ।	२–२५–३८
सुवर्चिकालवण	सं०	सोडा आदि जो सुवर्ण गलाते समय डाला जाता है, नमक ।	२–१४–२३
सुवर्ण	पु०	तौल में सोलह मासा ।	२–१६–३, २–१३–१५,४८, ४–१२–८
सुवर्णपाक	पु०	सुवर्ण बनाना या द्रवित करना, रसतन्त्र के प्रयोग से लोहा, ताबाँ आदि बना देना ।	१–१८–८
सुवर्ण सन्धि	पु०	पारस्परिक सद्भावना या विश्वास के साथ सन्धि को सुवर्ण सन्धि कहते हैं ।	७–३–२९
सूचक	पु०	जो उस अधिकारी के विरुद्ध गुप्त सूचना दे, जिस पर धोखाधड़ी का अभियोग हो या मुखविर, सूचना देने वाला ।	२–८–२९,३२
सूची	स्त्री०	हाथ की उंगलियों के नख में सुई चुभाना ।	४–८–२२,
सूत्रवान	सं०	सूत्र को अनेक प्रकार से गुम्फित करना या गुहना ।	३–१२–३९
सूतिका	स्त्री०	जच्चा घर ।	१४–१–३५
सूत्राध्यक्ष	पु०	सूत्र वर्म, वस्त्र, रज्जु आदि का व्यापार करने वाला अधिकारी ।	२–२३–१
सूत्रशाला	स्त्री०	जहाँ सूत्र काता या रखा जाता है ।	२–२३–१२
सूपकार	पु०	रसोइया या पाचक ।	२–१५–६१
सेतु	पु०	राजतरंगिणी तथा अन्य ग्रन्थ में सेतु शब्द बाँध अर्थ में प्रयुक्त हुआ है ।	१–२०–२४, २–४–५, ३–८–३
सेतुबन्ध	पु०	जबकि सब काश्तकार मिलकर निश्चय करते हैं कि सबके लिए जलाखात का प्रयोग किया जायेगा ।	२–१–२२–३९, ३–९–३२
सेतुभोग	पु०	सीमा, मेड़, मिट्टी का टीला, मिट्टी का ढूहा, डाड़ा, विस्तर या आयाम ।	३–८–४, ३–९–३–१४
सेनापति	पु०	कमाण्डर, इन चोफ या कमाण्डर ।	२–३३–८, १०–५–२
सेनाभक्त	पु०	सेना को देय, अर्थात् सेना को सुसज्जित करने की सामग्री के लिए या युद्ध के समय लगाया गया कर ।	२–१५–३
सैन्धविका	स्त्री०	सौराष्ट्र देश या सिन्धु नदी की मिट्टी ।	२–१३–४७,४९
सेनानिश्चार	पु०	सेना के बाहर निकलना ।	१०–२–१८
स्तेय	पु०	स्व सम्बन्ध शून्य, दूसरों के द्रव्य का, छिपकर हरण ।	३–१७–१

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
सैमिक	पु०	हाथियों को पकड़ने में प्रशिक्षित ।	२–२–१०
सौप्तिक	सं०	सोए हुए पर आक्रमण या सुप्त वध से तात्पर्य है ।	१०–३–२०, १०–५–५४
सौकर्य	पु०	सुकर, तरल ।	८–१–१
सौभिक	पु०	ऐन्द्रजालिक, बाजीगर या छाया नाटक करने वाला ।	२–२७–२५, ७–१७–३४, ११–१–३४
सोमितिका	स्त्री०	यह काले रंग का कम्बल होता हैं, जो हाथी की पीठ पर बिछाने का काम आता हैं ।	२–११–९८
सौरिक	सं०	मदिरा या मद्यपान ।	१०–१–१५, १३–४–२६, ३–१६–९, २–२५–३६
सौवर्चल	सं०	सोडा, सज्जीखार या सोहागा जातीय लवण ।	२–१५–१५
सौवर्णिक	पु०	राजकीय सुवर्णकार ।	२–१३–२, २–१४–१, ११
सौवीर	सं०	महाभारत वर्णित कुलंगार क्षत्रिय वंश में एक राजा था ।	१–६–७
स्कन्ध	पु०	सेना का एक डिवीजन ।	७–१२–११, १२–३–१६, १२–४–२०
स्कन्धावार	पु०	सैनिक छावनी ।	१०–१–१, ९–६–४४
स्वापन	पु०	निद्रित करना, सुला देना ।	४–५–५
स्कन्धोपनेय	वि०	किश्त में देना इसका शब्द अर्थ होगा––कन्धे पर ले जाना ।	७–३–२८
स्कन्धप्रावर्तिम	वि०	कन्धों पर कुम्भ आदि से पानी लाना, इसका अर्थ स्वयं लाये हुए जल से खेती करना ।	२–२४–१८
स्तम्बकारिता	स्त्री०	नाल, डण्ठल, तना आदि की वृद्धि ।	२–२४–८
स्तम्भ	पु०	गर्व, औद्धत्य, कठोर, परुष, मिथ्याभिमान, अविनय आदि, अर्थ पाटन की टिप्पणी में दिया गया है ।	१–९–१,३, ६–१–६, ८–४–३०, ८–४–४८,५०
स्तम्भप्रविष्ट	वि०	औद्धत्य, दुराग्रह, मूढ़ता, जड़ता या जो अभिमानी गर्वीला हो गया है ।	३–११–६
स्त्रीपुष्प	सं०	रजोधर्म का रक्त ।	१४–२–३२
स्त्रीबन्धन	सं०	बली राजा से विवाह सम्बन्ध ।	७–३–२६,२९
स्त्रीहृदय	वि०	स्त्री को वश में करना या आकृष्ट करना ।	५–२–५९
स्थल	सं०	सड़क या दुर्ग की भूमि या साफ की हुई भूमि ।	३–९–२५,३३
स्थान	सं०	पहली मंजिल का भूमि तल ।	२–५–२,५, २–३०–५, २–३१–३, ७–१–२८, ७–४–२,३, ८–२–२६, २–९–९, ४–९–१६, ५–२–३६, १२–२७–१५, ६–१–८
स्थानिक	पु०	गोप, स्थानिक के अन्दर काम करता था और स्थानिक समाहर्ता के मातहत था ।	२–३५–६, २–१–७ २–३६–४, १३–२–६,११
स्थानीय	सं०	आठ सौ ग्रामों का प्रधान केन्द्र या स्थान ।	२–१–४, २–३–३, ३–१–१, ८–४–४६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
स्थापना	स्त्री०	दृढ़ करना ।	१०-४-१३
स्थाप्या	स्त्री०	विन्यास ।	३-२-१५,१९, ३-३-१२, ३-४-१६
स्थालेय	वि०	स्थल सम्बन्धित दुर्ग ।	७-१०-२९
स्थाल्य	वि०	स्थल योग्य या स्थल के समान ।	२-२४-२३, ७-११-७
स्थितियन्त्र	सं०	स्थिति को नियन्त्रित करने वाली वस्तु को स्थिति यन्त्र कहते हैं ।	२-१८-५
स्थितयुद्ध	वि०	स्थिर या निश्चल युद्ध ।	१०-५-५५
स्थितशत्रु	पु०	स्थाई शत्रु, शत्रु जिसके पास दुर्ग होता है या परिखा से रक्षित शत्रु ।	७-१०-३, ७-१३-२२, ९-६-५३, ७-१३-८
स्थूललक्ष	वि०	महान्दाता, बहुप्रद या महादाता ।	६-१-३
स्फाति	वि०	वृद्धि बढ़ती या स्त्री धन को व्यापार आदि से वृद्धि करना या बढ़ाना ।	३-२-३०
स्रोतोयन्त्रप्रावर्तिम	वि०	रहट ढेंकली आदि से नालियों या नहर में पानी लाना ।	२-२४-१८
स्थावराहार	पु०	अचल या वृक्षादि फल का भोजन ।	८-५-१४
स्नापक	पु०	स्नान कराने वाला अपने मालिक किंवा स्वामी के लिए स्नान सामग्री एकत्रकर्ता ।	१-१२-९, १-२१-१३
स्वयंमृतस्य	वि०	स्वयं या अपने से मरे हुए ।	१४-३-१४, २-२-९
सौमिक	वि०	सोमरस सम्बन्धी, सोमरस से अनुष्ठित, चन्द्रमा सम्बन्धी ।	२-२-१०
स्रौव	वि०	याज्य, याजक भाव से युक्त ।	२-१०-५०
सौवर्णिक	पु०	सुवर्ण आदि निर्मित, शिल्प द्रव्य कार्य में नियुक्त राजपुरुष ।	२-१४-१,११
सौवीर	सं०	सौवीर के राजा का नाम, जयमंगला तथा नीति निर्णीत में परन्तन तथा रानी का नाम रत्नावती, सौवीर नरेश विपुल अर्जुन द्वारा महाभारत युद्ध में मारा गया था ।	१-२०-१६
स्वकरण	सं०	स्वकरण का अर्थ अपनी वस्तु पर अपने अधिकार को प्रमाणित करना होता है ।	२-३६-७, ३-१-१५, ३-१६-१७,१८,२२, ४-१-५४,५५ ४-२-१
स्वप्रत्यय	वि०	स्वयं विचारकर विश्वास हो जाने, यह निश्चय कर लेने पर ही कि तपस्वी आदि है या नहीं ।	२-३६-५, ३-१४-३४, ८-४-३३
स्वधर्म	पु०	अपने धर्म तथा आचरण के अनुसार कार्य करने अथवा अपने दायभाग प्राप्त करने तथा ब्राह्मणादि के षट्कर्मों से वंचित व्यक्ति ।	१-१४-२
स्वधा	अव्य०	पितरों को प्रस्तुत की गयी हवि या भोजन या आहुति ।	३-६-४,२२
स्वयंग्राह	वि०	लूट में जो कुछ मिले वह प्राप्त करना ।	९-३-१७, ३-१६-२७, ८-१-४४, ८-४-२३, ९-६-२४, १०-३-४५

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
स्वयंवाद	वि०	स्वेच्छया स्वीकार करना ।	३-१-४६
स्वप्न	पु०	अत्यन्त, निद्रा स्वप्न ।	१-७-२
स्वयंवादिन्	पु०	स्वेच्छया, तात्पर्य है—स्वयं स्वीकार करना ।	३-१-२१, ३-१३-२५
स्ववग्रह	वि०	उत्तम सम्बन्ध, उदार साथियों का मित्र, सरलता पूर्वक राजा पर नियन्त्रण रखने तथा कुमार्ग में प्रवृत्त स्वामी को सुख पूर्वक रोकने वाला ।	१-९-१, ६-१-६
स्ववर्गानुकर्षिन्	वि०	अधीनस्थ लोगों की निष्ठा तथा आज्ञानुसरण प्राप्त करना ।	५-३-१०
स्ववित्तकारु	पु०	वे शिल्पी जो स्वयं अपनी पूजी से कार्य करते तथा खरीददारों से सीधा सम्पर्क रखते हैं ।	४-१-२
स्ववीर्योपजीवी	पु०	स्वयं अपने शारीरिक श्रम से जीविका उपार्जन करने वाले ।	२-२४-१६
स्वाध्याय	पु०	अध्ययन अथवा वेदाध्ययन ।	१-१९-११
स्वापतेय	सं०	व्यक्तिगत सामान ।	२-२७-१२
स्वामी	पु०	राजा या पालक ।	१-१५-७, ३-११-५०, ४-९-१२, ६-१-१,२
		ह	
हंस	पु०	हंस ।	१४-३-३०
हताग्रवेग	पु०	प्रथम युद्ध करने में हो टूटी सेना ।	८-५-६
हरणोपाय	वि०	हरण के ४० उपाय ।	२-८-२०
हर्ष	वि०	इच्छापूर्ति पर सुख के अनुभव की संज्ञा हर्ष है ।	१-६-७,१०
हस्तबन्ध	वि०	हाथ काटना ।	४-१२-१
हस्तिकर्ण	पु०	एरण्ड या रेंण का पत्ता हाथी के कान की तरह होता है, इसलिए हस्तिकर्ण रेण का नाम दिया गया है ।	१४-१-९
हस्तियुद्ध	पु०	मुगल काल में दो हाथियों का युद्ध कराया जाता था, बादशाह लोग ऐसे द्वन्द्व युद्ध में विशेष रुचि लेते थे, पुराकालीन रोमन ग्लेडियेटर के समान हाथियों को भी द्वन्द्व युद्ध करने की शिक्षा दी जाती थी ।	२-३२-४
हरणी	स्त्री०	कुल्या या जल हीन झील या तालाब या तालाब के तल तक ।	२-२४-२२
हरिताल	सं०	गन्धक और संखिया के योग से बना पीला खनिज द्रव्य ।	१४-१-११
हर्ष	पु०	आनन्द के १२ नामों में एक नाम हर्ष भी है, एक सुखात्मक भाव है ।	१-६-१,१०
हलमुख	पु०	तीक्ष्ण अग्रभाग वाले शस्त्रों या शालों के भेद को हुलमुख कहते हैं ।	२-३-४६

शब्द	व्याकरण	अर्थ	सं०
हस्तापताका	स्त्री०	हाथ में छोटी झण्डी लेकर चलना।	४–३–४१
हस्तपू	सं०	नाप के ऊपर हाथ लगाना, जिससे खजाने से अन्न निकालते समय अधिक आये।	२–१५–११
हस्ताप्रवर्तिम	वि०	हाथ से पानी खींचकर घड़ों से खेत पर ले जाना।	२–२४–१८
हस्तबन्ध	वि०	हाथ काटना	४–२–१
हस्ति	वि०	गज या हाथी।	१–२१–२५
हस्तिकर्ण	नपुं०	एरण्ड या रेंण का पत्ता हाथी के कान के समान होता है।	१४–१–९
हस्तिनख	सं०	हाथी का नाखून।	२–३–२९
हस्तिपरिघ	पु०	हाथियों के घूमने योग्य विस्तृत स्थान।	२–३–२८
हस्तिवन	सं०	हाथी का वन।	९–४–८
हस्तिवन्धकी	स्त्री०	हाथियों के द्वारा।	२–२–१०
हाटक	वि०	यह कुन्त के समान ३ फल वाला भाला होता है।	२–१८–७
हस्त्यश्व	वि०	स्नान भोजन से संतुष्ट हाथी घोड़ों आदि का विभाग।	१–१९–१५
हस्तिवाहा	स्त्री०	हस्तिकर्म में नियुक्त व्यक्ति के वेतन हेतु चालीस दिन का मास होता है।	२–२०–५३
हस्तिव्यूह	पु०	हाथियों से संयुक्त व्यूह की रचना।	१०–५–३०
हारहूरक	पु०	हारहूरक नगर या जनपद में बनी शराब।	२–८–२५
हिरण्य	सं०	नगद मुद्रा, स्वर्णधन।	१–१३–६ १–१९–१२, ९–४–२
हिरण्यभोग	पु०	हिरण्य या धन या नगद द्रव्य द्वारा उपकारी मित्र।	७–९–३१, ७–९–२६,२८
हीन	वि०	छोटा, निम्न, गुणहीन, सदोष।	६–२–३५
हीन	नपुं०	अपने से छोटा, निम्नतर, अवर।	३–१८–५
हीन सन्धि	पु०	दण्डोपनत, कोशोपनत, देशोपनत सन्धियाँ हीन कही जाती हैं।	७–३–३६, ७–५–११
हीनांग	वि०	शक्तिहीन।	१०–६–४४
हुलमुख	वि०	जीने वाला।	२–१८–७
हेड	पु०	निग्रह, अप्रसन्नता।	१–१३–१०, ५–६–६
हेतु	पु०	तर्क, कारण, निमित्त, प्रयोजन, उद्देश्य तथा अनुमान प्रक्रिया के पाँच अंगों में द्वितीय अंग।	१–१५–४४
हेत्वर्थ	पु०	सिद्ध हेतु का नाम हेत्वर्थ है।	१५–१–१३
हेमावसारित	वि०	स्वर्ण में आधा तांबा मिलाकर, उतना ही सोना निकाल लेना।	२–१४–२२
हेम	वि०	सुवर्ण, सोना।	७–१२–१४
[illegible]	वि०	मार्गशीर्ष एवं पौष।	९–१–३४,३५

१०–६३

शब्द	व्याकरण	अर्थ
हैमन्य	वि०	हिमालय के समीप।
हैमवल	वि०	हिमवत, हिमालय, उत्तरापथ, उत्तरी द्वार, मध्यदेश।
हैहय	पु०	हैहय वंश के पूर्वपुरुष यदु थे। यदुराजा के सहस्रजित नामक पुत्र के द्वारा हैहयवंश की स्थापना हुई थी।
ह्रस्वकाल	वि०	थोड़ा समय में उपजापादि मन्त्रों द्वारा यह लाभ साध्य होता है।
ह्रीमान्	स्त्री०	लज्जाशील, कुकृत्य के सम्बन्ध में लज्जालु, अकरणीय कार्य में लज्जालु।

* * *

श्री रघुनाथ सिंह पुत्र श्री बटुकनाथ सिंह, जन्म स्थान ग्राम खेवेलो निवास स्थान औरंगाबाद, वाराणसी ने १९८७ में कौटिल्य अर्थशास्त्र के तृतीय खण्ड को लिखकर समाप्त किया।